नमस्ते जी

ऋषि दयानंद द्वारा प्रचारित वैदिक विचारधारा ने सैकड़ो हृदय को क्रन्तिकारी विचारो से भर दिया | जो वेद उस काल में विचारो से भी भुला दिए गए थे | ऋषि दयानंद ने उन हृदयों को वेदों के विचारो से ओतप्रोत कर दिया और देश में वेद गंगा बहने लगी | ऋषि के अपने अल्प कार्य काल में समाज की आध्यात्मिक, सामाजिक, और व्यक्तिगत विचार धारा को बदल के रख दिया | ऋषि के बाद भी कही वर्षो तक यह परिपाटी चली पर यह वैचारिक परिवर्तन पुनः उसी विकृति की और लौट रहा है | और इसी विकृति को रोकने के लिए वैदिक विद्वान प्रो० राजेंद्र जी जिज्ञासु के सानिध्य में "पंडित लेखराम वैदिक मिशन" संस्था का जन्म हुआ है | इस संस्था का मुख्य उद्देश्य वेदों को समाज रूपी शरीर के रक्त धमनियों में रक्त के समान स्थापित करना है | यह कार्य ऋषि के जीवन का मुख्य उद्देश्य था और यही इस संस्था का भी मुख्य उद्देश्य है | संस्था के अन्य उद्देश्यों में सम्लित है साहित्य का सृजन करना | जो दुर्लभ आर्य साहित्य नष्ट होने की और अग्रसर है उस साहित्य को नष्ट होने से बचाना और उस साहित्य को क्रम बद्ध तरीके से हमारे भाई और बहनों के समक्ष प्रस्तुत करना जिससे उनकी स्वाध्याय में रूचि बढ़े और वे तुलनात्मक अध्यन कर सकें जिससे उनकी स्वधर्म में रूचि बढ़े और अन्य मत मतान्तरों की जानकारी उन्हें प्राप्त हो और वे विधर्मियो द्वारा लगाये जा रहे विभिन्न आक्षेपों का उत्तर दे सकें विधर्मियो से स्वयं भी बचें और अन्यो की भी सहयता करें | संस्था का उद्देश्य है समाज के समक्ष हमारे गौरव शाली इतिहास को प्रस्तुत करना जिससे हमारा रक्त जो ठंडा हो गया है वह पुनः गर्म हो सके और हम हमारे इतिहास पुरुषो का मान सम्मान करें और उनके बताये गये नीतिगत मार्ग पर चलें | संस्था का अन्य उद्देश्य गौ पालन और गौ सेवा को बढ़ावा देना जिससे पशुओ के प्रति प्रेम, दया का भाव बढ़े और इन पशुओ की हत्या बंद हो, समाज में हो रहे परमात्मा के नाम पर पाखण्ड, अन्धविश्वास, अत्याचार को जड़ से नष्ट करना और परमात्मा के शुद्ध वैदिक स्वरुप को समाज के समक्ष रखना, हमारे युवा शक्ति को अनेक भोग, विबिन्न व्यसनों, छल, कपट इत्यादि से बचाना |

इन कार्यो को हम अकेले पूरा करने का सामर्थ्य नहीं रखते पर, यह सारे कार्य है तो बड़े विशाल और व्यापक पर अगर संस्था को आप का साथ मिला तो बड़ी सरलता से पूर्ण किये जा सकते है | हमारा समाजिक ढांचा ऐसा है की हम प्रत्येक कार्य की लिए एक दुसरे पर निर्भर है | आशा करते है की इस कार्य में आप हमारी तन, मन से साहयता करेंगे | संस्था द्वारा चलाई जा रही वेबसाइट www.aryamantavya.in और www.vedickranti.in पर आप संस्था द्वारा स्थापित संकल्पों सम्बन्धी लेख पड़ सकते है और भिन्न-भिन्न वैदिक साहित्य को निशुल्क डाउनलोड कर सकते है | कृपया स्वयं भी जाये और अन्यो को भी सूचित करे यही आप की हवी होंगी इस यज्ञ में जो आप अवश्य करेंगे यही परमात्मा से प्रार्थना करते है |

जिन सज्जनों के पास दुर्लभ आर्य साहित्य है एवं वे उसे संरक्षित करने में संस्था की सहायता करना चाहते हैं वो कृपया निम्न पते पर सूचित करें

ptlekhram@gmail.com

धन्यवाद् !

पंडित लेखराम वैदिक मिशन

आर्य मंतव्य टीम

॥ओ३म्॥

अथ षष्ठं मण्डलम्॥

ओ३म् विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद्भ॒द्रं तन्न॒ आ सु॑व॥ ऋ०५.८२.५॥

अथ त्रयोदशर्चस्य प्रथमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। अग्निर्देवता। १, ७, १३ भुरिक्पङ्क्तिः। २ स्वराट्पङ्क्तिः। ५ पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ३, ४, ६, ९, ११, १२ निचृत्त्रिष्टुप्। ८, १० त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ विद्वानग्निरिव किं कुर्य्यादित्याह॥

अब छठे मण्डल में तेरह ऋचा वाले प्रथम सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में विद्वान् जन अग्नि के सदृश क्या-क्या करें? इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वं ह्य॑ग्ने प्रथ॒मो म॒नोता॒स्या धि॒यो अभ॑वो दस्म॒ होता॑।

त्वं सीं॑ वृषन्नकृणोर्दु॒ष्टरी॑तु सहो॒ विश्व॑स्मै॒ सह॑से॒ सह॑ध्यै॥ १॥

त्वम्। हि। अ॒ग्ने॒। प्र॒थ॒मः। म॒नोता॑। अ॒स्याः। धि॒यः। अभ॑वः। द॒स्म॒। होता॑। त्वम्। सी॒म्। वृ॒ष॒न्। अ॒कृ॒णोः॒। दु॒स्तरी॑तु। सह॑ः। विश्व॑स्मै। सह॑से। सह॑ध्यै॥ १॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**हि**) (**अग्ने**) अग्निरिव वर्त्तमान (**प्रथमः**) आदिमः (**मनोता**) मनोवद्गन्ता (**अस्याः**) (**धियः**) प्रज्ञायाः (**अभवः**) भवसि (**दस्म**) दुःखोपक्षयितः (**होता**) दाता (**त्वम्**) (**सीम्**) सर्वतः (**वृषन्**) वीर्यसेक्तः (**अकृणोः**) (**दुष्टरीतु**) दुःखेन तरीतुमुल्लङ्घयितुं योग्यम् (**सहः**) यस्सहते (**विश्वस्मै**) सर्वस्मै (**सहसे**) बलाय (**सहध्यै**) सोढुम्॥ १॥

अन्वयः-हे अग्ने दस्म विद्वन्! यथा प्रथमो मनोता होता संस्त्वं ह्यस्या धियो वृद्धिं कुर्वन् सुख्यभवः। हे वृषँस्त्वं सीं विश्वस्मै सहः सहसे सहध्यै दुष्टरीत्वकृणोस्तथा विद्युदग्निः करोति॥ १॥

भावार्थः-ये विद्वांसो मूर्खैः कृतामपराधान् सोढ्वा सर्वेषां सुखाय प्रयतन्ते त एव सर्वेषां हितकारिणः सन्ति॥ १॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के सदृश तेजस्वी (**दस्म**) दुःख के नाश करने वाले विद्वान् जन जैसे (**प्रथमः**) आदिम (**मनोता**) मन के समान जाने वाले और (**होता**) दान करने वाले हुए (**त्वम्**) आप (**हि**) निश्चय से (**अस्याः**) इस (**धियः**) बुद्धि की वृद्धि करते हुए सुखयुक्त (**अभवः**) होते हो। और हे (**वृषन्**) वीर्य्य के सींचने वाले (**त्वम्**) आप (**सीम्**) सब ओर से (**विश्वस्मै**) सम्पूर्ण प्राणियों के लिये (**सहः**) सहनशील (**सहसे**) बल के लिये (**सहध्यै**) सहने का (**दुष्टरीतु**) दुःख से उल्लंघन करने योग्य (**अकृणोः**) करते हो, वैसे बिजुलीरूप अग्नि करता है॥ १॥

भावार्थः-जो विद्वान् जन मूर्ख लोगों से किये हुए अपराधों को सहकर सम्पूर्ण जनों के सुख के लिये प्रयत्न करते हैं, वही सब के हितकारी होते हैं॥१॥

मनुष्याः कथं विद्यां प्राप्नुयुरित्याह॥

मनुष्य किस रीति से विद्या को प्राप्त होवें, इस विषय को कहते हैं॥

अधा होता न्यसीदो यजीयानिळस्पद इषयन्नीड्यः सन्।
तं त्वा नरः प्रथमं देवयन्तो महो राये चितयन्तो अनु ग्मन्॥२॥

अध। होता। नि। असीदः। यजीयान्। इळः। पदे। इषयन्। ईड्यः। सन्। तम्। त्वा। नरः। प्रथमम्। देवऽयन्तः। महः। राये। चितयन्तः। अनु। ग्मन्॥२॥

पदार्थः-(**अधा**) आनन्तर्ये। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। (**होता**) आदाता (**नि**) (**असीदः**) तिष्ठेः (**यजीयान्**) अतिशयेन यष्टा (**इळः**) पृथिव्या वाचो वा (**पदे**) (**इषयन्**) प्रापयन् (**ईड्यः**) स्तोतुमर्हः (**सन्**) (**तम्**) (**त्वा**) त्वाम् (**नरः**) मनुष्याः (**प्रथमम्**) आदिमम् (**देवयन्तः**) कामयमानाः (**महः**) महते (**राये**) धनाय (**चितयन्तः**) ज्ञापयन्तः (**अनु**) (**ग्मन्**) अनुगच्छन्ति॥२॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथा होता यजीयानिषयन्नीड्यः सन्नग्निरिळस्पदे वर्त्तते तथा भूत्वा त्वं न्यसीदः। यथा देवयन्तश्चितयन्तो नरः प्रथममग्निमनु ग्मँस्तथाऽधा महो राये तं त्वैतेऽनुगच्छन्तु॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्या विदुषः कामयित्वाऽग्न्यादिविद्यां जिघृक्षन्ति ते विज्ञानवन्तो जायन्ते॥२॥

पदार्थः-हे विद्वन्! जिस प्रकार से (**होता**) ग्रहण करने और (**यजीयान्**) अत्यन्त यज्ञ करने वाला पुरुष (**इषयन्**) प्राप्त कराता और (**ईड्यः**) स्तुति करने योग्य (**सन्**) होता हुआ अग्नि (**इळः**) पृथिवी वा वाणी के (**पदे**) स्थान में वर्त्तमान है, वैसे होकर आप (**नि, असीदः**) निरन्तर स्थिर हूजिये और जैसे (**देवयन्तः**) कामना करते और (**चितयन्तः**) जनाते हुए (**नरः**) मनुष्य (**प्रथमम्**) आदिम अग्नि को (**अनु, ग्मन्**) पश्चात् चलते हैं, वैसे (**अधा**) अनन्तर (**महः**) बड़े (**राये**) धन के लिये (**तम्**) उस (**त्वा**) आपको ये सब पश्चात् प्राप्त होवें॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य विद्वानों की कामना करके अग्नि आदि की विद्या को ग्रहण करने की इच्छा करते हैं, वे विज्ञानयुक्त होते हैं॥२॥

पुनर्विद्वांसः किं जानीयुरित्याह॥

फिर विद्वान् जन क्या जानें, इस विषय को कहते हैं॥

वृतेव यन्तं बहुभिर्वसव्यै३स्त्वे रयिं जागृवांसो अनु ग्मन्।
रुशन्तमग्निं दर्शतं बृहन्तं वपावन्तं विश्वहा दीदिवांसम्॥३॥

वृताऽइव। यन्तम्। बहुऽभिः। वसव्यैः। त्वे इति। रयिम्। जागृऽवांसः। अनु। ग्मन्। रुशन्तम्। अग्निम्। दर्शतम्। बृहन्तम्। वपाऽवन्तम्। विश्वहा। दीदिऽवांसम्॥ ३॥

पदार्थः-(**वृतेव**) वर्त्तन्ते यस्मिँस्तेन मार्गेण (**यन्तम्**) गच्छतम् (**बहुभिः**) (**वसव्यैः**) वसुषु पृथिव्यादिषु भवैः पदार्थैः (**त्वे**) त्वयि (**रयिम्**) धनम् (**जागृवांसः**) जागरूकाः (**अनु**) (**ग्मन्**) अनुगच्छन्ति (**रुशन्तम्**) हिंसन्तम् (**अग्निम्**) विद्यादिरूपम् (**दर्शतम्**) दर्शकं द्रष्टव्यं वा (**बृहन्तम्**) महान्तम् (**वपावन्तम्**) बहूनि वपनाधिकरणानि विद्यन्ते यस्मिँस्तम् (**विश्वहा**) सर्वाणि दिनानि (**दीदिवांसम्**) प्रकाशमानं प्रकाशयन्तं वा॥ ३॥

अन्वयः-हे विद्वन्! जागृवांसो विद्वांसो यं बहुभिर्वसव्यैः सह वृतेव यन्तं रुशन्तं दर्शतं बृहन्तं वपावन्तं विश्वहा दीदिवांसमग्निमनु ग्मन् यस्त्वे रयिं दधाति तं त्वमनुविद्धि॥ ३॥

भावार्थः-ये सततं सर्वत्र गच्छन्तं सर्वस्य प्रकाशकं सर्वेषु पदार्थेषु व्यापकं विच्छेदकं विद्युदादिस्वरूपं पावकं विदित्वा कार्य्येष्वनुनयन्ति ते पुष्कलां श्रियं लभन्ते॥ ३॥

पदार्थः-हे विद्वन्! (**जागृवांसः**) विद्या से जागृत विद्वान् जन जिसको (**बहुभिः**) बहुत (**वसव्यैः**) पृथिवी आदिकों में हुए पदार्थों के साथ (**वृतेव**) वर्त्तमान होते हैं जिसमें उस मार्ग से (**यन्तम्**) जाते (**रुशन्तम्**) हिंसा करते (**दर्शतम्**) देखने वाले वा देखने योग्य (**बृहन्तम्**) बड़े (**वपावन्तम्**) बहुत कार्य्यों के संस्कार जमाने के अधिकरण विद्यमान जिसमें उस (**विश्वहा**) सब दिनों वा सब दिनों की (**दीदिवांसम्**) प्रकाशमान वा प्रकाश करते हुए (**अग्निम्**) अग्नि के सदृश विद्यादिरूप के (**अनु ग्मन्**) पीछे चलते हैं और जो (**त्वे**) आप में (**रयिम्**) धन को धारण करे, उसको आप पश्चात् जानिये॥ ३॥

भावार्थः-जो निरन्तर सर्वत्र चलते हुए सब के प्रकाशक और सम्पूर्ण पदार्थों में व्यापक और पदार्थों के जलाने वाले बिजुली आदि स्वरूप अग्नि को जानकर कार्य्यों में उपयुक्त करते हैं, वे अत्यन्त लक्ष्मी को प्राप्त होते हैं॥ ३॥

पुनर्मनुष्यैः किं विज्ञातव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या जानना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

पदं देवस्य नमसा व्यन्तः श्रवस्यवः श्रव आपन्नमृक्तम्।

नामानि चिद्दधिरे यज्ञियानि भद्रायां ते रणयन्त संदृष्टौ॥ ४॥

पदम्। देवस्य। नमसा। व्यन्तः। श्रवस्यवः। श्रवः। आपन्। अमृक्तम्। नामानि। चित्। दधिरे। यज्ञियानि। भद्रायाम्। ते। रणयन्त। सम्ऽदृष्टौ॥ ४॥

पदार्थः-(**पदम्**) प्रापणीयम् (**देवस्य**) सर्वेषु प्रकाशमानस्य (**नमसा**) अन्नादिना वज्रवच्छेदकत्वेन गुणेन वा (**व्यन्तः**) व्याप्तविद्याक्रियाः (**श्रवस्यवः**) आत्मनः श्रवोऽन्नमिच्छवः (**श्रवः**) पृथिव्यन्नादिकम् (**आपन्**) आप्नुवन्ति (**अमृक्तम्**) शुद्धिरहितम् (**नामानि**) जलानि संज्ञा वा (**चित्**) अपि (**दधिरे**) धरेयुः

(यज्ञियानि) यज्ञसिद्धयेऽर्हाणि **(भद्रायाम्)** कल्याणकर्याम् **(ते)** **(रणयन्त)** रमेरन् रमेयुर्वा **(सन्दृष्टौ)** सम्यग्दर्शने॥४॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! व्यन्तः श्रवस्यवो भवन्तो नमसा सह वर्त्तमानस्य देवस्याग्नेः पदममृक्तं श्रव आपन्। अस्य देवस्य यज्ञियानि नामानि चिद्दधिरे ते भद्रायां सन्दृष्टौ रणयन्त॥४॥

भावार्थः-ये मनुष्या अग्न्यादिपदार्थस्य गुणकर्म्मस्वभावान् विदित्वा कार्य्याणि साध्नुवन्ति तेऽतुलमानन्दं प्राप्य सुखे रमन्ते॥४॥

पदार्थः-हे विद्वान् जनो! **(व्यन्तः)** व्याप्त हैं विद्या और क्रियायें जिनमें ऐसे और **(श्रवस्यवः)** अपने अन्न की इच्छा करने वाले आप लोग **(नमसा)** अन्न आदि वा वज्रवच्छेदकत्वगुण से **(देवस्य)** सब में प्रकाशमान अग्नि के **(पदम्)** प्राप्त होने योग्य **(अमृक्तम्)** शुद्धि से रहित **(श्रवः)** पृथिवी के अन्न आदि को **(आपन्)** प्राप्त होते हैं तथा इस सब में प्रकाशक के **(यज्ञियानि)** यज्ञ की सिद्धि के लिये योग्य **(नामानि)** जलों वा संज्ञाओं को **(चित्)** निश्चय से **(दधिरे)** धारण करें और **(ते)** वे **(भद्रायाम्)** कल्याणकारक **(सन्दृष्टौ)** उत्तम दर्शन में **(रणयन्त)** रमें वा रमण करावें॥४॥

भावार्थः-जो मनुष्य अग्नि आदि पदार्थों के गुण कर्म्म और स्वभावों को जान कर कार्यों को सिद्ध करते हैं, वे अतुल आनन्द को प्राप्त कर सुख के विषय में रमते हैं॥४॥

पुनर्मनुष्यैः कः प्रयोक्तव्य इत्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या प्रयोग करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

त्वां वर्धन्ति क्षितयः पृथिव्यां त्वां राय उभयासो जनानाम्।

त्वं त्राता तरणे चेत्यो भूः पिता माता सदमिन्मानुषाणाम्॥५॥३५॥

त्वाम्। वर्धन्ति। क्षितयः। पृथिव्याम्। त्वाम्। रायः। उभयासः। जनानाम्। त्वम्। त्राता। तरणे। चेत्यः। भूः। पिता। माता। सदम्। इत्। मानुषाणाम्॥५॥

पदार्थः-**(त्वाम्)** तम् **(वर्धन्ति)** वर्धयन्ति। अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् **(क्षितयः)** निवासन्तो मनुष्याः **(पृथिव्याम्)** भूमौ **(त्वाम्)** तम् **(रायः)** धनानि **(उभयासः)** **(जनानाम्)** **(त्वम्)** सः। अत्र सर्वत्र व्यत्ययः। **(त्राता)** रक्षकः **(तरणे)** दुःखादुद्धरणे **(चेत्यः)** चितिषु भवः **(भूः)** **(पिता)** पितेव पालकः **(माता)** मातेव मान्यप्रदः **(सदम्)** सीदन्ति यस्मिंस्तत् **(इत्)** एव **(मानुषाणाम्)** मनुष्याणाम्॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! जनानामुभयासो विद्वांसोऽविद्वांसश्च क्षितयः पृथिव्यां रायस्त्वाञ्च वर्धन्ति त्वां सम्प्रयोजयन्ति त्वं तरणे त्राता चेत्यः पितेव मातेव मानुषाणां पालको भूः सदं व्याप्तस्तमित् सर्वे विजानन्तु॥५॥

भावार्थः-ये पृथिव्यादिषु स्थितं विद्युदग्निं सम्प्रयुञ्जते ते सर्वेषां सुखप्रदा जायन्ते॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(जनानाम्)** मनुष्यों के **(उभयासः)** दोनों प्रकार के अर्थात् विद्वान् और अविद्वान् जन और **(क्षितयः)** निवास वाले मनुष्य **(पृथिव्याम्)** भूमि में **(रायः)** धनों की और **(त्वाम्)** आपकी **(वर्धन्ति)** वृद्धि करते हैं और **(त्वाम्)** उन आपको उत्तम प्रकार प्रयुक्त करते हैं **(त्वम्)** वह आप

(तरणे) दु:खों से उद्धार के निमित्त **(त्राता)** रक्षा करने वाले **(चेत्य:)** चयन समूहों में हुए **(पिता)** पिता के सदृश पालनकर्त्ता और **(माता)** माता के सदृश आदर करने वाले **(मानुषाणाम्)** मनुष्यों के पालक **(भू:)** होओ और **(सदम्)** स्थिर होते हैं, जिसमें उस गृह को व्याप्त हुए उन आपको **(इत्)** ही सब लोग विशेष करके जानें॥५॥

भावार्थ:-जो पृथिवी आदिकों में वर्त्तमान बिजुलीरूप अग्नि का उत्तम प्रकार प्रयोग करते हैं, वे सब के सुख देने वाले होते हैं॥५॥

पुनर्मनुष्यै: क: सेवनीय इत्याह॥

फिर मनुष्यों को किसकी सेवा करनी चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

सुपर्येण्य स प्रियो विक्ष्व१ग्निर्होता मन्द्रो नि षसादा यजीयान्।

तं त्वा वयं दम आ दीदिवांसमुपज्ञुबाधो नमसा सदेम॥६॥

सपर्येण्य:। स:। प्रिय:। विक्षु। अग्नि:। होता। मन्द्र:। नि। ससाद। यजीयान्। तम्। त्वा। वयम्। दमे। आ। दीदिऽवांसम्। उप। ज्ञुऽबाध:। नमसा। सदेम॥६॥

पदार्थ:-(सपर्येण्य:) सेवितुमर्ह: **(स:)** **(प्रिय:)** कमनीय: **(विक्षु)** प्रजासु **(अग्नि:)** पावक: **(होता)** आदाता **(मन्द्र:)** आनन्दप्रद: **(नि)** नितराम् **(ससादा)** निषीदति। अत्र **संहितायामिति** दीर्घ:। **(यजीयान्)** अतिशयेन यष्टा **(तम्)** **(त्वा)** त्वाम् **(वयम्)** **(दमे)** गृहे **(आ)** **(दीदिवांसम्)** प्रकाशमानम् **(उप)** **(ज्ञुबाध:)** जानुनी बाधमाना: **(नमसा)** सत्कारेणान्नादिना वा **(सदेम)** सीदेम॥६॥

अन्वय:-हे विद्वन्! यो विक्षु सपर्य्येण्य: प्रियो होता मन्द्रो यजीयानग्निर्नि षसादा येन त्वया स प्रयुज्यते तं दमे दीदिवांसं त्वा ज्ञुबाधो वयं नमसोपाऽऽसदेम॥६॥

भावार्थ:-येऽग्न्यादिविद्यां जानन्ति ते सुखमाप्नुवन्ति॥६॥

पदार्थ:-हे विद्वान्! जो **(विक्षु)** प्रजाओं में **(सपर्य्येण्य:)** सेवा करने योग्य और **(प्रिय:)** कामना करने योग्य अर्थात् सुन्दर **(होता)** ग्रहण करने और **(मन्द्र:)** आनन्द देने वाला **(यजीयान्)** अतिशय यज्ञकर्त्ता **(अग्नि:)** अग्नि **(नि)** अत्यन्त **(ससादा)** स्थित होता है जिन आप से **(स:)** वह प्रयोग किया जाता है **(तम्)** उस **(दमे)** गृह में **(दीदिवांसम्)** प्रकाशमान **(त्वा)** आपको **(ज्ञुबाध:)** जंघाओं को बाधते हुए **(वयम्)** हम लोग **(नमसा)** सत्कार वा अन्न आदि से **(उप, आ, सदेम)** समीप होवें॥६॥

भावार्थ:-जो अग्नि आदि की विद्या को जानते हैं, वे सुख को प्राप्त होते हैं॥६॥

पुनर्मनुष्यै: कीदृशैर्भूत्वा किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को कैसे होकर क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

तं त्वा वयं सुध्यो३ नव्यमग्ने सुम्नायव ईमहे देवयन्त:।

त्वं विशो अनयो दीद्यानो दिवो अग्ने बृहता रोचनेन॥७॥

तम्। त्वा। वयम्। सुऽध्यः। नव्यम्। अग्ने। सुम्नऽयवः। ईमहे। देवऽयन्तः। त्वम्। विशः। अनयः। दीद्यानः। दिवः। अग्ने। बृहता। रोचनेन॥७॥

पदार्थः-(**तम्**) (**त्वा**) त्वाम् (**वयम्**) (**सुध्यः**) शोभना धियो येषान्ते (**नव्यम्**) नवीनेषु पदार्थेषु भवम् (**अग्ने**) अग्निरिव वर्त्तमान विद्वन् (**सुम्नायवः**) आत्मनस्सुम्नं सुखमिच्छवः (**ईमहे**) व्याप्नुयाम (**देवयन्तः**) कामयमानाः (**त्वम्**) (**विशः**) प्रजाः (**अनयः**) नयसि (**दीद्यानः**) देदीप्यमानः (**दिवः**) कमनीयान् पदार्थान् (**अग्ने**) पावक इव विद्याप्रकाशित (**बृहता**) महता (**रोचनेन**) प्रकाशेन॥७॥

अन्वयः-हे अग्ने विद्वन्! यथा सुध्यः सुम्नायवो देवयन्तो वयं तं नव्यमग्निमीमहे तथा त्वा प्राप्नुयाम। हे अग्ने! यथा सूर्यो बृहता रोचनेन दीद्यानो दिवो विशोऽनयस्तथा त्वमेतान्नय॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोमालङ्कारः। ये विद्वद्वदग्निमनुचरन्ति ते कृतकार्य्या जायन्ते॥७॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के सदृश वर्त्तमान विद्वन्! जैसे (**सुध्यः**) उत्तम बुद्धियुक्त (**सुम्नायवः**) अपने सुख की इच्छा करने वाले (**देवयन्तः**) कामना करते हुए (**वयम्**) हम लोग (**तम्**) उस (**नव्यम्**) नवीन पदार्थों में हुए अग्नि को (**ईमहे**) व्याप्त होवें, वैसे (**त्वा**) आपको प्राप्त होवें और हे (**अग्ने**) अग्नि के सदृश विद्या से प्रकाशित! जैसे सूर्य्य (**बृहता**) बड़े (**रोचनेन**) प्रकाश से (**दीद्यानः**) प्रकाशित होता हुआ (**दिवः**) कामना करने के योग्य पदार्थों को (**विशः**) प्रजाओं को (**अनयः**) पहुँचाता है, वैसे (**त्वम्**) आप इनको प्राप्त कराइये॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो विद्वान् जनों के सदृश अग्नि का अनुचरण करते हैं, वे कृतकार्य्य होते हैं॥७॥

पुनर्मनुष्याः किं प्राप्नुयुरित्याह॥

फिर मनुष्य किस को प्राप्त होवें, इस विषय को कहते हैं॥

विशां कविं विश्पतिं शश्वतीनां नितोशनं वृषभं चर्षणीनाम्।
प्रेतीषणिमिषयन्तं पावकं राजन्तमग्निं यजतं रयीणाम्॥८॥

विशाम्। कविम्। विश्पतिम्। शश्वतीनाम्। निऽतोशनम्। वृषभम्। चर्षणीनाम्। प्रेतिऽइषणिम्। इषयन्तम्। पावकम्। राजन्तम्। अग्निम्। यजतम्। रयीणाम्॥८॥

पदार्थः-(**विशाम्**) प्रजानाम् (**कविम्**) क्रान्तदर्शनम् (**विश्पतिम्**) प्रजापालकम् (**शश्वतीनाम्**) अनादिभूतानाम् (**नितोशनम्**) पदार्थानां हिंसकम् (**वृषभम्**) बलिष्ठम् (**चर्षणीनाम्**) मनुष्याणाम् (**प्रेतीषणिम्**) प्रकर्षेण प्राप्तानामेषितारम् (**इषयन्तम्**) प्रापयन्तम् (**पावकम्**) (**राजन्तम्**) (**अग्निम्**) (**यजतम्**) सङ्गन्तव्यम् (**रयीणाम्**) धनानाम्॥८॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा वयं शश्वतीनां विशां मध्ये कविं विश्पतिं नितोशनं वृषभं चर्षणीनां रयीणां प्रेतीषणिमिषयन्तं यजतं राजन्तं पावकमग्निं सम्प्रयुञ्ज्महि तथा यूयमपि सम्प्रयुङ्ध्वम्॥८॥

भावार्थः-ये मनुष्या अग्निं शरीरवत्सेवन्ते ते प्रजापतयो जायन्ते॥८॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे हम लोग **(शश्वतीनाम्)** अनादिभूत **(विशाम्)** प्रजाओं के मध्य में **(कविम्)** तेजयुक्त दर्शन जिसका ऐसे **(विश्पतिम्)** प्रजा के पालने वाले **(नितोशनम्)** पदार्थों के नाश करने वाले **(वृषभम्)** बलिष्ठ और **(चर्षणीनाम्)** मनुष्यों और **(रयीणाम्)** धनों और **(प्रेतीषणिम्)** अच्छे प्रकार से प्राप्त हुओं को प्राप्त होने वाले **(इषयन्तम्)** प्राप्त कराते हुए और **(यजतम्)** प्राप्त होने योग्य **(राजन्तम्)** प्रकाशित होते हुए **(पावकम्)** पवित्र करने वाले **(अग्निम्)** अग्नि को उत्तम प्रकार कार्य्यों में युक्त करें, वैसे आप लोग भी संप्रयुक्त करो॥८॥

भावार्थः-जो मनुष्य अग्नि का शरीर के सदृश सेवन करते हैं, वे प्रजा के स्वामी होते हैं॥८॥

पुनः सोऽग्निः कीदृश इत्याह॥

फिर वह अग्नि कैसा है, इस विषय को कहते हैं॥

सो अ॑ग्न ईजे शशमे च मर्तो यस्त आन॑ट् समिधा॑ हव्यदा॑तिम्।

य आहु॑तिं परि वेदा नमो॑भिर्विश्वेत्स वामा द॑धते त्वोतः॥ ९॥

सः। अग्ने। ईजे। शशमे। च। मर्तः॑। यः। ते। आन॑ट्। सम्ऽइधा॑। हव्यऽदा॑तिम्। यः। आऽहु॑तिम्। परि॑। वेद॑। नम॑ःऽभिः। विश्वा॑। इत्। सः। वामा। दधते। त्वाऽऊ॑तः॥ ९॥

पदार्थः-**(सः)** **(अग्ने)** पावकवद्वर्त्तमान विद्वन् **(ईजे)** सङ्गच्छ **(शशमे)** प्रशंसामि। **शशमान इति अर्चतिकर्म्मा** (निघं०३.१४) **(च)** **(मर्त्तः)** मनुष्य **(यः)** **(ते)** तव **(आनट्)** व्याप्नोति **(समिधा)** **(हव्यदातिम्)** यो हव्यानि ददाति तम् **(यः)** **(आहुतिम्)** या समन्ताद्धूयते ताम् **(परि)** सर्वतः **(वेदा)** जानाति। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(नमोभिः)** अन्नादिभिः **(सत्कारैर्वा)** **(विश्वा)** सर्वाणि **(इत्)** एव **(सः)** **(वामा)** प्रशस्यानि कर्म्माणि **(दधते)** **(त्वोतः)** त्वया रक्षितः॥९॥

अन्वयः-हे अग्ने विद्वन्! ते यो मर्त्तः समिधा हव्यदातिमानट् तद्वेत्ता सोऽहं तमीजे शशमे च। य आहुतिं परि वेदा स त्वोतो नमोभिर्विश्वा वामं दधते॥९॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यः प्रशंसितकार्य्यकगोऽग्निरसति तं विजानीत॥९॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के सदृश वर्त्तमान विद्वन्! **(ते)** आप का **(यः)** जो **(मर्त्तः)** मनुष्य **(समिधा)** समिध् से **(हव्यदातिम्)** हवन करने योग्य वस्तुओं के देने वाले को **(आनट्)** व्याप्त होता है उसको जानने वाला **(सः)** वह मैं उसको **(ईजे)** उत्तम प्रकार प्राप्त होता और **(शशमे)** प्रशंसा करता हूँ **(च)** और **(यः)** जो **(आहुतिम्)** आहुति को अर्थात् जो चारों ओर होमी जाती उस सामग्री को **(परि)** सब प्रकार से **(वेदा)** जानता है **(सः)** वह **(त्वोतः)** आप से रक्षित हुआ **(नमोभिः)** अन्न आदिकों वा सत्कारों से **(विश्वा)** सम्पूर्ण **(वामा)** प्रशंसा करने योग्य कर्म्मों को **(इत्)** ही **(दधते)** धारण करता है॥९॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो प्रशंसित कार्य्यों का करने वाला अग्नि है, उसको विशेष कर जानिये॥९॥

ये पदार्थविद्याप्राप्तये प्रयतन्ते ते भाग्यशालिनो जायन्त इत्याह॥

जो पदार्थविद्याप्राप्ति के लिये प्रयत्न करते हैं, वे भाग्यशाली होते हैं,

इस विषय को कहते हैं॥

अस्मा उ ते महि महे विधेम नमोभिरग्ने समिधोत हव्यैः।

वेदी सूनो सहसो गीर्भिरुक्थैरा ते भद्रायां सुमतौ यतेम॥१०॥

अस्मै। ॐ इति। ते। महि। महे। विधेम। नमःऽभिः। अग्ने। सम्ऽइधा। उत। हव्यैः। वेदी। सूनो इति। सहसः। गीःऽभिः। उक्थैः। आ। ते। भद्रायाम्। सुमतौ। यतेम॥१०॥

पदार्थः-(**अस्मै**) (**उ**) (**ते**) तुभ्यम् (**महि**) महत् (**महे**) महते (**विधेम**) सत्कुर्य्याम (**नमोभिः**) अन्नादिभिः (**अग्ने**) विद्वन् (**समिधा**) इन्धनादिनेव विद्यया (**उत**) अपि (**हव्यैः**) अत्तुमर्हैः (**वेदी**) विदन्ति सुखानि यस्यां सा (**सूनो**) अपत्य (**सहसः**) बलवतः (**गीर्भिः**) वाग्भिः (**उक्थैः**) कीर्त्तनीयैर्वचनैः (**आ**) (**ते**) तव (**भद्रायाम्**) (**सुमतौ**) उत्तमायां प्रज्ञायाम् (**यतेम**) प्रयत्नं कुर्य्याम॥१०॥

अन्वयः-हे सहसः सूनोऽग्ने! यथा समिधा नमोभिर्विश्वा वामा ये दधते य आहुतिं दृष्ट्वा परिवेद। या वेदी भवति तां गीर्भिरुक्थैर्हव्यैरस्मै महे ते मह्याविधेम ताभिर्वाग्भिस्सहिता यूयमु उत वयं च ते भद्रायां सुमतौ यतेम॥१०॥

भावार्थः-हे मनुष्या! युष्माभिरस्मै प्राणिसमुदायाय सामग्र्या यज्ञो विधेयः॥१०॥

पदार्थः-हे (**सहसः**) बलवान् के (**सूनो**) पुत्र (**अग्ने**) विद्वज्जन! जैसे (**समिधा**) ईंधन आदि के सदृश विद्या और (**नमोभिः**) अन्न आदिकों से सम्पूर्ण स्त्रियों को जो धारण करते हैं और जो आहुति को देखकर जानता है और जो (**वेदी**) जानते हैं सुखों को जिसमें वह होती है, उसका (**गीर्भिः**) वाणियों और (**उक्थैः**) कीर्त्तन करने योग्य वचनों से और (**हव्यैः**) भोजन करने योग्य पदार्थों से (**अस्मै**) इस (**महे**) बड़े (**ते**) आपके लिये (**महि**) बहुत (**आ**) सब प्रकार से (**विधेम**) सत्कार करें, उन वाणियों के सहित आप लोग (**उ**) भी (**उत**) और हम भी (**ते**) आपकी (**भद्रायाम्**) कल्याणकारिणी (**सुमतौ**) उत्तम बुद्धि में (**यतेम**) प्रयत्न करें॥१०॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! आप लोग इस प्राणियों के समुदाय के लिये सामग्री से यज्ञ करें॥१०॥

पुनर्मनुष्याः किं प्राप्नुयुरित्याह॥

फिर मनुष्य किस को प्राप्त होवें, इस विषय को कहते हैं॥

आ यस्ततन्थ रोदसी वि भासा श्रवोभिश्च श्रवस्य१स्तरुत्रः।

बृहद्भिर्वाजैः स्थविरेभिरस्मे रेवद्भिरग्ने वितरं वि भाहि॥११॥

आ। यः। ततन्थ। रोदसी इति। वि। भासा। श्रवःऽभिः। च। श्रवस्यः। तरुत्रः। बृहत्ऽभिः। वाजैः। स्थविरेभिः। अस्मे इति। रेवत्ऽभिः। अग्ने। विऽतरम्। वि। भाहि॥ ११॥

पदार्थः-(**आ**) (**यः**) (**ततन्थ**) विस्तृणोति (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**वि**) (**भासा**) दीप्त्या (**श्रवोभिः**) श्रवणाद्यैरन्नादिभिर्वा (**च**) (**श्रवस्यः**) श्रोतुमर्हः (**तरुत्रः**) दुःखात्तारकः (**बृहद्भिः**) महद्भिः (**वाजैः**) स-ग्रामैः सह वर्त्तमानैः (**स्थविरेभिः**) स्थूलैः (**अस्मै**) (**रेवद्भिः**) बहुधनयुक्तैः (**अग्ने**) विद्वन् (**वितरम्**) विविधतया तरन्ति येन तम् (**वि**) (**भाहि**)॥ ११॥

अन्वयः-हे अग्ने विद्वन्! योऽग्निर्भासा श्रवोभिश्च श्रवस्यस्तरुत्रो बृहद्भिः स्थविरेभिर्वाजै रेवद्भिः सह रोदसी व्या ततन्थाऽस्मे तं वितरं वि भाहि॥ ११॥

भावार्थः-यदि विद्वांसः सुविद्ययाऽग्नेः प्रभावं विजानीयुस्तर्हि विस्मयं प्राप्य चकिता जायेरन्॥ ११॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) विद्वन्! (**यः**) जो अग्नि (**भासा**) प्रकाश से और (**श्रवोभिः**) श्रवण आदि वा अन्न आदि से (**च**) भी (**श्रवस्यः**) सुनने के योग्य और (**तरुत्रः**) दुःख से पार करने वाला (**बृहद्भिः**) बड़े और (**स्थविरेभिः**) स्थूल अर्थात् भारी (**वाजैः**) संग्रामों के सहित वर्त्तमान (**रेवद्भिः**) बहुत धनों से युक्त जनों के साथ (**रोदसी**) द्यावापृथिवी को (**वि, आ, ततन्थ**) विशेष कर सब प्रकार विस्तार करता है तथा (**अस्मे**) हम लोगों के लिये उस (**वितरम्**) वितर अर्थात् विविध प्रकार से तरते हैं जिससे उसको (**वि, भाहि**) उत्तम प्रकार प्रकाशित कीजिये॥ ११॥

भावार्थः-जो विद्वान् जन उत्तम विद्या से अग्नि के प्रभाव को जानें तो विस्मय को प्राप्त होकर चकित होवें॥ ११॥

पुनर्विद्वद्भिः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर विद्वज्जन क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

नृवद्वसो सदमिद्धेह्यस्मे भूरि तोकाय तनयाय पश्वः।
पूर्वीरिषो बृहतीरारेअघा अस्मे भद्रा सौश्रवसानि सन्तु॥ १२॥

नृऽवत्। वसो इति। सदम्। इत्। धेहि। अस्मे इति। भूरि। तोकाय। तनयाय। पश्वः। पूर्वीः। इषः। बृहतीः। आरेऽअघाः। अस्मे इति। भद्रा। सौश्रवसानि। सन्तु॥ १२॥

पदार्थः-(**नृवत्**) मनुष्यवत् (**वसो**) यो वसति तत्सम्बुद्धौ (**सदम्**) सीदन्ति यस्मिंस्तत् (**इत्**) एव (**धेहि**) (**अस्मे**) अस्मासु (**भूरि**) (**तोकाय**) (**तनयाय**) (**पश्वः**) पशून् गवादीन् (**पूर्वीः**) प्राचीनाः (**इषः**) अन्नादिसामग्रीः (**बृहतीः**) महतीः (**आरेअघाः**) आरे दूरेऽघानि पापानि यासान्ताः (**अस्मे**) अस्मभ्यम् (**भद्रा**) भद्राणि कल्याणकराणि (**सौश्रवसानि**) सुश्रवसि संस्कृतेऽन्ने भवानि (**सन्तु**)॥ १२॥

अन्वयः-हे वसो विद्वन्! त्वमस्मे तोकाय तनयाय पश्वस्सदं बृहतीः पूर्वीरारेऽघा इषश्च भूरि धेहि। यतोऽस्मे इन्नृवद्भद्रा सौश्रवसानि सन्तु॥ १२॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। त एव विद्वांसो ये मातापितृवज्जगज्जनेभ्यो हितानि वस्तूनि ददति॥१२॥

पदार्थः-हे **(वसो)** वसने वाले विद्वज्जन! आप **(अस्मे)** हम लोगों में **(तोकाय)** कन्या और **(तनयाय)** पुत्र के लिये **(पश्वः)** पशु गौ आदि को तथा **(सदम्)** वर्त्तमान होते हैं जिसमें उस गृह और **(बृहतीः)** बड़ी **(पूर्वीः)** प्राचीन **(आरेअघाः)** दूर पाप जिनके उन **(इषः)** अन्न आदि सामग्रियों को **(भूरि)** बहुत **(धेहि)** धारण करिये जिससे **(अस्मे)** हम लोगों के लिये **(इत्)** ही **(नृवत्)** मनुष्यों के सदृश **(भद्रा)** कल्याणकारक **(सौश्रवसानि)** उत्तम प्रकार संस्कार से युक्त अन्न में हुए पदार्थ **(सन्तु)** हों॥१२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। वे ही विद्वान् हैं, जो मातापिताओं के समान सांसारिक जनों के लिये हितकारक वस्तुओं को देते हैं॥१२॥

अथेश्वरवत्प्रजापालनविषयमाह॥

अब ईश्वर के तुल्य प्रजापालन विषय को कहते हैं॥

पुरूण्यग्ने पुरुधा त्वाया वसूनि राजन्वसुता ते अश्याम्।
पुरूणि हि त्वे पुरुवार सन्त्यग्ने वसु विधते राजनि त्वे॥१३॥३६॥४॥

पुरूणि। अग्ने। पुरुधा। त्वाऽया। वसूनि। राजन्। वसुता। ते। अश्याम्। पुरूणि। हि। त्वे इति। पुरुऽवार। सन्ति। अग्ने। वसु। विधते। राजनि। त्वे इति॥१३॥३६॥४॥

पदार्थः-**(पुरूणि)** बहूनि **(अग्ने)** विद्वन् **(पुरुधा)** बहुभिः प्रकारैर्धारितानि **(त्वाया)** त्वया सह **(वसूनि)** द्रव्याणि **(राजन्)** विद्याविनयाभ्यां प्रकाशमान **(वसुता)** वसूनां द्रव्याणां भावः **(ते)** तव **(अश्याम्)** प्राप्नुयाम् **(पुरूणि)** बहूनि **(हि)** खलु **(त्वे)** त्वयि **(पुरुवार)** बहुभिर्वरणीय **(सन्ति)** **(अग्ने)** विद्याविनयाभ्यां प्रकाशमान **(वसु)** द्रव्यम् **(विधते)** विधानं कुर्वते **(राजनि)** **(त्वे)** त्वयि॥१३॥

अन्वयः-हे अग्ने राजन्! ते या वसुता तत्रस्थानि पुरूणि पुरुधा वसूनि त्वाया सहाऽहमश्याम्। हे पुरुवाराग्ने! हि त्वे पुरूणि वसूनि सन्ति राजनि त्वे सति विधते कल्याणं जायते स त्वमस्माकं राजा भव॥१३॥

भावार्थः-त एव राजान उत्तमाः सन्ति ये परमेश्वरवत्पक्षपातं विहाय पुत्रवत्प्रजाः पालयन्ति ता एव प्रजाः श्रेष्ठाः सन्ति या राजेश्वरभक्ता वर्त्तन्त इति॥१३॥

अत्राग्निविद्वदीश्वरगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

अस्मिन्नध्याये मित्रावरुणाश्विसवितृमरुदग्न्यादिगुणवर्णनादेतदध्यायोक्तर्थस्य पूर्वाध्यायार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य्याणां श्रीमद्विरजानन्दसरस्वतीस्वामिनां शिष्येण श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीस्वामिना विरचिते संस्कृताऽऽर्य्यभाषाविभूषित ऋग्वेदभाष्ये चतुर्थाष्टके चतुर्थोऽध्यायः षट्त्रिंशो वर्गश्च षष्ठे मण्डले प्रथमं सूक्तं च समाप्तम्॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्वन्! **(राजन्)** विद्या और विनय से प्रकाशमान **(ते)** आपके समीप जो **(वसुता)** द्रव्यों का होना उसमें वर्त्तमान **(पुरूणि)** बहुत और **(पुरुधा)** बहुत प्रकारों से धारण किये हुए

(वसूनि) द्रव्यों को **(त्वाया)** आपके साथ मैं **(अश्याम्)** प्राप्त होऊँ और हे **(पुरुवार)** बहुतों से स्वीकार करने योग्य **(अग्ने)** विद्या और विनय से प्रकाशमान **(हि)** निश्चय से **(त्वे)** आप में **(पुरूणि)** बहुत द्रव्य **(सन्ति)** हैं **(राजनि)** राजा **(त्वे)** आपके होने पर **(वसु)** द्रव्य का **(विधते)** विधान करने वाले के लिये कल्याण होता है, वह आप हमारे राजा हूजिये॥१३॥

भावार्थ:-वे ही राजा उत्तम हैं जो परमेश्वर के सदृश पक्षपात का त्याग करके पुत्र के सदृश प्रजाओं का पालन करते हैं और वे ही प्रजाजन श्रेष्ठ होते हैं जो राजा और ईश्वर के भक्त हैं॥१३॥

इस सूक्त में अग्नि, विद्वान् और ईश्वर के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

इस अध्याय में मित्रावरुणा, अश्वि सूर्य, वायु और अग्नि आदि के गुणवर्णन करने से इस अध्याय में कहे हुए अर्थ की इससे पूर्व अध्याय के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह श्रीमत्परहंसपरिव्राजकाचार्य श्रीमद्विरजानन्द सरस्वती स्वामी जी के शिष्य श्रीमद्दयानन्द सरस्वती स्वामिविरचित संस्कृतार्य्यभाषाविभूषित ऋग्वेदभाष्य में चतुर्थ अष्टक में चतुर्थ अध्याय, छत्तीसवां वर्ग और छठे मण्डल में प्रथम सूक्त भी समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ पञ्चमोऽध्यायः॥

ओ३म् विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद्भ॒द्रं तन्न॒ आ सु॑व॥ ऋ०५.८२.५॥

अथैकादशर्चस्य द्वितीयस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। अग्निर्देवता। १, ९ भुरिगुष्णिक्। २ स्वराडुष्णिक्। ७ निचृदुष्णिक्। ८ उष्णिक् छन्दः। ऋषभः स्वरः। ३, ४ अनुष्टुप्। ५, ६, १० निचृदनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः। ११ भुरिगतिजगती छन्दः। निषादः स्वरः॥

अथाग्निः कीदृशोऽस्तीत्याह॥

अभ पञ्चमाध्याय का आरम्भ है और छठे मण्डल में ग्यारह ऋचावाले दूसरे सूक्त का आरम्भ किया जाता है, उसके प्रथम मन्त्र में अग्नि कैसा होता है, इस विषय को कहते हैं॥

त्वं हि क्षैत॑व॒द्यशोऽग्ने॑ मि॒त्रो न पत्य॑से।

त्वं वि॑चर्षणे॒ श्रवो॒ वसो॑ पु॒ष्टिं न पु॑ष्यसि॥ १॥

त्वम्। हि। क्षैत॑ऽवत्। यश॑ः। अग्ने॑। मि॒त्रः। न। पत्य॑से। त्वम्। वि॒ऽच॒र्ष॒णे॒। श्रव॑ः। वसो॒ इति॑। पु॒ष्टिम्। न। पु॒ष्य॒सि॒॥ १॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**हि**) यतः (**क्षैतवत्**) क्षितौ भववत् (**यशः**) धनमन्नं कीर्तिं वा (**अग्ने**) पावक इव वर्त्तमान (**मित्रः**) सखा (**न**) इव (**पत्यसे**) पतिरिवाचरसि (**त्वम्**) (**विचर्षणे**) प्रकाशक (**श्रवः**) अन्नं श्रवणं वा (**वसो**) वासयितः (**पुष्टिम्**) धातुसाम्याद् बलादियोगम् (**न**) इव (**पुष्यसि**)॥१॥

अन्वयः-हे विचर्षणेऽग्ने! हि त्वं क्षैतवद्यशो मित्रो न पत्यसे। हे वसो! त्वं पुष्टिं न श्रवः पुष्यसि तस्मात्सुखी भवसि॥१॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा पार्थिवानि शुष्कानि वस्तूनि नीरसानि भवन्ति तथाऽविद्वांसोऽधार्मिका निष्ठुरा जायन्ते॥१॥

पदार्थः-हे (**विचर्षणे**) प्रकाश करते वाले (**अग्ने**) अग्नि के सदृश वर्त्तमान! (**हि**) जिस कारण (**त्वम्**) आप (**क्षैतवत्**) पृथिवी में हुए के समान (**यशः**) धन अन्न वा कीर्त्ति को (**मित्रः**) मित्र (**न**) जैसे वैसे (**पत्यसे**) पति के सदृश आचरण करते हो ओर हे (**वसो**) वसाने वाले! (**त्वम्**) आप (**पुष्टिम्**) धातु के साम्य से बल आदि के योग को (**न**) जैसे वैसे (**श्रवः**) अन्न वा श्रवण का (**पुष्यसि**) पालन करते हो, इससे सुखी होते हो॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे पृथिवी में उत्पन्न हुए शुष्क वस्तु रस से रहित होते हैं, वैसे विद्यारहित और धर्म्मरहित जन दयारहित और कोमलतारहित होते हैं॥२॥

विद्वद्भिरत्र कथं वर्त्तितव्यमित्याह॥

विद्वानों को इस संसार में कैसा वर्त्ताव करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

त्वां हि ष्मा चर्षणयो यज्ञेभिर्गीर्भिरीळते।

त्वां वाजी यात्यवृको रजस्तूर्विश्वचर्षणिः॥ २॥

त्वाम्। हि। स्म। चर्षणयः। यज्ञेभिः। गीःऽभिः। ईळते। त्वाम्। वाजी। याति। अवृकः। रजःऽतूः। विश्वऽचर्षणिः॥ २॥

पदार्थः-(**त्वाम्**) (**हि**) यतः (**स्मा**) एव। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। (**चर्षणयः**) मनुष्याः (**यज्ञेभिः**) अध्ययनाध्यापनादिभिः (**गीर्भिः**) वाग्भिः (**ईळते**) स्तुवन्ति (**त्वाम्**) (**वाजी**) वेगवान् (**याति**) (**अवृकः**) चोरादिसङ्गरहितः (**रजस्तूः**) यो रजांसि लोकान् वर्धयति (**विश्वचर्षणिः**) विश्वे चर्षणयो मननशीला मनुष्या यस्य सः॥ २॥

अन्वयः-हे विद्वन्! ये चर्षणयो यज्ञेभिर्गीर्भिस्त्वां हीळते स्मा रजस्तूर्विश्वचर्षणिरवृको वाजी त्वां याति॥ २॥

भावार्थः-ये मनुष्या यं विद्वांसं सेवन्ते स तान् विद्यां प्रदद्यात्॥ २॥

पदार्थः-हे विद्वन्! जो (**चर्षणयः**) मनुष्य (**यज्ञेभिः**) अध्ययन-अध्यापन आदिकों और (**गीर्भिः**) वाणियों से (**त्वाम्**) आपकी (**हि**) निश्चित (**ईळते**) स्तुति करते (**स्मा**) ही हैं (**रजस्तूः**) लोकों का बढ़ाने वाला (**विश्वचर्षणिः**) सम्पूर्ण विचारशील मनुष्य जिसके वह (**अवृकः**) चोर आदिकों के संग से रहित (**वाजी**) वेग से युक्त हुआ (**त्वाम्**) आपको (**याति**) प्राप्त होता है॥ २॥

भावार्थः-जो मनुष्य जिस विद्वान् का सेवन करते हैं, वह उनके लिये विद्या देवे॥ २॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

सजोषस्त्वा दिवो नरो यज्ञस्य केतुमिन्धते।

यद्ध स्य मानुषो जनः सुम्नायुर्जुह्वे अध्वरे॥ ३॥

सऽजोषः। त्वा। दिवः। नरः। यज्ञस्य। केतुम्। इन्धते। यत्। ह। स्यः। मानुषः। जनः। सुम्नऽयुः। जुह्वे। अध्वरे॥ ३॥

पदार्थः-(**सजोषः**) समानप्रीतिसेविनः (**त्वा**) त्वाम् (**दिवः**) सत्यं कामयमानाः (**नरः**) नेतारः (**यज्ञस्य**) न्यायव्यवहारस्य (**केतुम्**) प्रज्ञाम् (**इन्धते**) प्रकाशन्ते (**यत्**) यतः (**ह**) खलु (**स्यः**) सः (**मानुषः**) मननशीलः (**जनः**) प्रसिद्धः (**सुम्नायुः**) सुखं कामुकः (**जुह्वे**) स्पर्द्धे (**अध्वरे**) अहिंसामये॥ ३॥

अन्वयः:-हे विद्वन्! सजोषो दिवो नरो यज्ञस्य केतुं त्वा त्वामिन्धते यद्ध स्यो मानुषः सुम्नायुर्जनस्त्वमध्वरे वर्त्तसे तमहं जुह्वे॥३॥

भावार्थः:-तस्यैव सङ्गो मनुष्यैः कर्त्तव्यो यं धार्म्मिका विद्वांसः प्रशंसेयुः॥३॥

पदार्थः:–हे विद्वान्! **(सजोषः)** तुल्य प्रीति के सेवन करने वाले **(दिवः)** सत्य की कामना करते हुए **(नरः)** नायक जन **(यज्ञस्य)** न्यायव्यवहार की **(केतुम्)** बुद्धि को और **(त्वा)** आपको **(इन्धते)** प्रकाशित करते हैं और **(यत्)** जिससे **(ह)** निश्चय करके **(स्यः)** वह **(मानुषः)** विचारशील और **(सुम्नायुः)** सुख की कामना करने वाले **(जनः)** प्रसिद्ध मनुष्य आप **(अध्वरे)** अहिंसारूप में वर्त्तमान होते हो, उसकी मैं **(जुह्वे)** स्पर्द्धा करता हूँ॥३॥

भावार्थः:-उसी का संग मनुष्यों को करना चाहिये, जिसकी धार्मिक विद्वान् जन प्रशंसा करें॥३॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

ऋधद्यस्ते सुदानवे धिया मर्तः शशमते।

ऊती ष बृहतो दिवो द्विषो अंहो न तरति॥४॥

ऋधत्। यः। ते। सुऽदानवे। धिया। मर्तः। शशमते। ऊती। सः। बृहतः। दिवः। द्विषः। अंहः। न। तरति॥४॥

पदार्थः:-**(ऋधत्)** ऋध्नुयात् समर्द्धयेत् **(यः)** **(ते)** तुभ्यम् **(सुदानवे)** उत्तमदानकर्त्रे **(धिया)** प्रज्ञया **(मर्त्तः)** मनुष्यः **(शशमते)** शाम्येत् **(ऊती)** ऊत्या रक्षादिकर्म्मणा **(सः)** **(बृहतः)** **(दिवः)** कामयमानान् **(द्विषः)** शत्रोः **(अंहः)** अपराधः **(न)** इव **(तरति)**॥४॥

अन्वयः:-हे विद्वन्! यो मर्त्तो धिया सुदानवे त ऋधच्छशमते स ऊती बृहतो दिवो द्विषोंऽहो न तरति॥४॥

भावार्थः:-ये मनुष्या धर्म्मात्मभ्यः सुखप्रदाः स्युस्ते यथा धार्मिकाः पापं त्यजन्ति तथैव शत्रूनुल्लङ्घयन्ति॥४॥

पदार्थः:–हे विद्वन्! **(यः)** जो **(मर्त्तः)** मनुष्य **(धिया)** बुद्धि से **(सुदानवे)** उत्तम दान करने वाले **(ते)** आपके लिये **(ऋधत्)** उत्तम प्रकार ऋद्धि करे तथा **(शशमते)** शान्त हो **(सः)** वह **(ऊती)** रक्षण आदि कर्म्म से **(बृहतः)** बड़े **(दिवः)** कामना करते हुओं के **(द्विषः)** शत्रु का **(अंहः)** अपराध **(न)** जैसे वैसे **(तरति)** पार होता है॥४॥

भावार्थः:-जो मनुष्य धर्मात्मा जनों के लिये सुख देने वाले होवें, वे जैसे धार्मिक जन पाप का नाश करते हैं, वैसे ही शत्रुओं का उल्लघंन करते हैं॥४॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

स॒मिधा॒ यस्त॒ आहु॑तिं॒ निशि॑तिं॒ मर्त्यो॑ नश॑त्।

व॒याव॑न्तं॒ स पु॑ष्यति॒ क्षय॑मग्ने श॒तायु॑षम्॥५॥१॥

स॒म्ऽइध्या॑। यः। ते॒। आऽहु॑तिम्। निऽशि॑तिम्। मर्त्यः॑। नश॑त्। व॒याऽव॑न्तम्। सः। पु॒ष्य॒ति॒। क्षय॑म्। अ॒ग्ने॒। श॒तऽआ॑युषम्॥५॥१॥

पदार्थः-(**समिधा**) प्रदीपिकया (**यः**) (**ते**) तुभ्यम् (**आहुतिम्**) (**निशितिम्**) तीक्ष्णाम् (**मर्त्यः**) मनुष्यः (**नशत्**) व्याप्नोति। **नशदिति व्याप्तिकर्म्मा।** (निघं०२.१८) (**वयावन्तम्**) बहुपदार्थयुक्तम् (**सः**) (**पुष्यति**) (**क्षयम्**) गृहम् (**अग्ने**) विद्वन् (**शतायुषम्**) शतवर्षजीविनम्॥५॥

अन्वयः-हे अग्ने! यो मर्त्यः समिधा ते निशितिमाहुतिं नशत् स वयावन्तं क्षयं शतायुषं प्राप्य पुष्यति॥५॥

भावार्थः-ये मनुष्या विद्वत्सेवया शुभगुणकर्मस्वभावान् प्राप्नुवन्ति ते वृद्धसुखा चिरञ्जीविनः सुन्दरगृहाश्च भूत्वा शरीरात्मभ्यां पुष्टा जायन्ते॥५॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) विद्वन् जन! (**यः**) जो (**मर्त्यः**) मनुष्य (**समिधा**) अग्नि को प्रदीप्त करने वाले वस्तु से (**ते**) आपके लिये (**निशितिम्**) तीक्ष्ण अतितीव्र (**आहुतिम्**) आहुति को (**नशत्**) व्याप्त होता है (**सः**) वह (**वयावन्तम्**) बहुत पदार्थों से युक्त (**क्षयम्**) और गृह (**शतायुषम्**) सौ वर्ष पर्य्यन्त जीवनेवाले को प्राप्त होकर (**पुष्यति**) पुष्ट होता है॥५॥

भावार्थः-जो मनुष्य विद्वानों की सेवा से उत्तम गुण, कर्म्म और स्वभाववालों को प्राप्त होते हैं, वे सुख की वृद्धि और अतिकाल पर्य्यन्त जीवन से युक्त और अच्छे गृहों वाले होकर शरीर और आत्मा से पुष्ट होते हैं॥५॥

पुनः सोऽग्निः कीदृश इत्याह॥

फिर वह अग्नि कैसा है, इस विषय को कहते हैं॥

त्वे॒षस्ते॑ धू॒म ऋ॑ण्वति दि॒वि षञ्छु॒क्र आत॑तः।

सूरो॒ न हि द्यु॒ता त्वं कृ॒पा पा॑वक॒ रोच॑से॥६॥

त्वे॒षः। ते॒। धू॒मः। ऋ॒ण्व॒ति॒। दि॒वि। सन्। शु॒क्रः। आऽत॑तः। सूरः॑। न। हि। द्यु॒ता। त्वम्। कृ॒पा। पा॒व॒क॒। रोच॑से॥६॥

पदार्थः-(**त्वेषः**) प्रदीप्तः (**ते**) तस्य। अत्र पुरुषव्यत्ययः। (**धूमः**) (**ऋण्वति**) गच्छति। **ऋण्वतीति गतिकर्मा।** (निघं०२.१४) (**दिवि**) प्रकाशे (**सन्**) वर्त्तमानः (**शुक्रः**) शुद्धिकरः (**आततः**) व्याप्तः (**सूरः**) सूर्यः (**न**) इव (**हि**) एव (**द्युता**) प्रकाशेन (**त्वम्**) (**कृपा**) कृपया (**पावक**) पावक इव वर्त्तमान (**रोचसे**) प्रकाशसे॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा ते सूरो न त्वेषो धूमः शुक्र आततः सन् दिव्यृण्वति तथा हि त्वं द्युता कृपा पावक इव वर्त्तमानः सन् रोचसे॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। हे विद्वांसो! यस्याग्नेर्धूमेन वाय्वादयः पदार्थाः शुद्धा जायन्ते यत् सूर्य्यादिः कारणमस्ति तद्विद्यां प्राप्य शुभगुणेषु भवन्तः प्रकाशन्ताम्॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(ते)** उसका **(सूरः)** सूर्य्य **(न)** जैसे वैसे **(त्वेषः)** प्रदीप्त **(धूमः)** धूम **(शुक्रः)** शुद्धि का करने वाला **(आततः)** व्याप्त **(सन्)** होता हुआ **(दिवि)** प्रकाश में **(ऋण्वति)** चलता है, वैसे **(हि)** ही **(त्वम्)** आप **(द्युता)** प्रकाश और **(कृपा)** कृपा से **(पावक)** अग्नि के सदृश वर्त्तमान हुए **(रोचसे)** प्रकाशित होते हो॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। हे विद्वान् जनो! जिस अग्नि के धूम से वायु आदि पदार्थ शुद्ध होते हैं और जो सूर्य्य आदि का कारण है, उसकी विद्या को प्राप्त होकर उत्तम गुणों में आप लोग प्रकाशित हूजिये॥६॥

पुनर्मनुष्यैः कथं वर्त्तितव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को कैसा वर्त्ताव करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

अधा हि विक्ष्वीड्योऽसि प्रियो नो अतिथिः।

रण्वः पुरीव जूर्यः सूनुर्न त्रययाय्यः॥७॥

अध। हि। विक्षु। ईड्यः। असि। प्रियः। नः। अतिथिः। रण्वः। पुरिऽइव। जूर्यः। सूनुः। न। त्रययाय्यः॥७॥

पदार्थः-**(अधा)** अथ। अथ **निपातस्य चेति** दीर्घः। **(हि)** यतः **(विक्षु)** प्रजासु **(ईड्यः)** स्तोतुमर्हः **(असि)** **(प्रियः)** कमनीयः **(नः)** अस्माकम् **(अतिथिः)** अनियततिथिः **(रण्वः)** रममाणः **(पुरीव)** यथा रमणीया नगरी **(जूर्य्यः)** जीर्णः **(सूनुः)** अपत्यम् **(न)** इव **(त्रययाय्यः)** यस्त्रयं रक्षकं याति प्राप्नोति सः॥७॥

अन्वयः-हे विद्वन्! हि त्वं विक्ष्वीड्यो नः प्रियः पुरीव रण्वो जूर्य्यस्त्रययाय्यः सूनुर्नाऽतिथिरसि तस्मादधा सत्कर्त्तव्योऽसि॥७॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथाऽतिथयः प्रजाजनैः सत्कर्त्तव्याः सन्ति यथात्र मातापितृभ्यां सन्तानाः पालनीया भवन्ति तथाहि धार्मिका विद्वांसोऽर्चनीया भवन्ति॥७॥

पदार्थः-हे विद्वन्! **(हि)** जिस कारण से आप **(विक्षु)** प्रजाओं में **(ईड्यः)** स्तुति करने के योग्य और **(नः)** हम लोगों के **(प्रियः)** कामना करने योग्य **(पुरीव)** रमणीयपुरी के समान **(रण्वः)** रमण करता हुआ **(जूर्य्यः)** जीर्ण **(त्रययाय्यः)** रक्षक को प्राप्त होने वाला **(सूनुः)** सन्तान **(न)** जैसे वैसे **(अतिथिः)** नहीं नियत तिथि जिसकी ऐसे **(असि)** हो, तिससे **(अधा)** इसके अनन्तर सत्कार करने योग्य हो॥७॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे अतिथिजन प्रजाजनों से सत्कार करने योग्य होते और जैसे यहाँ माता और पिता से सन्तान पालन करने योग्य होते हैं, वैसे ही धार्म्मिक विद्वान् जन सत्कार करने योग्य होते हैं॥७॥

पुनर्विदुषा किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर विद्वान् को क्या करना चाहिये विषय को कहते हैं॥

क्रत्वा हि द्रोणे अज्यसेऽग्ने वाजी न कृत्व्यः।

परिज्मेव स्वधा गयोऽत्यो न ह्वार्यः शिशुः॥८॥

क्रत्वा। हि। द्रोणे। अज्यसे। अग्ने। वाजी। न। कृत्व्यः। परिज्माऽइव। स्वधा। गयः। अत्यः। न। ह्वार्यः। शिशुः॥८॥

पदार्थ:-**(क्रत्वा)** प्रज्ञया कर्म्मणा वा **(हि)** यतः **(द्रोणे)** गन्तव्ये मार्गे **(अज्यसे)** गम्यसे **(अग्ने)** पावक इव वर्त्तमान **(वाजी)** वेगवान् **(न)** इव **(कृत्व्यः)** करणीयं कर्म्म। **कृत्वीति कर्मनाम।** (निघं०२.१) **(परिज्मेव)** यः परितः सर्वतो गच्छति स वायुः **(स्वधा)** अन्नम् **(गयः)** गृहम् **(अत्यः)** अतति व्याप्नोत्यध्वानम् **(न)** इव **(ह्वार्य्यः)** कुटिलं मार्गं गन्तुं योग्यः **(शिशुः)** बालकः॥८॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वं हि क्रत्वा वाजी न कृत्व्यः परिज्मेव स्वधा गयोऽत्यो न ह्वार्यः शिशुर्द्रोणेऽज्यसे तस्मात् कृतकृत्योऽसि॥८॥

भावार्थ:-अत्रोपमालङ्कारः। ये विद्वांसः सर्वाज्जनेभ्यो बुद्धिं प्रदाय सन्मार्गं नयन्ति मातापितरौ बालमिव शिक्षयन्ति त अन्नादिना सत्कर्त्तव्या भवन्ति॥८॥

पदार्थ:-हे **(अग्ने)** अग्नि के सदृश वर्त्तमान प्रतापी जन आप **(हि)** जिस कारण **(क्रत्वा)** बुद्धि वा कर्म से **(वाजी)** वेग से युक्त **(न)** जैसे वैसे **(कृत्व्यः)** करने योग्य कर्म्म को **(परिज्मेव)** सब ओर जाने वाला वह वायु **(स्वधा)** अन्न **(गयः)** गृह और **(अत्यः)** मार्ग को व्याप्त होने वाला **(न)** जैसे वैसे **(ह्वार्य्यः)** कुटिल मार्ग में जाने योग्य **(शिशुः)** बालक **(द्रोणे)** जाने योग्य मार्ग में **(अज्यसे)** प्राप्त किये जाते हो, इस कारण से कृतकृत्य हो॥८॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो विद्वान् जन सम्पूर्ण अज्ञ जनों के लिये बुद्धि देकर श्रेष्ठ मार्ग में प्राप्त कराते हैं और माता-पिता बालक को जैसे वैसे शिक्षा करते हैं, वे अन्न आदि से सत्कार करने योग्य होते हैं॥८॥

पुनर्मनुष्यैः कथं वर्त्तितव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को कैसा वर्त्ताव करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

त्वं त्या चिदच्युताग्ने पशुर्न यवसे।

धामा ह यत्ते अजर वना वृश्चन्ति शिक्वसः॥९॥

त्वम्। त्या। चित्। अच्युता। अग्ने। पशुः। न। यवसे। धाम। ह। यत्। ते। अजर। वना। वृश्चन्ति। शिक्वसः॥ ९॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**त्या**) तानि (**चित्**) अपि (**अच्युता**) नाशरहितानि (**अग्ने**) विद्वन् (**पशुः**) गवादिः (**न**) इव (**यवसे**) बुसाद्याय (**धामा**) धामानि। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। (**ह**) किल (**यत्**) यस्य (**ते**) तव (**अजर**) जरारोगरहित (**वना**) वनानि जङ्गलानि (**वृश्चन्ति**) छिन्दन्ति (**शिक्वसः**) प्रकाशमानस्य॥ ९॥

अन्वयः-हे अजराऽग्ने! यद्यस्य शिक्वसस्ते गुणा वना किरणा इव दोषान् वृश्चन्ति त्या चिदच्युता धामा यवसे पशुर्न त्वं ह प्राप्नुहि॥ ९॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यानध्यापकान् गा वत्सा इव प्राप्य दुग्धमिव विद्यां गृह्णन्ति ये विद्वांसोऽग्निरिव दोषान् दहन्ति ते जगत्कल्याणकरा भवन्ति॥ ९॥

पदार्थः-हे (**अजर**) जरारूप रोग से रहित (**अग्ने**) विद्वन्! (**यत्**) जिन (**शिक्वसः**) प्रकाशमान (**ते**) आपके गुण (**वना**) जङ्गलों को जैसे किरण, वैसे दोषों को (**वृश्चन्ति**) काटते हैं और (**त्या, चित्**) उन्हीं (**अच्युता**) नाश से रहित (**धामा**) स्थानों को (**यवसे**) भूसे आदि के लिये (**पशुः**) गौ आदि पशु (**न**) जैसे वैसे (**त्वम्**) आप (**ह**) निश्चय प्राप्त होते हो॥ ९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जिन अध्यापकों को गौओं को जैसे बछड़े प्राप्त होकर दुग्ध के सदृश विद्या को ग्रहण करते हैं और जो विद्वान् जन अग्नि के सदृश दोषों का नाश करते हैं, वे संसार के कल्याण करने वाले होते हैं॥ ९॥

पुनर्मनुष्यैः कथं वर्त्तितव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को कैसा वर्त्तना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

वेषि ह्यध्वरीयतामग्ने होता दमे विशाम्।

समृधो विश्पते कृणु जुषस्व हव्यमङ्गिरः॥ १०॥

वेषि। हि। अध्वरिऽयताम्। अग्ने। होता। दमे। विशाम्। सम्ऽऋधः। विश्पते। कृणु। जुषस्व। हव्यम्। अङ्गिरः॥ १०॥

पदार्थः-(**वेषि**) व्याप्नोषि (**हि**) यतः (**अध्वरीयताम्**) आत्मनोऽध्वरमिच्छताम् (**अग्ने**) पावक इव विद्वन् (**होता**) दाता (**दमे**) गृहे (**विशाम्**) प्रजानाम् (**समृधः**) सम्यगृद्धिमन्तः (**विश्पते**) प्रजास्वामिन् (**कृणु**) कुरु (**जुषस्व**) (**हव्यम्**) प्राप्तुं गृहीतुमर्हम् (**अङ्गिरः**) अङ्गानां मध्ये रसरूप॥ १०॥

अन्वयः-हे अङ्गिरोऽग्ने विश्पते विद्वन्! यो हि होता त्वमध्वरीयतां विशां दमे वेषि स त्वं समृधः कृणु हव्यं जुषस्व॥ १०॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथाग्निर्ऋत्विजां प्रजानां च कार्य्याणि साध्नोति तथैव विद्वांसः सर्वेषां प्रयोजनानि निष्पादयन्ति॥ १०॥

पदार्थः-हे **(अङ्गिरः)** अङ्गों के मध्य में रसरूप **(अग्ने)** अग्नि के सदृश तेजस्वी **(विश्पते)** प्रजा के स्वामिन् विद्वन्! जो **(हि)** जिस कारण से **(होता)** दाता आप **(अध्वरीयताम्)** अपने अध्वर की इच्छा करते हुए **(विशाम्)** प्रजाजनों के **(दमे)** गृह में **(वेषि)** व्याप्त होते हो वह आप **(समृधः)** उत्तम प्रकार से ऋद्धिवाले **(कृणु)** करिये और **(हव्यम्)** ग्रहण करने योग्य का **(जुषस्व)** सेवन करिये॥१०॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे अग्नि यज्ञ करने वालों और प्रजाओं के कार्य्यों की सिद्धि करता है, वैसे ही विद्वान् जन सब के प्रयोजनों को सिद्ध करते हैं॥१०॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वानों के विषय को कहते हैं॥

अच्छा नो मित्रमहो देव देवानग्ने वोचः सुमतिं रोदस्योः। वीहि स्वस्तिं सुक्षितिं दिवो नॄन् द्विषो अंहांसि दुरिता तरेम ता तरेम तवावसा तरेम॥११॥२॥

अच्छ। नः। मित्रऽमहः। देव। देवान्। अग्ने। वोचः। सुऽमतिम्। रोदस्योः। वीहि। स्वस्तिम्। सुऽक्षितिम्। दिवः। नॄन्। द्विषः। अंहांसि। दुःऽइता। तरेम। ता। तरेम। तव। अवसा। तरेम॥११॥

पदार्थः-**(अच्छा)** सम्यक्। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(नः)** अस्माकम् **(मित्रमहः)** मित्रं सखा महः पूजनीयो यस्य तत्सम्बुद्धौ **(देव)** दातः **(देवान्)** विदुषो दातॄन् **(अग्ने)** अग्निरिव वर्त्तमान **(वोचः)** उपदिशेः **(सुमतिम्)** श्रेष्ठां प्रज्ञाम् **(रोदस्योः)** द्यावापृथिव्योर्मध्ये **(वीहि)** व्याप्नुहि **(स्वस्तिम्)** सुखं शान्तिं वा **(सुक्षितिम्)** शोभनां पृथिवीं सुनिवासं वा **(दिवः)** कामयमानान् **(नॄन्)** नायकान् **(द्विषः)** द्वेष्टॄन् **(अंहांसि)** पापानि **(दुरिता)** दुःखस्य प्रापकाणि **(तरेम)** उल्लङ्घयेम **(ता)** तानि **(तरेम)** **(तव)** **(अवसा)** रक्षणाद्येन **(तरेम)**॥११॥

अन्वयः-हे मित्रमहो देवाग्ने! त्वं नो देवान् रोदस्योः सुमतिमच्छा वोचो येन स्वस्तिं सुक्षितिं दिवो नॄन् वीहि द्विषो जहि दुरितांऽहांसि वयं तरेम वा तरेम तवावसा तरेम॥११॥

भावार्थः-मनुष्यैर्विदुषः सङ्गत्य बलं प्राप्य शत्रून् विजित्य दुःखसागरात् तरणीयमिति॥११॥

अत्राग्निविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति द्वितीयं सूक्तं द्वितीयो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(मित्रमहः)** मित्र आदर करने योग्य जिसके ऐसे **(देव)** दान करनेवाले **(अग्ने)** अग्नि के सदृश वर्त्तमान जन! आप **(नः)** हम लोगों के **(देवान्)** विद्वान् दाता जनों को **(रोदस्योः)** अन्तरिक्ष और पृथिवी के मध्य में **(सुमतिम्)** श्रेष्ठ बुद्धि का **(अच्छा)** उत्तम प्रकार **(वोचः)** उपदेश करें जिस कारण से **(स्वस्तिम्)** सुख वा शान्ति तथा **(सुक्षितिम्)** उत्तम पृथिवी वा उत्तम निवास को **(दिवः)** कामना करते हुए और **(नॄन्)** नायक जनों को **(वीहि)** व्याप्त हूजिये और **(द्विषः)** द्वेष करने वालों का

त्याग करो तथा **(दुरिता)** दुःख के प्राप्त कराने वाले **(अंहांसि)** पापों के हम लोग **(तरेम)** पार होवें **(ता)** उनको **(तरेम)** फिर भी पार हों और **(तव)** आपके **(अवसा)** रक्षण आदि से **(तरेम)** पार होवें॥११॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि विद्वानों को मिल कर और बल को प्राप्त होकर शत्रुओं को जीत कर दुःखरूप सागर से पार हों॥११॥

इस सूक्त में अग्नि और विद्वान् के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह द्वितीय सूक्त और द्वितीय वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथाष्टर्चस्य तृतीयस्य सूक्तस्य भारद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। अग्निर्देवता। १, ३, ४ त्रिष्टुप्। २, ५, ६, ७ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ८ भुरिक्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

पुनर्विद्वद्भिः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

अब आठ ऋचावाले तीसरे सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में फिर विद्वानों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

अग्ने स क्षेषदृतपा ऋतेजा उरु ज्योतिर्नशते देवयुष्टे।

यं त्वं मित्रेण वरुणः सजोषा देव पासि त्यजसा मर्तमंहः॥१॥

अग्ने। सः। क्षेषत्। ऋतऽपाः। ऋतेऽजाः। उरु। ज्योतिः। नशते। देवऽयुः। ते। यम्। त्वम्। मित्रेण। वरुणः। सऽजोषाः। देव। पासि। त्यजसा। मर्तम्। अंहः॥ १॥

पदार्थः-(**अग्ने**) विद्युदिव तेजस्विन् विद्वन् (**सः**) (**क्षेषत्**) निवसति (**ऋतपाः**) य ऋतं सत्यं पाति (**ऋतेजाः**) य ऋते सत्ये जायते (**उरु**) बहु (**ज्योतिः**) प्रकाशम् (**नशते**) प्राप्नोति (**देवयुः**) देवान् कामयमानः (**ते**) तव (**यम्**) (**त्वम्**) (**मित्रेण**) सख्या (**वरुणः**) वरः (**सजोषाः**) समानप्रीतिसेवी (**देव**) सुखप्रदातः (**पासि**) रक्षसि (**त्यजसा**) त्यागेन (**मर्त्तम्**) मनुष्यम् (**अंहः**) पापम्। अपराधरूपम्॥१॥

अन्वयः-हे देवाग्ने! यथर्तपा ऋतेजाः सूर्य उरु ज्योतिर्नशते तथा देवयुस्संस्ते मित्रेण सहितो वरुणः सजोषा वर्त्तते यमंहो मर्त्तं त्वं त्यजसा पासि स पुण्यात्मा सन् क्षेषत्॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथेश्वरेण सृष्टः सूर्य्यः सर्वं जगत् प्रकाशयति तथैव विदुषां सङ्गेन जाता विद्वांसो सर्वेषामात्मनः प्रकाशयन्ति यथा सूर्य्यस्तमो हत्वा दिनं जनयति तथैव जातविद्यो धार्मिको विद्वानविद्यां हत्वा विद्यां प्रकटयति॥१॥

पदार्थः-हे (**देव**) सुख के देने वाले (**अग्ने**)बिजुली के सदृश तेजस्वी विद्वान् जैसे (**ऋतपाः**) सत्य का पालन करने और (**ऋतेजाः**) सत्य में प्रकट होने वाला सूर्य्य (**उरु**) बड़े (**ज्योतिः**) प्रकाश को (**नशते**) प्राप्त होता है, वैसे (**देवयुः**) विद्वानों की कामना करता हुआ (**ते**) आपके (**मित्रेण**) मित्र के सहित (**वरुणः**) श्रेष्ठ (**सजोषाः**) तुल्य प्रीति का सेवन करने वाला वर्त्तमान है और (**यम्**) जिस (**अंहः**) अपराधी (**मर्त्तम्**) मनुष्य को (**त्वम्**) आप (**त्यजसा**) त्याग से (**पासि**) रक्षा करते हो (**सः**) वह पुण्यात्मा होता हुआ (**क्षेषत्**) निवास करता है॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे ईश्वर से रचा गया सूर्य्य सम्पूर्ण जगत् को प्रकाशित करता है वैसे ही विद्वानों के संग से हुए विद्वान् सब के आत्माओं को प्रकाशित करते हैं और जैसे सूर्य्य अन्धकार का नाश करके दिन को प्रकट करता है, वैसे ही विद्या को प्राप्त हुआ धार्मिक विद्वान् अविद्या का नाश करके विद्या को प्रकट करता है॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

ई॒जे य॒ज्ञेभि॑: शश॒मे शमी॑भिर्ऋ॒धद्वा॑राया॒ग्नये॑ ददाश।
ए॒वा च॒न तं य॒शसा॒मजु॑ष्टि॒र्नांहो॒ मर्तं॑ नशते॒ न प्र॒दृ॑प्तिः॥ २॥

ई॒जे। य॒ज्ञेभि॑ः। श॒श॒मे। शमी॑भिः। ऋ॒धत्ऽवा॑राय। अ॒ग्नये॑। द॒दा॒श। ए॒व। च॒न। तम्। य॒शसा॑म्। अजु॑ष्टिः। न। अंहः॑। मर्त॑म्। न॒श॒ते। न। प्रऽदृ॑प्तिः॥ २॥

पदार्थः-(**ईजे**) सङ्गच्छते (**यज्ञेभिः**) विद्वत्सेवासत्यभाषणादिभिः (**शशमे**) शाम्यति (**शमीभिः**) शुभैः कर्मभिः (**ऋधद्वाराय**) ऋधत्संवर्धकः सत्यो वारस्स्वीकरणीयो व्यवहारो यस्य तस्मै (**अग्नये**) अग्निरिव वर्त्तमानाय सुपात्राय (**ददाश**) ददाति (**एवा**) अत्र **निपातस्य** चेति दीर्घः। (**चन**) अपि (**तम्**) (**यशसाम्**) धनानामन्नानां वा (**अजुष्टिः**) असेवनम् (**न**) इव (**अंहः**) अपराधः पापम् (**मर्त्तम्**) मनुष्यम् (**नशते**) प्राप्नोति (**न**) निषेधे (**प्रदृप्तिः**) प्रकृष्टो मोहः॥ २॥

अन्वयः-यो विद्वान् यज्ञेभिरीजे शमीभिः शशमे। ऋधद्वारायाऽग्नये ददाश तमेवा चन मर्त्तं यशसामजुष्टिर्नांहो न नशते प्रदृप्तिः प्राप्नोति॥ २॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये सत्यभाषणादिधर्मानुष्ठाना योगिनोऽभयदातारः सन्ति ते पापं मोहं च त्यक्त्वा विज्ञानं प्राप्य सुखिनो भवन्ति॥ २॥

पदार्थः-जो विद्वान् (**यज्ञेभिः**) विद्वानों की सेवा और सत्य भाषण आदिकों के साथ (**ईजे**) उत्तम प्रकार मिलता है और (**शमीभिः**) शुभ कर्मों से (**शशमे**) शान्त होता है (**ऋधद्वाराय**) उत्तम प्रकार बढ़ाने वाला सत्य स्वीकार करने योग्य व्यवहार जिसका उस (**अग्नये**) अग्नि के सदृश वर्त्तमान सुपात्र के लिये (**ददाश**) देता है (**तम्**) उसको (**एवा**) ही (**चन**) निश्चय से (**मर्त्तम्**) मनुष्य को और (**यशसाम्**) धनों वा अन्नों का (**अजुष्टिः**) असेवन (**न**) जैसे वैसे (**अंहः**) अपराध (**न**) नहीं (**नशते**) प्राप्त होता है और (**प्रदृप्तिः**) अत्यन्त मोह प्राप्त होता है॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो सत्यभाषण आदि धर्म्म के अनुष्ठान करने वाले योगी अभय देने वाले हैं, वे पाप और मोह का त्याग करके विज्ञान को प्राप्त होकर सुखी होते हैं॥ २॥

पुनर्विदुषां बुद्धिः कीदृशी भवतीत्याह॥

फिर विद्वानों को बुद्धि कैसी होती है, इस विषय को कहते हैं॥

सूरो॒ न यस्य॑ दृश॒तिर॑रे॒पा भी॒मा यदेति॑ शु॒चत॒स्त आ धीः।
हेष॑स्वतः शु॒रुधो॒ नायम॒क्तोः कुत्रा॑ चिद्र॒ण्वो व॑स॒तिर्व॑ने॒जाः॥ ३॥

सूरः॑। न। यस्य॑। दृ॒श॒तिः। अ॒रे॒पाः। भी॒मा। यत्। एति॑। शु॒च॒तः। ते॒। आ। धीः। हेष॑स्वतः। शु॒रुधः॑। न। अ॒यम्। अ॒क्तोः। कुत्र॑। चि॒त्। र॒ण्वः। व॒स॒तिः। व॒ने॒ऽजाः॥ ३॥

पदार्थः-(**सूरः**) सूर्य्यः (**न**) इव (**यस्य**) (**दृशातिः**) दर्शनम् (**अरेपाः**) निष्पापः (**भीमा**) भयङ्करीः (**यत्**) या (**एति**) प्राप्नोति (**शुचतः**) शोकातुरस्य (**ते**) (**आ**) (**धीः**) प्रज्ञाः (**हेषस्वतः**) हेषाः प्रसिद्धाः शब्दा विद्यन्ते यस्य तस्य (**शुरुधः**) यः शुरुमन्धकारहिंसकं तेजो दधाति स सूर्य्यः (**न**) इव (**अयम्**) (**अक्तोः**) रात्रेः (**कुत्रा**) (**चित्**) अपि (**रण्वः**) रमणीयः (**वसतिः**) यो निवसति सः (**वनेजाः**) किरणसमुदाये जायते सः॥३॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यस्य हेषस्वतः शुचतस्ते यद्या दृशतिररेपा भीमा धीस्सूरो न आ एति तस्याऽयं शुरुधोऽक्तोर्निवर्त्तको न कुत्रा चिद्रण्वो वनेजा वसतिर्वर्त्तते तं वयं सेवेमहि॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यस्य विदुषः सूर्य्यस्य ज्योतिरिव वा विद्युदिव प्रज्ञा वर्त्तते स एव समग्रं यावद्योग्यं तावद्विज्ञानं प्राप्नोति॥३॥

पदार्थः-हे विद्वन्! (**यस्य**) जिन (**हेषस्वतः**) प्रसिद्ध शब्द विद्यमान जिसके उन (**शुचतः**) शोक से व्याकुल (**ते**) आपका (**यत्**) जो (**दृशातिः**) दर्शन और (**अरेपाः**) पाप से रहित और (**भीमा**) भयकारक (**धीः**) बुद्धि (**सूरः**) सूर्य्य के (**न**) जैसे वैसे (**आ, एति**) प्राप्त होती है उसका (**अयम्**) यह (**शुरुधः**) अन्धकार को नाश करने वाले तेज का धारण करने वाला सूर्य्य (**अक्तोः**) रात्रि का दूर करने वाला (**न**) जैसे वैसे (**कुत्रा**) (**चित्**) कहीं भी (**रण्वः**) सुन्दर (**वनेजाः**) किरणों के समुदाय में उत्पन्न होने और (**वसतिः**) निवास करने वाला वर्त्तमान है, उसकी हम लोग सेवा करें॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जिस विद्वान् की सूर्य्य की ज्योति वा बिजुली के सदृश बुद्धि है, वही सम्पूर्ण, जितना योग्य उतने, विज्ञान को प्राप्त होता है॥३॥

पुनर्विद्वद्भिः कथं वर्त्तितव्यमित्याह॥

फिर विद्वानों को कैसा वर्त्ताव करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

तिग्मं चिदेम महि वर्पो अस्य भसदश्वो न यमसान आसा।

विजेहमानः परशुर्न जिह्वां द्रविर्न द्रावयति दारु धक्षत्॥४॥

तिग्मम्। चित्। एम। महि। वर्पः। अस्य। भसत्। अश्वः। न। यमसानः। आसा। विऽजेहमानः। परशुः। न। जिह्वाम्। द्रविः। न। द्रवयति। दारु। धक्षत्॥५॥

पदार्थः-(**तिग्मम्**) तीव्रम् (**चित्**) अपि (**एम**) प्राप्नुयाम (**महि**) महत् (**वर्पः**) रूपम् (**अस्य**) विदुषः (**भसत्**) भासयति (**अश्वः**) आशुगन्ता तुरङ्गः (**न**) इव (**यमसानः**) नियन्ता सन् (**आसा**) आस्येन। (**विजेहमानः**) शब्दायमानः (**परशुः**) कुठारः (**न**) इव (**जिह्वाम्**) वाणीम् (**द्रविः**) द्रवीभूत्वोच्चारणक्रिया (**न**) इव (**द्रावयति**) (**दारु**) काष्ठम् (**धक्षत्**)॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यस्यास्य तिग्मं महि वर्पो यमसानो विजेहमानोऽश्वो नाऽऽसा भसत् परशुर्न जिह्वां द्रविर्न द्रावयति दारु धक्षत् तं चिद्वयमेम॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे विद्वन्! यथा सुशिक्षितोऽश्वो जनं मार्गं नयति तथा धर्म्मपथमस्मान्नय। यथा तक्षा परशुना काष्ठं छिनत्ति तथास्माकं दोषाञ्छिन्धि यथा तालुज आर्द्रो रसो जिह्वां प्राप्नोति तथा विद्यारसं प्रापय। यथाग्निः काष्ठानि दहति तथैवास्माकं दुर्व्यसनानि दह॥४॥

पदार्थः–हे मनुष्यो! जिस **(अस्य)** इस विद्वान् के **(तिग्मम्)** तीव्र **(महि)** बड़े **(वर्पः)** रूप का **(यमसानः)** नियम करता और **(विजेहमानः)** शब्द करता हुआ **(अश्वः)** शीघ्र चलने वाला घोड़ा **(न)** जैसे वैसे **(आसा)** मुख से **(भसत्)** प्रकाशित करता है और **(परशुः)** कुठार **(न)** जैसे वैसे **(जिह्वाम्)** वाणी को **(द्रविः)** द्रवी होकर उच्चारण की क्रिया **(न)** जैसे वैसे **(द्रावयति)** गीला करता है और **(दारु)** काष्ठ को **(धक्षत्)** जलावे उसको **(चित्)** निश्चय से हम लोग **(एम)** प्राप्त होवें॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे विद्वन्! जैसे उत्तम प्रकार से शिक्षित घोड़ा मनुष्य को मार्ग में पहुंचाता है, वैसे धर्ममार्ग को हम लोगों को पहुंचाइये और जैसे बढ़ई परशु से काष्ठ को काटता है, वैसे हम लोगों के दोषों को काटिये और जैसे तालु से उत्पन्न आर्द्ररस जिह्वा को प्राप्त होता है, वैसे विद्या के रस को प्राप्त कराइये तथा जैसे अग्नि काष्ठों को जलाता है, वैसे ही हमारे दुर्व्यसनों को जलाइये॥४॥

पुनर्मनुष्याः कथं वर्त्तेरन्नित्याह॥

फिर मनुष्य कैसा वर्त्ताव करें, इस विषय को कहते हैं॥

स इदस्तेव प्रति धादसिष्यञ्छिशीत तेजोऽयसो न धाराम्।

चित्रध्रजतिररतिर्यो अक्तोर्वेर्न द्रुषद्वा रघुपत्मजंहाः॥५॥ ३॥

सः। इत्। अस्ताऽइव। प्रति। धात्। असिष्यन्। शिशीत। तेजः। अयसः। न। धाराम्। चित्रऽध्रजतिः। अरतिः। यः। अक्तोः। वेः। न। द्रुऽसद्वा। रघुपत्मऽजंहाः॥५॥ ३॥

पदार्थः-**(सः)** अग्निः **(इत्)** एव **(अस्तेव)** प्रक्षेप्ता इव **(प्रति)** **(धात्)** दधाति **(असिष्यन्)** बन्धनमप्राप्नुवन् **(शिशीत)** तीक्ष्णीकरोति **(तेजः)** **(अयसः)** सुवर्णस्य **(न)** इव **(धाराम्)** वाचम्। **(चित्रध्रजतिः)** विचित्रगतिः **(अरतिः)** अरमणः **(यः)** **(अक्तोः)** रात्रेः **(वेः)** पक्षिणः **(न)** इव **(द्रुषद्वा)** यो द्रुषद्द्रवीभूतादिषु पदार्थेषु सीदति **(रघुपत्मजंहाः)** यो लघुपतनं जहाति सः॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यश्चित्रध्रजतिररतिरक्तोर्वेर्न द्रुषद्वा रघुपत्मजंहा इत्तज्ञायते। सोऽस्तेवासिष्यन्नयसो न तेजो धारां प्रतिधात् स इत्तेजः शिशीत॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यदि मनुष्या अग्निं बद्ध्वा तीक्ष्णीकृत्य युद्धादिकार्येषु प्रयुञ्जते तर्हि पक्षिवदाकाशे गन्तुं शक्नुयुः॥५॥

पदार्थः–हे मनुष्यो! **(यः)** जो **(चित्रध्रजतिः)** विचित्र गमन वाला **(अरतिः)** नहीं रमण करता हुआ **(अक्तोः)** रात्रि से और **(वेः)** पक्षी से **(न)** जैसे वैसे **(द्रुषद्वा)** द्रवीभूत आदि पदार्थों में स्थित होने और **(रघुपत्मजंहाः)** लघुपतन का त्याग करने वाला ही प्रकट होता है **(सः)** वह अग्नि **(अस्तेव)** फूँकने

वाले के सदृश **(असिष्यन्)** बन्धन को नहीं प्राप्त होता हुआ **(अयसः)** सुवर्ण के **(न)** जैसे **(तेजः)** तेज को वैसे **(धाराम्)** वाणी को **(प्रति, धात्)** धारण करता है, वह **(इत्)** ही तेज को **(शिशीत)** तीक्ष्ण करता है॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो मनुष्य अग्नि को बांध और तीक्ष्ण करके युद्ध आदि कार्य्यों में प्रयुक्त करते हैं तो पक्षि के सदृश आकाश में जाने को समर्थ होवें॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

स ईं रेभो न प्रति वस्त उस्राः शोचिषा रारपीति मित्रमहाः।

नक्तं य ईमरुषो यो दिवा नॄनमर्त्यो अरुषो यो दिवा नॄन्॥६॥

सः। ईम्। रेभः। न। प्रति। वस्ते। उस्राः। शोचिषा। ररपीति। मित्रऽमहाः। नक्तम्। यः। ईम्। अरुषः। यः। दिवा। नॄन्। अमर्त्यः। अरुषः। यः। दिवा। नॄन्॥६॥

पदार्थः-**(सः)** **(ईम्)** उदकम् **(रेभः)** पूजनीयो विद्वान् विदुषां सत्कर्त्ता वा। **रेभतीत्यर्चतिकर्म्मा।** (निघं०३.१४) **(न)** इव **(प्रति)** **(वस्ते)** आच्छादयति **(उस्राः)** किरणान् **(शोचिषा)** दीप्त्या सह **(रारपीति)** भृशं शब्दयति **(मित्रमहाः)** यो मित्राणि पूजयति **(नक्तम्)** रात्रिम् **(यः)** **(ईम्)** सर्वतः **(अरुषः)** रक्तगुणविशिष्टः **(यः)** **(दिवा)** कामनया **(नॄन्)** नायकान् **(अमर्त्यः)** स्वरूपेण मृत्युरहितः **(अरुषः)** योऽरुष्षु मर्मसु सीदति सः **(यः)** **(दिवा)** कामनया प्रीत्या सह वा **(नॄन्)** नेतॄन्॥६॥

अन्वयः-योऽरुषो नक्तमीं योऽमर्त्यो दिवा नॄन् योऽरुषो दिवा नॄन् सङ्गच्छते स ईं रेभो न शोचिषोस्राः प्रति वस्ते मित्रमहा रारपीति॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा सूर्यो जलमाकृष्य वर्षयित्वा प्राणिभ्यः सुखं ददाति तथा विद्वान् गुणानाकृष्य प्रदाय सर्वान् जिज्ञासून् सुखयति॥६॥

पदार्थः-**(यः)** जो **(अरुषः)** रक्तगुण के सहित वर्त्तमान **(नक्तम्)** रात्रि को **(ईम्)** सब ओर से **(यः)** जो **(अमर्त्यः)** अपने रूप से मृत्युरहित **(दिवा)** कामना से **(नॄन्)** नायक मनुष्यों को **(यः)** जो **(अरुषः)** मर्मस्थलों में वर्त्तमान हुआ **(दिवा)** कामना वा प्रीति के साथ **(नॄन्)** नायक जनों के साथ मिलता है **(सः)** वह **(ईम्)** जल और **(रेभः)** आदर करने योग्य विद्वान् वा विद्वानों का सत्कार करने वाला **(न)** जैसे वैसे **(शोचिषा)** दीप्ति के सहित वर्त्तमान **(उस्राः)** किरणों को **(प्रति, वस्ते)** आच्छादित करता है और **(मित्रमहाः)** मित्रों का आदर करने वाला **(रारपीति)** अत्यन्त शब्द करता है॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे सूर्य जल का आकर्षण कर और उस जल को वर्षा के प्राणियों के लिये सुख देता है, वैसे विद्वान् पुरुष गुणों का आकर्षण कर और गुणों को दे करके सब जिज्ञासु जनों को सुख देता है॥६॥

पुनः स कीदृश इत्याह॥

फिर वह कैसा है, इस विषय को कहते हैं॥

दिवो न यस्य॑ विधतो नवी॑नोद् वृषा॑ रुक्ष ओष॑धीषु नूनोत्।

घृणा न यो ध्रज॑सा पत्म॑ना यन्ना रोद॑सी वसु॑ना दं सुपत्नी॑॥७॥

दिवः। न। यस्य॑। विधतः। नवी॑नोत्। वृषा॑। रुक्षः। ओष॑धीषु। नूनोत्। घृणा॑। न। यः। ध्रज॑सा। पत्म॑ना। यन्। आ। रोद॑सी इति॑। वसु॑ना। दम्। सुपत्नी इति॑ सुऽपत्नी॑॥७॥

पदार्थः-(**दिवः**) प्रकाशस्य (**न**) इव (**यस्य**) वैद्यस्य (**विधतः**) विधानं कुर्वतः (**नवीनोत्**) भृशं स्तुतीभवति (**वृषा**) बलिष्ठः (**रुक्षः**) तेजस्वी (**ओषधीषु**) (**नूनोत्**) भृशं स्तौति (**घृणा**) दीप्तिः (**न**) इव (**यः**) (**ध्रजसा**) गमनेन (**पत्मना**) उद्‌गमनेन (**यन्**) य एति (**आ**) समन्तात् (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**वसुना**) धनेन (**दम्**) यो दमयति तम् (**सुपत्नी**) शोभनः पतिर्ययोस्ते॥७॥

अन्वयः-यस्य दिवो न विधतो वृषा रुक्षो नवीनोदोषधीषु नूनोद्यो घृणा न ध्रजसा पत्मना वसुना सुपत्नी रोदसी यन्दमाऽऽनूनोत् सोऽग्निः सर्वैर्वेदितव्यः॥७॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। योऽग्निः पृथिव्यादिषु पूर्णो घर्षणादिना प्रकाश्येत स मनुष्याणामनेकविधकार्य्यकारी भवति॥७॥

पदार्थः-(**यस्य**) जिस वैद्य के (**दिवः**) प्रकाश का (**न**) जैसे वैसे (**विधतः**) विधान करते हुए का (**वृषा**) बलिष्ठ (**रुक्षः**) तेजस्वी जन (**नवीनोत्**) अत्यन्त स्तुति युक्त होता है तथा (**ओषधीषु**) ओषधियों के निमित्त (**नूनोत्**) अत्यन्त स्तुति करता है और (**यः**) जो (**घृणा**) दीप्ति (**न**) जैसे वैसे (**ध्रजसा**) गमन और (**पत्मना**) उद्‌गमन से (**वसुना**) और धन से (**सुपत्नी**) सुन्दर स्वामी वाली (**रोदसी**) अन्तरिक्ष और पृथिवी को (**यन्**) प्राप्त होने वाला वह (**दम्**) इन्द्रियों के निग्रह करने वाले की (**आ**) सब ओर से अत्यन्त स्तुति करता है, वह अग्नि सब से जानने के योग्य है॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो अग्नि पृथिवी आदिकों में पूर्ण हुआ घिसने आदि से प्रकाशित होवे, वह मनुष्यों के अनेक प्रकार के कार्य्यों को करने वाला होता है॥७॥

अथ कीदृशो नरो राजा भवितुं योग्यः स्यादित्याह॥

अब कैसा मनुष्य राजा होने के योग्य है, इस विषय को कहते हैं॥

धायो॑भिर्वा यो युज्येभिर॒र्कैर्विद्युन्न द॑विद्योत्स्वेभिः शुष्मैः॑।

शर्धो॑ वा यो मरुतां॑ ततक्ष॑ ऋभुर्न त्वेषो र॑भसानो अ॑द्यौत्॥८॥४॥

धायः॑ऽभिः। वा। यः। युज्येभिः। अर्कैः। विऽद्युत्। न। दविद्योत्। स्वेभिः॑। शुष्मैः॑। शर्धः॑। वा। यः। मरुता॑म्। ततक्ष॑। ऋभुः। न। त्वेषः। रभसानः। अद्यौत्॥८॥४॥

पदार्थः-(धायोभिः) धारकैर्गुणैर्वा **(वा)** **(यः)** **(युज्येभिः)** योक्तव्यैः **(अर्कैः)** अर्चनीयैस्सत्कारहेतुभिः **(विद्युत्)** **(न)** इव **(दविद्योत्)** प्रकाशते **(स्वेभिः)** स्वकीयैः **(शुष्मैः)** बलैः **(शर्धः)** बलम् **(वा)** **(यः)** **(मरुताम्)** मनुष्याणाम् **(ततक्ष)** तीक्ष्णीकरोति **(ऋभुः)** मेधावी **(न)** इव **(त्वेषः)** देदीप्यमानः **(रभसानः)** वेगवान् **(अद्यौत्)** प्रकाशते॥८॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यो धायोभिर्युज्येभिः स्वेभिः शुष्मैर्गुणैर्वा विद्युन्न स्वेभिरर्कैर्दविद्योद्यो वा मरुतां शर्ध ऋभुर्न ततक्ष त्वेषो रभसानो नाद्यौत्स एव राजा संस्थापनीयः॥८॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यो विद्युद्वत्प्रतापी बलिष्ठः संयोग-वियोगविद्यायां विचक्षणो मेधावी विद्वान् धर्म्मात्मा जितेन्द्रियः पितृवत्प्रजापालनप्रियः क्षत्रियः स्यात्स एव राजा भवितुमर्हेत्॥८॥

अत्राग्निविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति तृतीयं सूक्तं चतुर्थो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे विद्वन्! **(यः)** जो **(धायोभिः)** धारण करने वालों वा गुणों से और **(युज्येभिः)** युक्त करने योग्य **(स्वेभिः)** अपने **(शुष्मैः)** बलों और गुणों से **(वा)** वा **(विद्युत्)** बिजुली **(न)** जैसे वैसे **(स्वेभिः)** अपने **(अर्कैः)** सत्कारों योग्य कारणों से **(दविद्योत्)** प्रकाशित होता है **(यः)** जो **(वा)** वा **(मरुताम्)** मनुष्यों के **(शर्धः)** बल को **(ऋभुः)** बुद्धिमान् जन **(न)** जैसे वैसे **(ततक्ष)** तीक्ष्ण करता है तथा **(त्वेषः)** प्रकाशयुक्त और **(रभसानः)** वेगयुक्त जैसे **(अद्यौत्)** प्रकाशित होता है, वही राजा संस्थापित करने योग्य है॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो बिजुली के सदृश प्रतापी, बलवान्, पदार्थों के संयोग और वियोग की विद्या में चतुर, बुद्धिमान्, विद्वान्, धर्मात्मा, इन्द्रियों को जीतने वाला और प्रजापालनप्रिय क्षत्रिय होवे, वही राजा होने के योग्य होवे॥८॥

इस सूक्त में अग्नि और विद्वान् के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह तीसरा सूक्त और चौथा वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथाष्टर्चस्य चतुर्थस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। अग्निर्देवता। १ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २, ५, ७ भुरिक्पङ्क्तिः। ६ स्वराट्पङ्क्ति। ३, ४ निचृत्पङ्क्तिः। ८ पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

अब आठ ऋचा वाले चौथे सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

यथा॑ होत॒र्मनु॑षो दे॒वता॑ता य॒ज्ञेभिः॑ सूनो सहसो॒ यजा॑सि।
ए॒वा नो॑ अ॒द्य स॑म॒ना स॑मा॒नानु॒शन्न॑ग्न उश॒तो य॑क्षि दे॒वान्॥ १॥

यथा॑। होत॒रिति॑। मनु॑षः। दे॒वऽता॑ता। य॒ज्ञेभिः॑। सू॒नो॒ इति॑। स॒ह॒सः॒। यजा॑सि। ए॒व। नः॒। अ॒द्य। स॒म॒ना। स॒मा॒नान्। उ॒शन्। अ॒ग्ने॒। उ॒श॒तः। य॒क्षि॒। दे॒वान्॥ १॥

पदार्थः-(**यथा**) (**होतः**) दातः (**मनुषः**) मनुष्यः (**देवताता**) दिव्ये यज्ञे (**यज्ञेभिः**) सङ्गतैः साधनोपसाधनैः (**सूनो**) अपत्य (**सहसः**) बलिष्ठस्य (**यजासि**) यजेत् (**एवा**) अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। (**नः**) अस्मान् (**अद्य**) (**समना**) सङ्ग्रामे। विभक्तेराकारादेशः। **समनमिति सङ्ग्रामनाम।** (निघं०२.१७) (**समानान्**) सदृशान् (**उशन्**) कामयमान (**अग्ने**) अग्निरिव विद्वन् (**उशतः**) कामयमानान् (**यक्षि**) सङ्गच्छस्व (**देवान्**) विदुषः॥१॥

अन्वयः-हे सहसः सूनो होतरुशन्नग्ने! यथा मनुषो यज्ञेभिर्देवताता यजासि तथा त्वमद्य समानानुशतो नोऽस्मान् देवान् समनैवा यक्षि॥१॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा विद्वांस ऋत्विजः साङ्गोपाङ्गैः साधनैर्यज्ञमलङ्कुर्वन्ति तथैव शूरवीरैर्बलिष्ठैर्योद्धृभिर्विद्वद्भी राजानः सङ्ग्रामं विजयेरन्॥१॥

पदार्थः-हे (**सहसः**) बलवान् के (**सूनो**) सन्तान और (**होतः**) दान करने वाले (**उशन्**) कामना करते हुए (**अग्ने**) अग्नि के समान विद्वन्! (**यथा**) जैसे (**मनुषः**) मनुष्य आप (**यज्ञेभिः**) मिले हुए साधनों और उपसाधनों से (**देवताता**) श्रेष्ठ यज्ञ में (**यजासि**) यजन करें, वैसे आप (**अद्य**) इस समय (**समानान्**) सदृशों और (**उशतः**) कामना करते हुए (**नः**) हम (**देवान्**) विद्वानों को (**समना**) संग्राम में (**एवा**) ही (**यक्षि**) उत्तम प्रकार मिलिये॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे विद्वान् यज्ञ के करने वाले जन अंग और उपांगों के सहित साधनों से यज्ञ को शोभित करते हैं, वैसे ही शूरवीर बलवान् योद्धा और विद्वान् जनों से राजा संग्राम को जीतें॥१॥

पुनर्जगदीश्वरः कीदृशोऽस्तीत्याह॥

फिर जगदीश्वर कैसा है, इस विषय को कहते हैं॥

स नो विभावा चक्षणिर्न वस्तोरग्निर्वन्दारु वेद्यश्चनो धात्।

विश्वायुर्यो अमृतो मर्त्येषूषर्भुद् भूदतिथिर्जातवेदाः॥२॥

सः। नः। विभाऽवा। चक्षणिः। न। वस्तोः। अग्निः। वन्दारु। वेद्यः। चनः। धात्। विश्वऽआयुः। यः। अमृतः। मर्त्येषु। उषःऽभुत्। भूत्। अतिथिः। जातऽवेदाः॥२॥

पदार्थः-(**सः**) परमेश्वरः (**नः**) अस्माकम् (**विभावा**) विशेषभानवान् (**चक्षणिः**) प्रकाशकः सूर्यः (**न**) इव (**वस्तोः**) दिनम् (**अग्निः**) पावक इव स्वप्रकाशः (**वन्दारु**) प्रशंसनीयम् (**वेद्यः**) वेदितुं योग्यः (**चनः**) अन्नादिकम् (**धात्**) दधाति (**विश्वायुः**) पूर्णायुः (**यः**) (**अमृतः**) नाशरहितः (**मर्त्येषु**) मरणधर्मेषु (**उषर्भुत्**) य उषसि बुध्यते (**भूत्**) भवेत् (**अतिथिः**) अविद्यमानतिथिः (**जातवेदाः**) यो जातेषु विद्यते जातान् सर्वान् वेत्ति वा॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो वस्तोश्चक्षणिरग्निर्न नो विभावा वेद्यो विश्वायुर्मर्त्येष्वमृत उषर्भुदतिथिरिव जातवेदा वन्दारु चनो धात्स नो मङ्गलकरो भूत्॥२॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यो जगदीश्वरः सूर्य्यवत्स्वप्रकाशो वेदितुं योग्योऽजरामरोऽतिथिरिव सत्कर्त्तव्यः सर्वत्र व्याप्तोऽस्ति तं सर्वे उपासीरन्॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यः**) जो (**वस्तोः**) दिन और (**चक्षणिः**) प्रकाशक सूर्य और (**अग्निः**) अग्नि के सदृश स्वयं प्रकाशयुक्त (**न**) जैसे वैसे (**नः**) हम लोगों के बीच (**विभावा**) अत्यन्त प्रकाश वाला और (**वेद्यः**) जानने योग्य (**विश्वायुः**) पूर्णावस्था वाला (**मर्त्येषु**) मरणधर्मयुक्त मनुष्यों में (**अमृतः**) नाशरहित और (**उषर्भुत्**) प्रातःकाल में जाना जाता है ऐसा और (**अतिथिः**) जिसके प्राप्त होने की कोई तिथि विद्यमान नहीं उसके समान वर्त्तमान और (**अतिथिः**) जिसके प्राप्त होने की कोई तिथि विद्यमान नहीं उसके समान वर्त्तमान और (**जातवेदाः**) उत्पन्न हुओं में विद्यमान वा उत्पन्न हुए पदार्थों को जानने वाला (**वन्दारु**) प्रशंसा करने योग्य (**चनः**) अन्न आदि को (**धात्**) धारण करता है (**सः**) वह परमेश्वर हम लोगों का मङ्गल करने वाला (**भूत्**) हो॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो जगदीश्वर सूर्य्य के सदृश अपने से प्रकाशित, जानने योग्य, अजर, अमर, अतिथि के सदृश सत्कार करने योग्य और सर्वत्र व्याप्त है, उसकी सब उपासना करें॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

द्यावो न यस्य पनयन्त्यभ्वं भासांसि वस्ते सूर्यो न शुक्रः।

वि य इनोत्यजरः पावकोऽश्नस्य चिच्छिश्नथत्पूर्व्याणि॥३॥

द्याव॑:। न। यस्य॑। पुनय॑न्ति। अभ्व॑म्। भासां॑सि। वस्ते। सूर्य॑:। न। शुक्रः। वि। यः। इनोति॑। अजर॑:। पावकः। अश्न॑स्य। चित्। शिश्नथत्। पूर्व्याणि॑॥ ३॥

पदार्थः-(**द्यावः**) कामयमाना विद्वांसः (**न**) इव (**यस्य**) परमेश्वरस्य (**पनयन्ति**) स्तावयन्ति (**अभ्वम्**) महान्तं महिमानम् (**भासांसि**) प्रकाशान् (**वस्ते**) आच्छादयति (**सूर्य्यः**) (**न**) इव (**शुक्रः**) (**वि**) विशेषेण (**यः**) (**इनोति**) प्राप्नोति। **इन्वतिर्व्याप्तिकर्म्मा।** (निघं०२.१८) (**अजरः**) जरादोषरहितः (**पावकः**) पवित्रः पवित्रकर्त्ता वा (**अश्नस्य**) व्यापकस्य (**चित्**) (**शिश्नथत्**) प्रलयं करोति (**पूर्व्याणि**) पूर्वनिर्म्मितानि वस्तूनि॥ ३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! द्यावो न जना यस्याऽभ्वं पनयन्ति सूर्य्यो न शुक्रः सन् भासांसि वस्ते योऽजरः पावको वीनोत्यश्नस्य मध्ये पूर्व्याणि चिच्छिश्नथत् स एव जगदीश्वरो ज्ञेयोऽस्ति॥ ३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यः परमेश्वरः प्रकाशकानां प्रकाशको नित्यानां नित्यश्चेतनानां चेतनोऽस्ति तमेव भजत॥ ३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**द्यावः**) कामना करते हुए विद्वान् जन (**न**) जैसे वैसे जन (**यस्य**) जिस परमेश्वर की (**अभ्वम्**) बड़ी महिमा की (**पनयन्ति**) स्तुति कराते हैं और (**सूर्य्यः**) सूर्य्य (**न**) जैसे वैसे (**शुक्रः**) शुद्ध, पवित्र वा बलिष्ठ जन (**भासांसि**) तेजों को (**वस्ते**) आच्छादित करता है और (**यः**) जो (**अजरः**) जरादोष से रहित (**पावकः**) पवित्र और सब को पवित्र करने वाला (**वि, इनोति**) विशेष व्याप्त होता है और (**अश्नस्य**) व्यापक के मध्य में (**पूर्व्याणि**) पहिले निर्मित वस्तुओं का (**चित्**) भी (**शिश्नथत्**) प्रलय करता है, वही जगदीश्वर जानने योग्य है॥ ३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो परमेश्वर प्रकाशकों का प्रकाशक, नित्यों का नित्य और चेतनों का चेतन है, उसी का भजन करो॥ ३॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

वद्मा हि सू॑नो अस्य॑द्म॒सद्वा॑ च॒क्रे अ॒ग्निर्ज॒नुषाज्मान्न॑म्।

स त्वं न॑ ऊर्जसन॒ ऊर्जं॑ धा॒ राजे॑व जेरवृ॒के क्षे॑ष्य॒न्तः॥ ४॥

वद्मा। हि। सूनो इति॑। असि॑। अद्मऽसद्वा॑। चक्रे। अग्निः। जनुषा॑। अज्म॑। अन्न॑म्। सः। त्वम्। नः। ऊर्जऽसने। ऊर्ज॑म्। धाः। राजा॑ऽइव। जेः। अवृके। क्षेषि। अन्तरिति॑॥ ४॥

पदार्थः-(**वद्मा**) यो वदति (**हि**) (**सूनो**) यत्सूते सकलं जगत् तत्सम्बुद्धौ (**असि**) (**अद्मसद्वा**) यो अद्मेषु भोक्तव्येषु सीदति (**चक्रे**) करोति (**अग्निः**) पावकः (**जनुषा**) जन्मना (**अज्म**) प्राप्तव्यम् (**अन्नम्**) अत्तव्यम् (**सः**) (**त्वम्**) (**नः**) अस्मान् (**ऊर्जसने**) पराक्रमस्य प्रक्षेपणे (**ऊर्जम्**) पराक्रमम् (**धाः**) धेहि (**राजेव**) प्रकाशमानो नृपइव (**जेः**) जयेः (**अवृके**) अचोरे (**क्षेषि**) निवसेः (**अन्तः**) मध्ये॥ ४॥

अन्वयः:-हे सूनो! वद्माऽद्मसद्वाग्निर्जनुषाऽज्मान्नं प्राप्तवानसि शुद्धं चक्रे स हि त्वं न ऊर्जसने राजेवोर्जं धा अवृकेऽन्तर्जे: क्षेषि च॥४॥

भावार्थः:-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! ये विद्वांसस्त ईश्वरवत्पक्षपातरहिता धर्म्मे निवसन्तः परमेश्वरं भजन्तु॥४॥

पदार्थः:-हे **(सूनो)** सम्पूर्ण जगत् के रचने वाले! **(वद्मा)** कहने और **(अद्मसद्वा)** भोग्य पदार्थों में प्राप्त रहने वाले **(अग्निः)** पवित्र **(जनुषा)** जन्म से **(अज्म)** प्राप्त होने और **(अन्नम्)** खाने योग्य पदार्थ को प्राप्त हुए **(असि)** हो और शुद्ध **(चक्रे)** करते हो **(सः)** वह **(हि)** निश्चय से **(त्वम्)** आप **(नः)** हम लोगों के लिये **(ऊर्जसने)** पराक्रम के प्रक्षेपण में **(राजेव)** जैसे प्रकाशमान राजा, वैसे **(ऊर्जम्)** पराक्रम क्रो **(धाः)** धारण करिये **(अवृके)** चोर से रहित के **(अन्तः)** मध्य में **(जेः)** जीतिये और **(क्षेषि)** निवास करिये॥४॥

भावार्थः:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। मनुष्यो! जो विद्वान् जन हैं, वे ईश्वर के सदृश पक्षपात से रहित और धर्म्ममार्ग में निवास करते हुए परमेश्वर का भजन करें॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

नितिक्ति यो वारणमन्नमत्ति वायुर्न राष्ट्रयत्येत्यक्तून्।

तुर्याम यस्त आदिशामरातीरत्यो न ह्रुतः पततः परिह्रुत्॥५॥५॥

निऽतिक्ति। यः। वारणम्। अन्नम्। अत्ति। वायुः। न। राष्ट्री। अति। एति। अक्तून्। तुर्याम। यः। ते। आऽदिशाम्। अरातीः। अत्यः। न। ह्रुतः। पततः। परिऽह्रुत्॥५॥५॥

पदार्थः:-**(नितिक्ति)** यन्नितरां तीव्रीकृतम् **(यः)** **(वारणम्)** वरणीयम् **(अन्नम्)** अत्तव्यम् **(अत्ति)** भक्षयति **(वायुः)** यो वाति सः **(न)** इव **(राष्ट्री)** ईश्वरः। **राष्ट्रीतीश्वरनाम।** (निघं०२.२२) **(अति)** व्याप्तिम् **(एति)** गच्छति **(अक्तून्)** प्रसिद्धान् पदार्थान् **(तुर्याम)** हिंसेम **(यः)** **(ते)** **(आदिशाम्)** समन्ताद् दीयमानानाम् **(अरातीः)** शत्रून् **(अत्यः)** अतति व्याप्नोत्यध्वानमित्यत्योऽश्वः **(न)** इव **(ह्रुतः)** कुटिलत्वं गतः **(पततः)** पतनशीलस्य **(परिह्रुत्)** यः परितः सर्वतो ह्वरति कुटिलां गतिं गच्छति॥५॥

अन्वयः:-हे मनुष्या! यो विद्वान्नितिक्ति वारणमन्नमत्ति वायुर्नाक्तूनत्येति यः पततस्ते ह्रुतोऽत्यो न परिह्रुदस्ति यस्य वयमादिशामरातीस्तुर्याम राष्ट्रीव न्याये वर्त्तेमहि तं वयं सेवेमहि॥५॥

भावार्थः:-हे मनुष्या! यः शुद्धं भोज्यं पेयं च सेवते वायुवद्बलिष्ठ ईश्वरवत्पक्षपातरहितो न्यायाद् वक्रतां गतान् परिहन्ता भवेत्तमेव राजानं मन्यध्वम्॥५॥

पदार्थः:-हे मनुष्यो! **(यः)** जो विद्वान् **(नितिक्ति)** अत्यन्त तीक्ष्ण किये **(वारणम्)** स्वीकार करने और **(अन्नम्)** खाने योग्य पदार्थ को **(अत्ति)** भक्षण करता और **(वायुः)** पवन **(न)** जैसे **(अक्तून्)**

प्रसिद्ध पदार्थों को **(अति, एति)** व्याप्त होता है और **(यः)** जो **(पततः)** पतनशील **(ते)** आप का **(ह्रुतः)** कुटिलता को प्राप्त हुआ **(अत्यः)** मार्ग को व्याप्त हुए घोड़े के **(न)** समान **(परिह्रुत्)** सब ओर से कुटिल गमन करने वाला है और जिसके हम लोग **(आदिशाम्)** सब प्रकार से दिये हुओं के **(अरातीः)** शत्रुओं का **(तुर्याम)** नाश करें और **(राष्ट्री)** ईश्वर जैसे वैसे न्याय में वर्त्ताव करें, उसका हम लोग सेवन करें॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो शुद्ध खाने और पीने योग्य पदार्थ का सेवन करता है, वायु के सदृश बलिष्ठ और ईश्वर के सदृश पक्षपात से रहित होकर न्याय की अपेक्षा से विपरीत दशा को प्राप्त हुओं का मारने वाला हो, उसी को राजा मानो॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

आ सूर्यो न भानुमद्भिरर्कैरग्ने ततन्थ रोदसी वि भासा।
चित्रो नयत्परि तमांस्यक्तः शोचिषा पत्मन्नौशिजो न दीयन्॥६॥

आ। सूर्यः। न। भानुमत्ऽभिः। अर्कैः। अग्ने। ततन्थ। रोदसी इति। वि। भासा। चित्रः। नयत्। परि। तमांसि। अक्तः। शोचिषा। पत्मन्। औशिजः। न। दीयन्॥६॥

पदार्थः-**(आ)** समन्तात् **(सूर्यः)** सविता **(न)** इव **(भानुमद्भिः)** बहवो भानवः किरणा विद्यन्ते येषु तैः **(अर्कैः)** वज्रवच्छेदकैः। **अर्क इति वज्रनाम।** (निघं०२.२०) **(अग्ने)** पावकवद्वर्त्तमान **(ततन्थ)** तनोसि **(रोदसी)** द्यावापृथिव्यौ **(वि)** **(भासा)** प्रकाशेन **(चित्रः)** नानावर्णोऽद्भुतः **(नयत्)** नयति **(परि)** सर्वतः **(तमांसि)** **(अक्तः)** प्रसिद्धः **(शोचिषा)** प्रकाशेन **(पत्मन्)** पतन्ति गच्छन्ति यस्मिन् मार्गे तस्मिन् **(औशिजः)** कामयमानस्य पुत्रः **(न)** **(दीयन्)** गच्छन्। **दीयतीति गतिकर्म्मा।** (निघ०२.१४)॥६॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वं भानुमद्भिरर्कैः सूर्य्यो न भासा वि ततन्थ यथा चित्रस्सविता रोदसी प्रकाशयञ्छोचिषाक्तः संस्तमांसि परि णयत् तथा पत्मन् दीयन्नौशिजौ न सत्ये मार्गे गच्छंस्त्वं धर्ममाततन्थ॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा सूर्यः स्वप्रकाशेन सन्निहितान् पदार्थान् प्रकाश्य रात्रिं निवर्त्तयति तथैव शुभान् गुणान् प्रदीप्याज्ञानान्धकारं निवारयत॥६॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के समान वर्त्तमान आप **(भानुमद्भिः)** बहुत प्रकाश वाले **(अर्कैः)** वज्र के सदृश छेदक किरणों से **(सूर्यः)** सूर्य्य के **(न)** जैसे वैसे **(भासा)** प्रकाश से **(वि, ततन्थ)** अत्यन्त विस्तारयुक्त करते हो और जैसे **(चित्रः)** अनेक प्रकार के वर्णों से अद्भुत सूर्य्य **(रोदसी)** अन्तरिक्ष और पृथिवी को प्रकाशित करता और **(शोचिषा)** प्रकाश से **(अक्तः)** प्रसिद्ध हुआ **(तमांसि)** अन्धकारों को **(परि)** सब ओर से **(नयत्)** दूर करता है, वैसे **(पत्मन्)** चलते हैं जन जिसमें उस मार्ग में **(दीयन्)** चलते हुए **(औशिजः)** कामना करते हुए के पुत्र के **(न)** समान सत्य मार्ग में चलते हुए आप धर्म कर्म का **(आ)** सब प्रकार से विस्तार करें॥६॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे सूर्य्य अपने प्रकाश से समीप में वर्त्तमान पदार्थों को प्रकाशित करके रात्रि का निवारण करता है, वैसे ही उत्तम गुणों को प्रकाशित करके अज्ञानान्धकार का निवारण करिये॥६॥

अन्नादिदाना: प्रशंसनीया: स्युरित्याह॥

अन्नादि देने वाले प्रशंसनीय होते हैं, इस विषय को कहते हैं॥

त्वां हि मन्द्रतममर्कशोकैर्ववृमहे महि न: श्रोष्यग्ने।

इन्द्रं न त्वा शवसा देवता वायुं पृणन्ति राधसा नृतमा:॥७॥

त्वाम्। हि। मन्द्रऽतमम्। अर्कऽशोकै:। ववृमहे। महि। न:। श्रोषि। अग्ने। इन्द्रम्। न। त्वा। शवसा। देवता। वायुम्। पृणन्ति। राधसा। नृऽतमा:॥७॥

पदार्थ:-(**त्वाम्**) (**हि**) यत: (**मन्द्रतमम्**) अतिशयेनानन्दकरम् (**अर्कशोकै:**) अन्नादीनां शोधनै: (**ववृमहे**) स्वीकुर्म्महे (**महि**) महत् (**न:**) अस्माकम् (**श्रोषि**) शृणोषि (**अग्ने**) पावक इव वर्त्तमान (**इन्द्रम्**) विद्युतम् (**न**) इव (**त्वा**) त्वाम् (**शवसा**) बलेन (**देवता**) जगदीश्वर: (**वायुम्**) प्राणादिकम् (**पृणन्ति**) सुखयन्ति (**राधसा**) धनेन (**नृतमा:**) अतिशयेन नायका:॥७॥

अन्वय:-हे अग्ने! यस्त्वं नो महि वच: श्रोषि तमर्कशोकैर्मन्द्रतमं त्वां वयं ववृमहे। हे नृतमा! भवन्तो हि यथा देवता सर्वं जगत्पृणाति तथा शवसा राधसा वायुं पृणान्ति तं त्वेन्द्रं न वयं ववृमहे॥७॥

भावार्थ:-अत्रोपमालङ्कार:। येऽन्नादिभि: परमानन्दप्रदातारो नरेषूत्तमा: सर्वं जगद्बोधयन्ति ते सत्कर्त्तव्या भवन्ति॥७॥

पदार्थ:-हे (**अग्ने**) अग्नि के समान वर्त्तमान जो आप (**न:**) हम लोगों के (**महि**) बड़े वचन को (**श्रोषि**) सुनते हैं उन (**अर्कशोकै:**) अन्न आदिकों के शोधनों से (**मन्द्रतमम्**) अत्यन्त आनन्द देने वाले (**त्वाम्**) आप का हम लोग (**ववृमहे**) स्वीकार करते हैं और हे (**नृतमा:**) अत्यन्त अग्रणी जनो! आप लोग (**हि**) जिस कारण से जैसे (**देवता**) जगदीश्वर सम्पूर्ण जगत् को प्रसन्न करता है, वैसे (**शवसा**) बल और (**राधसा**) धन से (**वायुम्**) प्राण आदि को (**पृणन्ति**) सुखी करते हैं उन (**त्वा**) आपको (**इन्द्रम्**) बिजुली को (**न**) जैसे वैसे हम लोग स्वीकार करते हैं॥७॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो अन्नादिकों से अत्यन्त आनन्द देनेवाले, मनुष्यों में उत्तम मनुष्य, सम्पूर्ण संसार को उत्तम बुद्धियुक्त करते हैं, वे सत्कार करने के योग्य होते हैं॥७॥

अथ विद्वद्गुणानाह॥

अब विद्वानों के गुणों को कहते हैं॥

नू नो अग्नेऽवृकेभि: स्वस्ति वेषि राय: पथिभि: पर्ष्यंह:।

ता सूरिभ्यो गृणते रासि सुम्नं मदेम शतहिमा: सुवीरा:॥८॥६॥

नु। नः। अग्ने। अवृकेभिः। स्वस्ति। वेषि। रायः। पथिऽभिः। पर्षि। अंहः। ता। सूरिऽभ्यः। गृणते। रासि। सुम्नम्। मदेम। शतऽहिमाः। सुऽवीराः॥८॥६॥

पदार्थः-(**नू**) सद्यः (**नः**) अस्मान् (**अग्ने**) विद्वन् (**अवृकेभिः**) अचोरैः सह (**स्वस्ति**) सुखम् (**वेषि**) व्याप्नोषि (**रायः**) धनानि (**पथिभिः**) सुमार्गैः (**पर्षि**) पालयसि (**अंहः**) अपराधम् (**ता**) तानि (**सूरिभ्यः**) विद्वद्भ्यः (**गृणते**) स्तुतिं कुर्वते (**रासि**) ददासि (**सुम्नम्**) सुखम् (**मदेम**) आनन्देम (**शतहिमाः**) यावच्छतं वर्षाणि तावत् (**सुवीराः**) शोभनाश्च ते वीराश्च॥८॥

अन्वयः-हे अग्ने! यस्त्वमवृकेभिर्नः स्वस्ति वेषि पथिभी रायो नू पर्षि सूरिभ्यो गृणते च सुम्नं रासि। अंहो दूरीकरोषि तेन सह ता प्राप्य शतहिमाः सुवीरा वयं मदेम॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्याश्चौर्यं चोरसङ्गममन्यायात् पापाचरणं च विहाय सुखं प्राप्य शतायुषो भवेतेति॥८॥

अत्राग्नीश्वरविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति चतुर्थं सूक्तं षष्ठो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) विद्वन्! जो आप (**अवृकेभिः**) चोरी से भिन्न जनों के साथ (**नः**) हम लोगों को (**स्वस्ति**) सुख (**वेषि**) व्याप्त करते हो तथा (**पथिभिः**) उत्तम मार्गों से (**रायः**) धनों को (**नू**) शीघ्र (**पर्षि**) पालन करते हो और (**सूरिभ्यः**) विद्वानों के लिये और (**गृणते**) स्तुति करते हुए के लिये (**सुम्नम्**) सुख को (**रासि**) देते हो तथा (**अंहः**) अपराध को दूर करते हो उन आपके साथ (**ता**) उक्त पदार्थों को प्राप्त होकर (**शतहिमाः**) सौ वर्ष पर्य्यन्त (**सुवीराः**) श्रेष्ठ वीर हम लोग (**मदेम**) आनन्द करें॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! चोरी और चोर के संग और अन्याय से पाप के आचरण का त्याग करके सुख को प्राप्त होकर सौ वर्ष युक्त होओ॥८॥

इस सूक्त में अग्नि, ईश्वर और विद्वान् के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह चौथा सूक्त और छठा वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ सप्तर्चस्य पञ्चमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। अग्निर्देवता। १, ४ त्रिष्टुप्। २, ६, ७ निचृत्त्रिष्टुप्। ५ विराट्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ३ भुरिक्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ मनुष्यैः किं ग्राह्यमित्याह॥

अब सात ऋचा वाले पांचवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में मनुष्यों को क्या ग्रहण करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

हुवे वः सूनुं सहसो युवानमद्रोघवाचं मतिभिर्यविष्ठम्।
य इन्वति द्रविणानि प्रचेता विश्ववाराणि पुरुवारो अध्रुक्॥ १॥

हुवे। वः। सूनुम्। सहसः। युवानम्। अद्रोघऽवाचम्। मतिऽभिः। यविष्ठम्। यः। इन्वति। द्रविणानि। प्रऽचेताः। विश्वऽवाराणि। पुरुऽवारः। अध्रुक्॥ १॥

पदार्थः-(**हुवे**) आदद्मि (**वः**) युष्मभ्यम् (**सूनुम्**) अपत्यम् (**सहसः**) बलस्य (**युवानम्**) प्राप्तयौवनम् (**अद्रोघवाचम्**) अद्रोघा द्रोहरहिता वाग्यस्य तम् (**मतिभिः**) मनुष्यैः प्रज्ञाभिर्वा (**यविष्ठम्**) अतिशयेन युवानम् (**यः**) (**इन्वति**) व्याप्नोति (**द्रविणानि**) द्रव्याणि (**प्रचेताः**) प्रकृष्टं चेतः प्रज्ञा यस्य सः (**विश्ववाराणि**) विश्वैः सर्वैर्वरणीयानि (**पुरुवारः**) बहुभिर्वृतः स्वीकृतः (**अध्रुक्**) यो न द्रुह्यति॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यः प्रचेताः पुरुवारोऽध्रुग् विश्ववाराणि द्रविणानीन्वति तं मतिभिः सह वर्त्तमानं सहसः सूनुं युवानमद्रोघवाचं यविष्ठं वो हुवे॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्या! युष्माभिर्ये पक्षपातरहितवादा द्रोहरहिता बुद्धिमतां सङ्गसेविनो बहुभिर्विद्वद्भिः पूजिता ब्रह्मचर्य्येण पूर्णयुवावस्था विद्वांसः स्युस्तेषामेवोपदेशो ग्रहीतव्यः॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यः**) जो (**प्रचेताः**) उत्तम बुद्धियुक्त (**पुरुवारः**) बहुतों से स्वीकार किया गया (**अध्रुक्**) नहीं द्रोह करने वाला जन (**विश्ववाराणि**) सम्पूर्ण जनों से स्वीकार करने योग्य (**द्रविणानि**) द्रव्यों को (**इन्वति**) व्याप्त होता है उस (**मतिभिः**) मनुष्यों वा बुद्धियों के सहित वर्त्तमान (**सहसः**) बल के (**सूनुम्**) सन्तान (**युवानम्**) युवावस्था को प्राप्त (**अद्रोघवाचम्**) द्रोहरहित वाणी जिसकी ऐसे (**यविष्ठम्**) अतिशय युवावस्था को प्राप्त हुए को (**वः**) आप लोगों के लिये मैं (**हुवे**) ग्रहण करता हूँ॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! आप लोगों को चाहिये कि जो पक्षपात से रहित वादयुक्त, द्रोह से रहित और बुद्धिमानों के संग का सेवन करने वाले और बहुत विद्वानों से आदर किये गये और ब्रह्मचर्य्य से पूर्ण युवावस्था वाले विद्वान् हों, उन्हीं का उपदेश ग्रहण करें॥१॥

मनुष्यैः कस्मिन् सति किं प्राप्तव्यमित्याह॥

मनुष्यों को किसके होने पर क्या प्राप्त होना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

त्वे वसू॑नि पुर्वणीक होतर्दो॒षा वस्तो॒रेरि॑रे य॒ज्ञिया॑सः।

क्षामे॑व॒ विश्वा॒ भुव॑नानि॒ यस्मि॒न्त्सं सौभ॑गानि दधि॒रे पा॑व॒के॥ २॥

त्वे॒ इति॑। वसू॑नि। पु॒रु॒ऽअ॒नी॒क॒। होत॒रिति॑। दो॒षा। वस्तोः॑। आ। ई॒रि॒रे॒। य॒ज्ञिया॑सः। क्षाम॑ऽइव। विश्वा॑। भुव॑नानि। यस्मि॑न्। सम्। सौभ॑गानि। द॒धि॒रे। पा॒व॒के॥ २॥

पदार्थः-(**त्वे**) त्वयि रक्षके (**वसूनि**) धनानि (**पुर्वणीक**) पुरूण्यनेकानि सैन्यानि यस्य तत्सम्बुद्धौ (**होतः**) दातः (**दोषा**) रात्रौ (**वस्तोः**) दिने (**आ, ईरिरे**) प्रेरयन्ति (**यज्ञियासः**) यज्ञानुष्ठानं कर्तुं योग्याः (**क्षामेव**) यथा पृथिवी (**विश्वा**) सर्वाणि (**भुवनानि**) लोकजातानि भूताधिकरणानि (**यस्मिन्**) (**सम्**) (**सौभगानि**) श्रेष्ठानामैश्वर्य्याणां भावान् (**दधिरे**) धरन्ति (**पावके**) वह्निरिव पवित्रस्तस्मिन्॥ २॥

अन्वयः-हे पुर्वणीक होतर्भूपते! यस्मिन् पावके त्वे रक्षके सति यज्ञियासो दोषा वस्तोः क्षामेव विश्वा भुवनानि वसून्येरिरे सौभगानि सं दधिरे तं वयं सत्कुर्याम॥ २॥

भावार्थः-राजनि रक्षके सत्येव प्रजाजनाः प्रतिदिनं वर्धन्त ऐश्वर्यं लब्ध्वा सुखिनो भवन्ति॥ २॥

पदार्थः-हे (**पुर्वणीक**) अनेक सेनाओं से युक्त (**होतः**) दान करने वाले राजन्! (**यस्मिन्**) जिन (**पावके**) अग्नि के सदृश पवित्र (**त्वे**) आपके रक्षक रहने पर (**यज्ञियासः**) यज्ञ के अनुष्ठान करने के योग्य प्रजाजन (**दोषा**) रात्रि में और (**वस्तोः**) दिन में (**क्षामेव**) जैसे पृथिवी, वैसे (**विश्वा**) सम्पूर्ण (**भुवनानि**) लोकों में प्रकट और पञ्चभूत अधिकरण जिनके उन प्राणियों की और (**वसूनि**) धनों को (**आ, ईरिरे**) प्रेरणा करते और (**सौभगानि**) श्रेष्ठ ऐश्वर्यों के भावों को (**सम्, दधिरे**) सम्यक् धारण करते हैं, उनका हम लोग सत्कार करें॥ २॥

भावार्थः-राजा के रक्षक रहने पर ही प्रजाजन प्रतिदिन वृद्धि को प्राप्त होते और ऐश्वर्य्य को प्राप्त होकर सुखयुक्त होते हैं॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

त्वं वि॒क्षु प्र॒दिवः॑ सीद आ॒सु क्रत्वा॑ र॒थीर॑भवो॒ वार्या॑णाम्।

अत॑ इनोषि विध॒ते चि॑कित्वो॒ व्या॑नु॒षग्जा॑तवेदो॒ वसू॑नि॥ ३॥

त्वम्। वि॒क्षु। प्र॒ऽदिवः॑। सी॒दः॒। आ॒सु। क्रत्वा॑। र॒थीः। अ॒भ॒वः॒। वार्या॑णाम्। अतः॑। इ॒नो॒षि॒। वि॒ध॒ते। चि॒कि॒त्वः॒। वि। आ॒नु॒षक्। जा॒त॒ऽवे॒दः॒। वसू॑नि॥ ३॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**विक्षु**) प्रजासु (**प्रदिवः**) प्रकृष्टस्य प्रकाशस्य मध्ये (**सीदः**) सीद (**आसु**) (**क्रत्वा**) प्रज्ञया (**रथीः**) बहुरथवान् (**अभवः**) भवसि (**वार्य्याणाम्**) स्वीकर्त्तुमर्हाणाम् (**अतः**) अस्मात्

(इनोषि) प्रेरयसि **(विधते)** सत्कर्त्रे **(चिकित्वः)** शुद्धबहुप्रज्ञायुक्त **(वि)** **(आनुषक्)** योऽनुसजति **(जातवेदः)** उत्पन्नविज्ञान **(वसूनि)** धनानि॥३॥

अन्वयः-हे चिकित्वो जातवेदो राजन्! यतस्त्वमानुषक् सन् वसूनि विधते वीनोषी। आसु विक्षु क्रत्वा वार्य्याणां रथीरभवोऽतः प्रदिवस्सीदः॥३॥

भावार्थः-स एव राजा भवितुमर्हेद्यो राजविद्यां यथावद्विजानीयात्॥३॥

पदार्थः-हे **(चिकित्वः)** शुद्ध बहुत बुद्धि से युक्त और **(जातवेदः)** उत्पन्न हुआ विज्ञान जिनको ऐसे हे राजन्! जिस कारण **(त्वम्)** आप **(आनुषक्)** संग करने वाले होते हुए **(वसूनि)** धनों को **(विधते)** सत्कार करने वाले के लिये **(वि, इनोषि)** प्रेरणा करते हो और **(आसु)** इन **(विक्षु)** प्रजाओं में **(क्रत्वा)** बुद्धि से **(वार्य्याणाम्)** स्वीकार करने योग्यों के **(रथीः)** बहुत रथों वाले **(अभवः)** होते हो **(अतः)** इस कारण से **(प्रदिवः)** उत्तम प्रकाश के मध्य में **(सीदः)** स्थित होइये॥३॥

भावार्थः-वही राजा होने के योग्य होवे, जो राजविद्या को अच्छे प्रकार जाने॥३॥

पुनर्म्मनुष्यै किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

यो नः सनुत्यो अभिदासदग्ने यो अन्तरो मित्रमहो वनुष्यात्।
तमजरेभिर्वृषभिस्तव स्वैस्तपा तपिष्ठ तपसा तपस्वान्॥४॥

यः। नः। सनुत्यः। अभिऽदासत्। अग्ने। यः। अन्तरः। मित्रऽमहः। वनुष्यात्। तम्। अजरेभिः। वृषऽभिः। तव। स्वैः। तप। तपिष्ठ। तपसा। तपस्वान्॥४॥

पदार्थः-**(यः)** **(न)** अस्मान् **(सनुत्यः)** निर्णितान्तर्हितेषु सिद्धान्तेषु भवः साधुर्वा। **सनुतरिति निर्णितान्तर्हितनाम।** (निघं०३.२५) **(अभिदासत्)** अभिक्षियति **(अग्ने)** विद्वन् **(यः)** **(अन्तरः)** भिन्नः **(मित्रमहः)** महान्ति मित्राणि यस्य तत्सम्बुद्धौ **(वनुष्यात्)** याचेत **(तम्)** **(अजरेभिः)** जरारहितैः **(वृषभिः)** बलिष्ठैर्युवभिः **(तव)** **(स्वैः)** स्वकीयैः **(तप)** तापय तपस्वी भव वा **(तपिष्ठ)** अतिशयेन तप्त **(तपसा)** ब्रह्मचर्य्यप्राणायामादिकर्मणा **(तपस्वान्)** बहुतपोयुक्तः॥४॥

अन्वयः-हे तपिष्ठ मित्रमहोऽग्ने! यः सनुत्यो नोऽभिदासद्योऽन्तरो नो वनुष्यात् तमजरेभिर्वृषभिस्तव स्वैः सह तपा तपसा तपस्वान्॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यो युष्मान् याचेत तस्मै सुपात्राय यथाशक्ति देयम्। यश्च पीडयेत्तं पीडयत तपस्विनो भूत्वा धर्म्ममेवाचरत॥४॥

पदार्थः-हे **(तपिष्ठ)** अत्यन्त तप करने वाले और **(मित्रमहः)** बड़े मित्रों से युक्त **(अग्ने)** विद्वन्! **(यः)** जो **(सनुत्यः)** निश्चित अन्तर्हित अर्थात् मध्य के सिद्धान्तों में प्रकट हुआ अथवा श्रेष्ठ **(नः)** हम लोगों का **(अभिदासत्)** चारों ओर से नाश करता है और **(यः)** जो **(अन्तरः)** भिन्न हम लोगों से

(वनुष्यात्) याचना करे **(तम्)** उसको **(अजरेभिः)** वृद्धावस्था से रहित **(वृषभिः)** बलिष्ठ युवा **(तव)** आपके **(स्वैः)** अपने जनों के साथ **(तपा)** तपयुक्त करो वा तपस्वी होओ। और **(तपसा)** ब्रह्मचर्य और प्राणायामादि कर्म्म से **(तपस्वान्)** बहुत तपयुक्त हूजिये॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो आप लोगों से याचना करे, उस सुपात्र के लिये यथाशक्ति दान करिये और जो पीड़ा देवे उसको पीड़ित करो और तपस्वी होकर धर्म का ही आचरण करो॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

यस्ते॑ य॒ज्ञेन॑ स॒मिधा॒ य उ॒क्थैर॒र्केभिः॑ सूनो सहसो॒ ददा॑शत्।

स मर्त्ये॑ष्वमृत॒ प्रचे॑ता रा॒या द्यु॒म्नेन॒ श्रव॑सा॒ वि भा॑ति॥५॥

यः। ते॒। य॒ज्ञेन॑। स॒म्ऽइधा॑। यः। उ॒क्थैः। अ॒र्केभिः॑। सू॒नो॒ इति॑। स॒ह॒सः॒। ददा॑शत्। सः। मर्त्ये॑षु। अ॒मृ॒त॒। प्रऽचे॑ताः। रा॒या। द्यु॒म्नेन॑। श्रव॑सा। वि। भा॒ति॒॥५॥

पदार्थः-**(यः)** **(ते)** तुभ्यम् **(यज्ञेन)** विद्वत्सत्काराख्येन **(समिधा)** सत्यप्रकाशकेनेन्धनेन वा **(यः)** **(उक्थैः)** वक्तुमर्हैः **(अर्कैभिः)** अर्चनीयैः **(सूनो)** अपत्य **(सहसः)** बलवतः **(ददशत्)** ददाति **(सः)** **(मर्त्येषु)** मनुष्येषु **(अमृत)** मरणधर्मरहित **(प्रचेताः)** प्रकृष्टं चेतो विज्ञानं यस्य **(राया)** धनेन **(द्युम्नेन)** यशसा **(श्रवसा)** अन्नेन श्रवणेन वा **(वि)** **(भाति)**॥५॥

अन्वयः-हे सहसः सूनोऽमृत! यो यज्ञेन समिधा योऽर्कैभिरुक्थैस्ते ददाशत् स मर्त्येषु प्रचेता राया द्युम्नेन श्रवसा वि भातीति विजानीहि॥५॥

भावार्थः-ये प्रशस्तैः कर्म्मभिर्गुणैः सहिता अत्र प्रयतन्ते ते विद्यायशोधनयुक्ता भूत्वा जगति प्रख्यायन्ते॥५॥

पदार्थः-हे **(सहसः)** बलवान् के **(सूनो)** पुत्र और **(अमृत)** मरणधर्म्म से रहित! **(यः)** जो **(यज्ञेन)** विद्वानों के सत्कारनामक यज्ञ और **(समिधा)** सत्य के प्रकाशक वा ईंधन से तथा **(यः)** जो **(अर्कैभिः)** आदर करने योग्य और **(उक्थैः)** कहने के योग्य पदार्थों से **(ते)** आपके लिये **(ददाशत्)** देता है **(सः)** वह **(मर्त्येषु)** मनुष्यों में **(प्रचेताः)** उत्तम ज्ञानवान् **(राया)** धन **(द्युम्नेन)** यश और **(श्रवसा)** अन्न वा श्रवण से **(वि, भाति)** प्रकाशित होता है, इस प्रकार विशेष करके जानो॥५॥

भावार्थः-जो प्रशंसित कर्म्म और गुणों के सहित जन इस संसार में प्रयत्न करते हैं, वे विद्या, यश और धन से युक्त होकर संसार में प्रसिद्ध होते हैं॥५॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

स तत्कृ॑धीषि॒तस्तूय॑मग्ने॒ स्पृधो॑ बाधस्व॒ सह॑सा॒ सह॑स्वान्।

यच्छस्यसे द्युभिरक्तो वचोभिस्तज्जुषस्व जरितुर्घोषि मन्म॥६॥

सः। तत्। कृधि। इषितः। तूयम्। अग्ने। स्पृधः। बाधस्व। सहसा। सहस्वान्। यत्। शस्यसे। द्युऽभिः। अक्तः। वचःऽभिः। तत्। जुषस्व। जरितुः। घोषि। मन्म॥६॥

पदार्थः-(**सः**) (**तत्**) (**कृधि**) कुरु (**इषितः**) प्रेरितः (**तूयम्**) क्षिप्रम्। **तूयमिति क्षिप्रनाम**। (निघं०२.१५) (**अग्ने**) अग्निरिव प्रतापवन् (**स्पृधः**) स्पर्धन्ते यासु ताः स- मसेनाः (**बाधस्व**) (**सहसा**) बलेन (**सहस्वान्**) सहनकर्त्ता (**यत्**) यः (**शस्यसे**) स्तूयसे (**द्युभिः**) द्योतमानैर्दिनैः (**अक्तः**) रात्रिः (**वचोभि**) वचनैः (**तत्**) (**जुषस्व**) सेवस्व (**जरितुः**) स्तावकस्य (**घोषि**) घोषो यस्मिन्नस्ति तत् (**मन्म**) विज्ञानम्॥६॥

अन्वयः-हे अग्ने! यद्यस्त्वं द्युभिरक्त इव शस्यसे स त्वं यद् वचोभिर्जरितुर्घोषि मन्मास्ति तज्जुषस्व। सः सहस्वांस्त्वं सहसा स्पृधो बाधस्व तूयमिषितः संस्तत्कृधि॥६॥

भावार्थः-ये विद्वदीश्वरप्रेरिताः सद्य आलस्यं विहायाऽहर्निशं धर्म्मार्थमोक्षसिद्धये प्रयतन्ते ते योग्या भूत्वा दुःखानि बाधन्ते॥६॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के सदृश प्रतापयुक्त (**यत्**) जो आप (**द्युभिः**) प्रकाशमान दिनों से (**अक्तः**) रात्रि जैसे वैसे (**शस्यसे**) स्तुति किये जाते हो वह आप (**वचोभिः**) वचनों से (**जरितुः**) स्तुति करने वाले का (**घोषि**) वाणी जिसमें ऐसा (**मन्म**) विज्ञान है (**तत्**) उसका (**जुषस्व**) सेवन करो (**सः**) वह (**सहस्वान्**) सहन करने वाले आप (**सहसा**) बल से (**स्पृधः**) स्पर्धा करते हैं जिनमें उन सङ्ग्राम सेनाओं की (**बाधस्व**) बाधा करते हो तथा (**तूयम्**) शीघ्र (**इषितः**) प्रेरित हुए (**तत्**) उसको (**कृधि**) करो॥६॥

भावार्थः-जो विद्वान् और ईश्वर से प्रेरित हुए शीघ्र आलस्य का त्याग करके दिन रात्रि धर्म्म, अर्थ और मोक्ष की सिद्धि के लिये प्रयत्न करते हैं, वे योग्य होकर दुःखों को बाधित करते हैं॥६॥

मनुष्यैः कस्य सङ्गेन किं कर्त्तव्यमित्याह॥

मनुष्यों को किसके संग से क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

अश्याम तं काममग्ने तवोती अश्याम रयिं रयिवः सुवीरम्।
अश्याम वाजमभि वाजयन्तोऽश्याम द्युम्नमजराजरं ते॥७॥७॥

अश्याम। तम्। कामम्। अग्ने। तव। ऊती। अश्याम। रयिम्। रयिऽवः। सुऽवीरम्। अश्याम। वाजम्। अभि। वाजयन्तः। अश्याम। द्युम्नम्। अजर। अजरम्। ते॥७॥

पदार्थः-(**अश्याम**) प्राप्नुयाम (**तम्**) (**कामम्**) इच्छाम् (**अग्ने**) विद्वन् राजन् (**तव**) (**ऊती**) रक्षणाद्येन कर्मणा (**अश्याम्**) प्राप्नुयाम (**रयिम्**) श्रियम् (**रयिवः**) बहुधनयुक्त (**सुवीरम्**)

उत्तमवीरप्रापकम् **(अश्याम)** **(वाजम्)** अन्नादिकम् **(अभि)** आभिमुख्ये **(वाजयन्तः)** विज्ञापयन्तः **(अश्याम)** **(द्युम्नम्)** यशो धनं वा **(अजर)** **(अजरम्)** जरारहितम् **(ते)** तव॥७॥

अन्वयः-हे अजर रयिवोऽग्ने! तवोती वयं तं काममश्याम सुवीरं रयिमश्याम वाजयन्तो वयं वाजमभ्यश्याम तेऽजरं द्युम्नमश्याम॥७॥

भावार्थः-मनुष्यैरिदमेषितव्यं वयमाप्तस्योपदेशेनेच्छासिद्धिं पुष्कलं धनं वीरपुरुषानविनाशियशश्चाप्नुयामेति॥७॥

अत्राग्निविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति पञ्चमं सूक्तं सप्तमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(अजर)** वृद्धावस्थारहित **(रयिवः)** बहुत धन और **(अग्ने)** विद्या से युक्त राजन्! **(तव)** आपके **(ऊती)** रक्षण आदि कर्म्म से हम लोग **(तम्)** उस **(कामम्)** मनोरथ को **(अश्याम)** प्राप्त होवें और **(सुवीरम्)** उत्तम वीरों की प्राप्ति करने वाले **(रयिम्)** धन को **(अश्याम)** प्राप्त होवें तथा **(वाजयन्तः)** जानते हुए हम लोग **(वाजम्)** अन्न आदि को **(अभि)** सन्मुख **(अश्याम)** प्राप्त होवें और **(ते)** आपके **(अजरम्)** जीर्ण होने से रहित **(द्युम्नम्)** यश वा धन को **(अश्याम)** प्राप्त होवें॥७॥

भावार्थः-मनुष्यों को ऐसी इच्छा करनी चाहिये कि हम लोग यथार्थ वक्ता जन के उपदेश से इच्छा की सिद्धि, बहुत धन, वीर पुरुषों और नहीं नष्ट होने वाले यश को प्राप्त होवें॥७॥

इस सूक्त में अग्नि और विद्वान् के गुणों का वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह पाँचवां सूक्त और सातवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ सप्तर्चस्य षष्ठस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। अग्निर्देवता। १, २, ३, ४, ५, ६ निचृत्त्रिष्टुप्। ७ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ मनुष्यैस्सन्तानः कथमुत्पादनीय इत्याह॥

अब सात ऋचा वाले छठे सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में अब मनुष्यों को सन्तान किस प्रकार करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

प्र नव्यसा सहसः सूनुमच्छा यज्ञेन गातुमव इच्छमानः।
वृश्चद्वनं कृष्णयामं रुशन्तं वीती होतारं दिव्यं जिगाति॥१॥

प्र। नव्यसा। सहसः। सूनुम्। अच्छ। यज्ञेन। गातुम्। अवः। इच्छमानः। वृश्चत्ऽवनम्। कृष्णऽयामम्। रुशन्तम्। वीती। होतारम्। दिव्यम्। जिगाति॥१॥

पदार्थः-(**प्र**) (**नव्यसा**) अतिशयेन नवीनेन (**सहसः**) बलवतः (**सूनुम्**) अपत्यम् (**अच्छा**) सम्यक्। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। (**यज्ञेन**) सङ्गतिमयेन (**गातुम्**) पृथिवीम् (**अवः**) रक्षणम् (**इच्छमानः**) अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम्। (**वृश्चद्वनम्**) वृश्चच्छिन्दद् वनं यस्मिन् (**कृष्णयामम्**) कृष्णा कर्षिता यामा येन तम् (**रुशन्तम्**) हिंसन्तम् (**वीती**) वीत्या व्याप्त्या (**होतारम्**) दातारम् (**दिव्यम्**) शुद्धेषु व्यवहारेषु भवम् (**जिगाति**) गच्छति॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यज्ञेन गातुमव इच्छमानो नव्यसा सहसः सूनुं कृष्णयामं रुशन्तं वृश्चद्वनमिव वीती होतारं दिव्यमच्छा प्र जिगाति॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यूयं ब्रह्मचर्य्येण बलिष्ठा भूत्वा सन्तानान् जनयत यतोऽरोगाणि बलवन्ति सुशीलान्यपत्यानि भूत्वा युष्मान् सुखयेयुः॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यज्ञेन**) संगतिरूप यज्ञ से (**गातुम्**) पृथिवी और (**अवः**) रक्षण की (**इच्छमानः**) इच्छा करता हुआ (**नव्यसा**) अत्यन्त नवीन व्यवहार से (**सहसः**) बलवान् के (**सूनुम्**) सन्तान को और (**कृष्णयामम्**) आकर्षित किया मार्ग जिससे ऐसे (**रुशन्तम्**) हिंसा करते हुए (**वृश्चद्वनम्**) काटता है वन जिसमें उसके समान (**वीती**) व्याप्ति से (**होतारम्**) देने वाले (**दिव्यम्**) शुद्धव्यवहारों में प्रकट हुए को (**अच्छ**) अच्छे प्रकार (**प्र, जिगाति**) प्राप्त होता है॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! आप लोग ब्रह्मचर्य्य से बलिष्ठ होकर सन्तानों को उत्पन्न करो जिससे रोगरहित, बलयुक्त और उत्तम स्वभावयुक्त सन्तान होकर आप लोगों को निरन्तर सुखयुक्त करें॥१॥

पुनः सोऽग्निः कीदृशोऽस्तीत्याह॥

फिर वह अग्नि कैसा है, इस विषय को कहते हैं॥

स श्वितानस्तन्यतू रोचनस्था अजरेभिर्नानदद्भिर्यविष्ठः।
यः पावकः पुरुतमः पुरूणि पृथून्यग्निरनुयाति भर्वन्॥ २॥

सः। श्वितानः। तन्यतुः। रोचनऽस्थाः। अजरेभिः। नानदत्ऽभिः। यविष्ठः। यः। पावकः। पुरुऽतमः। पुरूणि। पृथूनि। अग्निः। अनुऽयाति। भर्वन्॥ २॥

पदार्थः-(**सः**) (**श्वितानः**) शुभ्रवर्णः (**तन्यतुः**) विद्युतः (**रोचनस्थाः**) रोचने दीपने तिष्ठतीति (**अजरेभिः**) जरादिरोगरहितैः (**नानदद्भिः**) भृशं शब्दायमानैः (**यविष्ठः**) अतिशयेन युवावस्थः (**यः**) (**पावकः**) (**पुरुतमः**) (**पुरूणि**) बहूनि (**पृथूनि**) विस्तीर्णानि (**अग्निः**) पावकः (**अनुयाति**) अनुगच्छति (**भर्वन्**) भर्जनं दहनं कुर्वन्॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो यविष्ठ इव बलिष्ठः पावकः पुरुतमः श्वितानोऽजरेभिर्नानदद्भिस्तन्यतू रोचनस्था अग्निर्भर्वन् सन्पुरूणि पृथून्यनुयाति स युष्माभिः सम्प्रयोक्तव्यः॥ २॥

भावार्थः-हे विद्वन्! यदि साङ्गोपाङ्गतो विद्युद्विद्यां जानीयास्तर्हि बहूनि सुखानि लभस्व॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्यो (**यः**) जो (**यविष्ठः**) अत्यन्त युवावस्था से युक्त जैसे वैसे अत्यन्त बली (**पावकः**) पवित्र और पवित्र करने वाला (**पुरुतमः**) अतीव बहुरूप (**श्वितानः**) शुभ्रवर्ण (**अजरेभिः**) जीर्णपन आदि रोगरहित (**नानदद्भिः**) निरन्तर गर्जनाओं से (**तन्यतुः**) बिजुलीरूप (**रोचनस्थाः**) दीपन में स्थिर (**अग्निः**) अग्नि (**भर्वन्**) दहन करता हुआ (**पुरूणि**) बहुत (**पृथूनि**) विस्तीर्णों के (**अनुयाति**) पश्चात् जाता है (**सः**) वह आप लोगों को उत्तम प्रकार प्रयोग करने योग्य है॥ २॥

भावार्थः-हे विद्वन्! जो आप अंग और उपांग के सहित बिजुली की विद्या को जानें तो बहुत सुख को प्राप्त होवें॥ ३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

वि ते विष्वग्वातजूतासो अग्ने भामासः शुचे शुचयश्चरन्ति।
तुविम्रक्षासो दिव्या नवग्वा वना वनन्ति धृषता रुजन्तः॥ ३॥

वि। ते। विष्वक्। वातऽजूतासः। अग्ने। भामासः। शुचे। शुचयः। चरन्ति। तुविऽम्रक्षासः। दिव्याः। नवऽग्वाः। वना। वनन्ति। धृषता। रुजन्तः॥ ३॥

पदार्थः-(**वि**) विशेषेण (**ते**) तव (**विष्वक्**) यो विष्वक् सर्वमञ्चति (**वातजूतासः**) वायुरिव वेगवन्तः (**अग्ने**) विद्वन् (**भामासः**) क्रोधाः (**शुचे**) पवित्र (**शुचयः**) पवित्राः (**चरन्ति**) गच्छन्ति (**तुविम्रक्षासः**) बहूभिः सह सङ्गताः (**दिव्याः**) दिवि भवाः (**नवग्वाः**) नवीनगतयः (**वना**) सम्भजनीयानि (**वनन्ति**) संसेवन्ते (**धृषता**) प्रगल्भतया (**रुजन्तः**) शत्रून् भग्नान् कुर्वन्तः॥ ३॥

अन्वयः-हे शुचेऽग्ने! ते ये विष्वग्वातजूतासो भामासः शुचयो वि चरन्ति तुविम्रक्षासो दिव्या नवग्वा धृषता रुजन्तो वना वनन्ति ते पवित्रा जायन्ते॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये विद्युद्वत्पवित्रा दुष्टेषु क्रोधकराः श्रेष्ठैः सह सङ्गन्तारो नूतनां नूतनां विद्यां प्राप्नुवन्तः स्युस्ते सर्वत्र विचरन्तः सन्तोऽन्यान् विज्ञापयेयुः॥३॥

पदार्थः-हे **(शुचे)** पवित्र **(अग्ने)** विद्वन्! **(ते)** आपके जो **(विष्वक्)** सब का आदर करने वाला और **(वाजूतासः)** वायु के सदृश वेगयुक्त **(भामासः)** क्रोध **(शुचयः)** पवित्र **(वि, चरन्ति)** विशेष करके चलते हैं **(तुविम्राक्षासः)** बहुतों के साथ मिले हुए **(दिव्याः)** अन्तरिक्ष में हुए **(नवग्वाः)** नवीन गमन वाले **(धृषता)** प्रगल्भता से **(रुजन्तः)** शत्रुओं को भग्न करते हुए **(वना)** आदर करने योग्य पदार्थों का **(वनन्ति)** उत्तम प्रकार सेवन करते हैं, वे पवित्र होते हैं॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो बिजुली के सदृश पवित्र, दुष्टों में क्रोध करने वाले, श्रेष्ठों के साथ मेल करने और नवीन विद्या को प्राप्त होने वाले होवें, वे सब स्थानों में विचरते हुए अन्यों को जनावें॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

ये ते शुक्रासः शुचयः शुचिष्मः क्षां वपन्ति विषितासो अश्वाः।

अध भ्रमस्त उर्विया वि भाति यातयमानो अधि सानु पृश्नेः॥४॥

ये। ते। शुक्रासः। शुचयः। शुचिष्मः। क्षाम्। वपन्ति। विऽसितासः। अश्वाः। अध। भ्रमः। ते। उर्विया। वि। भाति। यातयमानः। अधि। सानु। पृश्नेः॥४॥

पदार्थः-**(ये)** **(ते)** तव **(शुक्रासः)** वीर्यवन्तः **(शुचयः)** पवित्राः **(शुचिष्मः)** दीप्तिमन् **(क्षाम्)** भूमिम् **(वपन्ति)** **(विषितासः)** व्याप्ताः **(अश्वाः)** आशुगामिनः **(अध)** **(भ्रमः)** भ्रमणम् **(ते)** तव **(उर्विया)** बहुरूपया दीप्त्या **(वि)** **(भाति)** **(यातयमानः)** दण्डं प्रयच्छन् **(अधि)** **(सानु)** विभागे **(पृश्नेः)** अन्तरिक्षस्य मध्ये॥४॥

अन्वयः-हे शुचिष्मोऽग्ने विद्वन्! ये ते शुक्रासः शुचयो विषितासोऽश्वाः क्षां वपन्ति। अध ते यातयमानो भ्रम उर्विया पृश्नेरधि सानु वि भाति तान् सर्वांस्त्वं सुशिक्षय॥४॥

भावार्थः-मनुष्यैः स्वसमीपे पवित्रा आप्ताः पुरुषाः सदैव रक्षणीयाः, स्वयं वा तत्सङ्गं कुर्य्युः॥४॥

पदार्थः-हे **(शुचिष्मः)** प्रकाशयुक्त विद्वान्! **(ये)** जो **(ते)** आपके **(शुक्रासः)** पराक्रमयुक्त **(शुचयः)** पवित्र **(विषितासः)** व्याप्त **(अश्वाः)** शीघ्र चलने वाले **(क्षाम्)** भूमि को **(वपन्ति)** बोते हैं **(अध)** इसके अनन्तर **(ते)** आप का **(यातयमानः)** दण्ड देता हुआ **(भ्रमः)** भ्रमण **(उर्विया)** बहुत प्रकार के प्रकाश से **(पृश्नेः)** अन्तरिक्ष के मध्य में **(अधि)** ऊपर के **(सानु)** विभाग में **(वि, भाति)** विशेष शोभित होता है, उन सब को आप उत्तम प्रकार शिक्षा दीजिये॥४॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि अपने समीप में पवित्र और यथार्थ वक्ता पुरुषों की सदा रक्षा करें अथवा आप भी उनका संग करें॥४॥

पुनर्मनुष्यैः कथं वर्त्तितव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को कैसा वर्त्ताव करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

अध॑ जि॒ह्वा पा॑पतीति॒ प्र वृष्णो॑ गोषु॒युधो॒ नाशनि॑: सृजा॒ना।
शूर॑स्येव॒ प्रसि॑तिः क्षा॒तिर॒ग्नेर्दु॒र्वर्तु॑र्भी॒मो द॑यते॒ वना॑नि॥५॥

अध॑। जि॒ह्वा। पा॒प॒ती॒ति॒। प्र। वृष्ण॑:। गो॒षु॒ऽयुध॑:। न। अ॒शनि॑:। सृ॒जा॒ना। शूर॑स्यऽइव। प्रऽसि॑तिः। क्षा॒तिः। अ॒ग्नेः। दु॒ऽवर्तु॑:। भी॒मः। द॒य॒ते॒। वना॑नि॥५॥

पदार्थः-(**अध**) आनन्तर्य्ये (**जिह्वा**) वाणी (**पापतीति**) प्रकर्षेण पुनः पुनः पतति गच्छन्ति (**प्र**) (**वृष्णः**) बलिष्ठान् (**गोषुयुधः**) ये गोषु युध्यन्ते तान् (**न**) निषेधे (**अशनिः**) विद्युत् (**सृजाना**) निष्पादिता (**शूरस्येव**) (**प्रसितिः**) प्रकृष्टं बन्धनम् (**क्षातिः**) क्षयः (**अग्नेः**) पावकवत्प्रकाशमानस्य (**दुर्वर्त्तुः**) दुःखेन वर्त्तमानयुक्तस्य (**भीमः**) भयङ्करः (**दयते**) हिनस्ति (**वनानि**)॥५॥

अन्वयः-हे विद्वन्! गोषुयुधो वृष्णो जिह्वा न पापतीत्यधाऽशनिरिव सृजाना शूरस्येवाऽग्नेर्दुर्वर्त्तुः प्रसितिः क्षातिर्भीमो वनानि प्र दयते॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। ये मनुष्या धर्मात् पतिता न भूत्वा धार्मिकेषु शान्ता दुष्टेष्वग्निरिव भयङ्करा जायन्ते त एव बलवन्तो गण्यन्ते॥५॥

पदार्थः-हे विद्वान्! (**गोषुयुधः**) वाणियों में युद्ध करने वाले (**वृष्णः**) बलिष्ठों को (**जिह्वा**) वाणी (**न**) नहीं (**पापतीति**) अत्यन्त वारवार प्राप्त होती है (**अध**) इसके अनन्तर (**अशनिः**) बिजुली जैसे वैसे (**सृजाना**) उत्पन्न किया गया (**शूरस्येव**) शूरवीर के सदृश (**अग्नेः**) अग्नि के समान प्रकाशमान (**दुर्वर्त्तुः**) दुःख के साथ वर्त्तमान से युक्त का (**प्रसितिः**) प्रकृष्ट बन्धन (**क्षातिः**) और नाश (**भीमः**) भयंकर हुआ (**वनानि**) वनों को (**प्र, दयते**) नष्ट करता है॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जो मनुष्य धर्म्म से पतित न होकर धार्म्मिकों में शान्त और दुष्टों में अग्नि के सदृश भयंकर होते हैं, वे ही बलवान् गिने जाते हैं॥५॥

मनुष्यैः किंवत् किं कर्त्तव्यमित्याह॥

मनुष्यों को किस के सदृश क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

आ भा॒नुना॒ पार्थि॑वानि॒ ज्रयां॑सि म॒हस्तो॒दस्य॑ धृष॒ता त॑तन्थ।
स बा॑धस्वाप॑ भ॒या सहो॑भि॒: स्पृधो॑ वनु॒ष्यन् व॒नुषो॒ नि जू॑र्व॥६॥

आ। भा॒नुना॑। पार्थि॑वानि। ज्रयां॑सि। म॒हः। तो॒दस्य॑। धृ॒षता। त॒त॒न्थ॒। सः। बा॒ध॒स्व॒। अप॑। भ॒या। स॒हः॒ऽभिः। स्पृध॑:। व॒नु॒ष्यन्। व॒नुष॑:। नि। जू॒र्व॒॥६॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**भानुना**) किरणेन (**पार्थिवानि**) पृथिव्यां विदितानि कार्य्याणि पृथिव्यादिकृतानि वा (**ज्रयांसि**) ज्ञातव्यानि। **ज्रयतीति गतिकर्म्मा।** (निघं०२.१४) (**महः**) महांसि (**तोदस्य**) प्रेरणस्य (**धृषता**) प्रगल्भेन (**ततन्थ**) विस्तृणोषि (**सः**) (**बाधस्व**) (**अप**) (**भया**) भयानि (**सहोभिः**) बलैः (**स्पृधः**) स- ग्रामान् (**वनुष्यन्**) सेवयन् (**वनुषः**) सेवनीयान् (**नि**) (**जूर्व**) हिन्धि॥६॥

अन्वयः-हे विद्वन् राजन्! यथा भानुना तोदस्य धृषता महः पार्थिवानि ज्रयांस्याऽऽततन्थ तथा स त्वं सहोभिर्भयाऽप बाधस्व वनुषो वनुष्यन् स्पृधो नि जूर्व॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये प्रेम्णा सखायो भूत्वा सूर्य्यस्तम इव भयानि निःसार्य्य स- ग्रामाञ्जयन्ति ते प्रतिष्ठिता भवन्ति॥६॥

पदार्थः-हे विद्वन् राजन्! जैसे आप (**भानुना**) किरण से (**तोदस्य**) प्रेरणा के (**धृषता**) ढीठ से (**महः**) बड़े (**पार्थिवानि**) पृथिवी में विदित कार्य्य वा पृथिवी आदि से कृत (**ज्रयांसि**) जानने योग्यों का (**आ**) चारों ओर से (**ततन्थ**) विस्तार करते हैं, वैसे (**सः**) वह आप (**सहोभिः**) बलों से (**भया**) भयों की (**अप, बाधस्व**) अतीव बाधा करो और (**वनुषः**) सेवन करने योग्यों को (**वनुष्यन्**) सेवन कराते हुए (**स्पृधः**) संग्रामों का (**नि, जूर्व**) नाश करिये॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो प्रेम से मित्र होकर जैसे सूर्य्य अन्धकार को, वैसे भयों को दूर करके संग्रामों को जीतते हैं, वे प्रतिष्ठित होते हैं॥६॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

स चित्र चित्रं चितयन्तमस्मे चित्रक्षत्र चित्रतमं वयोधाम्।

चन्द्रं रयिं पुरुवीरं बृहन्तं चन्द्र चन्द्राभिर्गृणते युवस्व॥७॥८॥

सः। चित्र। चित्रम्। चितयन्तम्। अस्मे इति। चित्रऽक्षत्र। चित्रऽतमम्। वयःऽधाम्। चन्द्रम्। रयिम्। पुरुऽवीरम्। बृहन्तम्। चन्द्र। चन्द्राभिः। गृणते। युवस्व॥७॥८॥

पदार्थः-(**सः**) (**चित्र**) अद्भुतगुणकर्म्मस्वभाव (**चित्रम्**) आश्चर्य्यभूतम् (**चितयन्तम्**) ज्ञापयन्तम् (**अस्मे**) अस्मभ्यम् (**चित्रक्षत्र**) चित्रमद्भुतं क्षत्रं राज्यं धनं वा यस्य (**चित्रतमम्**) अत्यन्ताश्चर्य्ययुक्तं रूपम् (**वयोधाम्**) यो वयो जीवनं दधाति [(**चन्द्रम्**) (**रयिम्**) (**पुरुवीरम्**) बहुवीरप्रदम् (**बृहन्तम्**) महान्तम् (**चन्द्र**) आह्लादकारक (**चन्द्राभिः**) आनन्दधनकरीभिः प्रजाभिः (**गृणते**) स्तौति (**युवस्व**) संयोजय॥७॥

अन्वयः-हे चित्र चित्रक्षत्र चन्द्र! यथा स विद्वान् चन्द्राभिरस्मे चित्रं चन्द्रं चितयन्तं चित्रतमं वयोधां बृहन्तं पुरुवीरं रयिं गृणते तं त्वं युवस्व॥७॥

भावार्थः-ये मनुष्या अद्भुगुणकर्म्मस्वभावान् स्वीकृत्यान्यान् ग्राहयित्वा धनाढ्यान् कारयन्ति तेऽद्भुतस्तुतयो भवन्तीति॥७॥

अत्राग्निविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति षष्ठं सूक्तमष्टमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(चित्र)** अद्भुत गुण कर्म्म और स्वभाव वाले **(चित्रक्षत्र)** अद्भुत राज्य वा धन से युक्त **(चन्द्र)** आह्लादकारक! जैसे **(सः)** वह विद्वान् **(चन्द्राभिः)** आनन्द और धन करने वाली प्रजाओं से **(अस्मे)** हम लोगों के लिये **(चित्रम्)** आश्चर्यभूत **(चन्द्रम्)** आनन्द देने वाले सुवर्ण आदि को **(चितयन्तम्)** जनाते हुए तथा **(चित्रतमम्)** अत्यन्त आश्चर्य्ययुक्त रूप और **(वयोधाम्)** जीवन के धारण करने और **(बृहन्तम्)** बड़े **(पुरुवीरम्)** बहुत वीरों के देने वाले **(रयिम्)** धन की **(गृणते)** स्तुति करता है, उसको आप **(युवस्व)** उत्तम प्रकार युक्त करिये॥७॥

भावार्थः-जो मनुष्य अद्भुत गुण, कर्म्म और स्वभावों का स्वीकार करके तथा अन्य जनों को ग्रहण कराय के धनाढ्य कराते हैं, वे अद्भुत स्तुति वाले होते हैं॥७॥

इस सूक्त में अग्नि तथा विद्वान् के गुणों का वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह छठा सूक्त और आठवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ सप्तर्चस्य सप्तमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। वैश्वानरो देवता। १ त्रिष्टुप्। २ निचृत्त्रिष्टुप्। ७ स्वराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ३ निचृत्पङ्क्तिः। ४ स्वराट् पङ्क्तिः। ५ पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ६ जगती छन्दः। निषादः स्वरः॥

अथ मनुष्यैः कीदृशोऽग्निर्वेदितव्य इत्याह॥

अब सात ऋचावाले सातवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में मनुष्यों को कैसा अग्नि जानना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

मूर्धानं दिवो अरतिं पृथिव्या वैश्वानरमृत आ जातमग्निम्।
कविं सम्राजमतिथिं जनानामासन्ना पात्रं जनयन्त देवाः॥१॥

मूर्धानम्। दिवः। अरतिम्। पृथिव्याः। वैश्वानरम्। ऋते। आ। जातम्। अग्निम्। कविम्। सम्ऽराजम्। अतिथिम्। जनानाम्। आसन्। आ। पात्रम्। जनयन्त। देवाः॥१॥

पदार्थः-(मूर्द्धानम्) सर्वोपरि विराजमानम् **(दिवः)** प्रकाशस्य सूर्य्यस्य वा **(अरतिम्)** प्राप्तिम् **(पृथिव्याः) (वैश्वानरम्)** विश्वेषु नरेषु नायकम् **(ऋते)** सत्ये **(आ) (जातम्)** प्रसिद्धम् **(अग्निम्)** अग्निमिव वर्त्तमानम् **(कविम्)** क्रान्तप्रज्ञं विद्वांसं वा **(सम्राजम्)** भूगोलस्य राजानम् **(अतिथिम्)** पूजनीयम् **(जनानाम्)** मनुष्याणाम् **(आसन्)** सन्ति **(आ) (पात्रम्)** यः पातिस्तम् **(जनयन्त) (देवाः)** विद्वांसः॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ये देवा दिवो मूर्द्धानं पृथिव्या अरतिमृते जातं कविं सम्राजं जनानामतिथिं पात्रं वैश्वानरमग्निमाऽऽजनयन्त ते सुखिन आऽऽसन्॥१॥

भावार्थः-ये मनुष्याः परमात्मवन्न्यायकारिणो भूत्वा वह्निरिव विद्याविनयप्रकाशिताः सम्राज्यं प्राप्नुवन्ति ते सर्वान् सुखयितुमर्हन्ति॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(देवाः)** विद्वान् जन **(दिवः)** प्रकाश वा सूर्य्य के **(मूर्द्धानम्)** सर्वोपरि विराजमान **(पृथिव्याः)** पृथिवी की **(अरतिम्)** प्राप्ति को **(ऋते)** सत्य में **(जातम्)** प्रसिद्ध **(कविम्)** स्वच्छ बुद्धियुक्त वा विद्वान् **(सम्राजम्)** भूगोल के राजा **(जनानाम्)** मनुष्यों के **(अतिथिम्)** आदर करने योग्य **(पात्रम्)** पालन करने वाले **(वैश्वानरम्)** सम्पूर्ण मनुष्यों में अग्रणी **(अग्निम्)** अग्नि के सदृश वर्त्तमान को **(आ, जनयन्त)** प्रकट करते हैं वे सुखी **(आ, आसन्)** अच्छे प्रकार हैं॥१॥

भावार्थः-जो मनुष्य परमात्मा के सदृश न्यायकारी होकर तथा अग्नि के सदृश विद्या और विनय से प्रकाशित हुए चक्रवर्त्तित्व को प्राप्त होते हैं, वे सुख देने को योग्य होते हैं॥१॥

पुनस्तमेवाग्निविषयमाह॥

फिर उसी अग्नि के विषय को कहते हैं॥

नाभिं यज्ञानां सदनं रयीणां महामाहावमभि सं नवन्त।

वैश्वानरं रथ्यमध्वराणां यज्ञस्य केतुं जनयन्त देवाः॥ २॥

नाभिम्। यज्ञानाम्। सदनम्। रयीणाम्। महाम्। आऽहावम्। अभि। सम्। नवन्त। वैश्वानरम्। रथ्यम्। अध्वराणाम्। यज्ञस्य। केतुम्। जनयन्त। देवाः॥ २॥

पदार्थः-(**नाभिम्**) मध्यभागम् (**यज्ञानाम्**) सत्यक्रियामयानाम् (**सदनम्**) स्थानम् (**रयीणाम्**) धनानाम् (**महाम्**) महताम् (**आहावम्**) समन्तात् स्पर्द्धनीयम् (**अभि**) आभिमुख्ये (**सम्**) (**नवन्त**) स्तुवन्ति (**वैश्वानरम्**) विश्वस्मिन् राजमानम् (**रथ्यम्**) रथं वोढुमर्हम् (**अध्वराणाम्**) अहिंसनीयानाम् (**यज्ञस्य**) सङ्गन्तव्यस्य (**केतुम्**) प्रज्ञापकम् (**जनयन्त**) जनयन्ति (**देवाः**) विद्वांसः॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्या! देवा यं यज्ञानां नाभिं महाँ रयीणां सदनमाहावं वैश्वानरं रथ्यमध्वराणां यज्ञस्य केतुं सं जनयन्त नवन्त तं यूयमभि प्रशंसत॥ २॥

भावार्थः-ये मनुष्याः सर्वतो व्याप्तं सर्वकार्य्यसिद्धिकरमग्निं विज्ञाय यानानि जनयन्ते ते कार्यसिद्धिं लभन्ते॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**देवाः**) विद्वान् जन जिस (**यज्ञानाम्**) सत्यक्रियामय यज्ञों के (**नाभिम्**) बीच के भाग को और (**महाम्**) महान् (**रयीणाम्**) धनों के (**सदनम्**) स्थान और (**आहावम्**) चारों ओर से स्पर्द्धा करने योग्य (**वैश्वानरम्**) सर्वत्र प्रकाशमान (**रथ्यम्**) रथ को बहाने के योग्य (**अध्वराणाम्**) नहीं नष्ट करने योग्यों के (**यज्ञस्य**) प्राप्त होने योग्य व्यवहार के (**केतुम्**) जनाने वाले को (**सम्, जनयन्त**) अच्छे प्रकार प्रकट करते हैं और (**नवन्त**) स्तुति करते हैं उसकी आप लोग (**अभि**) सम्मुख प्रशंसा करिये॥ २॥

भावार्थः-जो मनुष्य सर्वत्र व्याप्त और सम्पूर्ण कार्य्यों की सिद्धि के करने वाले अग्नि को अच्छे प्रकार जान कर वाहनों को प्रकट करते हैं, वे कार्य्यसिद्धि को प्राप्त होते हैं॥ २॥

पुनः स राजा कीदृशो भवेदित्याह॥

फिर वह राजा कैसा होवे, इस विषय को कहते हैं॥

त्वद्विप्रो जायते वाज्यग्ने त्वद्वीरासो अभिमातिषाहः।
वैश्वानर त्वमस्मासु धेहि वसूनि राजन्त्स्पृहयाय्याणि॥ ३॥

त्वत्। विप्रः। जायते। वाजी। अग्ने। त्वत्। वीरासः। अभिमातिऽसहः। वैश्वानर। त्वम्। अस्मासु। धेहि। वसूनि। राजन्। स्पृहयाय्याणि॥ ३॥

पदार्थः-(**त्वत्**) तव सकाशात् (**विप्रः**) मेधावी (**जायते**) (**वाजी**) वेगवान् (**अग्ने**) पावकवत्प्रतापिन् विद्वन् (**त्वत्**) (**वीरासः**) शूरवीराः (**अभिमातिषाहः**) येऽभिमात्याऽभिमानेन युक्ताञ्छत्रून् सहन्ते (**वैश्वानर**) विश्वेषु नरेषु नायक (**त्वम्**) (**अस्मासु**) (**धेहि**) (**वसूनि**) (**राजन्**) (**स्पृहयाय्याणि**) स्पृहणीयानि॥ ३॥

अन्वयः-हे वैश्वानराऽग्ने राजन्! यस्मात् त्वद्विप्रो वाजी जायते त्वदभिमातिषाहो वीरासो जायन्ते ततस्त्वमस्मासु स्पृहयाय्याणि वसूनि धेहि॥३॥

भावार्थः-स एव राजा भवितुं योग्यो यस्य सङ्गेन दुष्टा अपि श्रेष्ठाः कातरा अपि शूरवीराः कृपणा अपि दातारो भवन्ति॥३॥

पदार्थः-हे **(वैश्वानर)** संपूर्ण जनों में अग्रणी **(अग्ने)** अग्नि के सदृश प्रतापी विद्वन् **(राजन्)** राजन्! जिस कारण से **(त्वत्)** आपके समीप से **(विप्रः)** बुद्धिमान् **(वाजी)** वेगयुक्त **(जायते)** होता है और **(त्वत्)** आपके समीप से **(अभिमातिषाहः)** अभिमानयुक्त शत्रुओं के सहने वाले **(वीरासः)** शूरवीर जन प्रकट होते हैं इससे **(त्वम्)** आप **(अस्मासु)** हम लोगों में **(स्पृहयाय्याणि)** इच्छा के विषय होने योग्य **(वसूनि)** धनों को **(धेहि)** धारण करिये॥३॥

भावार्थः-वही राजा होने को योग्य है जिसके संग दुष्ट जन भी श्रेष्ठ, कायर भी शूरवीर और कृपण भी दाता होते हैं॥३॥

अथ द्वितीयजन्मविषयमाह॥

अब द्वितीय जन्म के विषय को कहते हैं॥

त्वां विश्वे॑ अमृत॒ जाय॑मानं॒ शिशुं॒ न दे॒वा अ॒भि सं न॑वन्ते।

तव॒ क्रतु॑भिरमृत॒त्वमा॑य॒न् वैश्वा॑नर॒ यत्पि॒त्रोरदी॑देः॥४॥

त्वाम्। विश्वे॑। अ॒मृ॒त॒। जाय॑मानम्। शिशु॑म्। न। दे॒वाः। अ॒भि। सम्। न॒व॒न्ते॒। तव॑। क्रतु॑ऽभिः। अ॒मृ॒त॒ऽत्वम्। आ॒य॒न्। वैश्वा॑नर। यत्। पि॒त्रोः। अदी॑देः॥४॥

पदार्थः-**(त्वाम्)** **(विश्वे)** सर्वे **(अमृत)** मरणधर्म्मरहित **(जायमानम्)** उत्पद्यमानम् **(शिशुम्)** बालकम् **(न)** इव **(देवाः)** विद्वांसः **(अभि)** **(सम्)** सम्यक् **(नवन्ते)** स्तुवन्ति **(तव)** **(क्रतुभिः)** प्रज्ञाकर्म्मभिः **(अमृतत्वम्)** मोक्षस्य भावम् **(आयन्)** प्राप्नुवन्ति **(वैश्वानर)** यो विश्वान्नरान् धर्मकार्य्येषु नयति तत्सम्बुद्धौ **(यत्)** यः **(पित्रोः)** मातपित्रोरिव विद्याऽऽचार्ययोः **(अदीदेः)** प्रकाशयेः॥४॥

अन्वयः-हे वैश्वानराऽमृतात विद्वन्! यं त्वां शिशुं न जायमानं विश्वे देवा अभि सन्नवन्ते यस्य तव क्रतुभिर्मनुष्या अमृतत्वमायन् यत्त्वं पित्रोरदीदेः स त्वं धन्योऽसि॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये मनुष्या मातापितृभ्यां जन्म प्राप्याऽष्टमं वर्षमारभ्याऽऽचार्य्याद्विद्याग्रहणेन द्वितीयं जन्म प्राप्नुवन्ति ते स्तुत्याः सन्तो धर्म्मार्थकाममोक्षान् साद्धुं शक्नुवन्ति॥४॥

पदार्थः-हे **(वैश्वानर)** संपूर्ण जनों को धर्म्म के कार्य्यों में ले चलने वाले **(अमृत)** मरणधर्म्म से रहित यथार्थवक्ता विद्वान्! जिन **(त्वाम्)** आपको **(शिशुम्)** बालक को **(न)** जैसे वैसे **(जायमानम्)** उत्पन्न हुए को **(विश्वे)** सम्पूर्ण **(देवाः)** विद्वान् जन **(अभि)** सब ओर से **(सम्)** उत्तम प्रकार **(नवन्ते)** स्तुति करते हैं और जिन **(तव)** आपके **(क्रतुभिः)** बुद्धि के कर्म्मों से मनुष्य लोग **(अमृतत्वम्)** मोक्षपन

को **(आयन्)** प्राप्त होते हैं और **(यत्)** जो आप **(पित्रोः)** माता और पिता के सदृश विद्या और आचार्य्य के **(अदीदेः)** प्रकाशक हो, वह आप धन्य हो॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो मनुष्य माता और पिता से जन्म को प्राप्त होकर आठवें वर्ष से प्रारम्भ करके आचार्य से विद्या के ग्रहण से द्वितीय जन्म को प्राप्त होते हैं, वे स्तुति करने योग्य हुए धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को सिद्ध करने को समर्थ होते हैं॥४॥

पुनर्मनुष्यैः किं प्रापणीयमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या प्राप्त कराना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

वैश्वानर तव तानि व्रतानि महान्यग्ने नकिरा दधर्ष।

यज्जायमानः पित्रोरुपस्थेऽविन्दः केतुं वयुनेष्वह्नाम्॥५॥

वैश्वानर। तव। तानि। व्रतानि। महानि। अग्ने। नकिः। आ। दधर्ष। यत्। जायमानः। पित्रोः। उपऽस्थे। अविन्दः। केतुम्। वयुनेषु। अह्नाम्॥५॥

पदार्थः-**(वैश्वानर)** विश्वस्मिन् विद्याधर्म्मप्रकाशनेन नायक **(तव)** **(तानि)** ब्रह्मचर्य्यविद्याग्रहणसत्यभाषणादीनि **(व्रतानि)** कर्म्माणि **(महानि)** महान्ति **(अग्ने)** पावकवत्प्रकाशात्मन् **(नकिः)** निषेधे **(आ)** **(दधर्ष)** तिरस्कुर्य्यात् **(यत्)** यः **(जायमानः)** **(पित्रोः)** जनकयोरिव विद्याऽऽचार्य्ययोः **(उपस्थे)** समीपे **(अविन्दः)** विन्दसि प्राप्नोषि **(केतुम्)** प्रज्ञाम् **(वयुनेषु)** पृथिवीमारभ्य परमेश्वरपर्य्यन्तानां विज्ञानेषु **(अह्नाम्)** दिनानां मध्ये॥५॥

अन्वयः-हे वैश्वानराऽग्ने! यद्यस्त्वं पित्रोरुपस्थे जायमानोऽह्नां वयुनेषु केतुमविन्दस्तमस्य तव तानि महानि व्रतानि कोऽपि नकिराऽऽदधर्ष॥५॥

भावार्थः-यदि मनुष्या द्वितीयं विद्याजन्म प्राप्नुयुस्तर्हि तेषाममोघानि कर्म्माणि भवन्तीति वेद्यम्॥५॥

पदार्थः-हे **(वैश्वानर)** सम्पूर्ण संसार में विद्या और धर्म्म के प्रकाश से अग्रणी **(अग्ने)** अग्नि के सदृश प्रकाशस्वरूप **(यत्)** जो आप **(पित्रोः)** माता-पिता के सदृश विद्या और आचार्य्य के **(उपस्थे)** समीप में **(जायमानः)** प्रकट हुआ **(अह्नाम्)** दिनों के मध्य में **(वयुनेषु)** पृथिवी से लेकर परमेश्वर पर्य्यन्त पदार्थों के विज्ञानों में **(केतुम्)** बुद्धि को **(अविन्दः)** प्राप्त होते हो उन **(तव)** आपके **(तानि)** उक्त ब्रह्मचर्य्य, विद्याग्रहण, सत्यभाषण आदि **(महानि)** बड़े **(व्रतानि)** कर्म्मों को कोई भी **(नकिः)** नहीं **(आ, दधर्ष)** तिरस्कार करे॥५॥

भावार्थः-जो मनुष्य दूसरे विद्यारूप जन्म को प्राप्त होवें, तो उनके सफल कर्म्म होते हैं, ऐसा जानना चाहिये॥५॥

पुनर्मनुष्यैः किं वेदितव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या जानना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

वैश्वानरस्य विमितानि चक्षसा सानूनि दिवो अमृतस्य केतुना।

तस्येदु विश्वा भुवनाधि मूर्धनि वयाइव रुरुहुः सप्त विस्रुहः॥६॥

वैश्वानरस्य। विऽमितानि। चक्षसा। सानूनि। दिवः। अमृतस्य। केतुना। तस्य। इत्। ऊँ इति। विश्वा। भुवना। अधि। मूर्धनि। वयाःऽइव। रुरुहुः। सप्त। विऽस्रुहः॥६॥

पदार्थः-(**वैश्वानरस्य**) विश्वेषु नरेषु विद्याविनयाभ्यां प्रकाशमानस्य (**विमितानि**) विशेषेण परिमितानि (**चक्षसा**) प्रज्ञानेन (**सानूनि**) प्रान्तदेशान् (**दिवः**) प्रकाशमानस्य (**अमृतस्य**) नाशरहितस्य (**केतुना**) प्रज्ञया (**तस्य**) (**इत्**) एव (उ) (**विश्वा**) सर्वाणि (**भुवना**) भुवनानि लोकाः (**अधि**) (**मूर्द्धनि**) (**वयाइव**) पक्षिण इव (**रुरुहुः**) प्रादुर्भवन्ति (**सप्त**) सप्तविधाः (**विस्रुहः**) विसरन्ति विशेषेण गच्छन्ति॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यस्य वैश्वानरस्य चक्षसा विमितानि सानूनि दिवोऽमृतस्य केतुना विश्वा भुवना सप्त विस्रुहो मूर्द्धनि वयाइवाऽधि रुरुहुस्तस्येदु सङ्गं कुरुत॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यो विद्वान् जगदीश्वरनिर्मितान् पक्षिवदन्तरिक्षे चलतो लोकानेतेषां गतिं च विजानीयात् स विदुषां मूर्द्धेव प्रशंसनीयो जायते॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जिस (**वैश्वानरस्य**) संपूर्ण नरों में विद्या और विनय से प्रकाशमान के (**चक्षसा**) प्रज्ञान से (**विमितानि**) विशेष करके परिमित (**सानूनि**) प्रान्त स्थानों को (**दिवः**) प्रकाशमान (**अमृतस्य**) नाश से रहित की (**केतुना**) बुद्धि से (**विश्वा**) सम्पूर्ण (**भुवना**) लोक (**सप्त**) सात प्रकार के (**विस्रुहः**) विशेष करके सरकते जाते और (**मूर्द्धनि**) शिर पर अर्थात् ऊपर (**वयाइव**) पक्षियों के सदृश (**अधि**) अधिकतर (**रुरुहुः**) प्रकट होते हैं (**तस्य**) उसका (**इत्**) ही (**उ**) तर्क-वितर्क से संग करो॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो विद्वान् जन परमेश्वर से रचे गए, पक्षियों सदृश अन्तरिक्ष में चलते हुए लोकों और उनकी गति को बुद्धि से विशेष करके जाने, वह विद्वानों के मस्तक के सदृश प्रशंसा करने योग्य होता है॥६॥

पुनर्जगदीश्वरः कीदृशोऽस्तीत्याह॥

फिर जगदीश्वर कैसा है, इस विषय को कहते हैं॥

वि यो रजांस्यमिमीत सुक्रतुर्वैश्वानरो वि दिवो रोचना कविः।

परि यो विश्वा भुवनानि पप्रथेऽदब्धो गोपा अमृतस्य रक्षिता॥७॥९॥

वि। यः। रजांसि। अमिमीत। सुऽक्रतुः। वैश्वानरः। वि। दिवः। रोचना। कविः। परि। यः। विश्वा। भुवनानि। पप्रथे। अदब्धः। गोपाः। अमृतस्य। रक्षिता॥७॥९॥

पदार्थः-(**वि**) विशेषेण (**यः**) जगदीश्वरः (**रजांसि**) (**अमिमीत**) निर्मिमीते (**सुक्रतुः**) शोभनानि प्रज्ञानानि कर्म्माणि यस्य सः (**वैश्वानरः**) (**वि**) (**दिवः**) प्रकाशमानस्य सूर्य्यस्य (**रोचना**) रोचनानि प्रदीपनानि (**कविः**) क्रान्तप्रज्ञः (**परि**) सर्वतः (**यः**) (**विश्वा**) अखिलानि (**भुवनानि**) (**पप्रथे**) प्रथयति विस्तृणाति (**अदब्धः**) अहिंसनीयः (**गोपाः**) पालकः (**अमृतस्य**) मोक्षस्य (**रक्षिता**)॥७॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यो वैश्वानरः सुक्रतुः कविरीश्वरो दिवो रोचना रजांसि व्यमिमीत यो विश्वा भुवनानि परि पप्रथे सोऽमृतस्य गोपा अदब्धो रक्षिता व्यमिमीत॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्या! येन जगदीश्वरेण सर्वे लोका निर्मिता यः सर्वेषां रक्षिताऽस्ति तं सर्वे उपासीरन्निति॥७॥

अत्र वैश्वानरविद्वदीश्वरगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति सप्तमं सूक्तं नवमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे विद्वान् जनो! (**यः**) जो जगदीश्वर (**वैश्वानरः**) सम्पूर्ण मनुष्यों का हित करने वाला (**सुक्रतुः**) उत्तम कर्म जिसके वह (**कविः**) उत्तम बुद्धि वाला ईश्वर (**दिवः**) प्रकाशमान सूर्य्य के (**रोचना**) प्रकाशरूप (**रजांसि**) लोकों को (**वि**) विशेष करके (**अमिमीत**) निर्मित करता तथा (**यः**) जो (**विश्वा**) सम्पूर्ण (**भुवनानि**) भुवनों को (**परि**) सब ओर से (**पप्रथे**) विस्तारयुक्त करता है वह (**अमृतस्य**) मोक्ष का (**गोपाः**) पालन करने वाला (**अदब्धः**) अहिंसनीय और (**रक्षिता**) रक्षा करने वाला (**वि**) विशेष करके निर्माण करता है॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिस जगदीश्वर ने सम्पूर्ण लोक निर्मित किये हैं तथा जो सब का रक्षक है, उसकी सब उपासना करें॥७॥

इस सूक्त में सब के हित करने वाला, विद्वान् और ईश्वर के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह सातवाँ सूक्त और नवमा वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ सप्तर्चस्याष्टमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। वैश्वानरो देवता। १, ४ जगती। ६ विराड्जगती छन्दः। निषादः स्वरः। २, ३, ५ भुरिक्त्रिष्टुप्। ७ निचृत् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ मनुष्यैः किं विज्ञाय किमुपदेष्टव्यमित्याह॥

अब सात ऋचावाले आठवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में अब मनुष्यों को क्या जान कर क्या उपदेश करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

पृक्षस्य वृष्णो अरुषस्य नू सहः प्र नु वोचं विदथा जातवेदसः।
वैश्वानराय मतिर्नव्यसी शुचिः सोमइव पवते चारुरग्नये॥१॥

पृक्षस्य। वृष्णः। अरुषस्य। नु। सहः। प्र। नु। वोचम्। विदथा। जातऽवेदसः। वैश्वानराय। मतिः। नव्यसी। शुचिः। सोमःऽइव। पवते। चारुः। अग्नये॥१॥

पदार्थः-(**पृक्षस्य**) सर्वत्र सम्बद्धस्य सम्पृक्तस्य (**वृष्णः**) सेचकस्य (**अरुषस्य**) अहिंसकस्य (**नूः**) सद्यः। अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। (**सहः**) बलम् (**प्र**) (**नु**) क्षिप्रम् (**वोचम्**) उपदिशेयम् (**विदथा**) विज्ञानानि (**जातवेदसः**) जातेषु विद्यमानस्य (**वैश्वानराय**) सर्वस्य विश्वस्य प्रकाशकाय (**मतिः**) प्रज्ञा (**नव्यसी**) अतिशयेन नवीना (**शुचिः**) पवित्रा (**सोमइव**) सोमलतेव (**पवते**) पवित्रा भवति (**चारुः**) सुन्दरा (**अग्नये**) विदुषे॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यस्य पृक्षस्यारुषस्य वृष्णो जातवेदसः सहो नू प्र वोचं विदथा नु प्रवोचं यस्य सोमइव नव्यसी शुचिश्चारुर्मतिः पवते तस्मै वैश्वानरायाऽग्नये प्रज्ञां धरेयम्॥१॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। येषां मनुष्याणां सोमौषधिवत्पवित्रकरी प्रज्ञाऽतुलं बलमग्निविद्या च भवति त एवाऽऽनन्दन्ति॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जिस (**पृक्षस्य**) सर्वत्र सम्बद्ध अर्थात् संयुक्त (**अरुषस्य**) नहीं हिंसा करने और (**वृष्णः**) सेचन करनेवाले (**जातवेदसः**) उत्पन्न हुओं में विद्यमान के (**सहः**) बल का (**नु**) शीघ्र (**प्र, वोचम्**) उपदेश देऊँ और (**विदथा**) विज्ञानों का (**नू**) शीघ्र उपदेश देऊँ और जिसकी (**सोमइव**) सोमलता जैसे वैसे (**नव्यसी**) अत्यन्त नवीन (**शुचिः**) पवित्र (**चारुः**) सुन्दर (**मतिः**) बुद्धि (**पवते**) पवित्र होती है उस (**वैश्वानराय**) सम्पूर्ण विश्व के प्रकाशक (**अग्नये**) विद्वान् जन के लिये बुद्धि को धारण करूँ॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जिन मनुष्यों की सोमलतारूप ओषधि के सदृश पवित्र करने वाली बुद्धि, अतुल बल और अग्निविद्या होती है, वे ही आनन्दित होते हैं॥१॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

स जायमानः परमे व्योमनि व्रतान्यग्निर्व्रतपा अरक्षत।
व्य१न्तरिक्षममिमीत सुक्रतुर्वैश्वानरो महिना नाकमस्पृशत्॥ २॥

सः। जायमानः। परमे। विऽओमनि। व्रतानि। अग्निः। व्रतऽपाः। अरक्षत। वि। अन्तरिक्षम्। अमिमीत। सुऽक्रतुः। वैश्वानरः। महिना। नाकम्। अस्पृशत्॥ २॥

पदार्थः-(**सः**) सूर्य्यरूपेण (**जायमानः**) उत्पद्यमानः (**परमे**) प्रकृष्टे (**व्योमनि**) व्योमवद्व्यापके (**व्रतानि**) सत्यभाषणादीनि कर्म्माणि (**अग्निः**) पावकः (**व्रतपाः**) यो व्रतानि कर्म्माणि रक्षति सः (**अरक्षत**) रक्षति (**वि**) (**अन्तरिक्षम्**) उदकम् (**अमिमीत**) रचयति (**सुक्रतुः**) शोभनकर्म्मा (**वैश्वानरः**) विश्वेषु नरेषु प्रकाशमानः (**महिना**) महत्त्वेन (**नाकम्**) अविद्यमानदुःखम् (**अस्पृशत्**) स्पृशति॥ २॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! युष्माभिर्यो व्रतपा अग्निः परमे व्योमनि जायमानो व्रतान्यरक्षतान्तरिक्षं व्यमिमीत सुक्रतुर्वैश्वानरो महिना नाकमस्पृशत् स वेदितव्यः॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्या! येन परमेश्वरेण स्वस्मिन् सूर्य्यादिलोकनिर्म्माणेन सर्वेषामुपकारः कृतस्तस्य सत्यानि कर्म्माण्यनुष्ठायोपासनां कुर्वन्तु॥ २॥

पदार्थः-हे विद्वान् जनो! आप लोगों को जो (**व्रतपाः**) कर्म्मों की रक्षा करने वाला (**अग्निः**) अग्नि (**परमे**) श्रेष्ठ और (**व्योमनि**) आकाश के सदृश व्यापक परमेश्वर में (**जायमानः**) उत्पन्न होता हुआ (**व्रतानि**) सत्यभाषण आदि कर्म्मों की (**अरक्षत**) रक्षा करता तथा (**अन्तरिक्षम्**) जल की (**वि**) विशेष करके (**अमिमीत**) रक्षा करता और (**सुक्रतुः**) अच्छे कर्म्मोंवाला (**वैश्वानरः**) सम्पूर्ण मनुष्यों में प्रकाशमान होता हुआ (**महिना**) महत्त्व से (**नाकम्**) दुःखरहित का (**अस्पृशत्**) स्पर्श करता है (**सः**) वह जानने योग्य है॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिस परमेश्वर ने अपने में सूर्य्य आदि लोकों के निर्म्माण से सब का उपकार किया, उसके सत्य कर्म्मों का अनुष्ठान करके उपासना करो अर्थात् उसी का भजन करो॥ २॥

पुनः सूर्य्यः कीदृशोऽस्तीत्याह॥

फिर सूर्य्य कैसा है, इस विषय को कहते हैं॥

व्यस्तभ्नाद्रोदसी मित्रो अद्भुतोऽन्तर्वावदकृणोज्ज्योतिषा तमः।
वि चर्मणीव धिषणे अवर्तयद्वैश्वानरो विश्वमधत्त वृष्ण्यम्॥ ३॥

वि। अस्तभ्नात्। रोदसी इति। मित्रः। अद्भुतः। अन्तःऽवावत्। अकृणोत्। ज्योतिषा। तमः। वि। चर्मणी इवेति चर्मणीऽइव। धिषणे इति। अवर्तयत्। वैश्वानरः। विश्वम्। अधत्त। वृष्ण्यम्॥ ३॥

पदार्थः-(**वि**) (**अस्तभ्नात्**) स्तभ्नाति धरति (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**मित्रः**) सर्वस्य सुहृदिव (**अद्भुतः**) आश्चर्य्यगुणकर्म्मस्वभावः (**अन्तर्वावत्**) यो अन्तर्भृशं वाति गच्छति (**अकृणोत्**) करोति

(ज्योतिषा) प्रकाशेन **(तमः)** रात्रिम् **(वि)** **(चर्म्मणीव)** यथा चर्म्मणि लोमानि धृतानि **(धिषणे)** सर्वस्य धारिके **(अवर्त्तयत्)** वर्त्तयति **(वैश्वानरः)** विश्वेषु नरेषु विराजमानः **(विश्वम्)** सर्वं जगत् **(अधत्त)** धरति **(वृष्ण्यम्)** वृषसु भवं साधुं वा॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! योऽद्भुतो मित्रो वैश्वानरः सूर्यो रोदसी व्यस्तभ्नाज्ज्योतिषा तमोऽकृणोदन्तर्वावच्चर्म्मणीव धिषणे व्यवर्त्तयद् वृष्ण्यं विश्वमधत्त तं यूयं सम्प्रयुङ्ध्वम्॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यो जगदीश्वरनिर्मितोऽयं सूर्यश्चर्मलोमानीवाऽऽकर्षणेन लोकान् धरति नियमेन चालयति स्वयं चलति स एव जगदुपकाराय प्रभवति॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(अद्भुतः)** आश्चर्यजनक गुण, कर्म और स्वभाववाला **(मित्रः)** सब के मित्र के समान वर्त्तमान **(वैश्वानरः)** संपूर्ण मनुष्यों में विराजमान सूर्य्य **(रोदसी)** अन्तरिक्ष और पृथिवी को **(वि, अस्तभ्नात्)** धारण करता तथा **(ज्योतिषा)** प्रकाश से **(तमः)** रात्रि को **(अकृणोत्)** करता **(अन्तर्वावत्)** अन्तः अर्थात् ब्रह्माण्ड के भीतर अत्यन्त चलता **(चर्म्मणीव)** जैसे चर्म में रोम धारण किये गये, वैसे **(धिषणे)** सब के धारण करने वालियों को **(वि, अवर्त्तयत्)** विशेष करके वर्ताता **(वृष्ण्यम्)** वृषों में उत्पन्न वा श्रेष्ठ **(विश्वम्)** सम्पूर्ण जगत् को **(अधत्त)** धारण करता है, उसको तुम लोग प्रयोग करो॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमावाचकलुप्तोपमालङ्कार है।[१] हे मनुष्यो! जो जगदीश्वर से बनाया गया यह सूर्य्य चर्म्म रोगों को, वैसे आकर्षण से लोकों को धारण करता है तथा नियम से चलाता और चलता है, वही जगत् के उपकार के लिये समर्थ होता है॥३॥

पुनः स वायुः कीदृशः किं करोतीत्याह॥

फिर वह वायु कैसा है और क्या करता है, इस विषय को कहते हैं॥

अपामुपस्थे महिषा अंगृभ्णत विशो राजानमुप तस्थुर्ऋग्मियम्।
आ दूतो अग्निमभरद्विवस्वतो वैश्वानरं मातरिश्वा परावतः॥४॥

अपाम्। उपऽस्थे। महिषाः। अगृभ्णत। विशः। राजानम्। उप। तस्थुः। ऋग्मियम्। आ। दूतः। अग्निम्। अभरत्। विवस्वतः। वैश्वानरम्। मातरिश्वा। पराऽवतः॥४॥

पदार्थः-**(अपाम्)** प्राणानां जलानां वा **(उपस्थे)** समीपे **(महिषाः)** महान्तः **(अगृभ्णत)** गृह्णन्ति **(विशः)** **(राजानम्)** राजानमिव सूर्य्यम् **(उप)** **(तस्थुः)** तिष्ठन्ति **(ऋग्मियम्)** य ऋग्भिर्मीयते तम् **(आ)** समन्तात् **(दूतः)** यो दुनोति परितापयति सः **(अग्निम्)** पावकम् **(अभरत्)** भरति **(विवस्वतः)** सूर्य्यस्य

---

१. संस्कृत भावार्थ में केवल उपमालङ्कार दिया है।

(वैश्वानरम्) विश्वस्मिन् प्रकाशमानम् **(मातरिश्वा)** यो मातर्य्यन्तरिक्षे शेते सः वायुः **(परावतः)** दूरे स्थितस्य॥४॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यो दूतो मातरिश्वा परावतो विवस्वतो वैश्वानरमग्निमभरद् यमृग्मियं राजानं विश उपाऽऽतस्थुरिव सूर्य्यमुपतिष्ठति यमपामुपस्थे वर्त्तमानं महिषा अगृभ्णत तं वायुं यूयं विजानीत॥४॥

भावार्थः-यथा वार्युदूरस्थस्याऽपि सूर्य्यस्य तेजो बिभर्त्ति तथोत्तमो राजा दूरस्थो अपि प्रजां बिभृयात्॥४॥

पदार्थः–हे विद्वान् जनो! जो **(दूतः)** सन्तापित कराने वाला **(मातरिश्वा)** अन्तरिक्ष में शयन करने वाला वायु **(परावतः)** दूर स्थित **(विवस्वतः)** सूर्य्य के **(वैश्वानरम्)** सर्वत्र प्रकाशमान **(अग्निम्)** अग्नि को **(अभरत्)** धारण करता और जिस **(ऋग्मियम्)** ऋचाओं द्वारा प्रमाण किया जाता उस **(राजानम्)** जैसे राजा का, वैसे सूर्य को **(विशः)** प्रजायें **(उप)** समीप में **(आ)** चारों ओर से **(तस्थुः)** प्राप्त होती हैं, वैसे सूर्य्य उपस्थित होता है और जिस **(अपाम्)** प्राणों वा जलों के **(उपस्थे)** समीप में वर्त्तमान का **(महिषाः)** बड़े जन **(अगृभ्णत)** ग्रहण करते हैं, उस वायु को आप लोग जानिये॥४॥

भावार्थः-जैसे वायु दूर वर्त्तमान भी सूर्य्य के तेज को धारण करता है, वैसे उत्तम राजा दूर स्थित भी प्रजाओं का पोषण करे॥४॥

पुनर्नृपः किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

युगेयुगे विदथ्यं गृणद्भ्योऽग्ने रयिं यशसं धेहि नव्यसीम्।

पव्येव राजन्नघशंसमजर नीचा नि वृश्च वनिनं न तेजसा॥५॥

युगेऽयुगे। विदथ्यम्। गृणत्ऽभ्यः। अग्ने। रयिम्। यशसम्। धेहि। नव्यसीम्। पव्याऽइव। राजन्। अघऽशंसम्। अजर। नीचा। नि। वृश्च। वनिनम्। न। तेजसा॥५॥

पदार्थः-**(युगेयुगे)** वर्षे वर्षे वर्षसमुदाये वर्षसमुदाये वा **(विदथ्यम्)** विदथेषु स-ग्रामविज्ञानादिषु भवम् **(गृणद्भ्यः)** स्तुवद्भ्यः **(अग्ने)** **(रयिम्)** धनम् **(यशसम्)** कीर्तिमन्नं वा **(धेहि)** **(नव्यसीम्)** अतिशयेन नूतनां विद्यां क्रियां वा **(पव्येव)** वज्रेणेव **(राजन्)** **(अघशंसम्)** स्तेनम् **(अजर)** जरादोषरहित **(नीचा)** नीचम् **(नि)** नितराम् **(वृश्च)** छिन्धि **(वनिनम्)** वनानि किरणा विद्यन्ते यस्मिंस्तत् **(न)** इव **(तेजसा)**॥५॥

अन्वयः-हे अजर राजन्नग्ने! त्वं तेजसा वनिनं न शूरः पव्येव नीचाऽघशंसं नि वृश्च गृणद्भ्यो युगेयुगे विदथ्यं रयिं यशसं नव्यसीं च धेहि॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा सूर्य्यो किरणसंयुक्तं मेघं छिनत्ति यथा वज्रो विदारणीयं विदृणाति तथा राजा स्तेनादीन् दुष्टान् छित्त्वा भित्त्वा धार्मिकेभ्यो धनाद्यैश्वर्य्यं दधातु॥५॥

पदार्थः-हे **(अजर)** वृद्धावस्थारूप दोष से रहित **(राजन्)** प्रकाशमान **(अग्ने)** अग्नि के सदृश वर्त्तमान! आप **(तेजसा)** तेज से **(वनिनम्)** किरण विद्यमान जिसमें उसको **(न)** जैसे वैसे वा शूरवीर जन **(पव्येव)** वज्र से जैसे **(नीचा)** नीच को वैसे **(अघशंसम्)** चोर को **(नि)** अत्यन्त **(वृश्च)** काटो और **(गृणद्भ्यः)** स्तुति करने वालों के लिये **(युगेयुगे)** वर्ष-वर्ष वा वर्षसमुदाय वर्षसमुदाय में **(विदथ्यम्)** संग्राम और विज्ञानादिकों में **(रयिम्)** धन **(यशसम्)** कीर्ति वा अन्न को और **(नव्यसीम्)** अतिशय नवीन विद्या वा क्रिया को **(धेहि)** धारण करो॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे सूर्य्य किरणों से संयुक्त मेघ का नाश करता है और जैसे वज्र विदारण करने योग्य पदार्थ को विदारण करता, वैसे राजा चोर आदि दुष्ट जनों का छेदन करके धार्मिक जनों के लिये धन आदि ऐश्वर्य्य को धारण करे॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

अ॒स्माक॑मग्ने म॒घव॑त्सु धारया॒नामि॑ क्ष॒त्रम॒जरं॑ सु॒वीर्य॑म्।
व॒यं ज॑येम श॒तिनं॑ सह॒स्रिणं॒ वैश्वा॑नर॒ वाज॑मग्ने॒ तवो॒तिभिः॑॥६॥

अ॒स्माक॑म्। अ॒ग्ने॒। म॒घव॑त्ऽसु। धा॒र॒य॒। अना॑मि। क्ष॒त्रम्। अ॒जर॑म्। सु॒ऽवीर्य॑म्। व॒यम्। ज॒ये॒म॒। श॒तिन॑म्। स॒ह॒स्रिण॑म्। वैश्वा॑नर। वाज॑म्। अ॒ग्ने॒। तव॑। ऊ॒तिऽभिः॑॥६॥

पदार्थः-**(अस्माकम्)** **(अग्ने)** अग्निरिव विद्वन् राजन् **(मघवत्सु)** बहुधनयुक्तेषु प्रजाजनेषु **(धारय)** **(अनामि)** नम्येत **(क्षत्रम्)** राष्ट्रं धनं वा **(अजरम्)** नाशरहितम् **(सुवीर्य्यम्)** उत्तमं बलम् **(वयम्)** **(जयेम)** **(शतिनम्)** शतधा योद्धृसेनासहितम् **(सहस्रिणम्)** सहस्रैर्योद्धृभिः संयुक्तम् **(वैश्वानर)** विश्वस्य नायक **(वाजम्)** स- ामम् **(अग्ने)** तेजस्विन् **(तव)** **(ऊतिभिः)** रक्षाभिः सह॥६॥

अन्वयः-हे वैश्वानराऽग्ने विद्वन् राजन्! वयं तवोतिभिः सह शतिनं सहस्रिणं वाजं जयेम। हे अग्ने! यथाऽस्माकं मघवत्सु सुवीर्य्यमजरं क्षत्रमनामि तथा धारय॥६॥

भावार्थः-यदि राजा सेनाध्यक्षा धार्म्मिका विद्वांसो न्यायकारिणो जितेन्द्रियाः स्युस्तर्हि तेषां सर्वत्र विजयो भवति॥६॥

पदार्थः-हे **(वैश्वानर)** संसार के अग्रणी **(अग्ने)** अग्नि के सदृश विद्वन् राजन्! **(वयम्)** हम लोग **(तव)** आपकी **(ऊतिभिः)** रक्षा आदि के साथ **(शतिनम्)** सैकड़ों प्रकार से योद्धाओं से और **(सहस्रिणम्)** सहस्रों योद्धाओं से संयुक्त **(वाजम्)** संग्राम को **(जयेम)** जीतें। तथा हे **(अग्ने)** तेजस्विन्! जैसे **(अस्माकम्)** हम लोगों के **(मघवत्सु)** बहुत धनों से युक्त प्रजाजनों में **(सुवीर्य्यम्)** उत्तम बल **(अजरम्)** नाशरहित **(क्षत्रम्)** राज्य वा धन **(अनामि)** नम्र होवे वैसा **(धारय)** धारण करो॥६॥

भावार्थः-जो राजा और सेना के अध्यक्ष धार्मिक, विद्वान्, न्यायकारी और जितेन्द्रिय हों तो उनका सर्वत्र विजय होता है॥६॥

पुना राजादिजनैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर राजा आदि जनों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

अदब्धेभिस्तव गोपाभिरिष्टेऽस्माकं पाहि त्रिषधस्थ सूरीन्।
रक्षा च नो ददुषां शर्धो अग्ने वैश्वानर प्र च तारीः स्तवानः॥७॥१०॥

अदब्धेभिः। तव। गोपाभिः। इष्टे। अस्माकम्। पाहि। त्रिऽसधस्थ। सूरीन्। रक्ष। च। नः। ददुषाम्। शर्धः। अग्ने। वैश्वानर। प्र। च। तारीः। स्तवानः॥७॥

पदार्थः-**(अदब्धेभिः)** अहिंसकैः **(तव)** **(गोपाभिः)** रक्षाभिः **(इष्टे)** सङ्गन्तव्ये **(अस्माकम्)** **(पाहि)** **(त्रिषधस्थ)** त्रिषु समानस्थानेषु वर्त्तमान **(सूरीन्)** विदुषः **(रक्षा)** अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(च)** **(नः)** अस्मान् **(ददुषाम्)** दातॄणाम् **(शर्धः)** बलम् **(अग्ने)** **(वैश्वानर)** विद्याविनयप्रकाशमान **(प्र)** **(च)** **(तारीः)** तारय **(स्तवानः)** प्रशंसन्॥७॥

अन्वयः-हे त्रिषधस्थेष्टे वैश्वानराग्ने! स्तवानस्त्वमदब्धेभिर्गोपाभिर्नोऽस्मान् सूरीन् पाहि। अस्माकं सम्बन्धिनश्च रक्षा यतस्तव ददुषामस्माकं च शर्धो वर्धेत। अस्माभिः सह त्वं शत्रून् प्र तारीरुल्लङ्घय॥७॥

भावार्थः-हे राजजन! यथा सूर्य्य उपर्यधोमध्यस्थांल्लोकान् प्रकाशयति तथाविधं प्रजाजनांस्त्वं सर्वतो रक्ष। यथाऽत्र राज्ये विद्वांसो वर्धेरंस्तथा विधानं विधेहि॥७॥

अत्र वैश्वानरविद्वत्सूर्य्यराजादिगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्यष्टमं सूक्तं दशमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(त्रिषधस्थ)** तीन तुल्य स्थानों में वर्त्तमान **(इष्टे)** मेल करने योग्य **(वैश्वानर)** विद्या और विनय से प्रकाशमान **(अग्ने)** अग्नि के समान वर्त्तमान! **(स्तवानः)** प्रशंसा करते हुए आप **(अदब्धेभिः)** अहिंसक जनों से **(गोपाभिः)** रक्षाओं के द्वारा **(नः)** हम लोगों **[के]** **(सूरीन्)** विद्वानों का **(पाहि)** पालन करिये और **(अस्माकम्)** हम लोगों के सम्बन्धियों की **(च)** भी **(रक्षा)** रक्षा करिये तथा **(तव)** आपका और **(ददुषाम्)** देने वालों का **(च)** और हमारा **(शर्धः)** बल बढ़े और हम लोगों के साथ आप शत्रुओं का **(प्र, तारीः)** उल्लंघन करो॥७॥

भावार्थः-हे राजजन! जैसे सूर्य्य ऊपर, नीचे और मध्यस्थ लोकों को प्रकाशित करता है, वैसे ही प्रजाजनों की आप सब प्रकार से रक्षा कीजिये और जैसे इस राज्य में विद्वान् बढ़ें, वैसे कार्य करिये॥७॥

इस सूक्त में विद्या और विनय से प्रकाशमान, विद्वान्, सूर्य्य और राजा आदि के गुणों का वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह आठवाँ सूक्त और दशवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ सप्तर्चस्य नवमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। वैश्वानरो देवता। १ विराट् त्रिष्टुप्। ५ निचृत्त्रिष्टुप्। ६ त्रिष्टुप्छन्दः। धैवतः स्वरः। २, ३ भुरिक् पङ्क्तिः। ४ पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ७ भुरिगार्चीजगतीछन्दः। निषादः स्वरः॥

अथ राजप्रजे परस्परं कथं वर्त्तेयातामित्याह॥

अब सात ऋचावाले नवम सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में राजा प्रजा परस्पर कैसे वर्त्ताव करें, इस विषय को कहते हैं॥

अह॑श्च कृ॒ष्णमह॒रर्जु॑नं च॒ वि व॑र्तेते॒ रज॑सी वे॒द्याभि॑ः।
वै॒श्वा॒न॒रो जाय॑मानो॒ न राजावा॑तिरज्ज्योति॑षा॒ग्निस्तमां॑सि॥ १॥

अ॒हरिति॑। च॒। कृ॒ष्णम्। अहः॑। अर्जु॑नम्। च॒। वि। व॒र्ते॒ते॒ इति॑। रज॑सी॒ इति॑। वे॒द्याभि॑ः। वै॒श्वा॒न॒रः। जाय॑मानः। न। राजा॑। अव॑। अ॒ति॒र॒त्। ज्योति॑षा। अ॒ग्निः। तमां॑सि॥ १॥

पदार्थः-(**अहः**) दिनम् (**च**) (**कृष्णम्**) रात्रिः (**अहः**) व्याप्तिशीलम् (**अर्जुनम्**) ऋजुगत्यादिगुणम् (**च**) (**वि**) विरोधे (**वर्त्तेते**) (**रजसी**) रात्र्यहनी (**वेद्याभिः**) वेदितव्याभिः (**वैश्वानरः**) विश्वस्मिन् नरे नेतव्ये प्रकाशमानः (**जायमानः**) उत्पद्यमानः (**न**) इव (**राजा**) (**अव**) (**अतिरत्**) तरति (**ज्योतिषा**) प्रकाशेन (**अग्निः**) (**तमांसि**) रात्रीः॥ १॥

अन्वयः-हे मनुष्या! अहः कृष्णं चाऽहरर्जुनं च रजसी वेद्याभिस्सह वि वर्त्तेते राजा न जायमानो वैश्वानरोऽग्निर्ज्योतिषा तमांस्यवातिरत्॥ १॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा रात्रिदिने संयुक्ते वर्त्तेते तथैव राजप्रजे अनुकूले भवेतां यथा सूर्य्यः प्रकाशेनाऽन्धकारं निवर्त्तयति तथैव राजा विद्याविनयप्रकाशेनाऽन्धकारं निवर्त्तयेत्॥ १॥

पदार्थः-हे मनुष्यो (**अहः**) दिन (**कृष्णम्**) रात्रि (**च**) और (**अहः**) व्याप्तिशील (**अर्जुनम्**) सरलगमन आदि गुणों को (**च**) भी (**रजसी**) रात्रिदिन (**वेद्याभिः**) जानने योग्यों के साथ (**वि, वर्त्तेते**) विविध प्रकार वर्त्तते हैं और (**राजा**) राजा के (**न**) समान (**जायमानः**) उत्पन्न हुआ (**वैश्वानरः**) सम्पूर्ण करने योग्य कामों में प्रकाशमान (**अग्निः**) अग्नि (**ज्योतिषा**) प्रकाश से (**तमांसि**) रात्रियों का (**अव, अतिरत्**) उल्लङ्घन करता है॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे रात्रिदिन संयुक्त हैं, वैसे ही राजा और प्रजा अनुकूल हों और जैसे सूर्य्य प्रकाश से अन्धकार को निवृत्त करता है, वैसे ही राजा विद्या और विनय के प्रकाश से अविद्यारूप अन्धकार को निवृत्त करे॥ १॥

अथाऽपत्यं कस्य भवतीत्याह॥

अब अपत्य किसका होता है, इस विषय को कहते हैं॥

नाहं तन्तुं न वि जानाम्योतुं न यं वयन्ति समरेऽतमानाः।
कस्य स्वित्पुत्र इह वक्त्वानि परो वदात्यवरेण पित्रा॥२॥

न। अहम्। तन्तुम्। न। वि। जानामि। ओतुम्। न। यम्। वयन्ति। सम्ऽअरे। अतमानाः। कस्य। स्वित्। पुत्रः। इह। वक्त्वानि। परः। वदाति। अवरेण। पित्रा॥२॥

पदार्थः-(**न**) (**अहम्**) (**तन्तुम्**) विस्तारम् (**न**) इव (**वि**) (**जानामि**) (**ओतुम्**) रचयितुम् (**न**) (**यम्**) (**वयन्ति**) व्याप्नुवन्ति (**समरे**) स-ामे (**अतमानाः**) अतन्तः। अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम् (**कस्य**) (**स्वित्**) (**पुत्रः**) पवित्रः सुखप्रदो वा (**इह**) (**वक्त्वानि**) वक्तुं योग्यानि (**परः**) (**वदाति**) वदेत् (**अवरेण**) द्वितीयेन (**पित्रा**) पालकेनाऽऽचार्य्येण वा॥२॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यं समरेऽतमाना न वयन्ति। अयमिह कस्य स्वित्पुत्रः परोऽवरेण पित्रा सह वक्त्वानि वदाति यमतमानाः समरे न वयन्ति तं तन्तुमोतुं चाहन्न वि जानामि॥२॥

भावार्थः-विदुषामयं सिद्धान्तोऽस्ति योऽयं द्वाभ्यां जायते यस्य द्वे मातरौ द्वौ च पितरौ वर्तेते स कस्य पुत्र इति वयं न विजानीमः। अत्रायं सिद्धान्तो यथोत्पादकयोः पुत्रोऽस्ति तथाऽऽचार्यविद्ययोरपि द्विजो वर्त्तत इति सर्वे विजानन्तु॥२॥

पदार्थः-हे विद्वान् जनो! (**यम्**) जिसको (**समरे**) संग्राम में (**अतमानाः**) घूमते हुए जन (**न**) जैसे वैसे (**वयन्ति**) व्याप्त होते हैं, यह (**इह**) यहाँ (**कस्य**) किसका (**स्वित्**) भी (**पुत्रः**) पवित्र और सुख देने वाला है (**परः**) अन्य (**अवरेण**) द्वितीय (**पित्रा**) पालक वा आचार्य के साथ (**वक्त्वानि**) कहने के योग्यों को (**वदाति**) कहे और जिसको घूमते हुए जन स-ाम में (**न**) नहीं व्याप्त होते हैं, उस (**तन्तुम्**) विस्तार को (**ओतुम्**) रचने को (**अहम्**) मैं (**न**) नहीं (**वि**) विशेष करके (**जानामि**) जानता हूँ॥२॥

भावार्थः-विद्वानों का यह सिद्धान्त है कि जो दो से उत्पन्न होता है, जिसके दो माता और दो पिता हैं, वह किसका पुत्र है, यह हम लोग नहीं जानते हैं, ऐसा प्रश्न है। इस में सिद्धान्त यह है कि जैसे उत्पन्न करने वाले माता पिता का पुत्र है, वैसे ही आचार्य और विद्या का भी वह द्विज पुत्र है, ऐसा सब लोग जानो॥२॥

पुनरपत्यविषमाह॥

फिर अपत्य विषय को कहते हैं॥

स इत्तन्तुं स वि जानात्योतुं स वक्त्वान्यृतुथा वदाति।
य ईं चिकेतदमृतस्य गोपा अवश्चरन्परो अन्येन पश्यन्॥३॥

सः। इत्। तन्तुम्। सः। वि। जानाति। ओतुम्। सः। वक्त्वानि। ऋतुऽथा। वदाति। यः। ईम्। चिकेतत्। अमृतस्य। गोपाः। अवः। चरन्। परः। अन्येन। पश्यन्॥३॥

पदार्थः-**(सः)** **(इत्)** एव **(तन्तुम्)** कारणम् **(सः)** **(वि)** **(जानाति)** **(ओतुम्)** रक्षकम् **(सः)** **(वक्त्वानि)** वक्तव्यानि **(ऋतुथा)** ऋतुष्विव **(वदाति)** वदेत् **(यः)** **(ईम्)** उदकमिव शुक्रम् **(चिकेतत्)** विजानाति **(अमृतस्य)** नित्यस्य पदार्थस्य **(गोपाः)** रक्षकः **(अवः)** अधस्तात् **(चरन्)** **(परः)** उपरिष्ठो द्वितीयः **(अन्येन)** **(पश्यन्)** समीक्षमाणः॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! योऽमृतस्य गोपा अन्येन पश्यन्नवः परश्चरन्नीं चिकेतत्स इत्तन्तुं स ओतुं वि जानाति स ऋतुथा वक्त्वानि वदाति॥३॥

भावार्थः-ये ब्रह्मचर्य्येणाप्तेभ्यो विद्याशिक्षे प्राप्नुवन्ति त एवास्य जगतः पूर्णं कारणं ज्ञातुं ज्ञापयितुञ्च शक्नुवन्ति॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यः)** जो **(अमृतस्य)** नित्य पदार्थ का **(गोपाः)** रक्षक **(अन्येन)** अन्य से **(पश्यन्)** देखता हुआ **(अवः)** नीचे **(परः)** ऊपर स्थित दूसरा **(चरन्)** चलाता हुआ **(ईम्)** जल के सदृश शुक्र को **(चिकेतत्)** जानता है **(सः, इत्)** वही **(तन्तुम्)** कारण को **(सः)** वह **(ओतुम्)** रक्षक को **(वि, जानाति)** विशेष करके जानता है **(सः)** वह **(ऋतुथा)** जैसे काल-काल में, वैसे **(वक्त्वानि)** कथन करने योग्यों को **(वदाति)** कहे॥३॥

भावार्थः-जो ब्रह्मचर्य्य के द्वारा यथार्थवक्ताओं से विद्या और शिक्षा को प्राप्त होते हैं, वे ही इस जगत् के पूर्ण कारण के पूर्ण कारण को जानने को समर्थ होते हैं॥३॥

अथास्मिन् देहे द्वौ जीवात्मपरमात्मानौ वर्त्तेते इत्याह॥

अब इस देह में दो जीवात्मा और परमात्मा वर्त्तमान हैं,

इस विषय को कहते हैं॥

अयं होता प्रथमः पश्यतेममिदं ज्योतिरमृतं मर्त्येषु।

अयं स जज्ञे ध्रुव आ निषत्तोऽमर्त्यस्तन्वा३ वर्धमानः॥४॥

अयम्। होता। प्रथमः। पश्यत। इमम्। इदम्। ज्योतिः। अमृतम्। मर्त्येषु। अयम्। सः। जज्ञे। ध्रुवः। आ। निऽसत्तः। अमर्त्यः। तन्वा। वर्धमानः॥४॥

पदार्थः-**(अयम्)** **(होता)** दाता ग्रहीता वा **(प्रथमः)** आदिमः **(पश्यत)** **(इमम्)** **(इदम्)** प्रत्यक्षम् **(ज्योतिः)** सूर्य्य इव स्वप्रकाशं चेतनं परमात्मानम् **(अमृतम्)** नाशरहितम् **(मर्त्येषु)** मरणधर्मेषु शरीरेषु **(अयम्)** **(सः)** **(जज्ञे)** जायते **(ध्रुवः)** निश्चलो दृढः **(आ)** **(निषत्तः)** निषण्णः **(अमर्त्यः)** मरणधर्मरहितः **(तन्वा)** शरीरेण **(वर्धमानः)** यो वर्धते सः॥४॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यो ध्रुवो निषत्तः प्रथमो होताऽयं मर्त्येष्विदममृतं ज्योतिः परमात्मास्ति तमिमं पश्यत योऽयममर्त्यस्तन्वा वर्धमाना आ जज्ञे स जीवोऽस्तीति पश्यत॥४॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! अस्मिञ्छरीरे द्वौ चेतनौ नित्यौ जीवात्मपरमात्मानौ वर्त्तेते तयोरेकोऽल्पोऽल्पज्ञोऽल्पदेशस्थो जीव: शरीरं धृत्वा जायते वर्धते परिणमते चाऽपक्षीयते पापपुण्यफलं च भुङ्क्ते अपर: परमेश्वरो ध्रुव: सर्वज्ञ: कर्म्मफलसम्बन्धरहितोऽस्तीति निश्चिनुत॥४॥

पदार्थ:–हे विद्वान् जनो! जो **(ध्रुव:)** निश्चल दृढ़ **(निषत्त:)** स्थित **(प्रथम:)** पहिला **(होता)** देने वा ग्रहण करने वाला **(अयम्)** यह और **(मर्त्येषु)** मरणधर्म्मयुक्त शरीरों में **(इदम्)** इस प्रत्यक्ष **(अमृतम्)** नाश से रहित **(ज्योति:)** सूर्य्य के सदृश अपने से प्रकाशित चेतन परमात्मा है उस **(इमम्)** इस को **(पश्यत)** देखिये और जो **(अयम्)** यह **(अमर्त्य:)** मरणधर्म्म से रहित **(तन्वा)** शरीर से **(वर्धमान:)** बढ़ता हुआ **(आ)** चारों ओर से **(जज्ञे)** प्रकट होता है **(स:)** वह जीव है, ऐसा देखो॥४॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! इस शरीर में दो चेतन नित्य हुए जीवात्मा और परमात्मा वर्त्तमान हैं। उन दोनों में एक अल्प, और अल्पदेशस्थ जीव है, वह शरीर को धारण करके प्रकट होता, वृद्धि को प्राप्त होता और परिणाम को प्राप्त होता तथा हीन दशा को प्राप्त होता, पाप और पुण्य के फल का भोग करता है। द्वितीय परमेश्वर ध्रुव, निश्चल, सर्वज्ञ, कर्म्मफल के सम्बन्ध से रहित है, ऐसा तुम लोग निश्चय करो॥४॥

अस्मिञ्छरीरे किं किं विज्ञेयमित्याह॥

इस शरीर में क्या-क्या जानने योग्य है, इस विषय को कहते हैं॥

ध्रुवं ज्योतिर्निहितं दृशये कं मनो जविष्ठं पतयत्स्वन्त:।

विश्वे देवा: समनस: सकेता एकं क्रतुमभि वि यन्ति साधु॥५॥

ध्रुवम्। ज्योति:। निऽहितम्। दृशये। कम्। मन:। जविष्ठम्। पतयत्ऽसु। अन्त:। विश्वे। देवा:। सऽमनस:। सऽकेता:। एकम्। क्रतुम्। अभि। वि। यन्ति। साधु॥५॥

पदार्थ:-**(ध्रुवम्)** निश्चलम् **(ज्योति:)** स्वप्रकाशं सर्वप्रकाशकं वा **(निहितम्)** स्थितम् **(दृशये)** दर्शनाय **(कम्)** सुखस्वरूपम् **(मन:)** अन्त:करणवृत्ति: **(जविष्ठम्)** वेगवत्तमम् **(पतयत्सु)** पतिरिवाचरत्सु **(अन्त:)** आभ्यन्तरे **(विश्वे)** सर्वे **(देवा:)** स्वस्वविषयप्रकाशकानि श्रोत्रादीनीन्द्रियाणि **(समनस:)** समानं सहकारि साधनं मनो येषान्ते **(सकेता:)** समानं केत: प्रज्ञा येषान्ते **(एकम्)** असहायम् **(क्रतुम्)** जीवस्य प्रज्ञानम् **(अभि)** आभिमुख्ये **(वि)** **(यन्ति)** प्राप्नुवन्ति **(साधु)**॥५॥

अन्वय:-हे मनुष्या! यद्दृशये ध्रुवं निहितं कं ज्योतिर्ब्रह्मास्ति तदाधारे यज्जविष्ठं पतयत्स्वन्तर्वर्त्तमानं मनोऽस्ति तदाश्रयेण समनस: सकेता विश्वे देवा एकं क्रतुं साध्वभि वि यन्तीति यूयं विजानीत॥५॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! अस्मिञ्छरीरे सच्चिदानन्दलक्षणं स्वप्रकाशं ब्रह्म द्वितीयो जीवस्तृतीयं मनश्चतुर्थानीन्द्रियाणि पञ्चमा: प्राणा: षष्ठं शरीरञ्च वर्त्तत एवं सति सर्वे व्यवहारा: सिद्धा जायन्ते येषां मध्यात्सर्वाधार ईश्वरो देहान्त:करणप्राणेन्द्रियधर्त्ता जीवादीनामधिष्ठानं शरीरमिति विजानीत॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(दृशये)** दर्शन के लिये **(ध्रुवम्)** निश्चल **(निहितम्)** स्थित **(कम्)** सुखस्वरूप **(ज्योतिः)** अपने से प्रकाशित और सब का प्रकाशक ब्रह्म है, उसके आधार में जो **(जविष्ठम्)** अतिवेगयुक्त **(पतयत्सु)** पति सदृश के आचरण करते हुओं में **(अन्तः)** मध्य में वर्त्तमान **(मनः)** अन्तःकरण का व्यापार है, उसके आश्रय से **(समनसः)** सहकारि साधन मन जिनका और **(सकेताः)** तुल्य बुद्धि जिनकी वे **(विश्वे)** संपूर्ण **(देवाः)** अपने अपने विषयों को प्रकाशित करने वाली श्रोत्र आदि इन्द्रियाँ **(एकम्)** सहायरहित **(क्रतुम्)** जीव के प्रज्ञान को **(साधु)** उत्तम प्रकार **(अभि)** सन्मुख **(वि)** विशेष करके **(यन्ति)** प्राप्त होते हैं, यह आप लोग जानो॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! इस शरीर में सच्चिदानन्दस्वरूप अपने से प्रकाशित ब्रह्म, द्वितीय जीव, तृतीय मन, चौथी इन्द्रियाँ, पांचवें प्राण, छठा शरीर वर्त्तमान है, ऐसा होने पर सम्पूर्ण व्यवहार सिद्ध होते हैं। जिनके मध्य से सब का आधार ईश्वर, देह, अन्तःकरण प्राण और इन्द्रियों का धारण करने वाला और जीवादिकों का अधिष्ठान शरीर है, यह जानो॥५॥

अथ मनुष्यशरीरे किं किं विज्ञातव्यमित्याह॥

अब मनुष्य के शरीर में क्या-क्या जानने योग्य है, इस विषय को कहते हैं॥

वि मे कर्णा पतयतो वि चक्षुर्वी३दं ज्योतिर्हृदय आहितं यत्।

वि मे मनश्चरति दूरआधीः किं स्विद्वक्ष्यामि किमु नू मनिष्ये॥६॥

वि। मे। कर्णा। पतयतः। वि। चक्षुः। वि। इदम्। ज्योतिः। हृदये। आऽहितम्। यत्। वि। मे। मनः। चरति। दूरेऽआधीः। किम्। स्वित्। वक्ष्यामि। किम्। ऊँ इति। नु। मनिष्ये॥६॥

पदार्थः-**(वि) (मे)** मम **(कर्णा)** कर्णौ **(पतयतः)** पतिरिवाऽऽचरतः **(वि) (चक्षुः)** चष्टे येन तच्चक्षुः **(वि) (इदम्) (ज्योतिः)** प्रकाशकम् **(हृदये) (आहितम्)** स्थितम् **(यत्) (वि) (मे)** मम **(मनः)** अन्तःकरणम् **(चरति)** गच्छति **(दूरआधीः)** दूरस्थानां पदार्थानां समन्ताच्चिन्तकम् **(किम्) (स्वित्)** अपि **(वक्ष्यामि) (किम्) (उ) (नू)** सद्यः। अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। **(मनिष्ये)** विचारं करिष्ये॥६॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यद्यौ मे कर्णा वि पतयतो यन्मे चक्षुर्वि चरति यन्मे हृदय इदमाहितं ज्योतिर्वि चरति यन्मे दूरआधीर्मनो वि चरति येन तदहं किं स्विद्वक्ष्यामि किमु नू मनिष्य इति विचारयामि तत्सर्वं यूयं विज्ञापयत॥६॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! योऽहं यानि च मम साधनानि तत्सर्वं मां बोधयत॥६॥

पदार्थः-हे विद्वान् जनो! **(यत्)** जो **(मे)** मेरे **(कर्णा)** श्रोत्र **(वि)** विशेष करके **(पतयतः)** स्वामी के सदृश आचरण करते हुए और जो मेरा **(चक्षुः)** देखने की चेष्टा करता है जिससे वह चक्षु **(वि)** विशेष करके **(चरति)** चलता है और जो **(मे)** मेरे **(हृदये)** हृदय में **(इदम्)** यह **(आहितम्)** स्थित **(ज्योतिः)** प्रकाशक **(वि)** विशेष करके चलाता है और जो मेरा **(दूर आधीः)** दूरस्थ पदार्थों का सब प्रकार से

चिन्तक **(मनः)** अन्तःकरण **(वि)** विशेष करके चलता है, जिससे उसको मैं **(किम्)** क्या **(स्वित्)** भी **(वक्ष्यामि)** कहूँगा और **(किम्)** क्या (उ) और **(नू)** शीघ्र **(मनिष्ये)** विचार करूँगा यह विचारता हूँ, उस सब को आप लोग जनाइये॥६॥

भावार्थः-हे विद्वान् जनो! मैं और जो मेरे साधन हैं, उस सब व्यवहार को मेरे लिये जनाइये॥६॥

मनुष्यैः कस्माद्भीत्वा पापाचरणं नाचरणीयमित्याह॥

मनुष्यों को किससे डर कर पापाचरण का आचरण न करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

विश्वे॑ दे॒वा अ॑नमस्यन् भिया॒नास्त्वाम॑ग्ने॒ तम॑सि तस्थि॒वांस॑म्।
वै॒श्वा॒न॒रो॑ऽवतू॒तये॒ नोऽम॑र्त्योऽवतू॒तये॑ नः॥७॥११॥

विश्वे॑। दे॒वाः। अ॒न॒म॒स्य॒न्। भि॒या॒नाः। त्वाम्। अ॒ग्ने॒। तम॑सि। त॒स्थि॒ऽवांस॑म्। वै॒श्वा॒न॒रः। अ॒व॒तु॒। ऊ॒तये॑। न॒ः। अम॑र्त्यः। अ॒व॒तु॒। ऊ॒तये॑। नः॥७॥

पदार्थः-**(विश्वे)** सर्वे **(देवाः)** विद्वांसः **(अनमस्यन्)** प्रह्वीभूता भवन्ति **(भियानाः)** भयं प्राप्ताः **(त्वाम्)** परमात्मानिव विद्युद्युक्तं प्राणमिव परमात्मनम् **(अग्ने)** पावकेश्वर **(तमसि)** अन्धकारे **(तस्थिवांसम्)** प्रतिष्ठन्तम् **(वैश्वानरः)** विश्वस्य संसारस्य प्रकाशकः **(अवतु)** रक्षतु **(ऊतये)** रक्षणाद्याय **(नः)** अस्मान् **(अमर्त्यः)** मृत्युधर्मरहितः **(अवतु)** **(ऊतये)** **(नः)** अस्मान्॥७॥

अन्वयः-हे अग्ने! परमात्मँस्तमसि तस्थिवांसं त्वा पृथिव्यादय इव विश्वे देवा भियाना अनमस्यन्त्स वैश्वानरोऽमर्त्यो भवानूतये नोऽस्मानवतूतये नोऽस्मानवतु॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा प्राणविद्युतौ प्राप्य सर्वेषां पृथिव्यादीनां स्थितिर्वर्त्तते यथाग्नेः सर्वे प्राणिनो बिभ्यति तथैव सर्वव्यापिनं सर्वान्तर्यामिणं परमात्मानं मत्वा पापाचरणाद्विद्वांसो बिभ्यतीति सर्वेऽस्माद् बिभ्यत्विति॥७॥

अत्राऽहोरात्र्यपत्यजीवपरमात्मादीनां स्थितिवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति नवमं सूक्तमेकादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** प्रकाशक परमात्मन्! **(तमसि)** अन्धकार में **(तस्थिवांसम्)** स्थित **(त्वाम्)** परमात्मा के सदृश बिजुली से युक्त को वा प्राण के सदृश परमात्मा को जैसे पृथिवी आदि, वैसे **(विश्वे)** सम्पूर्ण **(देवाः)** विद्वान् जन **(भियानाः)** भय को प्राप्त हुए **(अनमस्यन्)** नम्र होते हैं वह **(वैश्वानरः)** सम्पूर्ण संसार के प्रकाशक **(अमर्त्यः)** मृत्यु धर्म से रहित आप **(ऊतये)** रक्षा आदि के लिये **(नः)** हम लोगों की **(अवतु)** रक्षा कीजिये और **(ऊतये)** रक्षा आदि के लिये **(नः)** हम लोगों की **(अवतु)** रक्षा कीजिये॥७॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जैसे प्राण और बिजुली को प्राप्त होकर सम्पूर्ण पृथिवी आदिकों की स्थिति है और जैसे अग्नि से सम्पूर्ण प्राणी डरते हैं, वैसे ही सर्वत्र व्यापी और सब के अन्तर्यामी परमात्मा को मान के पाप के आचरण से विद्वान् जन डरते हैं, इस निमित्त से सब जन इससे डरें॥७॥

इस सूक्त में दिनरात्रि, अपत्य, जीव, परमात्मादिकों की स्थिति का वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह नवम सूक्त और ग्यारहवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ सप्तर्चस्य दशमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। अग्निर्देवता। १ त्रिष्टुप्। २, ३, ६ निचृत्त्रिष्टुप्। ५ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ४ आर्षी पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ७ प्राजापत्या बृहती छन्दः। मध्यमः स्वरः॥

अथ मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

अब मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

पुरो वो मन्द्रं दिव्यं सुवृक्तिं प्रयति यज्ञे अग्निमध्वरे दधिध्वम्।
पुर उक्थेभिः स हि नो विभावा स्वध्वरा करति जातवेदाः॥१॥

पुरः। वः। मन्द्रम्। दिव्यम्। सुऽवृक्तिम्। प्रऽयति। यज्ञे। अग्निम्। अध्वरे। दधिध्वम्। पुरः। उक्थेभिः। सः। हि। नः। विभाऽवा। सुऽअध्वरा। करति। जातऽवेदाः॥ १॥

पदार्थः-(**पुरः**) पुरस्तात् (**वः**) युष्माकम् (**मन्द्रम्**) आनन्दप्रदं प्रशंसनीयं वा (**दिव्यम्**) शुद्धम् (**सुवृक्तिम्**) सुष्ठु व्रजन्ति येन तम् (**प्रयति**) प्रयत्नसाध्ये (**यज्ञे**) सङ्गतिमये (**अग्निम्**) विद्युदादिस्वरूपम् (**अध्वरे**) अहिंसनीये (**दधिध्वम्**) (**पुरः**) पुरस्तात् (**उक्थेभिः**) वक्तुमर्हैः (**सः**) (**हि**) यतः (**नः**) अस्मान् (**विभावा**) विशेषेण प्रकाशकः (**स्वध्वरा**) सुष्ठु अहिंसादिधर्मयुक्तान् (**करति**) कुर्य्यात् (**जातवेदाः**) यो जातान् सर्वान् वेत्ति सः॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यूयं वः प्रयत्यध्वरे यज्ञ उक्थेभिः पुरो मन्द्रं दिव्यं सुवृक्तिमग्निं दधिध्वं यो हि विभावा जातवेदा नोऽस्मान् पुरः स्वध्वरा करति स ह्यस्माभिः सत्कर्तव्योऽस्ति॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथर्त्विजो यज्ञेऽग्निं पुरस्तात् संस्थाप्य तत्राहुतिं दत्त्वा जगदुपकुर्वन्ति तथैवात्मनः पुरः परमात्मानं संस्थाप्य तत्र मनआदीनि हुत्वा साक्षात्कृत्य तदुपदेशेन जगदुपकारं कुर्वन्तु॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! आप लोग (**वः**) आप लोगों के (**प्रयति**) प्रयत्न से साध्य (**अध्वरे**) अहिंसनीय (**यज्ञे**) सङ्गतिस्वरूप यज्ञ में (**उक्थेभिः**) कहने के योग्यों से (**पुरः**) प्रथम (**मन्द्रम्**) आनन्द देनेवाले वा प्रशंसनीय (**दिव्यम्**) शुद्ध (**सुवृक्तिम्**) उत्तम प्रकार चलते हैं जिससे उस (**अग्निम्**) विद्युदादिस्वरूप अग्नि को (**दधिध्वम्**) धारण करिये और जो (**हि**) निश्चय करके (**विभावा**) विशेष करके प्रकाशक (**जातवेदाः**) प्रकट हुओं को जाननेवाला (**नः**) हम लोगों को (**पुरः**) प्रथम (**स्वध्वरा**) उत्तम प्रकार अहिंसा आदि धर्मों से युक्त (**करति**) करे (**सः**) वही हम लोगों से सत्कार करने योग्य है॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे यज्ञ करने वाले यज्ञ में अग्नि को प्रथम उत्तम प्रकार स्थापित करके उस अग्नि में आहुति देकर संसार का उपकार करते हैं, वैसे ही आत्मा के आगे परमात्मा को संस्थापित करके वहाँ मन आदि का हवन करके और प्रत्यक्ष करके उसके उपदेश से जगत् का उपकार करो॥१॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

तमु द्युमः पुर्वणीक होतरग्ने अग्निभिर्मनुष इधानः।

स्तोमं यमस्मै ममतेव शूषं घृतं न शुचि मतयः पवन्ते॥ २॥

तम्। ऊँ इति। द्युऽमः। पुरुऽअनीक। होतः। अग्ने। अग्निऽभिः। मनुषः। इधानः। स्तोमम्। यम्। अस्मै। ममताऽइव। शूषम्। घृतम्। न। शुचि। मतयः। पवन्ते॥ २॥

पदार्थः-(**तम्**) अग्निम् (**उ**) (**द्युमः**) प्रकाशवान् (**पुर्वणीक**) बहूनां संभाजक (**होतः**) धातः (**अग्ने**) अग्निरिव विद्वन् (**अग्निभिः**) पावकैः (**मनुषः**) मनुष्यान् (**इधानः**) दीपयन् (**स्तोमम्**) प्रशंसाम् (**यम्**) (**अस्मै**) (**ममतेव**) (**शूष्म**) बलम् (**घृतम्**) (**न**) इव (**शुचि**) (**मतयः**) मनुष्याः (**पवन्ते**)॥ २॥

अन्वयः-हे पुर्वणीक द्युमो होतरग्ने! मनुष इधानस्त्वं मतयश्च ममतेवऽग्निभिरस्मै शुचि घृतं शूषं न यं पवन्ते तमु स्तोमं शृणु॥ २॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। मनुष्या येन पदार्थान् संधयन्ति सोऽग्निः सर्वैः कार्य्यसाधको वेदितव्यः॥ २॥

पदार्थः-हे (**पुर्वणीक**) बहुतों को संविभाग करने और (**द्युमः**) प्रकाशवान् (**होतः**) धारण करने वाले (**अग्ने**) अग्नि के सदृश विद्वन्! (**मनुषः**) मनुष्यों को (**इधानः**) प्रकाशित करते हुए आप और (**मतयः**) मननशील अन्य मनुष्य (**ममतेव**) ममता के समान (**अग्निभिः**) अग्नियों से (**अस्मै**) इसके लिये (**शुचि**) पवित्र (**घृतम्**) घृत वा (**शूषम्**) बल के (**न**) समान (**यम्**) जिसको (**पवन्ते**) पवित्र करते हैं (**तम्, उ**) उसी अग्नि की (**स्तोमम्**) प्रशंसा को सुनिये॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। मनुष्य जिससे पदार्थों को सिद्ध करते हैं, वह कार्य्यसाधक अग्नि सब को जानने योग्य है॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

पीपाय सः श्रवसा मर्त्येषु यो अग्नये ददाश विप्र उक्थैः।

चित्राभिस्तमूतिभिश्चित्रशोचिर्व्रजस्य साता गोमतो दधाति॥ ३॥

पीपाय। सः। श्रवसा। मर्त्येषु। यः। अग्नये। ददाश। विप्रः। उक्थैः। चित्राभिः। तम्। ऊतिऽभिः। चित्रऽशोचिः। व्रजस्य। साता। गोऽमतः। दधाति॥ ३॥

पदार्थः-(**पीपाय**) वर्धयति (**सः**) (**श्रवसा**) अन्नाद्येन (**मर्त्येषु**) मनुष्यादिषु (**यः**) (**अग्नये**) (**ददाश**) ददाति (**विप्रः**) मेधावी (**उक्थैः**) प्रशंसितैः कर्म्मभिः (**चित्राभिः**) अद्भुताभिः (**तम्**) (**ऊतिभिः**)

रक्षादिभिः **(चित्रशोचिः)** चित्रं विविधं शोचिः प्रकाशो यस्य सः **(व्रजस्य)** व्रजन्ति घना यस्मिंस्तस्य मेघस्य **(साता)** स- ामेण **(गोमतः)** अतिशयितस्तोता **(दधाति)**॥३॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यो गोमतश्चित्रशोचिर्विप्र उक्थैश्चित्राभिरूतिभिश्च मर्त्येष्वग्नये श्रवसा पीपाय ददाश स व्रजस्य साता दधाति तं यूयं विजानीत॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यस्मिन्नग्नावद्भुता गुणकर्म्मस्वभावाः सन्ति तं यथावद्विदित्वा सम्प्रयुङ्ध्वम्॥३॥

पदार्थः-हे विद्वान् जनो! **(यः)** जो **(गोमतः)** अतिशय स्तुति करनेवाला और **(चित्रशोचिः)** अनेक प्रकार का प्रकाश जिसका ऐसा **(विप्रः)** बुद्धिमान् **(उक्थैः)** प्रशंसित कर्मों और **(चित्राभिः)** अद्भुत **(ऊतिभिः)** रक्षादिकों से **(मर्त्येषु)** मनुष्य आदिकों में **(अग्नये)** अग्नि के लिये **(श्रवसा)** अन्नादि से **(पीपाय)** बढ़ाता और **(ददाश)** देता है **(सः)** वह **(व्रजस्य)** चलते हैं सघन जल जिसमें उस मेघ के **(साता)** संग्राम से **(दधाति)** धारण करता है **(तम्)** उसको आप लोग जानिये॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिस अग्नि में अद्भुत गुण, कर्म्म, स्वभाव हैं, उसको अच्छे प्रकार जान कर संप्रयोग करो अर्थात् काम में लाओ॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

आ यः पप्रौ जायमान उर्वी दूरेदृशा भासा कृष्णाध्वा।

अध बहु चित्तम ऊर्म्यायास्तिरः शोचिषा ददृशे पावकः॥४॥

आ। यः। पप्रौ। जायमानः। उर्वी इति। दूरेऽदृशा। भासा। कृष्णऽअध्वा। अध। बहु। चित्। तमः। ऊर्म्यायाः। तिरः। शोचिषा। ददृशे। पावकः॥४॥

पदार्थः-**(आ)** समन्तात् **(यः)** **(पप्रौ)** व्याप्नोति **(जायमानः)** प्रकटः सन् **(ऊर्वी)** द्यावापृथिव्यौ **(दूरेदृशा)** यया दूरे पश्यन्ति तया **(भासा)** दीप्त्या **(कृष्णाध्वा)** कृष्णः कर्षितोऽध्वा मार्गो येन **(अध)** आनन्तर्ये **(बहु)** **(चित्)** अपि **(तमः)** अन्धकारः **(ऊर्म्यायाः)** रात्र्याः। **ऊर्म्येति रात्रिनाम।** (निघं०१.७) **(तिरः)** तिरोभावे **(शोचिषा)** प्रकाशेन **(ददृशे)** दृश्यते **(पावकः)** पवित्रकर्त्ता॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो जायमानो कृष्णाध्वा दूरेदृशा भासोर्वी आ पप्रावध ऊर्म्याया बहु चित्तमः शोचिषा तिरस्करोति पावक सन् ददृशे तं यूयं विजानीत॥४॥

भावार्थः-मनुष्यैरवश्यं विद्युदग्निर्वेदितव्यः॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यः)** जो **(जायमानः)** प्रकट हुआ **(कृष्णाध्वा)** कर्षित किया अर्थात् जिसे हल से जोतें, वैसे पहियों से सतीरा मार्ग जिसने वह **(दूरेदृशा)** जिससे दूर देखते हैं उस **(भासा)** प्रकाश से **(उर्वी)** अन्तरिक्ष और पृथिवी को **(आ)** चारों ओर से **(पप्रौ)** व्याप्त होता है और **(अध)** इसके अनन्तर **(ऊर्म्यायाः)** रात्रि का **(बहु)** बहुत **(चित्)** भी **(तमः)** अन्धकार **(शोचिषा)** प्रकाश से **(तिरः)** तिरस्कार करता है और **(पावकः)** पवित्रकर्त्ता हुआ **(ददृशे)** देखा जाता है, उसको आप लोग जानिये॥४॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि अवश्य बिजुलीरूप अग्नि को जानें॥४॥

पुनर्विद्वद्भिः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर विद्वानों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

नू नश्चित्रं पुरुवाजाभिरूती अग्ने रयिं मघवद्भ्यश्च धेहि।

ये राधसा श्रवसा चात्यन्यान्त्सुवीर्येभिश्चाभि सन्ति जनान्॥५॥

नु। नः। चित्रम्। पुरुऽवाजाभिः। ऊती। अग्ने। रयिम्। मघवत्ऽभ्यः। च। धेहि। ये। राधसा। श्रवसा। च। अति। अन्यान्। सुऽवीर्येभिः। च। अभि। सन्ति। जनान्॥५॥

पदार्थः-(**नू**) सद्यः (**नः**) अस्मभ्यम् (**चित्रम्**) अद्भुतम् (**पुरुवाजाभिः**) बहुज्ञानपुरुषार्थयुक्ताभिः (**ऊती**) रक्षादिक्रियाभिः (**अग्ने**) आप्तविद्वन् (**रयिम्**) धनम् (**मघवद्भ्यः**) धनाढ्येभ्यः (**च**) (**धेहि**) (**ये**) (**राधसा**) धनेन (**श्रवसा**) अन्नादिना (**च**) (**अति**) (**अन्यान्**) (**सुवीर्य्येभिः**) सुष्ठु वीर्य्यं बलं पराक्रमो वा येषान्तैः (**च**) (**अभि**) आभिमुख्ये (**सन्ति**) (**जनान्**) मनुष्यान्॥५॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वं पुरुवाजाभिरूती नो मघवद्भ्यश्च चित्रं रयिं नू धेहि ये सुवीर्य्येभिः राधसा श्रवसा चान्याञ्जनान्दधमाना अभि सन्ति तेऽति प्रतिष्ठां च लभन्ते॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये युष्मभ्यं विद्यां श्रियं च दधति तेषां यूयमतिप्रतिष्ठां कुरुत॥५॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) यथार्थवक्ता विद्वन्! आप (**पुरुवाजाभिः**) बहुत ज्ञान और पुरुषार्थ से युक्त (**ऊती**) रक्षा आदि क्रियाओं से (**नः**) हम लोगों और (**मघवद्भ्यः**) धन से युक्त जनों के लिये (**च**) भी (**चित्रम्**) अद्भुत (**रयिम्**) धन को (**नू**) शीघ्र (**धेहि**) धारण कीजिये (**ये**) जो (**सुवीर्य्येभिः**) श्रेष्ठ बल वा पराक्रम जिनके उन और (**राधसा**) धन और (**श्रवसा**) अन्न आदि से (**च**) भी (**अन्यान्**) अन्य (**जनान्**) मनुष्यों को धारण करते हुए (**अभि**) सन्मुख (**सन्ति**) हैं, वे (**अति**) अत्यन्त प्रतिष्ठा को (**च**) भी प्राप्त होते हैं॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो आप लोगों के लिये विद्या और लक्ष्मी को धारण करते हैं, उनकी आप लोग अत्यन्त प्रतिष्ठा करो॥५॥

पुनर्विद्वद्भिः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर विद्वानों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

इमं यज्ञं चनो धा अग्न उशन्यं त आसानो जुहुते हविष्मान्।

भरद्वाजेषु दधिषे सुवृक्तिमवीर्वाजस्य गध्यस्य सातौ॥६॥

इमम्। यज्ञम्। चनः। धाः। अग्ने। उशन्। यम्। ते। आसानः। जुहुते। हविष्मान्। भरत्ऽवाजेषु। दधिषे। सुऽवृक्तिम्। अवीः। वाजस्य। गध्यस्य। सातौ॥६॥

पदार्थः-(**इमम्**) (**यज्ञम्**) परोपकाराख्यम् (**चनः**) अन्नादिकम् (**धाः**) धेहि (**अग्ने**) पुरुषार्थिन् विद्वन् (**उशन्**) कामयमानः (**यम्**) (**ते**) तव (**आसानः**) आसीनः (**जुहुते**) जुहोति (**हविष्मान्**) बहूनि हवींषि दातव्यानि भोक्तव्यानि विद्यन्ते येषु (**भरद्वाजेषु**) ये वाजानन्नादीन् भरन्ति तेषु (**दधिषे**) (**सुवृक्तिम्**) सुष्ठु व्रजन्ति यस्मिन्मार्गे तम् (**अवीः**) रक्षेः (**वाजस्य**) विज्ञानादेः (**गध्यस्य**) अभिकाङ्क्षितुं योग्यस्य (**सातौ**) स- ामे॥६॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वं यं यज्ञमुशञ्चनो धा आसानो हविष्मान्त्सम्भवाञ्जुहुत इमं गध्यस्य वाजस्य सातावर्वीर्भरद्वाजेषु सुवृक्तिं दधिषे तस्य ते सर्वं सुखं सुगमं जायेत॥६॥

भावार्थः-ये परोपकारं कुर्वन्ति तेषामेवाभीष्टा स्वार्थसिद्धिर्जायते॥६॥

पदार्थः–हे (**अग्ने**) पुरुषार्थी विद्वन्! आप (**यम्**) जिस (**यज्ञम्**) परोपकार नामक यज्ञ की (**उशन्**) कामना करते हुए (**चनः**) अन्न आदि को (**धाः**) धारण करें और (**आसानः**) बैठे हुए (**हविष्मान्**) बहुत देने और भोग करने योग्य पदार्थ जिनमें वह आप (**जुहुते**) हवन करते हैं (**इमम्**) इसकी (**गध्यस्य**) अभिकांक्षा करने योग्य (**वाजस्य**) विज्ञान आदि के (**सातौ**) संग्राम में (**अवीः**) रक्षा कीजिये और (**भरद्वाजेषु**) अन्न आदि को धारण करने वालों में (**सुवृक्तिम्**) उत्तम प्रकार चलते हैं जिसमें उस मार्ग को (**दधिषे**) धारण कीजिये उन (**ते**) आपका सम्पूर्ण सुख सुगम हो जावे॥६॥

भावार्थः-जो परोपकार करते हैं, उनको ही अभीष्ट स्वार्थसिद्धि होती है॥६॥

पुनर्विद्वद्विषयमाह॥

फिर विद्वद्विषय को कहते हैं॥

वि द्वेषांसीनुहि वर्धयेळां मदेम शतहिमाः सुवीराः॥७॥१२॥

वि। द्वेषांसि। इनुहि। वर्धय। इळाम्। मदेम। शतऽहिमाः। सुऽवीराः॥७॥

पदार्थः-(**वि**) विशेषे (**द्वेषांसि**) द्वेषयुक्तानि कर्म्माणि (**इनुहि**) व्याप्नुहि (**वर्धय**) (**इळाम्**) वाचमन्नं वा (**मदेम**) आनन्देम (**शतहिमाः**) शतं वर्षाणि (**सुवीराः**) शोभना वीरा येषान्ते॥७॥

अन्वयः-हे अग्ने! विद्वंस्त्वं द्वेषांसि त्यज त्याजयेळा वीनुहि। अस्मान् वर्धय यतो वयं शतहिमाः सुवीराः सन्तो मदेम॥७॥

भावार्थः-विद्वद्भिस्तत्कर्म्म कर्त्तव्यं कारयितव्यं च येन मनुष्याणां दोषनिवृत्तिर्बुद्धिबलायूंषि च वर्धेरन्॥७॥

अत्राग्निविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति दशमं सूक्तं द्वादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे अग्नि के समान परोपकारसाधक विद्वन्! आप **(द्वेषांसि)** द्वेष से युक्त कर्म्मों का त्याग करिये कराइये और **(इळाम्)** वाणी वा अन्न को **(वि)** विशेष करके **(इनुहि)** व्याप्त होओ और हम लोगों की **(वर्धय)** वृद्धि कीजिये जिससे हम लोग **(शतहिमाः)** सौ वर्ष पर्यन्त **(सुवीराः)** अच्छे वीर पुरुषों से युक्त होकर **(मदेम)** आनन्द करें॥७॥

भावार्थः-विद्वानों को चाहिये कि वह कर्म्म करें और करावें, जिससे मनुष्यों के दोषों की निवृत्ति और बुद्धि, बल तथा अवस्था की वृद्धि होवे॥७॥

इस सूक्त में अग्नि और विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह दशवां सूक्त और बारहवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ षड्चस्यैकादशस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। अग्निर्देवता। १, ३, ५ निचृत्त्रिष्टुप्। ४, ६ विराट्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २ निचृत्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

पुनर्विद्वद्भिः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

अब छः ऋचावाले ग्यारवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में फिर विद्वानों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

यजस्व होतरिषितो यजीयानग्ने बाधो मरुतां न प्रयुक्ति।
आ नो मित्रावरुणा नासत्या द्यावा होत्राय पृथिवी ववृत्याः॥१॥

यजस्व। होतः। इषितः। यजीयान्। अग्ने। बाधः। मरुताम्। न। प्रऽयुक्ति। आ। नः। मित्रावरुणा। नासत्या। द्यावा। होत्राय। पृथिवी इति। ववृत्याः॥ १॥

पदार्थः-(यजस्व) सङ्गमय **(होतः)** दातः **(इषितः)** प्रेरितः **(यजीयान्)** अतिशयेन यष्टा **(अग्ने)** अग्निरिव विद्वन् **(बाधः)** निरोधः **(मरुताम्)** वायूनामिव मनुष्याणाम् **(न)** इव **(प्रयुक्ति)** प्रयुञ्जते यस्मिंस्तत् कर्म्म **(आ)** **(नः)** अस्मान् **(मित्रावरुणा)** प्राणोदानाविवाऽध्यापकोपदेशकौ **(नासत्या)** अविद्यमानासत्याचरणौ **(द्यावा)** **(होत्राय)** आदानाय दानाय वा **(पृथिवी)** **(ववृत्याः)** वर्त्तयेः॥१॥

अन्वयः-हे होतरग्ने! यजीयानिषितस्त्वं यथा नासत्या मित्रावरुणा होत्राय द्यावा पृथिवी सङ्गमयतस्तथा नोऽस्मान् प्रयुक्ति आ ववृत्या मरुतां बाधो न वर्त्तमानं दिनं निवर्त्य यजस्व॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये विद्वांसः प्राणोदानवत् प्रियाः पुरुषार्थिनश्च भवन्ति ते सर्वार्थं सुखं सङ्गमयितुमर्हन्ति॥१॥

पदार्थः-हे **(होतः)** दाता और **(अग्ने)** अग्नि के समान तेजस्वी विद्वज्जन! **(यजीयान्)** अतिशय यज्ञ करने वाले **(इषितः)** प्रेरणा किये गये जैसे **(नासत्या)** असत्य आचरण से रहित **(मित्रावरुणा)** प्राण और उदान वायु के समान अध्यापक और उपदेशक जन **(होत्राय)** ग्रहण करने और देने वाले के लिये **(द्यावा)** अन्तरिक्ष और **(पृथिवी)** पृथिवी मिलाते हैं, वैसे **(नः)** हम लोगों को **(प्रयुक्ति)** प्रयोग करते हैं पदार्थों का जिसमें वह कर्म्म **(आ)** सब प्रकार से **(ववृत्याः)** प्रवृत्त कराइये और **(मरुताम्)** वायु के सदृश मनुष्यों की **(बाधः)** रुकावट **(न)** जैसे वैसे वर्तमान दिन को निवृत्त कर **(यजस्व)** उत्तम प्रकार मिलाइये॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो विद्वान् जन प्राण और उदान वायु के सदृश प्रिय और पुरुषार्थी होते हैं, वे सब के लिये सुख प्राप्त कराने योग्य होते हैं॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

त्वं होता मन्द्रतमो नो अध्रुगन्तर्देवो विदथा मर्त्येषु।
पावकया जुह्वा३ वह्निरासाग्ने यजस्व तन्वं१ तव स्वाम्॥ २॥

त्वम्। होता। मन्द्रऽतमः। नः। अध्रुक्। अन्तः। देवः। विदथा। मर्त्येषु। पावकया। जुह्वा। वह्निः। आसा। अग्ने। यजस्व। तन्वम्। तव। स्वाम्॥ २॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**होता**) दाता (**मन्द्रतमः**) अतिशयेनानन्दयिता (**नः**) अस्मान् (**अध्रुक्**) यः कश्चिन्न द्रोग्धि (**अन्तः**) मध्ये (**देवः**) देदीप्यमानः (**विदथा**) विदथे यज्ञे (**मर्त्येषु**) मनुष्येषु (**पावकया**) पवित्रकारिकया ज्वालया (**जुह्वा**) जुहोति गृह्णाति ददाति वा यया (**वह्निः**) वोढा (**आसा**) मुखेनेव (**अग्ने**) अग्निरिव परोपकारिन् (**यजस्व**) सङ्गच्छस्व (**तन्वम्**) (**तव**) (**स्वाम्**) स्वकीयाम्॥ २॥

अन्वयः-हे अग्ने विद्वन्! यथा मन्द्रतमो होता विदथाऽन्तर्देवो वह्निरासेव पावकया जुह्वा नस्तव स्वां तन्वं सङ्गमयति तथा त्वं मर्त्येष्वध्रुक्सन्नस्मानस्माकं शरीराणि च यजस्व॥ २॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा विद्युत्सूर्यभौमरूपेणाग्निः सर्वजगदुपकरोति तथैव विद्वांसो जगदानन्दयन्ति॥ २॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के समान परोपकार के सहित वर्त्तमान विद्वन् जन! जैसे (**मन्द्रतमः**) अतिशय आनन्द कराने वाले (**होता**) दाताजन (**विदथा**) यज्ञ के (**अन्तः**) मध्य में (**देवः**) प्रकाशमान (**वह्निः**) धारण करने वाला अग्नि (**आसा**) मुख के सदृश (**पावकया**) पवित्र करने वाली ज्वाला से (**जुह्वा**) ग्रहण करता वा देता जिससे उससे (**नः**) हम लोगों को और (**तव**) आपके सम्बन्ध में (**स्वाम्**) अपने (**तन्वम्**) शरीर को मिलाता है, वैसे (**त्वम्**) आप (**मर्त्येषु**) मनुष्यों में (**अध्रुक्**) किसी से न द्रोह करने वाले होते हुए हम लोगों वा हम लोगों के शरीरों को (**यजस्व**) उत्तम प्रकार मिलिये॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे बिजुली, सूर्य्य और भूमि में हुए तेजस्वी पदार्थों के रूप से अग्नि सम्पूर्ण जगत् का उपकार करता है, वैसे ही विद्वान् जन जगत् को आनन्दित करते हैं॥ २॥

पुनस्ते कीदृशा भूत्वा किं कुर्युरित्याह॥

फिर वे कैसे होकर क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

धन्या चिद्धि त्वे धिषणा वष्टि प्र देवाञ्जन्म गृणते यजध्यै।
वेपिष्ठो अङ्गिरसां यद्ध विप्रो मधुच्छन्दो भनति रेभ इष्टौ॥ ३॥

धन्या। चित्। हि। त्वे इति। धिषणा। वष्टि। प्र। देवान्। जन्म। गृणते। यजध्यै। वेपिष्ठः। अङ्गिरसाम्। यत्। ह। विप्रः। मधु। छन्दः। भनति। रेभः। इष्टौ॥ ३॥

पदार्थः-(**धन्या**) धनं लब्ध्वा (**चित्**) अपि (**हि**) (**त्वे**) त्वयि (**धिषणा**) प्रज्ञा द्यौः पृथिवी वा (**वष्टि**) कामयते (**प्र**) (**देवान्**) विदुषः (**जन्म**) (**गृणते**) स्तुवन्ति (**यजध्यै**) यष्टुं सङ्गन्तुम् (**वेपिष्ठः**) अतिशयेन कम्पकः (**अङ्गिरसाम्**) प्राणानामिव विदुषाम् (**यत्**) यः (**ह**) किल (**विप्रः**) मेधावी (**मधु**) माधुर्य्यगुणोपेतं विज्ञानम् (**छन्दः**) स्वातन्त्र्यम् (**भनति**) वदति (**रेभः**) स्तोता (**इष्टौ**) विज्ञानवर्धके यज्ञे॥३॥

अन्वयः-हे विद्वन्! या हि त्वे धन्या धिषणा देवान् प्र वष्टि तेषामङ्गिरसां जन्म यजध्यै ये गृणते यद्ध वेपिष्ठो विप्रो रेभ इष्टौ [मधुच्छन्दः] भनति तांश्चित् सर्वान् वयं गृह्णीयाम्॥३॥

भावार्थः-ये प्रज्ञया विद्वत्सङ्गेन विद्या कामयन्तेऽन्यानुपदिशन्ति च ते धन्याः सन्ति॥३॥

पदार्थः-हे विद्वन्! जो (**हि**) निश्चित (**त्वे**) आपके रहते (**धन्या**) धन को प्राप्त हुई (**धिषणा**) बुद्धि, अन्तरिक्ष वा पृथिवी (**देवान्**) विद्वानों की (**प्र, वष्टि**) कामना करती है उन (**अङ्गिरसाम्**) प्राणों के सदृश विद्वनों के (**जन्म**) जन्म को (**यजध्यै**) उत्तम प्रकार प्राप्त होने को जो (**गृणते**) स्तुति करते हैं और (**यत्**) जो (**ह**) निश्चित (**वेपिष्ठः**) अतिशय कम्पानेवाला (**विप्रः**) बुद्धिमान् (**रेभः**) स्तुतिकर्त्ता (**इष्टौ**) विज्ञान के बढ़ाने वाले यज्ञ में (**मधु**) माधुर्य गुण से युक्त विज्ञान और (**छन्दः**) स्वतन्त्रता को (**भनति**) कहता है (**चित्**) उन्हीं सब को हम लोग ग्रहण करें॥३॥

भावार्थः-जो बुद्धि और विद्वानों के सङ्ग से विद्या की कामना करते और अन्यों को उपदेश देते हैं, वे धन्य हैं॥२॥

पुनर्विद्वांसः कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर विद्वान् जन कैसे हों, इस विषय को कहते हैं॥

अदिद्युतत् स्वपाको विभावाग्ने यजस्व रोदसी उरूची।

आयुं न यं नमसा रातहव्या अञ्जन्ति सुप्रयसं पञ्च जनाः॥४॥

अदिद्युतत्। सु। अपाकः। विऽभावा। अग्ने। यजस्व। रोदसी इति। उरुची इति। आयुम्। न। यम्। नमसा। रातऽहव्याः। अञ्जन्ति। सुऽप्रयसम्। पञ्च। जनाः॥४॥

पदार्थः-(**अदिद्युतत्**) द्योतते (**सु**) शोभने (**अपाकः**) अपरिपक्वः (**विभावा**) विशेषदीप्तिमान् (**अग्ने**) पावकवद्वर्त्तमान विद्वन् (**यजस्व**) सङ्गच्छस्व (**रोदसी**) भूमिप्रकाशौ (**उरूची**) ये बहूनञ्चतस्ते (**आयुम्**) जीवनम् (**न**) इव (**यम्**) (**नमसा**) अन्नाद्येन (**रातहव्याः**) दत्ता दातव्याः (**अञ्जन्ति**) सुप्रकटयन्ति (**सुप्रयसम्**) सुष्ठु प्रयत्नवन्तम् (**पञ्च**) (**जनाः**) प्राणा इव वर्त्तमानाः॥५॥

अन्वयः-हे अग्ने! रातहव्याः पञ्च जना नमसा यं सुप्रयसमञ्जन्ति स स्वपाको विभावाऽऽयुन्नादिद्युतदेवं त्वमुरूची रोदसी यजस्व॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा पञ्च प्राणाः शरीरं धरन्ति तथैव युक्ताहारविहाराः शरीरं चिरं रक्षन्ति तथैव विद्वदुपदेशा विद्यां चिरं स्थायिनीं कुर्वन्ति॥४॥

पदार्थ:-हे **(अग्ने)** अग्नि के समान वर्तमान विद्वज्जन! **(रातहव्या:)** दिये गये देने योग्य **(पञ्च)** पांच **(जना:)** प्राणों के सदृश वर्त्तमान जन **(नमसा)** अन्न आदि से **(यम्)** जिस **(सुप्रयसम्)** उत्तम प्रकार प्रयत्न करने वाले को **(अञ्जन्ति)** अच्छे प्रकार प्रकट करते हैं वह **(सु)** उत्तम प्रकार **(अपाक:)** नहीं परिपक्व **(विभावा)** अत्यन्त दीप्तिमान् जन **(आयुम्)** जीवन को **(न)** जैसे वैसे **(अद्युतत्)** प्रकाशित होता है, इस प्रकार आप **(उरूची)** बहुतों को प्राप्त होने वाले **(रोदसी)** अन्तरिक्ष और पृथिवी को **(यजस्व)** उत्तम प्रकार प्राप्त हों॥४॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जिस प्रकार से पांच प्राण शरीर को धारण करते हैं, वैसे ही नियमित आहार और विहार करने वाले जन शरीर की अति कालपर्य्यन्त रक्षा करते हैं, वैसे ही विद्वानों के उपदेश विद्या को अतिकाल पर्य्यन्त स्थिर होने वाली करते हैं॥४॥

पुनर्मनुष्यै: किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

वृञ्जे ह यन्नमसा बर्हिरग्नावयामि स्रुग्घृतवती सुवृक्तिः।
अम्यक्षि सद्म सदने पृथिव्या अश्रायि यज्ञः सूर्ये न चक्षुः॥५॥

वृञ्जे। ह। यत्। नमसा। बर्हिः। अग्नौ। अयामि। स्रुक्। घृतऽवती। सुऽवृक्तिः। अम्यक्षि। सद्म। सदने। पृथिव्याः। अश्रायि। यज्ञः। सूर्ये। न। चक्षुः॥५॥

पदार्थ:-**(वृञ्जे)** त्यजामि **(ह)** किल **(यत्)** **(नमसा)** अन्नादिना **(बर्हि:)** घृतम् **(अग्नौ)** पावके **(अयामि)** प्राप्नोमि **(स्रुक्)** या स्रवति सा **(घृतवती)** बहूदकयुक्ता नदी **(सुवृक्ति:)** सुष्ठु व्रजन्ति यस्यां सा **(अम्यक्षि)** गच्छति **(सद्म)** सीदन्ति यस्मिंस्तत् **(सदने)** स्थाने **(पृथिव्या:)** भूमे: **(अश्रायि)** आश्रयति **(यज्ञ:)** सङ्गन्तव्य: **(सूर्य्ये)** **(न)** इव **(चक्षु:)** नेत्रम्॥५॥

अन्वय:-हे विद्वांसोऽहं नमसाऽग्नौ यद्बर्हिर्ह वृञ्जे या सुवृक्तिर्घृतवती स्रुगम्यक्षि तामयामि यो यज्ञ: सूर्य्ये चक्षुर्न पृथिव्या: सदने सद्म अश्रायि तं सर्वेऽनुतिष्ठन्तु॥५॥

भावार्थ:-अत्रोपमालङ्कार:। यथा होतारोऽग्नौ स्रुचा घृतं त्यजन्ति तथा विद्वांसोऽन्यबुद्धौ विद्यां त्यजन्तु यथा सूर्य्यप्रकाशे चक्षुर्व्याप्नोति तथैव हुतं द्रव्यमन्तरिक्षे व्याप्नोति॥५॥

पदार्थ:-हे विद्वानो! मैं **(नमसा)** अन्न आदि से **(अग्नौ)** अग्नि में **(यत्)** जिस **(बर्हि:)** घृत का **(ह)** निश्चय करके **(वृञ्जे)** त्याग करता हूँ और जो **(सुवृक्ति:)** सुवृक्ति अर्थात् उत्तम प्रकार चलते हैं जिसमें वह **(घृतवती)** बहुत जल से युक्त नदी **(स्रुक्)** बहने वाली **(अम्यक्षि)** चलती है उसको **(अयामि)** प्राप्त होता हूँ और जो **(यज्ञ:)** प्राप्त होने योग्य यज्ञ **(सूर्य्ये)** सूर्य्य में **(चक्षु:)** नेत्र **(न)** जैसे वैसे **(पृथिव्या:)** पृथिवी के **(सदने)** स्थान में **(सद्म)** रहने का स्थान अर्थात् गृह का **(अश्रायि)** आश्रयण करता है, उसको सब लोग अनुष्ठान करो॥५॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे हवन करने वाले जन अग्नि में स्रुवा से घृत छोड़ते हैं, वैसे विद्वान् जन अन्य की बुद्धि में विद्या को छोड़ें और जैसे सूर्य्य के प्रकाश में नेत्र व्याप्त होता है, वैसे ही हवन किया गया द्रव्य अन्तरिक्ष मे व्याप्त होता है॥५॥

पुनर्मनुष्यैः कथं वर्त्तितव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को कैसा वर्त्ताव करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

दुशस्या नः पुर्वणीक होतर्देवेभिरग्ने अुग्निभिरिधानः।

रायः सूनो सहसो वावसाना अति स्रसेम वृजनं नांहः॥६॥१३॥

दुशस्य। नुः। पुरुऽअनीक। होतुः। देवेभिः। अुग्ने। अुग्निऽभिः। इधानः। रायः। सूनो इति। सहसः। ववसानाः। अति। स्रसेम। वृजनम्। न। अंहः॥६॥

पदार्थः-(**दशस्या**) दाशति ददति येन तद्दशस्तदात्मानमिच्छ। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। (**नः**) अस्मान् (**पुर्वणीक**) पुरूण्यनीकानि सैन्यानि यस्य तत्सम्बुद्धौ (**होतः**) दातः (**देवेभिः**) देदीप्यमानैः (**अग्ने**) पावक इव राजन् (**अग्निभिः**) अग्निवद्वर्त्तमानैर्वीरैः (**इधानः**) देदीप्यमानः (**रायः**) धनानि (**सूनो**) सन्तान (**सहसः**) बलवतः (**वावसानाः**) आच्छाद्यमानाः (**अति**) (**स्रसेम**) गच्छेम (**वृजनम्**) वर्जनीयं बलम् (**न**) इव (**अंहः**) अपराधं पापं वा॥६॥

अन्वयः-हे पुर्वणीक होतः सहसः सूनोऽग्ने! देवेभिरग्निभिरिधानोऽग्निरिव त्वं नो रायो दशस्या यतो वावसाना वयं वृजनं नांऽहोऽति स्रसेम॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथाग्निरिन्धनैर्वर्धते तथा यूयं पुरुषार्थेन वर्धध्वं यथा मनुष्याः शत्रुं सद्यस्त्यजन्ति तथाऽन्यायाचरणं पापं क्षिप्रं त्यजतेति॥६॥

अत्राग्निविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्येकादशं सूक्तं त्रयोदशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः–हे (**पुर्वणीक**) अनेक सेनाओं से युक्त (**होतः**) दान करने वाले (**सहसः**) बलवान् के (**सूनो**) सन्तान (**अग्ने**) अग्नि के समान वर्त्तमान राजन्! (**देवेभिः**) निरन्तर प्रकाशमान (**अग्निभिः**) अग्नि के समान वर्त्तमान वीरजनों से (**इधानः**) प्रकाशमान अग्नि जैसे वैसे आप (**नः**) हम लोगों के लिये (**रायः**) धनों को (**दशस्या**) देते हैं जिससे वह दशस् है उस अपने की इच्छा करिये, जिससे (**वावसानाः**) ढाँपे गये हम लोग (**वृजनम्**) वर्जने योग्य बल को (**न**) जैसे वैसे (**अंहः**) अपराध को (**अति**) (**स्रसेम**) अतिक्रमण करें॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे अग्नि इन्धनों से बढ़ता है, वैसे आप लोग पुरुषार्थ से बढ़िये और जैसे मनुष्य शत्रु का शीघ्र त्याग करते हैं, वैसे अन्यायाचरणरूप पाप का शीघ्र त्याग करो॥६॥

इस सूक्त में अग्नि और विद्वान् के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह ग्यारहवाँ सूक्त और तेरहवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ षड्चस्य द्वादशस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। अग्निर्देवता। १ त्रिष्टुप्। २ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ३ भुरिक्पङ्क्तिः। ४, ६ निचृत्पङ्क्तिः। ५ स्वराट्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

अब छः ऋचावाले बारहवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

मध्ये होता दुरोणे बर्हिषो राळग्निस्तोदस्य रोदसी यजध्यै।
अयं स सूनुः सहस ऋतावा दूरात्सूर्यो न शोचिषा ततान॥१॥

मध्ये। होता। दुरोणे। बर्हिषः। राट्। अग्निः। तोदस्य। रोदसी इति। यजध्यै। अयम्। सः। सूनुः। सहसः। ऋतऽवा। दूरात्। सूर्यः। न। शोचिषा। ततान॥१॥

पदार्थः-(मध्ये) (होता) (दुरोणे) गृहे **(बर्हिषः)** अवकाशस्य **(राट्)** यो राजते **(अग्निः)** पावकः **(तोदस्य)** व्यथायाः **(रोदसी)** द्यावापृथिव्यौ **(यजध्यै)** यष्टुं सङ्गन्तुम् **(अयम्) (सः) (सूनुः)** अपत्यम् **(सहसः)** सहनशीलस्य **(ऋतावा)** य ऋतं सत्यं वनुते याचते सः **(दूरात्) (सूर्य्यः) (न)** इव **(शोचिषा)** प्रकाशेन **(ततान)** विस्तृणोति॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा दुरोणे बर्हिषो मध्ये होता तोदस्य राळग्नी रोदसी यजध्यै ततान तथा सोऽयं सहसः सूनुर्ऋतावा दूराच्छोचिषा सूर्यो न विद्याप्रकाशं ततान॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये कर्म्मठाः सूर्य्यवत्सुकर्म्मप्रकाशकाः स्युस्ते सर्वेषां सुखानि वर्धयितुं शक्नुवन्ति॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(दुरोणे)** गृह में **(बर्हिषः)** अवकाश के **(मध्य)** मध्य में **(होता)** आदान वा ग्रहण करने वाला **(तोदस्य)** व्यथा के सम्बन्ध में **(राट्)** प्रकाशमान **(अग्निः)** अग्नि **(रोदसी)** अन्तरिक्ष और पृथिवी को **(यजध्यै)** मिलने को **(ततान)** विस्तृत करता है, वैसे **(सः)** सो **(अयम्)** यह **(सहसः)** सहनशील का **(सूनुः)** अपत्य **(ऋतावा)** सत्य की याचना करने वाला **(दूरात्)** दूर से **(शोचिषा)** प्रकाश से **(सूर्य्यः)** सूर्य्य **(न)** जैसे वैसे विद्या के प्रकाश को विस्तृत करता है॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो वेदविहित यज्ञ आदि कर्म्मों के करने वाले जन सूर्य्य के सदृश उत्तम कर्म्मों के प्रकाशक होवें, वे सब के सुख बढ़ाने को समर्थ हो सकते हैं॥१॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

आ यस्मिन् त्वे स्वपाके यजत्र यक्षद्राजन्त्सर्वतातेव नु द्यौः।

त्रिषधस्थस्ततरुषो न जंहो हव्या मघानि मानुषा यजध्यै॥२॥

आ। यस्मिन्। त्वे इति। सु। अपाके। यजत्र। यक्षत्। राजन्। सर्वताताऽइव। नु। द्यौः। त्रिऽसधस्थः। ततरुषः। न। जंहः। हव्या। मघानि। मानुषा। यजध्यै॥२॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**यस्मिन्**) (**त्वे**) त्वयि (**सु**) (**अपाके**) अपरिपक्वे (**यजत्र**) सङ्गन्तुमर्ह (**यक्षत्**) यजेत् (**राजन्**) (**सर्वतातेव**) सर्वेषां वर्धको यज्ञ इव (**नु**) सद्यः (**द्यौः**) विद्युदादिप्रकाशः (**त्रिषधस्थः**) त्रिषु भूम्यन्तरिक्षसूर्य्यलोकेषु त्रिविधेषु समानस्थानेषु वर्त्तमानः (**ततरुषः**) तारकः (**न**) इव (**जंहः**) सद्यो गन्ता (**हव्या**) आदातुं दातुमर्हाणि (**मघानि**) धनानि (**मानुषा**) मनुष्याणामिमानि (**यजध्यै**) सङ्गन्तुम्॥२॥

अन्वयः-हे यजत्र राजन्! यस्मिन्नपाके त्वे सर्वतातेव द्यौः स्वाऽऽयक्षत् स भवान्नु त्रिषधस्थस्ततरुषो जंहो न हव्या मानुषा मघानि यजध्यै यक्षत्॥२॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यत्र सूर्य्यवद्राजा प्रतापी भवति तत्र सर्वाणि सुखानि जायन्ते॥२॥

पदार्थः-हे (**यजत्र**) मेल करने योग्य (**राजन्**) राजा! (**यस्मिन्**) जिन (**अपाके**) बुद्धि के परिपाक अर्थात् पूर्णता से रहित (**त्वे**) आप में (**सर्वतातेव**) सब की वृद्धि करने वाला यज्ञ जैसे वैसे (**द्यौः**) बिजुली आदि का प्रकाश (**सु**) उत्तम प्रकार (**आ, यक्षत्**) सब ओर से मेल करे वह आप (**नु**) शीघ्र (**त्रिषधस्थः**) तीन पृथिवी, अन्तरिक्ष और सूर्य्यलोक में तुल्य स्थान में वर्त्तमान (**ततरुषः**) तारने और (**जंहः**) शीघ्र चलने वाला (**न**) जैसे वैसे (**हव्या**) देने और ग्रहण करने योग्य (**मानुषा**) मनुष्य सम्बन्धी (**मघानि**) धनों को (**यजध्यै**) प्राप्त होने को यजन कीजिये॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जहाँ सूर्य्य के सदृश प्रतापी राजा होता है, वहाँ सम्पूर्ण सुख होते हैं॥२॥

पुना राजा कीदृशो भवेदित्याह॥

फिर राजा कैसा होवे, इस विषय को कहते हैं॥

तेजिष्ठा यस्यारतिर्वनेराट् तोदो अध्वन्न वृधसानो अद्यौत्।

अद्रोघो न द्रविता चेतति त्मन्नमर्त्योऽवर्त्र ओषधीषु॥३॥

तेजिष्ठा। यस्य। अरतिः। वनेऽराट्। तोदः। अध्वन्। न। वृधसानः। अद्यौत्। अद्रोघः। न। द्रविता। चेतति। त्मन्। अमर्त्यः। अवर्त्रः। ओषधीषु॥३॥

पदार्थः-(**तेजिष्ठा**) अतिशयेन तेजस्विनी (**यस्य**) अग्नेरिव राज्ञः (**अरतिः**) प्राप्तिः (**वनेराट्**) या वने सेवनीये किरणे वा राजते (**तोदः**) व्यथनम् (**अध्वन्**) अध्वनि (**न**) इव (**वृधसानः**) वर्धमानः (**अद्यौत्**) द्योतते (**अद्रोघः**) द्रोहरहितः (**न**) इव (**द्रविता**) गन्ता (**चेतति**) सञ्ज्ञापयति (**त्मन्**) आत्मनि (**अमर्त्यः**) मरणधर्म्मरहितः (**अवर्त्रः**) अनिवारणीयः (**ओषधीषु**) सोमलतादिषु॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यस्याग्नेस्तेजिष्ठाऽरतिर्वनेराडध्वन् वृधसानस्तोदो नाद्यौत् सोऽद्रोघो न द्रविता त्मन्नमर्त्योऽवर्त्र ओषधीषु चेतति॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यस्य तेजस्विनी प्रकृतिः प्रेरणा च भवेत् स द्रोहरहितः सन्नौषधानि दुःखमिव सर्वस्य दुःखं निवारयति स एव कृतकृत्यो भवति॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यस्य)** जिस अग्नि के सदृश राजा की **(तेजिष्ठा)** अतिशय तेजस्विनी **(अरतिः)** प्राप्ति **(वनेराट्)** सेवन करने योग्य वा किरण में शोभित होने वाली **(अध्वन्)** मार्ग में **(वृधसानः)** बढ़ती हुई **(तोदः)** पीड़ा **(न)** जैसे वैसे **(अद्यौत्)** प्रकाशित होती हैं वह **(अद्रोघः)** द्रोह से रहित **(न)** जैसे वैसे **(द्रविता)** चलने वाला **(त्मन्)** आत्मा में **(अमर्त्यः)** मरणधर्म्म से रहित **(अवर्त्रः)** नहीं निवारण करने योग्य **(ओषधीषु)** सोमलता आदि ओषधियों में **(चेतति)** जनाता है॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जिस राजा की तेजस्विनी प्रकृति और प्रेरणा होवे वह द्रोहरहित हुआ जैसे ओषधियाँ दुःख को, वैसे सब के दुःख का निवारण करता है, वही कृतकृत्य होता है॥३॥

पुनर्विद्वद्भिः कथं वर्त्तितव्यमित्याह॥

फिर विद्वानों को कैसा वर्त्ताव करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

सास्माकेभिरेतरी न शूषैरग्निः ष्टवे दम आ जातवेदाः।

द्रुवन्नो वन्वन् क्रत्वा नार्वोस्रः पितेव जारयायि यज्ञैः॥४॥

सः। अस्माकेभिः। एतरि। न। शूषैः। अग्निः। स्तवे। दमे। आ। जातऽवेदा। द्रुऽअन्नः। वन्वन्। क्रत्वा। न। अर्वा। उस्रः। पिताऽइव। जारयायि। यज्ञैः॥४॥

पदार्थः-**(सः)** राजा **(अस्माकेभिः)** अस्माभिः सह **(एतरी)** प्राप्तव्ये **(न)** इव **(शूषैः)** बलादिभिः **(अग्निः)** पावक इव **(स्तवे)** प्रशंसनीये **(दमे)** गृहे **(आ)** **(जातवेदाः)** यो जातानि वेद **(द्रुवन्नः)** द्रु द्रवीभूतमन्नं यस्मात् **(वन्वन्)** सम्भजन् **(क्रत्वा)** प्रज्ञया कर्मणा वा **(न)** इव **(अर्वा)** वाजी **(उस्रः)** गाः **(पितेव)** जनक इव **(जारयायि)** जारं जरावस्थां यातुं शीलं यस्य तच्छरीरम् **(यज्ञैः)** विद्वत्सेवादिभिः॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथाऽस्माकेभिस्सह द्रुवन्नो जारयायि वन्वन् पितेवाऽर्वा न क्रत्वोस्रः सेवते तथा यज्ञैः शूषैः सहाग्निर्जातवेदाः स्तवे दम एतरी नाऽऽप्नोति सोऽस्माभिस्सेवनीयः॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा प्रशंसनीये गृहे सुखेन निवासो भवति तथैव पितृवत्पालके राजनि प्रजा सुखं वसति यथा प्रज्ञया जितेन्द्रियो भूत्वा पृथिवीराज्यं प्राप्याऽनाथान् रक्षति तथैव विद्वद्भिः सत्योपदेशेन सर्वं जगद्रक्षणीयम्॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(अस्माकेभिः)** हम लोगों के साथ **(द्रुवन्नः)** द्रवीभूत अन्न जिससे वह **(जारयायि)** वृद्धावस्था को प्राप्त होने का स्वभाव जिसका उस शरीर का **(वन्वन्)** सेवन करता हुआ

(पितेव) जैसे पिता, वैसे **(अर्वा)** घोड़ा **(न)** जैसे वैसे **(क्रत्वा)** बुद्धि वा कर्म्म से **(उस्रः)** गौओं का सेवन करता है, वैसे **(यज्ञैः)** विद्वानों की सेवा आदि **(शूषैः)** बल आदिकों के साथ **(अग्निः)** अग्नि के समान **(जातवेदाः)** प्रकट हुओं को जानने वाला **(स्तवे)** प्रशंसा करने योग्य **(दमे)** गृह में और **(एतरी)** प्राप्त होने योग्य में **(न)** जैसे वैसे **(आ)** प्राप्त होता है **(सः)** वह राजा हम लोगों से सेवन करने योग्य है॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे प्रशंसा करने योग्य गृह में सुख से निवास होता है, वैसे ही पिता के सदृश पालन करने वाले राजा के होने पर प्रजा सुखपूर्वक निवास करती है और जैसे बुद्धि से जितेन्द्रिय होकर और पृथिवी के राज्य को प्राप्त होकर अनाथों की रक्षा करता है, वैसे ही विद्वानों को चाहिये कि सत्य उपदेश से सब जगत् की रक्षा करें॥४॥

अथ कीदृशी विद्युदस्तीत्याह॥

अब कैसी बिजुली है, इस विषय को कहते हैं॥

अध॑ स्मास्य पनयन्ति॒ भासो॒ वृथा॒ यत्तक्ष॑दनु॒याति॑ पृ॒थ्वीम्।
स॒द्यो यः स्य॒न्द्रो विषि॑तो॒ धवी॑यानृ॒णो न ता॒युरति॒ धन्वा॑ रा॒ट्॥५॥

अध॑। स्म॒। अ॒स्य॒। प॒न॒य॒न्ति॒। भास॑ः। वृथा॑। यत्। तक्ष॑त्। अ॒नु॒ऽयाति॑। पृ॒थ्वीम्। स॒द्यः। यः। स्य॒न्द्रः। विऽसि॑तः। धवी॑यान्। ऋ॒णः। न। ता॒युः। अति॑। धन्व॑। रा॒ट्॥५॥

पदार्थः-**(अध)** अनन्तरम् **(स्म)** एव **(अस्य)** राज्ञः **(पनयन्ति)** स्तुवन्ति **(भासः)** दीप्तीः **(वृथा)** **(यत्)** याः **(तक्षत्)** तनूकरोति **(अनुयाति)** अनुगच्छति **(पृथ्वीम्)** भूमिम् **(सद्यः)** **(यः)** **(स्यन्द्रः)** प्रस्रावकः **(विषितः)** व्याप्तः **(धवीयान्)** अतिशयेन कम्पकः **(ऋणः)** प्रापकः **(न)** इव **(तायुः)** स्तेनः। **तायुरिति स्तेननाम।** (निघं०३.२४) **(अति)** **(धन्वा)** धनुर्वेदम् **(राट्)** यो राजते॥५॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यः स्यन्द्रो विषितः धवीयान् वृथर्णस्तायुर्न वर्त्तमानोऽग्निर्यद्या भासस्तक्षत्पृथ्वीं सद्योऽनुयात्यध स्मास्य गुणान् विद्वांसः पनयन्ति तं विदित्वा तस्य विद्यां प्राप्य राडति धन्वाऽनुजानाति॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे विद्वांसो! यदि भवन्तो विद्युद्विद्यां विज्ञाय यन्त्रैर्घर्षयित्वैनामुत्पाद्यैतया सह मनुष्यादीन् योजयेयुस्तर्हीयमतिकम्पिका वेगवती स्यात्। यदि काचाभ्रपटलान्तर्मनुष्यं पृथक्कारयेयुस्तर्हीयं क्षिप्रं भूमिं गच्छति सेयं सर्वत्र व्याप्ता प्रशंसनीयगुणास्ति यया राजानः शत्रून् सहजतया जित्वा श्रीमन्तो जायन्ते॥५॥

पदार्थः-हे विद्वान् जनो! **(यः)** जो **(स्यन्द्रः)** बहानेवाला **(विषितः)** व्याप्त **(धवीयान्)** अतिशय कम्पाने और **(वृथा)** व्यर्थ **(ऋणः)** प्राप्त कराने वाला **(तायुः)** चोर **(न)** जैसे वैसे वर्त्तमान अग्नि **(यत्)** जिन **(भासः)** प्रकाशों को **(तक्षत्)** सूक्ष्म करता है **(पृथ्वीम्)** पृथिवी के **(सद्यः)** शीघ्र **(अनुयाति)** पीछे चलता है **(अध)** इसके अनन्तर **(स्म)** ही **(अस्य)** इस राजा के गुणों की विद्वान् जन **(पनयन्ति)** स्तुति करते हैं, उसको जान कर और उसकी विद्या को प्राप्त होकर **(राट्)** राजा **(अति, धन्वा)** धनुर्वेद का अत्यन्त जाननेवाला होता है॥५॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे विद्वान् जनो! जो आप लोग बिजुली की विद्या को जानकर यन्त्रों से घर्षित कर इस को उत्पन्न करके इस बिजुली के साथ मनुष्य आदिकों को युक्त करें तो यह अति कम्पानेवाली और वेगवती होवे और स्वच्छ काच के स्वभ्र पट्टे के अन्तर्गत मनुष्य को अलग करावें तो यह बिजुली शीघ्र भूमि में प्राप्त होती हैं, सो यह सर्वत्र व्याप्त और प्रशंसा करने योग्य गुणवाली है, जिससे राजा लोग शत्रुओं को सहज से जीतकर धनवान् होते हैं॥५॥

पुनर्मनुष्याः कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर मनुष्य कैसे होवें, इस विषय को कहते हैं॥

स त्वं नो अर्वन्निदाया विश्वेभिरग्ने अग्निभिरिधानः।
वेषि रायो वि यासि दुच्छुना मदेम शतहिमाः सुवीराः॥६॥१४॥

सः। त्वम्। नः। अर्वन्। निदायाः। विश्वेभिः। अग्ने। अग्निऽभिः। इधानः। वेषि। रायः। वि। यासि। दुच्छुनाः। मदेम। शतऽहिमाः। सुऽवीराः॥६॥

पदार्थः-(**सः**) (**त्वम्**) (**नः**) अस्मान् (**अर्वन्**) अश्वेव [अश्व इव] शीघ्रं गमयन् (**निदायाः**) निन्दिकायाः प्रजायाः (**विश्वेभिः**) समग्रैः (**अग्ने**) पावक इव प्रतापिन् (**अग्निभिः**) विद्युदादिभिः (**इधानः**) देदीप्यमानः (**वेषि**) व्याप्नोषि (**रायः**) धनानि (**वि**) (**यासि**) प्राप्नोषि (**दुच्छुनाः**) दुष्टः श्वेव वर्त्तमानाः सेनाः (**मदेम**) हर्षेम (**शतहिमाः**) शतं हिमानि येषान्ते (**सुवीराः**) शोभनाश्च ते वीराः॥६॥

अन्वयः-हे अर्वन्नग्ने! यतस्त्वं विश्वेभिरग्निभिरिधानो नो निदाया रायो वेषि दुच्छुना वि यासि स त्वं वयं च शतहिमाः सुवीरा मदेम॥६॥

भावार्थः-मनुष्यैः समग्रैरग्न्यादिभिः पदार्थैः कार्य्याणि संसाध्य या न्यायाज्ञा विरुद्धाः प्रजास्ता दण्डयित्वा शान्ताः सम्पादनीया एवं हि न्यायाचरणेन सर्वे शतायुषो भवन्ति॥६॥

अत्र विद्वद्राजप्रजागुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति द्वादशं सूक्तं चतुर्दशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थ:-हे (**अर्वन्**) घोड़े की सदृश शीघ्र चलाते हुए (**अग्ने**) अग्नि के सदृश प्रतापी जिस कारण से (**त्वम्**) आप (**विश्वेभिः**) सम्पूर्ण (**अग्निभिः**) बिजुली आदिकों से (**इधानः**) निरन्तर प्रकाशमान (**नः**) हम लोगों की (**निदायाः**) निन्दा करते हुए प्रजाजन के (**रायः**) धनों को (**वेषि**) व्याप्त होते हो और (**दुच्छुनाः**) दुष्ट श्वा के सदृश वर्त्तमान सेनाओं को (**वि, यासि**) विशेष प्राप्त होते हो (**सः**) वह आप और हम लोग (**शतहिमाः**) सौ हिम वर्ष जिनके वे (**सुवीराः**) सुन्दर वीर जन (**मदेम**) हर्षित होवें॥६॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि सम्पूर्ण अग्नि आदि पदार्थों से कार्य्यों को सिद्ध करके जो न्याय की आज्ञा से विरुद्ध प्रजाजन हैं, उनको ताड़न करके शान्त सम्पादित करें, क्योंकि इस प्रकार न्याय के आचरण से सम्पूर्ण जन सौ वर्ष युक्त होते हैं॥६॥

इस सूक्त में विद्वान्, राजा और प्रजा के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह बारहवाँ सूक्त और चौदहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ षड्चस्य त्रयोदशस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। अग्निर्देवता। १ पङ्क्तिः। २ स्वराट्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ३, ४ विराट्त्रिष्टुप्। ५, ६ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

पुनर्नृपात् किं प्राप्नोतीत्याह॥

फिर राजा से क्या प्राप्त होता है, इस विषय को कहते हैं॥

त्वद्विश्वा॑ सुभग॒ सौभ॑गा॒न्यग्ने॒ वि य॑न्ति व॒निनो॒ न व॒याः।
श्रु॒ष्टी र॒यिर्वाजो॑ वृत्र॒तूर्ये॑ दि॒वो वृ॒ष्टिरीड्यो॑ री॒तिर॒पाम्॥ १॥

त्वत्। विश्वा॑। सु॒ऽभ॒ग॒। सौभ॑गानि। अग्ने॑। वि। य॒न्ति॒। व॒निनः॑। न। व॒याः। श्रु॒ष्टी। र॒यिः। वाजः॑। वृ॒त्र॒ऽतूर्ये॑। दि॒वः। वृ॒ष्टिः। ईड्यः॑। री॒तिः। अ॒पाम्॥ १॥

पदार्थः-(**त्वत्**) (**विश्वा**) सर्वाणि (**सुभग**) शोभनैश्वर्य्य (**सौभगानि**) सुभगानामैश्वर्य्याणां भावान् (**अग्ने**) वह्निरिव विद्वन् (**वि**) (**यन्ति**) प्राप्नुवन्ति (**वनिनः**) वनसम्बन्धिनः (**न**) इव (**वयाः**) पक्षिणः (**श्रुष्टी**) क्षिप्रम्। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। (**रयिः**) धनम् (**वाजः**) अन्नम् (**वृत्रतूर्य्ये**) वृत्रस्य मेघस्य तूर्य्यं हननं यत्र तद्वद्वर्त्तमाने स-ामे (**दिवः**) अन्तरिक्षात् (**वृष्टिः**) (**ईड्यः**) स्तोतुमर्हः (**रीतिः**) श्लिष्टो गन्ता गमयिता वा (**अपाम्**) जलानाम्॥ १॥

अन्वयः-हे सुभगाऽग्ने राजन्! वनिनो वया न जनास्त्वद्विश्वा सौभगानि वि यन्ति वृत्रतूर्य्ये दिवोऽपां वृष्टिरिव रीतिरीड्यो रयिर्वाजश्च श्रुष्टी यन्ति तस्माद्भवान्सत्कर्त्तव्यो भवति॥ १॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा सूर्योऽन्तरिक्षाद् वृष्टिं कृत्वा सर्वं जगत् तर्पयति तथैव राजा न्याययुक्तात्पुरुषार्थादैश्वर्याणि वर्धयित्वा प्रजाः सततं तर्पयेत्॥ १॥

पदार्थः-हे (**सुभग**) सुन्दर ऐश्वर्य्यवाले (**अग्ने**) अग्नि के सदृश विद्वज्जन वा राजन्! (**वनिनः**) वनसम्बन्धी (**वयाः**) पक्षी (**न**) जैसे वैसे जन (**त्वत्**) आप से (**विश्वा**) सम्पूर्ण (**सौभगानि**) ऐश्वर्यों के भावों को (**वि, यन्ति**) विशेष कर प्राप्त होते हैं (**वृत्रतूर्य्ये**) मेघ का हनन जिसमें उसके सदृश वर्त्तमान संग्राम में (**दिवः**) अन्तरिक्ष से (**अपाम्**) जलो की (**वृष्टिः**) वृष्टि के सदृश (**रीतिः**) श्लिष्ट जानने वा प्रकाश कराने वाला (**ईड्यः**) स्तुति करने योग्य (**रयिः**) धन और (**वाजः**) अन्न (**श्रुष्टी**) शीघ्र प्राप्त होते हैं, इससे आप सत्कार करने योग्य हैं॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे सूर्य्य अन्तरिक्ष से वृष्टि करके सम्पूर्ण जगत् को तृप्त करता है, वैसे ही राजा न्याय से युक्त पुरुषार्थ से ऐश्वर्य्यों को बढ़ा कर प्रजाओं को निरन्तर तृप्त करे॥ १॥

पुनर्विद्वद्भिरत्र कथं वर्त्तितव्यमित्याह॥

फिर विद्वानों को इस संसार में कैसा वर्त्ताव करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

त्वं भगो न आ हि रत्नमिषे परिज्मेव क्षयसि दस्मवर्चाः।
अग्ने मित्रो न बृहत ऋतस्यासि क्षत्ता वामस्य देव भूरेः॥२॥

त्वम्। भर्गः। नः। आ। हि। रत्नम्। इषे। परिज्माऽइव। क्षयसि। दस्मऽवर्चाः। अग्ने। मित्रः। न। बृहतः। ऋतस्य। असि। क्षत्ता। वामस्य। देव। भूरेः॥२॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**भगः**) भजनीयैश्वर्यः (**नः**) अस्मान् (**आ**) (**हि**) (**रत्नम्**) धनम् (**इषे**) प्राप्तुम् (**परिज्मेव**) परितः सर्वन्तो गन्ता वायुरिव (**क्षयसि**) निवससि निवासयसि वा (**दस्मवर्चाः**) दस्ममुपक्षयितं निवासयितं निवासितं वर्चो दीप्तिर्येन सः (**अग्ने**) पावक इव वर्त्तमान (**मित्रः**) सखा (**न**) इव (**बृहतः**) महतः (**ऋतस्य**) सत्यस्योदकस्य वा (**असि**) (**क्षत्ता**) छेदकः (**वामस्य**) प्रशस्यस्य (**देव**) दातर्विद्वन् (**भूरेः**) बहोः॥२॥

अन्वयः-हे देवाग्ने! यतस्त्वं मित्रो न बृहतो वामस्य भूरेर्ऋतस्य क्षत्ताऽसि तस्माद्दस्मवर्चाः स त्वं परिज्मेव भगः सन् नो हि रत्नमिष आ क्षयसि तस्मान्माननीयोऽसि॥२॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये विद्वांसः प्राणवद्धनैश्वर्य्यशोभां दधति ते मित्रवद्वर्त्तित्वा सर्वान्त्सुखयन्तु॥२॥

पदार्थः-हे (**देव**) देने वाले (**अग्ने**) अग्नि के समान वर्त्तमान विद्वन्! जिस कारण से (**त्वम्**) आप (**मित्रः**) (**न**) जैसे वैसे (**बृहतः**) बड़े (**वामस्य**) श्रेष्ठ (**भूरेः**) बहुत (**ऋतस्य**) सत्य वा जल के (**क्षत्ता**) छेदक (**असि**) हैं, इस कारण से (**दस्मवर्चाः**) उपक्षयित अर्थात् निवास कराई वा निवास की कान्ति जिन्होंने तथा (**परिज्मेव**) जो सब ओर से चलने वाले वायु के सदृश (**भगः**) सेवन करने योग्य ऐश्वर्य्य जिनका ऐसे हुए (**नः**) हम लोगों को (**हि**) जिस कारण से (**रत्नम्**) धन को (**इषे**) प्राप्त होने को (**आ**) सब ओर से (**क्षयसि**) निवास करते वा निवास कराते हो, इस कारण आदर करने योग्य हो॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो विद्वान् जन प्राणों के सदृश धन और ऐश्वर्य्य की शोभा को धारण करते हैं, वे मित्र के सदृश वर्त्ताव करके सब को सुखी करें॥२॥

पुनर्विद्वांसः कथं वर्त्तेरन्नित्याह॥

फिर विद्वान् जन कैसा वर्त्ताव करें, इस विषय को कहते हैं॥

स सत्पतिः शवसा हन्ति वृत्रमग्ने विप्रो वि पणेर्भर्ति वाजम्।
यं त्वं प्रचेत ऋतजात राया सजोषा नप्त्रापां हिनोषि॥३॥

सः। सत्ऽपतिः। शवसा। हन्ति। वृत्रम्। अग्ने। विप्रः। वि। पणेः। भर्ति। वाजम्। यम्। त्वम्। प्रऽचेतः। ऋतऽजात। राया। सजोषाः। नप्त्रा। अपाम्। हिनोषि॥३॥

पदार्थः-(**सः**) (**सत्पतिः**) सत उदकस्य पालकः। **सदित्युदकनाम।** (निघं०१.१२) (**शवसा**) बलेन (**हन्ति**) (**वृत्रम्**) मेघम् (**अग्ने**) प्रकाशस्वरूप (**विप्रः**) मेधावी (**वि**) (**पणेः**) व्यवहर्त्तुः (**भर्त्ति**) दधाति (**वाजम्**) अन्नं विज्ञानं वा (**यम्**) (**त्वम्**) (**प्रचेतः**) प्रकृष्टविज्ञान (**ऋतजात**) य ऋते सत्ये जायते तत्सम्बुद्धौ (**राया**) धनेन (**सजोषाः**) समानप्रीतिसेवी (**नप्त्रा**) यो न पतति तेन (**अपाम्**) जलानाम् (**हिनोषि**) वर्धयसि॥३॥

अन्वयः-हे ऋतजात प्रचेतरग्ने! विप्रस्त्वं यथा सत्पतिः सूर्य्यः शवसा वृत्रं हन्ति पणेर्वाजं वि भर्ति तथा यं त्वं सजोषा रायाऽपां नप्त्रा सह हिनोषि सोऽयं सर्वतो वर्धते॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मेधाविनः सूर्य्यवद्विद्यां प्रकाश्याविद्यां घ्नन्ति तेऽतुलं सुखं लभन्ते॥३॥

पदार्थः-हे (**ऋतजात**) सत्य में प्रकट होने वाले (**प्रचेतः**) अच्छे ज्ञान से युक्त (**अग्ने**) प्रकाशस्वरूप (**विप्रः**) बुद्धिमान् जन (**त्वम्**) आप जैसे (**सत्पतिः**) जल का पालक सूर्य्य (**शवसा**) बल से (**वृत्रम्**) मेघ का (**हन्ति**) नाश करता है और (**पणेः**) व्यवहारकर्त्ता के (**वाजम्**) अन्न वा विज्ञान को (**वि, भर्ति**) विशेष कर धारण करता है, वैसे (**यम्**) जिसको (**सजोषाः**) तुल्य प्रीति से सेवन करने वाले आप (**राया**) धन से (**अपाम्**) जलों के (**नप्त्रा**) नहीं गिरने वाले के साथ (**हिनोषि**) वृद्धि करे हो (**सः**) सो यह सब प्रकार से वृद्धि को प्राप्त होता है॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो बुद्धिमान् जन सूर्य्य के सदृश विद्या को प्रकाशित करके अविद्या का नाश करते हैं, वे अतुल सुख को प्राप्त होते हैं॥३॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

यस्ते॑ सूनो सहसो गी॒र्भिरु॒क्थैर्य॒ज्ञैर्मर्तो॒ निशि॑तिं वे॒द्यान॑ट्।
विश्वं॒ स दे॑व॒ प्रति॒ वार॑मग्ने धत्ते धा॒न्यं१॒॑ पत्य॑ते वस॒व्यैः॥४॥

यः। ते॒। सू॒नो॒ इति॑। स॒ह॒सः॒। गीः॒ऽभिः। उ॒क्थैः। य॒ज्ञैः। मर्तः॑। निऽशि॑तिम्। वे॒द्या। आन॑ट्। विश्व॑म्। सः। दे॒व॒। प्रति॑। वा॒। अर॑म्। अ॒ग्ने॒। ध॒त्ते॒। धा॒न्य॑म्। पत्य॑ते। व॒स॒व्यैः॑॥४॥

पदार्थः-(**यः**) (**ते**) तव (**सूनो**) (**सहसः**) बलिष्ठस्य (**गीर्भिः**) वाग्भिः (**उक्थैः**) वक्तुमर्हैर्वेदितव्यैर्वेदवचनैः (**यज्ञैः**) विद्वत्सत्कारादिभिः (**मर्त्तः**) मनुष्यः (**निशितिम्**) नितरां तीक्ष्णम् (**वेद्या**) सुखप्रापिकया (**आनट्**) व्याप्नोति (**विश्वम्**) समग्रम् (**सः**) सुख प्रदाता (**देव**) (**प्रति**) (**वा**) (**अरम्**) अलम् (**अग्ने**) अग्निवद्वर्त्तमान विद्वन् (**धत्ते**) (**धान्यम्**) (**पत्यते**) पतिरिवाचरति (**वसव्यैः**) वसुषु धनेषु भवैः॥४॥

अन्वयः-हे सहसस्सूनो देवाग्ने! ते यो मर्त्तो गीर्भिरुक्थैर्वेद्या निशितिमानट् वसव्यैर्यज्ञैर्विश्वं धान्यं वारं प्रति धत्ते पत्यते स त्वया सङ्गन्तव्यः॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्याः! पूर्णेन ब्रह्मचर्य्येण शरीरात्मबलमलं कृत्वा सन्तानोत्पत्तिं कुरुत॥४॥

पदार्थः-हे **(सहसः)** बलिष्ठ के **(सूनोः)** पुत्र **(देव)** दीप्तिमान् **(अग्ने)** अग्नि के समान वर्त्तमान विद्वन्! **(ते)** आप का **(यः)** जो **(मर्त्तः)** मनुष्य **(गीर्भिः)** वाणियों और **(उक्थैः)** कहने और जानने योग्य वेद के वचनों से और **(वेद्या)** सुख को प्राप्त कराने वाली वेदी से **(निशितिम्)** निरन्तर तीक्ष्णता के साथ **(आनट्)** व्याप्त होता है **(वसव्यैः)** धनों में प्रकट हुए पदार्थों के साथ **(यज्ञैः)** विद्वानों के सत्कारादिकों से **(विश्वम्)** समग्र पदार्थ को **(धान्यम्)** धान्य को **(वा)** वा **(अरम्)** पूर्ण **(प्रति, धत्ते)** धारण करता और **(पत्यते)** स्वामी के सदृश आचरण करता है **(सः)** वह आप से मेल करने योग्य है॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! पूर्ण ब्रह्मचर्य्य से शरीर और आत्मा के बल को पूर्ण करके सन्तानों की उत्पत्ति करो॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

ता नृभ्य॒ आ सौ॑श्रव॒सा सु॒वीराग्ने॑ सूनो सहसः पु॒ष्यसे॑ धाः।

कृ॒णोषि॒ यच्छव॑सा॒ भूरि॑ प॒श्वो वयो॒ वृका॑या॒रये॒ जसु॑रये॥५॥

ता। नृऽभ्यः॑। आ। सौ॒श्र॒व॒सा। सु॒ऽवीरा॑। अग्ने॑। सू॒नो॒ इति॑। स॒ह॒सः॒। पु॒ष्यसे॑। धाः॒। कृ॒णोषि॑। यत्। शव॑सा। भूरि॑। प॒श्वः। वयः॑। वृका॑य। अ॒रये॑। जसु॑रये॥५॥

पदार्थः-**(ता)** तानि **(नृभ्यः)** नायकेभ्यः **(आ)** **(सौश्रवसा)** सुश्रवसा विदुषा निर्वृत्तानि **(सुवीरा)** शोभना वीरा येभ्यस्तानि **(अग्ने)** पावकवद्वर्त्तमान **(सूनो)** बलवन् **(सहसः)** बलस्य **(पुष्यसे)** पुष्टये **(धाः)** दधासि **(कृणोषि)** **(यत्)** येन **(शवसा)** बलेन **(भूरि)** **(पश्वः)** पशोः **(वयः)** जीवनम् **(वृकाय)** वृकवद्वर्त्तमानाय **(अरये)** शत्रवे **(जसुरये)** हिंसकाय॥५॥

अन्वयः-हे सहसस्सूनोऽग्ने! त्वं यच्छवसा पुष्यसे नृभ्यस्सुवीरा ता सौश्रवसाऽऽधः पश्वो भूरि वयो कृणोषि जसुरये वृकायाऽरये दण्डं ददासि तस्मात्त्वं न्यायकार्य्यसि॥५॥

भावार्थः-यो नृपो दुष्टान् चोरादीन्निवार्य्य प्रजाः पुष्टाः करोति स सर्वहितैषी वर्त्तते॥५॥

पदार्थः-हे **(सहसः)** बल के सम्बन्ध में **(सूनो)** बलवान् सन्तान **(अग्ने)** अग्नि के समान वर्त्तमान आप **(यत्)** जिस **(शवसा)** बल से **(पुष्यसे)** पुष्टि के लिये **(नृभ्यः)** नायक जनों से **(सुवीरा)** सुन्दर वीर जिनके लिये **(ता)** उन **(सौश्रवसा)** विद्वान् से सिद्ध किये नये कर्म्मों को **(आ, धाः)** धारण करते **(पश्वः)** पशु के **(भूरि)** बड़े **(वयः)** जीवन को **(कृणोषि)** करते हो और **(जसुरये)** हिंसा करने वाले **(वृकाय)** वृक के सदृश वर्त्तमान **(अरये)** शत्रु के लिये दण्ड देते हो, इस कारण से आप न्यायकारी हो॥५॥

भावार्थ:-जो राजा दुष्ट चोरादिकों का निवारण करके प्रजाओं को पुष्ट करता है, वह सब का हितैषी होता है॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

वद्मा सूनो सहसो नो विहाया अग्ने तोकं तनयं वाजिनो दाः।
विश्वाभिर्गीर्भिरभि पूर्तिमश्यां मदेम शतहिमाः सुवीराः॥६॥१५॥

वद्मा। सूनो इति। सहसः। नः। विऽहायाः। अग्ने। तोकम्। तनयम्। वाजिनः। दाः। विश्वाभिः। गीःऽभिः। अभि। पूर्तिम्। अश्याम्। मदेम। शतऽहिमाः। सुऽवीराः॥६॥

पदार्थ:-**(वद्मा)** सत्यहितोपदेष्टा **(सूनो)** अपत्य **(सहसः)** बलिष्ठस्य **(नः)** **(विहायाः)** महान्। **विहायेति महन्नाम।** (निघं०३.३) **(अग्ने)** पावकवद्विद्वन् **(तोकम्)** वर्धकम् **(तनयम्)** सुखविस्तारकमपत्यम् **(वाजिनः)** अन्नादियुक्तस्य **(दाः)** देहि **(विश्वाभिः)** समग्राभिः **(गीर्भिः)** वाग्भिः **(अभि)** सर्वतः **(पूर्त्तिम्)** **(अश्याम्)** प्राप्नुयाम् **(मदेम)** आनन्देम **(शतहिमाः)** शतायुषः **(सुवीराः)** उत्तमवीरवन्तः॥६॥

अन्वयः-हे सहसस्सूनोऽग्ने! विहाया वद्मा त्वं नो विश्वाभिर्गीर्भिर्वाजिनस्तोकं तनयं दाः। येनाहं पूर्तिमश्यां यतो वयं शतहिमाः सुवीरा अभि मदेम॥६॥

भावार्थ:-हे विद्वांसोऽध्यापनोदेशाभ्यां सर्वेषां गृहस्थानां पुत्रान् पुत्रीश्च सुशिक्ष्य विद्यया सुखयुक्तान् कुर्वन्तु येन दीर्घायुषो भूत्वैतेऽप्येवमेवाऽऽचरेयुरिति॥६॥

अत्राग्निविद्वद्राजगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति त्रयोदशं सूक्तं पञ्चदशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थ:-हे **(सहसः)** बलिष्ठ के **(सूनो)** सन्तान **(अग्ने)** अग्नि के सदृश विद्वन्! **(विहायाः)** बड़े **(वद्मा)** सत्य हित के उपदेष्टा आप **(नः)** हम को **(विश्वाभिः)** संपूर्ण **(गीर्भिः)** वाणियों से **(वाजिनः)** अन्न आदि युक्त के **(तोकम्)** वृद्धि करने और **(तनयम्)** सुख के बढ़ाने वाले के अपत्य को **(दाः)** दीजिये जिससे मैं **(पूर्तिम्)** पूर्णता को **(अश्याम्)** प्राप्त होऊँ और जिससे हम लोग **(शतहिमाः)** सौ वर्ष की अवस्था युक्त **(सुवीराः)** उत्तम वीरों वाले **(अभि, मदेम)** सब ओर से आनन्द करें॥६॥

भावार्थ:-हे विद्वान् जनो! आप अध्यापन और उपदेश से सम्पूर्ण गृहस्थों के पुत्र और पुत्रियों को उत्तम प्रकार शिक्षित करके विद्या से सुखयुक्त करो, जिससे दीर्घ अवस्थावाले होकर ये सन्तान भी ऐसा ही आचरण करें॥६॥

इस सूक्त में अग्नि, विद्वान् और राजा के गुणों का वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह तेरहवाँ सूक्त और पन्द्रहवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ षड्चस्य चतुर्दशस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। अग्निर्देवता। १, ३ भुरिगुष्णिक् छन्दः। ऋषभः स्वरः। २ निचृदनुष्टुप्। ४ अनुष्टुप्। ५ विराडनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः। ६ भुरिगतिजगती छन्दः। निषादः स्वरः॥

अथ मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

अब: छः ऋचावाले चौदहवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में अब मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

अ॒ग्ना यो मर्त्यो॒ दुवो॒ धियं॑ जु॒जोष॑ धी॒तिभिः॑।

भस॒न्नु ष प्र पू॒र्व्य इषं॑ वुरी॒ताव॑से॥ १॥

अ॒ग्ना। यः। मर्त्यः॑। दुवः॑। धियं॑म्। जु॒जोष॑। धी॒तिऽभिः॑। भस॑त्। नु। सः। प्र। पू॒र्व्यः। इषं॑म्। वु॒री॒त। अव॑से॥ १॥

पदार्थः-(**अग्ना**) अग्नौ (**यः**) (**मर्त्यः**) मनुष्यः (**दुवः**) परिचरणम् (**धियम्**) प्रज्ञां कर्म वा (**जुजोष**) (**धीतिभिः**) अङ्गुल्याद्यवयैः (**भसत्**) प्रकाशेत (**नु**) सद्यः (**सः**) (**प्र**) (**पूर्व्यः**) पूर्वैर्निष्पादितः (**इषम्**) अन्नं विज्ञानं वा (**वुरीत**) स्वीकुर्य्यात् (**अवसे**) रक्षणाद्याय॥१॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यो मर्त्यो धीतिभिरग्ना दुवो धियं जुजोषाऽवसे पूर्व्यः प्र भसदिषं नु वुरीत स भाग्यशाली भवति॥१॥

भावार्थः-ये मनुष्या आलस्यादिदोषान् विहाय धर्मेण पुरुषार्थं कुर्वन्ति ते सर्वमिष्टं सुखं लभन्ते॥१॥

पदार्थः-हे विद्वान् जनो! (**यः**) जो (**मर्त्यः**) मनुष्य (**धीतिभिः**) अंगुली आदि अवयवों से (**अग्ना**) अग्नि में (**दुवः**) सेवन और (**धियम्**) बुद्धि वा कर्म्म का (**जुजोष**) सेवन करता है और (**अवसे**) रक्षण आदि के लिये (**पूर्व्यः**) पूर्वजनों से प्रकाशित किया गया (**प्र, भसत्**) प्रकाशित होवे और (**इषम्**) अन्न वा विज्ञान की (**नु**) शीघ्र (**वुरीत**) स्वीकार करे (**सः**) वह भाग्यशाली होता है॥१॥

भावार्थः-जो मनुष्य आलस्य आदि दोषों का त्याग कर धर्म्म से पुरुषार्थ करते हैं, वे सम्पूर्ण इष्ट सुख को प्राप्त होते हैं॥१॥

अथ मनुष्याः किं कुर्वन्तीत्याह॥

अब मनुष्या क्या करते हैं, इस विषय को कहते हैं॥

अ॒ग्निरिद्धि प्रचे॑ता अ॒ग्निर्वे॒धस्त॑म॒ ऋषिः॑।

अ॒ग्निं होता॑रमीळते य॒ज्ञेषु॒ मनु॑षो॒ विशः॑॥ २॥

अ॒ग्निः। इत्। हि। प्रऽचे॑ताः। अ॒ग्निः। वे॒धःऽत॑मः। ऋषि॑ः। अ॒ग्निम्। होता॑रम्। ई॒ळ॒ते॒। य॒ज्ञेषु॑। मनु॑षः। विश॑ः॥ २॥

पदार्थः-(**अग्निः**) विद्युदिव (**इत्**) एव (**हि**) (**प्रचेताः**) प्रज्ञापकः (**अग्नि**) पवित्रः (**वेधस्तमः**) विद्वत्तमः (**ऋषिः**) मन्त्रार्थवेत्ता (**अग्निम्**) परमात्मानम् (**होतारम्**) सर्वस्य धर्त्तारं दातारं वा (**ईळते**) स्तुवन्ति (**यज्ञेषु**) सन्ध्योपासनादिषु सत्कर्मसु (**मनुषः**) मननशीलाः (**विशः**) मनुष्याः। **विश इति मनुष्यनाम।** (निघं०२.३)॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यं होतारमग्निं प्रचेता अग्निर्वेधस्तमोऽग्निर्ऋषिर्मनुषो विशश्च यज्ञेष्वीळते तमिद्धि यूयं प्रशंसत॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्या! सर्वेषां युष्माकं परमेश्वर एव स्तोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्य उपासनीयोऽस्तीति सर्वे निश्चिन्वन्तु॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जिस (**होतारम्**) सब को धारण करने वा देनेवाले (**अग्निम्**) परमात्मा को (**प्रचेताः**) जानने वाला (**अग्निः**) बिजुली जैसे वैसे (**वेधस्तमः**) अतीव विद्वान् (**अग्निः**) पवित्र (**ऋषिः**) मन्त्र और अर्थों को जानने वाला और (**मनुषः**) विचार करने वाले (**विशः**) मनुष्य (**यज्ञेषु**) सन्ध्योपासन आदि श्रेष्ठ कर्म्मों में (**ईळते**) स्तुति करते हैं उस (**इत्**) ही की (**हि**) निश्चित आप लोग प्रशंसा करो॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! सब आप लोगों का परमेश्वर ही स्तुति करने, मानने, हृदय में धारण करने और उपासना करने योग्य है, ऐसा सब लोग निश्चय करो॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

नाना॒ ह्य१॑ग्नेऽव॑से॒ स्पर्ध॑न्ते॒ रायो॑ अ॒र्यः।
तूर्व॑न्तो॒ दस्यु॑मा॒यवो॑ व्र॒तैः सीक्ष॑न्तो अव्र॒तम्॥ ३॥

नाना॑। हि। अ॒ग्ने॒। अव॑से। स्पर्ध॑न्ते। राय॑ः। अ॒र्यः। तूर्व॑न्तः। दस्यु॑म्। आ॒यव॑ः। व्र॒तैः। सीक्ष॑न्तः। अ॒व्र॒तम्॥ ३॥

पदार्थः-(**नाना**) अनेके (**हि**) खलु (**अग्ने**) विद्वन् (**अवसे**) रक्षणाद्याय (**स्पर्धन्ते**) परोत्कर्षं न सहन्ते (**रायः**) धनस्य (**अर्य्यः**) स्वामी (**तूर्वन्तः**) हिंसन्तः (**दस्युम्**) दुष्टम् (**आयवः**) मनुष्याः (**व्रतैः**) कर्मभिः (**सीक्षन्तः**) सोढुमिच्छन्तः (**अव्रतम्**) धर्म्यकर्म्मरहितम्॥ ३॥

अन्वयः-हे अग्ने! ये हि नानाऽव्रतं दस्युं तूर्वन्तो व्रतैः सीक्षन्त आयवोऽवसे स्पर्धन्ते तान् रायोऽर्य्यः स्वामी सत्कुर्य्यात्॥ ३॥

भावार्थः-ये दुष्टानां निवारणे प्रयतन्ते ते मनुष्याः श्रीपतयो भवन्ति॥ ३॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्वन्! जो **(हि)** निश्चय **(नाना)** अनेक **(अव्रतम्)** धर्म्मयुक्त कर्म्म से रहित **(दस्युम्)** दुष्ट जन की **(तूर्वन्तः)** हिंसा करते और **(व्रतैः)** कर्म्मों से **(सीक्षन्तः)** सहने की इच्छा करते हुए **(आयवः)** मनुष्य **(अवसे)** रक्षण आदि के लिये **(स्पर्धन्ते)** दूसरे की बड़ाई को नहीं सहते हैं, उनके **(रायः)** धन का **(अर्य्यः)** स्वामी सत्कार करे॥३॥

भावार्थः-जो दुष्टों के निवारण में प्रयत्न करते हैं, वे मनुष्य धनवान् होते हैं॥३॥

पुनरुत्तमो मनुष्यः किं करोतीत्याह॥

फिर उत्तम मनुष्य क्या करता है, इस विषय को कहते हैं॥

अ॒ग्निर॒प्सामृ॑ती॒षहं॑ वी॒रं द॑दाति॒ सत्प॑तिम्।

यस्य॒ त्रस॑न्ति॒ शव॑सः सं॒चक्षि॒ शत्र॑वो भि॒या॥४॥

अ॒ग्निः। अ॒प्साम्। ऋ॒ति॒ऽसह॑म्। वी॒रम्। द॒दा॒ति॒। सत्ऽप॑तिम्। यस्य॑। त्रस॑न्ति। शव॑सः। स॒म्ऽचक्षि॑। शत्र॑वः। भि॒या॥४॥

पदार्थः-**(अग्निः)** महाबलिष्ठो वीरपुरुषः **(अप्साम्)** सत्कर्म्मणां विभक्तारम् **(ऋतीषहम्)** य ऋतीन् परपदार्थप्रापकाञ्छत्रून्त्सहते। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(वीरम्)** शूरपुरुषम् **(ददाति)** **(सत्पतिम्)** सतां पालकम् **(यस्य)** **(त्रसन्ति)** उद्विजन्ति **(शवसः)** बलात् **(सञ्चक्षि)** समक्षे **(शत्रवः)** **(भिया)** भयेन॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यस्य शवसः सञ्चक्षि भिया शत्रवस्त्रसन्ति सोऽग्निरप्सामृतीषहं सत्पतिं वीरं ददाति॥४॥

भावार्थः-ये ब्रह्मचारिणो जितेन्द्रिया विद्वांसो भूत्वा शरीरात्मसामर्थ्यं नापनयन्ति तेभ्योऽरयो भीत्वा पलायन्तेऽथवा वशमाप्नुवन्ति॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यस्य)** जिसके **(शवसः)** बल से **(सञ्चक्षि)** सम्मुख **(भिया)** भय से **(शत्रवः)** शत्रुजन **(त्रसन्ति)** व्याकुल होते हैं वह **(अग्निः)** बड़ा बलिष्ठ वीर पुरुष **(अप्साम्)** श्रेष्ठ कर्म्मों के विभाग करने और **(ऋतीषहम्)** दूसरे के पदार्थों के प्राप्त कराने वाले शत्रुओं को सहनकर्त्ता **(सत्पतिम्)** श्रेष्ठों के पालक **(वीरम्)** वीर पुरुष को **(ददाति)** देता है॥४॥

भावार्थः-जो ब्रह्मचारी जितेन्द्रिय और विद्वान् होकर शरीर और आत्मा के सामर्थ्य को नहीं दूर करते हैं, उनसे शत्रुजन डर के भागते हैं अथवा वश को प्राप्त होते हैं॥४॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

अ॒ग्निर्हि वि॒द्मना॑ नि॒दो दे॒वो मर्त॑मुरु॒ष्यति॑।

स॒हावा॒ यस्यावृ॑तो र॒यिर्वाजे॒ष्ववृ॑तः॥५॥

अग्निः। हि। विद्मना। निदः। देवः। मर्तम्। उरुष्यति। सहऽवा। यस्य। अवृतः। रयिः। वाजेषु। अवृतः॥५॥

पदार्थः-(**अग्निः**) पावक इव पवित्रोपचितो मुनिः (**हि**) यतः (**विद्मना**) ज्ञानेन (**निदः**) निन्दकान् (**देवः**) देदीप्यमानः (**मर्त्तम्**) मनुष्यम् (**उरुष्यति**) सेवते (**सहावा**) यः सहते सः (**यस्य**) (**अवृतः**) अस्वीकृतः (**रयिः**) धनम् (**वाजेषु**) स- ग्रमेषु (**अवृतः**) अनाच्छादितः॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! योऽवृतस्सहावा देवोऽग्निर्मर्त्तमुरुष्यति तं हि विद्मना विजानन्तु यस्य वाजेष्ववृतो रयिर्भवति तेन निदो निवारयन्तु॥५॥

भावार्थः-सर्वान् पदार्थान्त्सवन्तीं विद्युतं मनुष्या जानन्तु यद्विज्ञानेनाग्नेयादीन्यस्त्राणि सिद्ध्यन्ति तत्सर्वदाऽन्विष्यध्वम्॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**अवृतः**) नहीं स्वीकार किया गया (**सहावा**) सहने वाला (**देवः**) निरन्तर प्रकाशमान (**अग्निः**) अग्नि के सदृश पवित्रों से बढ़ा हुआ मुनि (**मर्त्तम्**) मनुष्य को (**उरुष्यति**) सेवता है उसको (**हि**) जिससे (**विद्मना**) ज्ञान से विशेष करके जानें और (**यस्य**) जिसके (**वाजेषु**) स- ग्रमों में (**अवृतः**) नहीं आच्छादित किया गया (**रयिः**) धन होता है, उससे (**निदः**) निन्दा करने वालों का निवारण कीजिये॥५॥

भावार्थः-सब पदार्थों को उत्पन्न करती हुई बिजुली को मनुष्य जानें, जिस विज्ञान से आग्नेयादि नामक अस्त्र सिद्ध होते हैं, उसका सब काल में खोज करो॥५॥

पुनर्विद्वद्भिः प्रत्यहं किं करणीयमित्याह॥

फिर विद्वानों को प्रतिदिन क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

अच्छा नो मित्रमहो देव देवानग्ने वोचः सुमतिं रोदस्योः। वीहि स्वस्तिं सुक्षितिं दिवो नॄन् द्विषो अंहांसि दुरिता तरेम ता तरेम तवावसा तरेम॥६॥१६॥

अच्छ। नः। मित्रऽमहः। देव। देवान्। अग्ने। वोचः। सुऽमतिम्। रोदस्योः। वीहि। स्वस्तिम्। सुऽक्षितिम्। दिवः। नॄन्। द्विषः। अंहांसि। दुःऽइता। तरेम। ता। तरेम। तव। अवसा। तरेम॥६॥

पदार्थः-(**अच्छा**) सम्यक्। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**नः**) अस्मान् (**मित्रमहः**) मित्रैः पूजनीय (**देव**) सुखदातः (**देवान्**) विदुषः (**अग्ने**) पावक इव प्रकाशमान विद्वन् (**वोचः**) ब्रूहि (**सुमतिम्**) शोभनां प्रज्ञाम् (**रोदस्योः**) अग्निपृथिव्योः (**वीहि**) व्याप्नुहि (**स्वस्तिम्**) सुखम् (**सुक्षितिम्**) शोभना क्षितिर्भूमिर्यस्यां ताम् (**दिवः**) कामयामानान् (**नॄन्**) मनुष्यान् (**द्विषः**) द्वेष्टॄन् (**अंहांसि**) पापानि (**दुरिता**) दुष्टाचरणानि दुर्व्यसनानि (**तरेम**) उल्लङ्घेम (**ता**) तानि निन्दादीनि (**तरेम**) (**तव**) (**अवसा**) रक्षणाद्येन (**तरेम**)॥६॥

अन्वयः-हे मित्रमहो देवाऽग्ने! त्वं नो देवान् रोदस्योः सुमतिमच्छा वोचः सुक्षितिं स्वस्तिं वीहि दिवो नॄन् पदार्थविद्यां ब्रूहि यतस्तवाऽवसा द्विषोंऽहांसि दुरिता तरेम ता तरेम कुसङ्गदोषांश्च तरेम॥६॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! यावतीं विद्यां यूयं प्राप्नुयात तावतीमन्येभ्यो यथावदुपदिशत सत्योपदेशेन मनुष्याणां दुर्व्यसनानि दूरीकुरुत स्वयमधर्म्माचरणात् पृथग्वर्त्तध्वं सत्सङ्गेन पुरुषार्थेन च शुद्धा भूत्वा दुःखानि तीर्त्वा सुखमाप्नुतेति॥६॥

अत्राऽग्निविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति चतुर्दशं सूक्तं षोडशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(मित्रमहः)** मित्रों से आदर करने योग्य **(देव)** सुख के देनेवाले **(अग्ने)** अग्नि के सदृश विद्या के प्रकाश से युक्त विद्वन्! आप **(नः)** हम लोगों **(देवान्)** विद्वानों को तथा **(रोदस्योः)** अग्नि और पृथिवी सम्बन्धिनी **(सुमतिम्)** उत्तम बुद्धि को **(अच्छा)** उत्तम प्रकार **(वोचः)** कहिये **(सुक्षितिम्)** उत्तम भूमि जिसमें उस **(स्वस्तिम्)** सुख को **(वीहि)** प्राप्त हूजिये और **(दिवः)** कामना करते हुए **(नॄन्)** मनुष्यों से पदार्थविद्या को कहिये जिससे **(तव)** आपके **(अवसा)** रक्षण आदि से **(द्विषः)** द्वेष से युक्त जनों **(अंहांसि)** पापों और **(दुरिता)** दुष्ट आचरणों दुर्व्यसनों का **(तरेम)** उल्लङ्घन करें तथा **(ता)** उन निन्दादिकों का **(तरेम)** उल्लंघन करें और कुसङ्ग से हुए दोषों का **(तरेम)** उल्लङ्घन करें॥६॥

भावार्थः-हे विद्वान् जनो! जितनी विद्या को आप लोग प्राप्त होओ उतनी का अन्य जनों के लिये यथावत् उपदेश करो और सत्य उपदेश से मनुष्यों के दुष्ट व्यसनों को दूर करो और आप अधर्म्म के आचरण से पृथक् वर्त्ताव करो और सत्संग तथा पुरुषार्थ से शुद्ध होकर दुःखों से पार होकर सुख को प्राप्त होओ॥६॥

इस सूक्त में अग्नि और विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह चौदहवाँ सूक्त और सोलहवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथैकोनविंशत्यृचस्य पञ्चदशस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्यो वीतहव्यो वा ऋषिः। अग्निर्देवता। १, ८ विराड्जगती छन्दः। २, ५, ९ निचृज्जगती। ३ निचृदतिजगती। ७ जगती। निषादः स्वरः। ४, १४ भुरिक् त्रिष्टुप्। १०, ११, १६ निचृत् त्रिष्टुप्। १३ विराट् त्रिष्टुप्। १९ त्रिष्टुप्। धैवतः स्वरः। ६ निचृदतिशक्वरी छन्दः। १२ पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। १५ ब्राह्मी बृहती छन्दः। मध्यमः स्वरः। १७ विराडनुष्टुप्। १८ स्वराडनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः॥

अथ मनुष्यैः किं वेदितव्यमित्याह॥

अब उन्नीस ऋचावाले सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में अब मनुष्यों को क्या जानना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

इ॒मम्ू॒ षु वो॒ अति॑थिमुष॒र्बुधं॒ विश्वा॑सां वि॒शां पति॑मृञ्जसे गि॒रा।
वेती॒द्दि॒वो ज॒नुषा॒ कच्चि॒दा शुचि॒र्ज्योक् चि॑दत्ति॒ गर्भो॒ यदच्यु॑तम्॥ १॥

इ॒मम्। ऊँ इति॑। सु। व॒ः। अति॑थिम्। उ॒ष॒:ऽबुध॑म्। विश्वा॑साम्। वि॒शाम्। पति॑म्। ऋ॒ञ्ज॒से॒। गि॒रा। वेति॑। इत्। दि॒वः। ज॒नुषा॑। कत्। चि॒त्। आ। शुचि॑ः। ज्योक्। चि॒त्। अ॒त्ति॒। गर्भ॑ः। यत्। अच्यु॑तम्॥ १॥

पदार्थः-(इमम्) (उ) वितर्के **(सु)** शोभने **(वः)** युष्माकम् **(अतिथिम्)** अतिथिमिव वर्त्तमानम् **(उषर्बुधम्)** य उषसि बोधयति तम् **(विश्वासाम्)** सर्वासाम् **(विशाम्)** मनुष्यादिप्रजानाम् **(पतिम्)** पालकम् **(ऋञ्जसे)** प्रसाध्नोषि **(गिरा)** वाचा **(वेति)** व्याप्नोति **(इत्)** एव **(दिवः)** दिवसस्य पदार्थबोधस्य **(जनुषा)** जन्मना **(कत्)** कदापि **(चित्)** अपि **(आ)** **(शुचिः)** पवित्रः **(ज्योक्)** निरन्तरम् **(चित्)** अपि **(अत्ति)** भुङ्क्ते **(गर्भः)** अन्तःस्थ **(यत्)** **(अच्युतम्)** नाशरहितम्॥१॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यतस्त्वमिमं विश्वासां विशां पतिमतिथिमुषर्बुधमृञ्जसे गर्भ इव य उ दिवो जनुषा सु वेतीत् कच्चिद्यच्छुचिरच्युतं वस्तु ज्योगत्ति वो गिरा चिदाऽऽजानाति स विद्वान् भवति॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथाऽतिथिः पूजनीयोऽस्ति तथैव पदार्थविद्यावित्सत्कर्त्तव्योऽस्ति ये सर्वान्तःस्थं नित्यं विद्युज्ज्योतिर्जानन्ति तेऽभीप्सितं सुखं लभन्ते॥१॥

पदार्थः-हे विद्वन्! जिस कारण से आप **(इमम्)** इस **(विश्वासाम्)** सम्पूर्ण **(विशाम्)** मनुष्य आदि प्रजाओं के **(पतिम्)** पालक **(अतिथिम्)** अतिथि के समान वर्त्तमान **(उषर्बुधम्)** प्रातःकाल में जगानेवाले को **(ऋञ्जसे)** सिद्ध करते हैं **(गर्भः)** अन्तःस्थ के समान जो **(उ)** तर्कनासहित **(दिवः)** पदार्थबोध की **(जनुषा)** उत्पत्ति से **(सु, वेति)** अच्छे प्रकार व्याप्त होता **(इत्)** ही है तथा **(कत्)** कभी **(चित्)** भी **(यत्)** जो **(शुचिः)** पवित्र **(अच्युतम्)** नाश से रहित वस्तु को **(ज्योक्)** निरन्तर **(अत्ति)** भोगता है और **(वः)** आप लोगों की **(गिरा)** वाणी से **(चित्)** निश्चित **(आ)** आज्ञा करता है, वह विद्वान् होता है॥१॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जैसे अतिथि सत्कार करने योग्य है, वैसे ही पदार्थविद्या का जानने वाला सत्कार करने योग्य है, जो सब के अन्त:स्थ नित्य बिजुली की ज्योति को जानते हैं, वे अभीप्सित सुख को प्राप्त होते हैं॥१॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

मित्रं न यं सुधितं भृगवो दुधुर्वनस्पतावीड्यमूर्ध्वशोचिषम्।
स त्वं सुप्रीतो वीतहव्ये अद्भुत प्रशस्तिभिर्महयसे दिवेदिवे॥२॥

मित्रम्। न। यम्। सुऽधितम्। भृगवः। दधुः। वनस्पतौ। ईड्यम्। ऊर्ध्वऽशोचिषम्। सः। त्वम्। सुःऽप्रीतः। वीतऽहव्ये। अद्भुत। प्रशस्तिऽभिः। महयसे। दिवेऽदिवे॥२॥

पदार्थ:-**(मित्रम्)** सखायम् **(न)** इव **(यम्)** **(सुधितम्)** सुष्ठु स्थितम् **(भृगवः)** विद्वांसो मनुष्याः **(दधुः)** दधति **(वनस्पतौ)** वनानां किरणानां पालके सूर्ये **(ईड्यम्)** उत्तमैर्गुणैः प्रशंसनीयम् **(ऊर्ध्वशोचिषम्)** ऊर्ध्वज्वालम् **(सः)** **(त्वम्)** **(सुप्रीतः)** सुष्ठु प्रसन्नः **(वीतहव्ये)** वीतं व्याप्तं ग्रहीतव्यं वस्तु येन तस्मिन् **(अद्भुत)** महाशय। **अद्भुतमिति महन्नाम।** (निघं०३.३) **(प्रशस्तिभिः)** प्रशंसनीयाभिर्धर्म्याभिः क्रियाभिः **(महयसे)** सत्क्रियसे **(दिवेदिवे)** प्रतिदिनम्॥२॥

अन्वय:-हे अद्भुत! यं मित्रं न सुधितं वनस्पतावीड्यमूर्ध्वशोचिषं भृगवो दधुः स त्वं प्रशस्तिभिर्दिवेदिवे सुप्रीतः सन् वीतहव्ये महयसे तस्मात्सेवनीयोऽसि॥२॥

भावार्थ:-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा सखा कार्य्याणि साध्नोति तथैवाग्निः सुसम्प्रयुक्तः कार्य्याणि साध्नोति॥२॥

पदार्थ:-हे **(अद्भुत)** महाशय! **(यम्)** जिस **(मित्रम्)** मित्र को **(न)** जैसे वैसे **(सुधितम्)** उत्तम प्रकार स्थित को **(वनस्पतौ)** किरणों के पालक सूर्य्य में **(ईड्यम्)** उत्तम गुणों से प्रशंसा करने योग्य **(ऊर्ध्वशोचिषम्)** ऊपर को ज्वाला जिसकी उसको **(भृगवः)** विद्वान् मनुष्य **(दधुः)** धारण करते हैं **(सः)** वह **(त्वम्)** आप **(प्रशस्तिभिः)** प्रशंसा करने योग्य धर्म्मयुक्त क्रियाओं से **(दिवेदिवे)** प्रतिदिन **(सुप्रीतः)** उत्तम प्रकार प्रसन्न हुए **(वीतहव्ये)** व्याप्त हुआ ग्रहण करने योग्य वस्तु जिससे उसमें **(महयसे)** सत्कार किये जाते हो, इससे सेवन करने योग्य हो॥२॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे मित्र कार्य्यों को सिद्ध करता है, वैसे ही अग्नि उत्तम प्रकार प्रयोग किया कार्य्यों को सिद्ध करता है॥२॥

पुनर्मनुष्याः कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर मनुष्य कैसे होवैं, इस विषय को कहते हैं॥

स त्वं दक्षस्यावृको वृधो भूरर्यः परस्यान्तरस्य तरुषः।

राय: सूनो सहसो मर्त्येष्वा छर्दिर्यच्छ वीतहव्याय सप्रथो भरद्वाजाय सप्रथ:॥३॥

स:। त्वम्। दक्षस्य। अवृक:। वृध:। भू:। अर्य:। परस्य। अन्तरस्य। तरुष:। राय:। सूनो इति। सहस:। मर्त्येषु। आ। छर्दि:। यच्छ। वीतऽहव्याय। सऽप्रथ:। भरत्ऽवाजाय। सऽप्रथ:॥३॥

पदार्थ:-(**स:**) (**त्वम्**) (**दक्षस्य**) बलस्य (**अवृक:**) अस्तेन: (**वृध:**) वर्धक: (**भू:**) भवे: (**अर्य:**) स्वामी (**परस्य**) प्रकृष्टस्य (**अन्तरस्य**) भिन्नस्य (**तरुष:**) तारकस्य (**राय:**) धनस्य (**सूनो**) अपत्य (**सहस:**) बलवत: (**मर्त्येषु**) मनुष्येषु (**आ**) समन्तात् (**छर्दि:**) गृहम् (**यच्छ**) देहि (**वीतहव्याय**) प्राप्तप्राप्तव्याय (**सप्रथ:**) समानप्रख्याति: (**भरद्वाजाय**) धृतविज्ञानाय (**सप्रथ:**) विस्तृतविज्ञानेन सहित:॥३॥

अन्वय:-हे सहसस्सूनो! यस्त्वं दक्षस्यावृको वृध: परस्यान्तरस्य तरुषो रायोऽर्यो मर्त्येषु सप्रथो वीतहव्याय भरद्वाजाय दाता भू: स सप्रथस्त्वं छर्दिराऽऽयच्छ॥३॥

भावार्थ:-यदि मनुष्या: सर्वतो बलं वर्धयेयुस्तर्हि श्रीमन्त: कथं न स्यु:॥३॥

पदार्थ:-हे (**सहस:**) बलवान् के (**सूनो**) सन्तान! जो (**त्वम्**) आप (**दक्षस्य**) बल के (**अवृक:**) नहीं चोर (**वृध:**) बढ़ाने वाले (**परस्य**) अत्यन्त (**अन्तरस्य**) भिन्न (**तरुष:**) तारने वाले (**राय:**) धन के (**अर्य:**) स्वामी (**मर्त्येषु**) मनुष्यों में (**सप्रथ:**) तुल्य प्रसिद्धि वाले (**वीतहव्याय**) प्राप्त हुआ प्राप्त होने योग्य जिसको उस (**भरद्वाजाय**) धारण किया विज्ञान जिसने उसके लिये दाता (**भू:**) होओ (**स:**) वह (**सप्रथ:**) विस्तृत विज्ञान के सहित आप (**छर्दि:**) गृह को (**आ, यच्छ**) आदान कीजिये अर्थात् लीजिये॥३॥

भावार्थ:-जो मनुष्य सब प्रकार से बल के वृद्धि करें तो लक्ष्मीयुक्त कैसे न हों॥३॥

पुनर्मनुष्यै: किं ज्ञातव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या जानना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

द्युतानं वो अतिथिं स्वर्णरमग्निं होतारं मनुष: स्वध्वरम्।
विप्रं न द्युक्षवचसं सुवृक्तिभिर्हव्यवाहमरतिं देवमृञ्जसे॥४॥

द्युतानम्। व:। अतिथिम्। स्व:ऽनरम्। अग्निम्। होतारम्। मनुष:। सुऽअध्वरम्। विप्रम्। न। द्युक्षऽवचसम्। सुवृक्तिऽभि:। हव्यऽवाहम्। अरतिम्। देवम्। ऋञ्जसे॥४॥

पदार्थ:-(**द्युतानम्**) सत्यार्थद्योतकम् (**व:**) युष्माकम् (**अतिथिम्**) अतिथिमिव (**स्वर्णरम्**) य: स्व: सुखं नयति तम् (**अग्निम्**) पावकम् (**होतारम्**) आदातारम् (**मनुष:**) मनुष्यस्य (**स्वध्वरम्**) सुष्ठ्वध्वरा यस्मात्तम् (**विप्रम्**) मेधाविनम् (**न**) इव (**द्युक्षवचसम्**) द्योतकवचनस्य प्रकाशकम् (**सुवृक्तिभि:**) सुष्ठु व्रजन्ति याभि: क्रियाभिस्ताभिस्सहितम् (**हव्यवाहम्**) धर्त्तव्यवाहकम् (**अरतिम्**) प्रापकम् (**देवम्**) द्योतमानम् (**ऋञ्जसे**) प्रसाध्नोषि॥४॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यस्त्वं वो युष्माकमतिथिमिव द्युतानं स्वर्णरं मनुषो होतारं स्वध्वरमग्निं सुवृक्तिभिर्न द्युक्षवचसं हव्यवाहमरतिं देवं विप्रं न ऋञ्जसे तं वयं सत्कुर्य्याम॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा विपश्चिद्यथायोग्यानि कार्य्याणि कर्तुं शक्नोति तथैव युक्त्या सम्प्रयुक्तोऽग्निः सर्वं व्यापारं साद्धुं शक्नोति॥४॥

पदार्थः-हे विद्वन्! जो आप **(वः)** आप लोगों के **(अतिथिम्)** अतिथि के समान **(द्युतानम्)** सत्यार्थ के प्रकाशक **(स्वर्णरम्)** सुख को प्राप्त कराने और **(मनुषः)** मनुष्य के **(होतारम्)** ग्रहण करने वाले **(स्वध्वरम्)** उत्तम प्रकार यज्ञ जिससे उस **(अग्निम्)** अग्नि को **(सुवृक्तिभिः)** अच्छे प्रकार चलते हैं जिन क्रियाओं से उनके सहित जैसे वैसे **(द्युक्षवचसम्)** द्योतकवचन के प्रकाशक **(हव्यवाहम्)** धारण करने योग्य को वहन करने और **(अरतिम्)** प्राप्ति कराने वाले **(देवम्)** प्रकाशमान **(विप्रम्)** बुद्धिमान् को **(न)** जैसे वैसे **(ऋञ्जसे)** सिद्ध करते हो उसका हम लोग सत्कार करें॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे बुद्धिमान् जन यथायोग्य कर्म्मों को करने को समर्थ होता है, वैसे ही युक्ति से अच्छे प्रकार प्रयोग किया अग्नि सम्पूर्ण व्यापार सिद्ध करने को समर्थ होता है॥४॥

पुनर्मनुष्यैः किं प्रकाशनीयमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या प्रकाशित करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

पावकया यश्चितयन्त्या कृपा क्षामन् रुरुच उषसो न भानुना।

तूर्वन्न यामन्नेतशस्य नू रण आ यो घृणे न ततृषाणो अजरः॥५॥१७॥

पावकया। यः। चितयन्त्या। कृपा। क्षामन्। रुरुचे। उषसः। न। भानुना। तूर्वन्। न। यामन्। एतशस्य। नु। रणे। आ। यः। घृणे। न। ततृषाणः। अजरः॥५॥

पदार्थः-**(पावकया)** पावकस्य क्रियया **(यः)** **(चितयन्त्या)** ज्ञापयन्त्या **(कृपा)** कृपया **(क्षामन्)** पृथिव्याम् **(रुरुचे)** प्रदीप्यते **(उषसः)** प्रभातवेला **(न)** इव **(भानुना)** किरणेन **(तूर्वन्)** हिंसन् **(न)** इव **(यामन्)** यान्ति यस्मिंस्तस्मिन्मार्गे **(एतशस्य)** अश्वस्य **(नू)** सद्यः **(रणे)** संग्रामे **(आ)** **(यः)** **(घृणे)** प्रदीप्ते **(न)** इव **(ततृषाणः)** तृषातुरः **(अजरः)** जरारहितः॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो भानुनोषसो न पावकया चितयन्त्या कृपा क्षामन् रुरुचे घृणे न रणे ततृषाणोऽजरो यो यामन्नेतशस्य प्रेरकस्तूर्वन्न न्वाऽऽरुरुचे सः सेवनीयोऽस्ति॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा सूर्य्यकिरणा उषसं प्रकाशन्ते तथैव विद्वांसः सर्वान्तःकरणानि प्रकाशयेयुः॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यः)** जो **(भानुना)** किरण से **(उषसः)** प्रभातवेला **(न)** जैसे वैसे **(पावकया)** अग्नि की क्रिया से और **(चितयन्त्या)** जनाती हुई **(कृपा)** कृपा से **(क्षामन्)** पृथिवी में **(रुरुचे)** प्रकाशित किया जाता है **(घृणे)** प्रदीप्त में **(न)** जैसे वैसे **(रणे)** संग्राम में **(ततृषाणः)** पिपासा से

व्याकुल **(अजरः)** जरा से रहित **(यः)** जो **(यामन्)** चलते हैं जिसमें उस मार्ग में **(एतशस्य)** घोड़े को चलाने वाला **(तूर्वन्)** हिंसन करता हुआ **(न)** जैसे वैसे **(नू)** शीघ्र **(आ)** प्रकाशित होता है, वह सेवा करने योग्य है॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे सूर्य्य के किरण प्रातःकाल को प्रकाशित करते हैं, वैसे ही विद्वान् जन सब के अन्तः करणों को प्रकाशित करें॥५॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

अग्निमग्निं वः समिधा दुवस्यत प्रियंप्रियं वो अतिथिं गृणीषणि। उप वो गीर्भिरमृतं विवासत देवो देवेषु वनते हि वार्यं देवो देवेषु वनते हि नो दुवः॥६॥

अग्निम्ऽअग्निम्। वः। सम्ऽइधा। दुवस्यत। प्रियम्ऽप्रियम्। वः। अतिथिम्। गृणीषणि। उप। वः। गीःऽभिः। अमृतम्। विवासत। देवः। देवेषु। वनते। हि। वार्यम्। देवः। देवेषु। वनते। हि। नः। दुवः॥६॥

पदार्थः-**(अग्निमग्निम्)** प्रत्यग्निम् **(वः)** युष्माकम् **(समिधा)** इन्धनैः। **(दुवस्यत)** परिचरत **(प्रियम्प्रियम्)** कमनीयं कमनीयम् **(वः)** युष्माकम् **(अतिथिम्)** **(गृणीषणि)** स्तोतव्ये व्यवहारे **(उप)** **(वः)** युष्मान् **(गीर्भिः)** वाग्भिः **(अमृतम्)** कारणरूपेण नाशरहितम् **(विवासत)** परिचरत। **विवासतीति परिचरणकर्म्मा।** (निघं०३.५) **(देवः)** द्योतमानः **(देवेषु)** दिव्यगुणेषु **(वनते)** सम्भजति **(हि)** **(वार्य्यम्)** वरणीयं व्यवहारम् **(देवः)** दाता **(देवेषु)** पितृषु विद्वत्सु **(वनते)** सम्भजते **(हि)** खलु **(नः)** अस्मभ्यम् **(दुवः)** परिचरणम्॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो गृणीषणि समिधा वोऽग्निमग्निं वः प्रियम्प्रियमतिथिमुप वनते हि यो देवेषु देवो गीर्भिर्वो वार्य्यममृतं सेवते यो हि देवेषु देवो नो दुवो वनते तं दुवस्यत तं विवासत॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यूयं विद्वांसमिवाग्निं सङ्गमयत यतोऽभीष्टं कार्यं सिद्ध्येत्॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(गृणीषणि)** स्तुति करने योग्य व्यवहार में **(समिधा)** इन्धनों से **(वः)** आप लोगों के **(अग्निमग्निम्)** अग्नि अग्नि का और **(वः)** आप लोगों के **(प्रियम्प्रियम्)** कामना करने योग्य कामना करने योग्य **(अतिथिम्)** अतिथि का **(उप, वनते)** समीप में सेवन करता **(हि)** ही है और जो **(देवेषु)** श्रेष्ठ गुणयुक्तों में **(देवः)** प्रकाशमान **(गीर्भिः)** वाणियों से **(वः)** आप लोगों को **(वार्यम्)** स्वीकार करने योग्य व्यवहार **(अमृतम्)** कारणरूप से नाशरहित का सेवन करता है और जो **(हि)** निश्चित **(देवेषु)** पितृरूप विद्वानों में **(देवः)** दाता जन **(नः)** हम लोगों के लिये **(दुवः)** सेवन को **(वनते)** स्वीकार करता है उसका **(दुवस्यत)** सेवन करो उसका **(विवासत)** सेवन करो॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! आप लोग जैसे विद्वान् का, वैसे अग्नि का भी मेल करावें, जिससे अभीष्ट कार्य्य सिद्ध होवे॥६॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

समिद्धमग्निं समिधा गिरा गृणे शुचिं पावकं पुरो अध्वरे ध्रुवम्।
विप्रं होतारं पुरुवारमद्रुहं कविं सुम्नैरीमहे जातवेदसम्॥७॥

सम्ऽइद्धम्। अग्निम्। सम्ऽइधा। गिरा। गृणे। शुचिम्। पावकम्। पुरः। अध्वरे। ध्रुवम्। विप्रम्। होतारम्। पुरुऽवारम्। अद्रुहम्। कविम्। सुम्नैः। ईमहे। जातऽवेदसम्॥७॥

पदार्थः-(समिद्धम्) देदीप्यमानम् **(अग्निम्)** **(समिधा)** इन्धनेनेव **(गिरा)** वाण्या **(गृणे)** **(शुचिम्)** पवित्रम् **(पावकम्)** पवित्रकर्त्तारम् **(पुरः)** पुरस्तात् **(अध्वरे)** अहिंसामये यज्ञे **(ध्रुवम्)** निश्चलम् **(विप्रम्)** विद्याविनयाभयां धीमन्तम् **(होतारम्)** **(पुरुवारम्)** पुरुभिर्बहुभिर्विद्वद्भिः सत्कृतम् **(अद्रुहम्)** द्रोहरहितम् **(कविम्)** पूर्णविद्यम् **(सुम्नैः)** सुखैः **(ईमहे)** याचामहे **(जातवेदसम्)** जातविद्यम्॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्याः! समिधा समिद्धमग्निमिव वर्त्तमानमध्वरे ध्रुवं शुचिं पावकं होतारं पुरुवारमद्रुहं जातवेदसं विप्रं गिरा पुरो गृणे कविमिव सुम्नैर्वयमीमहे तथा यूयमपि याचध्वम्॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यूयं सत्यप्रकाशकेभ्यो विद्वद्भ्यो विद्यां याचध्वम्, एतां प्राप्यान्येभ्यो दत्त॥७॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(समिधा)** इन्धन के समान पदार्थ से **(समिद्धम्)** प्रकाशित हुए **(अग्निम्)** अग्नि को जैसे वैसे वर्त्तमान को **(अध्वरे)** अहिंसारूप यज्ञ में **(ध्रुवम्)** बहुत विद्वानों से सत्कार किये गये **(अद्रुहम्)** द्रोह से रहित **(जातवेदसम्)** प्रकट हुई विद्या जिसकी ऐसे **(विप्रम्)** विद्या और विनय से बुद्धिमान् को **(गिरा)** वाणी से **(पुरः)** आगे **(गृणे)** स्तुति करता हूँ **(कविम्)** पूर्ण विद्या से युक्त को जैसे वैसे **(सुम्नैः)** सुखों से हम लोग **(ईमहे)** याचना करें, वैसे आप लोग भी याचना करो॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! आप लोग सत्य के प्रकाशक विद्वानों से विद्या की याचना करो तथा इस विद्या को प्राप्त होकर अन्यों को देओ॥७॥

मनुष्यैः क उपासनीय इत्याह॥

मनुष्यों से **[=को]** किसकी उपासना करने योग्य है, इस विषय को कहते हैं॥

त्वां दूतमग्ने अमृतं युगेयुगे हव्यवाहं दधिरे पायुमीड्यम्।
देवासश्च मर्तासश्च जागृविं विभुं विश्पतिं नमसा नि षेदिरे॥८॥

त्वाम्। दूतम्। अग्ने। अमृतम्। युगेऽयुगे। हव्यऽवाहम्। दधिरे। पायुम्। ईड्यम्। देवासः। च। मर्तासः। च। जागृविम्। विऽभुम्। विश्पतिम्। नमसा। नि। सेदिरे॥८॥

पदार्थः-(त्वाम्) **(दूतम्)** यो दुःखानि दुनोति दूरीकरोति तम् **(अग्ने)** अग्निरिव स्वप्रकाशमान **(अमृतम्)** नाशरहितम् **(युगेयुगे)** वर्षे वर्षे सत्ययुगादौ वा **(हव्यवाहम्)** यो हव्यान्यादातुमर्हाणि वहति तत् **(दधिरे)** **(पायुम्)** पालकम् **(ईड्यम्)** स्तोतुमर्हम् **(देवासः)** विद्वांसः **(च)** योगिनः **(मर्त्तासः)**

मरणधर्माणः **(च)** **(जागृविम्)** सदा जागरूकम् **(विभुम्)** व्यापकम् **(विश्पतिम्)** मनुष्यादिप्रजापालकम् **(नमसा)** **(नि)** **(सेदिरे)** निषीदन्ति॥८॥

अन्वयः-हे अग्ने भगवन्! युगेयुगे यं हव्यवाहमीड्यं पायुं विश्पतिं जागृविममृतं दूतं विभुं परमात्मानं त्वां देवासश्च मर्त्तासश्च नमसा दधिरे नि षेदिरे तं वयं दधीमहि तस्मिन्निषीदेम॥८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यूयं प्रत्यहं सर्वव्यापिनं न्यायेशं दयालुं सर्वधन्यवादार्हं परमात्मानमेवोपासीध्वम्॥८॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के सदृश स्वयं प्रकाशमान भगवन्! **(युगेयुगे)** वर्ष वर्ष वा सत्ययुग आदि में जिस **(हव्यवाहम्)** ग्रहण करने योग्य पदार्थों को धारण करने वाले **(ईड्यम्)** स्तुति करने योग्य **(पायुम्)** पालन करने वाले **(विश्पतिम्)** मनुष्य आदि प्रजाओं के पालक **(जागृविम्)** सदा जागने वाले **(अमृतम्)** नाश से रहित **(दूतम्)** दु:खों के दूर करने वाले **(विभुम्)** व्यापक परमात्मा **(त्वाम्)** आपको **(देवासः)** विद्वान् **(च)** और योगी **(मर्त्तासः)** मरण धर्म्मवाले **(च)** भी **(नमसा)** सत्कार से **(दधिरे)** धारण और योगी **(मर्त्तासः)** मरण धर्म्मवाले **(च)** भी **(नमसा)** सत्कार से **(दधिरे)** धारण करें **(नि, सेदिरे)** स्थित होते हैं, उसको हम लोग धारण करें तथा उसमें स्थित होवें॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! आप लोग प्रतिदिन सर्वव्यापी, न्यायेश, दयालु, सब धन्यवादों के योग्य, परमात्मा ही की उपासना करो॥८॥

पुनः स ईश्वर उपासितः किं करोतीत्याह॥

फिर वह उपासित ईश्वर क्या करता है, इस विषय को कहते हैं॥

विभूषन्नग्न उभयाँ अनु व्रता दूतो देवानां रजसी समीयसे।

यत्ते धीतिं सुमतिमावृणीमहेऽध स्मा नस्त्रिवरूथः शिवो भव॥९॥

विऽभूषन्। अग्ने। उभयान्। अनु। व्रता। दूतः। देवानाम्। रजसी इति। सम्। ईयसे। यत्। ते। धीतिम्। सुऽमतिम्। आऽवृणीमहे। अध। स्म। नः। त्रिऽवरूथः। शिवः। भव॥९॥

पदार्थः-**(विभूषन्)** अलं कुर्वन् **(अग्ने)** सर्वदु:खदाहक परमेश्वर **(उभयान्)** विद्वदविद्वन्मनुष्यान् **(अनु)** **(व्रता)** कर्म्माणि **(दूतः)** यो दोषान् दुनोति दूरीकरोति धर्म्मार्थमोक्षान् प्रापयति वा **(देवानाम्)** विदुषाम् **(रजसी)** द्यावापृथिव्यौ **(सम्)** **(ईयसे)** व्याप्नोषि **(यत्)** यस्य **(ते)** तव **(धीतिम्)** धारणां धियं वा **(सुमतिम्)** शोभनां प्रज्ञाम्। **(आवृणीमहे)** स्वीकुर्महे **(अध)** अथ **(स्मा)** एव। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। **(नः)** अस्मभ्यम् **(त्रिवरूथः)** त्रीण्युत्तममध्यमनिकृष्टानि वरूथा गृहाणीव निवासस्थानानि यस्य सः। **(शिवः)** मङ्गलकारी **(भव)**॥९॥

अन्वयः-हे अग्ने! यस्त्वं रजसी देवानां दूतः सन् व्रता विभूषन्नुभयान् मनुष्याननु विभूषन् रजसी समीयसे यत्ते धीतिं सुमतिं वयमावृणीमहे सोऽध त्रिवरूथस्त्वं नः शिवः स्मा भव॥९॥

भावार्थः-ये मनुष्या जगत्स्रष्टुरीश्वरस्याज्ञामनुवर्त्तन्ते तस्य गुणकर्म्मस्वभावैः सदृशान्त्स्वगुणकर्म्मस्वभावान् कुर्वन्ति तान् स दूत इव सर्वविद्यासमाचारं बोधयन् सहजतया मुक्तिपदं नयति तस्मात् सर्वदेवाऽयमुपासनीयोऽस्ति॥९॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** सम्पूर्ण दु:खों को जलाने अर्थात् दूर करने वाले परमेश्वर! जो आप **(रजसी)** अन्तरिक्ष और पृथिवी को **(देवानाम्)** विद्वानों के **(दूतः)** दोषों को दूर करने अथवा धर्म, अर्थ और मोक्ष को प्राप्त करानेवाले होते हुए **(व्रता)** कर्मों को **(विभूषन्)** शोभित करते और **(उभयान्)** विद्वान् और अविद्वान् मनुष्यों को **(अनु)** पीछे शोभित करते हुए अन्तरिक्ष और पृथिवी को **(सम्, ईयसे)** व्याप्त होते हैं और **(यत्)** जिस **(ते)** आपकी **(धीतिम्)** धारणा वा बुद्धि को **(सुमतिम्)** श्रेष्ठ बुद्धि को हम लोग **(आवृणीमहे)** स्वीकार करें वह **(अध)** इसके अनन्तर **(त्रिवरूथः)** तीन उत्तम, मध्यम, निकृष्ट गृहों के सदृश निवासस्थान वाले आप **(नः)** हम लोगो के लिये **(शिवः)** कल्याणकारी **(स्मा)** ही **(भव)** हूजिये॥९॥

भावार्थः-जो मनुष्य जगत् के रचनेवाले ईश्वर की आज्ञा के अनुकूल वर्त्ताव करते हैं तथा उसके गुण, कर्म्म और स्वभावों के सदृश अपने गुण, कर्म्म और स्वभावों को करते हैं, उनको वह जैसे दूत, वैसे सब विद्या के समाचार को जनाता हुआ सहज से मुक्ति के पद को प्राप्त कराता है, इससे सब काल में ही इसकी उपासना करनी चाहिये॥९॥

पुनस्तज्ज्ञानोपासने आवश्यके भवत इत्याह॥

फिर उसका ज्ञान और उपासना आवश्यक है, इस विषय को कहते हैं॥

तं सुप्रतीकं सुदृशं स्वञ्चमविद्वांसो विदुष्टरं सपेम।

स यक्षद्विश्वा वयुनानि विद्वान् प्र हव्यमग्निरमृतेषु वोचत्॥१०॥१८॥

तम्। सुऽप्रतीकम्। सुऽदृशम्। सुऽअञ्चम्। अविद्वांसः। विदुःऽतरम्। सपेम। सः। यक्षत्। विश्वा। वयुनानि। विद्वान्। प्र। हव्यम्। अग्निः। अमृतेषु। वोचत्॥१०॥

पदार्थः-**(तम्)** **(सुप्रतीकम्)** शोभनानि प्रतीकानि कृतानि येन तम् **(सुदृशम्)** योगाभ्यासेन द्रष्टुं योग्यं सुष्ठु दर्शकं वा **(स्वञ्चम्)** यः सुष्ठ्वञ्चति जानाति प्रापयति वा तम् **(अविद्वांसः)** **(विदुष्टरम्)** अतिशयितमीश्वरम् **(सपेम)** आक्रुश्येम **(सः)** **(यक्षत्)** सङ्गमयेत् **(विश्वा)** सर्वाणि **(वयुनानि)** प्रज्ञानानि **(विद्वान्)** आविर्विद्यः **(प्र)** **(हव्यम्)** दातुमर्हं विज्ञानम् **(अग्निः)** अग्निरिव प्रकाशमानः **(अमृतेषु)** नाशरहितेषु कारणजीवेषु **(वोचत्)** वक्ति॥१०॥

अन्वयः-हे मनुष्या! येऽविद्वांसस्तं सुप्रतीकं सुदृशं स्वञ्चं विदुष्टरं न विजानन्ति नोपासन्ते तान् वयं सपेम। यो विद्वानग्निर्विश्वा वयुनान्यमृतेषु हव्यञ्च प्र वोचत् सोऽस्मान् यक्षत्॥१०॥

भावार्थः-ये परमात्मानं नो जानन्ति तदाज्ञानुकूलं नाचरन्ति तान् धिग्धिग्ये च तमुपासते ते धन्याः। योऽस्मान् वेदद्वारा सर्वाणि विज्ञानान्युपदिशति तमेव वयं सर्व उपासीमहि॥१०॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(अविद्वांसः)** विद्या से रहित जन **(तम्)** उस **(सुप्रतीकम्)** सुन्दर कर्म्म किये जिसने तथा **(सुदृशम्)** योगाभ्यास से देखने योग्य वा उत्तम प्रकार दिखाने और **(स्वञ्चम्)** अच्छे प्रकार जानने वा प्राप्त करानेवाले **(विदुष्टरम्)** अत्यन्त विद्वान् ईश्वर को नहीं विशेष करके जानते और न उपासना करते हैं उनको हम लोग **(सपेम)** शाप देते हैं और जो **(विद्वान्)** प्रकट विद्याओं से युक्त **(अग्निः)** अग्नि के समान स्वयं प्रकाशित हुआ **(विश्वा)** सम्पूर्ण **(वयुनानि)** प्रज्ञानों और **(अमृतेषु)** नाशरहित कारण जीवों में **(हव्यम्)** देने योग्य विज्ञान को **(प्र, वोचत्)** अत्यन्त कहता है **(सः)** वह हम लोगों को **(यक्षत्)** प्राप्त करावे॥१०॥

भावार्थः-जो परमात्मा को नहीं जानते और उसकी आज्ञा के अनुकूल आचरण नहीं करते हैं, उनको धिक् है धिक् है और जो उसकी उपासना करते हैं, वे धन्य हैं और जो हम लोगों के लिये वेदद्वारा सम्पूर्ण विज्ञानों का उपदेश देता है, उसी की हम सब लोग उपासना करें॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

तम॑ग्ने पास्युत तं पि॑पर्षि यस्त॒ आन॑ट् क॒वये॑ शूर धी॒तिम्।
य॒ज्ञस्य॑ वा॒ निशि॑तिं वोदि॑तिं वा॒ तमित्पृ॑णक्षि॒ शव॑सो॒त रा॒या॥११॥

तम्। अ॒ग्ने॒। पा॒सि॒। उ॒त। तम्। पि॒प॒र्षि॒। यः। ते॒। आन॑ट्। क॒वये॑। शू॒र॒। धी॒तिम्। य॒ज्ञस्य॑। वा॒। निऽशि॑तिम्। वा॒। उ॒त्ऽइ॑तिम्। वा॒। तम्। इ॒त्। पृ॒ण॒क्षि॒। शव॑सा। उ॒त। रा॒या॥११॥

पदार्थः-**(तम्)** **(अग्ने)** अविद्यान्धकारविनाशक **(पासि)** रक्षसि **(उत)** अपि **(तम्)** **(पिपर्षि)** पालयसि सद्गुणैः पूरयसि वा **(यः)** **(ते)** तव **(आनट्)** व्याप्नोति **(कवये)** विदुषे **(शूर)** निर्भय दुष्टदोषविनाशक **(धीतिम्)** धारणाम् **(यज्ञस्य)** **(वा)** **(निशितिम्)** नितरां तीक्ष्णताम् **(वा)** **(उदितिम्)** उदयम् **(वा)** **(तम्)** **(इत्)** एव **(पृणक्षि)** सम्बध्नासि **(शवसा)** बलेन **(उत)** अपि **(राया)** धनेन॥११॥

अन्वयः-हे शूराग्ने! यस्त आज्ञामानट् तस्मै कवये धीतिं ददासि तं पास्युत तं पिपर्षि वा यज्ञस्य निशितिम् [उदितिम्] वा पृणक्षि त वा शवसोत राया सह पृणक्षि स इद्धवानुपास्योऽस्ति॥११॥

भावार्थः-ये सत्यभावेन जगदीश्वरमुपासते तानीश्वरः सर्वतः संरक्ष्य धर्म्यगुणकर्म्मस्वभावेषु प्रेरयित्वा शरीरात्मबलं प्रदाय मोक्षं नयति॥११॥

पदार्थः-हे **(शूर)** भयरहित दुष्ट दोषों के विनाश करने और **(अग्ने)** अविद्यारूप अन्धकार के नाश करने वाले **(यः)** जो **(ते)** आपकी आज्ञा को **(आनट्)** व्याप्त होता है उस **(कवये)** विद्वान् के लिये **(धीतिम्)** धारणा को देते हो **(तम्)** उसकी **(पासि)** रक्षा करते हो **(उत)** और **(तम्)** उसकी **(पिपर्षि)** पालना करते वा श्रेष्ठ गुणों से पूरित करते हो **(वा)** वा **(यज्ञस्य)** यज्ञ की **(निशितिम्)** अत्यन्त तीक्ष्णता

का वा **(उदितिम्)** उदय का **(वा)** वा **(पृणक्षि)** सम्बन्ध करते हो **(तम्)** उसका **(वा)** वा **(शवसा)** बल से **(उत)** और **(राया)** धन से भी सम्बन्ध करते हो वह **(इत्)** ही आप उपासना करने योग्य हैं॥११॥

भावार्थ:-जो सत्यभाव से जगदीश्वर की उपासना करते हैं, उनकी ईश्वर सब प्रकार से रक्षा कर धर्म्मयुक्त गुण, कर्म और स्वभावों में प्रेरणा कर तथा शरीर और आत्मा का बल अच्छे प्रकार देकर मोक्ष को प्राप्त कराता है॥११॥

पुनरीश्वरः किमर्थमुपासनीय इत्याह॥

फिर ईश्वर किस निमित्त उपासना करने योग्य है, इस विषय को कहते हैं॥

त्वम॑ग्ने वनुष्य॒तो नि पा॑हि॒ त्वमु॑ नः सहसावन्नव॒द्यात्।

सं त्वा॑ ध्वस्म॒न्वद॒भ्ये॑तु॒ पाथ॒ः सं र॒यिः स्पृ॑ह॒याय्य॑ः सह॒स्री॥ १२॥

त्वम्। अ॒ग्ने॒। व॒नु॒ष्यतः॑। नि। पा॒हि। त्वम्। ऊँ॒ इति॑। नः॒। स॒ह॒सा॒ऽव॒न्। अ॒व॒द्यात्। सम्। त्वा॒। ध्व॒स्म॒न्ऽवत्। अ॒भि। ए॒तु॒। पाथः॑। सम्। र॒यिः। स्पृ॒ह॒याय्य॑ः। स॒ह॒स्री॥१२॥

पदार्थ:-**(त्वम्)** **(अग्ने)** शुभगुणप्रदातः **(वनुष्यतः)** याचमानान् **(नि)** **(पाहि)** नित्यं रक्ष **(त्वम्)** **(उ)** **(नः)** अस्मान् **(सहसावन्)** अमितबलयुक्त **(अवद्यात्)** निन्द्याचरणात् **(सम्)** **(त्वा)** त्वाम् **(ध्वस्मन्वत्)** ध्वंसवन् **(अभि)** **(एतु)** प्राप्नोतु **(पाथः)** अन्नादिकम् **(सम्)** **(रयिः)** श्रीः **(स्पृहयाय्यः)** **(सहस्री)** सहस्रं सर्वं सुखमस्मिन्निति सः॥१२॥

अन्वय:-हे सहसावन्नग्ने! त्वं वनुष्यतो नोऽस्मानवद्यात्त्वं नि पाहि यः स्पृहयाय्यः सहस्री रयिर्यद् ध्वस्मन्वत् पाथश्चाऽस्मान्त्समभ्येतु तद्वन्तो वयमु त्वा त्वां समुपास्महि॥१२॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! यो धर्मेण याचितो जगदीश्वरोऽधर्म्माचरणात् पृथक्कृत्य धर्मं प्रापयति यो ह्यनित्यमपि सुखं प्रयच्छति तमेव रक्षकं सर्वैश्वर्य्यप्रदमिष्टदेवं विजानीत॥१२॥

पदार्थ:-हे **(सहसावन्)** अत्यन्त बलयुक्त **(अग्ने)** श्रेष्ठ गुणों के देनेवाले **(त्वम्)** आप **(वनुष्यतः)** याचना करते हुए **(नः)** हम लोगों की **(अवद्यात्)** निन्द्य आचरण से **(त्वम्)** आप **(नि, पाहि)** नित्य रक्षा करिये और जो **(स्पृहयाय्यः)** स्पृहा कराने योग्य **(सहस्री)** सम्पूर्ण सुख जिसमें वह **(रयिः)** धन और जो **(ध्वस्मन्वत्)** नाशवाला **(पाथः)** अन्न आदि हम लोगों को **(सम्, अभि, एतु)** उत्तम प्रकार प्राप्त हो, उससे युक्त हम लोग **(उ)** भी **(त्वा)** आपको **(सम्)** अच्छे प्रकार उपासना करें॥१२॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जो धर्म्म से याचना किया गया जगदीश्वर अधर्म के आचरण से अलग करके धर्म्म को प्राप्त कराता है और जो अनित्य सुख को भी देता है, उसी को रक्षक, सब ऐश्वर्य्य देनेवाला तथा इष्ट देव जानो॥१२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

अ॒ग्निर्होता॑ गृ॒हप॑तिः॒ स राजा॒ विश्वा॑ वेद॒ जनि॑मा जा॒तवे॑दाः।

दे॒वाना॑मु॒त यो मर्त्या॑नां॒ यजि॑ष्ठः॒ स प्र य॑जतामृ॒तावा॑॥१३॥

अ॒ग्निः। होता॑। गृ॒हऽप॑तिः। सः। राजा॑। विश्वा॑। वे॒द॒। जनि॑मा। जा॒तऽवे॑दाः। दे॒वाना॑म्। उ॒त। यः। मर्त्या॑नाम्। यजि॑ष्ठः। सः। प्र। य॒ज॒ता॒म्। ऋ॒तऽवा॑॥१३॥

पदार्थः-(**अग्निः**) सर्वप्रकाशकः (**होता**) धर्त्ता (**गृहपतिः**) गृहस्य पालक इव ब्रह्माण्डस्य प्रबन्धकर्त्ता (**सः**) (**राजा**) सर्वेषां न्यायकर्त्ता (**विश्वा**) सर्वाणि (**वेद**) जानाति (**जनिमा**) जन्मानि (**जातवेदाः**) यो जातान्त्सर्वान् वेत्ति सः (**देवानाम्**) दिव्यानां पदार्थानां विदुषां वा मध्ये (**उत**) अपि (**यः**) (**मर्त्यानाम्**) सङ्गमयतु (**ऋतावा**) सत्यासत्ययोर्विभाजकः॥१३॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यो गृहपतिरिव होता जातवेदाः सर्वस्य राजा ऋतावा यजिष्ठोऽग्निर्देवानामुत मर्त्यानां विश्वा जनिमा वेद सोऽस्मान् प्र यजतां सोऽस्माकं राजास्त्विति वयं निश्चिनुमस्तथा यूयमप्यवगच्छत॥१३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! योऽखिलस्य जगतो जीवानां च कर्म्माणि विदित्वा फलानि प्रयच्छति स एव सत्यो राजास्तीति वेदितव्यम्॥१३॥

पदार्थः-हे विद्वानो! (**यः**) जो (**गृहपतिः**) गृह का पालक जैसे वैसे ब्रह्माण्ड का प्रबन्ध करने (**होता**) धारण करने तथा (**जातवेदाः**) प्रकट हुए पदार्थों को जाननेवाला और सब का (**राजा**) न्याय करने तथा (**ऋतावा**) सत्य और असत्य का विभाग करने (**यजिष्ठः**) अतिशय यज्ञ करने वा पदार्थों का मेल करनेवाला (**अग्निः**) सब का प्रकाशक (**देवानाम्**) दिव्य पदार्थों वा विद्वानों के मध्य में (**उत**) (**मर्त्यानाम्**) मनुष्यों के (**विश्वा**) सम्पूर्ण (**जनिमा**) जन्मों को (**वेद**) जानता है (**सः**) वह हम लोगों को (**प्र, यजताम्**) अत्यन्त प्राप्त करावे (**सः**) वह हम लोगों का राजा होवे, ऐसा हम लोग निश्चय करते हैं, वैसे आप लोग भी जानो॥१३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो सम्पूर्ण जगत् और जीवों के कर्म्मों को जानकर फलों को देता है, वही सत्य राजा है, ऐसा जानना चाहिये॥१३॥

पुनः स जगदीश्वरः कीदृशोऽस्तीत्याह॥

फिर वह जगदीश्वर कैसा है, इस विषय को कहते हैं॥

अग्ने॒ यद॒द्य वि॒शो अ॑ध्वरस्य होतः॒ पाव॑कशोचे॒ वेष्ट्वं हि यज्वा॑।

ऋ॒ता य॑जासि महि॒ना वि यद्भूर्ह॒व्या व॑ह यविष्ठ॒ या ते॑ अ॒द्य॥१४॥

अग्ने॑। यत्। अ॒द्य। वि॒शः। अ॒ध्व॒र॒स्य॒। हो॒त॒रिति॑। पाव॑कऽशोचे। वेः। त्वम्। हि। यज्वा॑। ऋ॒ता। य॒जा॒सि॒। म॒हि॒ना। वि। यत्। भूः। ह॒व्या। व॒ह॒। य॒वि॒ष्ठ॒। या। ते॒। अ॒द्य॥१४॥

पदार्थ:-(**अग्ने**) सर्वप्रजापीडानिवारक (**यत्**) य: (**अद्य**) इदानीम् (**विश:**) मनुष्यादिप्रजाया: (**अध्वरस्य**) अहिंसामयस्य (**होत:**) दात: (**पावकशोचे**) पवित्र प्रकाशक (**वे:**) विहगस्य पक्षिण इव (**त्वम्**) (**हि**) (**यज्वा**) सङ्गन्ता (**ऋता**) ऋते सत्यसुखप्रापके यज्ञे (**यजासि**) यजे: (**महिना**) महिम्ना (**वि**) (**यत्**) य: (**भू:**) भवे: (**हव्या**) दातुमर्हाणि (**वह**) (**यविष्ठ**) अतिशयेन सङ्गमयिता विभाजको वा (**या**) यानि (**वस्तूनि**) (**ते**) तव (**अद्य**)॥१४॥

अन्वय:-हे पावकशोचे होतर्यविष्ठाग्ने! यद्यो यज्वा त्वं ह्यद्य विशो वेरध्वरस्यर्त्ता यजासि यद्यस्त्वं महिना वि भूर्या ते वर्त्तमानेऽद्य सन्ति तानि हव्याऽस्मदर्थं वह॥१४॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! य: सर्वां सृष्टिं सङ्गतां करोति यो विभुरहिंसादिधर्म्मस्याऽनुष्ठानायाऽऽज्ञां ददाति स हि सर्वैरुपास्योऽस्तीति॥१४॥

पदार्थ:-हे (**पावकशोचे**) पवित्र प्रकाश और (**होत:**) दान करने तथा (**यविष्ठ**) अतिशय मिलाने वा विभाग कराने और (**अग्ने**) सम्पूर्ण प्रजा की पीड़ाओं के दूर करनेवाले (**यत्**) जो (**यज्वा**) मेल करनेवाले (**त्वम्**) आप (**हि**) निश्चय से (**अद्य**) इस समय (**विश:**) मनुष्य आदि प्रजा के (**वे:**) आकाशगन्ता पक्षी के समान (**अध्वरस्य**) अहिंसामय के (**ऋता**) सत्य सुख के प्राप्त करानेवाले यज्ञ में (**यजासि**) यजन करते हो (**यत्**) जो आप (**महिना**) महत्त्व से (**वि**) विशेष करके (**भू:**) होवें और (**या**) जो वस्तुएँ (**ते**) आपके वर्त्तमान में (**अद्य**) इस समय हैं उन (**हव्या**) देने योग्यों को हम लोगों के लिये (**वह**) प्राप्त करिये॥१४॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जो सम्पूर्ण सृष्टि को एकत्रित करता है और जो व्यापक अहिंसा आदि धर्म्म के अनुष्ठान के लिये आज्ञा देता है, वह ही सब से उपासना करने योग्य है॥१४॥

पुनर्मनुष्यै: किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

अ॒भि प्रयां॑सि सु॒धिता॑नि॒ हि ख्यो नि त्वा॑ दधी॒त रोद॑सी॒ यज॑ध्यै। अवा॑ नो मघव॒न् वाज॑साता॒वग्ने॒ विश्वा॑नि दु॒रि॒ता त॑रेम॒ ता त॑रेम॒ तवाव॑सा तरेम॥१५॥१९॥

अ॒भि। प्रयां॑सि। सु॒ऽधिता॑नि। हि। ख्य:। नि। त्वा॒। द॒धी॒त॒। रोद॑सी॒ इति॑। यज॑ध्यै। अव॑। न॒:। म॒घ॒ऽव॒न्। वाज॑ऽसातौ। अग्ने॑। विश्वा॑नि। दु॒:ऽइ॒ता। त॒रे॒म॒। ता। त॒रे॒म॒। तव॑। अव॑सा त॒रे॒म॒॥१५॥

पदार्थ:-(**अभि**) (**प्रयांसि**) कमनीयान्यन्नादीनि वस्तूनि (**सुधितानि**) सुष्ठु तृप्तिकराणि (**हि**) (**ख्य:**) प्रकथयसि (**नि**) (**त्वा**) (**दधीत**) धरेत् (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**यजध्यै**) सङ्गन्तुम् (**अवा**) अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घ:। (**न:**) अस्मान् (**मघवन्**) परमपूजितधनयुक्त (**वाजसातौ**) स-ामे (**अग्ने**) अतितेजस्विन् (**विश्वानि**) सर्वाणि (**दुरिता**) दु:खस्य प्रापकाणि पापानि (**तरेम**) उल्लङ्घेमहि (**ता**) तानि (**तरेम**) दु:खसागरस्य पारं गच्छेम (**तव**) (**अवसा**) रक्षणादिना (**तरेम**) सर्वान् दोषाँस्त्यजेम॥१५॥

अन्वयः-हे मघवन्नग्ने! यो भवान् सुधितानि प्रयांसि हि निदधीत त्वं विज्ञानान्यभि ख्यो भवान् यजध्यै रोदसी दधीत वाजसातौ नोऽस्मानवा यं त्वाऽऽश्रित्य वयं ता विश्वानि दुरिता तरेम तवावसा दुःखात् तरेम सततं तरेम॥१५॥

भावार्थः-हे मनुष्या! योऽन्नपानादीनि जीवनहितानि विदधात्यन्तर्य्यामितया सत्यमुपदिशति तदाश्रयेणैव सर्वेभ्यो दुःखेभ्यः पारं गच्छत॥१५॥

पदार्थः-हे **(मघवन्)** अत्यन्त श्रेष्ठ धन से युक्त **(अग्ने)** अतितेजस्वी जो आप **(सुधितानि)** उत्तम प्रकार तृप्ति करनेवाले **(प्रयांसि)** कामना करने योग्य अन्न आदि वस्तुओं को **(हि)** निश्चित **(नि, दधीत)** अच्छे प्रकार धारण करें और आप विज्ञानों को **(अभि, ख्यः)** सम्मुख कहते हो और आप **(यजध्यै)** मेल करने को **(रोदसी)** अन्तरिक्ष और पृथिवी को धारण करिये तथा **(वाजसातौ)** संग्राम में **(नः)** हम लोगों की **(अवा)** रक्षा करिये जिन **(त्वा)** आप का आश्रय करके हम लोग **(ता)** उन **(विश्वानि)** सम्पूर्ण **(दुरिता)** दुःख के प्राप्त कराने वाले पापों का **(तरेम)** उल्लंघन करें **(तव)** आपके **(अवसा)** रक्षण आदि से **(तरेम)** दुःखसागर के पार जावें और निरन्तर **(तरेम)** सम्पूर्ण दोषों का त्याग करें॥१५॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो अन्न और पानादिक जीवन के हितकारक पदार्थों को धारण करता अन्तर्यामी होने से सत्य का उपदेश करता, उसके आश्रय से ही सम्पूर्ण दुःखों के पार प्राप्त होओ॥१५॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

अग्ने॒ विश्वे॑भिः स्वनीक दे॒वैरूर्णा॑वन्तं प्रथ॒मः सी॑द॒ योनि॑म्।

कु॒ला॒यिनं॑ घृ॒तव॑न्तं सवि॒त्रे य॒ज्ञं न॑य॒ यज॑मानाय सा॒धु॥१६॥

अग्ने॑। विश्वे॑भिः। सु॒ऽअ॒नी॒क॒। दे॒वैः। ऊर्णा॑ऽवन्तम्। प्र॒थ॒मः। सी॒द॒। योनि॑म्। कु॒ला॒यिन॑म्। घृ॒तऽव॑न्तम्। स॒वि॒त्रे। य॒ज्ञम्। न॒य॒। यज॑मानाय। सा॒धु॥१६॥

पदार्थः-**(अग्ने)** विद्वन् **(विश्वेभिः)** सर्वैः **(स्वनीक)** शोभनान्यनीकानि सैन्यानि यस्य तत्सम्बुद्धौ **(देवैः)** विद्वद्भिर्वीरैर्वा **(ऊर्णावन्तम्)** बहूर्णादिवस्त्रयुक्तम् **(प्रथमः)** प्रख्यातः **(सीद)** **(योनिम्)** गृहम् **(कुलायिनम्)** गृहादिसामग्रीयुक्तम् **(घृतवन्तम्)** बहुघृतादिवन्तम् **(सवित्रे)** जगदुत्पादकाय **(यज्ञम्)** सङ्गतिमयं व्यवहारम् **(नय)** प्रापय **(यजमानाय)** सङ्गतिकरणविद्याविदे **(साधु)**॥१६॥

अन्वयः-हे स्वनीकाग्ने राजन्! प्रथमस्त्वं विश्वेभिर्देवैस्सहोर्णावन्तं योनिं सीद सवित्रे यजमानाय कुलायिनं घृतवन्तं यज्ञं साधु नय॥१६॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! राजजना यूयं विद्वत्सहायेन न्यायगृहेषु स्थित्वा न्यायं कुरुत सर्वान् मनुष्यान् न्यायपथं नयत येन सर्वे सन्मार्गस्थाः सन्तः परोपकारिणः स्युः॥१६॥

पदार्थः-हे (**स्वनीक**) सुन्दर सेना वाले (**अग्ने**) विद्वन् राजन् (**प्रथमः**) प्रसिद्ध आप (**विश्वेभिः**) सम्पूर्ण (**देवैः**) विद्वानों वा वीर पुरुषों के साथ (**ऊर्णावन्तम्**) बहुत ऊर्णा के वस्त्रों से युक्त (**योनिम्**) गृह में (**सीद**) वर्त्तमान हो (**सवित्रे**) संसार को उत्पन्न करने और (**यजमानाय**) पदार्थों के मिलानेरूप विद्या को जानने वाले के लिये (**कुलायिनम्**) गृह आदि सामग्री से और (**घृतवन्तम्**) बहुत घृत आदि पदार्थों से युक्त (**यज्ञम्**) संगतिस्वरूप व्यवहार को साधु उत्तम प्रकार (**नय**) प्राप्त कराइये॥१६॥

भावार्थः-हे विद्यायुक्त राजजनो! आप लोग विद्वानों के सहाय से न्याय के गृहों में ठहर के न्याय करिये और सब मनुष्यों को न्यायमार्ग पर चलाइये, जिससे सब श्रेष्ठ मार्ग में स्थित होकर परोपकारी होवें॥१६॥

पुनर्विद्युतं कस्मान्निस्सारयेयुरित्याह॥

फिर बिजुली को किससे निकालें, इस विषय को कहते हैं॥

इममु त्यमथर्ववदग्निं मन्थन्ति वेधसः।
यमङ्कूयन्तमानयन्नमूरं श्याव्याभ्यः॥१७॥

इमम्। ऊँ इति। त्यम्। अथर्वऽवत्। अग्निम्। मन्थन्ति। वेधसः। यम्। अङ्कुऽयन्तम्। आ। अनयन्। अमूरम्। श्याव्याभ्यः॥१७॥

पदार्थः-(**इमम्**) प्रत्यक्षम् (**उ**) (**त्यम्**) परोक्षम् (**अथर्ववत्**) यथाऽथर्ववेदे मन्थनं विहितम् (**अग्निम्**) विद्युतम् (**मन्थन्ति**) (**वेधसः**) मेधाविनो विपश्चितः (**यम्**) (**अङ्कूयन्तम्**) यस्मिन्नङ्कूनि प्रसिद्धानि चिह्नानि प्राप्नुवन्ति। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**आ**) (**अनयन्**) नयन्ति (**अमूरम्**) अमूढम् (**श्याव्याभ्यः**) श्यावीषु रात्रिषु भवाभ्यः क्रियाभ्यः। **श्यावीति रात्रिनाम।** (निघं०१.७)॥१७॥

अन्वयः-हे मनुष्या! वेधसः श्याव्याभ्यो यमङ्कूयन्तमिममु त्यमग्निमथर्ववदमूरं मन्थन्ति कार्य्यसिद्धिमाऽऽनयंस्त यूयमपि मथित्वा कार्य्याणि साध्नुत॥१७॥

भावार्थः-ये विद्वांसो भूम्यन्तरिक्षवाय्वाकाशसूर्य्यादिभ्यो मथित्वा विद्युतं निःसारयन्ति तेऽनेकानि कार्य्याण्यलङ्कर्तुं शक्नुवन्ति॥१७॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**वेधसः**) बुद्धिमान् विद्वान् जन (**श्याव्याभ्यः**) रात्रियों में हुई क्रियाओं से (**यम्**) जिस (**अङ्कूयन्तम्**) प्रसिद्ध चिह्न प्राप्त होते जिसमें (**इमम्**) इस (**उ**) और (**त्यम्**) जो नहीं प्रत्यक्ष हुआ उस (**अग्निम्**) बिजुलीरूप अग्नि का (**अथर्ववत्**) जैसा अथर्ववेद में मन्थन कहा है, वैसे (**अमूरम्**) मूढ़ से भिन्न को (**मन्थन्ति**) मन्थन करते और कार्य्य की सिद्धि को (**आ, अनयन्**) अच्छे प्रकार प्राप्त करते हैं, उसको आप लोग भी मन्थन करके कार्य्यों को सिद्ध करिये॥१७॥

भावार्थः-जो विद्वान् जन भूमि, अन्तरिक्ष, वायु, आकाश और सूर्य्य आदि से मन्थन करके बिजुली को निकालते हैं, वे अनेक कार्य्यों के सिद्ध करने को समर्थ होते हैं॥१७॥

मनुष्यैः सृष्टेः कः क उपकारो ग्रहीतव्य इत्याह॥

मनुष्यों को सृष्टि से कौन-कौन उपकार ग्रहण करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

जनिष्वा देववीतये सर्वताता स्वस्तये।

आ देवान् वक्ष्यमृताँ ऋतावृधो यज्ञं देवेषु पिस्पृशः॥१८॥

जनिष्व। देवऽवीतये। सर्वऽताता। स्वस्तये। आ। देवान्। वक्षि। अमृतान्। ऋतऽवृधः। यज्ञम्। देवेषु। पिस्पृशः॥१८॥

पदार्थः-(जनिष्वा) जनय। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(देववीतये)** दिव्यगुणप्राप्तये **(सर्वताता)** सर्वसुखकरे शिल्पमये यज्ञे **(स्वस्तये)** सुखलब्धये **(आ) (देवान्)** दिव्यान् गुणान् भोगान् वा **(वक्षि)** वह **(अमृतान्)** नाशरहितान् **(ऋतावृधः)** सत्यव्यवहारवर्धकान् **(यज्ञम्)** सुखप्रदम् **(देवेषु)** विद्वत्सु **(पिस्पृशः)** स्पर्शय॥१८॥

अन्वयः-हे विद्वंस्त्वं देववीतये स्वस्तये सर्वताताऽमृतानृतावृधो देवानाऽऽवक्षि देवेषु यज्ञं पिस्पृशोऽनेन सुखानि जनिष्वा॥१८॥

भावार्थः-विद्वद्भिः सृष्टिस्थपदार्थेभ्यो विद्यया दिव्यान् भोगान् प्राप्य स्वार्थं बहुविधं सुखं जननीयम्॥१८॥

पदार्थः-हे विद्वन्! आप **(देववीतये)** श्रेष्ठ गुणों की प्राप्ति के लिये और **(स्वस्तये)** सुख की प्राप्ति के लिये **(सर्वताता)** सम्पूर्ण सुख के करने वाले शिल्प=कारीगरीरूप यज्ञ में **(अमृतान्)** नाशरहित **(ऋतावृधः)** सत्यव्यवहार के बढ़ाने वाले **(देवान्)** श्रेष्ठ गुणों वा भोगों को **(आ, वक्षि)** प्राप्त कराइये और **(देवेषु)** विद्वानों में **(यज्ञम्)** सुख के देनेवाले यज्ञ का **(पिस्पृशः)** स्पर्श कराइये, इससे सुखों को **(जनिष्वा)** प्रकट कीजिये॥१८॥

भावार्थः-विद्वानों को चाहिये कि सृष्टि में वर्त्तमान पदार्थों से विद्या के द्वारा श्रेष्ठ भोगों को प्राप्त होकर अपने लिये अनेक प्रकार के सुख को उत्पन्न करें॥१८॥

पुनर्गृहस्थैः कथं प्रयतितव्यमित्याह॥

फिर गृहस्थों को कैसा प्रयत्न करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

वयमु त्वा गृहपते जनानामग्ने अकर्म समिधा बृहन्तम्।

अस्थूरि नो गार्हपत्यानि सन्तु तिग्मेन नस्तेजसा सं शिशाधि॥१९॥२०॥१॥

वयम्। ऊँ इति। त्वा। गृहऽपते। जनानाम्। अग्ने। अकर्म। सम्ऽइधा। बृहन्तम्। अस्थूरि। नः। गार्हऽपत्यानि। सन्तु। तिग्मेन। नः। तेजसा। सम्। शिशाधि॥१९॥

पदार्थः-(वयम्) (उ) (त्वा) त्वाम् **(गृहपते)** गृहस्य पालक **(जनानाम्)** मनुष्याणां मध्ये **(अग्ने)** अग्निवद्वर्त्तमान **(अकर्म)** कुर्य्याम **(समिधा)** प्रदीपकेन साधनेन **(बृहन्तम्)** महान्तम् **(अस्थूरि)** अस्थिरं

यानम् **(नः)** अस्माकम् **(गार्हपत्यानि)** गृहपतिना संयुक्तानि कर्म्माणि **(सन्तु)** **(तिग्मेन)** तीव्रेण **(नः)** अस्मान् **(तेजसा)** **(सम्)** **(शिशाधि)** सम्यक्तया शिक्षय॥१९॥

अन्वयः-हे गृहपतेऽग्ने! वयं जनानां मध्ये त्वाऽऽश्रित्य समिधाऽग्निं बृहन्तमकर्म्म। उ नोऽस्थूरि गार्हपत्यानि च यथा सिद्धानि सन्तु तथा तिग्मेन तेजसा त्वं नः सं शिशाधि॥१९॥

भावार्थः-हे गृहस्था जना! यूयमालस्यं विहाय सृष्टिक्रमेण विद्योन्नतिं कृत्वाऽन्यान् विद्यार्थिनो विद्यां ग्राहयत येन सर्वाणि सुखानि वर्धेरन्निति॥१९॥

अत्राऽग्निविद्वदीश्वरगृहस्थकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति पञ्चदशं सूक्तं विंशो वर्गः षष्ठे मण्डले प्रथमोऽनुवाकश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(गृहपते)** गृहस्थों के पालन करने वाले **(अग्ने)** अग्नि के समान वर्त्तमान **(वयम्)** हम लोग **(जनानाम्)** मनुष्यों के मध्य में **(त्वा)** आपका आश्रय करके **(समिधा)** प्रदीपक साधन से अग्नि को **(बृहन्तम्)** बड़ा **(अकर्म्म)** करें (उ) और **(नः)** हम लोगों का **(अस्थूरि)** चलनेवाला वाहन और **(गार्हपत्यानि)** गृहपति से संयुक्त कर्म्म जिस प्रकार से सिद्ध **(सन्तु)** हों उस प्रकार से **(तिग्मेन)** तीव्र **(तेजसा)** तेज से आप **(नः)** हम लोगों को **(सम्, शिशाधि)** उत्तम प्रकार शिक्षा दीजिये॥१९॥

भावार्थः-हे गृहस्थजनो! आप लोग आलस्य का त्याग करके सृष्टिक्रम से विद्या की उन्नति करके अन्य विद्यार्थियों को विद्या ग्रहण कराइये, जिससे सब सुख बढ़ें॥१९॥

इस सूक्त में अग्नि, विद्वान्, ईश्वर और गृहस्थ के कार्य्यों का वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह पन्द्रहवाँ सूक्त बीसवां वर्ग और छठे मण्डल का पहिला अनुवाक समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथाष्टचत्वारिंशत्तमस्य षोडशस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। अग्निर्देवता। १, ६, ७ आर्ची उष्णिक्छन्दः। ऋषभः स्वरः। २, ३, ४, ५, ९, ११, १३, १४, १५, १७, १८, २१, २४, २५, २८, ३१, ३२, ४०, ४३, ४५ निचृद्गायत्री। ८, १०, १९, २०, २२, २३, २९, ३४, ३५, ३६, ३७, ३८, ३९, ४१, गायत्री। २६, ३० विराड्गायत्रीछन्दः। षड्जः स्वरः। १२, १६, ३३, ४२, ४४ साम्नीत्रिष्टुप्। २७ आर्चीपङ्क्तिः। ४६ भुरिक्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ४७, ४८ निचृदनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः॥

अथ विद्वान् किं कुर्य्यादित्याह॥

अब अड़तालीस ऋचावाले सोलहवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में अब विद्वान् क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

त्वम॑ग्ने य॒ज्ञानां॒ होता॒ विश्वे॑षां हि॒तः। दे॒वेभि॒र्मानु॑षे॒ जने॑॥ १॥

त्वम्। अ॒ग्ने॒। य॒ज्ञाना॑म्। होता॑। विश्वे॑षाम्। हि॒तः। दे॒वेभिः॑। मानु॑षे। जने॑॥ १॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**अग्ने**) जगदीश्वर (**यज्ञानाम्**) सङ्गन्तव्यानां व्यवहाराणाम् (**होता**) दाता (**विश्वेषाम्**) सर्वेषाम् (**हितः**) हितकारी (**देवेभिः**) विद्वद्भिः सह (**मानुषे**) मनुष्याणामस्मिन् (**जने**) मनुष्ये॥ १॥

अन्वयः-हे अग्ने! यतस्त्वं यज्ञानां होता विश्वेषां हितोऽसि तस्माद्देवेभिर्मानुषे जने प्रेरको भव॥ १॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! यथेश्वरः सर्वेषां हितकारी सकलसुखदाता विद्वत्सङ्गेन ज्ञातव्योऽस्ति तथा यूयमप्यनुतिष्ठत॥ १॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) जगदीश्वर! जिस कारण से (**त्वम्**) आप (**यज्ञानाम्**) प्राप्त होने योग्य व्यवहारों के (**होता**) देने वाले और (**विश्वेषाम्**) सब के (**हितः**) हितकारी हो इससे (**देवेभिः**) विद्वानों के साथ (**मानुषे**) मनुष्य-सम्बन्धी (**जने**) मनुष्य में प्रेरणा करने वाले होओ॥ १॥

भावार्थः-हे विद्वानो! जैसे ईश्वर सब का हितकारी और सम्पूर्ण सुखों का देनेवाला तथा विद्वानों के संग से जानने योग्य है, वैसे आप लोग भी अनुष्ठान करो॥ १॥

पुनर्विद्वान् किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर विद्वान् क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

स नो॑ म॒न्द्राभि॑रध्व॒रे जि॒ह्वाभि॑र्यजा म॒हः। आ दे॒वान् व॑क्षि॒ यक्षि॑ च॥ २॥

सः। नः॒। म॒न्द्राभिः॑। अ॒ध्व॒रे। जि॒ह्वाभिः॑। य॒ज॒ इति॑। म॒हः। आ। दे॒वान्। व॒क्षि॒। यक्षि॑। च॒॥ २॥

पदार्थः-(**सः**) (**नः**) अस्मान् (**मन्द्राभिः**) आनन्दकारिकाभिः (**अध्वरे**) सर्वथाऽनुष्ठातव्ये धर्म्ये व्यवहारे (**जिह्वाभिः**) विद्याविनययुक्ताभिर्वाग्भिः। **जिह्वेति वाङ्नाम।** (निघं०१.११) (**यजा**) सङ्गमय। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**महः**) महतः सत्कर्त्तव्यान् वा (**आ**) (**देवान्**) दिव्यान् गुणान् विदुषो वा (**वक्षि**) वह (**यक्षि**) सङ्गमय (**च**)॥२॥

अन्वयः-हे विद्वन्नग्ने! स त्वमध्वरे मन्द्राभिर्जिह्वाभिर्नोऽस्मान् यजा। महो देवानाऽऽवक्षि सर्वान् यक्षि च॥२॥

भावार्थः-विद्वांसो विद्याप्राप्तये सर्वान् सदोपदिशेयुर्येन प्राप्तदिव्यगुणा मनुष्या भवेयुः॥२॥

पदार्थः-हे विद्वन्! अग्नि के सदृश तेजस्वी (**सः**) वह आप (**अध्वरे**) सब प्रकार अनुष्ठान करने योग्य धर्म्मयुक्त व्यवहार में (**मन्द्राभिः**) आनन्द करने वाली (**जिह्वाभिः**) विद्या और विनय से युक्त वाणियों से (**नः**) हम लोगों को (**यजा**) प्राप्त कराइये और (**महः**) बड़े अथवा सत्कार करने योग्यों को और (**देवान्**) श्रेष्ठ गुणों वा विद्वानों को (**आ, वक्षि**) प्राप्त कराइये और सब को (**यक्षि, च**) भी प्राप्त कराइये॥२॥

भावार्थः-विद्वान् जन विद्या की प्राप्ति के लिये सब को सदा उपदेश देवें, जिससे श्रेष्ठ गुणों वाले मनुष्य होवें॥२॥

क उपदेशं कर्त्तुमर्हतीत्याह॥

कौन उपदेश करने योग्य होवे, इस विषय को कहते हैं॥

वेत्था हि वेधो अध्वनः पथश्च देवाञ्जसा। अग्ने यज्ञेषु सुक्रतो॥३॥

वेत्थ। हि। वेधः। अध्वनः। पथः। च। देव। अञ्जसा। अग्ने। यज्ञेषु। सुक्रतो इति सुऽक्रतो॥३॥

पदार्थः-(**वेत्था**) अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**हि**) यतः (**वेधः**) मेधाविन् (**अध्वनः**) मार्गान् (**पथः**) (**च**) (**देव**) विज्ञानप्रद (**अञ्जसा**) स्वच्छन्देन वेगवत्त्वेन (**अग्ने**) प्रकाशात्मन् (**यज्ञेषु**) विद्याधर्म्मप्रचाराख्येषु व्यवहारेषु (**सुक्रतो**) सुष्ठुप्रज्ञ उत्तमकर्म्मन् वा॥३॥

अन्वयः-हे सुक्रतो देव वेधोऽग्ने! हि त्वं यज्ञेष्वञ्जसाऽध्वनः पथश्च वेत्था तस्मादस्मान् वेदय॥३॥

भावार्थः-अस्मिन्संसारे ये धर्मार्थकाममोक्षमार्गाञ्जानीयुस्त एवान्यानुपदिशेयुर्नेतरेऽज्ञा जनाः॥३॥

पदार्थः-हे (**सुक्रतो**) उत्तम ज्ञान वा उत्तम कर्म्मयुक्त (**देव**) विज्ञान के देने वाले (**वेधः**) मेधावी (**अग्ने**) प्रकाशात्मन्! (**हि**) जिससे आप (**यज्ञेषु**) विद्या और धर्म के प्रचार नामक व्यवहारों में (**अञ्जसा**) स्वतन्त्रतायुक्त वेगवालेपन से (**अध्वनः**) मार्गों को और (**पथः**) मार्गों को (**च**) भी (**वेत्था**) जानते हो इससे हम लोगों को जनाइये॥३॥

भावार्थः-इस संसार में जो मनुष्य धर्म्म, अर्थ, काम और मोक्ष के मार्गों को जानें, वे ही अन्यों को भी उपदेश देवें, न कि इतर अज्ञ जन॥३॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

त्वामी॑ळे॒ अध॑ द्वि॒ता भ॑र॒तो वा॒जिभि॑: शु॒नम्। ई॒जे य॒ज्ञेषु॑ य॒ज्ञिय॑म्॥४॥

त्वाम्। ई॒ळे॒। अध॑। द्वि॒ता। भ॒र॒तः। वा॒जिऽभि॑:। शु॒नम्। ई॒जे। य॒ज्ञेषु॑। य॒ज्ञिय॑म्॥४॥

पदार्थः-(**त्वाम्**) विद्वांसम् (**ईळे**) प्रशंसामि (**अध**) आनन्तर्ये (**द्विता**) द्वयोरध्यापकाध्येत्रोरुपदेष्टृपदेश्ययोर्भावः (**भरतः**) धर्ता पोषकः (**वाजिभिः**) विज्ञानादिभिः (**शुनम्**) सुखम् (**ईजे**) यजामि (**यज्ञेषु**) सङ्गतिमयेषु (**यज्ञियम्**) यज्ञं कर्त्तुमर्हम्॥४॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथाऽहं यज्ञेषु यज्ञियं त्वामीळेऽध द्विता भरतोऽहं वाजिभिः शुनमीजे तथा त्वं यज॥४॥

भावार्थः-विद्वद्भिः परस्परैर्विद्योन्नतिं विधायाऽन्येभ्यो ग्राहयितव्या॥४॥

पदार्थः-हे विद्वन्! जैसे मैं (**यज्ञेषु**) समागमरूप यज्ञों में (**यज्ञियम्**) यज्ञ करने योग्य (**त्वाम्**) आप विद्वान् की (**ईळे**) प्रशंसा करता हूँ (**अध**) इसके अनन्तर (**द्विता**) दो पढ़ाने और पढ़ने वाले वा उपदेश करने वा उपदेश पाने योग्यों का (**भरतः**) धारण और पोषण करने वाला मैं (**वाजिभिः**) विज्ञानादिकों से (**शुनम्**) सुख की (**ईजे**) सङ्गति करता हूँ, वैसे आप सङ्गति कीजिये॥४॥

भावार्थः-विद्वानों को चाहिये कि परस्पर विद्या की उन्नति करके अन्यों को ग्रहण करावें॥४॥

मनुष्याः कं सत्कुर्युरित्याह॥

मनुष्य किसका सत्कार करें, इस विषय को कहते हैं॥

त्वमि॒मा वार्या॑ पु॒रु दिवो॑दासाय सु॒न्व॒ते। भ॒रद्वा॑जाय दा॒शुषे॑॥५॥२१॥

त्वम्। इ॒मा। वार्या॑। पु॒रु। दिवः॑ऽदासाय। सु॒न्व॒ते। भ॒रत्ऽवा॑जाय। दा॒शुषे॑॥५॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**इमा**) इमानि (**वार्य्या**) वार्य्याणि स्वीकर्त्तुमर्हाणि (**पुरु**) बहूनि (**दिवोदासाय**) कमनीयस्य पदार्थस्य दात्रे (**सुन्वते**) सोमौषध्यादिसिद्धिसम्पादकाय (**भरद्वाजाय**) धृतविज्ञानाय (**दाशुषे**) विज्ञानस्य दात्रे॥५॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यतस्त्वं दिवोदासाय सुन्वते भरद्वाजाय दाशुष इमा पुरु वार्य्या ददासि तस्मात् प्रशंसनीयोऽसि॥५॥

भावार्थः-मनुष्यैस्सत्योपदेशका विद्याप्रचारकाश्च सदैव सत्कर्त्तव्या नेतरे॥५॥

पदार्थः-हे विद्वन्! जिस कारण से (**त्वम्**) आप (**दिवोदासाय**) कामना करने योग्य पदार्थ के देने और (**सुन्वते**) सोमलतारूप ओषधि आदि की सिद्धि करने वाले और (**भरद्वाजाय**) धारण किया विज्ञान जिसने उसके और (**दाशुषे**) विज्ञान के देने वाले के लिये (**इमा**) इन (**पुरु**) बहुत (**वार्य्या**) स्वीकार करने योग्यों को देते हो, इससे प्रशंसा करने योग्य हो॥५॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि सत्य के उपदेशकों और विद्या के प्रचारकों का सदा ही सत्कार करें, अन्य जनों का नहीं॥५॥

पुनर्विद्वद्भिः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर विद्वानों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

त्वं दूतो अमर्त्य आ वहा दैव्यं जनम्। शृण्वन् विप्रस्य सुष्टुतिम्॥६॥

त्वम्। दूतः। अमर्त्यः। आ। वह। दैव्यम्। जनम्। शृण्वन्। विप्रस्य। सुऽस्तुतिम्॥६॥

पदार्थः-**(त्वम्)** **(दूतः)** सर्वपदार्थविद्यासमाचारप्रज्ञापकः **(अमर्त्यः)** साधारणमनुष्यस्वभावविरुद्धः **(आ)** **(वहा)** समन्तात्प्रापय। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः **(दैव्यम्)** देवैः सम्पादितं विद्वांसम् **(जनम्)** प्रसिद्धम् **(शृण्वन्)** **(विप्रस्य)** मेधाविनः **(सुष्टुतिम्)** शोभनां प्रशंसाम्॥६॥

अन्वयः-हे विद्वनमर्त्यो दूतस्त्वं विप्रस्य सुष्टुतिं शृण्वन् दैव्यं जनमाऽऽवहा॥६॥

भावार्थः-हे परीक्षका! यूयं पक्षपातं विहाय विद्यार्थिनां यथावत्परीक्षां कृत्वा विदुषः सम्पादयत॥६॥

पदार्थः-हे विद्वन्! **(अमर्त्यः)** साधारण मनुष्यों के स्वभाव से विरुद्ध **(दूतः)** सम्पूर्ण पदार्थविद्याओं के समाचार के जनाने वाले **(त्वम्)** आप **(विप्रस्य)** बुद्धिमान् की **(सुष्टुतिम्)** सुन्दर प्रशंसा को **(शृण्वन्)** सुनते हुए **(दैव्यम्)** विद्वानों से सिद्ध किये गये विद्वान् **(जनम्)** जन को **(आ, वहा)** सब प्रकार से प्राप्त कराइये॥६॥

भावार्थः-हे परीक्षा करने वाले! आप लोग पक्षपात का त्याग करके विद्यार्थियों की यथावत् परीक्षा करके विद्यायुक्त कीजिये॥६॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

त्वामग्ने स्वाध्यो३ मर्तासो देववीतये। यज्ञेषु देवमीळते॥७॥

त्वाम्। अग्ने। सुऽआध्यः। मर्तासः। देवऽवीतये। यज्ञेषु। देवम्। ईळते॥७॥

पदार्थः-**(त्वाम्)** पूर्णविद्यमात्मम् **(अग्ने)** विद्याविनयाभ्यां प्रकाशात्मन् **(स्वाध्यः)** ये सुष्ठु समन्ताद् ध्यायन्ति **(मर्त्तासः)** मनुष्याः **(देववीतये)** विद्यादिदिव्यगुणप्राप्तये **(यज्ञेषु)** अध्यापनाध्ययनोपदेशाख्येषु व्यवहारेषु **(देवम्)** विज्ञानप्रदम् **(ईळते)** स्तुवन्ति॥७॥

अन्वयः-हे अग्ने विद्वन्! यथा स्वाध्यो मर्त्तासो देववीतये यज्ञेषु त्वां देवमीळते तथा वयं प्रशंसेम॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। विद्यार्थिभिर्विद्याप्राप्तये विद्वांसः सेवनीयाः। यथा सृष्टिपदार्थेष्वग्निः प्रशंसितोऽस्ति तथैव मनुष्येषु धार्मिका विद्वांसः सन्तीति वेद्यम्॥७॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्या और विनय से प्रकाशात्मा विद्वन्! जैसे **(स्वाध्यः)** उत्तम प्रकार चारों ओर से ध्यान करने वाले **(मर्त्तासः)** मनुष्य **(देववीतये)** विद्या आदि श्रेष्ठ गुणों की प्राप्ति के लिये **(यज्ञेषु)**

पढ़ाने पढ़ने और उपदेश नामक व्यवहारों में **(त्वाम्)** पूर्ण विद्यायुक्त यथार्थवक्ता आप **(देवम्)** विज्ञान के देने वाले की **(ईळते)** स्तुति करते हैं, उस प्रकार से हम लोग प्रशंसा करें॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। विद्यार्थियों को चाहिये कि विद्या की प्राप्ति के लिये विद्वानों का सेवन करें और जैसे सृष्टि के पदार्थों में अग्नि प्रशंसित है, वैसे ही मनुष्यों में धार्मिक विद्वान् हैं, यह जानना चाहिये॥७॥

पुनरध्यापकाऽध्येतारः परस्परं कथं वर्त्तेरन्नित्याह॥

फिर अध्यापक और पढ़नेवाले परस्पर कैसा वर्त्ताव करें, इस विषय को कहते हैं॥

तव प्र यक्षि संदृशमुत क्रतुं सुदानवः। विश्वे जुषन्त कामिनः॥८॥

तव। प्र। यक्षि। सम्ऽदृशम्। उत। क्रतुम्। सुऽदानवः। विश्वे। जुषन्त। कामिनः॥८॥

पदार्थः-**(तव)** विदुषः **(प्र)** **(यक्षि)** यज सङ्गमय **(सन्दृशम्)** सम्यग्दर्शनम् **(उत)** **(क्रतुम्)** प्रज्ञां कर्म्म वा **(सुदानवः)** शोभनदानाः **(विश्वे)** सर्वे **(जुषन्त)** सेवन्ते **(कामिनः)** कामयितुं शीलाः॥८॥

अन्वयः-हे विद्वन्! ये सुदानवो विश्वे कामिनो जनास्तव सन्दृशमुत क्रतुं जुषन्त तांस्त्वं तद्दानेन प्र यक्षि॥८॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! यथा विद्याकामा भवतः कामयन्ते तथैव भवन्तो विद्यार्थिनः कामयन्ताम्॥८॥

पदार्थः-हे विद्वन्! जो **(सुदानवः)** श्रेष्ठ दान के दाता **(विश्वे)** सब **(कामिनः)** कामना करने वाले जन **(तव)** विद्वान् आपके **(सन्दृशम्)** अच्छे दर्शन **(उत)** और **(क्रतुम्)** बुद्धि वा कर्म्म का **(जुषन्तु)** सेवन करते हैं, उन का आप उसके दान से **(प्र, यक्षि)** मेल कराइये॥८॥

भावार्थः-हे विद्वानो! जैसे विद्या की कामना करने वाले आप लोगों की कामना करते हैं, वैसे ही आप लोग विद्यार्थियों की कामना करो॥८॥

पुना राजा प्रजासु कथं वर्तेतेत्याह॥

फिर राजा प्रजाओं में कैसे वर्त्ताव करे, इस विषय को कहते हैं॥

त्वं होता मनुर्हितो वह्निरासा विदुष्टरः। अग्ने यक्षि दिवो विशः॥९॥

त्वम्। होता। मनुःऽहितः। वह्निः। आसा। विदुःऽतरः। अग्ने। यक्षि। दिवः। विशः॥९॥

पदार्थः-**(त्वम्)** **(होता)** दाता **(मनुर्हितः)** मनुष्याणां हितकारी **(वह्निः)** वोढा पावक इव **(आसा)** मुखेन **(विदुष्टरः)** विज्ञानवत्तमः **(अग्ने)** विपश्चित् **(यक्षि)** यज सुखं सङ्गमय **(दिवः)** कामयमानाः **(विशः)** प्रजाः॥९॥

अन्वयः-हे अग्ने राजन्! वह्निरिव होता मनुर्हितो विदुष्टरस्त्वमासा दिवो विशो यक्षि॥९॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे प्रजाजना! यथा पार्थिवो युष्मान् कामयते सुखं दातुमिच्छति तथा यूयमपि तं कामयित्वा तस्मै सततं सुखं प्रयच्छत॥९॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्वन्! राजन् **(वह्निः)** प्राप्त करने वाला अग्नि जैसे वैसे **(होता)** दाता **(मनुर्हितः)** मनुष्यों के हितकारी **(विदुष्टरः)** अत्यन्त विज्ञानवाले **(त्वम्)** आप **(आसा)** मुख से **(दिवः)** कामना करती हुई **(विशः)** प्रजाओं को **(यक्षि)** सुखयुक्त करिये॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे प्रजाजनो! जैसे राजा आप लोगों की कामना करता और सुख देने की इच्छा करता है, वैसे आप लोग भी उस राजा की कामना करके उसके लिये निरन्तर सुख दीजिये॥९॥

पुनर्विद्वद्भिः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर विद्वानों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

अग्न आ याहि वीतये गृणानो हव्यदातये। नि होता सत्सि बर्हिषि॥१०॥२२॥

अग्ने। आ। याहि। वीतये। गृणानः। हव्यऽदातये। नि। होता। सत्सि। बर्हिषि॥१०॥

पदार्थः-**(अग्ने)** विद्वन् **(आ)** **(याहि)** आगच्छ **(वीतये)** विद्यादिशुभगुणव्याप्तये **(गृणानः)** स्तुवन् **(हव्यदातये)** दातव्यदानाय **(नि)** **(होता)** दाता **(सत्सि)** समवैषि **(बर्हिषि)** उत्तमायां सभायाम्॥१०॥

अन्वयः-हे अग्ने! यतस्त्वं गृणानो होता बर्हिषि वीतये हव्यदातये निषत्सि तस्मादस्माकं समिधमाऽऽयाहि॥१०॥

भावार्थः-यत्र विद्वांसो विद्यावृद्धिं चिकीर्षन्ति तत्र सर्वे सुखिनो भवन्ति॥१०॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्वन्! जिस कारण से आप **(गृणानः)** स्तुति करते हुए **(होता)** दाता **(बर्हिषि)** उत्तम सभा में **(वीतये)** विद्या आदि श्रेष्ठ गुणों की व्याप्ति के लिये और **(हव्यदातये)** देने योग्य के दान के लिये **(नि, सत्सि)** उत्तम प्रकार जानते हो इससे **[हम]** लोगों की उत्तम दीप्ति को **(आ, याहि)** सब प्रकार प्राप्त होओ॥१०॥

भावार्थः-जहाँ विद्वान् जन विद्या की वृद्धि करने की इच्छा करते हैं, वहाँ सब सुखी होते हैं॥१०॥

पुनर्मनुष्याः परस्परं किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्य परस्पर क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

तं त्वा समिद्भिरङ्गिरो घृतेन वर्धयामसि। बृहच्छोचा यविष्ठ्य॥११॥

तम्। त्वा। समित्ऽभिः। अङ्गिरः। घृतेन। वर्धयामसि। बृहत्। शोच। यविष्ठ्य॥११॥

पदार्थः-**(तम्)** **(त्वा)** त्वाम् **(समिद्भिः)** सम्यक्प्रदीपकैः **(अङ्गिरः)** विद्युदिव वर्त्तमान **(घृतेन)** आज्येन **(वर्धयामसि)** वर्धयामः **(बृहत्)** महत् **(शोचा)** विचारय। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(यविष्ठ्य)** अतिशयेन युवसु साधो॥११॥

अन्वयः:-हे यविष्ठयाङ्गिरो! यथर्त्विजः समिद्भिर्घृतेनाग्निं वर्धयन्ति तथा ज्ञानकारणोपदेशेन तं त्वा वयं वर्धयामसि त्वं बृहच्छोचा॥११॥

भावार्थः:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये राजादयो जना घृतेनाग्निमिव शिक्षासत्काराभ्यां शूरम् वर्धयन्ति ते सदा विजयमाप्नुवन्ति॥११॥

पदार्थः:-हे **(यविष्ठ्य)** अत्यन्त युवा जनों में साधु **(अङ्गिरः)** बिजुली के समान वर्त्तमान! जैसे यज्ञ करनेवाले जन **(समिद्भिः)** उत्तम प्रकार प्रकाशक समिधरूप काष्ठों और **(घृतेन)** घृत से अग्नि की वृद्धि करते हैं, वैसे ज्ञान के कारण उपदेश से **(तम्)** उन **(त्वा)** आपकी हम लोग **(वर्धयामसि)** वृद्धि करते हैं और आप **(बृहत्)** बहुत **(शोचा)** विचारिये॥११॥

भावार्थः:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जो राजा आदि जन जैसे घृत से अग्नि की, वैसे शिक्षा और सत्कार से शूर जनों की वृद्धि करते हैं, वे सदा विजय को प्राप्त होते हैं॥११॥

पुनर्मनुष्यैः परस्परं कथं वर्त्तितव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को परस्पर कैसा वर्त्ताव करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

स नः पृथु श्रवाय्यमच्छा देव विवाससि। बृहदग्ने सुवीर्यम्॥१२॥

सः। नः। पृथु। श्रवाय्यम्। अच्छ। देव। विवाससि। बृहत्। अग्ने। सुऽवीर्यम्॥१२॥

पदार्थः:-**(सः)** **(नः)** अस्मभ्यम् **(पृथु)** विस्तीर्णम् **(श्रवाय्यम्)** श्रोतुमर्हम् **(अच्छा)** अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(देव)** विद्यादातः **(विवाससि)** परिचरसि **(बृहत्)** **(अग्ने)** अग्निरिव कार्य्यसाधक **(सुवीर्य्यम्)** सुबलम्॥१२॥

अन्वयः:-हे देवोऽग्नेऽग्निरिव यतस्त्वं नः पृथु श्रवाय्यं बृहत्सुवीर्य्यमच्छा विवाससि तस्मात् स त्वं सत्कर्त्तव्योऽसि॥१२॥

भावार्थः:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये यस्योपकारं कुर्वन्ति ते तस्य सत्कर्त्तव्या भवन्ति॥१२॥

पदार्थः:-हे **(देव)** विद्या के देने वाले **(अग्ने)** अग्नि के समान कार्य्य के साधक! जैसे अग्नि वैसे जिस कारण से आप **(नः)** हम लोगों के लिये **(पृथु)** विस्तारयुक्त **(श्रवाय्यम्)** सुनने योग्य **(बृहत्)** बड़े **(सुवीर्य्यम्)** श्रेष्ठ बलयुक्त **(अच्छा)** अच्छे प्रकार **(विवाससि)** सेवा करते हो इससे **(सः)** वह आप सत्कार करने योग्य हो॥१२॥

भावार्थः:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो जिसका उपकार करते हैं, वे उनके सत्कार करने योग्य होते हैं॥१२॥

मनुष्यैः कस्मात्कस्माद्विद्युत्स- ह्येत्याह॥

मनुष्य किस-किससे बिजुली का ग्रहण करें, इस विषय को कहते हैं॥

त्वामग्ने पुष्करादध्यथर्वा निरमन्थत। मूर्ध्नो विश्वस्य वाघतः॥१३॥

त्वाम्। अग्ने। पुष्करात्। अधि। अथर्वा। निः। अमन्थत। मूर्ध्नः। विश्वस्य। वाघतः॥१३॥

पदार्थः-(**त्वाम्**) (**अग्ने**) (**पुष्करात्**) अन्तरिक्षात् (**अधि**) उपरि (**अथर्वा**) अहिंसकः (**निः**) (**अमन्थत**) मन्थन्ति (**मूर्ध्नः**) उपरि वर्त्तमानस्य (**विश्वस्य**) सर्वस्य जगतः (**वाघतः**) मेधाविनः॥१३॥

अन्वयः-हे अग्ने विद्वन्! यथा वाघतो विश्वस्य मूर्ध्नः पुष्करादध्यग्निं निरमन्थत तथाऽथर्वाऽहं त्वां प्रदीपयामि॥१३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे विद्वांसो! यथा पदार्थविद्याविदो जनाः सूर्य्यादेः सकाशाद् विद्युतं गृहीत्वा कार्य्याणि साध्नुवन्ति तथैव यूयमपि साध्नुत॥१३॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के समान वर्त्तमान विद्वन्! जैसे (**वाघतः**) बुद्धिमान् जन (**विश्वस्य**) सम्पूर्ण जगत् के (**मूर्ध्नः**) ऊपर वर्त्तमान के (**पुष्करात्**) अन्तरिक्ष से (**अधि**) ऊपर अग्नि को (**निः, अमन्थत**) मथते हैं, वैसे (**अथर्वा**) अहिंसक मैं (**त्वाम्**) आपको प्रकाशित करता हूँ॥१३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे विद्वान् जनो! जैसे पदार्थविद्या के जाननेवाले जन सूर्य्य आदि के समीप से बिजुली को ग्रहण करके कार्य्यों को सिद्ध करते हैं, वैसे ही आप लोग भी सिद्ध करो॥१३॥

पुनर्विद्वद्भिः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर विद्वानों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

तमु त्वा दुध्यङ् ऋषिः पुत्र ईधे अथर्वणः। वृत्रहणं पुरंदरम्॥१४॥

तम्। ऊँ इति। त्वा। दुध्यङ्। ऋषिः। पुत्रः। ईधे। अथर्वणः। वृत्रऽहनम्। पुरम्ऽदुरम्॥१४॥

पदार्थः-(**तम्**) (**उ**) (**त्वा**) त्वाम् (**दध्यङ्**) यो धारकान् विदुषोऽञ्चति प्राप्नोति (**ऋषिः**) मन्त्रार्थवेत्ता (**पुत्रः**) तनयः (**ईधे**) प्रदीपयति (**अथर्वणः**) अहिंसकस्य (**वृत्रहणम्**) मेघहन्तारम् (**पुरन्दरम्**) यो मेघस्य पुराणि दृणाति॥१४॥

अन्वयः-हे विद्वन् राजंस्तमु वृत्रहणं पुरन्दरं सूर्य्यमिव त्वाऽथर्वणः पुत्रो दध्यङ् ऋषिरीधे तथा त्वं मां कुरु॥१४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे विद्वांसो! यथेश्वरेण प्रकाशमयः सकलोपकारकः सूर्यो निर्मितस्तथा विद्यया प्रकाशिताञ्जनान् विदुषः सम्पादयन्तु॥१४॥

पदार्थः-हे विद्वन् राजन् (**तम्, उ**) उन्हीं (**वृत्रहणम्**) मेघों के नाश करनेवाले (**पुरन्दरम्**) मेघों के पुरों को नाश करनेवाले सूर्य्य को जैसे वैसे (**त्वा**) आपको (**अथर्वणः**) नहीं हिंसा करनेवाले का (**पुत्रः**) पुत्र (**दध्यङ्**) धारण करनेवाले विद्वानों को प्राप्त होने और (**ऋषिः**) मन्त्र और अर्थ जानने वाला (**ईधे**) प्रदीप्त करता है, वैसे आप मुझ को करिये॥१४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे विद्वान् जनो! जैसे ईश्वर ने प्रकाशस्वरूप और सम्पूर्ण जगत् का उपकारक सूर्य्य रचा है, वैसे विद्या से प्रकाशित जनों को विद्वान् करो॥१४॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

तमु त्वा पाथ्यो वृषा समीधे दस्युहन्तमम्। धनञ्जयं रणेरणे॥ १५॥ २३॥

तम्। ऊँ इति। त्वा। पाथ्यः। वृषा। सम्। ईधे। दस्युहन्ऽतमम्। धनम्ऽजयम्। रणेऽरणे॥ १५॥

पदार्थः-(**तम्**) (उ) (**त्वा**) त्वाम् (**पाथ्यः**) पथिषु भवः (**वृषा**) वर्षकस्सूर्य्य इव वीर्य्यसेचकः (**सम्**) (**ईधे**) प्रापयति (**दस्युहन्तमम्**) यो दस्यूनतिशयेन हन्ति तम् (**धनञ्जयम्**) धनं जयति तम् (**रणेरणे**) स- ामे स- ामे॥ १५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा पाथ्यो वृषा दस्युहन्तमं रणेरणे धनञ्जयं तं त्वा समीधे तथा त्वं मामु समीधय॥ १५॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यदि यूयं विद्युद्विद्यां प्राप्य युध्यध्वं तर्हि युष्माकं बहूधनैश्वर्य्यप्रदोऽहं विद्युदादिना विजयं कारयेयम्॥ १५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**पाथ्यः**) मार्गों में हुए (**वृषा**) वर्षानेवाले सूर्य्य के समान वीर्य्य का सींचने वाला (**दस्युहन्तमम्**) डाकुओं को अतिशय मारने वाले (**रणेरणे**) प्रत्येक संग्राम में (**धनञ्जयम्**) धन को जीते (**तम्**) उन (**त्वा**) आपको (**सम्, ईधे**) प्राप्त कराता है, वैसे आप मुझे को (उ) भी प्राप्त कराइये॥ १५॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! यदि आप लोग बिजुली की विद्या को प्राप्त होकर युद्ध करो तो आप लोगों का बहुत धन और ऐश्वर्य्यों का देने वाला मैं बिजुली आदि से विजय कराऊँ॥ १५॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

एह्यू षु ब्रवाणि तेऽग्न इत्थेतरा गिरः। एभिर्वर्धास इन्दुभिः॥ १६॥

आ। इहि। ऊँ इति। सु। ब्रवाणि। ते। अग्ने। इत्था। इतराः। गिरः। एभिः। वर्धासे। इन्दुऽभिः॥ १६॥

पदार्थः-(**आ**) (**इहि**) आगच्छ (उ) (**सु**) (**ब्रवाणि**) उपदिशानि (**ते**) तव (**अग्ने**) विद्वन् (**इत्था**) अनेन प्रकारेण (**इतराः**) अर्वाचीनाः (**गिरः**) वाचः (**एभिः**) (**वर्धासे**) वर्द्धसे (**इन्दुभिः**) सोमलताभिश्चन्द्रकिरणैर्वा॥ १६॥

अन्वयः-हे अग्ने! यैरेभिरिन्दुभिस्त्वं वर्धासे तैरेहीत्थेतरास्ते गिरस्सु ब्रवाणि त्वमु शृणु॥ १६॥

भावार्थः-ये मनुष्या वयं विद्या अधीत्य सर्वानुपदिशेमेतीच्छन्ति तेऽस्मान् प्राप्नुवन्तु॥ १६॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) विद्वन् जन (**एभिः**) इन (**इन्दुभिः**) सोमलताओं वा चन्द्रकिरणों से आप (**वर्धासे**) वृद्धि को प्राप्त होते हो उनसे (**आ, इहि**) प्राप्त हूजिये (**इत्था**) इस प्रकार से (**इतराः**) पीछे की

(ते) आपकी **(गिरः)** वाणियों को **(सु, ब्रवाणि)** उत्तम प्रकार उपदेश करूं और आप **(उ)** तर्क वितर्क से सुनें॥१६॥

भावार्थः-जो मनुष्य, हम लोग विद्याओं को पढ़कर सब को उपदेश देवें, इस प्रकार इच्छा करते हैं, वे हम लोगों को प्राप्त होवें॥१६॥

मनुष्यैः कुत्र मनो धेयमित्याह॥

मनुष्यों को कहाँ मन स्थित करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

यत्र क्वं च ते मनो दक्षं दधस उत्तरम्। तत्रा सदः कृणवसे॥१७॥

यत्रं। क्वं। च। ते। मनः। दक्षम्। दधसे। उत्ऽतरम्। तत्रं। सदः। कृणवसे॥१७॥

पदार्थः-**(यत्र)** **(क्व)** कस्मिन् **(च)** **(ते)** तव **(मनः)** मननात्मकं चित्तम् **(दक्षम्)** बलम् **(दधसे)** **(उत्तरम्)** उत्तरन्ति येन तत् **(तत्रा)**। अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। **(सदः)** सीदन्ति यस्मिंस्तत् **(कृणवसे)** करोषि॥१७॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यत्र ते मन उत्तरं दक्षं च त्वं दधसे तत्रा सदः कृणवसे क्व वससीत्युत्तराणि वद॥१७॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यत्र जगदीश्वरे योगाभ्यासे वा युष्माकमन्तःकरणं पवित्रं भूत्वा कार्य्यसिद्धिं करोति तत्रैव यूयमपि प्रवर्त्तध्वम्॥१७॥

पदार्थः-हे विद्वन्! **(यत्र)** जहाँ **(ते)** आप का **(मनः)** विचारात्मक चित्त है और **(उत्तरम्)** पार होते हैं जिससे उस **(दक्षम्)** बल को **(च)** भी आप **(दधसे)** धारण करते हो **(तत्र)** वहाँ **(सदः)** स्थित होते हैं, जिसमें उसको **(कृणवसे)** करते हो तथा **(क्व)** कहाँ निवास करते हो, इस का उत्तर कहिये॥१७॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जहाँ जगदीश्वर वा योगाभ्यास में आप लोगों का अन्तःकरण पवित्र होकर कार्य्य की सिद्धि को करता है, वहाँ ही आप लोग भी प्रवृत्ति करिये॥१७॥

मनुष्याणां कथमिच्छा सिध्यतीत्याह॥

मनुष्यों की किस प्रकार से इच्छा सिद्ध होती है, इस विषय को कहते हैं॥

नहि ते पूर्तमक्षिपद्भुवन्नेमानां वसो। अथा दुवो वनवसे॥१८॥

नहि। ते। पूर्तम्। अक्षिऽपत्। भुवंत्। नेमानाम्। वसो इति। अथं। दुवः। वनवसे॥१८॥

पदार्थः-**(नहि)** निषेधे **(ते)** तव **(पूर्त्तम्)** पूर्त्तिकरम् **(अक्षिपत्)** क्षिपति **(भुवत्)** भवेत् **(नेमानाम्)** अन्नानाम्। **नेम इत्यन्ननाम।** (निघं०२.७) **(वसो)** वासयितः **(अथा)** अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। **(दुवः)** परिचरणम् **(वनवसे)** सम्भज॥१८॥

अन्वयः-हे वसो! ते नेमानां पूर्त्तं कश्चिदपि नह्यक्षिपत्। नहि भुवत्तस्मादथा दुवो वनवसे॥१८॥

भावार्थः-ये मनुष्याः सत्याचारं कुर्वन्ति तेषां कामपूर्तिं कदापि न हन्यते॥१८॥

पदार्थः-हे **(वसो)** वसाने वाले **(ते)** आपके **(नेमानाम्)** अन्नों के **(पूर्त्तम्)** पूर्ण करने वाले को मैं भी **(नहि)** नहीं **(अक्षिपत्)** फेंकता और नहीं **(भुवत्)** होवे, इससे **(अथा)** इसके अनन्तर **(दुवः)** सेवा को **(वनवसे)** स्वीकार करिये॥१८॥

भावार्थः-जो मनुष्य सत्य आचरण को करते हैं, उनकी कामना की पूर्ति कभी भी नहीं नष्ट की जाती है॥१८॥

अथाग्निः कीदृशोऽस्तीत्याह॥

अब अग्नि कैसा है, इस विषय को कहते हैं॥

आग्निरगामि भारतो वृत्रहा पुरुचेतनः। दिवोदासस्य सत्पतिः॥१९॥

आ। अग्निः। अगामि। भारतः। वृत्रऽहा। पुरुऽचेतनः। दिवःऽदासस्य। सत्ऽपतिः॥१९॥

पदार्थः-**(आ)** समन्तात् **(अग्निः)** अग्निरिव तेजस्वी **(अगामि)** गम्यते **(भारतः)** धर्ता पोषको वा **(वृत्रहा)** यो वृत्रं हन्ति सः **(पुरुचेतनः)** बहवश्चेतना यस्मिन् **(दिवोदासस्य)** प्रकाशदातुः **(सत्पतिः)**॥१९॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यो दिवोदासस्य भारतो वृत्रहा पुरुचेतनः सत्पतिरग्निः सूर्य्य आऽगामि तं वयं सेवेमहि॥१९॥

भावार्थः-यथाऽस्मिन् देहे साधनोपसाधनैः सहितो जीवो बहूनि कर्म्माणि करोति तथैव विद्वानखिलानि कर्म्माणि साध्नोति॥१९॥

पदार्थः-हे विद्वान् जनो! जो **(दिवोदासस्य)** प्रकाश के देनेवाले का **(भारतः)** धारण करने वा पोषण करने और **(वृत्रहा)** मेघ को नाश करने वाला **(पुरुचेतनः)** बहुत चेतन जिसमें वह **(सत्पतिः)** श्रेष्ठ स्वामी **(अग्निः)** अग्नि के सदृश तेजस्वी सूर्य्य **(आ, अगामि)** प्राप्त किया जाता है, उसका हम लोग सेवन करें॥१९॥

भावार्थः-जैसे इस देह में साधन और उपसाधनों के सहित जीव बहुत कर्म्मों को करता है, वैसे ही विद्वान् सम्पूर्ण कर्म्मों को सिद्ध करता है॥१९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

स हि विश्वाति पार्थिवा रयिं दाशन्महित्वना। वन्वन्नवातो अस्तृतः॥२०॥२४॥

सः। हि। विश्वा। अति। पार्थिवा। रयिम्। दाशत्। महिऽत्वना। वन्वन्। अवातः। अस्तृतः॥२०॥

पदार्थः-(**सः**) (**हि**) (**विश्वा**) सर्वाणि (**अति**) (**पार्थिवा**) पृथिव्यां विदितानि वस्तूनि (**रयिम्**) धनम् (**दाशत्**) (**महित्वना**) महत्त्वेन (**वन्वन्**) सम्भजन् (**अवातः**) वायुवर्जितः (**अस्तृतः**) अहिंसितः॥२०॥

अन्वयः-हे मनुष्या! योऽस्तृतोऽवातो महित्वना वन्वन्नग्निर्विश्वा पार्थिवा रयिमति दाशत्स हि सर्वैर्वेदितव्योऽस्ति॥२०॥

भावार्थः-हे मनुष्या! योऽग्निर्बहु सुखं ददाति सः कथन्न सेव्येत॥२०॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**अस्तृतः**) नहीं हिंसित (**अवातः**) पवन से वर्जित (**महित्वना**) महत्त्व से (**वन्वन्**) सेवन करता हुआ अग्नि (**विश्वा**) सम्पूर्ण (**पार्थिवा**) पृथिवी में विदित वस्तुओं और (**रयिम्**) धन को (**अति, दाशत्**) अत्यन्त देता है (**सः, हि**) वह सब लोगों से जानने योग्य है॥२०॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो अग्नि बहुत सुख को देता है, उसका क्यों नहीं सेवन किया जावे॥२०॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

स प्रत्नवन्नवीयसाग्ने द्युम्नेन संयता। बृहत्ततन्थ भानुना॥२१॥

सः। प्रत्नऽवत्। नवीयसा। अग्ने। द्युम्नेन। सम्ऽयता। बृहत्। ततन्थ। भानुना॥२१॥

पदार्थः-(**सः**) (**प्रत्नवत्**) प्राचीनवत् (**नवीयसा**) अतिशयेन नवीनेन (**अग्ने**) अग्निरिव विद्वन् (**द्युम्नेन**) धनेन यशसा वा (**संयता**) संयच्छन्ति येन तेन (**बृहत**) महत् (**ततन्थ**) तनोति (**भानुना**) किरणेन॥२१॥

अन्वयः-हे अग्ने! यथा सूर्यो भानुना प्रत्नवद्बृहत्ततन्थ तथा स त्वं नवीयसा संयता द्युम्नेनास्मांस्तनु॥२१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये सूर्य्यवद्यशस्विनो भवन्ति ते नूतनां प्रतिष्ठां लभन्ते॥२१॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के समान तेजस्वी विद्वन्! जैसे सूर्य्य (**भानुना**) किरण से (**प्रत्नवत्**) प्राचीन के सदृश (**बृहत्**) बड़े को (**ततन्थ**) विस्तृत करता है, वैसे (**सः**) वह आप (**नवीयसा**) अत्यन्त नवीन (**संयता**) उत्तम प्रकार देते हैं जिससे उस (**द्युम्नेन**) धन वा यश से हम लोगों को विस्तृत करो॥२१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो सूर्य्य के सदृश यशस्वी होते हैं, वे नवीन-नवीन प्रतिष्ठा को प्राप्त होते हैं॥२१॥

मनुष्यैः कथं वर्त्तितव्यमित्याह॥

मनुष्यों को कैसा वर्त्ताव करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

प्र वः सखायो अग्नये स्तोमं यज्ञं च धृष्णुया। अर्च गाय च वेधसे॥२२॥

प्र। वः। सखायः। अग्नये। स्तोमम्। यज्ञम्। च। धृष्णुऽया। अर्च। गाय। च। वेधसे॥२२॥

पदार्थः-(प्र) (वः) युष्माकम् **(सखायः) (अग्नये)** अग्निवद्वर्त्तमानाय। अत्र तादर्थ्ये चतुर्थी। **(स्तोमम्)** स्तुतिम् **(यज्ञम्)** सत्यं व्यवहारम् **(च) (धृष्णुया)** दृढत्वेन **(अर्च)** सत्कुरु **(गाय)** प्रशंस **(च) (वेधसे)** मेधाविने॥२२॥

अन्वयः-हे सखायो! यो: वः स्तोमं यज्ञं च निष्पादयति तं यूयं सत्कुरुत। हे विद्वन्! यस्त्वयि मित्रवद्वर्त्तते तस्मै वेधसेऽग्नये त्वं धृष्णुया प्रार्च गाय च॥२२॥

भावार्थः-सूर्य्य एव यज्ञफलावाप्तिसाधकोऽस्ति तथाऽऽप्ता धर्म्मात्मानः परोपकारकुशला भवन्तीति विज्ञाय जगति वर्त्तेत॥२२॥

पदार्थः-हे **(सखायः)** मित्रो! जो **(वः)** आप लोगों की **(स्तोमम्)** स्तुति और **(यज्ञम्)** सत्य व्यवहार को **(च)** भी उत्पन्न करता है, उसका आप लोग सत्कार करो और हे विद्वन्! जो आप में जैसे मित्र, वैसे वर्त्तता है उस **(वेधसे)** बुद्धिमान् **(अग्नये)** अग्नि के समान वर्त्तमान के लिये आप **(धृष्णुया)** दृढ़ता के साथ **(प्र, अर्च)** अच्छे प्रकार सत्कार करिये **(गाय, च)** और प्रशंसा करिये॥२२॥

भावार्थः-सूर्य्य ही यज्ञफलों की प्राप्ति का साधक है, वैसे यथार्थ कहने और करनेवाले धर्म्मात्मा जन परोपकार में कुशल होते हैं, ऐसा जानकर संसार में वर्त्ताव करें॥२२॥

पुनः सोऽग्निः कीदृशोऽस्तीत्याह॥

फिर वह अग्नि कैसा है, इस विषय को कहते हैं॥

स हि यो मानुषा युगा सीदद्धोता कविक्रतुः। दूतश्च हव्यवाहनः॥२३॥

सः। हि। यः। मानुषा। युगा। सीदत्। होता। कविऽक्रतुः। दूतः। च। हव्यऽवाहनः॥२३॥

पदार्थः-(सः) (हि) यः (वः) (मानुषा) मनुष्यसम्बन्धीनि **(युगा)** युगानि वर्षाणि वर्षसमुदितानि वा **(सीदत्)** सीदति **(होता)** दाता **(कविक्रतुः)** महान् विद्वान् **(दूतः) (च) (हव्यवाहनः)** यो हव्यानि हुतानि द्रव्याणि वहति॥२३॥

अन्वयः-यो हव्यवाहनो दूतश्चाग्निर्मानुषा युगा सीदत् स हि होता कविक्रतुरिव कार्य्यसाधको भवति॥२३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। योऽग्निर्धार्मिकविद्वत्कार्य्यकरो भवति स हि विद्वद्भिः कार्य्यसिद्धये सम्प्रयोक्तव्यः॥२३॥

पदार्थः-(यः) जो **(हव्यवाहनः)** हनव किये गये द्रव्यों को प्राप्त कराने पहुँचाने वाला और **(दूतः)** दूतवत् वर्त्तमान **(च)** भी अग्नि **(मानुषा)** मनुष्य-सम्बन्धी **(युगा)** वर्ष वा वर्षसमुदायों को **(सींदत्)** प्राप्त होती है **(सः) (हि)** वही **(होता)** दाता **(कविक्रतुः)** बड़ा विद्वान् जैसे वैसे कार्य का साधक होता है॥२३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो अग्नि धार्मिक और विद्वानों के कार्य्यों का करने वाला होता है, उसको विद्वान् जन कार्य्यों की सिद्धि के लिये सम्प्रयुक्त करें॥२३॥

पुनर्मनुष्यै किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहेत हैं॥

ता राजा॑ना॒ शुचि॑व्रताादि॒त्यान् मारु॑तं ग॒णम्। वसो॒ यक्षी॒ह रोद॑सी॥२४॥

ता। राजा॑ना। शुचि॑ऽव्रता। आ॒दि॒त्यान्। मारु॑तम्। ग॒णम्। वसो॒ इति॑। यक्षि॑। इ॒ह। रोद॑सी॒ इति॑॥२४॥

पदार्थः-(**ता**) तौ मित्रवद्वर्त्तमानौ (**राजाना**) प्रकाशमानौ (**शुचिव्रता**) पवित्रकर्म्माणौ (**आदित्यान्**) द्वादश मासान् (**मारुतम्**) मरुतां मनुष्याणामिमम् (**गणम्**) समूहम् (**वसो**) शुभगुणवासयितः (**यक्षि**) सङ्गमय (**इह**) अस्मिन् संसारे (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ॥२४॥

अन्वयः-हे वसो! त्वमिह ता शुचिव्रता राजानाऽऽदित्यान् मारुतं गणं रोदसी च यक्षि॥२४॥

भावार्थः-ये मनुष्या अध्यापकाऽध्येत्रादीन् सेवित्वा पदार्थविद्यां गृह्णन्ति ते सुखिनो भवन्ति॥२४॥

पदार्थः-हे (**वसो**) श्रेष्ठ गुणों के वसाने वाले! आप (**इह**) इस संसार में (**ता**) उन दोनों मित्र के सदृश वर्त्तमान (**शुचिव्रता**) पवित्र कर्म्मवाले (**राजाना**) प्रकाशमान हुए तथा (**आदित्यान्**) बारह महीनों और (**मारुतम्**) मनुष्य सम्बन्धी इस (**गणम्**) समूह को (**रोदसी**) अन्तरिक्ष और पृथिवी को (**यक्षि**) उत्तम प्रकार प्राप्त कराइये॥२४॥

भावार्थः-जो मनुष्य पढ़ाने और पढ़ने वाले आदिकों की सेवा करके पदार्थविद्या को ग्रहण करते हैं, वे सुखी होते हैं॥२४॥

उत्तमस्य व्यवहारः सङ्गो वा निष्फलो न भवतीत्याह॥

उत्तम जन का व्यवहार वा सङ्ग निष्फल नहीं होता, इस विषय को कहते हैं॥

वस्वी॑ ते अग्ने॒ संदृ॑ष्टिरिषय॒ते मर्त्या॑य। ऊर्जो॑ नपादमृत॑स्य॥२५॥२५॥

वस्वी॑। ते॒। अ॒ग्ने॒। सम्ऽदृ॑ष्टिः। इ॒ष॒ऽय॒ते। मर्त्या॑य। ऊर्जः॑। न॒पा॒त्। अ॒मृत॑स्य॥२५॥

पदार्थः-(**वस्वी**) पृथिव्यादिवसुसम्बन्धिनी (**ते**) तव (**अग्ने**) पावक इव (**सन्दृष्टिः**) सम्यक् पश्यन्ति यथा सा (**इषयते**) इषमन्नं विज्ञान वां कामयमानाय (**मर्त्याय**) मनुष्याय (**ऊर्जः**) बलादियुक्तस्य (**नपात्**) या न पतति (**अमृतस्य**) नाशरहितस्य॥२५॥

अन्वयः-हे अग्ने! ते वस्वी सन्दृष्टिरिषयते मर्त्यायाऽमृतस्योर्जो नपाद्भवति॥२५॥

भावार्थः-यस्य विदुषो विद्यादर्शनं निष्फलं न जायते, यस्मादधीत्य विद्वांसो भवन्ति तं सदा सत्कुरुत॥२५॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के समान वर्त्तमान (**ते**) आपकी (**वस्वी**) पृथिवी आदि वसुसम्बन्धिनी (**सन्दृष्टिः**) उत्तम प्रकार देखते जिससे वह दृष्टि (**इषयते**) अन्न वा विज्ञान की कामना करते हुए (**मर्त्याय**)

मनुष्य के लिये **(अमृतस्य)** नाशरहित और **(ऊर्जः)** बल आदि युक्त की **(नपात्)** नहीं गिरने वाली होती है॥२५॥

भावार्थः-जिस विद्वान् का विद्यादर्शन-विद्या निष्फल नहीं होता और जिससे पढ़कर विद्यार्थी जन विद्वान् होते हैं, उसका सदा सत्कार करो॥२५॥

पुनर्विदुषा किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर विद्वान् को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

क्रत्वा दा अस्तु श्रेष्ठोऽद्य त्वा वन्वन् सुरेक्णाः। मर्त आनाश सुवृक्तिम्॥२६॥

क्रत्वा। दाः। अस्तु। श्रेष्ठः। अद्य। त्वा। वन्वन्। सुऽरेक्णाः। मर्तः। आनाश। सुऽवृक्तिम्॥२६॥

पदार्थः-(क्रत्वा) प्रज्ञया कर्म्मणा वा **(दाः)** यो ददाति **(अस्तु)** **(श्रेष्ठः)** धर्म्यगुणकर्म्मस्वभावातिशययुक्तः **(अद्य)** **(त्वा)** त्वाम् **(वन्वन्)** सम्भजन् **(सुरेक्णाः)** शोभनं रेक्णः धनं यस्य सः। **रेक्ण इति धननाम।** (निघं०२.१०) **(मर्त्तः)** मनुष्यः **(आनाश)** व्याप्नुयात् **(सुवृक्तिम्)** सुष्ठु व्रजन्ति दुःखानि यया ताम्॥२६॥

अन्वयः-श्रेष्ठः सुरेक्णा मर्त्तोऽद्य क्रत्वा सुवृक्तिमानाश त्वा वन्वन् सुख्यस्तु त्वं विद्यां दाः॥२६॥

भावार्थः-त एवोत्तमा गणनीया ये विज्ञानं प्रयच्छन्ति॥२६॥

पदार्थः-(श्रेष्ठः) धर्मयुक्त गुण कर्म्म और स्वभाव से अतिशय युक्त **(सुरेक्णाः)** सुन्दर धन वाला **(मर्त्तः)** मनुष्य **(अद्य)** आज **(क्रत्वा)** बुद्धि वा कर्म से **(सुवृक्तिम्)** उत्तम प्रकार जाते हैं, दुःख जिसके द्वार उसको **(आनाश)** व्याप्त हो और **(त्वा)** आप का **(वन्वन्)** सेवन करता हुआ सुखी **(अस्तु)** हो और आप विद्या के **(दाः)** देनेवाले होओ॥२६॥

भावार्थः-वे ही उत्तम जन गणनीय हैं, जो विज्ञान को देते हैं॥२६॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिए, इस विषय को कहते हैं॥

ते ते अग्ने त्वोता इषयन्तो विश्वमायुः।
तरन्तो अर्यो अरातीर्वन्वन्तो अर्यो अरातीः॥२७॥

ते। ते। अग्ने। त्वाऽऊताः। इषयन्तः। विश्वम्। आयुः। तरन्तः। अर्यः। अरातीः। वन्वन्तः। अर्यः। अरातीः॥२७॥

पदार्थः-(ते) **(ते)** तव **(अग्ने)** अग्निरिव विद्यया प्रकाशमान **(त्वोताः)** त्वया रक्षिताः **(इषयन्तः)** इषमन्नं कामयमानाः **(विश्वम्)** सर्वम् **(आयुः)** जीवनम् **(तरन्तः)** उल्लङ्घयन्तः **(अर्य्यः)** स्वामी **(अरातीः)** न विद्यते रातिर्दानं येषु तान् कृपणान् विरोधिनः **(वन्वन्तः)** विभजन्तः **(अर्य्यः)** **(अरातीः)**॥२७॥

अन्वयः-हे अग्ने! यस्तेऽर्य आज्ञापयेत्तत्त्वं कुरु। ये च त्वोता इषयन्तो विश्वमायुस्तरन्तोऽरातीर्वन्वतोऽरातीर्विजयन्ते ते तव सम्बन्धिनः सन्तु त्वमेषामर्य्यो भव॥२७॥

भावार्थः-ये ब्रह्मचर्य्यादिना रोगन्निवार्य्य चिरञ्जीविनः स्युस्ते धार्मिकाः सर्वकार्य्येष्वध्यक्षा भवन्तु॥२७॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के समान विद्या से प्रकाशमान! जो **(ते)** आप का **(अर्य्यः)** स्वामी आज्ञा देवे उसको आप करिये और जो **(त्वोताः)** आप से रक्षित **(इषयन्तः)** अन्न की कामना करते और **(विश्वम्)** सम्पूर्ण **(आयुः)** जीवन के **(तरन्तः)** पार होते हुए **(अरातीः)** नहीं विद्यमान दान जिनमें उन कृपण विरोधियों का **(वन्वन्तः)** विभाग करते हुए तथा **(अरातीः)** जिनमें दान नहीं उन शत्रुओं को विशेष करके जीतते हैं, वे **(ते)** आपके सम्बन्धी होवें, आप इनके **(अर्य्यः)** स्वामी होओ॥२७॥

भावार्थः-जो ब्रह्मचर्य आदि से रोगों को दूर करके चिरञ्जीवी होवें, वे धार्मिक सम्पूर्ण कार्य्यों में अध्यक्ष हों॥२७॥

पुना राज्ञा किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर राजा को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

अग्निस्तिग्मेन शोचिषा यासद्विश्वं न्य१त्रिणम्। अग्निर्नो वनते रयिम्॥२८॥

अग्निः। तिग्मेन। शोचिषा। यासत्। विश्वम्। नि। अत्रिणम्। अग्निः। नः। वनते। रयिम्॥२८॥

पदार्थः-**(अग्निः)** पावकः **(तिग्मेन)** तीव्रेण **(शोचिषा)** ज्योतिषा **(यासत्)** प्रयतेत **(विश्वम्)** समग्रम् **(नि)** **(अत्रिणम्)** शत्रुम् **(अग्निः)** पावक इव **(नः)** अस्मभ्यम् **(वनते)** सम्भजति **(रयिम्)** द्रव्यम्॥१८॥

अन्वयः-हे राजन्! यथाऽग्निस्तिग्मेन शोचिषा प्राप्तं वस्तु वहति तथा यो विश्वमत्रिणं नि यासत्तथा च योऽग्निर्नो रयिं वनते तमध्यक्षं कुरु॥२८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। राज्ञाऽधिकारिस्थापने प्रजासम्मतिरपि ग्राह्यैवं सति कदाप्युपद्रवो न जायते॥२८॥

पदार्थः-हे राजन्! जैसे **(अग्निः)** अग्नि **(तिग्मेन)** तीव्र **(शोचिषा)** प्रकाश से प्राप्त हुए वस्तु को जलाता है, वैसे जो **(विश्वम्)** सम्पूर्ण **(अत्रिणम्)** शत्रु के प्रति **(नि यासत्)** प्रयत्न करे और वैसे जो **(अग्निः)** अग्नि के सदृश **(नः)** हम लोगों के लिये **(रयिम्)** द्रव्य का **(वनते)** सेवन करता है, उसको अध्यक्ष करिये॥२८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। राजा को चाहिये कि अधिकारियों के नियत करने में प्रजा की सम्मति भी ग्रहण करे, ऐसा होने पर कभी भी उपद्रव नहीं होता है॥२८॥

पुना राज्ञं किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर राजा को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

सुवीरं रयिमा भर जातवेदो विचर्षणे। जहि रक्षांसि सुक्रतो॥२९॥

सुऽवीर॑म्। र॒यिम्। आ। भ॒र। जात॑ऽवेदः। विऽच॑र्षणे। ज॒हि। रक्षां॑सि। सु॒क्र॒तो॒ इति॑ सुऽक्रतो॥ २९॥

पदार्थः-(**सुवीरम्**) शोभना वीरा येन भवन्ति तम् (**रयिम्**) धनम् (**आ**) (**भर**) (**जातवेदः**) जातप्रज्ञानबल (**विचर्षणे**) तेजस्विन् (**जहि**) (**रक्षांसि**) दुष्टाचारान् (**सुक्रतो**) सुष्ठु प्रज्ञाकर्म्मयुक्त॥२९॥

अन्वयः-हे जातवेदो विचर्षणे सुक्रतो! राजँस्त्वं सुवीरं रयिमाऽऽभर रक्षांसि जहि॥२९॥

भावार्थः-राज्ञा सदैव धनादिना धार्मिका विपश्चितः क्षत्रियकुलोद्भवा वीराः संरक्ष्य दुष्टाः सदा तिरस्करणीयाः॥२९॥

पदार्थः-हे (**जातवेदः**) उत्पन्न हुआ प्रज्ञानबल जिनके उन (**विचर्षणे**) तेजस्वी तथा (**सुक्रतो**) उत्तम बुद्धि और कर्म्म से युक्त राजन्! आप (**सुवीरम्**) सुन्दर वीर जिससे होते हैं उस (**रयिम्**) धन को (**आ, भर**) सब ओर से धारण करिये और (**रक्षांसि**) दुष्टाचारियों को (**जहि**) नष्ट करिये॥२९॥

भावार्थः-राजा को चाहिये कि सदा ही धन आदि से धार्मिक विद्वान् और क्षत्रिय कुल में हुए वीरों की उत्तम प्रकार रक्षा करे और दुष्टों का सदा तिरस्कार करे॥२९॥

पुना राजविद्वद्भ्यां किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर राजा और विद्वान् क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

त्वं नः॑ पा॒ह्यंह॑सो॒ जात॑वेदो अघाय॒तः। रक्षा॑ णो ब्रह्मणस्कवे॥ ३०॥ २६॥

त्वम्। न॒ः। पा॒हि॒। अंह॑सः। जात॑ऽवेदः। अ॒घ॒ऽय॒तः। रक्ष॑। न॒ः। ब्र॒ह्म॒ण॒ः। क॒वे॒॥ ३०॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**नः**) अस्मान् (**पाहि**) (**अंहसः**) अधर्माचरणात् (**जातवेदः**) जातविद्य (**अघायतः**) आत्मनोऽघमाचरतः (**रक्षा**) अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**नः**) अस्मान् (**ब्रह्मणः**) वेदस्य (**कवे**) वक्तः॥३०॥

अन्वयः-हे जातवेदो ब्रह्मणस्कवे! त्वं नोंऽहसः पाहि नोऽघायतो रक्षा॥३०॥

भावार्थः-हे राजन् विद्वन् वा! युवामस्मानधर्माचरणादधर्म्ममाचरतश्च पृथग्रक्ष्य सुखं वर्धयतम्॥३०॥

पदार्थः-हे (**जातवेदः**) विद्या से युक्त (**ब्रह्मणः**) वेद के (**कवे**) कहने वाले! (**त्वम्**) आप (**नः**) हम लोगों की (**अंहसः**) अधर्माचरण से (**पाहि**) रक्षा कीजिये और (**नः**) हम लोगों की (**अघायतः**) अपने पाप करते हुए से (**रक्षा**) रक्षा कीजिये॥३०॥

भावार्थः-हे राजन् वा विद्वन्! आप दोनों हम लोगों का अधर्म्माचरण और अधर्म्म का आचरण करते हुए से अलग करके सुख को बढ़ाइये॥३०॥

पुनर्न्यायाधीशः किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर न्यायाधीश क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

यो नो॑ अग्ने दु॒रेव॒ आ मर्तो॑ व॒धाय॒ दाश॑ति। तस्मा॑न्नः पा॒ह्यंह॑सः॥ ३१॥

यः। न॒ः। अ॒ग्ने॒। दुः॒ऽएव॑ः। आ। मर्तः॑। व॒धाय॑। दाश॑ति। तस्मा॑त्। न॒ः। पा॒हि॒। अंह॑सः॥ ३१॥

पदार्थः-(**यः**) (**नः**) अस्मान् (**अग्ने**) न्यायाधीश (**दुरेवः**) दुष्टाचरणम् (**आ**) (**मर्त्तः**) मनुष्यः (**वधाय**) हननाय (**दाशति**) ददाति (**तस्मात्**) (**नः**) अस्मान् (**पाहि**) (**अंहसः**) अधर्माचरणम्॥३१॥

अन्वयः-हे अग्ने! यो मर्त्तो नो वधाय दुरेवो दाशति तस्मादंहसो न आ पाहि॥३१॥

भावार्थः-हे न्यायाधीश! ये विना कृतेनाऽपराधं स्थापयन्ति तेभ्यः तीव्रं दण्डं देहि॥३१॥

पदार्थः–हे (**अग्ने**) न्यायाधीश (**यः**) जो (**मर्त्तः**) मनुष्य (**नः**) हम लोगों को (**वधाय**) मारने के लिये (**दुरेवः**) दुष्ट आचरण को (**दाशति**) देता है (**तस्मात्**) उस (**अंहसः**) अधर्माचरण से (**नः**) हम लोगों की (**आ, पाहि**) रक्षा कीजिये॥३१॥

भावार्थः-हे न्यायाधीश! जो करने के विना अपराध को स्थापित करते हैं, उनके लिये तीव्र दण्ड को दीजिये॥३१॥

पुना राजा किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर राजा को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

त्वं तं दे॑व जि॒ह्वया॒ परि॑ बाधस्व दु॒ष्कृत॑म्। मर्तो॒ यो नो॒ जिघां॑सति॥३२॥

त्वम्। तम्। दे॒व॒। जि॒ह्वया॑। परि॑। बा॒ध॒स्व॒। दुः॒ऽकृत॑म्। मर्तः॑। यः। नः॒। जिघां॑सति॥३२॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**तम्**) (**देव**) विद्वन् न्यायेश (**जिह्वया**) वाचा (**परि**) सर्वतः (**बाधस्व**) (**दुष्कृतम्**) यो दुष्टं कर्म करोति तम् (**मर्त्तः**) मनुष्यः (**यः**) (**नः**) अस्मान् (**जिघांसति**) हन्तुमिच्छति॥३२॥

अन्वयः-हे देव! त्वं यो मर्त्तो नो जिघांसति तं दुष्कृतं जिह्वया परि बाधस्व॥३२॥

भावार्थः-हे राजन् विद्वन् वा! यो न्यायधर्म्मं विहाय पक्षपातेनाधर्म्मं करोति तं सद्यो भृशं दण्डय॥३२॥

पदार्थः–हे (**देव**) विद्यायुक्त न्यायाधीश! (**त्वम्**) आप (**यः**) जो (**मर्त्तः**) मनुष्य (**नः**) हम लोगों की (**जिघांसति**) मारने की इच्छा करता है (**तम्**) उस (**दुष्कृतम्**) दुष्ट कर्म्म करने वाले को (**जिह्वया**) वाणी से (**परि**) सब ओर से (**बाधस्व**) पीड़ित करिये॥३२॥

भावार्थः-हे राजन् वा विद्वन्! जो न्यायधर्म का त्याग करके पक्षपात से अधर्म्म करता है, उसको शीघ्र निरन्तर दण्ड दीजिये॥३२॥

पुन राज्ञा किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर राजा को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

भ॒रद्वा॑जाय स॒प्रथः॒ शर्म॑ यच्छ सहन्त्य। अग्ने॒ वरे॑ण्यं॒ वसु॑॥३३॥

भ॒रत्ऽवा॑जाय। स॒ऽप्रथः॑। शर्म॑। य॒च्छ॒। स॒ह॒न्त्य॒। अग्ने॑। वरे॑ण्यम्। वसु॑॥३३॥

पदार्थः-(**भरद्वाजाय**) धृतविज्ञानाऽन्नाय (**सप्रथः**) प्रख्यात्या सह वर्त्तमानः (**शर्म**) गृहम् (**यच्छ**) देहि (**सहन्त्य**) सहन्तेषु शान्तेषु भव (**अग्ने**) दातः (**वरेण्यम्**) स्वीकर्त्तुमर्हम् (**वसु**) द्रव्यम्॥३३॥

अन्वयः-हे सहन्त्यग्ने! त्वं भरद्वाजाय सप्रथः शर्म्म वरेण्यं वसु च यच्छ॥३३॥

भावार्थः-हे सद्गृहस्थ! त्वं सदैव सुपात्राय धार्मिकाय जनाय दानं देहि॥३३॥

पदार्थः-हे **(सहन्त्य)** शान्त जनों में हुए **(अग्ने)** दाता जन! आप **(भरद्वाजाय)** विज्ञान और अन्न को धारण किये हुए जन के लिये **(सप्रथः)** प्रसिद्धि के सहित वर्त्तमान **(शर्म)** गृह को और **(वरेण्यम्)** स्वीकार करने योग्य **(वसु)** द्रव्य को **(यच्छ)** दीजिये॥३३॥

भावार्थः-हे श्रेष्ठ गृहस्थ! आप सदा ही सुपात्र धार्मिकजन के लिये दान दीजिये॥३३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

अग्निर्वृत्राणि जङ्घनद् द्रविणस्युर्विपन्यया। समिद्धः शुक्र आहुतः॥३४॥

अग्निः। वृत्राणि। जङ्घनत्। द्रविणस्युः। विपन्यया। सम्ऽइद्धः। शुक्रः। आऽहुतः॥३४॥

पदार्थः-**(अग्निः)** विद्युत् **(वृत्राणि)** धनानि। **वृत्रमिति धननाम।** (निघं०२.१०) **(जङ्घनत्)** भृशं हन्ति प्राप्नोति **(द्रविणस्युः)** आत्मनो द्रविणमिच्छुः **(विपन्यया)** विशिष्टोद्यमेन **(समिद्धः)** प्रदीप्तः **(शुक्रः)** आशुकारी **(आहुतः)** समन्तात् कृतसत्कारः॥३४॥

अन्वयः-हे विद्वन्नुद्यमिन्! यथा शुक्रः समिद्धोऽग्निर्वृत्राणि जङ्घनत् तथा द्रविणस्युराहुतस्त्वं विपन्यया वृत्राणि प्राप्नुहि॥३४॥

भावार्थः-ये सततमुद्यमं कुर्वन्ति ते दारिद्र्यं घ्नन्ति॥३४॥

पदार्थः-हे विद्वन्! उद्योगवाले जैसे **(शुक्रः)** शीघ्रकारिणी **(समिद्धः)** प्रदीप्त **(अग्निः)** बिजुली **(वृत्राणि)** धनों को **(जङ्घनत्)** अत्यन्त प्राप्त होती है, वैसे **(द्रविणस्युः)** अपने धन की इच्छा करने वाले **(आहुतः)** सब प्रकार सत्कार को प्राप्त आप **(विपन्यया)** विशिष्ट उद्यम से धनों को प्राप्त होओ॥३४॥

भावार्थः-जो निरन्तर उद्यम करते वे दारिद्र्य का नाश करते हैं॥३४॥

पुनरीश्वरः कीदृशोऽस्तीत्याह॥

फिर ईश्वर कैसा है, इस विषय को कहते हैं॥

गर्भे मातुः पितुष्पिता विदिद्युतानो अक्षरे। सीदन्नृतस्य योनिमा॥३५॥२७॥

गर्भे। मातुः। पितुः। पिता। विऽदिद्युतानः। अक्षरे। सीदन्। ऋतस्य। योनिम्। आ॥३५॥

पदार्थः-**(गर्भे)** आभ्यन्तरे **(मातुः)** जनन्या इव भूमेः **(पितुः)** जनक इव सवितुः **(पिता)** पालकः **(विदिद्युतानः)** विशेषेण प्रकाशमानः **(अक्षरे)** अविनाशिनि स्वरूपे कारणे जीवे वा **(सीदन्)** **(ऋतस्य)** सत्यस्य **(योनिम्)** गृहम् **(आ)** समन्तात्॥३५॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! योऽक्षर ऋतस्य योनिमाऽऽसीदन्मातुः पितुश्च पिता गर्भे विदिद्युतानोऽस्ति तं सर्वस्य विश्वस्य जनकं विजानन्तु॥३५॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! यो जनकानां जनक: प्रकाशकानां प्रकाशकोऽस्ति तं सर्वं उपासीरन्॥३५॥

पदार्थ:–हे विद्वान् जनो! जो **(अक्षरे)** नहीं नाश होने वाले अपने रूप, कारण वा जीव में **(ऋतस्य)** सत्य के **(योनिम्)** गृह को **(आ)** सब ओर से **(सीदन्)** प्राप्त होता हुआ **(मातु:)** माता का जैसे, वैसे भूमि का और **(पितु:)** पिता का जैसे सूर्य्य का **(पिता)** पालक और **(गर्भे)** गर्भ में **(विदिद्युतान:)** विशेष करके प्रकाशमान है, उसको सम्पूर्ण संसार का जनक जानो॥३५॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जो उत्पन्न करने वालों का उत्पादक, प्रकाशकों का प्रकाशक है, उसकी सब लोग उपासना करें॥३५॥

पुनर्मनुष्यै: किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

ब्रह्म॑ प्र॒जाव॒दा भ॑र॒ जात॑वेदो॒ विच॑र्षणे। अग्ने॒ यद्दी॒दय॑द्दि॒वि॥३६॥

ब्रह्म॑। प्र॒जाऽव॑त्। आ। भ॒र॒। जात॑ऽवेद:। विऽच॑र्षणे। अग्ने॑। यत्। दी॒दय॑त्। दि॒वि॥२६॥

पदार्थ:-**(ब्रह्म)** धनमन्नं वा **(प्रजावत्)** प्रजा विद्यन्ते यस्मिंस्तत् **(आ)** **(भर)** **(जातवेद:)** जातवित्त **(विचर्षणे)** विचक्षण **(अग्ने)** अग्निरिव गृहस्थ **(यत्)** ज्योति: **(दीदयत्)** द्योतयति **(दिवि)** प्रकाशे॥३६॥

अन्वय:-हे जातवेदो विचर्षणेऽग्ने! यद्दिवि दीदयत् तेन प्रजावद् ब्रह्माऽऽभर॥३६॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! यदग्नौ यत्सूर्य्ये यद्विद्युतिव तेजोऽस्ति तद्विज्ञानेन धनधान्यमुन्नेयम्॥६॥

पदार्थ:–हे **(जातवेद:)** धन से युक्त **(विचर्षणे)** बुद्धिमान् **(अग्ने)** अग्नि के समान गृहस्थ! **(यत्)** जो ज्योति **(दिवि)** प्रकाश में **(दीदयत्)** प्रकाशित करती है, उससे **(प्रजावत्)** प्रजा में विद्यमान जिसमें उस **(ब्रह्म)** धन वा अन्न को **(आ, भर)** सब प्रकार से धारण वा पोषण करिये॥३६॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जो अग्नि में, जो सूर्य्य में और जो बिजुली में तेज है, उसके विज्ञान से धन और धान्य की उन्नति करिये॥३६॥

मनुष्यै: कीदृशी वाक् प्रयोक्तव्येत्याह॥

मनुष्य कैसे वाणी को प्रयुक्त करें, इस विषय को कहते हैं॥

उप॑ त्वा॒ र॒ण्वसं॑दृशं॒ प्रय॑स्वन्त: सहस्कृत। अग्ने॑ ससृ॒ज्महे॒ गिर॑:॥३७॥

उप॑। त्वा॒। र॒ण्वऽसं॑दृशम्। प्रय॑स्वन्त:। स॒ह॒:ऽकृ॒त॒। अग्ने॑। ससृ॒ज्महे॑। गिर॑:॥३७॥

पदार्थ:-**(उप)** **(त्वा)** त्वाम् **(रण्वसन्दृशम्)** रमणीयसदृशम् **(प्रयस्वन्त:)** प्रयतमाना: **(सहस्कृत)** य: सहसा करोति तत्सम्बुद्धौ **(अग्ने)** पावक इव विद्वान् **(ससृज्महे)** भृशं सृजेम **(गिर:)** वाच:॥३७॥

अन्वय:-हे सहस्कृताग्ने! प्रयस्वन्तो वयं या गिर: ससृज्महे ताभी रण्वसन्दृशं त्वोप ससृज्महे॥३७॥

भावार्थ:-मनुष्यैर्यथा स्वार्थप्रिया वाग्घृद्या भवति तथैवान्यार्थापि वेद्या॥३७॥

पदार्थ:-हे **(सहस्कृत)** सहसा कार्य्यकर्ता **(अग्ने)** अग्नि के सदृश तेजस्वी विद्वन्! **(प्रयस्वन्त:)** प्रयत्न करते हुए हम लोग जिन **(गिर:)** वाणियों को **(ससृज्महे)** अत्यन्त प्रकट करें उनसे **(रण्वसन्दृशम्)** रमणीय के तुल्य **(त्वा)** आपको **(उप)** समीप में अत्यन्त प्रकट करें॥३७॥

भावार्थ:-मनुष्यों को चाहिये कि जैसे अपने प्रयोजन की प्रिय वाणी हृदय को प्रिय होती है, वैसे अन्य जनों के प्रयोजन को भी समझें॥३७॥

पुनर्मनुष्यै: किं प्राप्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या प्राप्त करने योग्य है, इस विषय को कहते हैं॥

उप॑ छा॒यामि॑व॒ घृणे॑र॒गन्म॒ शर्म॑ ते व॒यम्। अग्ने॒ हिर॑ण्यसंदृशः॥३८॥

उप॑। छा॒याम्ऽइ॑व। घृणे॑:। अग॑न्म। शर्म॑। ते॒। व॒यम्। अग्ने॑। हिर॑ण्यऽसंदृशः॥३८॥

पदार्थ:-**(उप)** **(छायामिव)** **(घृणे:)** प्रदीप्तात्सूर्य्यात् **(अगन्म)** प्राप्नुयाम **(शर्म)** गृहम् **(ते)** तव **(वयम्)** **(अग्ने)** विद्वन् **(हिरण्यसन्दृश:)** हिरण्यं तेज इव सन्दृक् समानं दर्शनं येषान्ते॥३८॥

अन्वय:-हे अग्ने! ते तव घृणेश्छायामिव शर्म हिरण्यसन्दृशो वयमुपाऽगन्म॥३८॥

भावार्थ:-अत्रोपमालङ्कार:। हे विद्वन्! वयं सर्वर्त्तुके सूर्यमिव प्रकाशमानं तव गृहं प्राप्य छायामिव सेवेमहि॥३८॥

पदार्थ:-हे **(अग्ने)** विद्वन्! **(ते)** आपके **(घृणे:)** प्रदीप्त सूर्य्य से **(छायामिव)** छाया को जैसे वैसे **(शर्म)** गृह को **(हिरण्यसन्दृश:)** तेज के सदृश समान दर्शन जिनका ऐसे **(वयम्)** हम लोग **(उप)** समीप **(अगन्म)** प्राप्त होवें॥३८॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे विद्वन्! हम लोग सब ऋतुओं में हुए सूर्य्य को जैसे वैसे प्रकाशमान आपके गृह को प्राप्त होकर छाया के सदृश सेवन करें॥३८॥

पुनर्मनुष्यै: किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

य उ॒ग्रइ॑व शर्य॒हा ति॒ग्मशृ॑ङ्गो॒ न वंस॑गः। अग्ने॒ पुरो॑ रु॒रोजि॑थ॥३९॥

य:। उ॒ग्र:ऽइ॑व। श॒र्य॒ऽहा। ति॒ग्मऽशृ॑ङ्गः। न। वंस॑गः। अग्ने॑। पुर॑:। रु॒रोजि॑थ॥३९॥

पदार्थ:-**(य:)** **(उग्रइव)** तेजस्वीव **(शर्यहा)** हन्तव्यहन्ता **(तिग्मशृङ्ग:)** तिग्मानि तीव्राणि शृङ्गाणीव किरणा यस्य सूर्य्यस्य स: **(न)** **(वंसग:)** यो वंसं सम्भजनीयं व्यवहारं गच्छति स: **(अग्ने)** **(पुर:)** पुरस्तात् **(रुरोजिथ)** भनक्षि॥३९॥

अन्वय:-हे अग्ने यस्त्वं वंसग: शर्यहा तिग्मशृङ्गो न शत्रूणां पुर उग्रइव रुरोजिथ तं वयं सत्कुर्याम॥३९॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये राजादयोऽधिकारिणः सूर्य्य इव तेजस्विनस्स्युस्ते शत्रून् विजेतुं शक्नुयुः॥३९॥

पदार्थः–हे **(अग्ने)** अग्नि के सदृश तेजस्वी **(यः)** जो आप **(वंसगः)** सेवन करने योग्य व्यवहार को प्राप्त होने और **(शर्यहा)** मारने योग्य को मारने वाले **(तिग्मशृङ्गः)** तीव्र शृङ्गों के सदृश किरणों वाले सूर्य्य के **(न)** समान शत्रुओं के **(पुरः)** आगे **(उग्रइव)** तेजस्वी जन जैसे वैसे **(रुरोजिथ)** भग्न करते हो, उन आप का हम लोग सत्कार करें॥३९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो राजा आदि अधिकारी जन सूर्य्य जैसे वैसे तेजस्वी होवें, वे शत्रुओं के जीतने को समर्थ होवें॥३९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

आ यं हस्ते न खादिनं शिशुं जातं न बिभ्रति। विशामग्निं स्वध्वरम्॥४०॥२८॥

आ। यम्। हस्ते। न। खादिनम्। शिशुम्। जातम्। न। बिभ्रति। विशाम्। अग्निम्। सुऽअध्वरम्॥४०॥

पदार्थः-**(आ)** समन्तात् **(यम्)** **(हस्ते)** **(न)** इव **(खादिनम्)** खादितुं भक्षयितुं शीलम् **(शिशुम्)** बालम् **(जातम्)** उत्पन्नम् **(न)** इव **(बिभ्रति)** भरन्ति **(विशाम्)** मनुष्यादिप्रजानाम् **(अग्निम्)** प्रकाशमानम् **(स्वध्वरम्)** शोभना अध्वरा यस्मात्तम्॥४०॥

अन्वयः-ये यं हस्ते खादिनं न जातं शिशुं न विशां स्वध्वरमग्निमाऽऽबिभ्रति ते तेन कृतकृत्या जायन्ते॥४०॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! ये हस्तामलकवत् क्रोडे शिशुमिवाग्निविद्यां जानन्ति ते प्रजापतयो भवन्ति॥४०॥

पदार्थः–जो **(यम्)** जिसको **(हस्ते)** हाथ में **(खादिनम्)** भक्षण करने वाले के **(न)** समान और **(जातम्)** उत्पन्न हुए **(शिशुम्)** बालक के **(न)** समान **(विशाम्)** मनुष्यादि प्रजाओं के **(स्वध्वरम्)** सुन्दर यज्ञ जिससे हों उस **(अग्निम्)** प्रकाशमान अग्नि को **(आ, बिभ्रति)** सब ओर से धारण करते हैं, वे उससे कृतकृत्य होते हैं॥४०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो हाथ में आँवले को जैसे वैसे, गोदी में लड़के को जैसे वैसे अग्निविद्या को जानते हैं, वे प्रजा के स्वामी होते हैं॥४०॥

पुनर्मनुष्यैः किं प्राप्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या प्राप्त करने योग्य है, इस विषय को कहते हैं॥

प्र देवं देववीतये भरता वसुवित्तमम्। आ स्वे योनौ नि षीदतु॥४१॥

प्र। देवम्। देवऽवीतये। भरत। वसुवित्ऽतमम्। आ। स्वे। योनौ। नि। सीदतु॥४१॥

पदार्थः-(प्र) (देवम्) दातारम् **(देववीतये)** दिव्यगुणप्राप्तये **(भरता)** धरत हरत वा **(वसुवित्तमम्)** अतिशयेन वसु वेत्ति तम् **(आ) (स्वे)** स्वकीये **(योनौ)** गृहे **(नि) (सीदतु)**॥४१॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यूयं देववीतये वसुवित्तमं देवं स्वे योनौ प्राऽऽभरता येन मनुष्यः सुखेन निषीदतु॥४१॥

भावार्थः-हे मनुष्या! भवन्तो दिव्यगुणप्राप्तयेऽग्न्यादिपदार्थान् विजानन्तु॥४१॥

पदार्थः-हे विद्वान् जनो! आप लोग **(देववीतये)** श्रेष्ठ गुणों की प्राप्ति के लिये **(वसुवित्तमम्)** अतिशय धन को जानने और **(देवम्)** देने वाले को **(स्वे)** अपने **(योनौ)** गृह में **(प्र, आ, भरता)** उत्तमता से अच्छे प्रकार धारण करिये वा हरिये, जिससे मनुष्य सुख से **(नि, षीदतु)** निरन्तर स्थिर होवे॥४१॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! आप श्रेष्ठ गुणों की प्राप्ति के लिये अग्नि आदि पदार्थों को जानिये॥४१॥

विद्वद्भिः सद्गृहस्थाः सत्कर्त्तव्या इत्याह॥

विद्वानों को चाहिये कि श्रेष्ठ गृहस्थों का सत्कार करें, इस विषय को कहते हैं॥

आ जा॒तं जा॒तवे॑दसि प्रि॒यं शि॑शी॒तातिथिम्। स्यो॒न आ गृ॒हप॑तिम्॥४२॥

आ। जा॒तम्। जा॒तऽवे॑दसि। प्रि॒यम्। शि॒शी॒त॒। अति॑थिम्। स्यो॒ने। आ। गृ॒हऽप॑तिम्॥४२॥

पदार्थः-(आ) (जातम्) प्रसिद्धम् **(जातवेदसि)** जातविद्ये **(प्रियम्)** कमनीयम् **(शिशीत)** तीक्ष्णीकुरुत **(अतिथिम्)** अतिथिवद्वर्त्तमानम् **(स्योने)** सुखे **(आ) (गृहपतिम्)** गृहस्वामिनम्॥४२॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! जातवेदस्याऽऽजातं प्रियमतिथिमिव स्योने गृहपतिमा शिशीत॥४२॥

भावार्थः-ये व्याप्तां विद्युतं प्रज्वालयन्ति ते सर्वत्र विजयादिकमाप्नुवन्ति॥४२॥

पदार्थः-हे विद्वान् जनो! **(जातवेदसि)** प्राप्त हुई विद्या जिसमें उसमें **(आ, जातम्)** अच्छे प्रकार प्रसिद्ध **(प्रियम्)** प्रिय **(अतिथिम्)** अतिथि के समान वर्त्तमान को **(स्योने)** सुख में **(गृहपतिम्)** गृह के स्वामी को **(आ, शिशीत)** अच्छे प्रकार तीक्ष्ण करिये॥४२॥

भावार्थः-जो व्याप्त बिजली को प्रज्वलित कराते हैं, वे सब स्थानों में विजय आदि को प्राप्त होते हैं॥४२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी को कहते हैं॥

अग्ने॑ यु॒क्ष्वा हि ये तवाश्वा॑सो देव सा॒धवः॑। अरं॒ वह॑न्ति म॒न्यवे॑॥४३॥

अग्ने॑। यु॒क्ष्वा। हि। ये। तव॑। अश्वा॑सः। दे॒व॒। सा॒धवः॑। अर॑म्। वह॑न्ति। म॒न्यवे॑॥४३॥

पदार्थः-(**अग्ने**) शिल्पविद्याविद्विद्वन् (**युक्ष्वा**) संयोजय। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**हि**) (**ये**) (**तव**) (**अश्वासः**) वेगादयो गुणाः (**देव**) दिव्यसुखप्रद (**साधवः**) साधुगतयः (**अरम्**) अलम् (**वहन्ति**) प्राप्नुवन्ति (**मन्यवे**) क्रोधाय॥४३॥

अन्वयः-हे देवाग्ने! ये साधवस्तवाश्वासो मन्यवेऽरं वहन्ति तान् हि त्वं यानेषु युक्ष्वा॥४३॥

भावार्थः-ये विद्वांसोऽग्न्यादियोजनं यानेषु कुर्वन्ति ते पूर्णकामा भवन्ति॥४३॥

पदार्थः–हे (**देव**) श्रेष्ठ सुख के देने और (**अग्ने**) शिल्प क्रिया की कुशलता को जानने वाले विद्वन्! (**ये**) जो (**साधवः**) श्रेष्ठ गमन वाले (**तव**) आपके (**अश्वासः**) वेग आदि गुण (**मन्यवे**) क्रोध के लिये (**अरम्**) समर्थ को (**वहन्ति**) प्राप्त होते हैं उनको (**हि**) ही आप वाहनों में (**युक्ष्वा**) संयुक्त करिये॥४३॥

भावार्थः-जो विद्वान् जन अग्नि आदि का योजन वाहनों में करते हैं, वे पूर्ण मनोरथ वाले होते हैं॥४३॥

मनुष्यैः केषां सत्कारः कर्त्तव्य इत्याह॥

मनुष्यों को किसका सत्कार करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

अच्छा नो याह्या वहाभि प्रयांसि वीतये। आ देवान्त्सोमपीतये॥४४॥

अच्छा। नः। याहि। आ। वह। अभि। प्रयांसि। वीतये। आ। देवान्। सोमऽपीतये॥४४॥

पदार्थः-(**अच्छा**) अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**नः**) अस्मान् (**याहि**) प्राप्नुहि (**आ**) (**वह**) प्राप्नुहि (**अभि**) (**प्रयांसि**) प्रियतमानि (**वीतये**) ज्ञानाय (**आ**) समन्तात् (**देवान्**) विदुषः (**सोमपीतये**) सोमस्य पानाय॥४४॥

अन्वयः-हे विद्वंस्त्वन्नोऽच्छा सोमपीतय आ याहि। प्रयांस्यभ्याऽऽवह वीतये देवानाऽऽयाहि॥४४॥

भावार्थः-मनुष्यैः सत्काराय विदुषामाह्वानं कर्त्तव्यम्॥४४॥

पदार्थः–हे विद्वन्! आप (**नः**) हम लोगों को (**अच्छा**) उत्तम प्रकार (**सोमपीतये**) सोमलतारूप ओषधि के रस के पान के लिये (**आ, याहि**) सब ओर से प्राप्त होओ और (**प्रयांसि**) अत्यन्त प्रिय वस्तुओं को (**अभि**) चारों ओर से (**आ**) सब प्रकार (**वह**) प्राप्त होओ और (**वीतये**) ज्ञान के लिये (**देवान्**) विद्वानों को सब ओर से प्राप्त होओ॥४४॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि सत्कार के लिये विद्वानों का आह्वान करें॥४४॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

उदग्ने भारत द्युमदजस्रेण दविद्युतत्। शोचा वि भाह्यजर॥४५॥२९॥

उत्। अग्ने। भारत। द्युऽमत्। अजस्रेण। दविद्युतत्। शोच। वि। भाहि। अजर॥४५॥

पदार्थः-(**उत्**) (**अग्ने**) विद्वन् (**भारत**) धर्त्तः (**द्युमत्**) प्रकाशवत् (**अजस्रेण**) निरन्तरेण (**दविद्युतत्**) द्योतयति (**शोचा**) अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**वि**) (**भाहि**) (**अजर**) जरादोषरहित॥४५॥

अन्वयः-हे भारताजराग्ने! भवानजस्रेण द्युमद्दविद्युतत् तदर्थं त्वमुच्छोचा वि भाहि॥४५॥

भावार्थः-यथा ब्रह्माण्डे सूर्य्यः सततं प्रकाशते तथैव विद्वांसः सत्यव्यवहारे प्रकाशयन्ताम्॥४५॥

पदार्थः-हे (**भारत**) धारण करने वाले (**अजर**) जरा दोष से रहित (**अग्ने**) विद्वन्! आप (**अजस्रेण**) निरन्तर (**द्युमत्**) प्रकाश वाले को (**दविद्युतत्**) प्रकाशित करते हो, उसके लिये आप (**उत्, शोचा**) अत्यन्त प्रकाशित हूजिये और (**वि, भाहि**) विशेष करके प्रकाशित करिये॥४५॥

भावार्थः-जैसे ब्रह्माण्ड में सूर्य्य निरन्तर प्रकाशित होता है, वैसे ही विद्वान् जन सत्य व्यवहार में प्रकाशित हों॥४५॥

मनुष्यैः क उपासनीय इत्याह॥

मनुष्यों को किस की उपासता करनी चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

वी॒ती यो दे॒वं मर्तो॑ दु॒व॒स्येद॒ग्निमी॑ळीताध्व॒रे ह॒विष्मा॑न्।

होता॑रं सत्य॒यजं॒ रोद॑स्योरुत्ता॒नह॑स्तो॒ नम॒साऽऽवि॑वासेत्॥४६॥

वी॒ती। यः। दे॒वम्। मर्तः॑। दु॒व॒स्येत्। अ॒ग्निम्। ई॒ळी॒त॒। अ॒ध्व॒रे। ह॒विष्मा॑न्। होता॑रम्। स॒त्य॒ऽयज॑म्। रोद॑स्योः। उ॒त्ता॒नऽह॑स्तः। नम॑सा। आ। वि॒वा॒से॒त्॥४६॥

पदार्थः-(**वीती**) कामनया (**यः**) (**देवम्**) कमनीयम् (**मर्त्तः**) मनुष्यः (**दुवस्येत्**) सेवेत (**अग्निम्**) पावकमिव स्वप्रकाशं परमात्मानम् (**ईळीत**) प्रशंसेत (**अध्वरे**) अहिंसादिलक्षणे योगे (**हविष्मान्**) बहूनि हवींषि दानानि विद्यन्ते यस्य सः (**होतारम्**) दातारम् (**सत्ययजम्**) यस्सत्यं यजति सङ्गमयति तम् (**रोदस्योः**) द्यावापृथिव्योः (**उत्तानहस्तः**) उत्तानावुपरिस्थौ हस्तौ यस्य सः (**नमसा**) सत्कारेण (**आ**) समन्तात् (**विवासेत्**) सेवेत॥४६॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यो हविष्मानुत्तानहस्तो मर्त्तो वीत्यध्वरे यं होतारं सत्ययजं देवमग्निं दुवस्येत् रोदस्योर्नमसाऽऽविवासेत् तद्वत्तं परमात्मानं यूयमीळीत॥४६॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यं जगदीश्वरं योगिन उपासते तं यूयमप्युपाध्वम्॥४६॥

पदार्थः-हे विद्वान् जनो! (**यः**) जो (**हविष्मान्**) बहुत दान करने वाला (**उत्तानहस्तः**) ऊपर स्थित हाथ जिसके ऐसा (**मर्त्तः**) मनुष्य (**वीती**) कामना से (**अध्वरे**) अहिंसा आदि लक्षण युक्त योग में जिस (**होतारम्**) दान करने वाले (**सत्ययजम्**) सत्य प्राप्त कराने वाले (**देवम्**) मनोहर (**अग्निम्**) अग्नि के सदृश स्वयं प्रकाशित परमात्मा का (**दुवस्येत्**) सेवन करे और (**रोदस्योः**) अन्तरिक्ष और पृथिवी के

(नमसा) सत्कार से **(आ, विवासेत्)** अच्छे प्रकार सेवन करे, उस परमात्मा की आप लोग **(ईळीत)** प्रशंसा करो॥४६॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिस जगदीश्वर की योगी जन उपासना करते हैं, उसकी आप लोग भी उपासना करो॥४६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

आ ते अग्न ऋचा हविर्हृदा तष्टं भरामसि।

ते ते भवन्तूक्षण ऋषभासो वशा उत॥४७॥

आ। ते। अग्ने। ऋचा। हविः। हृदा। तष्टम्। भरामसि ते। ते। भवन्तु। उक्षणः। ऋषभासः। वशाः। उत॥४७॥

पदार्थः-**(आ)** समन्तात् **(ते)** तव **(अग्ने)** जगदीश्वर **(ऋचा)** प्रशंसया ऋग्वेदादिना **(हविः)** अन्तःकरणम् **(हृदा)** हृदयेन **(तष्टम्)** तीक्ष्णं शोधितम् **(भरामसि)** भरामः **(ते)** **(ते)** तव **(भवन्तु)** **(उक्षणः)** सेचकाः **(ऋषभासः)** उत्तमाः **(वशाः)** कामयमानाः **(उत)**॥४७॥

अन्वयः-हे अग्ने! यस्य ते तव हविस्तष्टं स्वरूपं वयमृचा हृदाऽऽभरामसि ते कृपयाऽस्माकं ते सम्बन्धिन उक्षण ऋषभास उत वशा भवन्तु॥४७॥

भावार्थः-ये सत्यभावेनान्तःकरणेन जगदीश्वराज्ञां सेवन्ते ते सर्वथोत्कृष्टा भवन्ति॥४७॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** जगदीश्वर! जिन **(ते)** आपके **(हविः)** अन्तःकरण और **(तष्टम्)** अत्यन्त शुद्ध किये गये स्वरूप को हम लोग **(ऋचा)** प्रशंसारूप ऋग्वेद आदि से और **(हृदा)** हृदय से **(आ, भरामसि)** अच्छे प्रकार पोषण करते हैं उन **(ते)** आपकी कृपा से हमारे और **(ते)** आपके संबन्धी **(उक्षणः)** सेचन करने वाले **(ऋषभासः)** उत्तम **(उत)** भी **(वशाः)** कामना करते हुए **(भवन्तु)** होवें॥४७॥

भावार्थः-जो सत्यभाव से और अन्तःकरण से जगदीश्वर की आज्ञा का सेवन करते हैं, वे सब प्रकार से उत्कृष्ट होते हैं॥४७॥

अथेश्वरविषयमाह॥

अब ईश्वरविषय को कहते हैं॥

अग्निं देवासो अग्रियमिन्धते वृत्रहन्तमम्।

येना वसून्याभृता तृळ्हा रक्षांसि वाजिना॥४८॥३०॥५॥

अग्निम्। देवासः। अग्रियम्। इन्धते। वृत्रहन्ऽतमम्। येन। वसूनि। आऽभृता। तृळ्हा। रक्षांसि। वाजिना॥४८॥

पदार्थः-**(अग्निम्)** पावकम् **(देवासः)** विद्वांसः **(अग्रियम्)** अग्रे भवम् **(इन्धते)** प्रकाशयन्ति **(वृत्रहन्तमम्)** यो वृत्रं मेघं हन्ति तमतिशयितम् **(येना)** अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(वसूनि)** धनानि **(आभृता)** समन्ताद्धृतानि **(तृळहा)** हिंसितानि **(रक्षांसि)** दुष्टाञ्जनान् **(वाजिना)** वेगेन विज्ञानेन वा॥४८॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा देवासो वृत्रहन्तममग्रियमग्निमिन्धते येन वाजिनाऽऽभृता वसूनीन्धते रक्षांसि तृळ्हा कुर्वन्ति तथा दोषान् हत्वा परमात्मानं प्रकाशयन्त्येवं यूयमपि कुरुत॥४८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथर्त्विजो यज्ञे वेद्यामग्निं प्रज्वाल्य हविः प्रक्षिप्य जगदुपकुर्वन्ति तथैव योगयुक्ताः सन्न्यासिनः परमात्मानं सर्वेषां हृदयेऽभिप्रकाश्य दोषान्नाशयन्तीति॥४८॥

अत्राग्निविद्वदीश्वरगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

अस्मिन्नध्यायेऽग्निविश्वेदेवसूर्येन्द्रवैश्वानरमरुद्यज्ञराजधर्म्मविद्वदीश्वरगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वाध्यायार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य्याणां श्रीमद्विरजानन्दसरस्वतीस्वामिनां शिष्येण परमविदुषा श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीस्वामिना विरचित ऋग्वेदभाष्ये चतुर्थेऽष्टके पञ्चमोऽध्यायस्त्रिंशो वर्गः षष्ठे मण्डले षोडशं सूक्तञ्च समाप्तम्॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(देवासः)** विद्वान् जन **(वृत्रहन्तमम्)** मेघ के अत्यन्त नाश करने वाले और **(अग्रियम्)** आगे प्रकट हुए **(अग्निम्)** अग्नि को **(इन्धते)** प्रकाशित करते हैं और **(येन)** जिन **(वाजिना)** वेग वा विज्ञान से **(आभृता)** चारों ओर से धारण किये गये **(वसूनि)** धनों को प्रकाशित करते हैं और **(रक्षांसि)** दुष्ट जनों को **(तृळहा)** हिंसित करते हैं, वैसे ही दोषों का नाश करके परमात्मा को प्रकाशित करते हैं, इस प्रकार आप लोग भी करो॥४८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे यज्ञ करने वाले जन यज्ञ में वेदी पर अग्नि को प्रज्वलित करके हवन की सामग्री छोड़ के संसार का उपकार करते हैं, वैसे ही योग से युक्त संन्यासी जन परमात्मा को सब के हृदय में अच्छे प्रकार प्रकाशित करके दोषों का नाश करते हैं॥४८॥

इस सूक्त में अग्नि, विद्वान् और ईश्वर के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

इस अध्याय में अग्नि, विश्वेदेव, सूर्य्य, इन्द्र, वैश्वानर, वायु, यज्ञ, राजधर्म्म, विद्वान् और ईश्वर के गुणवर्णन करने से इस अध्याय के अर्थ की इससे पूर्व अध्याय के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य श्रीमद्विरजानन्दसरस्वती स्वामी जी के शिष्य परम विद्वान् श्रीमद्दयानन्द सरस्वती स्वामी से रचे गये ऋग्वेदभाष्य में चतुर्थ अष्टक में पाँचवाँ अध्याय, तीसवाँ वर्ग और छठे मण्डल में सोलहवाँ सूक्त भी समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ षष्ठाध्यायारम्भः॥

ओ३म् विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद्भ॒द्रं तन्न॒ आ सु॑व॥ ऋ०५.८२.५॥

अथ पञ्चदशर्चस्य सप्तदशस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, २,३, ४, ११ त्रिष्टुप्। ५, ६,८ विराट्त्रिष्टुप्। ७, ९, १०, १२, १४ निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः। धैवतः स्वरः। १३ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। १५ आर्च्युष्णिक् छन्दः। ऋषभः स्वरः॥

पुनर्म्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

अब चतुर्थ अष्टक में छठे अध्याय और छठे मण्डल में पन्द्रह ऋचा वाले सत्रहवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

पिबा॒ सोम॑म॒भि यमु॑ग्र॒ तर्द॑ ऊ॒र्वं गव्यं॒ महि॑ गृणा॒न इ॑न्द्र।
वि यो धृ॑ष्णो॒ वधि॑षो वज्रहस्त॒ विश्वा॑ वृ॒त्रम॑मि॒त्रिया॒ शवो॑भिः॥ १॥

पिब॑। सोम॑म्। अ॒भि। यम्। उ॒ग्र॒। तर्द॑ः। ऊ॒र्वम्। गव्य॑म्। महि॑। गृ॒णा॒नः। इ॒न्द्र॒। वि। यः। धृ॒ष्णो॒ इति॑। वधि॑षः। व॒ज्र॒ऽह॒स्त॒। विश्वा॑। वृ॒त्रम्। अ॒मि॒त्रिया॑। शव॑ःऽभिः॥ १॥

पदार्थः-(**पिबा**) अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः (**सोमम्**) महौषधिरसम् (**अभि**) (**यम्**) (**उग्र**) तेजस्विन् (**तर्दः**) (**ऊर्वम्**) हिंस्यम् (**गव्यम्**) गवामिदम् (**महि**) महत् (**गृणानः**) स्तुवन् (**इन्द्र**) परमैश्वर्यमिच्छो (**वि**) (**यः**) (**धृष्णो**) प्रगल्भ (**वधिषः**) हन्याः (**वज्रहस्त**) शस्त्रपाणे (**विश्वा**) सर्वाणि (**वृत्रम्**) मेघम् (**अमित्रिया**) अमित्राणि (**शवोभिः**) बलैः॥१॥

अन्वयः-हे वज्रहस्त धृष्णो इन्द्र! यः शवोभिर्वृत्रं सूर्य्य इव विश्वाऽमित्रिया त्वं वि वधिषः। हे उग्र! महि गव्यं गृणानो यमूर्वमभि तर्दस्तत्सम्बन्धे स त्वं सोमं पिबा॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्या ब्रह्मचर्य्येण विद्यया सत्कर्म्मणा दुष्टान्निवार्य्य श्रेष्ठान् स्वीकुर्वन्ति ते शत्रून् घ्नन्ति॥१॥

पदार्थः-हे (**व्रजहस्त**) शस्त्र है हस्त में जिनके ऐसे (**धृष्णो**) अत्यन्त दृढ़ (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य की इच्छा करने वाले! (**यः**) जो (**शवोभिः**) बलों से (**वृत्रम्**) मेघों को सूर्य्य जैसे वैसे (**विश्वा**) सम्पूर्ण (**अमित्रिया**) शत्रुओं को आप (**वि**) विशेष करके (**वधिषः**) नाश करिये और हे (**उग्र**) तेजस्विन् (**महि**) बड़े (**गव्यम्**) गौओं के घृत की (**गृणानः**) स्तुति करते हुए (**यम्**) जिस (**ऊर्वम्**) हिंसा करने योग्य की (**अभि**) (**तर्दः**) हिंसा करिये, उसके सम्बन्ध में वह आप (**सोमम्**) महौषधि के रस (**पिबा**) पीजिये॥१॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य ब्रह्मचर्य्य, विद्या और सत्कर्म्म से दुष्टों को दूर करके श्रेष्ठों को स्वीकार करते हैं, वे शत्रुओं का नाश करते हैं॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

स ईं पाहि य ऋजीषी तरुत्रो यः शिप्रवान् वृषभो यो मतीनाम्।
यो गोत्रभिद्वज्रभृद्यो हरिष्ठाः स इन्द्र चित्राँ अभि तृन्धि वाजान्॥२॥

सः। ईम्। पाहि। यः। ऋजीषी। तरुत्रः। यः। शिप्रऽवान्। वृषभः। यः। मतीनाम्। यः। गोत्रऽभित्। वज्रऽभृत्। यः। हरिऽस्थाः। सः। इन्द्र। चित्रान्। अभि। तृन्धि। वाजान्॥२॥

पदार्थः-(**सः**) (**ईम्**) प्राप्तं वस्तु (**पाहि**) (**यः**) (**ऋजीषी**) सरलस्वभावः (**तरुत्रः**) सर्वदुःखादुत्तीर्णः (**यः**) (**शिप्रवान्**) शिप्रे सुन्दरे हनुनासिके विद्येते यस्य (**वृषभः**) बलिष्ठः (**यः**) (**मतीनाम्**) मनुष्याणाम् (**यः**) (**गोत्रभित्**) यो गोत्रं भिनत्ति (**वज्रभृत्**) यो वज्रं बिभर्त्ति (**यः**) (**हरिष्ठाः**) अतिशयेन हर्त्ता (**सः**) (**इन्द्र**) दुष्टविदारक (**चित्रान्**) अद्भुतान् (**अभि**) (**तृन्धि**) हिन्धि (**वाजान्**) हिंसकान्॥२॥

अन्वयः-हे इन्द्र! य ऋजीषी तरुत्रस्त्वमसि स ईं पाहि यः शिप्रवान् वृषभो यो मतीनां वृषभो यो वज्रभृद् गोत्रभिदसि यो हरिष्ठा असि स त्वं चित्रान् वाजानभि तृन्धि॥२॥

भावार्थः-हे राजन्! ये प्रजारक्षका दुष्टहिंसका जनाः स्युस्ताँस्त्वं सत्कुर्य्याः॥२॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) दुष्टों के विदीर्ण करने वाले! (**यः**) जो (**ऋजीषी**) सरलस्वभाव (**तरुत्रः**) सम्पूर्ण दुःख से उत्तीर्ण हुए आप हैं (**सः**) वह आप (**ईम्**) प्राप्त वस्तु का (**पाहि**) पालन करिये और (**यः**) जो (**शिप्रवान्**) सुन्दर ठुड्डी और नासिका वाले (**वृषभः**) बलिष्ठ और (**यः**) जो (**मतीनाम्**) मनुष्यों के मध्य में बलिष्ठ (**यः**) जो (**वज्रभृत्**) वज्र को धारण करने वाले (**गोत्रभित्**) गोत्र के नाश करने वाले हैं (**यः**) जो (**हरिष्ठाः**) अतिशय हरने वाले हैं (**सः**) वह आप (**चित्रान्**) अद्भुत (**वाजान्**) हिंसकों का (**अभि, तृन्धि**) सब ओर से नाश करिये॥२॥

भावार्थः-हे राजन्! जो प्रजा के रक्षक, दुष्टों के हिंसक जन होवें, उनका आप सत्कार करिये॥२॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

एवा पाहि प्रत्नथा मन्दतु त्वा श्रुधि ब्रह्म वावृधस्वोत गीर्भिः।
आविः सूर्यं कृणुहि पीपिहीषो जहि शत्रूँरभि गा इन्द्र तृन्धि॥३॥

एव। पाहि। प्रत्नऽथा। मन्दतु। त्वा। श्रुधि। ब्रह्म। वावृधस्व। उत। गीःऽभिः। आविः। सूर्यम्। कृणुहि। पीपिहि। इषः। जहि। शत्रून्। अभि। गाः। इन्द्र। तृन्धि॥ ३॥

पदार्थः-(**एवा**) अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। (**पाहि**) (**प्रत्नथा**) प्रत्नः प्राचीन इव (**मन्दतु**) प्रशंसतु (**त्वा**) त्वाम् (**श्रुधि**) शृणु (**ब्रह्म**) वेदम् (**वावृधस्व**) वृद्धो भव (**उत**) अपि (**गीर्भिः**) (**आविः**) प्राकट्ये (**सूर्य्यम्**) परमेश्वरम् (**कृणुहि**) कुरु (**पीपिहि**) पिब (**इषः**) अन्नम् (**जहि**) (**शत्रून्**) (**अभि**) (**गाः**) पृथिवीः (**इन्द्र**) दुष्टविदारक (**तृन्धि**) हिन्धि॥ ३॥

अन्वयः-हे इन्द्र! प्रत्नथा त्वं ब्रह्म पाहि यद्ब्रह्म त्वा मन्दतु यत्त्वं श्रुधि तेन वावृधस्वोत गीर्भिः सूर्य्यमाविष्कृणुहीषः पीपीहि शत्रूनभि तृन्धि दोषान् जहि गा एवा प्राप्नुहि॥ ३॥

भावार्थः-ये श्रद्धया परमेश्वरमुपास्य विद्यार्थिनां परीक्षां कुर्वन्ति ते जगत्प्रिया भवन्ति॥ ३॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) दुष्टों के नाश करने वाले! (**प्रत्नथा**) प्राचीन जन जैसे वैसे आप (**ब्रह्म**) वेद की (**पाहि**) रक्षा कीजिये और जो वेद (**त्वा**) आपकी (**मन्दतु**) प्रशंसा करे, उसको आप (**श्रुधि**) सुनिये उससे (**वावृधस्व**) बढ़िये और (**उत**) भी (**गीर्भिः**) वाणियों से (**सूर्य्यम्**) परमेश्वर का (**आविः**) प्राकट्य (**कृणुहि**) करिये तथा (**इषः**) अन्न का (**पीपिहि**) पान करिये और (**शत्रून्**) शत्रुओं का (**अभि, तृन्धि**) सब प्रकार से नाश करिये और दोषों का (**जहि**) त्याग करिये और (**गाः**) पृथिवियों को (**एवा**) ही प्राप्त हूजिये॥ ३॥

भावार्थः-जो श्रद्धा से परमेश्वर की उपासना करके विद्यार्थियों की परीक्षा करते हैं, वे जगत् के प्रिय होते हैं॥ ३॥

पुना राजप्रजाजनाः परस्परं कथं वर्त्तेयुरित्याह॥

फिर राजा और प्रजा जन परस्पर कैसा वर्त्ताव करें, इस विषय को कहते हैं॥

ते त्वा मदा बृहदिन्द्र स्वधाव इमे पीता उक्षयन्त द्युमन्तम्।
महामनूनं तवसं विभूतिं मत्सरासो जर्हृषन्त प्रसाहम्॥ ४॥

ते। त्वा। मदाः। बृहत्। इन्द्र। स्वधाऽवः। इमे। पीताः। उक्षयन्त। द्युऽमन्तम्। महाम्। अनूनम्। तवसम्। विऽभूतिम्। मत्सरासः। जर्हृषन्त। प्रऽसहम्॥ ४॥

पदार्थः-(**ते**) (**त्वा**) त्वाम् (**मदाः**) हर्षाः (**बृहत्**) महत् (**इन्द्र**) ऐश्वर्ययुक्त (**स्वधावः**) स्वधा बह्वन्नं विद्यते यस्य तत् सम्बुद्धौ (**इमे**) (**पीताः**) (**उक्षयन्त**) सिञ्चन्ति (**द्युमन्तम्**) बहुकामयुक्तम् (**महाम्**) महान्तम् (**अनूनम्**) ऊनतारहितम् (**तवसम्**) बलिष्ठम् (**विभूतिम्**) महदैश्वर्य्यम् (**मत्सरासः**) आनन्दन्तः सन्तः (**जर्हृषन्त**) भृशं हृष्यन्तु (**प्रसाहम्**) प्रकर्षेण सोढारम्। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः॥ ४॥

अन्वयः-हे स्वधाव इन्द्र! य इमे पीता मदा मत्सरासो द्युमन्तं महामनूनं तवसं विभूतिं प्रसाहं बृहदुक्षयन्त जर्हृषन्त ते त्वा सत्कुर्वन्तु॥ ४॥

भावार्थः-यान् सज्जनान् राजानः सत्कुर्य्युस्ते राज्ञः प्रसादयेयुः॥४॥

पदार्थः-हे **(स्वधावः)** बहुत अन्न से युक्त और **(इन्द्र)** ऐश्वर्य्ययुक्त! जो **(इमे)** ये **(पीताः)** पान किये गये **(मदाः)** आनन्द और **(मत्सरासः)** आनन्द करते हुए जन **(द्युमन्तम्)** बहुत मनोरथों से युक्त **(महाम्)** बड़े **(अनूनम्)** न्यूनता से रहित **(तवसम्)** बलिष्ठ **(विभूतिम्)** बड़े ऐश्वर्य्य से युक्त **(प्रसाहम्)** अत्यन्त सहने वाले को **(बृहत्)** बहुत **(उक्षयन्त)** सेचन करते हैं और **(जर्हषन्त)** अत्यन्त प्रसन्न हों **(ते)** वे **(त्वा)** आप का सत्कार करें॥४॥

भावार्थः-जिन सज्जनों का राजा सत्कार करें, वे राजाओं को भी प्रसन्न करें॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

येभिः सूर्यमुषसं मन्दसानोऽवासयोऽप दृळ्हानि दर्द्रत्।

महामद्रिं परि गा इन्द्र सन्तं नुत्था अच्युतं सदसस्परि स्वात्॥५॥१॥

येभिः। सूर्यम्। उषसम्। मन्दसानः। अवासयः। अप। दृळ्हानि। दर्द्रत्। महाम्। अद्रिम्। परि। गाः। इन्द्र। सन्तम्। नुत्थाः। अच्युतम्। सदसः। परि। स्वात्॥५॥१॥

पदार्थः-**(येभिः)** **(सूर्य्यम्)** **(उषसम्)** प्रभातम् **(मन्दसानः)** कामयमानः **(अवासयः)** वासयेः **(अप)** **(दृळ्हानि)** **(दर्द्रत्)** दृणीहि **(महाम्)** महान्तम् **(अद्रिम्)** मेघम् **(परि)** सर्वतः **(गाः)** पृथिवीः **(इन्द्र)** परमैश्वर्य्ययुक्त राजन् **(सन्तम्)** वर्त्तमानम् **(नुत्थाः)** प्रेरयेः **(अच्युतम्)** नाशरहितम् **(सदसः)** सभायाः **(परि)** **(स्वात्)** स्वकीयात्॥५॥

अन्वयः-हे इन्द्र! मन्दसानस्त्वं येभिस्सूर्य्यमुषसमिव गाः पर्यवासयः। दृळ्हान्यपदर्द्रत् तेभिर्महामद्रिमिव सन्तमच्युतं स्वात् सदसः परि नुत्थाः॥५॥

भावार्थः-स एव राजा श्रेष्ठो भवति यो दुष्टान् विदार्य्य श्रेष्ठानां सभया सर्वाः प्रजाः शास्ति॥५॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** अत्यन्त ऐश्वर्य से युक्त राजन्! **(मन्दसानः)** कामना करते हुए आप **(येभिः)** जिन से **(सूर्य्यम्)** सूर्य्य और **(उषसम्)** प्रातर्वेला को जैसे वैसे **(गाः)** पृथिवियों को **(परि, अवासयः)** सब प्रकार बसाइये तथा **(दृळ्हानि)** दृढ़ पदार्थों को **(अप, दर्द्रत्)** पुष्ट करिये उनसे **(महाम्)** बड़े **(अद्रिम्)** मेघ के समान **(सन्तम्)** वर्त्तमान **(अच्युतम्)** नाश से रहित को **(स्वात्)** अपने से **(सदसः)** सभा से **(परि)** चारों ओर **(नुत्थाः)** प्रेरित करिये॥५॥

भावार्थः-वही राजा श्रेष्ठ होता है, जो दुष्टों को विदीर्ण करके श्रेष्ठों की सभा से सम्पूर्ण प्रजाओं का शासन करता है॥५॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तव क्रत्वा तव तद्दंसनाभिरामासु पक्वं शच्या नि दीधः।
और्णोर्दुर उस्रियाभ्यो वि दृळ्होदूर्वाद्गा असृजो अङ्गिरस्वान्॥६॥

तव। क्रत्वा। तव। तत्। दंसनाभिः। आमासु। पक्वम्। शच्या। नि। दीधरिति दीधः। और्णोः। दुरः। उस्रियाभ्यः। वि। दृळ्हा। उत्। ऊर्वात्। गाः। असृजः। अङ्गिरस्वान्॥६॥

पदार्थः-(**तव**) (**क्रत्वा**) प्रज्ञया (**तव**) (**तत्**) (**दंसनाभिः**) कर्म्मभिः (**आमासु**) अपरिपक्वासु (**पक्वम्**) सुसंस्कृतम् (**शच्या**) प्रज्ञया प्रजया वा (**नि**) (**दीधः**) धारयसि (**और्णोः**) आच्छादयतु (**दुरः**) गृहद्वाराणि (**उस्रियाभ्यः**) किरणेभ्यः (**वि**) (**दृळ्हा**) दृढानि (**उत्**) (**ऊर्वात्**) हिंसनात् (**गाः**) भूमीः (**असृजः**) सृजेत् (**अङ्गिरस्वान्**) अङ्गिरसो बहुविधाः प्राणा विद्यन्ते यस्मिन्॥६॥

अन्वयः-हे विद्वंस्तव क्रत्वा तव दंसनाभिर्वयमामासु तत्पक्वं विज्ञानं प्राप्नुयाम त्वमेतच्छच्या नि दीधः। य उस्रियाभ्यो दुर और्णोरूवीद् गा उदसृजोऽङ्गिरस्वान् दृळ्हा व्यसृजस्तं वयं सत्कुर्याम॥६॥

भावार्थः-ये मनुष्या विद्वद्भ्यः शिक्षां प्राप्य सर्वान्त्सत्कुर्वन्ति ते राज्यं प्राप्य सूर्य्यवत्प्रकाशन्ते॥६॥

पदार्थः-हे विद्वन्! (**तव**) आपकी (**क्रत्वा**) बुद्धि से और (**तव**) आपके (**दंसनाभिः**) कर्म्मों से हम लोग (**आमासु**) नहीं पाकदशा को प्राप्त हुओं में (**तत्**) उस (**पक्वम्**) उत्तम प्रकार संस्कारयुक्त विज्ञान को प्राप्त होवें और आप इस को (**शच्या**) बुद्धि वा प्रजा से (**नि, दीधः**) धारण कराते हो और जो (**उस्रियाभ्यः**) किरणों से (**दुरः**) गृहद्वारों को (**और्णोः**) आच्छादित करे तथा (**ऊर्वात्**) हिंसन से (**गाः**) भूमियों को (**उत्, असृजः**) अच्छे प्रकार रचे और (**अङ्गिरस्वान्**) बहुत प्रकार के प्राण विद्यमान जिसमें वह (**दृळ्हा**) दृढ़ों को (**वि**) विशेष करके रचे उसका हम लोग सत्कार करें॥६॥

भावार्थः-जो मनुष्य विद्वानों से शिक्षा को प्राप्त होकर सब का सत्कार करते हैं, वे राज्य को प्राप्त होकर सूर्य्य के सदृश प्रकाशित होते हैं॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

पप्राथ क्षां महि दंसो व्युर्वीमुप द्यामृष्वो बृहदिन्द्र स्तभायः।
अधारयो रोदसी देवपुत्रे प्रत्ने मातरा यह्वी ऋतस्य॥७॥

पप्राथ। क्षाम्। महि। दंसः। वि। उर्वीम्। उप। द्याम्। ऋष्वः। बृहत्। इन्द्र। स्तभायः। अधारयः। रोदसी इति। देवपुत्रे इति देवऽपुत्रे। प्रत्ने इति। मातरा। यह्वी इति। ऋतस्य॥७॥

पदार्थः-(**पप्राथ**) प्राति पूरयति (**क्षाम्**) भूमिम् (**महि**) महत् (**दंसः**) कर्म्म (**वि**) (**उर्वीम्**) विस्तृताम् (**उप**) (**द्याम्**) प्रकाशम् (**ऋष्वः**) महान् (**बृहत्**) (**इन्द्र**) सूर्य इवैश्वर्य्यकारक (**स्तभायः**) स्तभ्नाति (**अधारयः**) धारयसि (**रोदसी**) भूमिसूर्य्यलोकौ (**देवपुत्रे**) देवानां विदुषां पुत्र इव वर्त्तमाने (**प्रत्ने**) पुरातन्यौ (**मातरा**) मातृवन्मान्यकर्त्र्यौ (**यह्वी**) महत्यौ (**ऋतस्य**) सत्यस्य कारणस्य सकाशात्॥७॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यथा सूर्य्यो महि दंस उर्वी क्षां द्याञ्च व्युप पप्राथ ऋष्वः सन् बृहत् स्तभायस्तथा त्वं प्राहि यथायं सूर्य्य ऋतस्य जाते देवपुत्रे प्रत्ने मातरा यह्वी रोदसी धारयति तथा त्वमधारयः॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा सूर्य्यो भूगोलान् धृत्वा पितृवत्सर्वाः प्रजाः पालयति तथैव यूयमत्र वर्त्तध्वम्॥७॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** सूर्य्य के सदृश ऐश्वर्य्य करने वाले! जैसे सूर्य्य **(महि)** बड़े **(दंसः)** कर्म्म को **(उर्वीम्)** विस्तृत **(क्षाम्)** भूमि को और **(द्याम्)** प्रकाश को **(वि, उप, पप्राथ)** विशेष कर समीप में पूरित करता है और **(ऋष्वः)** बड़ा महात्मा जन **(बृहत्)** बड़े को **(स्तभाय)** स्तम्भित करता है, वैसे आप पूरित कीजिये और जैसे यह सूर्य्य **(ऋतस्य)** सत्य कारण के समीप से प्रकट हुए **(देवपुत्रे)** विद्वानों के पुत्र के समान वर्त्तमान **(प्रत्ने)** प्राचीन **(मातरा)** माता के सदृश आदर करने वाले **(यह्वी)** बड़े **(रोदसी)** भूमि और सूर्य्य लोक को धारण करता है, वैसे आप **(अधारयः)** धारण करते हो॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे सूर्य्य भूगोलों को धारण करके पिता के सदृश सम्पूर्ण प्रजाओं का पालन करता है, वैसे ही आप लोग यहाँ वर्त्ताव करो॥७॥

पुनर्मनुष्यैः क उपास्य इत्याह॥

फिर मनुष्यों को कौन उपासना करने योग्य है, इस विषय को कहते हैं॥

अध॑ त्वा॒ विश्वे॑ पु॒र इ॑न्द्र दे॒वा एकं॑ त॒वसं॑ दधि॒रे भरा॑य।

अदे॑वो॒ यद॒भ्यौहि॑ष्ट दे॒वान् स्व॑र्षाता वृ॒णत॒ इन्द्र॒मत्र॑॥८॥

अध॑। त्वा॒। विश्वे॑। पु॒रः। इ॒न्द्र॒। दे॒वाः। एक॑म्। त॒वस॑म्। द॒धि॒रे। भरा॑य। अदे॑वः। यत्। अ॒भि। औहि॑ष्ट। दे॒वान्। स्वः॑ऽसाता। वृ॒ण॒ते। इन्द्र॑म्। अत्र॑॥८॥

पदार्थः-**(अध)** अथ **(त्वा)** त्वाम् **(विश्वे)** सर्वे **(पुरः)** पुरस्तात् **(इन्द्र)** परमैश्वर्य्यप्रदेश्वर **(देवाः)** विद्वांसः **(एकम्)** अद्वितीयम् **(तवसम्)** बलादिवर्धकम् **(दधिरे)** दधाति **(भराय)** पालनाय **(अदेवः)** प्रकाशरहितः **(यत्)** **(अभि)** आभिमुख्ये **(औहिष्ट)** वितर्कयति **(देवान्)** विदुषः **(स्वर्षाता)** सुखानां विभाजकः **(वृणते)** स्वीकुर्वन्ति **(इन्द्रम्)** परमैश्वर्य्यम् **(अत्र)** अस्मिञ्जगति॥८॥

अन्वयः-हे इन्द्र जगदीश्वर! ये विश्वे देवा भराय त्वैकं तवसं पुरो दधिरे तांस्त्वं विज्ञानेन दधासि यद्यो देवो यद्यः स्वर्षाता अदेवो देवानभ्यौहिष्ट सञ्ज्ञानं नाप्नोति। येऽत्रेन्द्रं वृणते तेऽध सर्वमानन्दं लभन्ते॥८॥

भावार्थः-ये मनुष्याः परमात्मानमेवोपासते ते परमैश्वर्य्यं लभन्ते यो हि विद्याहीनो भूत्वा विद्वद्भिः सह कुतर्कयति स किमप्यत्र नाप्नोति॥८॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** अत्यन्त ऐश्वर्य्य के देने वाले स्वामिन् जगदीश्वर! जो **(विश्वे)** सम्पूर्ण **(देवाः)** विद्वान् जन **(भराय)** पालन के लिये **(त्वा)** आप **(एकम्)** जिनके समान दूसरा नहीं उन **(तवसम्)** बल आदि के बढ़ाने वाले को **(पुरः)** आगे **(दधिरे)** धारण करते हैं उनको आप विज्ञान से धारण करते हो

और **(यत्)** जो विद्वान् जन और जो **(स्वर्षाता:)** सुखों का विभाग करने वाला **(अदेव:)** प्रकाश से रहित **(देवान्)** विद्वानों के **(अभि)** सम्मुख **(औहिष्ट)** विशेष करके तर्कित करता और सञ्ज्ञान को नहीं प्राप्त होता है और जो **(अत्र)** इस संसार में **(इन्द्रम्)** अत्यन्त ऐश्वर्य्ययुक्त का **(वृणते)** स्वीकार करते हैं, वे **(अध)** इसके अनन्तर सम्पूर्ण आनन्द को प्राप्त होते हैं॥८॥

भावार्थ:-जो मनुष्य परमात्मा ही की उपासना करते हैं, वे अत्यन्त ऐश्वर्य्य को प्राप्त होते हैं और जो विद्या से हीन होकर विद्वानों के साथ कुतर्क करता है, वह कुछ भी यहाँ नहीं पाता है॥८॥

पुनर्म्मनुष्या: किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

अध द्यौश्चित्ते अप सा नु वज्राद् द्वितानमद्भियसा स्वस्य मन्यो:।
अहिं यदिन्द्रो अभ्योहसानं नि चिद्विश्वायु: शयथे जघान॥९॥

अध। द्यौ:। चित्। ते। अप। सा। नु। वज्रात्। द्विता। अनमत्। भियसा। स्वस्य। मन्यो:। अहिम्। यत्। इन्द्र:। अभि। ओहसानम्। नि। चित्। विश्वऽआयु:। शयथे। जघान॥९॥

पदार्थ:-**(अध)** अथ **(द्यौ:)** कामयमाना **(चित्)** अपि **(ते)** तव **(अप)** **(सा)** **(नु)** **(वज्रात्)** विद्युत्प्रहारात् **(द्विता)** द्वयोर्भाव: **(अनमत्)** नमति **(भियसा)** भयेन **(स्वस्य)** **(मन्यो:)** क्रोधात् **(अहिम्)** मेघम् **(यत्)** य: **(इन्द्र:)** सूर्य्य: **(अभि)** **(ओहसानम्)** तर्कगम्यम् **(नि)** **(चित्)** अपि **(विश्वायु:)** समग्रायु: **(शयथे)** **(जघान)** हन्ति॥९॥

अन्वय:-हे मनुष्या! यद्य इन्द्र ओहसानमहिमभि जघानेव यश्चिद्विश्वायुर्नि शयथेऽध या द्यौश्चिद्वज्राद्भियसा द्विताऽनमत् तथा हे विद्वन्! स्वस्य मन्यो: सा नु ते दु:खमप सारयतु॥९॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! यूयं सूर्य्यमेघवद्वर्त्तित्वा परस्परं पालनं कुरुत॥९॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! **(यत्)** जो **(इन्द्र:)** सूर्य्य **(ओहसानम्)** तर्क से जानने योग्य **(अहिम्)** मेघ का **(अभि)** सब ओर से **(जघान)** नाश करता है, वैसे जो **(चित्)** कोई **(विश्वायु:)** सम्पूर्ण अवस्था से युक्त **(नि)** निरन्तर **(शयथे)** शयन करता है **(अध)** इसके अनन्तर जो **(द्यौ:)** कामना करती हुई **(चित्)** भी **(वज्रात्)** बिजुली के प्रहार से **(भियसा)** भय से **(द्विता)** दो प्रकार **(अनमत्)** नमती है, वैसे हे विद्वन्! **(स्वस्य)** अपने **(मन्यो:)** क्रोध से **(सा)** वह **(नु)** निश्चय से **(ते)** आपका दु:ख **(अप)** दूर करे॥९॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! आप लोग सूर्य्य और मेघ सदृश वर्त्ताव करके परस्पर पालन करो॥९॥

अथ राजपुरुषा: कथं वर्त्तेरन्नित्याह॥

अब राजपुरुष कैसा वर्त्ताव करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अध त्वष्टा ते मह उग्र वज्रं सहस्रभृष्टिं ववृतच्छताश्रिम्।
निकाममरमणसं येन नवन्तमहिं सं पिणगृजीषिन्॥१०॥२॥

अध। त्वष्टा। ते। मह:। उग्र। वज्रम्। सहस्रऽभृष्टिम्। ववृतत्। शतऽअश्रिम्। निऽकामम्। अरऽमनसम्। येन। नवन्तम्। अहिम्। सम्। पिणक्। ऋजीषिन्॥ १०॥

पदार्थ:-(अध) आनन्तर्य्ये **(त्वष्टा)** छेदक: **(ते)** तव **(मह:)** महान्तम् **(उग्र)** तेजस्विन् **(वज्रम्)** शस्त्रविशेषम् **(सहस्रभृष्टिम्)** सहस्राणां भृज्जकं छेदकम् **(ववृतत्)** वर्त्तते **(शताश्रिम्)** य: शतान्याश्रयति तम् **(निकामम्)** यो नित्यं कम्यते तम् **(अरमणसम्)** यस्मिन्न रमन्ते शत्रवस्तम् **(येन)** **(नवन्तम्)** स्तुवन्तं नम्रमिव **(अहिम्)** मेघम् **(सम्)** **(पिणक्)** पिनष्टि **(ऋजीषिन्)** ऋजीषि सरलत्वं यस्यास्ति तत्सम्बुद्धौ॥ १०॥

अन्वय:-हे ऋजीषिन्नुग्र! ते हस्ते मह: सहस्रभृष्टिं शताश्रिं निकाममरमणसं वज्रं धारयाम्यध येन त्वष्टा भवान्नवन्तमहिं सूर्य्य इव सम्पिणक् ववृतत् तं वयमपि धरेम॥ १०॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कार:। हे वीरपुरुषा यथा धनुर्वेदविदो वीरपुरुषा: शस्त्राणि धरेयुस्तथा यूयमपि धरत॥ १०॥

पदार्थ:-हे **(ऋजीषिन्)** सरल स्वाभाव वाले **(उग्र)** तेजस्विन् **(ते)** आपके हस्त में **(मह:)** बड़े **(सहस्रभृष्टिम्)** हजारों का छेदन करने और **(शताश्रिम्)** सैकड़ों का आश्रयण करने वाले और **(निकामम्)** नित्य कामना किये जाते **(अरमणसम्)** जिसमें नहीं रमते हैं शत्रु उस **(वज्रम्)** शस्त्रविशेष को धारण कराता हूँ **(अध)** इसके अनन्तर **(येन)** जिससे **(त्वष्टा)** छेदन करने वाले आप **(नवन्तम्)** स्तुति करते हुए नम्र के सदृश को **(अहिम्)** मेघ को जैसे सूर्य्य, वैसे **(सम्, पिणक्)** अच्छे प्रकार पीसते हैं तथा **(ववृतत्)** वर्त्ताव करते हैं, उन आपको हम लोग भी धारण करें॥ १०॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। हे वीरपुरुषो! जैसे धनुर्वेद के जानने वाले वीरपुरुष शस्त्रों को धारण करें, वैसे आप लोग भी धारण करो॥ १०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

वर्धान् यं विश्वे मरुत: सजोषा: पचच्छतं महिषाँ इन्द्र तुभ्यम्।
पूषा विष्णुस्त्रीणि सरांसि धावन् वृत्रहणं मदिरमंशुमस्मै॥ ११॥

वर्धान्। यम्। विश्वे। मरुत:। सऽजोषा:। पचत्। शतम्। महिषान्। इन्द्र। तुभ्यम्। पूषा। विष्णु:। त्रीणि। सरांसि। धावन्। वृत्रऽहनम्। मदिरम्। अंशुम्। अस्मै॥ ११॥

पदार्थ:-(वर्धान्) वर्धयेरन् **(यम्)** **(विश्वे)** सर्वे **(मरुत:)** मनुष्या: **(सजोषा:)** समानप्रीतिसेविन: **(पचत्)** पचेत् **(शतम्)** शतसङ्ख्याकान् **(महिषान्)** महत:। **महिष इति महन्नाम।** (निघं०३.३) **(इन्द्र)** सूर्य्य इव वर्त्तमान राजन् **(तुभ्यम्)** **(पूषा)** पुष्टिकर्त्ता **(विष्णु:)** व्यापको विद्युद्रूप: **(त्रीणि)** **(सरांसि)**

सरन्ति येषु तान्यन्तरिक्षादीनि **(धावन्)** धावन् सन् **(वृत्रहणम्)** यो वृत्रं मेघं सूर्य्य इव शत्रून् हन्ति **(मदिरम्)** हर्षकरम् **(अंशुम्)** विभक्तम् **(अस्मै)**॥११॥

अन्वयः-हे इन्द्र! सजोषा विश्वे मरुतो यं त्वां वर्धान् यः पूषा धावन् विष्णुस्त्रीणि सरांसि व्याप्नोति तथा धावन्नस्मै मदिरमंशुं वृत्रहणमिव शत्रून् हन्ति यस्तुभ्यं शतं महिषान् ददाति यश्च परोकारार्थं पचत्तं यूयं विजानीत॥११॥

भावार्थः-यथा प्रजाजना राजानं राज्यं च वर्धयेयुस्तथा राजैतान् सततं वर्धयेत्॥११॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** सूर्य्य के समान वर्त्तमान राजन्! **(सजोषाः)** तुल्य प्रीति के सेवने वाले **(विश्वे)** सम्पूर्ण **(मरुतः)** मनुष्य **(यम्)** जिन आपकी **(वर्धान्)** वृद्धि करें और जो **(पूषा)** पुष्टि करने वाला **(धावन्)** दौड़ता हुआ **(विष्णुः)** व्यापक बिजुलीरूप **(त्रीणि)** तीन **(सरांसि)** चलते हैं जिनमें उन अन्तरिक्ष आदिकों को व्याप्त होता है, वैसे दौड़ते हुए **(अस्मै)** इसके लिये **(मदिरम्)** आनन्द करने वाले **(अंशुम्)** विभक्त **(वृत्रहणम्)** मेघ को जैसे सूर्य्य, वैसे शत्रुओं का मारता है और जो **(तुभ्यम्)** आपके लिये **(शतम्)** सौ **(महिषान्)** बड़े पदार्थों को देता है और जो परोपकार के लिये **(पचत्)** पाक करे, उसको आप लोग जानिये॥११॥

भावार्थः-जैसे प्रजाजन राजा और राज्य को बढ़ावें, वैसे राजा इनकी निरन्तर वृद्धि करे॥११॥

अब राजादयः किं कुर्य्युरित्याह॥

अब राजा आदि क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

आ क्षोदो महि वृतं नदीनां परिष्ठितमसृज ऊर्मिमपाम्।

तासामनु प्रवत इन्द्र पन्थां प्रार्दयो नीचीरपसः समुद्रम्॥१२॥

आ। क्षोदः। महि। वृतम्। नदीनाम्। परिऽस्थितम्। असृजः। ऊर्मिम्। अपाम्। तासाम्। अनु। प्रऽवतः। इन्द्र। पन्थाम्। प्र। आर्दयः। नीचीः। अपसः। समुद्रम्॥१२॥

पदार्थः-**(आ)** **(क्षोदः)** उदकम्। **क्षोद इत्युदकनाम**। (निघं०१.१२) **(महि)** महत् **(वृतम्)** स्वीकृतम् **(नदीनाम्)** **(परिष्ठितम्)** परितः सर्वतः स्थितम् **(असृजः)** सृजति **(ऊर्मिम्)** तरङ्गम् **(अपाम्)** जलानाम् **(तासाम्)** **(अनु)** **(प्रवतः)** निम्नोद्देशात् **(इन्द्र)** सूर्य्य इव राजन् **(पन्थाम्)** **(प्र)** **(आर्दय)** आर्दयति नयति **(नीचीः)** निम्ने देशे वर्त्तमानाः भूमीः **(अपसः)** कर्म्मणः **(समुद्रम्)** अन्तरिक्षं महोदधिं वा॥१२॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यथा सूर्य्यो नदीनां महि वृतं परिष्ठितं क्षोदोऽपामूर्मिं चाऽसृजस्तासां प्रवतोऽनु पन्थामपसो नीचीः समुद्रं प्राऽऽर्दयस्तथा त्वं सेनां प्रजां च सुखं नीत्वा शत्रूनधोगतिं नय॥१२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये राजादयो जनाः सूर्यवद्वर्त्तन्ते ते प्रजापालनं शत्रुनिवारणं च कर्तुं शक्नुवन्ति॥१२॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** सूर्य्य के समान वर्त्तमान राजन्! जैसे सूर्य्य **(नदीनाम्)** नदियों के **(महि)** बड़े **(वृतम्)** स्वीकार किये गये **(परिष्ठितम्)** सब ओर से वर्त्तमान **(क्षोदः)** जल की और **(अपाम्)** जलों की **(ऊर्मिम्)** तरंग को **(असृजः)** उत्पन्न करता **(तासाम्)** उनके **(प्रवतः)** नीचे स्थान से **(अनु)** पश्चात् **(पन्थाम्)** मार्ग को **(अपसः)** कर्म्म की **(नीचीः)** निचली भूमियों को और **(समुद्रम्)** अन्तरिक्ष वा बड़े समुद्र को **(प्र, आ, आर्दयः)** प्राप्त कराता है, वैसे आप सेना और प्रजा को सुख प्राप्त करा के शत्रुओं को नीची दशा को प्राप्त कराइये॥१२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो राजा आदि जन सूर्य्य के सदृश वर्त्तमान हैं, वे प्रजापालन और शत्रु के निवारण करने को समर्थ होते हैं॥१२॥

पुना राजप्रजाजनाः कथं वर्त्तेयुरित्याह॥

फिर राजा और प्रजाजन कैसा वर्त्ताव करें, इस विषय को कहते हैं॥

एवा ता विश्वा चकृवांसमिन्द्रं महामुग्रमजुर्यं सहोदाम्।

सुवीरं त्वा स्वायुधं सुवज्रमा ब्रह्म नव्यमवसे ववृत्यात्॥१३॥

एव। ता। विश्वा। चकृऽवांसम्। इन्द्रम्। महाम्। उग्रम्। अजुर्यम्। सहःऽदाम्। सुऽवीरम्। त्वा। सुऽआयुधम्। सुऽवज्रम्। आ। ब्रह्म। नव्यम्। अवसे। ववृत्यात्॥१३॥

पदार्थः-**(एवा)** **(ता)** तानि **(विश्वा)** सर्वाणि **(चकृवांसम्)** कुर्वन्तम् **(इन्द्रम्)** परमैश्वर्य्यवन्तं शत्रुविदारकं वा **(महाम्)** महान्तम् **(उग्रम्)** तेजस्विनम् **(अजुर्य्यम्)** अजीर्णम् **(सहोदाम्)** बलप्रदम् **(सुवीरम्)** उत्तमवीरावृतम् **(त्वा)** त्वाम् **(स्वायुधम्)** उत्तमायुधप्रक्षेपकुशलम् **(सुवज्रम्)** प्रशस्तवज्रास्त्रचालनसमर्थम् **(आ)** **(ब्रह्म)** महद्धनमन्नं वा **(नव्यम्)** नवेषु भवम् **(अवसे)** रक्षणाद्याय **(ववृत्यात्)** वर्त्तयेत्॥१३॥

अन्वयः-हे राजन्! यस्ता विश्वा चकृवांसं महामुग्रमजुर्य्यं सहोदां स्वायुधं सुवज्रं सुवीरमिन्द्रं त्वैवाऽवसे न्यायकरणायाऽऽववृत्यात् स नव्यं ब्रह्म वर्धयितुं शक्नुयात्॥१३॥

भावार्थः-पितृवत्प्रजापालकं धनुर्वेदराजनीतियुद्धविद्याकुशलं राजानं सर्वे वर्धयन्तु तथैतानयं राजा सततं वर्धयेत्॥१३॥

पदार्थः-हे राजन्! जो **(ता)** उन **(विश्वा)** सम्पूर्णों को और **(चकृवांसम्)** करते हुए **(महाम्)** बड़े **(उग्रम्)** तेजस्वी **(अजुर्य्यम्)** नहीं जीर्ण हुए **(सहोदाम्)** बल के देनेवाले **(स्वायुधम्)** उत्तम शस्त्र के चलाने में चतुर **(सुवज्रम्)** प्रशस्त वज्ररूप अस्त्र के चलाने में समर्थ **(सुवीरम्)** उत्तम वीरों से युक्त **(इन्द्रम्)** अत्यन्त ऐश्वर्य्य वाले शत्रु के नाशक **(त्वा)** आपको **(एवा)** ही **(अवसे)** रक्षण आदि के लिये और न्याय करने के लिये **(आ, ववृत्यात्)** सब ओर से वर्त्ताव करे वह **(नव्यम्)** नवीनों में हुए **(ब्रह्म)** बड़े धन वा अन्न को बढ़ाने को समर्थ होवे॥१३॥

भावार्थः-पिता के सदृश प्रजाओं के पालन, धनुर्वेद, राजनीति और युद्धविद्या में कुशल राजा की सब लोग वृद्धि करें और इन लोगों की यह राजा निरन्तर वृद्धि करे॥१३॥

पुनर्नृपेण किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

स नो॒ वाजा॑य॒ श्रव॑स इ॒षे च॑ रा॒ये धे॑हि द्यु॒मत॑ इन्द्र॒ विप्रा॑न्।

भ॒रद्वा॑जे नृ॒वत॑ इन्द्र सू॒रीन् दि॒वि च॑ स्मैधि॒ पार्ये॑ न इन्द्र॥१४॥

सः। नः॒। वाजा॑य। श्रव॑से। इ॒षे। च॒। रा॒ये। धे॒हि॒। द्यु॒ऽमतः॑। इ॒न्द्र॒। विप्रा॑न्। भ॒रत्ऽवा॑जे। नृ॒ऽवतः॑। इ॒न्द्र॒। सू॒रीन्। दि॒वि। च॒। स्म॒। ए॒धि॒। पार्ये॑। नः॒। इ॒न्द्र॒॥१४॥

पदार्थः-(**सः**) राजा (**नः**) अस्मान् (**वाजाय**) वेगाय विज्ञानाय वा (**श्रवसे**) श्रवणाय (**इषे**) अन्नाय (**च**) (**राये**) धनाय (**धेहि**) (**द्युमतः**) विज्ञानप्रकाशयुक्तान् (**इन्द्र**) परमैश्वर्य्यप्रापक (**विप्रान्**) मेधाविनो विपश्चितः (**भरद्वाजे**) राज्यस्य पोषके पालके वा व्यवहारे (**नृवतः**) प्रशस्तजनयुक्तान् (**इन्द्र**) दुःखदारिद्र्यविनाशक (**सूरीन्**) विदुषः (**दिवि**) कमनीये न्यायप्रकाशे (**च**) (**स्म**) एव (**एधि**) भव (**पार्य्ये**) पारयितव्ये (**नः**) अस्माकम् (**इन्द्र**) विद्यैश्वर्य्यवर्धक॥१४॥

अन्वयः-हे इन्द्र! स त्वं द्युमतो नो विप्रान् वाजाय श्रवस इषे राये च धेहि, हे इन्द्र! त्वं नृवतोऽस्मान्त्सूरीन् भरद्वाजे दिवि च धेहि। हे इन्द्र! त्वं पार्य्ये च नोऽस्माकं वर्धकः स्मैधि॥१४॥

भावार्थः-राज्ञां योग्यमस्ति सर्वेष्वधिकारेषु सर्वविद्याकुशलान् धार्मिकान् कुलीनान् राजभक्तान् संस्थाप्य सर्वतो राज्योन्नतिं विदध्युः॥१४॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य के प्राप्त कराने वाले! (**सः**) वह राजा आप (**द्युमतः**) विज्ञान के प्रकाश से युक्त (**नः**) हम लोगों (**विप्रान्**) बुद्धिमान् विद्वानों को (**वाजाय**) वेग वा विज्ञान के लिये (**श्रवसे**) श्रवण के लिये (**इषे**) अन्न के लिये और (**राये**) धन के लिये (**च**) भी (**धेहि**) धारण करिये और हे (**इन्द्र**) दुःख और दारिद्र्य के विनाशक! आप (**नृवतः**) अच्छे मनुष्यों से युक्त हम (**सूरीन्**) विद्वानों को (**भरद्वाजे**) राज्य के पुष्ट करने वा पालन करने वाले व्यवहार में और (**दिवि**) सुन्दर न्याय के प्रकाश में (**च**) भी धारण करिये और हे (**इन्द्र**) विद्या और ऐश्वर्य के बढ़ाने वाले! आप (**पार्य्ये**) पार करने योग्य में भी (**नः**) हम लोगों के बढ़ाने वाले (**स्म**) ही (**एधि**) होओ॥१४॥

भावार्थः-राजाओं को योग्य है कि सम्पूर्ण अधिकारों में सम्पूर्ण विद्याओं में चतुर, धार्म्मिक, कुलीन और राजभक्तों को संस्थापित करके सब प्रकार से राज्य की उन्नति करें॥१४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

अ॒या वाजं॑ दे॒वहि॑तं सनेम॒ मदे॑म श॒तहि॑माः सु॒वीराः॑॥१५॥३॥

अया। वाजम्। देवऽहितम्। सनेम। मदेम। शतऽहिमाः। सुऽवीराः॥१५॥

पदार्थः-(**अया**) अनया नीत्या (**वाजम्**) विज्ञानम् (**देवहितम्**) देवेभ्यो हितकारिणम् (**सनेम**) विभजेम (**मदेम**) आनन्देम (**शतहिमाः**) शतवर्षजीविनः (**सुवीराः**) उत्तमवीरयुक्ताः॥१५॥

अन्वयः-हे राजन्! यथा शतहिमाः सुवीराः सन्तो वयं देवहितं वाजं सनेम मदेम॥१५॥

भावार्थः-राज्ञा विद्वत्सङ्गो विनयेन राज्यपालनायोत्तमवीरा अधिकर्त्तव्या॥१५॥

अत्राग्निविद्वद्राजामात्यप्रजाकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति सप्तदशं सूक्तं तृतीयो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे राजन्! (**अया**) इस नीति से (**शतहिमाः**) सौ वर्ष पर्य्यन्त जीवने वाले (**सुवीराः**) उत्तम वीर जनों से युक्त हुए हम लोग (**देवहितम्**) विद्वानों के लिये हितकारी (**वाजम्**) विज्ञान का (**सनेम**) विभाग करें और (**मदेम**) आनन्द करें॥१५॥

भावार्थः-राजा को चाहिये कि विद्वानों का संग और विनय से राज्यपालन के लिये उत्तम वीर जनों को अधिकृत करें॥१५॥

इस सूक्त में अग्नि, विद्वान्, राजा, मन्त्री और प्रजा के कृत्य वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये।

यह सत्रहवां सूक्त और तीसरा वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ पञ्चदशर्चस्याष्टादशस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ४,९, १४ निचृत्त्रिष्टुप्। २, ८, ११, १३ त्रिष्टुप्। ७, १० विराट्त्रिष्टुप्। १२ भुरिक्त्रिष्टुप्छन्दः। धैवतः स्वरः। ३, १५ भुरिक्पङ्क्तिः। ५ स्वराट्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः ६ ब्राह्म्युष्णिक्छन्दः। ऋषभः स्वरः॥

पुना राजा किं कुर्य्यादित्याह॥

अब पन्द्रह ऋचा वाले अठारहवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में फिर राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

तमु ष्टुहि यो अभिभूत्योजा वन्वन्नवातः पुरुहूत इन्द्रः।
अषाळहमुग्रं सहमानमाभिर्गीर्भिर्वर्ध वृषभम् चर्षणीनाम्॥ १॥

तम्। ऊँ इति। स्तुहि। यः। अभिभूतिऽओजाः। वन्वन्। अवातः। पुरुऽहुतः। इन्द्रः। अषाळहम्। उग्रम्। सहमानम्। आभिः। गीःऽभिः। वर्ध। वृषभम्। चर्षणीनाम्॥ १॥

पदार्थः-(**तम्**) (**उ**) (**स्तुहि**) (**यः**) (**अभिभूत्योजाः**) अभिभूतये शत्रूणां पराभवायौजः पराक्रमो यस्य सः (**वन्वन्**) विभजन् (**अवातः**) अहिंसितः (**पुरुहूतः**) बहुभिः प्रशंसितः (**इन्द्रः**) दुःखविदारकः (**अषाळहम्**) असोढव्यम् (**उग्रम्**) तीव्रस्वभावम् (**सहमानम्**) शत्रूणां वेगस्य सोढारम् (**आभिः**) (**गीभिः**) वाग्भिः (**वर्ध**) वर्धस्व। अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम्। (**वृषभम्**) अतिश्रेष्ठम् (**चर्षणीनाम्**) मनुष्याणाम्॥ १॥

अन्वयः-हे राजन्! योऽभिभूत्योजा अवातः पुरुहूतो वन्वन्निन्द्रोऽस्ति तमषाळहमुग्रं चर्षणीनां वृषभं सहमानमाभिर्गीभिः स्तुह्यु तेन वर्ध॥ १॥

भावार्थः-हे राजंस्त्वं सदा स्तोतव्यं स्तुहि निन्दनीयं निन्द सत्कर्त्तव्यं सत्कुरु दण्डनीयं दण्डय॥ १॥

पदार्थः-हे राजन्! (**यः**) जो (**अभिभूत्योजाः**) अभिभव अर्थात् शत्रुओं के पराजय करने के लिये पराक्रम से युक्त (**अवातः**) नहीं हिंसित (**पुरुहूतः**) बहुतों से प्रशंसित (**वन्वन्**) विभाग करता हुआ (**इन्द्रः**) दुःख को विदीर्ण करनेवाला है (**तम्**) उस (**अषाळहम्**) नहीं सहने योग्य (**उग्रम्**) तीव्र स्वभाववाले और (**चर्षणीनाम्**) मनुष्यों में (**वृषभम्**) अतिश्रेष्ठ और (**सहमानम्**) शत्रुओं के वेग को सहने वाले की (**आभिः**) इन (**गीर्भिः**) वाणियों से (**स्तुहि**) स्तुति करिये (**उ**) और उससे (**वर्ध**) वृद्धि को प्राप्त हूजिये॥ १॥

भावार्थः-हे राजन्! आप सदा स्तुति करने योग्य की स्तुति करिये, निन्दा करने योग्य की निन्दा करिये तथा सत्कार करने योग्य का सत्कार करिये और दण्ड देने योग्य को दण्ड दीजिये॥ १॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

स युध्मः सत्वा खजकृत्समद्वा तुविम्रक्षो नदनुमाँ ऋजीषी।
बृहद्रेणुश्च्यवनो मानुषीणामेकः कृष्टीनामभवत् सहावा॥२॥

सः। युध्मः। सत्वा। खजऽकृत्। समत्ऽवा। तुविऽम्रक्षः। नदनुऽमान्। ऋजीषी। बृहत्ऽरेणुः। च्यवनः। मानुषीणाम्। एकः। कृष्टीनाम्। अभवत्। सहऽवा॥२॥

पदार्थः-(**सः**) (**युध्मः**) योद्धा (**सत्वा**) बलवान् (**खजकृत्**) यः खजं सङ्ग्रामं करोति। **खज इति सङ्ग्रामनाम।** (निघं०२.१७) (**समद्वा**) सम्यगत्ति स्वादु: भुङ्क्ते सः (**तुविम्रक्षः**) बहुस्नेहः (**नदनुमान्**) नदनवो बहवः शब्दा विद्यन्ते यस्मिँत्सः (**ऋजीषी**) ऋजुगामी (**बृहद्रेणुः**) बृहन्तो रेणवो यस्मिँत्सः (**च्यवनः**) गन्ता (**मानुषीणाम्**) मनुष्यसम्बन्धिनीनां सेनानाम् (**एकः**) असहायः (**कृष्टीनाम्**) मनुष्याणाम् (**अभवत्**) भवेत् (**सहावा**) सहनकर्त्ता॥२॥

अन्वयः-हे राजन्! यो युध्मः सत्वा समद्वा तुविम्रक्षो नदनुमानृजीषी बृहद्रेणुश्च्यवनो मानुषीणां कृष्टीनामेकस्सहावा खजकृद्वीरोऽभवत् स एव त्वया राज्यरक्षणाय नियोक्तव्यः॥२॥

भावार्थः-राज्ञा राजकर्म्मचारी सम्परीक्ष्य राज्यव्यवहारे नियोक्तव्यः येन प्रजायाः सुखं वर्धेत॥२॥

पदार्थः-हे राजन्! जो (**युध्मः**) युद्ध करने वाला (**सत्वा**) बलवान् (**समद्वा**) अच्छे प्रकार स्वादु भोजन करने वाला (**तुविम्रक्षः**) बहुत स्नेहयुक्त (**नदनुमान्**) बहुत शब्द विद्यमान जिसमें ऐसा और (**ऋजीषी**) सरल चलने वाला (**बृहद्रेणुः**) बड़ी धूलि जिसमें वह (**च्यवनः**) जानेवाला (**मानुषीणाम्**) मनुषीष्यसम्बन्धिनी सेनाओं (**कृष्टीनाम्**) मनुष्यों के मध्य में (**एकः**) सहायरहित (**सहावा**) सहनशील (**खजकृत्**) संग्राम करने वाला वीर (**अभवत्**) होवे (**सः**) वही आप से राज्य की रक्षा के निमित्त नियुक्त करने योग्य है॥२॥

भावार्थः-राजा को चाहिये कि राजकर्म्मचारी को उत्तम प्रकार परीक्षा करके राज्य व्यवहार में नियुक्त करे, जिससे प्रजा के सुख की वृद्धि हो॥२॥

पुना राज्ञा किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर राजा को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

त्वं ह नु त्यददमयो दस्यूँरेकः कृष्टीरवनोरार्याय।
अस्ति स्विन्नु वीर्यं१ तत्त इन्द्र न स्विदस्ति तदृतुथा वि वोचः॥३॥

त्वम्। ह। नु। त्यत्। अदमयः। दस्यून्। एकः। कृष्टीः। अवनोः। आर्याय। अस्ति। स्वित्। नु। वीर्यम्। तत्। ते। इन्द्र। न। स्वित्। अस्ति। तत्। ऋतुऽथा। वि। वोचः॥३॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**ह**) किल (**नु**) सद्यः (**त्यत्**) तत् (**अदमयः**) दमय (**दस्यून्**) दुष्टान् चोरान् (**एकः**) असहायः (**कृष्टीः**) मनुष्यान् (**अवनोः**) सम्भज (**आर्य्याय**) द्विजाय (**अस्ति**) (**स्वित्**) (**नु**) सद्यः

(वीर्य्यम्) बलम् **(तत्)** **(ते)** तव **(इन्द्र)** राजन् **(न)** निषेधे **(स्वित्)** अपि **(अस्ति)** **(तत्)** **(ऋतुथा)** ऋतुरिव **(वि)** **(वोचः)**॥३॥

अन्वयः-हे इन्द्र राजन्! यत्ते वीर्य्यमस्ति स्विन्नु यन्नास्ति स्विदृतुथा यद्वि वोचस्तत्त्वमवनोस्तन्ममास्तु दस्यूनेकः सन्नदमयः स त्वं ह कृष्टीरार्य्याय न्ववनोस्त्यद्वयप्येवं कुर्य्याम॥३॥

भावार्थः-राज्ञामिदं मुख्यं कर्म्मास्ति यत्सर्वान् दस्यून् निवार्य्य प्रजापालनं कुर्य्युः॥३॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** राजन्! जो **(ते)** आप का **(वीर्य्यम्)** बल **(अस्ति)** है **(स्वित्)** क्या? **(नु)** शीघ्र जो **(न)** नहीं **(अस्ति)** है और **(स्वित्)** भी **(ऋतुथा)** ऋतु जैसे वैसे जो **(वि, वोचः)** कहते हो **(तत्)** उसका **(त्वम्)** आप **(अवनोः)** सेवन करिये **(तत्)** वह मेरा हो और **(दस्यून्)** दुष्ट चोरों को **(एकः)** सहायरहित हुए आप **(अदमयः)** दमन करिये वह आप **(ह)** निश्चय **(कृष्टीः)** मनुष्यों को **(आर्य्याय)** द्विज के लिये **(नु)** शीघ्र उत्तम प्रकार सेवन करिये **(त्यत्)** उसको हम लोग भी ऐसे करें॥३॥

भावार्थः-राजाओं का यह मुख्य कर्म्म है कि सम्पूर्ण दुष्ट चोरों का निवारण करके प्रजाओं का पालन करें॥३॥

पुनः स राजा कीदृशो भवेदित्याह॥

फिर वह राजा कैसा होवे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सदिद्धि ते तुविजातस्य मन्ये सहः सहिष्ठ तुरतस्तुरस्य।
उग्रमुग्रस्य तवसस्तवीयोऽरध्रस्य रध्रतुरो बभूव॥४॥

सत्। इत्। हि। ते। तुविऽजातस्य। मन्ये। सहः। सहिष्ठ। तुरतः। तुरस्य। उग्रम्। उग्रस्य। तवसः। तवीयः। अरध्रस्य। रध्रऽतुरः। बभूव॥४॥

पदार्थः-**(सत्)** **(इत्)** एव **(हि)** निश्चयेन **(ते)** तव **(तुविजातस्य)** बहुषु प्रसिद्धस्य **(मन्ये)** **(सहः)** बलम् **(सहिष्ठ)** अतिशयेन सोढः **(तुरतः)** सद्यः कर्तुः **(तुरस्य)** सद्योऽनुष्ठातुः **(उग्रम्)** तीव्रम् **(उग्रस्य)** तीव्रस्य **(तवसः)** बलात् **(तवीयः)** अतिशयेन बलम् **(अरध्रस्य)** अहिंसकस्य **(रध्रतुरः)** हिंसकहिंसकः **(बभूव)** भवेत्॥४॥

अन्वयः-हे सहिष्ठ! तुविजातस्य यस्य ते यद्धि सहस्तत्सदहं मन्ये तुरतस्तुरस्योग्रस्यारध्रस्य तवस उग्रं तवीयोऽहं मन्ये स भवान् रध्रतुर इद्बभूव॥४॥

भावार्थः-सर्वैर्मनुष्यैः यस्मिन् यादृशा गुणकर्म्मस्वभावाः स्युस्तादृशा एव मन्तव्याः॥४॥

पदार्थः-हे **(सहिष्ठ)** अतिशय सहने वाले **(तुविजातस्य)** बहुतों में प्रसिद्ध जिन **(ते)** आप का जो **(हि)** निश्चित **(सहः)** बल है उसको **(सत्)** नित्य होने वाला पदार्थ मैं **(मन्ये)** मानता हूँ तथा **(तुरतः)** शीघ्र करने वाले **(तुरस्य)** शीघ्र आरम्भ करने वाले **(उग्रस्य)** तीव्र और **(अरध्रस्य)** नहीं हिंसा करने वाले के **(तवसः)** बल से **(उग्रम्)** तीव्र **(तवीयः)** अतिशय बल को मैं मानता हूँ वह आप **(रध्रतुरः)** हिंसकों के हिंसक **(इत्)** ही **(बभूव)** होवें॥४॥

भावार्थः-सब मनुष्यों को चाहिये कि जिसमें जैसे गुण, कर्म्म और स्वभाव होवें, वैसे ही मानें॥४॥

पुनर्मनुष्यैः परस्परं कथं वर्त्तितव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को परस्पर कैसा वर्त्ताव करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

तन्नः प्रत्नं सख्यमस्तु युष्मे इत्था वदद्भिर्वलमङ्गिरोभिः।
हन्नच्युतच्युद्दस्मेषयन्तमृणोः पुरो वि दुरो अस्य विश्वाः॥५॥४॥

तत्। नः। प्रत्नम्। सख्यम्। अस्तु। युष्मे इति। इत्था। वदत्ऽभिः। वलम्। अङ्गिरःऽभिः। हन्। अच्युतऽच्युत्। दस्म। इषयन्तम्। ऋणोः। पुरः। वि। दुरः। अस्य। विश्वाः॥५॥

पदार्थः-(**तत्**) (**नः**) अस्माकम् (**प्रत्नम्**) पुरातनम् (**सख्यम्**) सखीनां कर्म्म (**अस्तु**) (**युष्मे**) युष्माकम् (**इत्था**) अस्मादिव (**वदद्भिः**) (**बलम्**) मेघम्। **बल इति मेघनाम**। (निघं०१.१०) (**अङ्गिरोभिः**) वायुभिः (**हन्**) हन्ति (**अच्युतच्युत्**) योऽच्युतमचलन्तं च्यावयति (**दस्म**) दुःखोपक्षयितः (**इषयन्तम्**) प्राप्नुवन्तं गच्छन्तं वा (**ऋणोः**) प्रसाध्नुयाः (**पुरः**) (**वि**) (**दुरः**) द्वाराणि (**अस्य**) जगतः (**विश्वाः**) सर्वाः॥५॥

अन्वयः-हे न्यायकारिणो राजादयो जना युष्माभिः सह नोऽस्माकं यथा यत्प्रत्नं सख्यमस्त्वित्था युष्मे वदद्भिः सहास्माकं सख्यमस्तु। यथाऽङ्गिरोभिस्सहाऽच्युतच्युत्सूर्य्यो वलं हंस्तथा हे दस्मेषयन्तं त्वमृणोर्यथास्य जगतो दुरः सविता प्रकाशयति तथा त्वं विश्वाः पुरो वृणोः॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। मनुष्यैर्य्यावच्छक्यं तावदुत्तमैः सह मित्रतैव कार्य्या, सा कदाचिन्न नश्येदेवं प्रयतितव्यं यथा च सूर्य्यः सर्वं प्रकाशयति तथा राजा न्यायेन सर्व राज्यं प्रकाशयेत्॥५॥

पदार्थः-हे न्यायकारी राजा आदि जनो! आप लोगों के साथ (**नः**) हम लोगों की जैसे (**तत्**) वह (**प्रत्नम्**) प्राचीन (**सख्यम्**) मित्रता (**अस्तु**) हो (**इत्था**) इससे जैसे (**युष्मे**) आप लोगों के (**वदद्भिः**) कहते हुओं के साथ हम लोगों की मित्रता हो और जैसे (**अङ्गिरोभिः**) पवनों के साथ (**अच्युतच्युत्**) नहीं चञ्चल अर्थात् स्थिर को चञ्चल करने वाला सूर्य्य (**वलम्**) मेघ का (**हन्**) नाश करता है, वैसे हे (**दस्म**) दुःख के नाश करने वाले (**इषयन्तम्**) प्राप्त हुए वा जाते हुए को आप (**ऋणोः**) सिद्ध करिये और जैसे (**अस्य**) इस जगत् के (**दुरः**) द्वारों को सूर्य्य प्रकाशित करता है, वैसे आप (**विश्वाः**) सम्पूर्ण (**पुरः**) नगरियों को (**वि**) विशेष करके सिद्ध करिये॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। मनुष्यों को चाहिये कि यथाशक्ति उत्तमों के साथ मित्रता ही करें, वह कभी नष्ट न होवे, ऐसा प्रयत्न करें और जैसे सूर्य्य सब को प्रकाशित करता है, वैसे राजा न्याय से सम्पूर्ण राज्य को प्रकाशित करे॥५॥

पुना राज्ञा किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर राजा को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

स हि धीभिर्हव्यो अस्त्युग्र ईशानकृन्महति वृत्रतूर्ये।
स तोकसाता तनये स वज्री वितन्तसाय्यो अभवत्समत्सु॥६॥

सः। हि। धीभिः। हव्यः। अस्ति। उग्रः। ईशानऽकृत्। महति। वृत्रऽतूर्ये। सः। तोकऽसाता। तनये। सः। वज्री। वितन्तसाय्यः। अभवत्। समत्ऽसु॥६॥

पदार्थः-(**सः**) (**हि**) (**धीभिः**) प्रज्ञाभिर्बुद्धिभिर्वा (**हव्यः**) आदातुमर्हः (**अस्ति**) (**उग्रः**) तेजस्वी (**ईशानकृत्**) य ईशानानीशनशीलान् पुरुषार्थिनः करोति (**महति**) (**वृत्रतूर्य्ये**) स- ग्रामे (**सः**) (**तोकसाता**) तोकानामपत्यानां विभाजने (**तनये**) पुत्राय (**सः**) (**वज्री**) शस्त्रबाहुः (**वितन्तसाय्यः**) भृशं विस्तारणीयः (**अभवत्**) भवति (**समत्सु**) संग्रामेषु॥६॥

अन्वयः-हे राजन्! यथा स धीभिर्हव्यो महति वृत्रतूर्य्ये ईशानकृदस्ति स तोकसाता तनय उग्रः स हि वितन्तसाय्यो वज्री समत्स्वभवत् तथा त्वं विधेहि॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। राज्ञा सर्वे राजकर्म्मचारिणो योग्याः सम्पादनीया यतः सर्वदा विजयः स्यात्॥६॥

पदार्थः-हे राजन्! जैसे (**सः**) वह (**धीभिः**) ज्ञान व बुद्धियों से (**हव्यः**) ग्रहण करने योग्य (**महति**) बड़े (**वृत्रतूर्य्ये**) संग्राम में (**ईशानकृत्**) ईश्वरता करने वालों को पुरुषार्थी करने वाला (**अस्ति**) है और (**सः**) वह (**तोकसाता**) सन्तानों के विभाग होने में (**तनये**) पुत्र के लिये (**उग्रः**) तेजस्वी और (**सः**) वह (**हि**) ही (**वितन्तसाय्यः**) अत्यन्त विस्तार करने योग्य (**वज्री**) शस्त्र हैं बाहुओं में जिसके ऐसा (**समत्सु**) संग्रामों में (**अभवत्**) होता है, वैसे आप करिये॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। राजा को चाहिये कि सब कर्म्मचारियों को योग सिद्ध करे, जिससे सर्वदा विजय होवे॥६॥

पुना राज्ञा किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर राजा को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

स मज्मना जनिम मानुषाणाममर्त्येन नाम्नाति प्र सर्स्रे।
स द्युम्नेन स शवसोत राया स वीर्येण नृतमः समोकाः॥७॥

सः। मज्मना। जनिम। मानुषाणाम्। अमर्त्येन। नाम्ना। अति। प्र। सर्स्रे। सः। द्युम्नेन। सः। शवसा। उत। राया। सः। वीर्येण। नृऽतमः। सम्ऽओकाः॥७॥

पदार्थः-(**सः**) (**मज्मना**) बलेन (**जनिम**) जन्म प्रादुर्भावम् (**मानुषाणाम्**) मनुष्याणाम् (**अमर्त्येन**) मरणधर्मरहितेन कारणेन (**नाम्ना**) सञ्ज्ञया (**अति**) (**प्र**) (**सर्स्रे**) प्राप्नोति (**सः**) (**द्युम्नेन**) धनेन यशसा

वा **(सः) (शवसा)** विशिष्टेन बलेन **(उत)** अपि **(राया)** धनेन **(सः) (वीर्य्येण)** पराक्रमेण **(नृतमः)** नृणां मध्येऽतिशयेनोत्तमः **(समोकाः)** एकस्थानः॥७॥

अन्वयः-हे राजन्! यथाऽयं भृत्यो मज्मना स द्युम्नेन स शवसा स रायोत स वीर्य्येण मानुषाणाममर्त्येन नाम्ना जनिम प्रादुर्भावमति प्र सर्स्रे सः समोका नृतमः स्यात्तथा विधेहि॥७॥

भावार्थः-राज्ञा तथा प्रजा राजजनाश्च प्रसिद्धिं बलं धनं कीर्तिं पराक्रमञ्च प्राप्नुयुस्तथा प्रयतितव्यम्॥७॥

पदार्थः-हे राजन्! जैसे यह सेवक **(मज्मना)** बल से **(सः)** वह **(द्युम्नेन)** धन वा यश से **(सः)** वह **(शवसा)** विशेष बल से **(सः)** वह **(राया)** धन से और **(उत)** भी **(सः)** वह **(वीर्य्येण)** पराक्रम से **(मानुषाणाम्)** मनुष्यों के **(अमर्त्येन)** मरणधर्म्म से रहित कारण से और **(नाम्ना)** संज्ञा से **(जनिम)** जन्म अर्थात् प्रकट होने को **(अति, प्र, सर्स्रे)** अत्यन्त प्राप्त होता है वह **(समोकाः)** एक स्थान वाला **(नृतमः)** मनुष्यों के मध्य में अतिशय उत्तम होवे, वैसे आप करिये॥७॥

भावार्थः-राजा को चाहिये कि जैसे प्रजा और राजा के जन प्रसिद्धि, बल, धन, यश और पराक्रम को प्राप्त होवें, वैसे प्रयत्न करें॥७॥

पुनर्मनुष्याः कथं वर्त्तेयुरित्याह॥

फिर मनुष्य कैसा वर्त्ताव करें, इस विषय को कहते हैं॥

स या न मुहे न मिथू जनो भूत्सुमन्तुनामा चुमुरिं धुनिं च।

वृणक् पिप्रुं शम्बरं शुष्णमिन्द्रः पुरां च्यौत्नाय शयथाय नू चित्॥८॥

सः। यः। न। मुहे। न। मिथु। जनः। भूत्। सुमन्तुऽनामा। चुमुरिम्। धुनिम्। च। वृणक्। पिप्रुम्। शम्बरम्। शुष्णम्। इन्द्रः। पुराम्। च्यौत्नाय। शयथाय। नु। चित्॥८॥

पदार्थः-**(सः) (यः) (न)** निषेधे **(मुहे)** मुग्धो भवति **(न) (मिथू)** परस्परम् **(जनः)** मनुष्यः **(भूत्)** भवति **(सुमन्तुनामा)** सुष्ठु मन्तु मन्तव्यं ज्ञातव्यं नाम यस्य **(चुमुरिम्)** अत्तारम् **(धुनिम्)** ध्वनितारम् **(च) (वृणक्)** छिनत्ति **(पिप्रुम्)** व्यापनशीलम् **(शम्बरम्)** शं सुखं वृणोति येन तं मेघम् **(शुष्णम्)** शोषकम् **(इन्द्रः)** सूर्य्यः **(पुराम्)** पूर्णानां धनानाम् **(च्यौत्नाय)** च्यवनाय गमनाय **(शयथाय)** शयनाय **(नू)** सद्यः **(चित्)** अपि॥८॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथेन्द्रश्चुमुरिं पिप्रुं धुनिं शुष्णं शम्बरं मेघं पुरां च्यौत्नाय शयथाय नू वृणक् तथा च यः सुमन्तुनामा जनो न मुहे न मिथू भूत्स चित्सत्कर्त्तव्योऽस्ति॥८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सूर्य्यो मेघं निर्माय वर्षयित्वा बद्धो न भवति तथैव मनुष्या धर्म्याणि कार्य्याणि कृत्वा सज्जनैः सह वर्त्तित्वा मोहिता न भवन्ति किन्तु सुखिनो भवन्ति॥८॥

पदार्थः-हे विद्वन्! जैसे **(इन्द्रः)** सूर्य्य **(चुमुरिम्)** भोजन करने **(प्रिपुम्)** व्याप्त होने **(धुनिम्)** शब्द करने **(शुष्णम्)** सुखाने और **(शम्बरम्)** सुख को स्वीकार कराने वाले मेघ को **(पुराम्)** पूर्ण धनों

के **(च्यौत्लाय)** गमन और **(शयथाय)** शयन के लिये **(नू)** शीघ्र **(वृणक्)** काटता है, वैसे **(च)** और **(यः)** जो **(सुमन्तुनामा)** उत्तम प्रकार जानने योग्य नाम जिसका वह **(जनः)** मनुष्य **(न)** नहीं **(मुहे)** मोह को प्राप्त होता और **(न)** न **(मिथू)** परस्पर **(भूत्)** होता है **(सः)** वह **(चित्)** भी सत्कार करने योग्य है॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य्य मेघ का निर्म्माण करके और वर्षाय के [=बरसा कर] बद्ध नहीं होता है, वैसे ही मनुष्य धर्म्मयुक्त कार्य्यों को करके सज्जनों के साथ वर्त्ताव करके मोहित नहीं होते, किन्तु सुखी होते हैं॥८॥

पुना राजजनाः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर राजजन क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

उदावता त्वक्षसा पन्यसा च वृत्रहत्याय रथमिन्द्र तिष्ठ।
धिष्व वज्रं हस्त आ दक्षिणत्राभि प्र मन्द पुरुदत्र मायाः॥९॥

उत्ऽअवता। त्वक्षसा। पन्यसा। च। वृत्रऽहत्याय। रथम्। इन्द्र। तिष्ठ। धिष्व। वज्रम्। हस्ते। आ। दक्षिणऽत्रा। अभि। प्र। मन्द। पुरुऽदत्र। मायाः॥९॥

पदार्थः-**(उदावता)** ऊर्ध्वगमनेन **(त्वक्षसा)** सूक्ष्मीकरणेन **(पन्यसा)** शुद्धेन व्यवहारेण **(च)** **(वृत्रहत्याय)** संग्रामाय **(रथम्)** **(इन्द्र)** राजन् **(तिष्ठ)** **(धिष्व)** धरस्व **(वज्रम्)** शस्त्रास्त्रम् **(हस्ते)** **(आ)** समन्तात् **(दक्षिणत्रा)** दक्षिणे **(अभि)** **(प्र)** **(मन्द)** प्रशंसय **(पुरुदत्र)** बहुदानकृत् **(मायाः)** प्रज्ञाः॥९॥

अन्वयः-हे पुरुदत्रेन्द्र! त्वमुदावता पन्यसा त्वक्षसा वृत्रहत्याय रथमाऽऽतिष्ठ दक्षिणत्रा हस्ते वज्रं धिष्व। मायाश्च प्राप्याभि प्र मन्द॥९॥

भावार्थः-य उत्कृष्टतया सकलविषयाः प्रज्ञाः प्राप्य शास्त्राऽस्त्राणि धृत्वा युद्धाय गच्छन्ति ते विजयं प्राप्नुवन्ति॥९॥

पदार्थः-हे **(पुरुदत्र)** बहुत दान करने वाले **(इन्द्र)** राजन्! आप **(उदावता)** ऊर्ध्व गमन और **(पन्यसा)** शुद्ध व्यवहार तथा **(त्वक्षसा)** सूक्ष्मीकरण से **(वृत्रहत्याय)** संग्राम के लिये **(रथम्)** रथ पर **(आ)** सब प्रकार से **(तिष्ठ)** स्थित हो और **(दक्षिणत्रा)** दाहिने **(हस्ते)** हाथ में **(वज्रम्)** शस्त्र और अस्त्र को **(धिष्व)** धारण करिये **(मायाः)** बुद्धियों को **(च)** और प्राप्त होकर **(अभि, प्र, मन्द)** सब प्रकार से प्रशंसा करिये॥९॥

भावार्थः-जो उत्कृष्टता से सम्पूर्ण विषयों को जानने वाली बुद्धियों को प्राप्त होकर शस्त्र और अस्त्रों को धारण करके युद्ध के लिये जाते हैं, वे विजय को प्राप्त होते हैं॥९॥

पुना राजा किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

अग्निर्न शुष्कं वनमिन्द्र हेती रक्षो नि धक्ष्यशनिर्न भीमा।

गम्भीरयं ऋष्वया यो रुरोजाध्वानयद् दुरिता दुम्भयच्च॥ १०॥ ५॥

अग्निः। न। शुष्कम्। वनम्। इन्द्र। हेतिः। रक्षः। नि। धक्षि। अशनिः। न। भीमा। गम्भीरया। ऋष्वया। यः। रुरोज। अध्वनयत्। दुःऽइता। दुम्भयत्। च॥ १०॥

पदार्थः-(**अग्निः**) पावकः (**न**) इव (**शुष्कम्**) (**वनम्**) जङ्गलम् (**इन्द्र**) दुष्टताविदारक (**हेतिः**) वज्रः (**रक्षः**) दुष्टं जनम् (**नि**) नितराम् (**धक्षि**) दहसि (**अशनिः**) स्तनयित्नुः (**न**) इव (**भीमा**) बिभेति यस्याः सा (**गम्भीरया**) अगाधबलया (**ऋष्वया**) महत्या (**यः**) (**रुरोज**) शत्रून् रुजति (**अध्वानयत्**) धुनयति (**दुरिता**) दुष्टाचरणानि (**दम्भयत्**) दम्भयति हिंसयति (**च**)॥ १०॥

अन्वयः-हे इन्द्र राजन्! योऽग्निर्यथा शुष्कं वनं न रक्षो धक्षि यस्य ते हेतिरशनिर्न भीमा सेनास्ति तया भवान् ऋष्वया गम्भीरया शत्रून् रुरोज तमध्वानयद् दुरिता च दम्भयत् तेन यतो रक्षो नि धक्षि तस्मादपराजितोऽसि॥ १०॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे राजादयो जना! यथाग्निर्ज्वालया शुष्कमार्द्रमपि वनं दहति तथा सुशिक्षियया महत्या सेनया शत्रूणां भयं कुर्य्यात् दुष्टाञ्छत्रून् दहत॥ १०॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) दुष्टता के नाशक राजन्! (**यः**) जो (**अग्निः**) अग्नि जैसे (**शुष्कम्**) सूखे (**वनम्**) वन को (**न**) वैसे (**रक्षः**) दुष्ट जन को (**धक्षि**) जलाते हो और जिन आपका (**हेतिः**) वज्र (**अशनिः**) बिजुली (**न**) जैसे वैसे (**भीमा**) जिससे जन भय करते वह सेना है उस (**ऋष्वया**) बड़ी (**गम्भीरया**) अथाह बलयुक्त सेना से आप शत्रुओं को (**रुरोज**) रोगयुक्त करते हो उसको (**अध्वानयत्**) कंपाते हो और (**दुरिता**) दुष्ट आचरणों को (**च**) भी (**दम्भयत्**) नष्ट करते हो उससे जिस कारण दुष्टजन को (**नि**) अत्यन्त जलाते हो, इससे अपराजित हो॥ १०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे राजा आदि जनो! जैसे अग्नि ज्वाला से सूखे और गीले भी वन को जलाता है, वैसे उत्तम प्रकार शिक्षित तथा बड़ी सेना से शत्रुओं को भय करिये और शत्रुओं को जलाइये॥ १०॥

पुना राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

आ सहस्रं पथिभिरिन्द्र राया तुविद्युम्न तुविवाजेभिरर्वाक्।
याहि सूनो सहसो यस्य नू चिददेव ईशे पुरुहूत योतोः॥ ११॥

आ। सहस्रम्। पथिऽभिः। इन्द्र। राया। तुविऽद्युम्न। तुविऽवाजेभिः। अर्वाक्। याहि। सूनो इति। सहसः। यस्य। नु। चित्। अदेवः। ईशे। पुरुऽहूत। योतोः॥ ११॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**सहस्रम्**) असंख्यातम् (**पथिभिः**) मार्गैः (**इन्द्र**) (**राया**) धनेन (**तुविद्युम्न**) बहुप्रशंस (**तुविवाजेभिः**) बहुवेगैर्बहुस- ग्मैर्वा (**अर्वाक्**) पश्चात् (**याहि**) गच्छ (**सूनो**) अपत्य

(सहसः) बलवतः **(यस्य)** **(नू)** सद्यः **(चित्)** अपि **(अदेवः)** अविद्वान् **(ईशे)** ईष्टे **(पुरुहूत)** बहुभिः कृताह्वान **(योतोः)** मिश्रिताऽमिश्रितकर्त्तुः॥११॥

अन्वयः-हे तुविद्युम्न पुरुहूत सहसः सूनो इन्द्र! त्वं पथिभी राया तुविवाजेभिस्सहार्वाक् सहस्रमाऽऽयाहि यस्य योतोश्चिददेव ईशे तन्नू प्राप्नुहि॥११॥

भावार्थः-हे राजँस्त्वं विद्याविनयमार्गेण प्रजाः पितृवत्पालयित्वा यशस्वी भूत्वा सत्याऽसत्ययोर्यथावन्निर्णयं कुरु॥११॥

पदार्थः-हे **(तुविद्युम्न)** बहुत प्रशंसा से युक्त **(पुरुहूत)** बहुतों से आह्वान किये गये **(सहसः)** बलवान् के **(सूनो)** पुत्र **(इन्द्र)** दुष्टता के नाशक राजन्! आप **(पथिभिः)** मार्गों **(राया)** धन और **(तुविवाजेभिः)** बहुत वेग वा बहुत संग्रामों के साथ **(अर्वाक्)** पीछे से **(सहस्रम्)** अनेकों को **(आ)** सब ओर से **(याहि)** प्राप्त हूजिये और **(यस्य)** जिस **(योतोः)** मिश्रित और अमिश्रित करने वाले का **(चित्)** भी **(अदेवः)** विद्वान् से भिन्न जन **(ईशे)** इच्छा करता है, उसको **(नू)** शीघ्र प्राप्त होओ॥११॥

भावार्थः-हे राजन्! आप विद्या और विनय के मार्ग से प्रजाओं का पिता के सदृश पालन करके यशस्वी होकर सत्य और असत्य का यथावत् निर्णय करिये॥११॥

पुनः कोऽजातशत्रुर्भवतीत्याह॥

फिर कौन [अजात]शत्रुवाला होता है, इस विषय को कहते हैं॥

प्र तुविद्युम्नस्य स्थविरस्य घृष्वेर्दिवो ररप्शे महिमा पृथिव्याः।
नास्य शत्रुर्न प्रतिमानमस्ति न प्रतिष्ठिः पुरुमायस्य सह्योः॥१२॥

प्र। तुविऽद्युम्नस्य। स्थविरस्य। घृष्वेः। दिवः। ररप्शे। महिमा। पृथिव्याः। न। अस्य। शत्रुः। न। प्रतिऽमानम्। अस्ति। न। प्रतिऽस्थिः। पुरुऽमायस्य। सह्योः॥१२॥

पदार्थः-**(प्र)** **(तुविद्युम्नस्य)** बहुप्रशंसाधनस्य **(स्थविरस्य)** विद्यया वयसा च वृद्धस्य **(घृष्वेः)** घर्षकस्य **(दिवः)** कमनीयस्य **(ररप्शे)** अतिरिणक्ति **(महिमा)** **(पृथिव्याः)** भूमेः **(न)** **(अस्य)** **(शत्रुः)** **(न)** **(प्रतिमानम्)** परिमाणं सादृश्यं वा **(अस्ति)** **(न)** **(प्रतिष्ठिः)** प्रतिष्ठितः प्रतिष्ठावान् **(पुरुमायस्य)** बहुशुभकर्मप्रज्ञस्य **(सह्योः)** सहनशीलस्य॥१२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यस्य तुविद्युम्नस्य स्थविरस्य घृष्वेर्दिवः पुरुमायस्य सह्योर्महिमा पृथिव्याः प्र ररप्शेऽस्य न शत्रुर्न प्रतिमानं न प्रतिष्ठिश्चास्ति॥१२॥

भावार्थः-ये विद्यावृद्धा अमितप्रशंसामहिमानः सत्यं कामयमाना बहुप्रज्ञाः शमदमादिगुणान्विताः स्युस्तेषां कोऽपि शत्रुः सदृशः प्रतिष्ठितो वा न जायते॥१२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जिस **(तुविद्युम्नस्य)** बहुत प्रशंसारूप धन से युक्त **(स्थविरस्य)** विद्या और अवस्था से वृद्ध **(घृष्वेः)** दुष्टों के घिसनेवाले **(दिवः)** सुन्दर **(पुरुमायस्य)** बहुत श्रेष्ठ कर्म्मों में बुद्धि जिसकी उस **(सह्योः)** सहनशील का **(महिमा)** महत्त्व **(पृथिव्याः)** भूमि से **(प्र, ररप्शे)** अलग फैलता है

(अस्य) इसका **(न)** न **(शत्रुः)** वैरी **(न)** न **(प्रतिमानम्)** मान वा सादृश्य और **(न)** न **(प्रतिष्ठिः)** प्रतिष्ठित **(अस्ति)** है॥१२॥

भावार्थः-जो विद्या में वृद्ध, अमित प्रशंसा और महिमा वाले, सत्य की कामना करते हुए, बहुत बुद्धिमान् और शम, दम आदि गुणों से युक्त होवें, उनका कोई भी न शत्रु, न बराबर और न उनसे अधिक प्रतिष्ठित होता है॥१२॥

पुना राजा किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्र तत्ते अ॒द्या कर॑णं कृ॒तं भू॒त् कुत्सं॑ यदा॒युम॑तिथि॒ग्वम॑स्मै।

पु॒रू स॒हस्रा॒ नि शि॑शा अ॒भि क्षामुत्तूर्व॑याणं धृष॒ता नि॑नेथ॥१३॥

प्र। तत्। ते॒। अ॒द्य। कर॑णम्। कृ॒तम्। भू॒त्। कुत्स॑म्। यत्। आ॒युम्। अ॒ति॒थि॒ऽग्वम्। अ॒स्मै॒। पु॒रु। स॒हस्रा॑। नि। शि॒शाः॒। अ॒भि। क्षाम्। उत्। तूर्व॑याणम्। धृ॒ष॒ता। नि॒ने॒थ॒॥१३॥

पदार्थः-**(प्र)** **(तत्)** **(ते)** तव **(अद्या)** अत्र **निपातस्य** चेति दीर्घः। **(करणम्)** साधनम् **(कृतम्)** **(भूत्)** भवेत् **(कुत्सम्)** वज्रमिव दृढम् **(यत्)** **(आयुम्)** जीवनम् **(अतिथिग्वम्)** योऽतिथीन् गच्छति तम् **(अस्मै)** **(पुरू)** बहूनि **(सहस्रा)** सहस्राणि **(नि)** **(शिशाः)** शिक्षय **(अभि)** **(क्षाम्)** पृथिवीम् **(उत्)** **(तूर्वयाणम्)** तूर्वं शीघ्रगामि यानं यस्यास्ताम् **(धृषता)** दृढत्वेन **(निनेथ)** नय॥१३॥

अन्वयः-हे राजन्! यत्कुत्समतिथिग्वमायुमस्मै त्वमुन्निनेथ येन धृषता तूर्वयाणं क्षां पुरू सहस्राऽभि नि शिशास्तत्तेऽद्या करणं कृतं प्र भूत्॥१३॥

भावार्थः-यत्र राजादयो जना दीर्घायुषोऽतिथिसेवकाः पक्षपातं विहाय प्रजापालकाः सन्ति तत्र सर्वाणि कार्य्याणि सिद्धानि जायन्ते॥१३॥

पदार्थः-हे राजन्! **(यत्)** जिस **(कुत्सम्)** वज्र के सदृश दृढ़ **(अतिथिग्वम्)** अतिथियों को प्राप्त होने वाले **(आयुम्)** जीवन को **(अस्मै)** इसके लिये आप **(उत्)** **(निनेथ)** उन्नति प्राप्त करिये जिस **(धृषता)** दृढ़त्व से **(तूर्वयाणम्)** शीघ्रगामी वाहन जिसका उस **(क्षाम्)** पृथिवी को **(पुरू)** बहुत **(सहस्रा)** हजारों की **(अभि)** चारों ओर से **(नि, शिशाः)** शिक्षा दीजिये **(तत्)** वह **(ते)** आप का **(अद्या)** आज **(करणम्)** साधन **(कृतम्)** किया गया **(प्र, भूत्)** होवे॥१३॥

भावार्थः-जहाँ राजा आदि जन अधिक अवस्था वाले अतिथि जनों के सेवक, पक्षपात का त्याग करके प्रजा के पालक हैं, वहाँ सम्पूर्ण कार्य्य सिद्ध होते हैं॥१३॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर विद्वान् जन क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

अनु॒ त्वाहि॑घ्ने॒ अध॑ देव दे॒वा मद॒न् विश्वे॑ क॒वित॑मं क॒वी॒नाम्।

करो यत्र वरिवो बाधिताय दिवे जनाय तन्वे गृणानः॥१४॥

अनु। त्वा। अहिऽघ्ने। अध। देव। देवाः। मदन्। विश्वे। कविऽतमम्। कवीनाम्। करः। यत्र। वरिवः। बाधिताय। दिवे। जनाय। तन्वे। गृणानः॥१४॥

पदार्थः-(**अनु**) (**त्वा**) त्वाम् (**अहिघ्ने**) योऽहिं हन्ति तस्मै सूर्य्याय (**अध**) अथ (**देव**) विद्वन् (**देवाः**) विद्वांसः (**मदन्**) आनन्दयन्ति (**विश्वे**) सर्वे (**कवितमम्**) अतिशयेन विद्वांसम् (**कवीनाम्**) विदुषाम् (**करः**) यः करोति सः (**यत्र**) (**वरिवः**) परिचरणम् (**बाधिताय**) विलोडिताय (**दिवे**) कामयमानाय (**जनाय**) (**तन्वे**) शरीराय (**गृणानः**) स्तुवन्॥१४॥

अन्वयः-हे देव! यत्र बाधिताय दिवे जनाय तन्वो वरिवो गृणानः करोऽस्ति तत्राहिघ्ने सूर्य्यायेव यं कवीनां कवितमं त्वा विश्वे देवा अनु मदन् तं त्वामाश्रित्याध सततं वयं सुखिनः स्याम॥१४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्या उत्तमानाप्तान् विदुषः संसेव्य विद्याः प्राप्यान्यान् बोधयन्ति ते मोदिता अनुजायन्ते॥१४॥

पदार्थः–हे (**देव**) विद्वन्! (**यत्र**) जहाँ (**बाधिताय**) विलोडित हुए (**दिवे**) कामना करते हुए (**जनाय**) जन के और (**तन्वे**) शरीर के लिये (**वरिवः**) सेवन को (**गृणानः**) स्तुति करता हुआ जन (**करः**) कार्य्यों को करने वाला है वहाँ (**अहिघ्ने**) मेघ को नष्ट करने वाले सूर्य के लिये जैसे वैसे जिस (**कवीनाम्**) विद्वानों के मध्य में (**कवितमम्**) अत्यन्त विद्वान् (**त्वा**) आपको (**विश्वे**) सब (**देवाः**) विद्वान् जन (**अनु, मदन्**) आनन्दित करते हैं, उन आप का आश्रयण करके (**अध**) इसके अनन्तर निरन्तर हम लोग सुखी होवें॥१४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य उत्तम, यथार्थवक्ता, विद्वानों का उत्तम प्रकार सेवन कर विद्याओं को प्राप्त होकर अन्यों को जानते हैं, वे प्रसन्न होते हैं॥१४॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

अनु द्यावापृथिवी तत्त ओजोऽमर्त्या जिहत इन्द्र देवाः।
कृष्वा कृत्नो अकृतं यत्ते अस्त्युक्थं नवीयो जनयस्व यज्ञैः॥१५॥६॥

अनु। द्यावापृथिवी इति। तत्। ते। ओजः। अमर्त्याः। जिहते। इन्द्र। देवाः। कृष्व। कृत्नो इति। अकृतम्। यत्। ते। अस्ति। उक्थम्। नवीयः। जनयस्व। यज्ञैः॥१५॥

पदार्थः-(**अनु**) (**द्यावापृथिवी**) भूमिसूर्य्यौ (**तत्**) (**ते**) तव (**ओजः**) पराक्रमम् (**अमर्त्याः**) साधारणमनुष्यस्वभावाद्विलक्षणाः (**जिहते**) प्राप्नुवन्ति (**इन्द्र**) राजन् (**देवाः**) (**कृष्वा**) कुरुष्व। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**कृत्नो**) कर्त्तः (**अकृतम्**) अक्रियमाणं कर्म्म (**यत्**) (**ते**) तव (**अस्ति**) (**उक्थम्**) वक्तुमर्हम् (**नवीयः**) अतिशयेन नूतनं वचनम् (**जनयस्व**) (**यज्ञैः**) सङ्गतिमयैर्व्यवहारैः॥१५॥

अन्वयः-हे कृत्नो इन्द्र! ते तव सकाशाद्येऽमर्त्या देवा यदकृतं नवीय उक्थमस्ति तत्ते जिहते द्यावापृथिवी अनु जिहते तास्त्वं यज्ञैर्जनयस्वोजः कृष्वा॥१५॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यूयं भूमिविद्युदादिविद्यया नवीनं नवीनं कार्यं साध्नुतेति॥१५॥

अत्रेन्द्रविद्वद्राजगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्यष्टादशं सूक्तं षष्ठो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(कृत्नो)** करने वाले **(इन्द्र)** राजन्! **(ते)** आपके समीप से जो **(अमर्त्याः)** साधारण मनुष्यों के स्वभाव से विलक्षण स्वभाव वाले **(देवाः)** विद्वान् जन **(यत्)** जो **(अकृतम्)** नहीं किया गया कर्म और **(नवीयः)** अतिशय नवीन वचन **(उक्थम्)** कहने योग्य **(अस्ति)** है **(तत्)** उस **(ते)** आपके वचन को **(जिहते)** प्राप्त होते और **(द्यावापृथिवी)** भूमि और सूर्य को **(अनु)** पश्चात् प्राप्त होते हैं उनको आप **(यज्ञैः)** मेल करनेरूप व्यवहारों से **(जनयस्व)** प्रकट कीजिये और **(ओजः)** पराक्रम को **(कृष्वा)** करिये॥१५॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! आप लोग भूमि और बिजुली आदि की विद्या से नवीन-नवीन कार्य को सिद्ध करिये॥१५॥

इस सूक्त में इन्द्र, विद्वान् और राजा के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह अठाहरहवाँ सूक्त और छठा वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ त्रयोदशर्चस्यैकोनविंशतितमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ३, १३ भुरिक्पङ्क्तिः। ९ पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। २, ४, ५, ६, ७ निचृत्त्रिष्टुप्। १०, ११, १२ विराट्त्रिष्टुप् छन्दः। ८ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ सूर्यः कीदृशोऽस्तीत्याह॥

अब तेरह ऋचावाले उन्नीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में अब सूर्य कैसा है, इस विषय को कहते हैं॥

म॒हाँ इन्द्रो॑ नृ॒वदा च॑र्षणि॒प्रा उ॒त द्वि॒बर्हा॑ अ॒मिनः॒ सहो॑भिः।
अ॒स्म॒द्र्य॑ग्वावृधे वी॒र्या॑योरुः पृ॒थुः सुकृ॑तः क॒र्तृभि॑र्भूत्॥ १॥

म॒हान्। इन्द्रः॑। नृ॒ऽवत्। आ। च॒र्ष॒णि॒ऽप्राः। उ॒त। द्वि॒ऽबर्हाः॑। अ॒मि॒नः। सहः॑ऽभिः। अ॒स्म॒द्र्य॑क्। व॒वृ॒धे। वी॒र्या॑य। उ॒रुः। पृ॒थुः। सु॒ऽकृ॑तः। क॒र्तृऽभिः॑। भू॒त्॥ १॥

पदार्थः-(**महान्**) (**इन्द्रः**) सूर्यः (**नृवत्**) मनुष्यवत् (**आ**) (**चर्षणिप्राः**) यश्चर्षणिषु मनुष्येषु विद्युद्रूपेण व्याप्नोति (**उत**) (**द्विबर्हाः**) योऽन्तरिक्षवायुभ्यां द्वाभ्यां वर्धते (**अमिनः**) अहिंसकः (**सहोभिः**) बलैः (**अस्मद्र्यक्**) अस्माकं सम्मुखीभूतः (**वावृधे**) वर्धते (**वीर्याय**) पराक्रमाय (**उरूः**) बहुः (**पृथुः**) विस्तीर्णः (**सुकृतः**) सुष्ठु उत्पादितः (**कर्तृभिः**) कर्मकारकैः (**भूत्**) भवेत्॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो महानिन्द्रश्चर्षणिप्रा उत द्विबर्हा अमिनोऽस्मद्र्यगुरुः पृथुः सुकृतो भूत् सहोभिः कर्तृभिस्सह वीर्याय नृवदा वावृधे तं विज्ञायेष्टसिद्धिं कुरुत॥१॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा सखा सख्या सह कार्यसिद्धये प्रयतते तथैवेश्वरनिर्मिता विद्युत्सूर्यो वा सर्वेषां कर्मकारिणां सहयोगी वर्तते॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**महान्**) बड़ा (**इन्द्रः**) सूर्य (**चर्षणिप्राः**) मनुष्यों में बिजुली रूप में व्याप्त होने (**उत**) और (**द्विबर्हाः**) अन्तरिक्ष और वायु से बढ़ने और (**अमिनः**) नहीं हिंसा करने वाला (**अस्मद्र्यक्**) हम लोगों के सम्मुख हुआ (**उरुः**) बहुत (**पृथुः**) विस्तीर्ण (**सुकृतः**) उत्तम प्रकार उत्पन्न किया गया (**भूत्**) हो तथा (**सहोभिः**) बलों और (**कर्तृभिः**) कर्म करने वालों के साथ (**वीर्याय**) पराक्रम के लिये (**नृवत्**) मनुष्य जैसे वैसे (**आ, वावृधे**) सब ओर से बढ़ता है, उसको जान कर इष्टसिद्धि करिये॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे मित्र-मित्र के साथ कार्य की सिद्धि के निमित्त प्रयत्न करता है, वैसे ही ईश्वर से निर्मित बिजुली वा सूर्य सम्पूर्ण कर्मकारियों का सहयोगी होता है॥१॥

मनुष्यैः कथमुन्नतिः कार्येत्याह॥

मनुष्यों को किस प्रकार से उन्नति करनी चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

इन्द्रमेव धिषणा सातये धाद् बृहन्तमृष्वमजरं युवानम्।

अषाळहेन शवसा शूशुवांसं सद्यश्चिद्यो वावृधे असामि॥२॥

इन्द्रम्। एव। धिषणा। सातये। धात्। बृहन्तम्। ऋष्वम्। अजरम्। युवानम्। अषाळहेन। शवसा। शूशुऽवांसम्। सद्यः। चित्। यः। ववृधे। असामि॥२॥

पदार्थः-(इन्द्रम्) सूर्यमिव परमैश्वर्यवन्तम् **(एव)** **(धिषणा)** प्रज्ञया कर्मणा वा **(सातये)** संविभागाय **(धात्)** दधाति **(बृहन्तम्)** पृथिव्याः सकाशादतिविस्तीर्णम् **(ऋष्वम्)** गन्तारम् **(अजरम्)** जरारहितम् **(युवानम्)** **(अषाळहेन)** शत्रुभिरसोढव्येन **(शवसा)** **(शूशुवांसम्)** व्याप्नुवन्तम् **(सद्यः)** **(चित्)** **(यः)** **(वावृधे)** वर्धते **(असामि)** अनल्पम्॥२॥

अन्वयः-यो धिषणा सातये बृहन्तमृष्वमजरं युवानमिवाषाळहेन शवसा शूशुवांसमिन्द्रं धात् स एव सद्योऽसामि चित् वावृधे॥२॥

भावार्थः-यथा महन्मित्रं प्राप्य मनुष्या वर्धन्ते तथैव विद्युद्विद्यां लब्ध्वाऽतुलां वृद्धिं प्राप्नुवन्ति॥२॥

पदार्थः-(यः) जो **(धिषणा)** बुद्धि वा कर्म से **(सातये)** संविभाग के लिये **(बृहन्तम्)** पृथिवी के समीप से अतिविस्तीर्ण **(ऋष्वम्)** जाने वाले **(अजरम्)** वृद्धावस्था से रहित **(युवानम्)** युवाजन को जैसे वैसे **(अषाळहेन)** शत्रुओं से नहीं सहने योग्य **(शवसा)** बल से **(शूशुवांसम्)** व्याप्तिमान् **(इन्द्रम्)** सूर्य के सदृश अत्यन्त ऐश्वर्य वाले को **(धात्)** धारण करता है वह **(एव)** ही **(सद्यः)** शीघ्र **(असामि)** अत्यन्त **(चित्)** निश्चित **(वावृधे)** वृद्धि को प्राप्त होता है॥२॥

भावार्थः-जैसे बड़े मित्र को प्राप्त होकर मनुष्य वृद्धि को प्राप्त होते हैं, वैसे ही बिजुली की विद्या को प्राप्त होकर अतुल वृद्धि को प्राप्त होते हैं॥२॥

पुनः स राजा कीदृशो भवेदित्याह॥

फिर वह राजा कैसा होवे, इस विषय को कहते हैं॥

पृथू करस्ना बहुला गभस्ती अस्मद्र्य१क् सं मिमीहि श्रवांसि।

यूथेव पश्वः पशुपा दमूना अस्माँ इन्द्राभ्या ववृत्स्वाजौ॥३॥

पृथू इति। करस्ना। बहुला। गभस्ती इति। अस्मद्र्यक्। सम्। मिमीहि। श्रवांसि। यूथाऽइव। पश्वः। पशुऽपाः। दमूनाः। अस्मान्। इन्द्र। अभि। आ। ववृत्स्व। आजौ॥३॥

पदार्थः-(पृथू) विस्तीर्णौ **(करस्ना)** यौ करान् कर्त्तॄन् स्नापयतश्शोधयतस्तौ **(बहुला)** याभ्यां बहूँल्लाति तौ **(गभस्ती)** हस्तौ। **गभस्ती इति बाहुनाम।** (निघं०२.४) **(अस्मद्र्यक्)** योऽस्मानञ्चति सः **(सम्)** **(मिमीहि)** मन्यस्व **(श्रवांसि)** अन्नानि श्रवणानि वा **(यूथेव)** समूह इव **(पश्वः)** पशोः **(पशुपाः)** यः पशून् पाति **(दमूनाः)** दमनशीलः **(अस्मान्)** **(इन्द्र)** परमैश्वर्यप्रद न्यायेश **(अभि)** **(आ)** **(ववृत्स्व)** अभ्यावर्तस्व **(आजौ)** संग्रामे॥३॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यौ ते पृथू करस्ना बहुला गभस्ती वर्त्तेते ताभ्यां पशुपाः पश्वो यूथेवाऽस्मद्र्यक् सञ्छ्रवांसि सं मिमीहि। दमूनाः सनाजावस्मानभ्याऽऽववृत्स्व॥३॥

भावार्थःअत्रोपमालङ्कारः। त एव श्रीमन्तो य आलस्यं विहाय सदा सत्कर्मणे प्रयतन्ते यथा पशुपालाः पशून् पालयित्वा समृद्धा भवन्ति तथैव पुरुषार्थिनो जना दारिद्र्यं विनाश्य श्रीपतयो जायन्ते॥३॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** अत्यन्त ऐश्वर्य के देनवाले और न्याय के ईश! जो आपके **(पृथू)** विस्तीर्ण **(करस्ना)** जो करने वालों को शुद्ध करने वाले **(बहुला)** जिन से बहुतों को ग्रहण करते वे **(गभस्ती)** दोनों हाथ वर्त्तमान हैं उन दोनों से **(पशुपाः)** पशुओं के रखने वाले **(पश्वः)** पशु के **(यूथेव)** समूह जैसे वैसे **(अस्मद्र्यक्)** हम लोगों की सेवा करने वाले होते हुए **(श्रवांसि)** अन्नों वा श्रवणों का **(सम्, मिमीहि)** उत्तम प्रकार ग्रहण करिये और **(दमूनाः)** इन्द्रियों का निग्रह करने वाले हुए **(आजौ)** स-ाम में **(अस्मान्)** हम लोगों के **(अभि)** चारों ओर से **(आ, ववृत्स्व)** अच्छे प्रकार वर्त्ताव करिये॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। वे ही लक्ष्मीवान् होते हैं, जो आलस्य का त्याग करके सदा सत्कर्म के लिये प्रयत्न करते हैं और जैसे पशुओं के पालने वाले पशुओं का पालन करके समृद्ध अर्थात् धनवान् होते हैं, वैसे ही पुरुषार्थी जन दारिद्र्य का विनाश करके धन के स्वामी होते हैं॥३॥

पुनर्मनुष्याः कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर मनुष्य कैसे होवें, इस विषय को कहते हैं॥

तं व इन्द्रं चतिनमस्य शाकैरिह नूनं वाजयन्तो हुवेम।

यथा चित्पूर्वे जरितार आसुरनेद्या अनवद्या अरिष्टाः॥४॥

तम्। वः। इन्द्रम्। चतिनम्। अस्य। शाकैः। इह। नूनम्। वाजऽयन्तः। हुवेम। यथा। चित्। पूर्वे। जरितारः। आसुः। अनेद्याः। अनवद्याः। अरिष्टाः॥४॥

पदार्थः-**(तम्)** **(वः)** युष्मान् **(इन्द्रम्)** परमैश्वर्यप्रदम् **(चतिनम्)** आनन्दप्रदम् **(अस्य)** **(शाकैः)** शक्तिविशेषैः **(इह)** अस्मिन् संसारे **(नूनम्)** निश्चितम् **(वाजयन्तः)** ज्ञापयन्तः **(हुवेम)** **(यथा)** **(चित्)** **(पूर्वे)** आदिमाः **(जरितारः)** स्तावकाः **(आसुः)** भवन्ति **(अनेद्याः)** अनिन्दनीयाः **(अनवद्याः)** प्रशंसनीयाः **(अरिष्टाः)** अहिंसिताः॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथेह पूर्वेऽनेद्या अनवद्या अरिष्टा जरितार आसुस्तथा चिदस्य शाकैस्तं चतिनमिन्द्रं वो नूनं वाजयन्तो वयं हुवेम॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा प्रशंसनीया आप्ताः पुरुषा धर्म्येषु कर्मसु वर्त्तित्वा कृतकृत्या भवन्ति तथैव वर्त्तित्वा सर्वे मनुष्या कृतकार्या भवन्तु॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यथा)** जैसे **(इह)** इस संसार में **(पूर्वे)** प्राचीन **(अनेद्याः)** नहीं करने योग्य **(अनवद्याः)** प्रशंसनीय **(अरिष्टाः)** नहीं हिंसित **(जरितारः)** स्तुति करने वाले **(आसुः)** होते हैं, वैसे **(चित्)** भी **(अस्य)** इसके **(शाकैः)** सामर्थ्यविशेषों से **(तम्)** उस **(चतिनम्)** आनन्द और **(इन्द्रम्)**

अत्यन्त ऐश्वर्य्य के देने वाले को तथा **(वः)** तुम लोगों को **(नूनम्)** **(वाजयन्तः)** जनाते हुए हम लोग **(हुवेम)** ग्रहण करें॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे प्रशंसा करने योग्य यथार्थवक्ता पुरुष धर्मयुक्त कर्मों में वर्ताव करके कृतकृत्य होते हैं, वैसे ही वर्ताव करके सब मनुष्य कृतकार्य होवें॥४॥

पुनर्मनुष्यैः कथं भवितव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को कैसा होना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

धृतव्रतो धनदाः सोमवृद्धः स हि वामस्य वसुनः पुरुक्षुः।
सं जग्मिरे पथ्या३ रायो अस्मिन्त्समुद्रे न सिन्धवो यादमानाः॥५॥७॥

धृतऽव्रतः। धनऽदाः। सोमऽवृद्धः। सः। हि। वामस्य। वसुनः। पुरुऽक्षुः। सम्। जग्मिरे। पथ्याः। रायः। अस्मिन्। समुद्रे। न। सिन्धवः। यादमानाः॥५॥

पदार्थः-**(धृतव्रतः)** धृतानि व्रतानि कर्म्माणि येन **(धनदाः)** यो धनं ददाति **(सोमवृद्धः)** सोमेनैश्वर्येणौषध्या वा प्रवृद्धः **(सः)** **(हि)** यतः **(वामस्य)** प्रशस्यस्य **(वसुनः)** धनस्य **(पुरुक्षुः)** पुरूणि बहून्यन्नानि यस्य सः **(सम्)** **(जग्मिरे)** सङ्गच्छन्ते **(पथ्याः)** पथि साधवः **(रायः)** श्रियः **(अस्मिन्)** **(समुद्रे)** सागरे **(न)** इव **(सिन्धवः)** नद्यः **(यादमानः)** अभिगच्छन्त्यः॥५॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यमस्मिन् व्यवहारे यादमानाः सिन्धवः समुद्रे न पथ्या रायः सं जग्मिरे स हि धृतव्रतः सोमवृद्धो धनदाः पुरुक्षुर्वामस्य वसुनः प्रभुर्भवति॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा नद्यो वेगेन समुद्रं प्राप्य स्थिरा भवन्ति तथैव धार्मिकमुद्योगिनं श्रियं सेवन्ते॥५॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जिसको **(अस्मिन्)** इस व्यवहार में **(यादमानाः)** चारों ओर से जाती हुई **(सिन्धवः)** नदियाँ **(समुद्रे)** समुद्र में **(न)** जैसे वैसे **(पथ्याः)** मार्ग में श्रेष्ठ **(रायः)** धन **(सम्, जग्मिरे)** प्राप्त होते हैं **(सः, हि)** वही **(धृतव्रतः)** धारण किये कर्म जिसने वह **(सोमवृद्धः)** ऐश्वर्य वा ओषधि से बढ़ा हुआ **(धनदाः)** धन का देने वाला **(पुरुक्षुः)** बहुत अन्न से युक्त **(वामस्य)** प्रशंसा करने योग्य **(वसुनः)** धन का स्वामी होता है॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे नदियाँ वेग से समुद्र को प्राप्त होकर स्थिर होती हैं, वैसे ही धार्मिक तथा उद्योगी पुरुष की लक्ष्मी सेवा करती हैं॥५॥

पुना राजा किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

शविष्ठं न आ भर शूर शव ओजिष्ठमोजो अभिभूत उग्रम्।
विश्वा द्युम्ना वृष्ण्या मानुषाणामस्मभ्यं दा हरिवो मादयध्यै॥६॥

शविष्ठम्। नः। आ। भर। शूर। शवः। ओजिष्ठम्। ओजः। अभिऽभूते। उग्रम्। विश्वा। द्युम्ना। वृष्ण्या। मानुषाणाम्। अस्मभ्यम्। दाः। हरिऽवः। मादयध्यै॥६॥

पदार्थः-(**शविष्ठम्**) अतिशयेन बलिष्ठम् (**नः**) अस्मान् (**आ**) (**भर**) धर (**शूर**) निर्भय (**शवः**) बलम् (**ओजिष्ठम्**) अतिशयेन पराक्रमयुक्तम् (**ओजः**) प्राणधारणम् (**अभिभूते**) दुष्टानामभिभवकर्त्तः (**उग्रम्**) तीव्रम् (**विश्वा**) सर्वाणि (**द्युम्ना**) द्योतमानानि यशांसि धनानि वा (**वृष्ण्या**) वृषभ्यो हितानि (**मानुषाणाम्**) मनुष्यजातिस्थानाम् (**अस्मभ्यम्**) (**दाः**) देहि (**हरिवः**) प्रशस्ता हरयो मनुष्या विद्यन्ते यस्य तत्सम्बुद्धौ (**मादयध्यै**) मादयितुम्॥६॥

अन्वयः-हे हरिवः शूराऽभिभूते! त्वं नः शविष्ठमुग्रमोज ओजिष्ठं शव आ भराऽनेन मानुषाणां विश्वा वृष्ण्या द्युम्नाऽस्मभ्यं मादयध्यै दाः॥६॥

भावार्थः-हे राजंस्त्वं राज्यपालनार्हान् गुणान् धृत्वा न्यायेन राज्यं पालय॥६॥

पदार्थः-हे (**हरिवः**) प्रशंसनीय मनुष्यों वाले (**शूर**) भयरहित (**अभिभूते**) दुष्टों के अभिभव करने वाले! आप (**नः**) हम लोगों को और (**शविष्ठम्**) अतिशय बलिष्ठ (**उग्रम्**) तीव्र (**ओजः**) प्राणधारण को और (**ओजिष्ठम्**) अत्यन्त पराक्रमयुक्त (**शवः**) बल को (**आ, भर**) सब प्रकार से धारण करो और इससे (**मानुषाणाम्**) मनुष्य जाति में वर्त्तमानों के सम्बन्ध में (**विश्वा**) सम्पूर्ण (**वृष्ण्या**) उत्तम जनों के लिये हितकारक (**द्युम्ना**) प्रकाशित यशों वा धनों को (**अस्मभ्यम्**) हम लोगों के लिये (**मादयध्यै**) आनन्द देने को (**दाः**) दीजिये॥६॥

भावार्थः-हे राजन्! आप राज्य के पालन योग्य गुणों को धारण करके न्याय से राज्य का पालन करिये॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

यस्ते मदः पृतनाषाळमृध्र इन्द्र तं न आ भर शूशुवांसम्।
येन तोकस्य तनयस्य सातौ मंसीमहि जिगीवांसस्त्वोताः॥७॥

यः। ते। मदः। पृतनाषाट्। अमृध्रः। इन्द्र। तम्। नः। आ। भर। शूशुऽवांसम्। येन। तोकस्य। तनयस्य। सातौ। मंसीमहि। जिगीवांसः। त्वाऽऊताः॥७॥

पदार्थः-(**यः**) (**ते**) तव (**मदः**) अतिहर्षः (**पृतनाषाट्**) यः पृतनाः सेनाः सहते सः (**अमृध्रः**) अहिंस्रः (**इन्द्र**) राजन् (**तम्**) (**नः**) अस्मभ्यम् (**आ**) (**भर**) (**शूशवांसम्**) शुभगुणव्यापिनम् (**येन**) (**तोकस्य**) अपत्यस्य (**तनयस्य**) सुकुमारस्य (**सातौ**) संविभागे (**मंसीमहि**) विजानीयाम (**जिगीवांसः**) जेतुं शीलाः (**त्वोताः**) त्वया रक्षिताः॥७॥

अन्वयः-हे इन्द्र राजन्! ते योऽमृध्रः पृतनाषाण्मदोऽस्ति येन जिगीवांसस्त्वोता वयं तोकस्य तनयस्य सातौ रक्षां विद्यादानं च मंसीमहि त्वं तं शूशुवांसं न आ भर॥७॥

भावार्थ:-हे प्रजाजना! राजानं प्रत्येवं ब्रुवन्तु नोऽस्माकं सन्ताना यथा सुशिक्षिताः स्युस्तथा नियमान् विधेहि यतो विजयानन्दौ वर्धेयाताम्॥७॥

पदार्थ:-हे **(इन्द्र)** राजन् **(ते)** आप का **(यः)** जो **(अमृध्रः)** नहीं हिंसा करने और **(पृतनाषाट्)** सेनाओं को सहनेवाला **(मदः)** आनन्द है **(येन)** जिससे **(जिगीवांसः)** जीतनेवाले **(त्वोताः)** आप से रक्षित हम लोग **(तोकस्य)** सन्तान **(तनयस्य)** सुकुमार के **(सातौ)** संविभाग में रक्षा और विद्यावान् को **(मंसीमहि)** जानें और आप **(तम्)** उस **(शूशुवांसम्)** श्रेष्ठ गुणों से व्याप्त को **(नः)** हम लोगों के लिये **(आ, भर)** सब प्रकार से धारण करिये॥७॥

भावार्थ:-हे प्रजाजनो! आप लोग राजा के प्रति यह कहो कि हम लोगों के सन्तान जिस प्रकार उत्तम शिक्षित हों, वैसे नियमों को करिये जिससे विजय और आनन्द बढ़े॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

आ नो भर वृषणं शुष्ममिन्द्र धनस्पृतं शूशुवांसं सुदक्षम्।
येन वंसाम पृतनासु शत्रून् तवोतिभिरुत जामीँरजामीन्॥८॥

आ। नः। भर। वृषणम्। शुष्मम्। इन्द्र। धनऽस्पृतम्। शूशुऽवांसम्। सुऽदक्षम्। येन। वंसाम। पृतनासु। शत्रून्। तव। ऊतिऽभिः। उत। जामीन्। अजामीन्॥८॥

पदार्थ:-**(आ)** समन्तात् **(नः)** अस्मभ्यम् **(भर)** धर **(वृषणम्)** शत्रुसामर्थ्यप्रतिबन्धकम् **(शुष्मम्)** बलम् **(इन्द्र)** दुष्टबलविदारक **(धनस्पृतम्)** धनं स्पृणन्ति येन तम् **(शूशुवांसम्)** शुभगुणव्यापिनम् **(सुदक्षम्)** उत्तमबलचातुर्यम् **(येन)** **(वंसाम)** विभजेम **(पृतनासु)** मनुष्यसेनासु **(शत्रून्)** **(तव)** **(ऊतिभिः)** रक्षादिभिः **(उत)** **(जामीन्)** सम्बन्धिनो बन्ध्वादीन् **(अजामीन्)** असम्बन्धिनो दुष्टान्॥८॥

अन्वय:-हे इन्द्र! त्वं नो वृषणं शुष्मं धनस्पृतं शूशुवांसं सुदक्षमाऽऽभर। येन वयं तवोतिभिर्जामीनुताप्यजामीञ्छत्रून् पृतनासु वंसाम॥८॥

भावार्थ:-राजभिरेवं प्रयत्नो विधेयो येन मित्राणि शत्रवश्च विभक्ता भवेयुस्तथैवं बलं विधेयं येन शत्रवो विलीयेरन्॥८॥

पदार्थ:-हे **(इन्द्र)** दुष्टों के बल नाशक! आप **(नः)** हम लोगों के लिये **(वृषणम्)** शत्रुओं के सामर्थ्य को रोकने वाली **(शुष्मम्)** सेना और **(धनस्पृतम्)** धन को पूरण करते जिससे उस **(शूशुवांसम्)** शुभगुणव्यापिनी **(सुदक्षम्)** उत्तम बल की चतुराई को **(आ)** सब ओर से **(भर)** धारण करिये **(येन)** जिससे हम लोग **(तव)** आपके **(ऊतिभिः)** रक्षण आदिकों से **(जामीन्)** सम्बन्धी बन्धु आदिकों का **(उत)** और **(अजामीन्)** असम्बन्धी दुष्ट **(शत्रून्)** शत्रुओं का **(पृतनासु)** मनुष्यों की सेनाओं में **(वंसाम)** विभाग करें॥८॥

भावार्थः-राजाओं को चाहिये कि ऐसा प्रयत्न करें जिससे मित्र और शत्रु पृथक्-पृथक् प्रतीत होवें और वैसी ही सेना रखनी चाहिये जिससे शत्रु नष्ट होवें॥८॥

पुनस्सर्वैर्जनैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर सम्पूर्ण जनों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

आ ते शुष्मो वृषभ एतु पश्चादोत्तरादधरादा पुरस्तात्।
आ विश्वतो अभि समेत्वर्वाङिन्द्र द्युम्नं स्वर्वद्धेह्यस्मे॥९॥

आ। ते। शुष्मः। वृषभः। एतु। पश्चात्। आ। उत्तरात्। अधरात्। आ। पुरस्तात्। आ। विश्वतः। अभि। सम्। एतु। अर्वाङ्। इन्द्र। द्युम्नम्। स्वः ऽवत्। धेहि। अस्मे इति॥९॥

पदार्थः-**(आ)** समन्तात् **(ते)** तव **(शुष्मः)** उत्तमबलः **(वृषभः)** बलिष्ठः **(एतु)** प्राप्नोतु **(पश्चात्)** **(आ)** **(उत्तरात्)** **(अधरात्)** **(आ)** **(पुरस्तात्)** **(आ)** **(विश्वतः)** सर्वतः **(अभि)** **(सम्)** **(एतु)** प्राप्नोतु **(अर्वाङ्)** योऽर्वागञ्चति **(इन्द्र)** परमैश्वर्यकारक **(द्युम्नम्)** प्रकाशमयं यशोधनं वा **(स्वर्वत्)** स्वर्बहुविधं सुखं विद्यते यस्मिंस्तत् **(धेहि)** **(अस्मे)** अस्मभ्यम्॥९॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यथास्मे पश्चात् स्वर्वद् द्युम्नमेतूत्तरात् स्वर्वद् द्युम्नमैतु। अधरात् स्वर्वद् द्युम्नमैतु विश्वतो द्युम्नमाभ्येतु, अर्वाङ् स्वर्वद् द्युम्नं समेतु पुरस्तात् स्वर्वद् द्युम्नं समेतु तथा ते शुष्मो वृषभ ऐतु। त्वमस्मभ्यमेतद्धेहि॥९॥

भावार्थः-हे राजप्रजाजना यथा सर्वाभ्यो दिग्भ्यस्सर्वान्सुखकीर्ती प्राप्नुयातां तथा यत्नमातिष्ठत॥९॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** अत्यन्त ऐश्वर्य के करने वाले! जैसे **(अस्मे)** हम लोगों के लिये **(पश्चात्)** पीछे से **(स्वर्वत्)** बहुत प्रकार सुख विद्यमान जिसमें उस **(द्युम्नम्)** प्रकाशस्वरूप यश वा धन को **(एतु)** प्राप्त हूजिये और **(उत्तरात्)** बाईं ओर से बहुत प्रकार सुख जिसमें उस प्रकाशस्वरूप यश वा धन को **(आ)** सब ओर से प्राप्त हूजिये और **(अधरात्)** नीचे से बहुविध सुखवाले प्रकाशस्वरूप यश वा धन को **(आ)** सब ओर से प्राप्त हूजिये तथा **(विश्वतः)** सब ओर से प्रकाशस्वरूप यश वा धन के **(आ)** सब प्रकार से **(अभि, एतु)** सम्मुख हूजिये और **(अर्वाङ्)** नीचे से बहुत सुखवाले सम्पूर्ण प्रकाशस्वरूप यश वा धन को **(सम्)** उत्तम प्रकार प्राप्त हूजिये तथा **(पुरस्तात्)** आगे से बहुत प्रकार सुख जिसमें उस प्रकाशस्वरूप यश वा धन को अच्छे प्रकार प्राप्त हूजिये, वैसे **(ते)** आप का **(शुष्मः)** उत्तम बलयुक्त **(वृषभः)** बलिष्ठ **(आ)** सब ओर से प्राप्त होवे और आप हम लोगों के लिये इसको **(धेहि)** धारण करिये॥९॥

भावार्थः-हे राजा और प्रजाजनो! जैसे सब दिशाओं से सम्पूर्ण जनों को सुख और यश प्राप्त होवें, वैसे यत्न का अनुष्ठान करिये॥९॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

नृवत्त इन्द्र नृतमाभिरूती वंसीमहि वामं श्रोमतेभिः।

ईक्षे हि वस्व उभयस्य राजन् धा रत्नं महि स्थूरं बृहन्तम्॥ १०॥

नृऽवत्। ते। इन्द्र। नृऽतमाभिः। ऊती। वंसीमहि। वामम्। श्रोमतेभिः। ईक्षे। हि। वस्वः। उभयस्य। राजन्। धाः। रत्नम्। महि। स्थूरम्। बृहन्तम्॥ १०॥

पदार्थः-(**नृवत्**) नृभिस्तुल्यम् (**ते**) तव (**इन्द्र**) परमैश्वर्यप्रद (**नृतमाभिः**) अत्युत्तमा नरो विद्यन्ते यासु ताभिः (**ऊती**) रक्षादिभिः (**वंसीमहि**) विभजेम (**वामम्**) प्रशस्यं कर्म (**श्रोमतेभिः**) श्रावणीयैर्वचनैः (**ईक्षे**) पश्यामि (**हि**) यतः (**वस्वः**) धनस्य (**उभयस्य**) राजप्रजास्थस्य (**राजन्**) विद्याविनायाभ्यां प्रकाशमान (**धाः**) धेहि (**रत्नम्**) रमणीयं धनम् (**महि**) महत्पूजनीयम् (**स्थूरम्**) स्थिरम् (**बृहन्तम्**) महान्तम्॥ १०॥

अन्वयः-हे इन्द्र राजन्! यथा वयं ते नृतमाभिरूती नृवद्वामं वंसीमहि श्रोमतेभिरुभयस्य वस्व ईक्षे तथा त्वं बृहन्तम्महि स्थूरं रत्नं हि धाः॥ १०॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। राजप्रजाजनै राज्ञा च प्रयत्नैः प्रशंसिता विद्या महती श्रीश्च सततं वर्धनीया॥ १०॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य के देने वाले (**राजन्**) विद्या और विनय से प्रकाशमान! जैसे हम लोग (**ते**) आपके (**नृतमाभिः**) अति उत्तम मनुष्य विद्यमान जिनमें उन (**ऊती**) रक्षण आदिकों से (**नृवत्**) मनुष्यों के तुल्य (**वामम्**) प्रशंसा करने योग्य कर्म का (**वंसीमहि**) विभाग करें और (**श्रोमतेभिः**) सुनाने योग्य वचनों से (**उभयस्य**) दोनों राजा और प्रजा में वर्त्तमान (**वस्वः**) धन का मैं (**ईक्षे**) दर्शन करता हूँ, वैसे आप (**बृहन्तम्**) बड़े (**महि**) आदर करने योग्य (**स्थूरम्**) स्थिर (**रत्नम्**) सुन्दर धन को (**हि**) ही (**धाः**) धारण करिये॥ १०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। राजजनों तथा प्रजाजनों और राजा को चाहिये कि प्रशस्तों से प्रशंसित विद्या और बहुत धन की निरन्तर वृद्धि करें॥ १०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

मरुत्वन्तं वृषभं वावृधानमकवारिं दिव्यं शासमिन्द्रम्।

विश्वासाहमवसे नूतनायोग्रं सहोदामिह तं हुवेम॥ ११॥

मरुत्वन्तम्। वृषभम्। वावृधानम्। अकवऽअरिम्। दिव्यम्। शासम्। इन्द्रम्। विश्वऽसहम्। अवसे। नूतनाय। उग्रम्। सहःऽदाम्। इह। तम्। हुवेम॥ ११॥

पदार्थः-(**मरुत्वन्तम्**) प्रशस्ता मरुतो मनुष्या विद्यन्ते यस्य तम् (**वृषभम्**) अत्युत्तमं पूर्णबलम् (**वावृधानम्**) अतिवर्धमानम् (**अकवारिम्**) न विद्यन्ते कवा शब्दायमाना अरयो यस्य तम् (**दिव्यम्**)

कमनीयम् **(शासम्)** पक्षपातं विहाय शासनकर्तारम् **(इन्द्रम्)** शरीरात्मराजश्रिया सुशुम्भमानम् **(विश्वासाहम्)** यो विश्वं समग्रं कष्टं सहते तम् **(अवसे)** रक्षणाद्याय **(नूतनाय)** नवीनाय **(उग्रम्)** तेजस्विनम् **(सहोदाम्)** बलप्रदम् **(हि)** अस्मिन् राज्यकर्मणि **(तम्)** **(हुवेम)** स्वीकुर्याम॥११॥

अन्वयः-हे मनुष्या! वयमिह यं नूतनायाऽवसे मरुत्वन्तं वृषभं वावृधानमकवारिं दिव्यं शासं विश्वासाहमुग्रं सहोदामिन्द्रं हुवेम तं यूयमप्याह्वयत॥११॥

भावार्थः-राजप्रजाजनैः सर्वेषां रक्षणाय सर्वेभ्य उत्तमगुणकर्मस्वभावो राजा मन्तव्यः स च राजा सर्वेषां सम्मत्या सत्यं न्यायं सततं कुर्यात्॥११॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! हम लोग **(इह)** इस राज्यकर्म में जिसको **(नूतनाय)** नवीन **(अवसे)** रक्षण आदि के लिये **(मरुत्वन्तम्)** श्रेष्ठ मनुष्य विद्यमान जिसके उस **(वृषभम्)** अतिश्रेष्ठ पूर्ण बल वाले **(वावृधानम्)** अत्यन्त वृद्धि को प्राप्त होते हुए **(अकवारिम्)** नहीं विद्यमान है शब्द करते हुए शत्रु जिसके उस **(दिव्यम्)** सुन्दर **(शासम्)** पक्षपात का त्याग करके शासन करने वाले **(विश्वासाहम्)** सम्पूर्ण कष्ट को सहने वाले **(उग्रम्)** तेजस्वी **(सहोदाम्)** बल देने वाले **(इन्द्रम्)** शरीर, आत्मा और राजशोभा से अत्यन्त शोभित का **(हुवेम)** हम स्वीकार करें **(तम्)** उसका आप लोग भी आह्वान कर स्वीकार कीजिये॥११॥

भावार्थः-राजजनों और प्रजाजनों को चाहिये कि सब के रक्षण के लिये सब से उत्तम गुण, कर्म और स्वभाव वाले राजा को स्वीकार करें और वह राजा सब की सम्मति से सत्य, न्याय का निरन्तर आचरण करे॥११॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

जनं॑ वज्रिन् महि॑ चिन्मन्य॑मानमे॒भ्यो नृभ्यो॑ रन्धया॒ येष्वस्मि॑।

अधा॒ हि त्वा॑ पृथि॒व्यां शूर॑सातौ॒ हवा॑महे॒ तन॑ये॒ गोष्व॒प्सु॥१२॥

जन॑म्। व॒ज्रि॒न्। महि॑। चि॒त्। मन्य॑मानम्। ए॒भ्यः। नृऽभ्यः॑। र॒न्ध॒य॒। येषु॑। अस्मि॑। अध॑। हि। त्वा॒। पृ॒थि॒व्याम्। शूर॑ऽसातौ। हवा॑महे। तन॑ये। गोषु॑। अ॒प्ऽसु॥१२॥

पदार्थः-**(जनम्)** **(वज्रिन्)** प्रशस्तशस्त्रास्त्रधारिन् **(महि)** महान्तम् **(चित्)** अपि **(मन्यमानम्)** अभिमानिनम् **(एभ्यः)** **(नृभ्यः)** सुशिक्षितेभ्यो नायकेभ्यः **(रन्धया)** हिंसय। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। **(येषु)** **(अस्मि)** **(अधा)** अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। **(हि)** यतः **(त्वा)** त्वाम् **(पृथिव्याम्)** विस्तीर्णायां भूमौ **(शूरसातौ)** शूराः सनन्ति विभजन्ति यस्मिन्त्संग्रामे तस्मिन् **(हवामहे)** आदद्महि **(तनये)** अपत्याय **(गोषु)** पृथिवीषु धनेषु वा **(अप्सु)** जलेषु प्राणेषु वा॥१२॥

अन्वयः-हे वज्रिन् राजंस्त्वमेभ्यो नृभ्यस्तं महि मन्यमानं जनं रन्धयाऽधा येषु शूरसातावहमस्मि तं रक्षा, हि पृथिव्यां गोष्वप्सु तनये यं त्वा हवामहे स त्वं चिदस्मान्त्सत्कुरु॥१२॥

भावार्थः-हे राजजना यो मिथ्याभिमानी सत्पुरुषान् पीडयेत्तं दण्डयत, युद्धविद्यया सर्वेषां रक्षणं विधत्त यतो भूमौ युष्माकं प्रशंसा प्रसिद्धा भवेत्॥१२॥

पदार्थः-हे **(वज्रिन्)** अच्छे शस्त्र और अस्त्र के धारण करने वाले राजन्! आप **(एभ्यः)** इन **(नृभ्यः)** उत्तम प्रकार शिक्षित अग्रणी मनुष्यों के लिये उस **(महि)** महान् **(मन्यमानम्)** अभिमान करने वाले **(जनम्)** मनुष्य का **(रन्धया)** नाश करिये और **(अधा)** इसके अनन्तर **(येषु)** जिनके निमित्त **(शूरसातौ)** शूरवीर विभक्त होते हैं जिस संग्राम में उसमें **(अस्मि)** हूँ उसकी रक्षा कीजिये **(हि)** जिससे **(पृथिव्याम्)** विस्तीर्ण भूमि में **(गोषु)** पृथिवियों वा धनों में और **(अप्सु)** जलों वा प्राणों में **(तनये)** सन्तान के लिये जिन **(त्वा)** आपको **(हवामहे)** स्वीकार करते हैं, वह आप **(चित्)** भी हम लोगों का सत्कार कीजिये॥१२॥

भावार्थः-हे राजसम्बन्धी जनो! जो मिथ्या अभिमान करने वाला जन श्रेष्ठ पुरुषों को पीड़ा देवे, उसको दण्ड दीजिये और युद्धविद्या से सम्पूर्ण जनों का रक्षण करिये, जिससे भूमि में आप लोगों की प्रशंसा प्रसिद्ध होवे॥१२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

वयं त एभिः पुरुहूत सख्यैः शत्रोःशत्रोरुत्तर इत्स्याम।
घ्नन्तो वृत्राण्युभयानि शूर राया मदेम बृहता त्वोताः॥१३॥८॥

वयम्। ते। एभिः। पुरुऽहूत। सख्यैः। शत्रोःऽशत्रोः। उत्ऽतरे। इत्। स्याम। घ्नन्तः। वृत्राणि। उभयानि। शूर। राया। मदेम। बृहता। त्वाऽऊताः॥१३॥८॥

पदार्थः-**(वयम्)** **(ते)** तव **(एभिः)** वर्तमानैः पूर्वोक्तैरुत्तरप्रतिपादितैः **(पुरुहूत)** बहुभिः प्रशंसित **(सख्यैः)** मित्रकर्मभिः **(शत्रोःशत्रोः)** **(उत्तरे)** विजयानन्तरसमये **(इत्)** एव **(स्याम)** **(घ्नन्तः)** **(वृत्राणि)** धनानि **(उभयानि)** राजप्रजास्थानि **(शूर)** **(राया)** राज्यश्रिया **(मदेम)** आनन्देम **(बृहता)** महता **(त्वोताः)** त्वया पालिताः॥१३॥

अन्वयः-हे पुरुहूत शूर राजन्! वयं त एभिः सख्यैः शत्रोःशत्रोः सेना घ्नन्त उत्तरे स्यामोभयानि वृत्राणि लब्ध्वा तव बृहता राया त्वोताः सन्त इन्मदेम॥१३॥

भावार्थः-यदि राजा राजप्रजाजनाश्च सुहृद्वत् स्युस्तर्हि सर्वाञ्छत्रून् विजित्य महत्या राजश्रिया प्रकाशेरन्निति॥१३॥

अत्रेन्द्रराजप्रजाजनकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्येकोनविंशं सूक्तमष्टमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(पुरुहूत)** बहुतों से प्रशंसित **(शूर)** वीर राजन्! **(वयम्)** हम लोग **(ते)** आपके **(एभिः)** इन वर्त्तमान, पहिले कहे गये और उत्तरों से प्रतिपादित **(सख्यैः)** मित्र के कर्मों से **(शत्रोःशत्रोः)** शत्रु-शत्रु की सेनाओं का **(घ्नन्तः)** नाश करते हुए **(उत्तरे)** विजय के अनन्तर समय में **(स्याम)** प्रकट होवें और **(उभयानि)** राजा और प्रजाजन में वर्त्तमान **(वृत्राणि)** धनों को प्राप्त होकर आपकी **(बृहता)** बड़ी **(राया)** राज्यलक्ष्मी से तथा **(त्वोताः)** आप से पालना किये हुए **(इत्)** ही **(मदेम)** आनन्द को प्राप्त होवें॥१३॥

भावार्थः-जो राजा और राजप्रजाजन मित्र के सदृश होवें तो सम्पूर्ण शत्रुओं को जीत कर बड़ी राज्यलक्ष्मी से प्रकाशित होवें॥१३॥

इस सूक्त में इन्द्र, राजा और प्रजाजनों के कृत्य वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह उन्नीसवाँ सूक्त और आठवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ त्रयोदशर्चस्य विंशतितमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, १०, १३ स्वराट्पङ्क्तिः। २, ३,७, १२ पङ्क्तिः। ४, ६ भुगिक्पङ्क्तिः। ११ निचृत्पङ्क्तिः। पञ्चमः स्वरः। ५, ८,९ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ मनुष्यैः किमेष्टव्यमित्याह॥

अब तेरह ऋचावाले बीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में अब मनुष्यों को किसकी इच्छा करनी चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

द्यौर्न य इ॒न्द्रा॒भि भू॒मा॒र्य॑स्त॒स्थौ र॒यिः शव॑सा पृ॒त्सु जना॑न्।
तं नः॑ स॒हस्र॑भरमुर्व॒रा॒सां द॒द्धि सू॑नो स॒हसो वृत्र॒तुर॑म्॥ १॥

द्यौः। न। यः। इ॒न्द्र॒। अ॒भि। भूम॑। अ॒र्यः। त॒स्थौ। र॒यिः। शव॑सा। पृ॒त्ऽसु। जना॑न्। तम्। नः॒। स॒हस्र॑ऽभरम्। उ॒र्व॒राऽसाम्। द॒द्धि। सू॒नो इति॑। स॒ह॒सः॒। वृ॒त्र॒ऽतुर॑म्॥ १॥

पदार्थः-(**द्यौः**) विद्युत् सूर्यो वा (**न**) इव (**यः**) (**इन्द्र**) परमपूजित धनयुक्त (**अभि**) आभिमुख्ये (**भूम**) भवेम (**अर्यः**) स्वामी (**तस्थौ**) तिष्ठेत् (**रयिः**) धनम् (**शवसा**) बलेन (**पृत्सु**) स-ामेषु (**जनान्**) (**तम्**) (**नः**) अस्मभ्यम् (**सहस्रभरम्**) यः सहस्रमसङ्ख्यं बिभर्त्ति तम् (**उर्वरासाम्**) बहुश्रेष्ठानां भूमीनाम् (**दद्धि**) देहि (**सूनो**) सत्पुत्र (**सहसः**) बलात् (**वृत्रतुरम्**) वृत्रानिव शत्रूंस्तुर्वति हिनस्ति येन तम्॥ १॥

अन्वयः-हे सहसः सूनो इन्द्र! यो द्यौर्न रयिरस्त्यस्यार्यः शवसा पृत्सु जनानभि तस्थौ तं सहस्रभरं वृत्रतुरमुवर्रासां मध्ये श्रेष्ठं विजयं नो दद्धि येन वयं श्रीमन्तो भूम॥ १॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः ये मनुष्या विद्युद्वत्पराक्रमिणोऽर्कवद्दीप्तिमन्तः स-ामेषु साहसिकाः स्युस्ते विजयवन्तो भवेयुः॥ १॥

पदार्थः-हे (**सहसः**) बल से (**सूनो**) श्रेष्ठ पुत्र (**इन्द्र**) अत्यन्त श्रेष्ठ धन से युक्त! (**यः**) जो (**द्यौः**) बिजुली वा सूर्य के (**न**) समान प्रकाशित (**रयिः**) धन है इस का (**अर्यः**) स्वामी (**शवसा**) बल से (**पृत्सु**) सङ्ग्रामों में (**जनान्**) मनुष्यों के प्रति (**अभि**) सम्मुख (**तस्थौ**) वर्त्तमान होवे (**तम्**) उस (**सहस्रभरम्**) असंख्य को धारण करने वाले (**वृत्रतुरम्**) जैसे मेघों को, वैसे शत्रुओं को नाश करता है जिससे उस तथा (**उर्वरासाम्**) बहुत श्रेष्ठ भूमियों में श्रेष्ठ विजय को (**नः**) हम लोगों के लिये (**दद्धि**) दीजिये जिससे हम लोग लक्ष्मीवान् (**भूम**) होवें॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो मनुष्य बिजुली के सदृश पराक्रमी और सूर्य के सदृश प्रतापयुक्त हुए स-ामों में साहसिक होवें, वे विजयवान् होवें॥ १॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

दिवो न तुभ्यमन्विन्द्र सत्रासुर्यं देवेभिर्धायि विश्वम्।
अहिं यद्वृत्रमपो वव्रिवांसं हन्नृजीषिन् विष्णुना सचानः॥२॥

दिवः। न। तुभ्यम्। अनु। इन्द्र। सत्रा। असुर्यम्। देवेभिः। धायि। विश्वम्। अहिम्। यत्। वृत्रम्। अपः। वव्रिऽवांसम्। हन्। ऋजीषिन्। विष्णुना। सचानः॥२॥

पदार्थः-(**दिवः**) कामयमानाः (**न**) इव (**तुभ्यम्**) (**अनु**) (**इन्द्र**) राजन् (**सत्रा**) सत्येन (**असुर्यम्**) असुराणां मूढानां पापिनामिदमैश्वर्यम् (**देवेभिः**) (**धायि**) ध्रियते (**विश्वम्**) समग्रम् (**अहिम्**) मेघम् (**यत्**) यम् (**वृत्रम्**) आच्छादकम् (**अपः**) जलानि (**वव्रिवांसम्**) (**हन्**) हन्ति (**ऋजीषिन्**) ऋजुधर्मयुक्त (**विष्णुना**) व्यापकेन जगदीश्वरेण विद्युता वा (**सचानः**) समवेतः॥२॥

अन्वयः-हे ऋजीषिन्निन्द्र! यथा सूर्य्यो विष्णुना सचानो यद्यमपो वव्रिवांसं वृत्रमहिं हंस्तथा देवेभिस्तुभ्यं सत्रा दिवो न विश्वमसुर्यमनु धायि॥२॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा सूर्य्योऽष्टसु मासेषु जलरसाननुकर्ष्य चातुर्मास्ये वर्षयति तथैव राजाऽष्टसु मासेषु करान् गृहीत्वाऽभयवृष्टिं कृत्वा प्रजां पालयेत्॥२॥

पदार्थः-हे (**ऋजीषिन्**) सरल धर्म से युक्त (**इन्द्र**) राजन्! जैसे सूर्य (**विष्णुना**) व्यापक जगदीश्वर वा बिजुली से (**सचानः**) मिलने वाला (**यत्**) जिसको (**अपः**) जलों के (**वव्रिवांसम्**) विभाग करते हुए (**वृत्रम्**) आच्छादन करने वाले (**अहिम्**) मेघ को (**हन्**) नाश करता है, वैसे (**देवेभिः**) विद्वानों से (**तुभ्यम्**) आपके लिये (**सत्रा**) सत्य से (**दिवः**) कामना करते हुए (**न**) जैसे वैसे (**विश्वम्**) सम्पूर्ण (**असुर्यम्**) मूर्ख पापी जनों का ऐश्वर्य (**अनु, धायि**) पीछे धारण किया जाता है॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे सूर्य आठ महीने में जल के रसों को आकर्षण के द्वारा हरण करके चातुर्मास्य में वर्षाता है, वैसे ही राजा आठ महीने करों को ग्रहण कर अभय की वृष्टि करके प्रजा का पालन करे॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

तूर्वन्नोजीयान् तवसस्तवीयान् कृतब्रह्मेन्द्रो वृद्धमहाः।
राजाभवन् मधुनः सोम्यस्य विश्वासां यत्पुरां दुर्त्नुमावत्॥३॥

तूर्वन्। ओजीयान्। तवसः। तवीयान्। कृतऽब्रह्मा। इन्द्रः। वृद्धऽमहाः। राजा। अभवत्। मधुनः। सोम्यस्य। विश्वासाम्। यत्। पुराम्। दुर्त्नुम्। आवत्॥३॥

पदार्थः-(**तूर्वन्**) हिंसन् (**ओजीयान्**) अतिशयेन पराक्रमी (**तवसः**) बलस्य (**तवीयान्**) अतिशयेन प्रशंसितः (**कृतब्रह्मा**) कृतं ब्रह्म धनमन्नं वा येन सः (**इन्द्रः**) ऐश्वर्यवर्द्धकः (**वृद्धमहाः**) वृद्धा महान्तः सहाया यस्य सः (**राजा**) प्रकाशमानः (**अभवत्**) भवेत् (**मधुनः**) मधुरादिगुणयुक्तस्य (**सोम्यस्य**) सोमेषु

रसादिषु भवस्य **(विश्वासाम्)** सर्वासाम् **(यत्)** **(पुराम्)** नगरीणाम् **(दर्त्तुम्)** विदारकम् **(आवत्)** रक्षेत्॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यद्यः शत्रूँस्तूर्वन्नोजीयांस्तवसस्तवीयान् कृतब्रह्मा वृद्धमहा इन्द्रो राजाऽभवत् सोम्यस्य मधुनो विश्वासां पुरां दर्त्तुमावत् तमेव राजानं कुरुध्वम्॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यः पराक्रमी बलिनां बली विदुषां विद्वान् वृद्धानां वृद्धो विजयमानानां भृत्यानां सत्कर्त्ता स्यात्तमेव राज्येऽभिषिक्तं कृत्वा सुखिनो भवत॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यत्)** जो शत्रुओं का **(तूर्वन्)** नाश करता हुआ **(ओजीयान्)** अतिशय पराक्रमयुक्त जन **(तवसः)** बल का **(तवीयान्)** अत्यन्त प्रशंसित **(कृतब्रह्मा)** किया धन वा अन्न जिसने वह **(वृद्धमहाः)** बड़े सहायक जिसके ऐसा **(इन्द्रः)** ऐश्वर्य का बढ़ाने वाला **(राजा)** प्रकाशमान राजा **(अभवत्)** होवे और **(सोम्यस्य)** रस आदिकों में हुए **(मधुनः)** मधुर आदि गुणों से युक्त के और **(विश्वासाम्)** सम्पूर्ण **(पुराम्)** नगरियों के **(दर्त्तुम्)** नाश करने वाले को **(आवत्)** रक्षा करे, उसी को राजा करिये॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो पराक्रमी, बली जनों में बली, विद्वानों में विद्वान्, वृद्ध जनों में वृद्ध और जीतते हुए भृत्यों का सत्कार करने वाला होवे, उसी का राज्य में अभिषिक्त करके सुखी हूजिये॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

शतैरपद्रन् पणय इन्द्रात्र दशोणये कवयेऽर्कसातौ।

वधैः शुष्णस्याशुषस्य मायाः पित्वो नारिरेचीत् किं चन प्र॥४॥

शतैः। अपद्रन्। पणयः। इन्द्र। अत्र। दशऽओणये। कवये। अर्कऽसातौ। वधैः। शुष्णस्य। अशुषस्य। मायाः। पित्वः। न। अरिरेचीत्। किम्। चन। प्र॥४॥

पदार्थः-**(शतैः)** शतसङ्ख्याकैरसंख्यैर्वा **(अपद्रन्)** अपद्रवन्ति **(पणयः)** व्यवहारज्ञाः **(इन्द्र)** अन्नदाता राजन् **(अत्र)** अस्मिन् राजव्यवहारे **(दशोणये)** दशोनयः परिहाणानि यस्मात्तस्मै **(कवये)** विपश्चिते **(अर्कसातौ)** अन्नादिविभागे। **अर्क इत्यन्ननाम।** (निघं०२.७) **(वधैः)** हननैः **(शुष्णस्य)** बलिष्ठस्य **(अशुषस्य)** शोषणरहितस्य **(मायाः)** प्रज्ञाः **(पित्वः)** अन्नादिकम् **(न)** **(अरिरेचीत्)** रिणक्ति **(किम्)** **(चन)** **(प्र)**॥४॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं ये पणयश्शतैर्वधैरत्रापद्रन्नर्कसातौ दशोणये कवये या अशुषस्य शुष्णस्य मायाः पित्वः किञ्चन न प्रारिरेचीत् ताः सत्कुर्याः॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये धर्मपथं विहायोत्पथं चलन्ति तान् राजा नित्यं दण्डयेत् ये च दशेन्द्रियैरधर्मं विहाय धर्ममाचरन्ति तान् सततं सत्कुर्यात्॥४॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** देनेवाले राजन्! आप जो **(पणयः)** व्यवहारों के जाननेवाले **(शतैः)** सौ सङ्ख्या से परिमित वा असङ्ख्य **(वधैः)** वधों से **(अत्र)** इस राजव्यवहार में **(अपद्रन्)** नहीं द्रवित होते हैं और **(अर्कसातौ)** अन्न आदि के विभाग में **(दशोणये)** दश न्यून जिससे उस **(कवये)** विद्वान् के लिये **(अशुषस्य)** शोषण से रहित **(शुष्णस्य)** बलिष्ठ की **(मायाः)** बुद्धियों को **(पित्वः)** अन्न आदि **(किम्, चन)** कुछ भी **(न)** नहीं **(प्र, अरिरेचीत्)** अच्छे प्रकार अलग करता है, उनका सत्कार करिये अर्थात् प्रशंसा करिये॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो धर्ममार्ग का त्याग करके उन्मार्ग में चलते हैं, उनको राजा नित्य दण्ड देवे और दो दश इन्द्रियों से अधर्म का त्याग करके धर्म का आचरण करते हैं, उन को निरन्तर सत्कार करे॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

महो द्रुहो अप विश्वायु धायि वज्रस्य यत्पतने पादि शुष्णः।

उरु ष सरथं सारथये करिन्द्रः कुत्साय सूर्यस्य सातौ॥५॥९॥

महः। द्रुहः। अप। विश्वऽआयु। धायि। वज्रस्य। यत्। पतने। पादि। शुष्णः। उरु। सः। सऽरथम्। सारथये। कः। इन्द्रः। कुत्साय। सूर्यस्य। सातौ॥५॥

पदार्थः-**(महः)** महत् **(द्रुहः)** द्रोग्धून् **(अप)** **(विश्वायु)** सर्वं जीवनम् **(धायि)** **(वज्रस्य)** शस्त्रास्त्रविशेषस्य **(यत्)** **(पतने)** **(पादि)** पद्येत **(शुष्णः)** बलिष्ठस्य **(उरु)** बहु **(सः)** **(सरथम्)** रथेन सह वर्त्तमानम् **(सारथये)** रथचालकाय **(कः)** कुर्यात् **(इन्द्रः)** शस्त्रविदारक सेनेशः **(कुत्साय)** वज्रप्रहाराय। **कुत्स इति वज्रनाम।** (निघं०२.२०) **(सूर्य्यस्य)** सवितुः **(सातौ)** संविभागे॥५॥

अन्वयः-हे राजन्! त्वया वज्रस्य पतने यो द्रुहोऽप पादि येन महो विश्वायु धायि यद्य इन्द्रः सारथये सरथं सूर्यस्य सातौ कुत्सायोरु कः स शुष्णः सत्कर्त्तव्यः॥५॥

भावार्थः-राज्ञा द्रोहादिदोषान्निवार्य ब्रह्मचर्यादिना सर्वान् चिरायुषः सम्पाद्य रथादीन् सेनाङ्गान्सूर्यवत् प्रकाशितान् कृत्वा सत्यासत्ययोर्विभागेन प्रजाः पालयितव्याः॥५॥

पदार्थः-हे राजन्! आप से **(वज्रस्य)** शस्त्र और अस्त्र विशेष के **(पतने)** गिरने में जो **(द्रुहः)** द्रोह करने वालों को **(अप, पादि)** दूर करे जिससे **(महः)** अत्यन्त **(विश्वायु)** सम्पूर्ण जीवन **(धायि)** धारण किया जाये और **(यत्)** जो **(इन्द्रः)** शत्रुओं का नाशक सेना का स्वामी **(सारथये)** वाहन चलाने वाले के लिये **(सरथम्)** वाहन के सहित वर्त्तमान को **(सूर्यस्य)** सूर्य के **(सातौ)** उत्तम प्रकार विभाग में **(कुत्साय)** वज्र के प्रहार के लिये **(उरु)** बहुत **(कः)** करे **(सः)** वह **(शुष्णः)** बलिष्ठ का सम्बन्धी सत्कार करने योग्य है॥५॥

भावार्थः-राजा को चाहिये कि द्रोह आदि दोषों का त्याग करके ब्रह्मचर्य आदि से सम्पूर्ण जनों को अधिक अवस्था वाले करके, रथ आदि सेना के अङ्गों को सूर्य के तुल्य प्रकाशित करके, सत्य और असत्य के विभाग से प्रजाओं का पालन करे॥५॥

पुना राज्ञा किं निषेधनीयमित्याह॥

फिर राजा को किसका निषेध करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

प्र श्येनो न मदिरमंशुमस्मै शिरो दासस्य नमुचेर्मथायन्।

प्रावन्नमीं साप्यं ससन्तं पृणग् राया समिषा सं स्वस्ति॥६॥

प्र। श्येनः। न। मदिरम्। अंशुम्। अस्मै। शिरः। दासस्य। नमुचेः। मथायन्। प्र। आवत्। नमीम्। साप्यम्। ससन्तम्। पृणक्। राया। सम्। इषा। सम्। स्वस्ति॥६॥

पदार्थः-(**प्र**) (**श्येनः**) (**नः**) इव (**मदिरम्**) मादकं द्रव्यम् (**अंशुम्**) वैद्यकविद्यारीत्या विभक्तम् (**अस्मै**) (**शिरः**) मस्तकम् (**दासस्य**) सेवकस्य (**नमुचेः**) यो न मुञ्चति तस्य (**मथायन्**) (**प्र**) (**आवत्**) रक्षेत् (**नमीम्**) नम्रम् (**साप्यम्**) कर्मान्तकारिणम् (**ससन्तम्**) शयानम् (**पृणक्**) पृणक्ति (**राया**) धनेन (**सम्**) (**इषा**) अन्नादिना (**सम्**) (**स्वस्ति**) सुखम्॥६॥

अन्वयः-यो राजा मदिरमंशुं सेवमानस्य नमुचेर्दासस्य शिरः श्येनो न प्र मथायन्नस्मै कठिनं शिष्यन्नमीं साप्यं ससन्तं कृत्वा प्राऽऽवत्। राया स्वस्ति सम्पृणगिषा स्वस्ति सम्पृणक् स सम्राड् भवितुमर्हेत्॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। राज्ञामिदमुचितं कर्मास्ति ये मादकद्रव्यं सेवेरँस्तान् भृशं दण्डयित्वा यथायोग्यसत्कारेणऽप्रमादिनः सत्कुर्य्युस्ते साम्राज्यं कर्तुमर्हेयुः॥६॥

पदार्थः-जो राजा (**मदिरम्**) मादक द्रव्य और (**अंशुम्**) वैद्यकविद्या की रीति से विभाग किये गये का सेवन करते हुए और (**नमुचेः**) नहीं त्याग करने वाले (**दासस्य**) सेवक के (**शिरः**) मस्तक को (**श्येनः**) बाज पक्षी (**न**) जैसे वैसे (**प्र, मथायन्**) अत्यन्त मथन करता हुआ (**अस्मै**) इसके लिये कठिन शिष्य को (**नमीम्**) नम्र (**साप्यम्**) कर्म के अन्त करने वाले को (**ससन्तम्**) सोते हुए को करके (**प्र, आवत्**) रक्षा करे और (**राया**) धन से (**स्वस्ति**) सुख को (**सम्, पृणक्**) उत्तम प्रकार पूर्ण करता है तथा (**इषा**) अन्न आदि से सुख को (**सम्**) अच्छे प्रकार पूर्ण करता है, वह सम्राट् होने के योग्य होवे॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। राजाओं का यह उचित कर्म है कि जो मादक द्रव्य का सेवन करें उनको अत्यन्त दण्ड देके, यथायोग्य सत्कार से अप्रमादियों का सत्कार करें, वे साम्राज्य करने को योग्य होवें॥६॥

पुना राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

वि पिप्रोरहिमायस्य दृळहाः पुरो वज्रिञ्छवसा न दर्दः।

सुदा॑मन् तद् रेक्णो॑ अप्रमृष्यमृजिश्व॑ने दा॒त्रं दा॒शुषे॑ दाः॥७॥

वि। पिप्रो॑ः। अहि॑ऽमायस्य। दृ॒ळ्हाः। पुर॑ः। व॒ज्रि॒न्। शव॑सा। न। द॒र्द॒रिति॑ दर्दः। सु॒ऽदा॑मन्। तत्। रेक्ण॑ः। अ॒प्र॒ऽमृष्यम्। ऋ॒जिश्व॑ने। दा॒त्रम्। दा॒शुषे॑। दाः॥७॥

पदार्थः-(**वि**) (**पिप्रोः**) व्यापकस्य (**अहिमायस्य**) अहेर्मेघस्य मायाच्छादनमिव कापट्यं यस्य तस्य (**दृळ्हाः**) (**पुरः**) नगरीः (**वज्रिन्**) शस्त्रास्त्रभृत् (**शवसा**) बलेन (**न**) निषेधे (**दर्दः**) विदारयेः (**सुदामन्**) सुष्ठु दातः (**तत्**) (**रेक्णः**) धनम् (**अप्रमृष्यम्**) अप्रसह्यम् (**ऋजिश्वने**) ऋज्वादिगुणवर्धकाय (**दात्रम्**) दानम् (**दाशुषे**) दातुं योग्याय (**दाः**) देहि॥७॥

अन्वयः-हे वज्रिन्त्सुदामन् राजँस्त्वमहिमायस्य पिप्रोर्दृळ्हाः पुरः शवसा न वि दर्दः। यदप्रमृष्यं दात्रमृजिश्वने दाशुषे दास्तद्रेक्णोऽस्मभ्यमपि देहि॥७॥

भावार्थः-राज्ञा छलादिकं विहाय स्वकीयानि नगराणि दृढानि निर्माय कदाचिच्छेदनं नैव कार्यं सुपात्राय दानं देयं कुपात्रश्च तिरस्करणीयः॥७॥

पदार्थः-हे (**वज्रिन्**) शस्त्र और अस्त्रों को धारण करनेवाले (**सुदामन्**) उत्तम प्रकार से दाता राजन्! आप (**अहिमायस्य**) मेघ का ढाँप लेना जैसे वैसे कपटता जिसकी उस (**पिप्रोः**) व्यापक की (**दृळ्हाः**) दृढ़ (**पुरः**) नगरियों को (**शवसा**) बल से (**न**) नहीं (**वि, दर्दः**) विशेष नष्ट कीजिये और जो (**अप्रमृष्यम्**) नहीं सहने योग्य (**दात्रम्**) दान को (**ऋजिश्वने**) सरलता आदि गुणों के बढ़ानेवाले (**दाशुषे**) दान देने योग्य पुरुष के लिये (**दाः**) दीजिये (**तत्**) उस (**रेक्णः**) धनदान को हम लोगों के लिये भी दीजिये॥७॥

भावार्थः-राजा को चाहिये कि छल आदि का त्याग कर और अपने नगरों को दृढ़ करके कभी छेदन न करे और सुपात्र के लिये दान दे और कुपात्र का तिरस्कार करे॥७॥

पुना राजा किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

स वे॑त॒सुं दश॑मायं॒ दशो॑णिं॒ तूतु॑जि॒मिन्द्र॑ः स्वभि॒ष्टिसु॑म्नः।

आ तु॒ग्रं शश्व॒दिभं॒ द्योत॑नाय मा॒तुर्न सी॒मुप॑ सृजा इ॒यध्यै॑॥८॥

सः। वे॒त॒सुम्। दश॑ऽमायम्। दश॑ऽओणिम्। तूतु॑जिम्। इन्द्र॑ः। स्व॒भि॒ष्टिऽसु॑म्नः। आ। तु॒ग्रम्। शश्व॑त्। इभ॑म्। द्योत॑नाय। मा॒तुः। न। सी॑म्। उप॑। सृ॒ज॒। इ॒यध्यै॑॥८॥

पदार्थः-(**सः**) (**वेतसुम्**) व्यापनशीलम् (**दशमायम्**) दशाङ्गुलय इव माया मानं यस्य तम् (**दशोणिम्**) दशधौणिः परिहाणं यस्य तम् (**तूतुजिम्**) बलवन्तम् (**इन्द्रः**) परमैश्वर्यो राजा (**स्वभिष्टिसुम्नः**) सुष्ठु अभिष्टि सुम्नं सुखं यस्य यस्माद्वा (**आ**) (**तुग्रम्**) आदातारम् (**शश्वत्**) निरन्तरम् (**इभम्**) हस्तिनमिव

(द्योतनाय) प्रकाशनाय **(मातु:)** जनन्या: **(न)** इव **(सीम्)** सर्वत: **(उप)** **(सृजा)** अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घ:। **(इयध्यै)** एतुं प्राप्तुम्॥८॥

अन्वय:-हे राजन्! य: स्वभिष्टसुम्न इन्द्रस्स त्वं द्योतनाय वेतसुं दशमायं दशोणिं तूतुजिं तुग्रमिभमियध्यै मातुर्न सीं शश्वदोप सृजा॥८॥

भावार्थ:-स एव राजा श्रीमान् भवेद्यो दशोन्द्रियैरुत्तमं कर्मविज्ञानं वर्धयित्वाऽभीष्टसुखं सततमुन्नयेन् मातृवत्प्रजा: पालयेत्॥८॥

पदार्थ:-हे राजन्! जो **(स्वभिष्टिसुम्न:)** उत्तम प्रकार अभीष्ट सुखवाले **(इन्द्र:)** अत्यन्त ऐश्वर्ययुक्त राजा **(स:)** वह आप **(द्योतनाय)** प्रकाश के लिये **(वेतसुम्)** व्यापनशील **(दशमायम्)** दश अंगुलियों के तुल्य प्रमाण जिसका उस **(दशोणिम्)** दश प्रकार से परित्याग जिसका और **(तूतुजिम्)** बल से युक्त **(तुग्रम्)** ग्रहण करने वाले **(इभम्)** हाथी को **(इयध्यै)** प्राप्त होने के लिये **(मातु:)** माता से **(न:)** जैसे वैसे **(सीम्)** सब ओर से **(शश्वत्)** निरन्तर **(आ, उप, सृजा)** समीप प्रकट कीजिये॥८॥

भावार्थ:-वही राजा धनवान् होवे कि जो दश इन्द्रियों से उत्तम कर्म और विज्ञान को बढ़ा के अभीष्ट सुख की निरन्तर उन्नति करे और माता के सदृश प्रजाओं का पालन करे॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

स ईं स्पृधो वनते अप्रतीतो बिभ्रद्वज्रं वृत्रहणं गभस्तौ।

तिष्ठद्धरी अध्यस्तेव गर्ते वचोयुजा वहत इन्द्रमृष्वम्॥९॥

स:। ईम्। स्पृध:। वनते। अप्रतिऽइत:। बिभ्रत्। वज्रम्। वृत्रऽहनम्। गभस्तौ। तिष्ठत्। हरी इति। अधि। अस्ताऽइव। गर्ते। वच:ऽयुजा। वहत:। इन्द्रम्। ऋष्वम्॥९॥

पदार्थ:-**(स:)** **(ईम्)** जलम् **(स्पृध:)** स्पर्द्धन्ते येषु तान् **(वनते)** सम्भजति **(अप्रतीत:)** शत्रुभिरज्ञात: **(बिभ्रत्)** धरन् **(वज्रम्)** **(वृत्रहणम्)** येन वृत्रं हन्ति तत् **(गभस्तौ)** किरणे **(तिष्ठत्)** तिष्ठति **(हरी)** अश्वाविव धारणाकर्षणे **(अधि)** **(अस्तेव)** प्रेरक: सारथिरिव **(गर्ते)** गृहे। **गर्त इति गृहनाम।** (निघं०३.४) **(वचोयुजा)** यौ वचसा युङ्क्तस्तौ **(वहत:)** **(इन्द्रम्)** विद्युतमिव राजानम् **(ऋष्वम्)** महान्तम्॥९॥

अन्वय:-स इन्द्रो वृत्रहणं वज्रं गभस्तौ सूर्य इव बिभ्रदप्रतीत: स्पृध ईं वनते हरी अस्तेव गर्तेऽधि तिष्ठत् तथा त्वं यौ वचोयुजा ऋष्वमिन्द्रं वहतस्तौ यानेषु युङ्क्ष्व॥९॥

भावार्थ:-राजा सदैव स्वमन्त्रं गोपयेद् यदा कार्यं सिद्धेत् तदैव जना प्रसिद्धं जानीयु: शस्त्राणि धृत्वा सेना: सुशिक्ष्य महदैश्वर्यं प्राप्नुयात्॥९॥

पदार्थः-(**सः**) वह प्रताप से युक्त राजा (**वृत्रहणम्**) जिससे मेघ का नाश करता है उस (**वज्रम्**) वज्र को (**गभस्तौ**) किरण में सूर्य जैसे (**बिभ्रत्**) धारण करता हुआ (**अप्रतीतः**) शत्रुओं से नहीं जाना गया (**स्पृधः**) स्पर्द्धा करते हैं जिनमें उनका और (**ईम्**) जल का (**वनते**) सेवन करता है और (**हरी**) घोड़े जैसे धारण और आकर्षण को, वैसे वा (**अस्तेव**) प्रेरणा करने वाला सारथि जैसे वैसे (**गर्ते**) गृह में (**अधि, तिष्ठत्**) स्थित होता है, वैसे आप जो (**वचोयुजा**) वचन से युक्त करते वे दोनों (**ऋष्वम्**) बड़े (**इन्द्रम्**) बिजुली के सदृश राजा को (**वहतः**) पहुँचाते हैं, उनको वाहनों में युक्त करिये॥९॥

भावार्थः-राजा सदा ही अपने विचार को छिपावे, जब कार्य सिद्ध होवे तभी लोग प्रकट जानें और शस्त्रों को धारण कर सेनाओं को उत्तम प्रकार शिक्षा देकर बड़े ऐश्वर्य को प्राप्त होवे॥९॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

सनेम तेऽवसा नव्य इन्द्र प्र पूरवः स्तवन्त एना यज्ञैः।

सप्त यत्पुरः शर्म शारदीर्दर्द्धन् दासीः पुरुकुत्साय शिक्षन्॥ १०॥

सनेम। ते। अवसा। नव्यः। इन्द्र। प्र। पूरवः। स्तवन्ते। एना। यज्ञैः। सप्त। यत्। पुरः। शर्म। शारदीः। दर्त्। हन्। दासीः। पुरुऽकुत्साय। शिक्षन्॥ १०॥

पदार्थः-(**सनेम**) विभजेम (**ते**) तव (**अवसा**) रक्षणादिना (**नव्यः**) नवीनेषु भवः (**इन्द्र**) परमैश्वर्यसुखप्रद (**प्र**) (**पूरवः**) मनुष्याः (**स्तवन्ते**) (**एना**) एनेन (**यज्ञैः**) सद्व्यवहारमयैः (**सप्त**) (**यत्**) यः (**पुरः**) नगरीः (**शर्म**) गृहम् (**शारदीः**) शरदि भवाः (**दर्त्**) विदृणाति (**हन्**) हन्ति (**दासीः**) सेविकाः (**पुरुकुत्साय**) बहुशस्त्राय (**शिक्षन्**)॥१०॥

अन्वयः-हे इन्द्र! तेऽवसा वयं सप्त पुरः सनेम यथा पूरव एनाऽवसा यज्ञैः स्तवन्ते तेन नव्यस्त्वं तैः स्तुहि यद्यः शर्म शारदीर्दासीः प्राप्य पुरुकुत्साय शिक्षन् सन् दुःखानि प्र दर्त्, शत्रून् हन्त्स सर्वैः सत्कर्तव्यः॥१०॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा राजा विनयेन वर्तते तथैव सर्वे वर्त्तन्ताम्, पुरुषार्थेन सुन्दराणि पुराणि च निर्माय तेषु सर्वर्त्तु सुप्रखदेषु निवसन्तो दुःखानि दूरे प्रक्षिपन्तु॥१०॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य और सुख के देने वाले! (**ते**) आपके (**अवसा**) रक्षण आदि से हम लोग (**सप्त**) सात (**पुरः**) नगरियों का (**सनेम**) विभाग करें और जैसे (**पूरवः**) मनुष्य (**एना**) इस (**अवसा**) रक्षण आदि से और (**यज्ञैः**) श्रेष्ठ व्यवहाररूप यज्ञों से (**स्तवन्ते**) स्तुति करते हैं इससे (**नव्यः**) नवीनों में हुए आप उनसे स्तुति करिये और (**यत्**) जो (**शर्म**) गृह और (**शारदीः**) शरत्काल में हुई (**दासीः**) सेविकाओं को प्राप्त होके (**पुरुकुत्साय**) बहुत शस्त्र वाले के लिये (**शिक्षन्**) शिक्षा देता हुआ दुःखों को (**प्र, दर्त्**) नष्ट करता है और शत्रुओं को (**हन्**) मारता है, वह सब से सत्कार करने योग्य है॥१०॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे राजा विनय से वर्त्तमान है, वैसे ही सब वर्त्तमान होवें और पुरुषार्थ से सुन्दर पुरों का निर्माण करके उन सब ऋतुओं में सुख देनेवालों में निवास करते हुए दुःखों को दूर फेंकें॥१०॥

पुना राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

त्वं वृध इन्द्र पूर्व्यो भूर्वरिवस्यन्नुशने काव्याय।
परा नववास्त्वमनुदेयं महे पित्रे ददाथ स्वं नपातम्॥११॥

त्वम्। वृधः। इन्द्र। पूर्व्यः। भूः। वरिवस्यन्। उशने। काव्याय। परा। नवऽवास्त्वम्। अनुऽदेयम्। महे। पित्रे। ददाथ। स्वम्। नपातम्॥११॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**वृधः**) वर्धकान् (**इन्द्र**) विद्यैश्वर्ययुक्त (**पूर्व्यः**) पूर्वैः कृतो विद्वान् (**भूः**) भवेः (**वरिवस्यन्**) सेवमानः (**उशने**) कामयमानाय (**काव्याय**) कविभिः सुशिक्षिताय (**परा**) (**नववास्त्वम्**) नवीनं निवासम् (**अनुदेयम्**) अनुदातुं योग्यम् (**महे**) महते (**पित्रे**) पालकाय (**ददाथ**) देहि (**स्वम्**) स्वकीयम् (**नपातम्**) पातरहितम्॥११॥

अन्वयः-हे इन्द्र! पूर्व्यस्त्वं वृधो वरिवस्यन्नुशने काव्याय दाता भूः स्वं नपातमनुदेयं नववास्त्वं महे पित्रे ददाथ न पराऽऽददाथ॥११॥

भावार्थः-यो राजा सर्वेषां यथायोग्यं सत्कारं करोति स पितृवद् भवति॥११॥

पदार्थः-हे (**इन्द्रः**) विद्या और ऐश्वर्य से युक्त (**पूर्व्यः**) प्राचीन से किये गये विद्वान् (**त्वम्**) आप (**वृधः**) वृद्धि करने वालों की (**वरिवस्यन्**) सेवा करते हुए (**उशने**) कामना करते हुए (**काव्याय**) विद्वानों से उत्तम प्रकार शिक्षित के लिये दाता (**भूः**) हूजिये (**स्वम्**) अपने (**नपातम्**) पतन से रहित (**अनुदेयम्**) पश्चात् देने योग्य (**नववास्त्वम्**) नवीन निवास को (**महे**) बड़े (**पित्रे**) पालन करने वाले के लिये (**ददाथ**) दीजिये और नहीं (**परा**) पीछे लीजिये अर्थात् न लौटाइये॥११॥

भावार्थः-जो राजा सब का यथायोग्य सत्कार करता है, वह पिता के तुल्य होता है॥११॥

पुनाः स किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

त्वं धुनिरिन्द्र धुनिमतीर्ऋणोरपः सीरा न स्रवन्तीः।
प्र यत्समुद्रमति शूर पर्षि पारया तुर्वशं यदुं स्वस्ति॥१२॥

त्वम्। धुनिः। इन्द्र। धुनिऽमतीः। ऋणोः। अपः। सीराः। न। स्रवन्तीः। प्र। यत्। समुद्रम्। अति। शूर। पर्षि। पारय। तुर्वशम्। यदुम्। स्वस्ति॥१२॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**धुनिः**) शत्रूणां कम्पकः (**इन्द्र**) सर्वपालक (**धुनिमतीः**) शब्दायमानाः प्रजाः (**ऋणोः**) प्रसाध्नुयाः (**अपः**) जलानि (**सीराः**) नाड्यः (**न**) इव (**स्रवन्तीः**) नद्यः (**प्र**) (**यत्**) यः (**समुद्रम्**) सागरमन्तरिक्षं वा (**अति**) (**शूर**) (**पर्षि**) पालयसि (**पारया**) दुःखात् परं देशं गमय (**तुर्वशम्**) सद्यो वशगमनम् (**यदुम्**) यत्नशीलं मनुष्यम् (**स्वस्ति**) सुखम्॥१२॥

अन्वयः-हे इन्द्र! धुनिस्त्वं धुनिमतीः सीरा अपः स्रवन्तीः समुद्रं न स्वस्त्यृणोः। हे शूर! यद् यस्त्वं तुर्वशं यदुं प्रति पर्षि स त्वमस्मान् पारया॥१२॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे राजंस्त्वं मङ्गलसुखशब्दयुक्ता आनन्दिताः प्रजाः कुर्या यथा नद्यः समुद्रं प्राप्य स्थिरा भवन्ति तथा प्रजा भवन्तं प्राप्य निश्चलाः स्युरेवं कुर्याः॥१२॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) सब के पालन करने वाले (**धुनिः**) शत्रुओं के कम्पाने वाले (**त्वम्**) आप (**धुनिमतीः**) शब्द करती हुई प्रजायें (**सीराः**) नाडियाँ तथा (**अपः**) जल और (**स्रवन्तीः**) नदियाँ (**समुद्रम्**) समुद्र वा अन्तरिक्ष को (**न**) जैसे (**स्वस्ति**) सुख को (**ऋणोः**) प्रसिद्ध कीजिये और हे (**शूर**) वीर! (**यत्**) जो आप (**तुर्वशम्**) शीघ्र वश को प्राप्त होनेवाले (**यदुम्**) यत्नशील मनुष्य का (**प्र, अति पर्षि**) प्रसिद्ध अत्यन्त पालन करते हो, वह आप हम लोगों को (**पारया**) दुःख से पार कीजिये॥१२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे राजन्! आप मङ्गल और सुख के देने वाले शब्दों से युक्त और आनन्दित प्रजाओं को करें, जैसे नदियाँ समुद्र को प्राप्त होकर स्थिर होती हैं, वैसे प्रजायें आपको प्राप्त होकर निश्चल होवें, ऐसा करिये॥१२॥

पुनः स किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

तव॑ ह॒ त्यदि॑न्द्र॒ विश्व॑मा॒जौ स॒स्तो धु॒नीचु॑मुरी॒ या ह॒ सिष्व॑प्।

दी॒दय॒दित्तुभ्य॒ं सोमे॑भिः सु॒न्वन् द॒भीति॑रि॒ध्मभृ॑तिः प॒क्थ्य१॑र्कैः॥१३॥१०॥

तव॑। ह॒। त्यत्। इ॒न्द्र॒। विश्व॑म्। आ॒जौ। स॒स्तः। धु॒नीचु॑मु॒री इति॑। या। ह॒। सिस्व॑प्। दी॒दय॑त्। इत्। तुभ्य॑म्। सोमे॑भिः। सु॒न्वन्। द॒भीति॑ः। इ॒ध्मऽभृ॑तिः। प॒क्थी। अ॒र्कैः॥१३॥

पदार्थः-(**तव**) (**ह**) किल (**त्यत्**) तत् (**इन्द्र**) सुखधर्तः (**विश्वम्**) समग्रम् (**आजौ**) स-ामे (**सस्तः**) श्यानः (**धुनीचुमुरी**) ध्वनिः शब्दश्चमुरिर्भोगश्च तौ (**या**) यौ (**ह**) (**सिष्वप्**) स्वपन् (**दीदयत्**) प्रकाशयति (**इत्**) एव (**तुभ्यम्**) (**सोमेभिः**) ऐश्वर्यौषध्यादिभिः (**सुन्वत्**) निष्पादयन् (**दभीतिः**) हिंसकः (**इध्मभृतिः**) इध्मानां धारकः (**पक्थी**) पाचकः (**अर्कैः**) अन्नैः॥१३॥

अन्वयः-हे इन्द्र! तव या धुनीचुमुरी आजौ विश्वं पालयतो यः सस्तो ह सिष्वब् दीदयद्यो दभीतिरिध्मभृतिः पक्थ्यर्कैः सोमेभिः सुन्वँस्तुभ्यमित् सुखं प्रयच्छेत्त्यद्ध तान्त्सर्वान्त्सदा सत्कुर्याः॥१३॥

भावार्थः-हे राजँस्त्वं वावदूकान् भोक्तॄन् वीराञ्जनान् सत्कृत्य सेनाः प्रबलाः कुर्याः॥१३॥

अत्रेन्द्रविद्वद्राजप्रजागुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति विंशतितमं सूक्तं दशमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** सुख के धारण करने वाले **(तव)** आपके **(या)** जो **(धुनीचुमुरी)** शब्द और भोग **(आजौ)** संग्राम में **(विश्वम्)** सम्पूर्ण का पालन करते हैं ओर जो **(सस्तः)** शयन करता हुआ **(ह)** निश्चय से **(सिष्वप्)** सोता हुआ **(दीदयत्)** प्रकाश करता है और जो **(दभीतिः)** हिंसा करने और **(इध्मभृतिः)** काष्ठ का धारण करने वाला **(पक्थी)** पाचक **(अर्कैः)** अन्नों से और **(सोमेभिः)** ऐश्वर्य और ओषधि आदिकों से **(सुन्वन्)** उत्पन्न करता हुआ **(तुभ्यम्)** आपके लिये **(इत्)** ही सुख को देवे **(त्यत्)** उसको **(ह)** निश्चय से और उन सबों को सदा सत्कार करिये॥१३॥

भावार्थः-हे राजन्! आप बहुत बोलनेवाले, भोक्ता, वीर जनों का सत्कार करके सेनाओं को प्रबल करिये॥१३॥

इस सूक्त में इन्द्र, विद्वान्, राजा और प्रजा के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह बीसवाँ सूक्त और दशवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ द्वादशर्चस्यैकविंशतितमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, २, ९, १०, १२ विराट् त्रिष्टुप्। ४, ५, ११ त्रिष्टुप्। ७ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ३ भुरिक्पङ्क्तिः। ६ पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ८ स्वराड् बृहतीच्छन्दः। मध्यमः स्वरः॥

पुनस्तं राजानं किमर्थमाश्रयेरन्नित्याह॥

अब बारह ऋचावाले इक्कीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में फिर उस राजा का किस अर्थ आश्रय करें, इस विषय को कहते हैं॥

इमा उ त्वा पुरुतमस्य कारोर्हव्यं वीर हव्या हवन्ते।
धियो रथेष्ठामजरं नवीयो रयिर्विभूतिरीयते वचस्या॥ १॥

इमाः। ऊँ इति। त्वा। पुरुऽतमस्य। कारोः। हव्यम्। वीर। हव्याः। हवन्ते। धियः। रथेऽस्थाम्। अजरम्। नवीयः। रयिः। विऽभूतिः। ईयते। वचस्या॥ १॥

पदार्थः-(**इमाः**) वर्तमानाः प्रजाः (**उ**) (**त्वा**) त्वाम् (**पुरुतमस्य**) अतिशयेन बहुगुणस्य (**कारोः**) शिल्पिनः (**हव्यम्**) दातुमर्हम् (**वीर**) निर्भय (**हव्याः**) दातुं योग्याः (**हवन्ते**) आददति (**धियः**) प्रज्ञाः (**रथेष्ठाम्**) यो रथे तिष्ठति (**अजरम्**) जरारहितं शरीरम् (**नवीयः**) अतिशयेन नवीनम् (**रयिः**) श्रीः (**विभूतिः**) ऐश्वर्यम् (**ईयते**) प्राप्नोति (**वचस्या**) वचसि भवा॥ १॥

अन्वयः-हे वीर! ये पुरुतमस्य कारोर्हव्यं हवन्ते या इमा हव्या धियो रथेष्ठां नवीयोऽजरं रयिर्वचस्या विभूतिरीयते ताभिर्युक्तं त्वा उ वयं सत्कुर्याम॥ १॥

भावार्थः-यः पुरुषः प्रशंसनीयां बुद्धिं स्वीकृत्य तया जरारोगरहितां पुष्कलां श्रियमैश्वर्यं चाप्नोति तस्य शिल्पिप्रियस्य राज्ञः सत्कारः कर्त्तव्यः॥ १॥

पदार्थः-हे (**वीर**) भय से रहित जो (**पुरुतमस्य**) अतिशय बहुत गुणों से विशिष्ट (**कारोः**) कारीगर के (**हव्यम्**) देने योग्य को (**हवन्ते**) ग्रहण करते हैं और जो (**इमाः**) ये वर्त्तमान प्रजायें (**हव्याः**) देने योग्य (**धियः**) बुद्धियों को और जो (**रथेष्ठाम्**) रथ में स्थित होने वाले (**नवीयः**) अतिशय नवीन (**अजरम्**) वृद्धावस्था से रहित शरीर को (**रयिः**) धन और (**वचस्या**) वचन में हुआ (**विभूतिः**) ऐश्वर्य (**ईयते**) प्राप्त होता है, उनसे युक्त (**त्वा**) आपका (**उ**) तर्क-वितर्क से हम लोग सत्कार करें॥ १॥

भावार्थः-जो पुरुष प्रशंसा करने योग्य बुद्धि को स्वीकार करके उससे वृद्धावस्था और रोग से रहित अत्यन्त लक्ष्मी और ऐश्वर्य को प्राप्त होता है, उस शिल्पीजनप्रिय राजा का सत्कार करना चाहिये॥ १॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

तमु स्तुष इन्द्रं यो विदानो गिर्वाहसं गीर्भिर्यज्ञवृद्धम्।

यस्य दिवमति मह्ना पृथिव्याः पुरुमायस्य रिरिचे महित्वम्॥२॥

तम्। ऊँ इति। स्तुषे। इन्द्रम्। यः। विदानः। गिर्वाहसम्। गीःऽभिः। यज्ञऽवृद्धम्। यस्य। दिवम्। अति। मह्ना। पृथिव्याः। पुरुऽमायस्य। रिरिचे। महिऽत्वम्॥२॥

पदार्थः-(**तम्**) (**उ**) (**स्तुषे**) प्रशंससि (**इन्द्रम्**) परमैश्वर्यप्रदम् (**यः**) (**विदानः**) जानन् (**गिर्वाहसम्**) सुशिक्षितवाक्प्रापकम् (**गीर्भिः**) वाग्भिः (**यज्ञवृद्धम्**) यज्ञे पूज्यं विद्वांसम् (**यस्य**) (**दिवम्**) कामयमानम् (**अति**) (**मह्ना**) महत्त्वेन (**पृथिव्याः**) (**पुरुमायस्य**) बहुकपटस्य दुष्टस्य (**रिरिचे**) अतिरिणक्ति (**महित्वम्**) महिमानम्॥२॥

अन्वयः-हे राजन्! यो विदानो गीर्भिर्गिर्वाहसं यज्ञवृद्धं दिवमिन्द्रं लब्ध्वा पृथिव्या यस्य पुरुमायस्य मह्ना महित्वमति रिरिचे यं त्वमु स्तुषे तं वयं स्वीकुर्याम॥२॥

भावार्थः-ये मनुष्याः परमैश्वर्यवर्धकं सूर्यमिव प्रकाशमानं राजानं सत्यमुपदिशेयुस्ते महिमानं प्राप्य दुःखाऽतिरिक्ता जायन्ते॥२॥

पदार्थः-हे राजन्! (**यः**) जो (**विदानः**) जानता हुआ (**गीर्भिः**) वाणियों से (**गिर्वाहसम्**) उत्तम प्रकार शिक्षित वाणी के प्राप्त कराने वाले (**यज्ञवृद्धम्**) यज्ञ में आदर करने योग्य विद्वान् और (**दिवम्**) कामना करते हुए (**इन्द्रम्**) परमैश्वर्य्यप्रद जन को प्राप्त होकर (**पृथिव्याः**) पृथिवी और (**यस्य**) जिस (**पुरुमायस्य**) बहुत कपट से युक्त दुष्ट जन की (**मह्ना**) महिमा से (**महित्वम्**) महिमा को (**अति, रिरिचे**) बढ़ाता है और जिसकी आप (**उ**) तर्क-वितर्क से (**स्तुषे**) प्रशंसा करते हो (**तम्**) उस जन को हम लोग स्वीकार करें॥२॥

भावार्थः-जो मनुष्य अत्यन्त ऐश्वर्य के बढ़ानेवाले सूर्य के सदृश प्रकाशमान राजा को सत्य का उपदेश करें, वे महिमा को प्राप्त होकर दुःख से अतिरिक्त होते हैं॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

स इत्तमोऽवयुनं ततन्वत् सूर्येण वयुनवच्चकार।

कदा ते मर्ता अमृतस्य धामेयक्षन्तो न मिनन्ति स्वधावः॥३॥

सः। इत्। तमः। अवयुनम्। ततन्वत्। सूर्येण। वयुनऽवत्। चकार। कदा। ते। मर्ताः। अमृतस्य। धाम। इयक्षन्तः। न। मिनन्ति। स्वधाऽवः॥३॥

पदार्थः-(**सः**) (**इत्**) एव (**तमः**) रात्रिः (**अवयुनम्**) अज्ञानमन्धकाररूपम् (**ततन्वत्**) विस्तृणन्। तनुधातोः शतृप्रत्यये **बहुलं छन्दसि**। (अ०२.४.७६) अनेन बहुलं शपः श्लुः (**सूर्येण**) (**वयुनवत्**) प्रज्ञावत् (**चकार**) करोति (**कदा**) (**ते**) (**मर्त्ताः**) मनुष्याः (**अमृतस्य**) मरणरहितस्य जगदीश्वरस्य (**धाम**)

दधाति येन तत् **(इयक्षन्तः)** यष्टुं सङ्गमयितुमिच्छन्तः **(न)** निषेधे **(मिनन्ति)** हिंसन्ति **(स्वधावः)** बह्वन्नयुक्त॥३॥

अन्वयः-हे जगदीश्वर! यो भवान्त्सूर्येण तम इव ज्ञानप्रकाशेनावयुनं नष्टं चकार वयुनवत्प्रज्ञां ततन्वदस्ति स इत्सेवनीयः। हे स्वधावो मर्त्ता! अमृतस्य ते धामेयक्षन्तः कदा न मिनन्ति॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये मनुष्या अहिंसाधर्मं स्वीकृत्य विज्ञानं वर्धयित्वा परमेश्वरप्राप्तिं चिकीर्षन्ति ते विस्तीर्णं सुखं लभन्ते॥३॥

पदार्थः-हे जगदीश्वर! जो आप **(सूर्येण)** सूर्य से **(तमः)** रात्रि जैसे वैसे ज्ञानप्रकाश से **(अवयुनम्)** अज्ञानान्धकार को नष्ट **(चकार)** करते हैं और **(वयुनवत्)** बुद्धि के सदृश और बुद्धि का **(ततन्वत्)** विस्तार करते हुए हैं **(सः)** **(इत्)** वही सेवा करने योग्य हैं। हे **(स्वधावः)** बहुत अन्न से युक्त **(मर्त्ताः)** मनुष्य! **(अमृतस्य)** मरणरहित जगदीश्वर के **(ते)** आपके सम्बन्ध में **(धाम)** धारण करते जिससे उसको **(इयक्षन्तः)** मिलाने की इच्छा करते हुए **(कदा)** कब **(न)** नहीं **(मिनन्ति)** नष्ट करते हैं अर्थात् दोष के कारण को दूर करते हैं॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो मनुष्य अहिंसा धर्म को स्वीकार कर और विज्ञान बढ़ाय के परमेश्वर की प्राप्ति की चिकीर्षा करते हैं, वे विस्तीर्ण सुख को प्राप्त होते हैं॥३॥

पुनर्विदुषः प्रति किं प्रष्टव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को विद्वानों के प्रति क्या-क्या पूँछना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

यस्ता चकार स कुह स्विदिन्द्रः कमा जनं चरति कासु विक्षु।
कस्ते यज्ञो मनसे शं वराय को अर्क इन्द्र कतमः स होता॥४॥

यः। ता। चकार। सः। कुह। स्वित्। इन्द्रः। कम्। आ। जनम्। चरति। कासु। विक्षु। कः। ते। यज्ञः। मनसे। शम्। वराय। कः। अर्कः। इन्द्र। कतमः। सः। होता॥४॥

पदार्थः-**(यः)** **(ता)** तानि **(चकार)** करोति **(सः)** **(कुह)** **(स्वित्)** अपि **(इन्द्रः)** परमैश्वर्यकर्ता **(कम्)** सुखम् **(आ)** **(जनम्)** **(चरति)** **(कासु)** **(विक्ष)** प्रजासु **(कः)** **(ते)** तव **(यज्ञः)** सङ्गतिमयः **(मनसे)** मननशीलाय **(शम्)** सुखम् **(वराय)** श्रेष्ठाय **(कः)** **(अर्कः)** अर्चनीयः **(इन्द्र)** दुःखविदारक **(कतमः)** **(सः)** **(होता)** दाता॥४॥

अन्वयः-हे इन्द्र! य इन्द्रः कुह स्वित्ता चकार कासु विक्षु स कं जनमाऽऽचरति ते वराय मनसे को यज्ञः शं चकार कोऽर्कः कतमः स होता भवतीत्युत्तराणि वद॥४॥

भावार्थः-हे विद्वांस्तानि प्रज्ञावर्धनानि कः कर्तुं शक्नुयादुपकाराय प्रज्ञासु कश्चरति कः पूजनीयः कश्च दाता भवतीति समाधानानि वद॥४॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** दुःखविदारक विद्वान्! **(यः)** जो **(इन्द्रः)** अत्यन्त ऐश्वर्य का करने वाला **(कुह)** **(स्वित्)** कहीं **(ता)** उनको **(चकार)** करता है और **(कासु)** किन **(विक्षु)** प्रजाओं में **(सः)** वह **(कम्)**

सुख को और **(जनम्)** मनुष्य को **(आ, चरति)** आचरण करता अर्थात् प्राप्त होता है और **(ते)** आपके **(वराय)** श्रेष्ठ **(मनसे)** विचारशील चित्त के लिये **(कः)** कौन **(यज्ञः)** मेल करना रूप यज्ञ **(शम्)** सुख को करता है और **(कः)** कौन **(अर्कः)** आदर करने योग्य और **(कतमः)** कौनसा **(सः)** वह **(होता)** दाता होता है, इनके उत्तरों को कहिये॥४॥

भावार्थः-हे विद्वान्! उन बुद्धि की वृद्धियों को कौन कर सके, उपकार के लिये बुद्धियों में कौन चलता है, कौन आदर करने योग्य और कौन दाता होता है, इन प्रश्नों के समाधानों को कहिये॥४॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

इदा हि ते वेविषतः पुराजा प्रत्नास आसुः पुरुकृत्सखायः।

ये मध्यमास उत नूतनास उतावमस्य पुरुहूत बोधि॥५॥११॥

इदा। हि। ते। वेविषतः। पुराऽजाः। प्रत्नासः। आसुः। पुरुऽकृत्। सखायः। ये। मध्यमासः। उत। नूतनासः। उत। अवमस्य। पुरुऽहूत। बोधि॥५॥

पदार्थः-**(इदा)** इदानीम् **(हि)** **(ते)** तव **(वेविषतः)** व्याप्नुवतः **(पुराजाः)** ये पूर्वं जाता **(प्रत्नासः)** प्राचीनाः **(आसुः)** सन्ति **(पुरुकृत्)** बहुकृत् **(सखायः)** सुहृदः **(ये)** **(मध्यमासः)** मध्ये भवाः **(उत)** अपि **(नूतनासः)** नवीनाः **(उत)** **(अवमस्य)** अर्वाचीनस्य **(पुरुहूत)** बहुभिः कृतप्रशंस **(बोधि)** बोधय॥५॥

अन्वयः-हे पुरुहुत पुरुकृद् बहुकृदिन्द्र राजन्! ये हि पुराजाः प्रत्नासो मध्यमास उत नूतनासस्ते सखाय आसुस्तानिदा वेविषत उतावमस्य सम्बन्धिनस्त्वं बोधि॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये युष्माभिः सह मैत्रीमाचरन्ति ते वृद्धा वृद्धतरा मध्यमा उतापि तुल्यवयसः स्युस्तेषु सख्यं ध्रुवं रक्षेयुरेवं सति ध्रुवो राज्याभ्युदयो भवति। इदमेव पूर्वमन्त्रप्रश्नानामुत्तरम्॥५॥

पदार्थः-हे **(पुरुहूत)** बहुतों से प्रशंसा किये गये **(पुरुकृत्)** बहुतों को करने वाले प्रतापयुक्त राजन्! **(ये)** जो **(हि)** निश्चित **(पुराजाः)** पूर्व प्रकट हुए **(प्रत्नासः)** प्राचीन **(मध्यमासः)** मध्य अवस्था में हुए और **(उत)** भी **(नूतनासः)** नवीन **(ते)** आपके **(सखायः)** मित्र **(आसुः)** हैं उनको **(इदा)** इस समय तथा **(वेविषतः)** व्याप्त हुए और **(उत)** भी **(अवमस्य)** आधुनिक के सम्बन्धियों को आप **(बोधि)** चेतन करिये॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो आप लोगों के साथ मैत्री का आचरण करते हैं, वे वृद्ध, वृद्धतर तथा मध्यम और भी तुल्य अवस्थावाले, होवें उन में मित्रता की निश्चय रक्षा करिये, ऐसा होने पर निश्चित राज्य की वृद्धि होती है, यह ही पूर्वमन्त्र में कहे हुए प्रश्नों का उत्तर है॥५॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

तं पृच्छन्तोऽवरासः पराणि प्रत्ना त इन्द्र श्रुत्यानु येमुः।
अर्चामसि वीर ब्रह्मवाहो यादेव विद्म तात्त्वा महान्तम्॥६॥

तम्। पृच्छन्तः। अवरासः। पराणि। प्रत्ना। ते। इन्द्र। श्रुत्या। अनु। येमुः। अर्चामसि। वीर। ब्रह्मऽवाहः। यात्। एव। विद्म। तात्। त्वा। महान्तम्॥६॥

पदार्थः-(**तम्**) (**पृच्छन्तः**) (**अवरासः**) अर्वाचीना जिज्ञासवः (**पराणि**) उत्तरकालस्थानि (**प्रत्ना**) पूर्वकालीनि (**ते**) तव (**इन्द्र**) विद्वन् (**श्रुत्या**) श्रुतौ भवानि (**अनु**) (**येमुः**) नियच्छन्ति (**अर्चामसि**) अर्चामः सत्कुर्मः (**वीर**) शौर्यादिगुणोपेत (**ब्रह्मवाहः**) ये ब्रह्म धनं धान्यं प्रापयन्ति ते (**यात्**) यावन्ति। अत्र **छान्दसो वर्णलोपो वे**ति वलोपः **शेश्छन्दसि बहुलमि**ति शेर्लोपः। (**एव**) (**विद्म**) जानीयाम (**तात्**) तावन्ति (**त्वा**) त्वाम् (**महान्तम्**) महाशयम्॥६॥

अन्वयः-हे वीरेन्द्र! येऽवरासस्तं महान्तं त्वा पृच्छन्तस्ते पराणि प्रत्ना श्रुत्याऽनु येमुस्तान् वयमर्चामसि। हे ब्रह्मवाहो विद्वांसो! वयं याद्विद्म तादेव यूयं विजानीत॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्या! युष्माभिर्मित्रत्वेन मिलित्वा पूर्वापराणि विज्ञानानि प्राप्य पुष्कलं सुखं प्राप्तव्यम्॥६॥

पदार्थः-हे (**वीर**) शूरता आदि गुणों से युक्त (**इन्द्र**) विद्वन्! जो (**अवरासः**) आधुनिक जिज्ञासु अर्थात् ब्रह्म को जानने की इच्छा करने वाले जन (**तम्**) उन (**महान्तम्**) महाशय (**त्वा**) आपको (**पृच्छन्तः**) पूंछते हुए हैं (**ते**) वे (**पराणि**) उत्तरकाल में वर्त्तमान और (**प्रत्ना**) पूर्वकाल में स्थित (**श्रुत्या**) वेद में प्रतिपादित विषयों को (**अनु, येमुः**) अनुकूल नियम में लाते हैं, उनका हम लोग (**अर्चामसि**) सत्कार करते हैं और हे (**ब्रह्मवाहः**) धन और धान्य को प्राप्त कराने वाले विद्वान्! हम लोग (**यात्**) जितनों को (**विद्म**) जानें (**तात्**) उतनों (**एव**) ही को आप लोग जानिये॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! आप लोगों को मित्रतापूर्वक मेल कर तथा पूर्व और पर विज्ञानों को प्राप्त होकर अत्यन्त सुख को प्राप्त होना चाहिये॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

अभि त्वा पाजो रक्षसो वि तस्थे महि जज्ञानमभि तत्सु तिष्ठ।
तव प्रत्नेन युज्येन सख्या वज्रेण धृष्णो अप ता नुदस्व॥७॥

अभि। त्वा। पाजः। रक्षसः। वि। तस्थे। महि। जज्ञानम्। अभि। तत्। सु। तिष्ठ। तव। प्रत्नेन। युज्येन। सख्या। वज्रेण। धृष्णो इति। अप। ता। नुदस्व॥७॥

पदार्थः-(**अभि**) आभिमुख्ये (**त्वा**) त्वाम् (**पाजः**) बलम् (**रक्षसः**) दुष्टान् मनुष्यान् (**वि**) (**तस्थे**) वितिष्ठते (**महि**) महत् (**जज्ञानम्**) सुखजनकम् (**अभि**) (**तत्**) (**सु**) (**तिष्ठ**) (**तव**) (**प्रत्नेन**) प्राचीनेन (**युज्येन**) योक्तुमर्हेण (**सख्या**) मित्रेण (**वज्रेण**) शस्त्रास्त्रसमूहेन (**धृष्णो**) दृढ (**अप**) (**ता**) तानि शत्रूणां सैन्यानि (**नुदस्व**) दूरीकुरु॥७॥

अन्वयः-हे धृष्णो राजँस्तव यन्महि जज्ञानं पाजो रक्षसोऽभि वि तस्थे तत्त्वा प्राप्नोतु तत्त्वमभि सु तिष्ठ तेन प्रत्नेन युज्येन सख्या वज्रेण त्वं ता अप नुदस्व॥७॥

भावार्थः-हे राजजन! ये राजपुरुषा दुष्टेभ्यो दण्डं ददति श्रेष्ठानां पालनं कुर्वन्ति तांस्त्वं सत्कुर्याः॥७॥

पदार्थः-हे (**धृष्णो**) दृढ़ राजन्! (**तव**) आपका जो (**महि**) बड़ा (**जज्ञानम्**) सुखजनक (**पाजः**) बल (**रक्षसः**) दुष्ट मनुष्यों के (**अभि, वि, तस्थे**) सम्मुख विशेषकर स्थित होता है (**तत्**) वह (**त्वा**) आपको प्राप्त होवे और आप उसके (**अभि, सु तिष्ठ**) सम्मुख स्थित हूजिये उस (**प्रत्नेन**) प्राचीन (**युज्यते**) युक्त करने के योग्य (**सख्या**) मित्र और (**वज्रेण**) शस्त्र और अस्त्रों के समूह से आप (**ता**) उन शत्रुसेनाओं को (**अप, नुदस्व**) दूर करिये॥७॥

भावार्थः-हे राजजन! जो राजपुरुष दुष्टों के लिये दण्ड देते और श्रेष्ठों को पालन करते हैं, उनका आप सत्कार करिये॥७॥

पुनर्विद्वद्भिः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर विद्वानों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

स तु श्रुधीन्द्र नूतनस्य ब्रह्मण्यतो वीर कारुधायः।

त्वं ह्या३पिः प्रदिवि पितॄणां शश्वद् बभूथ सुहव एष्टौ॥८॥

सः। तु। श्रुधि। इन्द्र। नूतनस्य। ब्रह्मण्यतः। वीर। कारुऽधायः। त्वम्। हि। आपिः। प्रऽदिवि। पितॄणाम्। शश्वत्। बभूथ। सुऽहवः। आऽइष्टौ॥८॥

पदार्थः-(**सः**) (**तु**) (**श्रुधि**) (**इन्द्र**) न्यायेश विद्वन् (**नूतनस्य**) (**ब्रह्मण्यतः**) ब्रह्म धनं प्राप्तुमिच्छतः (**वीर**) दुष्टानां विनाशक (**कारुधायः**) कारूणां विदुषां धर्तः (**त्वम्**) (**हि**) खलु (**आपिः**) यः प्राप्नोति (**प्रदिवि**) प्रकृष्टायां कामनायाम् (**पितॄणाम्**) पालकानाम् (**शश्वत्**) निरन्तरम् (**बभूथ**) भवेः (**सुहवः**) सुष्ठु ज्ञानविज्ञानः (**एष्टौ**) समन्ताद् यज्ञक्रियायाम्॥८॥

अन्वयः-हे वीर कारुधाय इन्द्र! त्वं नूतनस्यैष्टौ सुहवः शश्वद् बभूथ स त्वं तु हि पितॄणां प्रदिव्यापिः सन् ब्रह्मण्यतः सत्कुरु तेषां वचांसि श्रुधि॥८॥

भावार्थः-स एवोत्तमो विद्वान् यो ज्ञानवृद्धेभ्यो विद्यावचांसि श्रुत्वोत्तमाञ्छिल्पिनो रक्षित्वा सदेष्टसुखी भवति॥८॥

पदार्थः-हे **(वीर)** दुष्टों के नाश करने और **(कारुधायः)** शिल्पी विद्वानों के धारण करने वाले **(इन्द्र)** न्याय के स्वामी विद्वन्! **(त्वम्)** आप **(नूतनस्य)** नवीन की **(एष्टौ)** सब प्रकार से यज्ञक्रिया में **(सुहवः)** उत्तम प्रकार ज्ञान और विज्ञान वाले **(शश्वत्)** निरन्तर **(बभूथ)** हूजिये **(सः)** वह आप **(तु)** तो **(हि)** निश्चय से **(पितृणाम्)** पितृओं अर्थात् पालकों की **(प्रदिवि)** प्रकृष्ट कामना में **(आपिः)** व्याप्त होने वाले हुए **(ब्रह्मण्यतः)** धन प्राप्ति की इच्छा करने हुओं का सत्कार करिये और उनके वचनों को **(श्रुधि)** सुनिये॥८॥

भावार्थः-वही उत्तम विद्वान् है जो ज्ञानवृद्ध जनों से विद्यासम्बन्धी वचनों को सुन के उत्तम शिल्पजनों की रक्षा करके सदा अपेक्षित पदार्थ की प्राप्ति से सुखी होता है॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्रोतये वरुणं मित्रमिन्द्रं मरुतः कृष्वावसे नो अद्य।
प्र पूषणं विष्णुमग्निं पुरंधिं सवितारमोषधीः पर्वतांश्च॥९॥

प्र। ऊतये। वरुणम्। मित्रम्। इन्द्रम्। मरुतः। कृष्व। अवसे। नः। अद्य। प्र। पूषणम्। विष्णुम्। अग्निम्। पुरन्धिम्। सवितारम्। ओषधीः। पर्वतान्। च॥९॥

पदार्थः-**(प्र) (ऊतये)** रक्षाद्याय **(वरुणम्)** उदानम् **(मित्रम्)** प्राणम् **(इन्द्रम्)** विद्युतम् **(मरुतः)** वायून् **(कृष्व)** कुरु **(अवसे)** ज्ञानाद्याय **(नः)** अस्मान् **(अद्य) (प्र) (पूषणम्)** पोषकं समानम् **(विष्णुम्)** व्यापकं व्यानं धनञ्जयं वा हिरण्यगर्भम् **(अग्निम्)** प्रसिद्धम् **(पुरन्धिम्)** सर्वधरं सूत्रात्मानम् **(सवितारम्)** सूर्यमण्डलम् **(ओषधीः)** सोमाद्याः **(पर्वतान्)** मेघान् **(च)** शैलान् वा॥९॥

अन्वयः-हे विद्वँस्त्वमद्य न ऊतये वरुणं मित्रमिन्द्रं मरुतः प्र कृष्वावसे पूषणं विष्णुमग्निं पुरन्धिं सवितारमोषधीः पर्वतांश्च प्र कृष्व॥९॥

भावार्थः-हे विद्वांसो जना! अस्मदर्थं यथा पृथिव्यादयः पदार्थाः सुखकराः स्युस्तथा विधत्त॥९॥

पदार्थः-हे विद्वन्! आप **(अद्य)** इस समय **(नः)** हम लोगों को **(ऊतये)** रक्षा आदि के लिये **(वरुणम्)** उदान और **(मित्रम्)** प्राण वायु **(इन्द्रम्)** बिजुली को **(मरुतः)** पवनों को **(प्र, कृष्व)** अच्छे प्रकार करिये और **(अवसे)** ज्ञान आदि के लिये **(पूषणम्)** पुष्टि करने वाले समान वायु **(विष्णुम्)** व्यापक व्यान और धनञ्जय वायु को वा हिरण्यगर्भ परमात्मा को और **(अग्निम्)** प्रसिद्ध अग्नि **(पुरन्धिम्)** सब को धारण करनेवाले सूत्रात्मा **(सवितारम्)** सूर्यमण्डल **(ओषधीः)** सोमलता आदि ओषधियों और **(पर्वतान्, च)** मेघों वा पर्वतों को **(प्र)** अच्छे प्रकार करिये॥९॥

भावार्थः-हे विद्वान् जनो! हम लोगों के लिये जैसे पृथिवी आदि पदार्थ सुखकारक होवें, वैसे करिये॥९॥

पुनर्मनुष्यैः क उपासनीय इत्याह॥

फिर मनुष्यों को किसकी उपासना करनी चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

इम उ त्वा पुरुशाक प्रयज्यो जरितारो अभ्यर्चन्त्यर्कैः।

श्रुधी हवमा हुवतो हुवानो न त्वावाँ अन्यो अमृत त्वदस्ति॥१०॥

इमे। ऊँ इति। त्वा। पुरुऽशाक। प्रयज्यो इति प्रऽयज्यो। जरितारः। अभि। अर्चन्ति। अर्कैः। श्रुधि। हवम्। आ। हुवतः। हुवानः। न। त्वाऽवान्। अन्यः। अमृत। त्वत्। अस्ति॥१०॥

पदार्थः-(**इमे**) (**उ**) (**त्वा**) त्वाम् (**पुरुशाक**) बहुशक्ते (**प्रयज्यो**) यो यत्नेन यष्टुं सङ्गन्तुं योग्यस्तत्सम्बुद्धौ (**जरितारः**) विद्यालाभस्तोतारः (**अभि**) (**अर्चन्ति**) सत्कुर्वन्ति (**अर्कैः**) सत्करणैः (**श्रुधी**) शृणु। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**हवम्**) उच्चारितशब्दम् (**आ**) (**हुवतः**) स्तुवतः (**हुवानः**) स्तुवन् (**न**) निषेधे (**त्वावान्**) त्वया सदृशः (**अन्यः**) इतरः (**अमृत**) नाशरहित (**त्वत्**) तव सकाशात् (**अस्ति**)॥१०॥

अन्वयः-हे प्रयज्यो पुरुशाक परमेश्वर! य इमे जरितारोऽर्कैस्त्वाऽभ्यर्चन्ति, हे अमृत! यतस्त्वत् त्वावानन्यो नास्ति स त्वं हुवानस्तान् हुवतो हवमाऽश्रुधी उताननुगृहाण॥१०॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा विद्वांसः परमात्मानं स्तुत्वा प्रार्थ्योपासते तथा यूयमप्युपाध्वं तत्सदृशस्तदधिको वा कोऽपि नास्तीति विजानीत॥१०॥

पदार्थः-हे (**प्रयज्यो**) यत्न से मेल करने को योग्य (**पुरुशाक**) बहुत सामर्थ्य से युक्त परमेश्वर! जो (**इमे**) ये (**जरितारः**) विद्या के लाभ की स्तुति करने वाले जन (**अर्कैः**) सत्कारों से (**त्वा**) आपको (**अभि, अर्चन्ति**) सब ओर से सत्कार करते हैं। हे (**अमृत**) नाशरहित! जिन (**त्वत्**) आप से (**त्वावान्**) आपके सदृश (**अन्यः**) अन्य दूसरा (**न**) नहीं (**अस्ति**) है वह (**हुवानः**) प्रशंसा करते हुए आप उन (**हुवतः**) स्तुति करते हुओं को और (**हवम्**) उच्चारित शब्द को (**आ**) सब प्रकार (**श्रुधि**) सुनिये (**उ**) और उन को स्वीकार करिये॥१०॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे विद्वान् जन परमात्मा की स्तुति और प्रार्थना करके उपासना करते हैं, वैसे आप भी उपासना करो और उसके सदृश वा उससे अधिक कोई भी नहीं है, ऐसा जानो॥१०॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

नू म आ वाचमुप याहि विद्वान् विश्वेभिः सूनो सहसो यजत्रैः।

ये अग्निजिह्वा ऋतसाप आसुर्ये मनुं चक्रुरुपरं दसाय॥११॥

नु। मे। आ। वाचम्। उप। याहि। विद्वान्। विश्वेभिः। सूनो इति। सहसः। यजत्रैः। ये। अग्निऽजिह्वाः। ऋतऽसापः। आसुः। ये। मनुम्। चक्रुः। उपरम्। दसाय॥११॥

पदार्थः-(**नु**) सद्यः (**मे**) मम (**आ**) समन्तात् (**वाचम्**) उपदेशम् (**उप**) (**याहि**) प्राप्नुहि (**विद्वान्**) (**विश्वेभिः**) सर्वैः (**सूनो**) अपत्य (**सहसः**) बलवतः (**यजत्रैः**) सङ्गन्तुमर्हैः (**ये**) (**अग्निजिह्वाः**) अग्निरिव तीव्रा प्रज्वलिता जिह्वा येषां ते (**ऋतसापः**) य ऋतेन सत्येन सपन्ति (**आसुः**) भवन्ति (**ये**) (**मनुम्**) मननशीलं मनुष्यम् (**चक्रुः**) कुर्वन्ति (**उपरम्**) मेघमिव (**दसाय**) शत्रूणामुपक्षयाय॥११॥

अन्वयः-हे सहसः सूनो विद्वांस्त्वं मे वाचमुपाऽऽयाहि येऽग्निजिह्वा ऋतसाप आसुस्तैर्विश्वेभिर्यजत्रैस्सह नु मदीयं वचनमुपायाहि। य उपरमिव दसाय मनुं चक्रुस्तान्त्सदा सत्कुर्याः॥११॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। मनुष्याः सदैव सत्यवादिनो विदुषः सङ्गच्छेरन् प्रतिज्ञया च सत्यमाचरेयुः॥११॥

पदार्थः-हे (**सहसः**) बलवान् के (**सूनो**) सन्तान (**विद्वान्**) विद्यायुक्त जन! आप (**मे**) मेरी (**वाचम्**) वाणी को (**उप, आ, याहि**) अच्छे प्रकार प्राप्त हूजिये और (**ये**) जो (**अग्निजिह्वाः**) अग्नि के समान तीव्र प्रज्वलित जिह्वा जिन की (**ऋतसापः**) सत्य से युक्त होने वाले (**आसुः**) होते हैं जिन (**विश्वेभिः**) सम्पूर्ण (**यजत्रैः**) मिलने योग्यों के साथ (**नु**) शीघ्र मेरे उपदेश को प्राप्त हूजिये और (**ये**) जो (**उपरम्**) मेघ को जैसे वैसे (**दसाय**) शत्रुओं के नाश होने के लिये (**मनुम्**) विचारशील मनुष्य को (**चक्रुः**) करते हैं, उनका सदा सत्कार करिये॥११॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। मनुष्य सदा ही सत्यवादी विद्वानों को उत्तम प्रकार मिलें और प्रतिज्ञा से सत्य का आचरण करें॥११॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

स नो॑ बोधि पुरए॒ता सु॒गेषू॒त दु॒र्गेषु॑ पथि॒कृद्वि॒दा॑नः।

ये अश्र॑मास उ॒रवो॒ वहि॑ष्ठास्तेभि॑र्न इन्द्रा॒भि व॑क्षि॒ वाज॑म्॥१२॥१२॥

सः। नः॒। बो॒धि॒। पु॒रः॒ऽए॒ता। सु॒ऽगेषु॑। उ॒त। दुः॒ऽगेषु॑। प॒थि॒ऽकृत्। वि॒दा॑नः। ये। अश्र॑मासः। उ॒रवः॑। वहि॑ष्ठाः। तेभिः॑। नः॒। इ॒न्द्र॒। अ॒भि। व॒क्षि॒। वाज॑म्॥१२॥

पदार्थः-(**सः**) (**नः**) अस्मानस्माकं वा (**बोधि**) (**पुरएता**) यः पुर एति गच्छति सः (**सुगेषु**) सुगमेषु व्यवहारेषु (**उत**) अपि (**दुर्गेषु**) दुःखेन गन्तुं योग्येषु (**पथिकृत्**) यः पन्थानं करोति (**विदानः**) विजानन् (**ये**) (**अश्रमासः**) श्रमरहिताः (**उरवः**) बहवः (**वहिष्ठाः**) अतिशयेन वोढारः (**तेभिः**) तैः (**नः**) अस्मान् (**इन्द्र**) सुखैश्वर्यप्रापक (**अभि**) (**वक्षि**) प्रापय (**वाजम्**) विज्ञानम्॥१२॥

अन्वयः-हे इन्द्र! स त्वं पुरएता सुगेषूत दुर्गेषु पथिकृद्विदानो नोऽस्मान् बोधि। य अश्रमास उरवो वहिष्ठाः सन्ति तेभिस्सह नो वाजमभि वक्षि॥१२॥

भावार्थः-स एवास्ति विद्वान्त्सर्वेषां मङ्गलकारी यः स्वयं धर्ममार्गं गत्वाऽन्यान् धर्ममार्गगन्तॄन् कुर्यात् यः सदा सत्सङ्गं करोति स एव सर्वेभ्य उत्तमो भूत्वा विज्ञानं दातुमर्हतीति॥१२॥

अत्रेन्द्रविद्वदीश्वरराजगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्येकविंशतितमं सूक्तं द्वादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** सुख और ऐश्वर्य के प्राप्त करानेवाले **(सः)** वह आप **(पुरएता)** अग्रगामी **(सुगेषु)** सुगम व्यवहारों में **(उन)** और **(दुर्गेषु)** दुःख से प्राप्त होने योग्यों में **(पथिकृत्)** मार्ग के करने वाले **(विदानः)** जानते हुए **(नः)** हम लोगों को **(बोधि)** जानें और **(ये)** जो **(अश्रमासः)** थकावट से रहित **(उरवः)** बहुत **(वहिष्ठाः)** अतिशय पहुँचाने वाले हैं **(तेभिः)** उनके साथ **(नः)** हम लोगों के वा हम लोगों के लिये **(वाजम्)** विज्ञान को **(अभि, वक्षि)** प्राप्त कराइये॥१२॥

भावार्थः-वही विद्वान् है जो सबका मङ्गलकारी, स्वयं धर्ममार्ग को प्राप्त होकर औरों को धर्ममार्ग में चलनेवाले करे, जो सदा सत्संग करता है, वही सब से उत्तम होकर विज्ञान देने को योग्य होता है॥१२॥

इस सूक्त में इन्द्र, विद्वान्, ईश्वर और राजा के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह इक्कीसवाँ सूक्त और बारहवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथैकादशर्चस्य द्वाविंशतितमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ७ भुरिक्पङ्क्तिः। ३ स्वराट् पङ्क्तिः। १० पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। २, ४, ५ त्रिष्टुप्। ६, ८ विराट्त्रिष्टुप्। ९, ११ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ मनुष्यैः क उपासनीय इत्याह॥

अब ग्यारह ऋचावाले बाईसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में अब मनुष्यों को किसकी उपासना करनी चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

य एक इद्धव्यश्चर्षणीनामिन्द्रं तं गीर्भिरभ्यर्च आभिः।

यः पत्यते वृषभो वृष्ण्यावान्सत्यः सत्वा पुरुमायः सहस्वान्॥ १॥

यः। एकः। इत्। हव्यः। चर्षणीनाम्। इन्द्रम्। तम्। गीःऽभिः। अभि। अर्चे। आभिः। यः। पत्यते। वृषभः। वृष्ण्यऽवान्। सत्यः। सत्वा। पुरुऽमायः। सहस्वान्॥ १॥

पदार्थः-(**यः**) (**एकः**) (**इत्**) एव (**हव्यः**) स्तोतुमादातुमर्हः (**चर्षणीनाम्**) मनुष्याणाम् (**इन्द्रम्**) परमैश्वर्यप्रदम् (**तम्**) (**गीर्भिः**) (**अभि**) (**अर्चे**) सत्करोमि (**आभिः**) (**यः**) (**पत्यते**) पतिरिवाचरति (**वृषभः**) श्रेष्ठः (**वृष्ण्यावान्**) बलादिबहुप्रिययुक्तः (**सत्यः**) त्रैकाल्याबाध्यः (**सत्वा**) सर्वत्र स्थितः (**पुरुमायः**) बहूनां निर्माता (**सहस्वान्**) अत्यन्तबलयुक्तः॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यश्चर्षणीनामेक इद्धव्योऽस्ति तमिन्द्रमाभिर्गीर्भिरहमभ्यर्चे। यो वृषभो वृष्ण्यावान् सत्यः सत्वा पुरुमायः सहस्वान् पत्यते तमभ्यर्चे तं परमेश्वरं यूयमभ्यर्चत॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्या! योऽद्वितीयः सर्वोत्कृष्टः सच्चिदानन्दस्वरूपो न्यायकारी सर्वस्वामी वर्तते तं विहायाऽन्यस्योपासनं कदापि मा कुरुत॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यः**) जो (**चर्षणीनाम्**) मनुष्यों के मध्य में (**एकः**) अकेला (**इत्**) ही (**हव्यः**) स्तुति करने और ग्रहण करने योग्य है (**तम्**) उस (**इन्द्रम्**) ऐश्वर्य को देने वाले का (**आभिः**) इन (**गीर्भिः**) वाणियों से मैं (**अभि, अर्चे**) सब प्रकार से सत्कार करता हूँ और (**यः**) जो (**वृषभः**) श्रेष्ठ (**वृष्ण्यावान्**) बल आदि बहुत प्रियगुणों से युक्त (**सत्यः**) तीनों कालों में अबाध्य (**सत्वा**) सर्वत्र स्थित (**पुरुमायः**) बहुतों को रचने वाला (**सहस्वान्**) अत्यन्त बल से युक्त हुआ (**पत्यते**) स्वामी के सदृश आचरण करता है, उसका सत्कार करता हूँ, उस परमेश्वर का आप लोग सत्कार करिये॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो अद्वितीय, सब से उत्तम, सच्चिदानन्दस्वरूप, न्यायकारी और सब का स्वामी है, उसका त्याग करके अन्य की उपासना कभी न करो॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

तमु नः पूर्वे पितरो नवग्वाः सप्त विप्रासो अभि वाजयन्तः।

नक्षद्दाभं ततुरिं पर्वतेष्ठामद्रोघवाचं मतिभिः शविष्ठम्॥ २॥

तम्। ऊँ इति। नः। पूर्वे। पितरः। नवऽग्वाः। सप्त। विप्रासः। अभि। वाजयन्तः। नक्षत्ऽदाभम्। ततुरिम्। पर्वतेऽस्थाम्। अद्रोघऽवाचम्। मतिऽभिः। शविष्ठम्॥ २॥

पदार्थः-(**तम्**) (**उ**) (**नः**) अस्माकम् (**पूर्वे**) (**पितरः**) (**नवग्वाः**) नवीनगतयः (**सप्त**) सप्तसङ्ख्याकाः पञ्चप्राणमनोबुद्धयश्चेव (**विप्रासः**) मेधाविनः (**अभि**) आभिमुख्ये (**वाजयन्तः**) ज्ञापयन्तः (**नक्षद्दाभम्**) नक्षतानां प्राप्तानां दोषाणां हिंसितारम् (**ततुरिम्**) दुःखात्तारयितारम् (**पर्वतेष्ठाम्**) पर्वते मेघे स्थितां विद्युतमिव शुद्धस्वरूपम् (**अद्रोघवाचम्**) द्रोहरहिता वाग्यस्य तम् (**मतिभिः**) मननशीलैर्मनुष्यैः (**शविष्ठम्**) अतिशयेन बलयुक्तम्॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यं नक्षद्दाभं ततुरिं पर्वतेष्ठामद्रोघवाचं शविष्ठं परमात्मानं नः पूर्वे नवग्वा विप्रासः सप्तेव पितरोऽभिवाजयन्त उपदिशन्ति तमु यूयमुपाध्वम्। मतिभिरयमेव सेवनीयः॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यूयं, योगिनो यं योगेनोपासते तमेव योगाभ्यासेन ध्यायत॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जिस (**नक्षद्दाभम्**) प्राप्त दोषों के नाश करने और (**ततुरिम्**) दुःख से पार करने वाले (**पर्वतेष्ठाम्**) मेघ में वर्त्तमान बिजुली के समान शुद्धस्वरूप और (**अद्रोघवाचम्**) द्रोहरहित वाणी वाले (**शविष्ठम्**) अत्यन्त बल से युक्त परमात्मा का (**नः**) हम लोगों के (**पूर्वे**) पहिले (**नवग्वाः**) नवीन गमन करने वाले (**विप्रासः**) बुद्धिमान् और (**सप्त**) सात संख्या से युक्त अर्थात् पाँच प्राण और मन बुद्धि इनके सदृश वर्त्तमान (**पितरः**) पितृजन (**अभि**) सम्मुख (**वाजयन्तः**) बुद्धि को देते हुए उपदेश देते हैं (**तम्**) उसकी (**उ**) और आप लोग उपासना करो और (**मतिभिः**) मननशील मनुष्यों से यही सेवा करने योग्य है॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! तुम, जिसकी योगीजन योग से उपासना करते हैं, उसी का योगाभ्यास से ध्यान करो॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तमीमह इन्द्रमस्य रायः पुरुवीरस्य नृवतः पुरुक्षोः।

यो अस्कृधोयुरजरः स्वर्वान् तमा भर हरिवो मादयध्यै॥ ३॥

तम्। ईमहे। इन्द्रम्। अस्य। रायः। पुरुऽवीरस्य। नृऽवतः। पुरुऽक्षोः। यः। अस्कृधोयुः। अजरः। स्वःऽवान्। तम्। आ। भर। हरिऽवः। मादयध्यै॥ ३॥

पदार्थः-(**तम्**) (**ईमहे**) याचामहे (**इन्द्रम्**) परमैश्वर्यप्रदम् (**अस्य**) (**रायः**) धनस्य (**पुरुवीरस्य**) बहुवीरप्रापकस्य (**नृवतः**) प्रशस्ता नरो विद्यन्ते यस्मिंस्तस्य (**पुरुक्षोः**) बहुध्यानयुक्तस्य (**यः**)

(अस्कृधोयु:) अपरिच्छिन्न: **(अजर:)** जरादिरोगरहित: **(स्वर्वान्)** बहु सुखं विद्यते यस्मिन्त्स: **(तम्)** **(आ)** **(भर)** समन्ताद्धर **(हरिव:)** प्रशस्ता हरयो मनुष्या विद्यन्ते यस्य तत्सम्बुद्धौ **(मादयध्यै)** मादयितुमानन्दयितुम्॥३॥

अन्वय:-हे हरिवो विद्वान्! योऽस्कृधोयुरजर: स्वर्वान् वर्त्तते तं मादयध्यै आ भर त्वमस्य पुरुवीरस्य नृवत: पुरुक्षो राय इन्द्रं वयमीमहे॥३॥

भावार्थ:-सर्वे मनुष्या विज्ञानादिप्राप्तये परमात्मानमेव याचन्ताम्॥३॥

पदार्थ:-हे **(हरिव:)** अच्छे मनुष्यों के सहित वर्त्तमान विद्वान्! **(य:)** जो **(अस्कृधोयु:)** व्यापक **(अजर:)** जरा आदि रोग से रहित **(स्वर्वान्)** बहुत सुख विद्यमान जिसमें वह वर्त्तमान है **(तम्)** उसको **(मादयध्यै)** आनन्दित करने के लिये **(आ, भर)** सब प्रकार से धारण करिये और **(त्वम्)** उसको **(अस्य)** इस **(पुरुवीरस्य)** बहुत वीरों को प्राप्त कराने वाले **(नृवत:)** अच्छे मनुष्य विद्यमान जिसमें उस **(पुरुक्षो:)** बहुत ध्यान से युक्त **(राय:)** धन के **(इन्द्रम्)** अत्यन्त ऐश्वर्य के देने वाले को हम लोग **(ईमहे)** याचना करते हैं॥३॥

भावार्थ:-सब मनुष्य विज्ञान आदि की प्राप्ति के लिये परमात्मा से ही याचना करें॥३॥

पुनर्विद्वान् किं कुर्यादित्याह॥

फिर विद्वान् क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

तन्नो वि वोचो यदि ते पुरा चिज्जरितार आनशुः सुम्नमिन्द्र।

कस्ते भाग: किं वयो दुध्र खिद्व: पुरुहूत पुरूवसोऽसुरघ्न:॥४॥

तत्। न:। वि। वोच:। यदि। ते। पुरा। चित्। जरितार:। आनशु:। सुम्नम्। इन्द्र। क:। ते। भाग:। किम्। वय:। दुध्र। खिद्व:। पुरुऽहूत। पुरुवसो इति पुरुऽवसो। असुरऽघ्न:॥४॥

पदार्थ:-**(तत्)** **(न:)** अस्मान् **(वि)** **(वोच:)** अवोचो वदे: **(यदि)** **(ते)** **(पुरा)** **(चित्)** अपि **(जरितार:)** विद्यागुणस्तावका: **(आनशु:)** अश्नन्ति **(सुम्नम्)** सुखम् **(इन्द्र)** विद्योपदेशकर्त्त: **(क:)** **(ते)** तव **(भाग:)** **(किम्)** **(वय:)** जीवनम् **(दुध्र)** दु:खेन धर्तुं योग्य **(खिद्व:)** दीन: **(पुरुहूत)** बहुभि: सत्कृत **(पुरूवसो)** बहुधन **(असुरघ्न:)** दुष्टकर्मकारिणां हन्ता॥४॥

अन्वय:-हे दुध्र पुरुहूत पुरूवसो इन्द्र! यदि त्वं नस्तद्वि वोचो यच्चित्ते पुरा जरितार: सुम्नमानशुस्ते कोऽसुरघ्नो भाग: खिद्व: किं वयोऽस्तीति त्वं वोच:॥४॥

भावार्थ:-हे विद्वन्! त्वया तद्विज्ञानमस्मभ्यं देयं येन विद्वांस आनन्दन्ति॥४॥

पदार्थ:-हे **(दुध्र)** दु:ख से धारण करने योग्य और **(पुरुहूत)** बहुतों से सत्कार किये गये **(पुरूवसो)** बहुत धनों से युक्त **(इन्द्र)** विद्या और गुणों की स्तुति करने वाले! **(यदि)** जो आप **(न:)** हम लोगों के लिये **(तत्)** उसको **(वि, वोच:)** विशेष कहिये जिसको **(चित्)** निश्चित **(ते)** आपके **(पुरा)** पहिले भी **(जरितार:)** विद्या और गुणों की स्तुति करने वाले **(सुम्नम्)** सुख का **(आनशु:)** भोग करते हैं

(ते) आपका **(कः)** कौन **(असुरघ्नः)** दुष्ट कर्मकारियों का नाश करने वाला **(भागः)** अंश **(खिद्वः)** दीन और **(किम्)** कौन **(वयः)** जीवन है, इसको आप कहिये॥४॥

भावार्थः-हे विद्वन्! आपको वह विज्ञान हम लोगों के लिये देने योग्य है, जिससे विद्वान् जन आनन्द करते हैं॥४॥

पुनः स्त्री कीदृशं पतिं गृह्णीयादित्याह॥

फिर स्त्री कैसे पति का ग्रहण करे, इस विषय को कहते हैं॥

तं पृच्छन्ती वज्रहस्तं रथेष्ठामिन्द्रं वेपी वक्वरी यस्य नू गीः।
तुविग्राभं तुविकूर्मिं रभोदां गातुमिषे नक्षते तुम्रमच्छ॥५॥ १३॥

तम्। पृच्छन्ती। वज्रऽहस्तम्। रथेऽस्थाम्। इन्द्रम्। वेपी। वक्वरी। यस्य। नु। गीः। तुविऽग्राभम्। रभःऽदाम्। गातुम्। इषे। नक्षते। तुम्रम्। अच्छ॥५॥

पदार्थः-**(तम्)** **(पृच्छन्ती)** **(वज्रहस्तम्)** शस्त्राऽस्त्रपाणिम् **(रथेष्ठाम्)** रथे तिष्ठन्तम् **(इन्द्रम्)** परमैश्वर्यवन्तं पुरुषम् **(वेपी)** धीमती **(वक्वरी)** वचशक्तिमती **(यस्य)** **(नू)** **(गीः)** वाक् **(तुविग्राभम्)** बहूनां ग्रहीतारम् **(तुविकूर्मिम्)** बहुकर्माणम् **(रभोदाम्)** वेगयुक्तबलस्य दातारम् **(गातुम्)** भूमिम् **(इषे)** अन्नाद्याय **(नक्षते)** प्राप्नोति। **नक्षतिर्गतिकर्मा।** (निघं०२.१४) **(तुम्रम्)** ग्लातारम् **(अच्छ)**॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यस्येषे गीस्तुविग्राभं तुविकूर्मिं रभोदां तुम्रं गातुमच्छा नक्षते तं वज्रहस्तं रथेष्ठामिन्द्रं पृच्छन्ती वेपी वक्वरी नू स्यात्तं वयमप्याश्रयेम॥५॥

भावार्थः-कन्यया सर्वा वार्ताः पृष्ट्वा हृद्यः पतिः स्वीकर्त्तव्यः॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यस्य)** जिसके **(इषे)** अन्न आदि के लिये **(गीः)** वाणी **(तुविग्राभम्)** बहुतों को ग्रहण करने **(तुविकूर्मिम्)** बहुत कार्यों के करने और **(रभोदाम्)** वेग से युक्त बल के देनेवाले **(तुम्रम्)** ग्लानि से युक्त जन को और **(गातुम्)** भूमि को **(अच्छ)** अच्छे प्रकार **(नक्षते)** प्राप्त होती है **(तम्)** उस **(वज्रहस्तम्)** शस्त्र और अस्त्रों से युक्त हाथों वाले **(रथेष्ठाम्)** रथ में स्थित होते हुए **(इन्द्रम्)** अत्यन्त ऐश्वर्य्यवान् पुरुष को **(पृच्छन्ती)** पूँछती हुई **(वेपी)** बुद्धिवाली और **(वक्वरी)** वचन-शक्ति वाली स्त्री **(नू)** निश्चय होवे, उसका हम लोग भी आश्रयण करें॥५॥

भावार्थः-कन्या को चाहिये कि सब बातों को पूँछ कर हृदयप्रिय पति को स्वीकार करे॥५॥

पुनर्दम्पती परस्परं कथं वर्तेयातामित्याह॥

फिर स्त्री और पुरुष परस्पर कैसे वर्ताव करें, इस विषय को कहते हैं॥

अया ह त्यं मायया वावृधानं मनोजुवा स्वतवः पर्वतेन।
अच्युता चिद्वीळिता स्वोजो रुजो वि दृळ्हा धृषता विरप्शिन्॥६॥

अया। ह। त्यम्। मायया। वावृधानम्। मनःऽजुवा। स्वऽतवः। पर्वतेन। अच्युता। चित्। वीळिता। सुऽओजः। रुजः। वि। दृळ्हा। धृषता। विऽरप्शिन्॥६॥

पदार्थः-(**अया**) अनया (**ह**) किल (**त्यम्**) तं पतिम् (**मायया**) प्रज्ञया (**वावृधानम्**) वर्धमानम् (**मनोजुवा**) मनोवद्वेगेन (**स्वतवः**) स्वकीयं तवो बलं यस्य तत्सम्बुद्धौ (**पर्वतेन**) मेघेन (**अच्युता**) अविनाशिना (**चित्**) अपि (**वीळिता**) स्तुतानि (**स्वोजः**) सुष्ठु पराक्रमो यस्य तत्सम्बुद्धौ (**रुजः**) रोगान् (**वि**) (**दृळ्हा**) दृढानि (**धृषता**) प्रागल्भेन (**विरप्शिन्**) महागुणयुक्त॥६॥

अन्वयः-हे स्वतवो विरप्शिन् स्वोज इन्द्र! त्वमया माययेवं स्त्रिया रमस्व सा वावृधानं त्यं प्राप्य मनोजुवा पर्वतेन विद्युदिव रमताम्। द्वौ धृषता रुजो हत्वा हाऽच्युता वीळिता वि दृळ्हा चित्कर्माणि कुरुताम्॥६॥

भावार्थः-हे स्त्रीपुरुषौ! द्वौ प्रेम्णा मिलित्वा गृहाश्रमकृत्येषु हर्षेण रोगनिवारणेन प्रीत्या सङ्गत्य सुसन्तानाञ्जनयेताम्॥६॥

पदार्थः-हे (**स्वतवः**) अपना बल जिसके ऐसे (**विरप्शिन्**) महागुणों से युक्त (**स्वोजः**) उत्तम पराक्रमयुक्त प्रतापी आप (**अया**) इस (**मायया**) बुद्धि से जैसे वैसे स्त्री से रमण करिये वह स्त्री (**वावृधानम्**) बढ़े हुए (**त्यम्**) उस पति को प्राप्त होकर (**मनोजुवा**) मन के सदृश वेगयुक्त (**पर्वतेन**) मेघ से बिजुली जैसे वैसे रमण करे और ये दोनों (**धृषता**) ढीठपन से (**रुजः**) रोगों का नाश करके (**ह**) निश्चय से युक्त (**अच्युता**) अविनाशी से (**वीळिता**) स्तुतिरूप (**वि**) विशेष करके (**दृळ्हा**) दृढ़ (**चिद्**) भी कर्म्मों को करें॥६॥

भावार्थः-हे स्त्री पुरुषो! आप दोनों प्रेम से मिल के गृहाश्रम के कृत्यों में हर्ष से रोग निवृत्ति तथा प्रीति से मेल करके सन्तानों को उत्पन्न करो॥६॥

पुनर्मनुष्यैः को नित्यं ध्येय इत्याह॥

फिर मनुष्यों को किसका नित्य ध्यान करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

तं वो धिया नव्यस्या शविष्ठं प्रत्नं प्रत्नवत् परितंसयध्यै।

स नो वक्षदनिमानः सुवह्मेन्द्रो विश्वान्यति दुर्गहाणि॥७॥

तम्। वः। धिया। नव्यस्या। शविष्ठम्। प्रत्नम्। प्रत्नऽवत्। परिऽतंसयध्यै। सः। नः। वक्षत्। अनिऽमानः। सुऽवह्मा। इन्द्रः। विश्वानि। अति। दुःऽगहानि॥७॥

पदार्थः-(**तम्**) (**वः**) युष्मान् (**धिया**) प्रज्ञया कर्मणा वा (**नव्यस्या**) अतिशयेन नूतनया (**शविष्ठम्**) अतिशयेन बलिष्ठम् (**प्रत्नम्**) पुरातनम् (**प्रत्नवत्**) प्राचीनवत् (**परितंसयध्यै**) सर्वतः भूषयितुम् (**सः**) (**नः**) अस्मान् (**वक्षत्**) वहत् प्रापयेत् (**अनिमानः**) अपरिमाणः (**सुवह्मा**) सुष्ठु वोढा (**इन्द्रः**) परमैश्वर्यवान् (**विश्वानि**) सर्वाणि (**अति**) (**दुर्गहाणि**) यानि दुर्गाणि दुःखेन गन्तुं योग्यानि घ्नन्ति तानि धर्म्याणि कर्माणि॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्या! योऽनिमानः सुवह्नेन्द्रो जगदीश्वरो नव्यस्या धिया वो नोऽस्मान् विश्वानि दुर्गहाणि परितंसयध्यै अति वक्षत्तं शविष्ठं प्रत्नं प्रत्नवन्मत्वा वयं सेवेमहि स चाऽस्माकं गुरुः स्यात्॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यः परमात्मा सर्वेषामस्माकं सर्वाणि दुःखानि प्रज्ञादानेन निवार्य्याऽधर्माचरणात् सङ्कोचयति तं परमात्मानमात्मना सततं ध्यायत॥७॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(अनिमानः)** परिमाण से रहित **(सुवह्ना)** उत्तम प्रकार चलाने वाला **(इन्द्रः)** अत्यन्त ऐश्वर्य से युक्त जगदीश्वर **(नव्यस्या)** अतिशय नवीन **(धिया)** बुद्धि वा कर्म से **(वः)** आप लोगों और **(नः)** हम लोगों के लिये **(विश्वानि)** सम्पूर्ण **(दुर्गहाणि)** दुःख से प्राप्त होने योग्यों को नाश करने वाले धर्मयुक्त कर्मों को **(परितंसयध्यै)** चारों ओर से सुशोभा करने के लिये **(अति, वक्षत्)** अत्यन्त प्राप्त करावे **(तम्)** उस **(शविष्ठम्)** अत्यन्त बलवान् **(प्रत्नम्)** पुरातन को **(प्रत्नवत्)** प्राचीन के सदृश मान कर हम लोग सेवा करें और **(सः)** वह भी हम लोग का गुरु हो॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो परमात्मा हम सब लोगों के सम्पूर्ण दुःखों को बुद्धिदान से दूर करके अधर्माचरण से संकोचित करता है, उस परमात्मा का आत्मा से निरन्तर ध्यान करो॥७॥

पुनर्विद्वद्भिः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर विद्वान् जनों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

आ जनाय दुह्वणे पार्थिवानि दिव्यानि दीपयोऽन्तरिक्षा।
तपा वृषन् विश्वतः शोचिषा तान् ब्रह्मद्विषे शोचय क्षामपश्च॥८॥

आ। जनाय। दुह्वणे। पार्थिवानि। दिव्यानि। दीपयः। अन्तरिक्षा। तप। वृषन्। विश्वतः। शोचिषा। तान्। ब्रह्मऽद्विषे। शोचय। क्षाम्। अपः। च॥८॥

पदार्थः-**(आ)** **(जनाय)** **(दुह्वणे)** द्रोग्ध्रे **(पार्थिवानि)** पृथिव्यां भवानि **(दिव्यानि)** दिव्यगुणकर्मस्वभावानि वस्तूनि **(दीपयः)** प्रकाशय **(अन्तरिक्षा)** अन्तरिक्षेण सहचराणि **(तपा)** अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(वृषन्)** बलिष्ठ **(विश्वतः)** सर्वतः **(शोचिषा)** प्रकाशेन **(तान्)** **(ब्रह्मद्विषे)** यो ब्रह्मेश्वरं वेदं वा द्वेष्टि तस्मै **(शोचय)** शोकं प्रापय **(क्षाम्)** पृथिवीम् **(अपः)** जलानि **(च)**॥८॥

अन्वयः-हे वृषन् विद्वन्! त्वं शोचिषा विश्वतो दिव्यान्यन्तरिक्षा पार्थिवान्याऽऽदीपयः। ब्रह्मद्विषे दुह्वणे जनाय विश्वतस्तपा, ये सज्जनान् परितापयन्ति ताञ्छोचय क्षामपश्च दीपयः॥८॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! यूयं पृथिव्यादीन् पदार्थान् विदित्वाऽन्यान् वेदयत। दुष्टाञ्जनानुपदेशेन पवित्रीकुरुत॥८॥

पदार्थः-हे **(वृषन्)** बलिष्ठ विद्वन्! आप **(शोचिषा)** प्रकाश से **(विश्वतः)** सब ओर से **(दिव्यानि)** श्रेष्ठ गुण, कर्म और स्वभाव वाले वस्तुओं **(अन्तरिक्षा)** अन्तरिक्ष के सहचारी **(पार्थिवानि)** पृथिवी में हुए पदार्थों को **(आ, दीपयः)** सब प्रकार से प्रकाशित कीजिये और **(ब्रह्मद्विषे)** ईश्वर वा वेद से द्वेष करने

वाले और **(द्रुह्वणे)** द्रोह करने वाले **(जनाय)** जन के लिये सब प्रकार से **(तपा)** सन्ताप करिये और जो सज्जनों को सन्तापयुक्त करते हैं **(तान्)** उनको **(शोचय)** शोक कराइये तथा **(क्षाम्)** पृथिवी को **(अपः, च)** और जलों को प्रकाशित करिये॥८॥

भावार्थः-हे विद्वान् जनो! आप लोग पृथिवी आदि पदार्थों को जानकर अन्यों को जनाइये और दुष्ट जनों को उपदेश से पवित्र करिये॥८॥

पुनः स राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

भुवो जनस्य दिव्यस्य राजा पार्थिवस्य जगतस्त्वेषसंदृक्।
धिष्व वज्रं दक्षिण इन्द्र हस्ते विश्वा अजुर्य दयसे वि मायाः॥९॥

भुवः। जनस्य। दिव्यस्य। राजा। पार्थिवस्य। जगतः। त्वेषऽसंदृक्। धिष्व। वज्रम्। दक्षिणे। इन्द्र। हस्ते। विश्वाः। अजुर्य। दयसे। वि। मायाः॥९॥

पदार्थः-**(भुवः)** पृथिव्याः **(जनस्य)** मनुष्यस्य **(दिव्यस्य)** शुद्धस्य कमनीयस्य **(राजा)** **(पार्थिवस्य)** पृथिव्यां भवस्य **(जगतः)** संसारस्य **(त्वेषसंदृक्)** यस्त्वेषं न्यायप्रकाशं सम्पश्यति दर्शयति वा **(धिष्व)** धर **(वज्रम्)** शस्त्रास्त्रम् **(दक्षिणे)** **(इन्द्र)** परमैश्वर्यप्रद **(हस्ते)** **(विश्वाः)** समग्राः **(अजुर्य)** अजीर्ण **(दयसे)** देहि **(वि)** **(मायाः)** प्रज्ञाः॥९॥

अन्वयः-हे अजुर्येन्द्र! राजा त्वं भुवः पार्थिवस्य जगतो दिव्यस्य जनस्य त्वेषसन्दृक् सन् दक्षिणे हस्ते वज्रं धिष्व। विश्वा माया वि दयसे॥९॥

भावार्थः-स एव राजोत्तमोऽस्ति यो न्यायशीलो धार्मिको जितेन्द्रियो भूत्वा सर्वं जगत् पितृवत्सम्पाल्य समग्रा विद्याः प्रददाति॥९॥

पदार्थः-हे **(अजुर्य)** जीर्ण अवस्था से रहित **(इन्द्र)** अत्यन्त ऐश्वर्य के देने वाले **(राजा)** प्रकाशमान आप **(भुवः)** पृथिवी और **(पार्थिवस्य)** पृथिवी में हुए **(जगतः)** संसार और **(दिव्यस्य)** शुद्ध कामना करने योग्य सुन्दर **(जनस्य)** मनुष्य के **(त्वेषसन्दृक्)** न्यायप्रकाश को देखने वाले होते हुए **(दक्षिणे)** दाहिने **(हस्ते)** हाथ में **(वज्रम्)** शस्त्र और अस्त्र को **(धिष्व)** धारण करिये और **(विश्वाः)** सम्पूर्ण **(मायाः)** बुद्धियों को **(वि, दयसे)** विशेष करके दीजिये॥९॥

भावार्थः-वही राजा उत्तम है जो न्यायशील, धार्मिक, जितेन्द्रिय होकर सम्पूर्ण जगत् का पिता के समान पालन करके सम्पूर्ण विद्याओं को अच्छे प्रकार देता है॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

आ संयतमिन्द्र णः स्वस्तिं शत्रुतूर्याय बृहतीममृध्राम्।

यया दासान्यार्याणि वृत्राकरो वज्रिन्त्सुतका नाहुषाणि॥ १०॥

आ। सम्ऽयतम्। इन्द्र। नः। स्वस्तिम्। शत्रुऽतूर्याय। बृहतीम्। अमृध्राम्। यया। दासानि। आर्याणि। वृत्रा। करः। वज्रिन्। सुऽतुका। नाहुषाणि॥ १०॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**संयतम्**) कृतसंयमम् (**इन्द्र**) परमैश्वर्यकारक (**नः**) अस्मभ्यम् (**स्वस्तिम्**) सुखम् (**शत्रुतूर्याय**) शत्रूणां हिंसनाय (**बृहतीम्**) महतीम् (**अमृध्राम्**) अहिंसिकाम् (**यया**) (**दासानि**) दासकुलानि (**आर्याणि**) द्विजकुलानि (**वृत्रा**) धनानि (**करः**) करोषि (**वज्रिन्**) शस्त्रास्त्रभृत् (**सुतुका**) सुष्ठु वर्धकानि (**नाहुषाणि**) मनुष्यसम्बन्धीनि॥ १०॥

अन्वयः-हे वज्रिन्निन्द्र! त्वं यया दासान्यार्याणि सुतुका नाहुषाणि वृत्राऽऽकरस्तामममृध्रां बृहतीं सेनां शत्रुतूर्याय कुर्यास्तया नः संयतं स्वस्तिं कुर्याः॥ १०॥

भावार्थः-हे राजंस्त्वं सत्यविद्यादानोपदेशाभ्यां शूद्रकुलोत्पन्नानपि द्विजान् कुर्याः सर्वत ऐश्वर्यं प्रापय्य शत्रून्निवार्य सुखं वर्धय॥ १०॥

पदार्थः-हे (**वज्रिन्**) शस्त्र और अस्त्र के धारण करने वाले (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य के करने वाले! आप (**यया**) जिससे (**दासानि**) शूद्र के कुलों को (**आर्याणि**) द्विजकुल और (**सुतुका**) उत्तम प्रकार बढ़ने वाले (**नाहुषाणि**) मनुष्यसम्बन्धी (**वृत्रा**) धनों को (**आ**) सब प्रकार (**करः**) करती हैं उस (**अमृध्राम्**) नहीं हिंसा करने वाली (**बृहतीम्**) बड़ी सेना को (**शत्रुतूर्याय**) शत्रुओं के नाश के लिये करिये और उससे (**नः**) हम लोगों के लिये (**संयतम्**) किया है संयम जिसके निमित्त उस (**स्वस्तिम्**) सुख को करिये॥ १०॥

भावार्थः-हे राजन्! आप सत्यविद्या के दान और उपदेश से शूद्र के कुल में उत्पन्न हुओं को भी द्विज करिये और सब प्रकार से ऐश्वर्य को प्राप्त कराय तथा शत्रुओं का निवारण करके सुख की वृद्धि कीजिये॥ १०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

स नो नियुद्भिः पुरुहूत वेधो विश्ववाराभिरा गहि प्रयज्यो।
न या अदेवो वरते न देव आभिर्याहि तूयमा मद्र्यद्रिक्॥ ११॥ १४॥

सः। नः। नियुत्ऽभिः। पुरुऽहूत। वेधः। विश्वऽवाराभिः। आ। गहि। प्रयज्यो इति प्रऽयज्यो। न। याः। अदेवः। वरते। न। देवः। आ। आभिः। याहि। तूयम्। आ। मद्र्यद्रिक्॥ ११॥

पदार्थः-(**सः**) (**नः**) अस्मान् (**नियुद्भिः**) निश्चिद्गतिभिरश्वैरिव (**पुरुहूत**) बहुभिः पूजित (**वेधः**) मेधाविन् (**विश्ववाराभिः**) सर्वैः स्वीकरणीयाभिर्गतिभिः (**आ**) (**गहि**) आगच्छ (**प्रयज्यो**) प्रकर्षेण

यज्ञकर्त्त: **(न)** निषेधे **(या:)** **(अदेव:)** अविद्वान् **(वरते)** स्वीकरोति **(न)** **(देव:)** विद्वान् **(आ)** **(आभि:)** **(याहि)** **(तूयम्)** तूर्णम् **(आ)** **(मद्र्याद्रिक्)** मदभिमुख:॥११॥

अन्वय:-हे प्रयज्यो पुरुहूत वेध:! स त्वं देवो न विश्ववाराभिराभिर्नियुद्भिर्न आ गहि या रीतिरदेवो नाऽऽवरते मद्र्यद्रिक् सँस त्वं तूयमायाहि॥११॥

भावार्थ:-या रीतिर्विदुषां भवति तामविद्वांसो न स्वीकुर्वन्ति तस्माद्विदुषामविदुषां च पृथक् प्रस्थानमस्तीति वेद्यम्॥११॥

अत्रेन्द्रविद्वदीश्वरराजप्रजाधर्मवर्णनादेतर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति द्वाविंशतितमं सूक्तं चतुर्दशो वर्गश्च समाप्त:॥

पदार्थ:-हे **(प्रयज्यो)** अत्यन्त यज्ञ करने वाले **(पुरुहूत)** बहुतों से आदर किये गये **(वेध:)** बुद्धियुक्त **(स:)** वह आप **(देव:)** विद्वान् के **(न)** समान **(विश्ववाराभि:)** सब से स्वीकार करने योग्य गमनों से और **(आभि:)** इन **(नियुद्भि:)** निश्चित गमनवाले घोड़ों से जैसे वैसे **(न:)** हम लोगों को **(आ, गहि)** प्राप्त हूजिये और **(या:)** जिन रीतियों को **(अदेव:)** विद्वान् जन से भिन्न **(न)** नहीं **(आ, वरते)** अच्छे प्रकार स्वीकार करता है **(मद्र्यद्रिक्)** मेरे सन्मुख हुए आप **(तूयम्)** शीघ्र **(आ, याहि)** प्राप्त हूजिये॥११॥

भावार्थ:-जो रीति विद्वानों की है उसको अविद्वान् जन नहीं स्वीकार करते हैं, इससे विद्वानों और अविद्वानों का पृथक् प्रस्थान है, यह जानना चाहिये॥११॥

इस सूक्त में इन्द्र, विद्वान्, ईश्वर, राजा और प्रजा के धर्म का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह बाईसवाँ सूक्त और चौदहवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ दशर्चस्य त्रयोविंशतितमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ३, ८, ९ निचृत्त्रिष्टुप्। ५, ६, १० त्रिष्टुप्। ७ विराट्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २, ४ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथेन्द्रविषयमाह॥

अब दश ऋचावाले तेईसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में इन्द्रविषय को कहते हैं॥

सुत इत्त्वं निमिश्ल इन्द्र सोमे स्तोमे ब्रह्मणि शस्यमान उक्थे।
यद्वा युक्ताभ्यां मघवन् हरिभ्यां बिभ्रद्वज्रं बाह्वोरिन्द्र यासि॥ १॥

सुते। इत्। त्वम्। निऽमिश्लः। इन्द्र। सोमे। स्तोमे। ब्रह्मणि। शस्यमाने। उक्थे। यत्। वा। युक्ताभ्याम्। मघऽवन्। हरिऽभ्याम्। बिभ्रत्। वज्रम्। बाह्वोः। इन्द्र। यासि॥ १॥

पदार्थः-(**सुते**) निष्पन्ने (**इत्**) एव (**त्वम्**) (**निमिश्लः**) नितरां मिश्रः (**इन्द्र**) शत्रुविदारक (**सोमे**) ऐश्वर्ये (**स्तोमे**) प्रशंसायाम् (**ब्रह्मणि**) धने (**शस्यमाने**) प्रशंसनीये (**उक्थे**) श्रोतुं वक्तुमर्हे वा (**यत्**) यः (**वा**) (**युक्ताभ्याम्**) (**मघवन्**) बहुधनयुक्त (**हरिभ्याम्**) हरणशीलाभ्यां मनुष्याभ्याम् (**बिभ्रत्**) धरन् (**वज्रम्**) (**बाह्वोः**) भुजयोः (**इन्द्र**) परमैश्वर्यप्रद (**यासि**) गच्छसि॥ १॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यस्त्वं स्तोमे ब्रह्मणि निमिश्लः सोमे सुते शस्यमान उक्थे युक्ताभ्यां हरिभ्यां बाह्वोर्वज्रं बिभ्रद् यासि यद्वा हे मघवन्निन्द्र! त्वमायासि स त्वमित् सत्कर्त्तव्योऽसि॥ १॥

भावार्थः-ये राजानोऽप्रमाद्यन्तः पितृवत्प्रजाः पालयन्तः शस्त्रभृतः सन्तो दुष्टान्निवारयन्तः सन्ति तेषां राज्यं स्थिरं भवति॥ १॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) शत्रुओं के नाशक! जो (**त्वम्**) आप (**स्तोमे**) प्रशंसा के निमित्त (**ब्रह्मणि**) धन में (**निमिश्लः**) अत्यन्त मिले हुए (**सोमे**) ऐश्वर्य के (**सुते**) उत्पन्न होने पर (**शस्यमाने**) प्रशंसा करने योग्य और (**उक्थे**) सुनने वा कहने योग्य में (**युक्ताभ्याम्**) जुड़े हुए (**हरिभ्याम्**) हरणशील मनुष्यों से (**बाह्वोः**) भुजाओं में (**वज्रम्**) वज्र को (**बिभ्रत्**) धारण करते हुए (**यासि**) जाते हो और (**यत्**) जो (**वा**) वा हे (**मघवन्**) बहुत धनों से युक्त (**इन्द्र**) परमश्वर्य्यप्रद! आप प्राप्त होते हैं, वह आप (**इत्**) ही सत्कार करने योग्य हैं॥ १॥

भावार्थः-जो राजा नहीं प्रमाद करते, पिता के सदृश प्रजाओं का पालन करते और शस्त्रों को धारण करते हुए तथा दुष्टों का निवारण करते हुए हैं, उनका राज्य स्थिर होता है॥ १॥

पुनः स राजा किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

यद्वा दिवि पार्ये सुष्विमिन्द्र वृत्रहत्येऽवसि शूरसातौ।

यद्वा दक्षस्य बिभ्युषो अबिभ्यदरन्धयः शर्धत इन्द्र दस्यून्॥ २॥

यत्। वा। दिवि। पार्ये। सुस्विम्। इन्द्र। वृत्रऽहत्ये। अवसि। शूरऽसातौ। यत्। वा। दक्षस्य। बिभ्युषः। अबिभ्यत्। अरन्धयः। शर्धतः। इन्द्र। दस्यून्॥ २॥

पदार्थः-**(यत्)** **(वा)** विकल्पे **(दिवि)** कमनीये **(पार्ये)** पारभवे **(सुष्विम्)** सुष्ठु स्रोतारम् **(इन्द्र)** दुष्टविदारक **(वृत्रहत्ये)** मेघस्य हननमिव **(अवसि)** रक्षसि **(शूरसातौ)** शूरैर्विभक्तव्ये स- ग्रामे **(यत्)** यः **(वा)** **(दक्षस्य)** बलयुक्तस्य **(बिभ्युषः)** यो बिभेति तस्य **(अबिभ्यत्)** बिभेति **(अरन्धयः)** हिंसय **(शर्धतः)** बलतः **(इन्द्र)** **(दस्यून्)** बलात् परस्वाऽऽदातॄन्॥ २॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यद्यस्त्वं पार्ये दिवि वृत्रहत्ये वा शूरसातौ सुष्विमवसि यद्यो वा भवान् दक्षस्य बिभ्युषोऽबिभ्यत् स त्वं हे इन्द्र! शर्धतो दस्यूनरन्धयः॥ २॥

भावार्थः-स एव राजा भवितुमर्हेद्यो युद्धे स्वसेनां संरक्षेच्छत्रूंस्तेनांश्च हन्यात्॥ २॥

पदार्थः–हे **(इन्द्र)** दुष्ट जनों के नाश करने वाले **(यत्)** जो आप **(पार्ये)** पार में हुए **(दिवि)** कामना करने योग्य के निमित्त **(वृत्रहत्ये)** मेघ के हनन **(वा)** वा **(शूरसातौ)** शूर जनों से विभाग करने योग्य संग्राम में **(सुष्विम्)** उत्तम प्रकार उत्पन्न करने वाले की **(अवसि)** रक्षा करते हो और **(यत्)** जो **(वा)** वा आप **(दक्षस्य)** बली **(बिभ्युषः)** भय करने वाले का **(अबिभ्यत्)** भय करते हैं वह आप हे **(इन्द्र)** प्रतापी जन **(शर्धतः)** बलयुक्त से **(दस्यून्)** हठ से दूसरे के पदार्थ ग्रहण करने वालों का **(अरन्धयः)** नाश करिये॥ २॥

भावार्थः-वही राजा होने को योग्य होवे कि जो युद्ध में अपनी सेना की रक्षा करे और शत्रु तथा चोरों का नाश करे॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

पाता सुतमिन्द्रो अस्तु सोमं प्रणेनीरुग्रो जरितारमूती।
कर्ता वीराय सुष्वय उ लोकं दाता वसु स्तुवते कीरये चित्॥ ३॥

पाता। सुतम्। इन्द्रः। अस्तु। सोमम्। प्रऽनेनीः। उग्रः। जरितारम्। ऊती। कर्ता। वीराय। सुस्वये। ऊँ इति। लोकम्। दाता। वसु। स्तुवते। कीरये। चित्॥ ३॥

पदार्थः-**(पाता)** रक्षकः **(सुतम्)** निष्पादितम् **(इन्द्रः)** ऐश्वर्यकारी राजा **(अस्तु)** **(सोमम्)** सोमलताद्योषध्यादिरसम् **(प्रणेनीः)** प्रकर्षेण न्यायकृत् **(उग्रः)** तेजस्वी **(जरितारम्)** स्तोतारम् **(ऊती)** ऊत्या रक्षणादिक्रियया **(कर्त्ता)** **(वीराय)** **(सुष्वये)** सुष्ठ्वभिषोत्रे **(उ)** **(लोकम्)** **(दाता)** **(वसु)** **(स्तुवते)** **(कीरये)** स्तावकाय **(चित्)** अपि॥ ३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! य ऊती प्रणेनीः पातोग्र इन्द्रस्सुतं सोमं जरितारं करोति स नो राजास्तु। य उ वीराय सुष्वये स्तुवते कीरये दाता कर्त्ता लोकं वसु चित् करोति सोऽस्माकमधिष्ठाताऽस्तु॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! तमेव राजानं मन्यध्वं यः सर्वशास्त्रावित् पुरुषार्थी धार्मिको जितेन्द्रियो भवेत्॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(ऊती)** रक्षण आदि क्रिया से **(प्रणेनीः)** अत्यन्त न्याय करने और **(पाता)** रक्षा करने वाला **(उग्रः)** तेजस्वी **(इन्द्रः)** ऐश्वर्यकारी राजा **(सुतम्)** उत्पन्न किये गये **(सोमम्)** सोमलता आदि ओषधियों के रस को और **(जरितारम्)** स्तुति करने वाले को करता है, वह हम लोगों का राजा हो और जो **(उ)** तर्क-वितर्क से **(वीराय)** पराक्रमयुक्त **(सुष्वये)** उत्तम प्रकार अच्छे पदार्थों के उत्पन्न करने वाले **(स्तुवते)** स्तुति करते हुए **(कीरये)** स्तुति करनेवाले के लिये **(दाता)** दाता और **(कर्ता)** कार्य करने वाला **(लोकम्)** लोक को **(वसु)** और धन को **(चित्)** भी करता है, वह हम लोगों का अग्रणी **(अस्तु)** हो॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! उसी को राजा मानो, जो सम्पूर्ण शास्त्रों का जानने वाला, पुरुषार्थी, धार्मिक और इन्द्रियों को वश में रखने वाला होवे॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

गन्तेयान्ति सवना हरिभ्यां बभ्रिर्वज्रं पपिः सोमं ददिर्गाः।

कर्ता वीरं नर्यं सर्ववीरं श्रोता हवं गृणतः स्तोमवाहाः॥४॥

गन्ता। इयन्ति। सवना। हरिऽभ्याम्। बभ्रिः। वज्रम्। पपिः। सोमम्। ददिः। गाः। कर्ता। वीरम्। नर्यम्। सर्वऽवीरम्। श्रोता। हवम्। गृणतः। स्तोमऽवाहाः॥४॥

पदार्थः-**(गन्ता)** **(इयान्ति)** एतावन्ति। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(सवना)** सवनान्यैश्वर्यकारकाणि कर्माणि **(हरिभ्याम्)** अध्यापकोपदेशकाभ्यां मनुष्याभ्यां सह **(बभ्रिः)** भर्त्ता धर्त्ता वा **(वज्रम्)** **(पपिः)** पाता **(सोमम्)** **(ददिः)** दाता **(गाः)** **(कर्त्ता)** **(वीरम्)** **(नर्यम्)** नृषु श्रेष्ठम् **(सर्ववीरम्)** सर्वे वीरा यस्मात्तम् **(श्रोता)** **(हवम्)** प्रशंसनीयम् **(गृणतः)** स्तुवतः **(स्तोमवाहाः)** ये स्तोमान् वहन्ति॥४॥

अन्वयः-हे स्तोमवाहा मनुष्या! यो हरिभ्यामियान्ति सवना गन्ता वज्रं बभ्रिः सोमं पपिर्गा ददिर्गृणतो हवं श्रोता सर्ववीरं नर्यं वीरं कर्त्ता भवेत्तं राजानं मन्यध्वम्॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यः सर्वेषु राजकर्मसु कुशलः स्यात्तं नृपं कृत्वा न्यायेन राज्यं पालयत॥४॥

पदार्थः-हे **(स्तोमवाहाः)** समूहों को धारण करने वाले मनुष्यो! जो **(हरिभ्याम्)** अध्यापक और उपदेशक मनुष्यों के साथ **(इयान्ति)** इतने **(सवना)** ऐश्वर्यकारक कर्म्मों को **(गन्ता)** प्राप्त होने वाला **(वज्रम्)** अस्त्रविशेष को **(बभ्रिः)** पुष्ट करने वा धारण करने तथा **(सोमम्)** सोमलता के रस का **(पपिः)**

पान करने और **(गाः)** गौओं को **(ददिः)** देने वाला **(गृणतः)** स्तुति करते हुओं को और **(हवम्)** प्रशंसा करने योग्य को **(श्रोता)** सुनने वाला **(सर्ववीरम्)** सम्पूर्ण वीर जिससे उस **(नर्यम्)** मनुष्यों में श्रेष्ठ **(वीरम्)** वीरजन को **(कर्त्ता)** करने वाला होवे, उसको राजा मानो॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो सम्पूर्ण राजकर्मों में निपुण हो, उसको राजा करके न्याय से राज्य का पालन करो॥४॥

पुनर्मनुष्यैः परस्परं कथं वर्त्तितव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को परस्पर कैसा वर्त्ताव करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

अस्मै वयं यद्वावान तद्विविष्म इन्द्राय यो नः प्रदिवो अपस्कः।
सुते सोमे स्तुमसि शंसदुक्थेन्द्राय ब्रह्म वर्धनं यथासत्॥५॥ १५॥

अस्मै। वयम्। यत्। ववान। तत्। विविष्मः। इन्द्राय। यः। नः। प्रऽदिवः। अपः। करिति कः। सुते। सोमे। स्तुमसि। शंसत्। उक्था। इन्द्राय। ब्रह्म। वर्धनम्। यथा। असत्॥५॥

पदार्थः-**(अस्मै)** पूर्वमन्त्रोक्ताय **(वयम्)** **(यत्)** **(वावान)** वनते। अत्र **तुजादीनामि**त्यभ्यासदैर्घ्यम् **(तत्)** **(विविष्मः)** व्याप्नुमः **(इन्द्राय)** ऐश्वर्याय **(यः)** **(नः)** अस्मान् **(प्रदिवः)** प्रकर्षेण कामयमानान् **(अपः)** कर्म **(कः)** करोति **(सुते)** निष्पादिते **(सोमे)** ऐश्वर्ये **(स्तुमसि)** स्तुमः **(शंसत्)** शंसेत् **(उक्था)** प्रशंसनीयानि कर्माणि **(इन्द्राय)** परमैश्वर्याय **(ब्रह्म)** धनम् **(वर्धनम्)** वर्धते येन **(यथा)** **(असत्)** भवेत्॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यः प्रदिवो नोऽपस्क इन्द्रायोक्था शंसद्यथा ब्रह्म वर्धनमसदस्मा इन्द्राय वयं यद्विविष्मस्तद्यो वावान तथा तं सुते सोमे वयं स्तुमसि॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये धनवत्सर्ववर्धकाः सन्ति ते परमैश्वर्यं लब्ध्वा प्रयतन्ते॥५॥

पदार्थः–हे मनुष्यो! **(यः)** जो **(प्रदिवः)** अत्यन्तपन से कामना करते हुओं **(नः)** हम लोगों और **(अपः)** कर्म को **(कः)** करता है और **(इन्द्राय)** अत्यन्त ऐश्वर्ययुक्त जन के लिये **(उक्था)** प्रशंसा करने योग्य कर्मों को **(शंसत्)** कहे और **(यथा)** जैसे **(ब्रह्म)** धन **(वर्धनम्)** बढ़ता है जिससे वह **(असत्)** होवे और **(अस्मै)** पूर्व मन्त्र में कहे हुए **(इन्द्राय)** ऐश्वर्य के लिये **(वयम्)** हम लोग **(यत्)** जिसको **(विविष्मः)** व्याप्त होते हैं **(तत्)** उसका जो **(वावान)** उत्तम प्रकार सेवन करता है, वैसे उसकी **(सुते)** उत्पन्न किये गये **(सोमे)** ऐश्वर्य में हम लोग **(स्तुमसि)** स्तुति करते हैं॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो धन के सदृश सब के बढ़ानेवाले हैं, वे अत्यन्त ऐश्वर्य को प्राप्त होकर प्रयत्न करते हैं॥५॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

ब्रह्माणि हि चकृषे वर्धनानि तावत्त इन्द्र मतिभिर्विविष्मः।
सुते सोमे सुतपाः शंतमानि राण्ड्र्या क्रियास्म वक्षणानि यज्ञैः॥६॥

ब्रह्माणि। हि। चकृषे। वर्धनानि। तावत्। ते। इन्द्र। मतिऽभिः। विविष्मः। सुते। सोमे। सुतऽपाः। शम्ऽतमानि। राण्ड्र्या। क्रियास्म। वक्षणानि। यज्ञैः॥६॥

पदार्थः-(**ब्रह्माणि**) धनानि (**हि**) (**चकृषे**) करोषि (**वर्धनानि**) वृद्धिकराणि (**तावत्**) (**ते**) तुभ्यम् (**इन्द्र**) (**मतिभिः**) उत्तमैर्मनुष्यैः सह (**विविष्मः**) व्याप्नुमः (**सुते**) (**सोमे**) ऐश्वर्ये (**सुतपाः**) यः सुतान् पदार्थान् पाति (**शन्तमानि**) अतिशयेन सुखकराणि (**रान्द्र्या**) रान्द्र्याणि रन्तुं योग्यानि (**क्रियास्म**) (**वक्षणानि**) प्रापकाणि (**यज्ञैः**) धनप्रापकैर्व्यवहारैः॥६॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यावन्ति वर्धनानि ब्रह्माणि त्वं चकृषे तावत्ते मतिभिस्सहिता वयं विविष्मः। सुतपा हि वयञ्च सुते सोमे यज्ञैः शन्तमानि रान्द्र्या वक्षणानि क्रियास्म॥६॥

भावार्थः-मनुष्यैरुत्तमाचरणं दृष्ट्वा तादृशमेवाऽऽचरणीयम्। सर्वैर्मिलित्वैश्वर्यं प्राप्य न्यायेन प्रजा रक्षणीया॥६॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) प्रतापयुक्त! जितने (**वर्धनानि**) वृद्धि करने वाले (**ब्रह्माणि**) धनों को आप (**चकृषे**) करते हो (**तावत्**) उतने (**ते**) आपके लिये (**मतिभिः**) उत्तम मनुष्यों के साथ हम लोग (**विविष्मः**) व्याप्त होवें तथा (**सुतपाः**) पदार्थों की रक्षा करने वाला तथा (**हि**) निश्चय कर हम लोग (**सुते**) उत्पन्न हुए (**सोमे**) ऐश्वर्य में (**यज्ञैः**) धनप्रापक व्यवहारों से निश्चय कर (**शन्तमानि**) अत्यन्त सुखकारक (**रान्द्र्या**) रमण करने योग्यों को (**वक्षणानि**) प्राप्त कराने वाले (**क्रियास्म**) करें॥६॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि उत्तम आचरण को देख के वैसा ही आचरण करें और सब मिल के ऐश्वर्य को प्राप्त होकर न्याय से प्रजा की रक्षा करें॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

स नो बोधि पुरोळाशं रराणः पिबा तु सोमं गोऋजीकमिन्द्र।
एदं बर्हिर्यजमानस्य सीदोरुं कृधि त्वायत उ लोकम्॥७॥

सः। नः। बोधि। पुरोळाशम्। रराणः। पिब। तु। सोमम्। गोऽऋजीकम्। इन्द्र। आ। इदम्। बर्हिः। यजमानस्य। सीद। उरुम्। कृधि। त्वाऽयतः। ऊँ इति। लोकम्॥७॥

पदार्थः-(**सः**) (**नः**) अस्मान् (**बोधि**) बुध्यस्व (**पुरोळाशम्**) सुसंस्कृतमन्नम् (**रराणः**) ददन् (**पिबा**) अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**तु**) (**सोमम्**) महौषधिरसम् (**गोऋजीकम्**) गाव इन्द्रियाणि ऋजीकानि सरलानि येन तम् (**इन्द्र**) ऐश्वर्य्यधर्त्तः (**आ**) (**इदम्**) (**बर्हिः**) उत्तमासनम् (**यजमानस्य**) (**सीद**) (**उरुम्**) बहुम् (**कृधि**) (**त्वायतः**) त्वां कामयमानान् (**उ**) (**लोकम्**) द्रष्टव्यम्॥७॥

अन्वयः-हे इन्द्र! स त्वं पुरोळाशं रराणो गोऋजीकं सोमं पिबा **[नो]** बोधि यजमानस्येदं बर्हिरासीदोरुं लोकमु त्वायतस्तु कृधि॥७॥

भावार्थः-ये रोगहराणि भोजनानि पानानि च ददति परोपकारं कुर्वन्ति तेऽत्र प्रशंसनीयाः सन्ति॥७॥

पदार्थः–हे **(इन्द्र)** ऐश्वर्य के धारण करने वाले **(सः)** वह आप **(पुरोळाशम्)** उत्तम प्रकार संस्कारयुक्त अन्न को **(रराणः)** देते हुए **(गोऋजीकम्)** इन्द्रिय सरल जिससे उस **(सोमम्)** बड़ी ओषधियों के रस को **(पिबा)** पीजिये और **(नः)** हम लोगों को **(बोधि)** जानिये और **(यजमानस्य)** यजमान के **(इदम्)** इस **(बर्हिः)** उत्तम आसन पर **(आ, सीद)** सब प्रकार से विराजिये तथा **(उरुम्)** बहुत **(लोकम्)** देखने योग्य को **(उ)** और **(त्वायतः)** आपकी कामना करते हुओं को **(तु)** तो **(कृधि)** करिये॥७॥

भावार्थः-जो लोग रोग के हरनेवाले भोजनों और जलपानादि को देते हैं और परोपकार करते हैं, वे प्रशंसा करने योग्य हैं॥७॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

स म॑न्दस्वा॒ ह्यनु॒ जोष॑मुग्र॒ प्र त्वा॑ य॒ज्ञास॑ इ॒मे अ॑श्नुवन्तु।

प्रेमे ह॒वा॑सः पुरु॒हूत॑म॒स्मे आ त्वे॒यं धीरव॑स इन्द्र यम्याः॥८॥

सः। म॒न्द॒स्व॒। हि। अनु॑। जोष॑म्। उ॒ग्र॒। प्र। त्वा॒। य॒ज्ञासः॑। इ॒मे। अ॒श्नु॒व॒न्तु॒। प्र। इ॒मे। ह॒वा॑सः। पु॒रु॒ऽहू॒तम्। अ॒स्मे॒ इति॑। आ। त्वा॒। इ॒यम्। धीः। अव॑से। इ॒न्द्र॒। य॒म्याः॒॥८॥

पदार्थः-**(सः)** **(मन्दस्वा)** आनन्द। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(हि)** यतः **(अनु)** **(जोषम्)** प्रीतिम् **(उग्र)** तेजस्विन् **(प्र)** **(त्वा)** त्वाम् **(यज्ञासः)** सर्वे धर्म्या व्यवहाराः **(इमे)** **(अश्नुवन्तु)** प्राप्नुवन्तु **(प्र)** **(इमे)** **(हवासः)** दानाऽऽदानाऽदनाख्याः **(पुरुहूतम्)** बहुभिः प्रशंसितम् **(अस्मे)** अस्माकमस्मासु वा **(आ)** समन्तात् **(त्वा)** त्वाम् **(इयम्)** **(धीः)** **(अवसे)** **(इन्द्रः)** विद्याक्रियाकुशल **(यम्याः)**॥८॥

अन्वयः-हे उग्रेन्द्र! ययेमे यज्ञासस्त्वाऽश्नुवन्तु य इमे हवासः पुरुहूतं त्वा प्राश्नुवन्तु सेयं धीरस्मे अवसेऽस्तु त्वं तामा यम्याः। अस्मासु प्र यम्यास्तैर्हि जोषमनु स त्वं मन्दस्वा॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यैः कर्मभिर्यया च प्रज्ञया विज्ञानानन्दौ वर्धेते तानि यूयमुन्नयत॥८॥

पदार्थः–हे **(उग्र)** तेजस्विन् **(इन्द्र)** विद्या और क्रिया में कुशल! जिस बुद्धि से **(इमे)** ये **(यज्ञासः)** सम्पूर्ण धर्मयुक्त व्यवहार **(त्वा)** आपको **(अश्नुवन्तु)** प्राप्त हों और जो **(इमे)** ये **(हवासः)** दान, आदान और अदन नामक अर्थात् देना, लेना, खाना **(पुरुहूतम्)** बहुतों से प्रशंसितम् **(त्वा)** आपको **(प्र)** प्राप्त हों सो **(इयम्)** यह **(धीः)** बुद्धि **(अस्मे)** हम लोगों की वा हम लोगों में **(अवसे)** रक्षा के लिये हो आप उसको **(आ, यम्याः)** अच्छे प्रकार विस्तारिये तथा हम लोगों में **(प्र)** अच्छे प्रकार दीजिये

उनके साथ **(हि)** जिससे **(जोषम्)** प्रीति को **(अनु)** अनुकूल **(सः)** वह आप **(मन्दस्वा)** आनन्द करिये॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिन कर्मों और जिस बुद्धि से विज्ञान और आनन्द बढ़ते हैं, उनकी आप लोग वृद्धि करिये॥८॥

पुनर्मनुष्यैः कथं वर्तितव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को कैसा वर्त्ताव करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

तं वः सखायः सं यथा सुतेषु सोमेभिरीं पृणता भोजमिन्द्रम्।
कुवित्तस्मा असति नो भराय न सुष्विमिन्द्रोऽवसे मृधाति॥९॥

तम्। वः। सखायः। सम्। यथा। सुतेषु। सोमेभिः। ईम्। पृणत। भोजम्। इन्द्रम्। कुवित्। तस्मै। असति। नः। भराय। न। सुष्विम्। इन्द्रः। अवसे। मृधाति॥९॥

पदार्थः-**(तम्)** **(वः)** युष्माकम् **(सखायः)** सुहृदः **(सम्)** **(यथा)** **(सुतेषु)** निष्पन्नेषु **(सोमेभिः)** ऐश्वर्यप्रेरणादिक्रियाभिः **(ईम्)** उदकेन **(पृणता)** सुखयत। अत्र संहितायामिति दीर्घः। **(भोजम्)** पालकम् **(इन्द्रम्)** शत्रुविनाशकं राजानम् **(कुवित्)** महत् **(तस्मै)** **(असति)** भवेत् **(नः)** अस्माकम् **(भराय)** पालनाय **(न)** निषेधे **(सुष्विम्)** सोतारमैश्वर्यकारकम् **(इन्द्रः)** राजा **(अवसे)** रक्षणाद्याय **(मृधाति)** हिंस्यात्॥९॥

अन्वयः-हे सखायो! यथा सोमेभिः सुतेषु वो नश्च भरायावसे य इन्द्रो न मृधाति तं भोजं सुष्विमिन्द्रं यूयं सं पृणता तस्मा ईं कुविदसति॥९॥

भावार्थः-ये मनुष्या रागद्वेषौ विहाय परस्परं रक्षणं विदधति ते महत्सुखमाप्नुवन्ति॥९॥

पदार्थः-हे **(सखायः)** मित्र जनो! **(यथा)** जैसे **(सोमेभिः)** ऐश्वर्य की प्रेरणा आदि क्रियाओं से **(सुतेषु)** उत्पन्न हुओं में **(वः)** आप लोग और **(नः)** हम लोगों के **(भराय)** पालन के लिये **(अवसे)** रक्षण आदि के लिये जो **(इन्द्रः)** राजा **(न)** नहीं **(मृधाति)** हिंसा करे **(तम्)** उस **(भोजम्)** पालन करने वाले **(सुष्विम्)** उत्पन्न करने वा ऐश्वर्य्य करने वाले **(इन्द्रम्)** शत्रु के विनाश करने वाले राजा को आप लोग **(सम्, पृणता)** उत्तम प्रकार सुखी करिये **(तस्मै)** उसके लिये **(ईम्)** जल से **(कुवित्)** बड़ा **(असति)** होवे॥९॥

भावार्थः-जो मनुष्य राग और द्वेष का त्याग करके परस्पर रक्षण करते हैं, वे सुख को प्राप्त होते हैं॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

एवेदिन्द्रः सुते अस्तावि सोमे भरद्वाजेषु क्षयदिन्मघोनः।

असुद्यथा॑ जरि॒त्र उ॒त सू॒रिरिन्द्रो॑ रा॒यो वि॒श्ववा॑रस्य दा॒ता॥ १०॥ १६॥ २॥

ए॒व। इत्। इन्द्रः॑। सु॒ते। अ॒स्ता॒वि॒। सोमे॑। भ॒रत्ऽवा॑जेषु। क्षय॑त्। इत्। म॒घोन॑ः। अस॑त्। यथा॑। ज॒रि॒त्रे। उ॒त। सूरिः॑। इन्द्रः॑। रा॒यः। वि॒श्वऽवा॑रस्य। दा॒ता॥ १०॥

पदार्थः-(**एव**) (**इत्**) अपि (**इन्द्रः**) परमैश्वर्यः (**सुते**) निष्पन्नेऽस्मिञ्जगति (**अस्तावि**) स्तूयते (**सोमे**) ऐश्वर्ये (**भरद्वाजेषु**) धृतविज्ञानेषु (**क्षयत्**) निवसेत् (**इत्**) अपि (**मघोनः**) धनाढ्यान् (**असत्**) भवेत् (**यथा**) (**जरित्रे**) स्तावकाय (**उत**) अपि (**सूरिः**) विद्वान् (**इन्द्रः**) (**रायः**) धनस्य (**विश्ववारस्य**) विश्वे सर्वे वारा स्वीकारा यस्मिंस्तस्य (**दाता**)॥ १०॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथेन्द्रः सुते सोम इद्भरद्वाजेष्वस्तावि यथा सूरिरिन्द्रो जरित्रे विश्ववारस्य रायो दातोत क्षयदिन्मघोनो रक्षमाणोऽस्ति स इदेव तथा सुख्यसत्॥ १०॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये मनुष्या अस्मिञ्जगति धर्म्याणि कर्माणि कुर्वन्ति ते सर्वदा स्तूयन्ते यथा दानं प्रियकारकं भवति तथा ह्यादानं न भवतीति॥ १०॥

अत्रेन्द्रविद्वद्राजप्रजागुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्यृग्वेदभाष्ये षष्ठे मण्डले द्वितीयोऽनुवाकस्त्रयोविंशं सूक्तं षोडशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो (**यथा**) जैसे (**इन्द्रः**) अत्यन्त ऐश्वर्य वाला जन (**सुते**) उत्पन्न हुए इस संसार में (**सोमे**) ऐश्वर्य में (**इत्**) निश्चय (**भरद्वाजेषु**) विज्ञान को धारण किए हुओं में (**अस्तावि**) स्तुति किया जाता है और जैसे (**सूरिः**) विद्वान् और (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य से युक्त जन (**जरित्रे**) स्तुति करने वाले जन के लिये (**विश्ववारस्य**) सम्पूर्ण स्वीकार जिसमें उस (**रायः**) धन का (**दाता**) देने वाला (**उत**) निश्चय से (**क्षयत्**) निवास करे और (**इत्**) निश्चय कर (**मघोनः**) धन से युक्त जनों की रक्षा करता हुआ हो वह (**एव**) ही उस प्रकार का सुखी (**असत्**) होवे॥ १०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो मनुष्य इस संसार में धर्मयुक्त कर्म्म करते हैं, वे सर्वदा स्तुति किये जाते हैं, जैसा देना प्रियकारक होता है, वैसा लेना नहीं प्रियकारक होता है॥ १०॥

इस सूक्त में इन्द्र, विद्वान्, राजा और प्रजा के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह ऋग्वेदभाष्य में छठें मण्डल में दूसरा अनुवाक, तेईसवाँ सूक्त और सोलहवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ दशर्चस्य चतुर्विंशतितमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, २ भुरिक् पङ्क्तिः। ३, ५, ९ पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ४, ७ निचृत्त्रिष्टुप्। ८ त्रिष्टुप्। ६, १० विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ राज्ञा किं कर्त्तव्यमित्याह॥

अब दश ऋचावाले चौबीसवें सूक्त का प्रारम्भ किया जाता है, उसके प्रथम मन्त्र में अब राजा को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

वृषा मद इन्द्रे श्लोक उक्था सचा सोमेषु सुतपा ऋजीषी।
अर्चत्र्यो मघवा नृभ्य उक्थैर्द्युक्षो राजा गिरामक्षितोतिः॥१॥

वृषा। मदः। इन्द्रे। श्लोकः। उक्था। सचा। सोमेषु। सुतऽपाः। ऋजीषी। अर्चत्र्यः। मघऽवा। नृभ्यः। उक्थैः। द्युक्षः। राजा। गिराम्। अक्षितऽऊतिः॥ १॥

पदार्थः-(**वृषा**) बलिष्ठः (**मदः**) आनन्दितः (**इन्द्रे**) ऐश्वर्यवति (**श्लोकः**) वाक् (**उक्था**) प्रशंसितानि कर्माणि (**सचा**) समवेताः (**सोमेषु**) ऐश्वर्येषु (**सुतपाः**) सुष्ठु तपस्वी (**ऋजीषी**) सरलगुणकर्मस्वभावः (**अर्चत्र्यः**) सत्कारं कुर्वत्यः प्रजाः (**मघवा**) न्यायोपार्जितधनः (**नृभ्यः**) मनुष्येभ्यः (**उक्थैः**) प्रशंसनीयैः कर्मभिः (**द्युक्षः**) द्युतिमान् (**राजा**) (**गिराम्**) न्यायविद्यायुक्तानां वाचाम् (**अक्षितोतिः**) नित्यरक्षः॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! य इन्द्रे श्लोको वृषा मदः सचा सुतपा ऋजीषी मघवाक्षितोतिः द्युक्षा राजोक्थैः सोमेषूक्था गिरां नृभ्यो या अर्चत्र्यः प्रजास्तासां श्रोता भवेत् स एव राज्यं कर्तुमर्हेदिति विजानीत॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्या! य उत्तमानि कर्माणि कृत्वा सत्यवादी जितेन्द्रियः पितृवत्प्रजापालको वर्तेत स एव सर्वत्र प्रकाशितकीर्तिर्भवेत्॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**इन्द्रे**) ऐश्वर्यवान् पदार्थ में (**श्लोकः**) वाणी (**वृषा**) बलिष्ठ (**मदः**) आनन्दित (**सचा**) मेल किये हुए (**सुतपाः**) अच्छा तपस्वी (**ऋजीषी**) सरल गुण, कर्म स्वभाव वाला (**मघवा**) न्याय से इकट्ठे किये हुए धन से युक्त (**अक्षितोतिः**) नित्य रक्षित (**द्युक्षः**) दीप्तिमान् (**राजा**) प्रकाश करता हुआ (**उक्थैः**) प्रशंसनीय कर्म्मों से (**सोमेषु**) ऐश्वर्य्यों में (**उक्था**) प्रशंसित कर्मों को (**गिराम्**) न्याय और विद्यायुक्त वाणियों के संबन्ध में (**नृभ्यः**) मनुष्यों के किये जो (**अर्चत्र्यः**) सत्कार करती हुई प्रजा हैं, उनका सुनने वाला हो, वही राज्य करने योग्य हो, यह जानो॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो उत्तम कामों को करके सत्यवादी, इन्द्रियों को जीतने वाला, पिता के समान प्रजापालक वर्त्तमान हो, वही सर्वत्र प्रकाशित कीर्त्ति वाला हो॥१॥

पुना राज्ञा प्रजाजनैश्च किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर राजा और प्रजाजनों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

तुतुरिर्वीरो नर्यो विचेताः श्रोता हवं गृणत उर्व्यूतिः।
वसु शंसो नरां कारुधाया वाजी स्तुतो विदथे दाति वाजम्॥ २॥

तुतुरिः। वीरः। नर्यः। विऽचेताः। श्रोता। हवम्। गृणतः। उर्विऽऊतिः। वसुः। शंसः। नराम्। कारुऽधायाः। वाजी। स्तुतः। विदथे। दाति। वाजम्॥ २॥

पदार्थः-(**तुतुरिः**) शत्रूणां हिंसकः (**वीरः**) शौर्यादिगुणोपेतः (**नर्यः**) नृषु साधुः (**विचेताः**) विविधप्रज्ञः (**श्रोता**) विवादानां वचनानां श्रवणकर्त्ता (**हवम्**) प्रशंसनीयं व्यवहारम् (**गृणतः**) प्रशंसकान् (**उर्व्यूतिः**) ऊर्व्याः पृथिव्या ऊती रक्षा येन सः (**वसुः**) वासयिता (**शंसः**) प्रशंसकः (**नराम्**) नराणां नायकः (**कारुधायाः**) कारवो ध्रियन्ते येन सः (**वाजी**) विज्ञानवान् (**स्तुतः**) प्रशंसितः (**विदथे**) स-ामे (**दाति**) ददाति (**वाजम्**) विज्ञानम्॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यस्ततुरिर्वीरो नर्यो विचेता हवं गृणतश्श्रोतोर्व्यूतिर्नरां वसुः शंसः कारुधाया वाजी स्तुतो विदथे वाजं दाति तं यूयं सेवध्वम्॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यूयं यो नरोत्तमोऽधिकबलप्रज्ञो यथार्थस्य श्रोता स-ामे युद्धविद्याप्रदोऽस्ति तमेव सदा सत्कुरुत॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**ततुरिः**) शत्रुओं का मारने वाला (**वीरः**) वीरता आदि गुणों से युक्त (**नर्यः**) मनुष्यों में श्रेष्ठ (**विचेताः**) अनेक प्रकार की बुद्धि वाला और (**हवम्**) प्रशंसा करने योग्य व्यवहार की (**गृणतः**) प्रशंसा करते हुओं के (**श्रोता**) विवादविषयक वचनों का सुनने वाला (**उर्व्यूतिः**) पृथिवी की रक्षा जिससे (**नराम्**) मनुष्यों का अग्रणी (**वसुः**) वास कराने और (**शंसः**) प्रशंसा करने वाला (**कारुधायाः**) कारीगर धारण किये जाते जिससे वह (**वाजी**) विज्ञान वाला (**स्तुतः**) प्रशंसित हुआ (**विदथे**) संग्राम में (**वाजम्**) विज्ञान को (**दाति**) देता है, उसकी आप लोग सेवा करो॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! तुम लोग जो मनुष्यों में उत्तम, अधिक बल और बुद्धि युक्त, यथार्थ का सुनने वाला तथा संग्राम में युद्धविद्या का देने वाला है, उस ही का सदा सत्कार करो॥ २॥

पुनः सूर्यपृथिव्योः कीदृशं वर्त्तमानमस्तीत्याह॥

फिर सूर्य और पृथिवी का कैसा वर्त्ताव है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अक्षो न चक्र्योः शूर बृहन्प्र ते मह्ना रिरिचे रोदस्योः।
वृक्षस्य नु ते पुरुहूत वया व्यू३तयो रुरुहुरिन्द्र पूर्वीः॥ ३॥

अक्षः। न। चक्र्योः। शूर। बृहन्। प्र। ते। मह्ना। रिरिचे। रोदस्योः। वृक्षस्य। नु। ते। पुरुऽहूत। वयाः। वि। ऊतयः। रुरुहुः। इन्द्र। पूर्वीः॥ ३॥

पदार्थः-(**अक्षः**) (**न**) इव (**चक्रयोः**) (**शूर**) (**बृहन्**) महान् (**प्र**) (**ते**) तव (**मह्ना**) महत्त्वेन महिम्ना (**रिरिचे**) अतिरिणक्ति (**रोदस्योः**) द्यावापृथिव्योः (**वृक्षस्य**) (**नु**) (**ते**) तव (**पुरुहूत**) बहुभिः पूजित (**वयाः**) (**वि**) (**ऊतयः**) रक्षणाद्याः क्रियाः (**रुरुहुः**) प्रादुर्भवेयुः (**इन्द्र**) राजन् (**पूर्वीः**) प्राचीनाः॥३॥

अन्वयः-हे शूर पुरुहूतेन्द्र! यथा ते मह्ना रोदस्योर्मध्ये पूर्वीर्व्यूतयश्चक्रयोरक्षो न प्र रुरुहुः। हे बृहन्! वृक्षस्य नु ते वया रिरिचे तं सर्वे जानन्तु॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा चक्राणां धर्त्री धुरो वृक्षस्य शाखा इव वर्धन्तेऽन्तरिक्षे तिष्ठन्ति तथा सूर्याभितः सर्वे भूगोला भ्रमन्ति तथैव न्यायस्य मार्गेण प्रजाश्चलन्ति॥३॥

पदार्थः-हे (**शूर**) वीर पुरुष (**पुरुहूत**) बहुतों से आदर किये गये (**इन्द्र**) राजन्! जैसे (**ते**) आपके (**मह्ना**) महत्त्व से (**रोदस्योः**) अन्तरिक्ष और पृथिवी के मध्य में (**पूर्वीः**) प्राचीन (**वि, ऊतयः**) विविध रक्षण आदि क्रियायें (**चक्रयोः**) पहियों की (**अक्षः**) धुरी के (**न**) समान (**प्र, रुरुहुः**) अच्छे प्रकार प्रकट होवें और हे (**बृहन्**) महान् (**वृक्षस्य**) वृक्ष की बढ़वार (**नु**) जैसे वैसे (**ते**) आपकी (**वयः**) अवस्था (**रिरिचे**) प्रकट होती है, उसको सब लोग जानें॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे पहियों की धारण करने वाली धुरी वृक्ष की शाखाओं के समान बढ़ती है और अन्तरिक्ष में स्थित होती हैं, वैसे सूर्य के चारों ओर सम्पूर्ण भूगोल घूमते हैं और वैसे ही न्याय के मार्ग से प्रजायें चलती हैं॥३॥

पुना राज्ञा प्रजाभिश्च कथं वर्तितव्यमित्याह॥

फिर राजा और प्रजा को कैसा वर्त्ताव करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

शचीवतस्ते पुरुशाक शाका गवामिव स्रुतयः संचरणीः।

वत्सानां न तन्तयस्त इन्द्र दामन्वन्तो अदामानः सुदामन्॥४॥

शचीऽवतः। ते। पुरुऽशाक। शाकाः। गवाम्ऽइव। स्रुतयः। सम्ऽचरणीः। वत्सानाम्। न। तन्तयः। ते। इन्द्र। दामन्ऽवन्तः। अदामानः। सुऽदामन्॥४॥

पदार्थः-(**शचीवतः**) प्रज्ञाप्रजायुक्तस्य (**ते**) तव (**पुरुशाक**) बहुशक्त (**शाकाः**) शक्तिमत्यः (**गवामिव**) (**स्रुतयः**) स्रुवन्त्यः (**सञ्चरणीः**) याः सम्यक् चरन्ति ता भूमयः (**वत्सानाम्**) (**न**) इव (**तन्तयः**) विस्तीर्णाः (**ते**) तव (**इन्द्र**) दुःखविदारक (**दामन्वन्तः**) बहुबन्धनाः (**अदामानः**) निर्बन्धनाः (**सुदामन्**) सुनियमबद्ध॥४॥

अन्वयः-हे पुरुशाकेन्द्र! शचीवतस्ते गवामिव स्रुतयः सञ्चरणीः शाका वत्सानां तन्तयो न ते प्रजाः सन्ति। हे सुदामन्! ये दामन्वन्तः स्युस्तेऽदामानस्त्वया कार्याः॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। त एव राजानः प्रशंसितप्रभावा भवन्ति येऽन्यायपीडादिबन्धनात् प्रजा विमोच्य धर्मपथे प्रचालयन्ति यथा वत्सानां वर्धिका गावो भवन्ति तथैव प्रजानां वर्धका राजपुरुषाः स्युः॥४॥

पदार्थः-हे **(पुरुशाक)** बहुत सामर्थ्यवान् **(इन्द्र)** दुःख के नाश करने वाले! **(शचीवतः)** बुद्धि और प्रजा से युक्त **(ते)** आपकी **(गवामिव, स्रुतयः)** गौओं की गतियों के सदृश **(सञ्चरणीः)** अच्छे प्रकार चलने वाली भूमियाँ **(शाकाः)** और सामर्थ्य वाली **(वत्सानाम्)** बछड़ों की **(तन्तयः)** विस्तृत पङ्क्तियों के **(न)** सदृश **(ते)** आपकी प्रजा हैं। हे **(सुदामन्)** अच्छे नियमों में बँधे हुए! जो **(दामन्वन्तः)** बहुत बन्धनों वाले होवें वे आप से **(अदामानः)** बन्धनरहित करने योग्य हैं॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। वे ही राजाजन प्रशंसित प्रतापवाले होते हैं जो अन्याय और पीड़ा आदि के बन्धन से प्रजाओं को छुड़ा कर धर्ममार्ग में चलाते हैं और जैसे बछड़ों की बढ़ाने वाली गौ होती हैं, वैसे ही प्रजा के बढ़ानेवाले राजपुरुष हों॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अ॒न्यद॒द्य कर्व॑रम॒न्यदु॒ श्वोऽस॑च्च॒ सन्मुहु॑राच॒क्रिरिन्द्रः॑।
मि॒त्रो नो॒ अत्र॒ वरु॑णश्च पू॒षार्यो वश॑स्य पर्ये॒तास्ति॑॥५॥१७॥

अ॒न्यत्। अ॒द्य। कर्व॑रम्। अ॒न्यत्। ऊँ॒ इति॑। श्वः। असत्। च॒। सत्। मुहुः। आ॒ऽच॒क्रिः। इन्द्रः॑। मि॒त्रः। न॒ः। अत्र॑। वरु॑णः। च॒। पू॒षा। अ॒र्यः। वश॑स्य। प॒रि॒ऽए॒ता। अ॒स्ति॒॥५॥

पदार्थः-**(अन्यत्)** **(अद्य)** **(कर्वरम्)** कर्त्तव्यं कर्म **(अन्यत्)** **(उ)** **(श्वः)** आगामिनि दिने **(असत्)** भवेत् **(च)** **(सत्)** **(मुहुः)** वारंवारम् **(आचक्रिः)** समन्तात् कर्त्ता **(इन्द्रः)** राजा **(मित्रः)** **(नः)** अस्माकम् **(अत्र)** **(वरुणः)** श्रेष्ठः **(च)** **(पूषा)** पुष्टिकर्त्ता **(अर्यः)** स्वामी **(वशस्य)** वशवर्तिनः **(पर्य्येता)** सर्वतः प्राप्तः **(अस्ति)**॥५॥

अन्वयः-य इन्द्रो राजाऽद्यान्यदु श्वोऽन्यत् कर्वरमाचक्रिस्सन्मुहुरसत् स चात्र नो मित्रो वरुणः पूषाऽर्य्यश्च वशस्य पर्येतास्ति सोऽलंसुखो भवति॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यो राजा प्रतिदिनं पुनः पुनः सत्कर्माचरति स सर्वेषां न्यायकरणे पक्षपातं विहाय मित्रवद्भवति सर्वे चास्य वशे भवन्ति॥५॥

पदार्थः-जो **(इन्द्रः)** राजा **(अद्य)** आज **(अन्यत्)** अन्य **(उ)** और **(श्वः)** आने वाले दिन में **(अन्यत्)** अन्य **(कर्वरम्)** करने योग्य कर्म को **(आचक्रिः)** सब प्रकार से करने वाला **(सत्)** हुआ **(मुहुः)** वारंवार **(असत्)** होवे वह **(च)** और **(अत्र)** इस संसार में **(नः)** हम लोगों का **(मित्रः)** मित्र **(वरुणः)** श्रेष्ठ **(पूषा)** पुष्टि करने वाला **(अर्यः)** स्वामी **(च)** और **(वशस्य)** वशवर्ती का **(पर्येता)** सब ओर से प्राप्तजन **(अस्ति)** है, वह पूर्ण सुख वाला होता है॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो राजा प्रतिदिन बारबार सत्य कर्म का आचरण करता है, वह सब के न्याय करने में पक्षपात का त्याग करके मित्र के सदृश होता है और सब इसके वश में होते हैं॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

वि त्वदापो न पर्वतस्य पृष्ठादुक्थेभिरिन्द्रानयन्त यज्ञैः।

तं त्वाभिः सुष्टुतिभिर्वाजयन्त आजिं न जग्मुर्गिर्वाहो अश्वाः॥६॥

वि। त्वत्। आपः। न। पर्वतस्य। पृष्ठात्। उक्थेभिः। इन्द्र। अनयन्त। यज्ञैः। तम्। त्वा। आभिः। सुस्तुतिऽभिः। वाजयन्तः। आजिम्। न। जग्मुः। गिर्वाहः। अश्वाः॥६॥

पदार्थः-(**वि**) विशेषे (**त्वत्**) (**आपः**) जलानि (**न**) इव (**पर्वतस्य**) शैलस्य (**पृष्ठात्**) (**उक्थेभिः**) प्रशंसनीयैः कर्मभिः (**इन्द्र**) राजन् (**अनयन्त**) नयन्ति (**यज्ञैः**) सत्कर्मानुष्ठानैः (**तम्**) (**त्वा**) त्वाम् (**आभिः**) प्रत्यक्षाभिः (**सुष्टुतिभिः**) (**वाजयन्तः**) हर्षयन्तः (**आजिम्**) स-ग्रामम् (**न**) इव (**जग्मुः**) गच्छेयुः (**गिर्वाहः**) ये गिरो वहन्ति प्रापयन्ति ते (**अश्वाः**) महान्तो विद्वांसः। **अश्व इति महन्नामसु पठितम्।** (निघं०१.१४)॥६॥

अन्वयः-हे इन्द्र! ये त्वद्रक्षिताः पर्वतस्य पृष्ठादापो नोक्थेभिर्यज्ञैर्यं त्वा गिर्वाहोऽश्वा व्यनयन्त तं त्वामाभिस्सुष्टुतिभिर्वाजयन्तः शूरा आजिन्न जग्मुः॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे राजन्! यथा पर्वतोपरिष्टाज्जलं सद्यो गत्वा जलाशयं प्राप्नोति तथा ये भवत्प्रजाहितैषिणो भवन्तं प्राप्नुवन्ति तैस्सहित एव सदोन्नतो भवेः॥६॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) राजन्! जो (**त्वत्**) आप से रक्षित हुए (**पर्वतस्य**) पर्वत के (**पृष्ठात्**) पीठ से (**आपः**) जल (**न**) जैसे वैसे (**उक्थेभिः**) प्रशंसा करने योग्य कर्मों के अनुष्ठानों से और (**यज्ञैः**) अच्छे कर्मों के अनुष्ठानों से जिन (**त्वा**) आपको (**गिर्वाहः**) वाणियों के प्राप्त कराने वाले (**अश्वाः**) बड़े विद्वान् जन (**वि**) विशेष करके (**अनयन्त**) पहुँचाते हैं (**तम्**) उन आपको (**आभिः**) इन प्रत्यक्ष (**सुष्टुतिभिः**) उत्तम स्तुतियों से (**वाजयन्तः**) प्रसन्न कराते हुए शूरवीर जन (**आजिम्**) स-ग्राम को (**न**) जैसे वैसे (**जग्मुः**) प्राप्त होवें॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे राजन्! जैसे पर्वत के ऊपर वर्त्तमान जल शीघ्र जाकर जलाशय को प्राप्त होता है, वैसे जो आपकी प्रजाओं के हित के चाहने वाले जन आपको प्राप्त होते हैं, उनके सहित ही आप सदा उन्नत हूजिये॥६॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

न यं जरन्ति शरदो न मासा न द्याव इन्द्रमवकर्शयन्ति।

वृद्धस्य चिद्वर्धतामस्य तनूः स्तोमेभिरुक्थैश्च शस्यमाना॥७॥

न। यम्। जरन्ति। शरदः। न। मासाः। न। द्यावः। इन्द्रम्। अवऽकर्शयन्ति। वृद्धस्य। चित्। वर्धताम्। अस्य। तनूः। स्तोमेभिः। उक्थैः। च। शस्यमाना॥७॥

पदार्थः-(**न**) निषेधे (**यम्**) (**जरन्ति**) जीर्णं कुर्वन्ति (**शरदः**) शरदाद्या ऋतवः (**न**) (**मासाः**) चैत्राद्याः (**न**) (**द्यावः**) सूर्यादयः (**इन्द्रम्**) परमात्मानम् (**अवकर्शयन्ति**) कृशं कर्तुं शक्नुवन्ति (**वृद्धस्य**) (**चित्**) अपि (**वर्धताम्**) (**अस्य**) जीवस्य (**तनूः**) शरीरम् (**स्तोमेभिः**) स्तुत्यैः (**उक्थैः**) वक्तुमर्हैः (**च**) (**शस्यमाना**) स्तवनीया॥७॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यस्यास्य वृद्धस्य तनूः स्तोमेभिरुक्थैश्च शस्यमाना चिद्वर्धतां यमिन्द्रं परमात्मानं शरदो न जरन्ति मासा न जरन्ति द्यावो नाऽवकर्शयन्ति तं विद्वांसं परमात्मानं च यूयं सेवध्वम्॥७॥

भावार्थः-स एव विद्वान् वृद्धो भूत्वा वर्धते यः सर्वान्त्सुप्रज्ञान् सुशीलान् धर्माचारान् करोति ये निर्विकारं जन्मरणजरादिदोषरहितं परमात्मानमुपासते ते प्रशंसनीया जायन्ते॥७॥

पदार्थः-हे विद्वान् जनो! जिस (**अस्य**) इस जीव (**वृद्धस्य**) वृद्ध विद्वान् का (**तनूः**) शरीर (**स्तोमेभिः**) स्तुति करने के योग्यों और इन (**उक्थैः**) कहने के योग्य पदार्थों से (**च**) भी (**शस्यमाना**) प्रशंसा करने योग्य (**चित्**) भी (**वर्धताम्**) बढ़े और (**यम्**) जिस (**इन्द्रम्**) परमात्मा को (**शरदः**) शरद् आदि ऋतुयें (**न**) नहीं (**जरन्ति**) जीर्ण करती हैं और (**मासाः**) चैत्र आदि महीने (**न**) नहीं जीर्ण करते हैं तथा (**द्यावः**) सूर्य आदि (**न**) नहीं (**अवकर्शयन्ति**) दुर्बल कर सकते हैं, उस विद्वान् और परमात्मा का आप लोग सेवन करिये॥७॥

भावार्थः-वही विद्वान् वृद्ध होकर वृद्धि को प्राप्त होता है जो सब को अच्छे, बुद्धिमान्, सुशील तथा धर्म्माचरण करने वाला करता है और जो निर्विकार और जन्म, मरण, बुढ़ापा आदि दोषों से रहित परमात्मा की उपासना करते हैं, वे प्रशंसा करने योग्य होते हैं॥७॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

न वीळवे नमते न स्थिराय न शर्धते दस्युजूताय स्तवान्।

अज्रा इन्द्रस्य गिरयश्चिदृष्वा गम्भीरे चिद्भवति गाधमस्मै॥८॥

न। वीळवे। नमते। न। स्थिराय। न। शर्धते। दस्युऽजूताय। स्तवान्। अज्राः। इन्द्रस्य। गिरयः। चित्। ऋष्वाः। गम्भीरे। चित्। भवति। गाधम्। अस्मै॥८॥

पदार्थः-(**न**) निषेधे (**वीळवे**) प्रशंसनीयाय बलाय (**नमते**) (**न**) (**स्थिराय**) (**न**) (**शर्धते**) बलाय (**दस्युजूताय**) दुष्टसङ्गाय (**स्तवान्**) स्तुयात् (**अज्राः**) प्रक्षेप्तारः (**इन्द्रस्य**) विद्युतः (**गिरयः**) मेघाः (**चित्**) इव (**ऋष्वाः**) महान्तः (**गम्भीरे**) (**चित्**) अपि (**भवति**) (**गाधम्**) गृहीतपरिमाणम् (**अस्मै**)॥८॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यो दस्युजूताय वीळवे न नमते स्थिराय न नमते शर्धते न स्तवान् यस्य चिदिन्द्रस्य ऋष्वा अज्रा गिरयश्चिदस्मै गाधं गम्भीरे चिद् भवति तं प्रशंसत॥८॥

भावार्थः-यथा विद्युतोऽगाधगुणाः सन्ति तथैव परमात्मनोऽसङ्ख्यगुणा वर्तन्ते ये तं परमात्मानमाप्तांश्च विहाय दुष्टसङ्गतिं कुर्वन्ति ते सर्वदा दुःखिनो जायन्ते॥८॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जो **(दस्युजूताय)** दुष्टों के सङ्ग के लिये **(वीळवे)** प्रशंसा करने योग्य बल के लिये **(न)** नहीं **(नमते)** नम्र होता **(स्थिराय)** स्थिर गम्भीर पुरुष के लिये **(न)** नहीं नम्र होता तथा **(शर्द्धते)** बल के लिये **(न)** नहीं **(स्तवान्)** स्तुति करे जिस **(इन्द्रस्य)** बिजुली के **(ऋष्वाः)** बड़े **(अज्राः)** फेंकने वाले गुण **(गिरयः)** मेघों के **(चित्)** सदृश हैं **(अस्मै)** इसके लिये **(गाधम्)** ग्रहण किया परिमाण **(गम्भीरे)** गुरुपन में **(चित्)** भी **(भवति)** होता है, उसकी प्रशंसा करिये॥८॥

भावार्थः-जैसे बिजुलियाँ अथाह गुण वाली हैं, वैसे ही परमात्मा के असङ्ख्य गुण हैं और जो परमात्मा और यथार्थवक्ता जनों को त्याग करके दुष्टों का संग करते हैं, वे सब काल में दुःखी होते हैं॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उस ही विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

गम्भीरेण न उरुणामत्रिन् प्रेषो यन्धि सुतपावन् वाजान्।

स्था ऊ षु ऊर्ध्व ऊती अरिषण्यन्नक्तोर्व्युष्टौ परितक्म्यायाम्॥९॥

गम्भीरेण। नः। उरुणा। अमत्रिन्। प्र। इषः। यन्धि। सुतऽपावन्। वाजान्। स्थाः। ऊँ इति। सु। ऊर्ध्वः। ऊती। अरिषण्यन्। अक्तोः। विऽउष्टौ। परिऽतक्म्यायाम्॥९॥

पदार्थः-**(गम्भीरेण)** अगाधेन **(नः)** अस्मभ्यम् **(उरुणा)** बहुना **(अमत्रिन्)** बहुबलयुक्त **(प्र)** **(इषः)** अन्नादीन् **(यन्धि)** नियच्छ **(सुतपावन्)** यः सुतान्निष्पन्नान् पदार्थान् पुनाति **(वाजान्)** विज्ञानादीनि **(स्थाः)** तिष्ठेः **(उ)** **(सु)** **(ऊर्ध्वः)** **(ऊती)** रक्षणाद्यायाः **(अरिषण्यन्)** अहिंसयन् **(अक्तोः)** रात्रेः **(व्युष्टौ)** प्रभाते **(परितक्म्यायाम्)** निशि॥९॥

अन्वयः-हे अमत्रिन्त्सुतपावंस्त्वं गम्भीरेणोरुणा न इषो यन्धि। उ ऊती उर्ध्वोऽरिषण्यन्नक्तोर्व्युष्टौ परितक्म्यायां वाजान् सु प्र स्थाः॥९॥

भावार्थः-ये यमनियमान्विताः कार्यसिद्धयेऽहर्निशं प्रयत्नमातिष्ठेयुस्त उत्कृष्टा जायन्ते॥९॥

पदार्थः-हे **(अमत्रिन्)** बहुत बल से युक्त और **(सुतपावन्)** उत्पन्न पदार्थों के पवित्र करने वाले आप **(गम्भीरेण)** गम्भीर और **(उरुणा)** बहुत से **(नः)** हम लोगों को **(इषः)** अन्न आदिक **(यन्धि)** दीजिये **(उ)** और **(ऊती)** रक्षण आदि क्रिया से **(ऊर्ध्वः)** ऊपर वर्तमान **(अरिषण्यन्)** नहीं हिंसा करते

हुए **(अक्तोः)** रात्रि से **(व्युष्टौ)** प्रभातकाल में और **(परितक्म्यायाम्)** रात्रि में **(वाजान्)** विज्ञान आदिकों को **(सु, प्र)** अति उत्तम प्रकार **(स्थाः)** स्थित हूजिये॥९॥

भावार्थः-जो यम और नियमों से युक्त हुए कार्य की सिद्धि के लिये दिन-रात्रि प्रयत्न करें, वे उत्तम होते हैं॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सचस्व नायमवसे अभीकं इतो वा तमिन्द्र पाहि रिषः।
अमा चैनमरण्ये पाहि रिषो मदेम शतहिमाः सुवीराः॥१०॥१८॥

सचस्व। नायम्। अवसे। अभीके। इतः। वा। तम्। इन्द्र। पाहि। रिषः। अमा। च। एनम्। अरण्ये। पाहि। रिषः। मदेम। शतऽहिमाः। सुऽवीराः॥१०॥

पदार्थः-**(सचस्व)** प्राप्नुहि **(नायम्)** न्यायम् **(अवसे)** रक्षणाद्याय **(अभीके)** समीपे **(इतः)** **(वा)** **(तम्)** **(इन्द्र)** राजन् विद्वन् वा **(पाहि)** **(रिषः)** हिंसकात् **(अमा)** गृहे **(च)** **(एनम्)** **(अरण्ये)** **(पाहि)** **(रिषः)** दुष्टाचारात् **(मदेम)** आनन्देम **(शतहिमाः)** शतं वर्षाणि यावत् **(सुवीराः)** शोभना वीरा येषान्ते॥१०॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वमवसेऽभीके नायं सचस्व, इतो वा रिषः पाह्येनममाऽरण्ये पाहि रिषश्च यतः सुवीरा वयं शतहिमा मदेम॥१०॥

भावार्थः-ये विद्वांसः सन्ति ते दूरे समीपे वा स्थिता न्यायाचरणयोगाभ्यासाभ्यां वर्द्धितप्रज्ञाः सन्तः वसतिषु जङ्गलेषु च पुरुषार्थेन प्रजा रक्षन्त्विति॥१०॥

अत्रेन्द्रविद्वदीश्वरगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति चतुर्विंशतितमं सूक्तमष्टादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** राजन् वा विद्वान्! आप **(अवसे)** रक्षण आदि के लिये **(अभीके)** समीप में **(नायम्)** न्याय को **(सचस्व)** प्राप्त हूजिये **(इतः)** यहाँ से **(वा)** वा **(रिषः)** हिंसा करने वाले से **(पाहि)** रक्षा कीजिये और **(एनम्)** इसकी **(अमा)** गृह में और **(अरण्ये)** वन में **(पाहि)** रक्षा कीजिये **(रिषः, च)** और दुष्ट आचरण से भी, जिससे **(सुवीराः)** सुन्दर वीर जिनके ऐसे हम लोग **(शतहिमाः)** सौ वर्ष पर्यन्त **(मदेम)** आनन्द करें॥१०॥

भावार्थः-जो विद्वान् जन हैं, वे दूर वा समीप में वर्त्तमान हुए न्यायचरण और योगाभ्यास से बुद्धि को बढ़ाये हुए बस्ती और जङ्गलों में पुरुषार्थ से प्रजाजनों की रक्षा करें॥१०॥

इस सूक्त में राजा, विद्वान् और ईश्वर के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संगति जाननी चाहिये॥

यह चौबीसावाँ सूक्त और अठारहवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ नवर्चस्य पञ्चविंशतितमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ५ पङ्क्तिः। ३ भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। २, ७, ८, ९ निचृत्त्रिष्टुप्। ४, ६ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ राजा किं कुर्यादित्याह॥

अब नव ऋचा वाले पच्चीसवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में अब राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

या त ऊतिरवमा या परमा या मध्यमेन्द्र शुष्मिन्नस्ति।
ताभिरू षु वृत्रहत्येऽवीर्न एभिश्च वाजैर्महान्न उग्र॥१॥

या। ते। ऊतिः। अवमा। या। परमा। या। मध्यमा। इन्द्र। शुष्मिन्। अस्ति। ताभिः। ऊँ इति। सु। वृत्रऽहत्ये। अवीः। नः। एभिः। च। वाजैः। महान्। नः। उग्र॥१॥

पदार्थः-(या) (ते) तव (ऊतिः) रक्षा (अवमा) निकृष्टा (या) (परमा) उत्कृष्टा (या) (मध्यमा) (इन्द्र) न्यायाधीश राजन् (शुष्मिन्) प्रशंसितबलयुक्त (अस्ति) (ताभिः) (ऊ) (सु) (वृत्रहत्ये) मेघस्य हत्येव हननं यस्मिन्त्स-ामे (अवीः) रक्षेः (नः) अस्मान् (एभिः) (च) (वाजैः) वेगादिभिः शुभैर्गुणैः (महान्) (नः) अस्मान् (उग्र) तेजस्विन्॥१॥

अन्वयः-हे शुष्मिन्नुग्रेन्द्र! ते याऽवमा या मध्यमा या परमोतिरस्ति ताभिर्वृत्रहत्ये नः स्ववीरू एभिर्वाजैश्च महान्त्सन्नोऽवीः॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजन्! यदि त्वं प्रजाः सर्वथा रक्षेस्तर्हि प्रजा अपि त्वां सर्वतो रक्षिष्यन्ति॥१॥

पदार्थः-हे (शुष्मिन्) प्रशंसित बल से युक्त (उग्र) तेजस्विन् (इन्द्र) न्यायाधीश राजन्! (ते) आपकी (या) जो (अवमा) निकृष्ट-खराब और (या) जो (मध्यमा) मध्यम और (या) जो (परमा) उत्तम (ऊतिः) रक्षा (अस्ति) है (ताभिः) उनसे (वृत्रहत्ये) मेघ के नाश के समान नाश जिसमें उस स-ाम में (नः) हम लोगों की (सु) उत्तम प्रकार (अवीः) रक्षा कीजिये (ऊ) और (एभिः) इन (वाजैः) वेग आदि उत्तम गुणों से (च) भी (महान्) बड़े हुए (नः) हम लोगों की रक्षा कीजिये॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजन्! जो आप प्रजाओं की सब प्रकार से रक्षा करें तो प्रजा भी आपकी सब प्रकार से रक्षा करेगी॥१॥

पुनः सेनेशः किं कुर्यादित्याह॥

फिर सेना का स्वामी क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आभिः स्पृधो मिथतीररिषण्यन्नमित्रस्य व्यथया मन्युमिन्द्र।

आभिर्विश्वा अभियुजो विषूचीरार्याय विशोऽव तारीर्दासीः॥ २॥

आभिः स्पृधः। मिथतीः। अरिषण्यन्। अमित्रस्य। व्यथय। मन्युम्। इन्द्र। आभिः। विश्वाः। अभिऽयुजः। विषूचीः। आर्याय। विशः। अव। तारीः। दासीः॥ २॥

पदार्थः-(**आभिः**) रक्षाभिस्सेनाभिर्वा (**स्पृधः**) स-ग्रामान् (**मिथतीः**) शत्रुसेनाः हिंसन्तीः (**अरिषण्यन्**) अहिंसन् (**अमित्रस्य**) शत्रोः (**व्यथया**) पीडय। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**मन्युम्**) क्रोधम् (**इन्द्र**) सेनाध्यक्ष (**आभिः**) रक्षाभिः सेनाभिर्वा (**विश्वाः**) समग्राः (**अभियुजः**) या अभियुञ्जते ताः (**विषूचीः**) व्याप्नुवतीः (**आर्याय**) उत्तमाय जनाय (**विशः**) प्रजाः (**अव**) (**तारीः**) दुःखात्तारय (**दासीः**) सेविकाः॥ २॥

अन्वयः-हे इन्द्र सेनेश! त्वमाभिर्मिथतीः स्पृधोऽरिषण्यन्नमित्रस्य सेना मन्युं कृत्वा व्यथया। आभिरार्याय विश्वा अभियुजो विषूचीर्दासीर्विशोऽवतारीः॥ २॥

भावार्थः-त एव सेनाध्यक्षाः सत्कर्तव्या ये स्वसेनाः सुशिक्ष्य संरक्ष्य सत्कृत्य युद्धविद्यायां कुशलीकृत्य दस्यूनन्यायकारिणः शत्रूँश्च निवार्य भद्राः प्रजाः सततं रक्षेयुः॥ २॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) सेना के स्वामी आप (**आभिः**) इन रक्षाओं वा सेनाओं से (**मिथतीः**) शत्रुओं की सेनाओं का नाश करते हुए (**स्पृधः**) संग्रामों की (**अरिषण्यन्**) नहीं हिंसा करते हुए (**अमित्रस्य**) शत्रु की सेनाओं को (**मन्युम्**) क्रोध करके (**व्यथया**) पीड़ा दीजिये और (**आभिः**) इन रक्षा और सेनाओं से (**आर्याय**) उत्तम जन के लिये (**विश्वाः**) सम्पूर्ण (**अभियुजः**) अभियुक्त होने और (**विषूचीः**) व्याप्त होने वाली (**दासीः**) सेविकाओं को और (**विशः**) प्रजाओं को (**अव, तारीः**) दुःख से पार करिये॥ २॥

भावार्थः-वे ही सेना के स्वामी सत्कार करने योग्य हैं, जो अपनी सेना को उत्तम प्रकार शिक्षा दें तथा उत्तम प्रकार रक्षा कर और सत्कार करके युद्धविद्या में चतुर करके डाकुओं और अन्यायकारी शत्रुओं को निवारण करके अच्छी प्रजाओं की निरन्तर रक्षा करें॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्र जामय उत येऽजामयोऽर्वाचीनासो वनुषो युयुज्रे।
त्वमेषां विथुरा शवांसि जहि वृष्ण्यानि कृणुही पराचः॥ ३॥

इन्द्र। जामयः। उत। ये। अजामयः। अर्वाचीनासः। वनुषः। युयुज्रे। त्वम्। एषाम्। विथुरा। शवांसि। जहि। वृष्ण्यानि। कृणुहि। पराचः॥ ३॥

पदार्थः-(**इन्द्र**) सेनेश (**जामयः**) पतिव्रता भार्या इव (**उत**) अपि (**ये**) (**अजामयः**) सपत्न्य इव शत्रवः (**अर्वाचीनासः**) इदानीन्तनाः (**वनुषः**) संविभाजकान् (**युयुज्रे**) युञ्जन्ति (**त्वम्**) (**एषाम्**) (**विथुरा**)

व्यथकानि **(शवांसि)** बलानि **(जहि)** **(वृष्ण्यानि)** बलिष्ठानि **(कृणुही)** अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। **(पराचः)** पराङ्मुखान्॥३॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं येऽर्वाचीनासो जामय इवोताजामयो वनुषो युयुज्र एषां शत्रूणां विथुरा शवांसि त्वं जहि स्वसैन्यानि वृष्ण्यानि कृणुही शत्रून् पराचश्च॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। त एव सचिवा उत्तमा ये धार्मिकीः प्रजाः पुत्रवद्रक्षन्ति दुष्टांश्च दण्डयन्ति स्वसैन्यानि वर्धयित्वा शत्रुसेनां पराजयन्ति॥३॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** सेना के स्वामी **(त्वम्)** आप **(ये)** जो **(अर्वाचीनासः)** इस काल में हुए **(जामयः)** पतिव्रता स्त्रियों के सदृश और **(उत)** भी **(अजामयः)** सौतियाँ जैसे वैसे शत्रु जन **(वनुषः)** संविभाग करने वालों को **(युयुज्रे)** युक्त होते अर्थात् मिलते हैं **(एषाम्)** इन शत्रुओं की **(विथुरा)** पीड़ा देने वाली **(शवांसि)** सेनाओं को **(त्वम्)** आप **(जहि)** नष्ट कीजिये और अपनी सेनाओं को **(वृष्ण्यानि)** बलिष्ठ **(कृणुही)** करिये और शत्रुओं को **(पराचः)** पराङ्मुख कीजिये अर्थात् हटाइये॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। वे ही मन्त्री उत्तम हैं, जो धार्मिक प्रजाओं की पुत्र के सदृश रक्षा करते हैं और दुष्टों को दण्ड देते हैं और अपनी सेनाओं को बढ़ाय के शत्रुओं की सेना को पराजित करते हैं॥३॥

पुना राजामात्याश्च किं कुर्युरित्याह॥

फिर राजा और मन्त्रीजन क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शूरो॑ वा॒ शूरं॑ वनते॒ शरी॑रैस्तनू॒रुचा॒ तरु॑षि॒ यत्कृ॒ण्वैते॑।

तो॒के वा॒ गोषु॒ तन॑ये॒ यद॒प्सु॒ वि क्रन्द॑सी उ॒र्वरा॑सु॒ ब्रवै॑ते॥४॥

शूर॑ः। वा॒। शूर॑म्। व॒न॒ते॒। शरी॑रैः। त॒नू॒ऽरुचा॑। तरु॑षि। यत्। कृ॒ण्वैते॒ इति॑। तो॒के। वा॒। गोषु॑। तन॑ये। यत्। अ॒प्ऽसु। वि। क्रन्द॑सी॒ इति॑। उ॒र्वरा॑सु। ब्रवै॑ते॒ इति॑॥४॥

पदार्थः-**(शूरः)** **(वा)** **(शूरम्)** **(वनते)** सम्भजति **(शरीरैः)** **(तनूरुचा)** या तनूषु रुक् प्रीतिस्तया **(तरुषि)** दुःखात्तारके सङ्ग्रामे **(यत्)** **(कृण्वैते)** कुर्याताम् **(तोके)** सद्यो जातेऽपत्ये **(वा)** **(गोषु)** वाणीषु **(तनये)** सुकुमारे **(यत्)** **(अप्सु)** जलेषु **(वि)** **(क्रन्दसी)** क्रन्दमानौ विक्रोशन्तौ **(उर्वरासु)** पृथिव्यादिनिमित्तेषु **(ब्रवैते)** ब्रूयाताम्॥४॥

अन्वयः-हे राजजना! यथा शूरस्तनूरुचा शरीरैस्तरुषि शूरं वनते वा द्वौ यत्कृण्वैते क्रन्दसी सन्तौ यत्तोके तनय उर्वरासु गोषु वाप्सु वि ब्रवैते तथा यूयमपि भवत॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा सङ्ग्रामे शूराः शूरान् विभज्य युध्यन्ति तथैव राजाऽमात्यांश्च श्रेष्ठानधमांश्च विभज्याऽधिकारेषु नियोज्याज्ञापयेद्यथा कृषिविद्यया कृषीवलान् बोधयेत् तथैव स्वसन्तानान् सुशिक्षया विद्याग्रहणाय ब्रह्मचर्ये प्रवर्त्तयेत्॥४॥

पदार्थः-हे राजजनो! जैसे (**शूरः**) शूरवीर पुरुष (**तनूरुचा**) शरीरों में हुई प्रीति से और (**शरीरैः**) शरीरों से (**तरुषि**) दु:ख से पार करने वाले स- ाम में (**शूरम्**) शूरवीर जन का (**वनते**) आदर करता है (**वा**) वा दोनों (**यत्**) जिसको (**कृण्वैते**) करें और (**क्रन्दसी**) क्रोशते हुए (**यत्**) जो (**तोके**) शीघ्र उत्पन्न हुए (**तनये**) सुकुमार बालक के होने पर (**उर्वरासु**) पृथिवी आदि के कारणों में (**गोषु**) प्राणियों में (**वा**) अथवा (**अप्सु**) जलों में (**वि, ब्रवैते**) कहें, वैसे आप लोग भी हूजिये॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे स- ाम में शूरजन शूरवीरों का विभाग करके युद्ध करते हैं, वैसे ही राजा और अमात्य श्रेष्ठ और अधमों का विभाग करके अधिकारों में युक्त करके आज्ञा देवें और जैसे खेती की विद्या से खेतीहारों को जनावें, वैसे ही अपने सन्तानों को उत्तम शिक्षा से विद्या ग्रहण के लिये ब्रह्मचर्य में प्रवृत्त करावें॥४॥

पुनः स राजा कीदृशो भवेदित्याह॥

फिर वह राजा कैसा हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नहि त्वा शूरो न तुरो न धृष्णुर्न त्वा योधो मन्यमानो युयोध।
इन्द्र नकिष्ट्वा प्रत्यस्त्येषां विश्वा जातान्यभ्यसि तानि॥५॥१९॥

नहि। त्वा। शूरः। न। तुरः। न। धृष्णुः। न। त्वा। योधः। मन्यमानः। युयोध। इन्द्र। नकिः। त्वा। प्रति। अस्ति। एषाम्। विश्वा। जातानि। अभि। असि। तानि॥५॥

पदार्थः-(**नहि**) निषेधे (**त्वा**) त्वाम् (**शूरः**) (**न**) (**तुरः**) हिंसकः शीघ्रकारी (**न**) (**धृष्णुः**) धृष्टः (**न**) (**त्वा**) त्वाम् (**योधः**) युद्धकर्ता (**मन्यमानः**) अभिमानी सन् (**युयोध**) युद्ध्येत् (**इन्द्र**) सेनापते (**नकिः**) निषेधे (**त्वा**) त्वाम् (**प्रति**) (**अस्ति**) (**एषाम्**) (**विश्वा**) सर्वाणि (**जातानि**) प्रसिद्धानि (**अभि**) (**असि**) (**तानि**)॥५॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यथा त्वा मन्यमानश्शूरो त्वा नहि युयोध न तुरो न धृष्णुर्न योधो त्वाभि युयोध त्वा प्रति कोऽपि नकिरस्ति एषां यानि विश्वा जातानि बलादीनि सन्ति यतस्तानि त्वं जित्वा विजयमानोऽसि तस्मात् प्रशंसां लभसे॥५॥

भावार्थः-राज्ञा राजपुरुषैर्विशेषतः सेनाजनैरीदृशं बलं विज्ञानं च वर्त्तनीयं येन कोऽपि योद्धुं नेच्छेत्॥५॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) सेना के स्वामिन्! जैसे (**त्वा**) आपको (**मन्यमानः**) मानता हुआ (**शूरः**) शूरवीर जन (**त्वा**) आपसे (**नहि**) नहीं (**युयोध**) युद्ध करता और (**न**) न (**तुरः**) हिंसा वा शीघ्र करने वाला (**न**) न (**धृष्णुः**) ढीठ (**न**) और न (**योधः**) प्रतियोधा (**त्वा**) आपसे (**अभि**) सब प्रकार से युद्ध करता है, किन्तु आपके (**प्रति**) प्रति कोई भी (**नकिः**) नहीं (**अस्ति**) है और (**एषाम्**) इन की जो (**विश्वा**) सम्पूर्ण (**जातानि**) प्रसिद्ध सेना हैं, जिस कारण (**तानि**) उनको आप जीत कर जीतते हुए (**असि**) हैं, इससे प्रशंसा को प्राप्त होते हैं॥५॥

भावार्थ:-राजा और राजपुरुषों को चाहिए कि विशेष करके सेनाजनों से ऐसा पराक्रम और विज्ञान बढ़ावें, जिससे कोई भी युद्ध करने की इच्छा न करे॥५॥

पुनस्स राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स पत्यत उभयोर्नृम्णमयोर्यदी वेधसः समिथे हवन्ते।

वृत्रे वा महो नृवति क्षये वा व्यचस्वन्ता यदि वितन्तसैते॥६॥

सः। पत्यते। उभयोः। नृम्णम्। अयोः। यदि। वेधसः। सम्ऽइथे। हवन्ते। वृत्रे। वा। महः। नृऽवति। क्षये। वा। व्यचस्वन्ता। यदि। वितन्तसैते इति॥६॥

पदार्थः-(**सः**) (**पत्यते**) पतिरिवाचरति (**उभयोः**) द्वयोः प्रजासेनयोः (**नृम्णम्**) नरा रमन्ते यस्मिंस्तद्धनम् (**अयोः**) वियोजय संयोजय वा (**यदी**) अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। (**वेधसः**) मेधाविनः (**समिथे**) स- ामे। **समिथ इति स- ामनामसु पठितम्।** (निघं०२.१७) (**हवन्ते**) स्पर्द्धन्ते (**वृत्रे**) धने (**वा**) (**महः**) महति (**नृवति**) प्रशंसिता नरा विद्यन्ते यस्मिंस्तस्मिन् (**क्षये**) गृहे (**वा**) (**व्यचस्वन्ता**) व्याप्नुवन्तौ (**यदि**) (**वितन्तसैते**) भृशं युध्येताम्॥६॥

अन्वयः-हे राजन्! यो भवानुभयोर्मध्ये पत्यते स त्वं यदी नृम्णमयोः शूरवीरो वृत्रे वा महो नृवति क्षये व्यचस्वन्ता सन्तौ वितन्तसैते तर्ह्युभयोर्मध्य इतरो विजयमाप्नुयात्। यदि वा ये वेधसः समिथे हवन्ते तेऽवश्यं विजयमाप्नुवन्ति॥६॥

भावार्थः-यो राजा पक्षपातं विहाय शत्रुमित्रयोः सत्यं न्यायं करोति सर्वेष्वधिकारेषु धार्मिकान् धीमतो रक्षति सर्वथा सेनायां कुलीनान् दृढान् राजभक्तान्नियोजयति स एव सर्वदा विजयी भवति॥६॥

पदार्थ:-हे राजन्! जो आप (**उभयोः**) दोनों अर्थात् प्रजा और सेना के मध्य में (**पत्यते**) स्वामी के सदृश आचरण करते हो (**सः**) वह आप (**यदी**) यदि (**नृम्णम्**) मनुष्य रमते हैं जिसमें उस धन को (**अयोः**) मिलावें वा अलग करें और [शूरवीर] (**वृत्रे**) धन (**वा**) वा (**महः**) बड़े (**नृवति**) प्रशंसायुक्त नर विद्यमान जिसमें उस (**क्षये**) गृह में (**व्यचस्वन्ता**) व्याप्त होने वाले [होते हुए] (**वितन्तसैते**) अत्यन्त युद्ध करें तो दोनों अर्थात् प्रजा और सेना के मध्य में एक विजय को प्राप्त होवे और (**यदि, वा**) अथवा जो (**वेधसः**) बुद्धिमान् के (**समिथे**) स- ाम में (**हवन्ते**) स्पर्द्धा करते हैं, वे अवश्य विजय को प्राप्त होते हैं॥६॥

भावार्थ:-जो राजा पक्षपात का त्याग करके शत्रु और मित्र का सत्य न्याय करता है और सब अधिकारों में धार्मिक, बुद्धिमानों जनों को रखता है और सब प्रकार से सेना में कुलीन, दृढ़ राजभक्तों को नियुक्त करता है, वही सर्वदा विजयी होता है॥६॥

पुना राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अध॑ स्मा ते चर्षणयो॒ यदेजा॑निन्द्र त्रा॒तोत भ॑वा वरू॒ता।

अ॒स्माका॑सो॒ ये नृत॑मासो अ॒र्य इन्द्र॑ सू॒रयो॑ दधि॒रे पु॒रो नः॑॥७॥

अध॑। स्म॒। ते॒। च॒र्ष॒ण॒यः॒। यत्। एजा॑न्। इ॒न्द्र॒। त्रा॒ता। उ॒त। भ॒व॒। व॒रू॒ता। अ॒स्माका॑सः। ये। नृऽत॑मासः। अ॒र्यः। इन्द्र॑। सू॒रयः॑। द॒धि॒रे। पु॒रः। नः॒॥७॥

पदार्थः-(**अध**) अनन्तरम् (**स्मा**) एव। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। (**ते**) तव (**चर्षणयः**) सर्वव्यवहारविचक्षणा मनुष्याः (**यत्**) (**एजान्**) भीरून् कम्पकान् (**इन्द्र**) परमैश्वर्यप्रद राजन् (**त्राता**) रक्षकः (**उत**) अपि (**भव**) अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**वरूता**) श्रेष्ठः (**अस्माकासः**) अस्मदीयाः (**ये**) (**नृतमासः**) अतिशयेन नायकाः (**अर्यः**) ईश्वरो वा स्वामी (**इन्द्र**) दुष्टानां विदारक (**सूरयः**) विपश्चितः (**दधिरे**) दधतु (**पुरः**) नगराणि (**नः**) अस्माकम्॥७॥

अन्वयः-हे इन्द्र! ये तेऽस्माकासो नृतमासः सूरयश्चर्षणयो नः पुरो दधिरे तेषामर्यः सन्नध त्राता भव। हे इन्द्र! यत्त्वमेजान् कुर्या उत वरूता स्मा भव॥७॥

भावार्थः-हे राजन्! विश्वस्तान् कुलीनान् मूलराज्ये भवानस्य राष्ट्रस्य सेनायाश्च मध्ये रक्षायै युञ्जीयाः तेषां रक्षां सततं कुर्याः॥७॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य के देने वाले राजन्! (**ये**) जो (**ते**) आपके (**अस्माकासः**) हमारे (**नृतमासः**) अतिशय मुखिया और (**सूरयः**) विद्वान् जन (**चर्षणयः**) सम्पूर्ण व्यवहारों में चतुर मनुष्य (**नः**) हम लोगों के (**पुरः**) नगरों को (**दधिरे**) धारण करें और उनके (**अर्यः**) स्वामी होते हुए (**अध**) अनन्तर (**त्राता**) रक्षा करने वाले (**भव**) हूजिये और हे (**इन्द्र**) दुष्टों के नाश करने वाले! (**यत्**) जिससे आप (**एजान्**) भयभीतों को कम्पाने वाले करिये और (**उत**) भी (**वरूता**) श्रेष्ठ (**स्मा**) ही हूजिये॥७॥

भावार्थः-हे राजन्! विश्वासयुक्त, कुलीन, मुख्य राज्य में हुए जनों को इस राज्य और सेना के मध्य में रक्षा के निमित्त नियुक्त करिये और उनकी रक्षा निरन्तर करिये॥७॥

पुनः स राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अनु॑ ते दा॒यि म॒ह इ॑न्द्रि॒याय॑ स॒त्रा ते॒ विश्व॒मनु॑ वृत्र॒हत्ये॑।

अनु॑ क्ष॒त्रमनु॒ सहो॑ यजत्रेन्द्र दे॒वेभि॒रनु॑ ते नृ॒षह्ये॑॥८॥

अनु॑। ते॒। दा॒यि॒। म॒हे। इ॒न्द्रि॒याय॑। स॒त्रा। ते॒। विश्व॑म्। अनु॑। वृ॒त्र॒ऽहत्ये॑। अनु॑। क्ष॒त्रम्। अनु॑। सहः॑। य॒ज॒त्र॒। इन्द्र॑। दे॒वेभिः॑। अनु॑। ते॒। नृ॒ऽसह्ये॑॥८॥

पदार्थः-(**अनु**) (**ते**) तव (**दायि**) दीयते (**महे**) महत् (**इन्द्रियाय**) धनाय (**सत्रा**) सत्येन (**ते**) तव (**विश्वम्**) सर्वं जगत् (**अनु**) (**वृत्रहत्ये**) मेघहननमिव स- ामे (**अनु**) (**क्षत्रम्**) राज्यं धनं वा (**अनु**) (**सहः**)

बलम् **(यजत्र)** पूजनीयतम **(इन्द्र)** शत्रुविदारक राजन् **(देवेभि:)** विद्वद्भि: सह **(अनु)** **(ते)** तव **(नृषह्ये)** नृभि: सोढव्ये स- ामे॥८॥

अन्वय:-हे यजत्रेन्द्र! त्वया नृषह्ये देवेभिस्सह महेऽनुदायि त इन्द्रियाय ते सत्रा विश्वमनु दायि वृत्रहत्ये क्षत्रमनुदायि सहोऽनुदायि ते नृषह्ये सुखमनुदायि॥८॥

भावार्थ:-हे राजन्य! त्वमुत्तमानि कर्माणि कुर्यास्तैरनुकूल: संस्तान् धनादिभि: सततं सत्कुर्या: सदैव सत्योपदेशकानां विदुषां सङ्गेनाऽखिलां राजविद्यां विज्ञाय सततं प्रचारय॥८॥

पदार्थ:-हे **(यजत्र)** अत्यन्त श्रेष्ठ **(इन्द्र)** शत्रुओं के नाश करने वाले राजन्! आपको चाहिये कि **(नृषह्ये)** मनुष्यों से सहने योग्य संग्राम में **(देवेभि:)** विद्वानों के साथ **(महे)** बृहत् को **(अनु, दायि)** देवें और **(ते)** आपके **(इन्द्रियाय)** धन के लिये **(ते)** आपके **(सत्रा)** सत्य से **(विश्वम्)** सम्पूर्ण जगत् को **(अनु)** पश्चात् देवें और **(वृत्रहत्ये)** मेघ के नाश करने के समान स- ाम में **(क्षत्रम्)** राज्य वा धन को **(अनु)** पश्चात् देवें और **(सह:)** बल को **(अनु)** पश्चात् देवें और **(ते)** आपके मनुष्यों से सहने योग्य स- ाम में सुख को **(अनु)** पश्चात् देवें॥८॥

भावार्थ:-हे क्षत्रियकुल में उत्पन्न हुए जन! आप उत्तम कर्मों को करिये और उनके साथ अनुकूल हुए उनका धन आदि से निरन्तर सत्कार करिये और सदा ही सत्य के उपदेशक विद्वानों के सङ्ग से सम्पूर्ण राजविद्या को जानकर निरन्तर प्रचार करिये॥८॥

पुन: स राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एवा न: स्पृध: समजा समत्स्विन्द्र रारन्धि मिथतीरदेवी:।

विद्याम वस्तोरवसा गृणन्तो भरद्वाजा उत त इन्द्र नूनम्॥९॥२०॥

एव। न:। स्पृध:। सम्। अज। समत्ऽसु। इन्द्र। ररन्धि। मिथती:। अदेवी:। विद्याम। वस्तो:। अवसा। गृणन्त:। भरत्ऽवाजा:। उत। ते। इन्द्र। नूनम्॥९॥

पदार्थ:-**(एवा)** अत्र **निपातस्य** चेति दीर्घ:। **(न:)** अस्मान् **(स्पृध:)** स्पर्द्धमानान् **(सम्)** **(अजा)** विज्ञापय। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घ:। **(समत्सु)** स- ामेषु **(इन्द्र)** शत्रुबलविदारक **(रारन्धि)** रन्धय हिंधि। अत्र **तुजादीनामित्यभ्यासदैर्घ्यम्**। **(मिथती:)** हिंसती: **(अदेवी:)** अदिव्या: **(विद्याम)** **(वस्तो:)** दिवसस्य मध्ये **(अवसा)** रक्षणादिना **(गृणन्त:)** स्तुवन्त: **(भरद्वाजा:)** धृतशुद्धविज्ञाना: **(उत)** **(ते)** तव **(इन्द्र)** सर्वसुखप्रद **(नूनम्)** निश्चयेन॥९॥

अन्वय:-हे इन्द्र! त्वं स्पृधो नोऽस्मान्त्समत्स्वेवा समजाऽदेवीर्मिथती: शत्रुसेना: समत्सु रारन्धि। हे इन्द्र! येन ते तवाऽवसा वस्तोर्नूनं गृणन्त उत भरद्वाजा वयं विजयं विद्याम॥९॥

भावार्थः-यो राजा सुभटान् वीरान् पुरस्तादेव सुशिक्ष्य युद्धेषु प्रेरयति तं सर्वथा रक्षकं सर्वे शूरा आश्रयन्तीति॥९॥

अत्रेन्द्रशूरवीरसेनापतिराजकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति पञ्चविंशतितमं सूक्तं विंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** सम्पूर्ण सुखों के देने वाले! आप **(स्पृधः)** ईर्ष्या करते हुए **(नः)** हम लोगों को **(समत्सु)** संग्रामों में **(एवा)** ही **(सम्, अजा)** विशेष करके जनाइये और **(अदेवीः)** श्रेष्ठ गुणों से नहीं विशिष्ट **(मिथतीः)** नाश करती हुई शत्रुओं की सेनाओं को स- ग्रामों में **(रारन्धि)** नष्ट करिये और हे **(इन्द्र)** शत्रुओं के बल को दूर करने वाले! **(ते)** आपकी **(अवसा)** रक्षा आदि से **(वस्तोः)** दिन के मध्य में **(नूनम्)** निश्चय से **(गृणन्तः)** स्तुति करते हुए **(उत)** भी **(भरद्वाजाः)** शुद्ध विज्ञान को धारण किये हुए हम लोग विजय को **(विद्याम)** जानें॥९॥

भावार्थः-जो राजा अच्छे योद्धा वीरों को प्रथम ही उत्तम प्रकार शिक्षा देकर युद्धों में प्रेरणा करता है, उस सब प्रकार से रक्षा करने वाले राजा का सब शूरवीर जन आश्रय करते **[हैं]**॥९॥

इस सूक्त में इन्द्र, शूरवीर, सेनापति और राजा के कृत्य का वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये।

यह पच्चीसवाँ सूक्त और बीसवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथाष्टर्चस्य षड्विंशतितमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। इन्द्रो देवता। १ पङ्क्तिः। २, ४, ६ भुरिक्पङ्क्तिः। ३ निचृत्पङ्क्तिः। ५ स्वराट्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ७ त्रिष्टुप्। ८ निचृत् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ राजा प्रजाजनाः परस्परं कथं वर्तेरन्नित्याह॥

अब आठ ऋचावाले छब्बीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में राजा और प्रजाजन परस्पर कैसा बर्ताव करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

श्रुधी न इन्द्र ह्वयामसि त्वा महो वाजस्य सातौ वावृषाणाः।
सं यद्विशोऽयन्त शूरसाता उग्रं नोऽवः पार्ये अहन् दाः॥१॥

श्रुधि। नः। इन्द्र। ह्वयामसि। त्वा। महः। वाजस्य। सातौ। वावृषाणाः। सम्। यत्। विशः। अयन्त। शूरऽसातौ। उग्रम्। नः। अवः। पार्ये। अहन्। दाः॥१॥

पदार्थः-(श्रुधि) शृणु। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(नः)** अस्मान् **(इन्द्र)** राजन् **(ह्वयामसि)** प्रज्ञापयेम **(त्वा)** **(महः)** महतः **(वाजस्य)** वेगादिगुणयुक्तस्य **(सातौ)** शूराणां सातिर्विभागो यस्मिंस्तस्मिन्त्संग्रामे **(वावृषाणाः)** वृषं बलं कुर्वाणाः। अत्र **तुजादीनामि**त्यभ्यासदीर्घः। **(सम्)** **(यत्)** यतः **(विशः)** मनुष्यादिप्रजाः **(अयन्त)** प्राप्नुवन्ति **(शूरसातौ)** शूराणां सातिर्विभागो यस्मिंस्तस्मिन्त्संग्रामे **(उग्रम्)** तेजस्विनम् **(नः)** अस्मभ्यम् **(अवः)** रक्षणम् **(पार्ये)** पालयितव्ये **(अहन्)** दिने **(दाः)** देहि॥१॥

अन्वयः-हे इन्द्र! वावृषाणा विशो वयं महो वाजस्य सातौ यत्त्वा ह्वयामसि तत्त्वं नो वचांसि श्रुधी ये शूरसातौ नः समयन्त तत्र पार्येऽहन्नुग्रमवो दाः॥१॥

भावार्थः-राज्ञामिदमतिसमुचितमस्ति यत्प्रजा ब्रूयात् तद्ध्यानेन शृणुयुः। यतो राजप्रजाजनानां विरोधो न स्यात् प्रत्यहं सुखं वर्धेत॥१॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** राजन्! **(वावृषाणाः)** बल को करते हुए **(विशः)** मनुष्य आदि प्रजा हम लोग **(महः)** बड़े **(वाजस्य)** वेग आदि गुणों से युक्त के **(सातौ)** शूरों का विभाग जिसमें उस संग्राम में **(यत्)** जिससे **(त्वा)** आपको **(ह्वयामसि)** जनावें, जिससे आप **(नः)** हम लोगों के लिये वचनों को **(श्रुधी)** सुनिये और जो **(शूरसातौ)** शूरों का विभाग जिसमें उस संग्राम में **(नः)** हम लोगों को **(सम्, अयन्त)** प्राप्त होते हैं, उस **(पार्ये)** पालन करने योग्य **(अहन्)** दिन में **(उग्रम्)** तेजस्वी को **(अवः)** रक्षण **(दाः)** दीजिये॥१॥

भावार्थः-राजाओं को यह अतियोग्य है कि **[जो]** प्रजा कहे उसको ध्यान से सुनें, जिससे राजा और प्रजाजनों का विरोध न होवे और प्रतिदिन सुख बढ़े॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वां वाजी हवते वाजिनेयो महो वाजस्य गध्यस्य सातौ।
त्वां वृत्रेष्विन्द्र सत्पतिं तरुत्रं त्वां चष्टे मुष्टिहा गोषु युध्यन्॥२॥

त्वाम्। वाजी। हवते। वाजिनेयः। महः। वाजस्य। गध्यस्य। सातौ। त्वाम्। वृत्रेषु। इन्द्र। सत्ऽपतिम्। तरुत्रम्। त्वाम्। चष्टे। मुष्टिऽहा। गोषु। युध्यन्॥२॥

पदार्थः-(**त्वाम्**) राजानम् (**वाजी**) वेगवान् ज्ञानी जनः (**हवते**) श्रावयेत् (**वाजिनेयः**) वाजिन्या ज्ञानवत्या अपत्यम् (**महः**) महान्तम् (**वाजस्य**) विज्ञानस्य (**गध्यस्य**) सर्वैः प्राप्तुं योग्यस्य (**सातौ**) संविभागे (**त्वाम्**) (**वृत्रेषु**) धनेषु (**इन्द्र**) दुष्टानां विनाशक (**सत्पतिम्**) सतां पात्रम् (**तरुत्रम्**) तारकम् (**त्वाम्**) (**चष्टे**) कथयामि (**मुष्टिहा**) यो मुष्ट्या हन्ति (**गोषु**) प्राप्तव्यासु भूमिषु (**युध्यन्**)॥२॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यथा वाजिनेयो वाजी गध्यस्य वाजस्य सातौ त्वां हवते तथा वृत्रेषु सत्पतिं त्वां महश्चष्टे गोषु युध्यन् मुष्टिहा घ्नन् वृत्रेषु त्वां तरुत्रं चष्टे॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजन्! यत्र प्रजाजना त्वामुपस्थातुमिच्छन्ति तत्र तत्र त्वमुपस्थितो भव॥२॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) दुष्टों के नाश करने वाले जैसे (**वाजिनेयः**) ज्ञानवती की सन्तान और (**वाजी**) वेगयुक्त ज्ञानीजन (**गध्यस्य**) सबसे प्राप्त होने योग्य (**वाजस्य**) विज्ञान के (**सातौ**) उत्तम प्रकार विभाग में (**त्वाम्**) आपको (**हवते**) सुनावे, वैसे (**वृत्रेषु**) धनों में (**सत्पतिम्**) श्रेष्ठों के पालन करने वाले (**त्वाम्**) आपको मैं (**महः**) बड़ा (**चष्टे**) कहता हूँ और (**गोषु**) प्राप्त होने योग्य भूमियों में (**युध्यन्**) युद्ध करता हुआ (**मुष्टिहा**) मुष्टि से मारने वाला मारता हुआ [**(वृत्रेषु)**] धनों में (**त्वाम्**) आपको मैं (**तरुत्रम्**) पार करने वाला कहता हूँ॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजन्! जहाँ-जहाँ प्रजाजन आपको प्राप्त होने की इच्छा करते हैं, वहाँ-वहाँ आप उपस्थित हूजिये॥२॥

पुना राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वं कविं चोदयोऽर्कसातौ त्वं कुत्साय शुष्णं दाशुषे वर्क्।
त्वं शिरो अमर्मणः पराहन्नतिथिग्वाय शंस्यं करिष्यन्॥३॥

त्वम्। कविम्। चोदयः। अर्कऽसातौ। त्वम्। कुत्साय। शुष्णम्। दाशुषे। वर्क्। त्वम्। शिरः। अमर्मणः। परा। अहन्। अतिथिऽग्वाय। शंस्यम्। करिष्यन्॥३॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**कविम्**) विद्वांसम् (**चोदयः**) प्रेरय (**अर्कसातौ**) अन्नादिविभागे (**त्वम्**) (**कुत्साय**) वज्राय (**शुष्णम्**) बलम् (**दाशुषे**) दात्रे (**वर्क्**) छिनत्सि (**त्वम्**) (**शिरः**) (**अमर्मणः**)

अविद्यमानानि मर्माणि यस्मिँस्तस्य **(परा)** **(अहन्)** दूरीकुर्याः **(अतिथिग्वाय)** योऽतिथीनागच्छति तस्मै **(शंस्यम्)** प्रशंसनीयं कर्म **(करिष्यन्)**॥३॥

अन्वयः-हे इन्द्र राजँस्त्वमर्कसातौ कविं चोदयस्त्वं कुत्साय दाशुषे च शुष्णं वर्क् त्वममर्मणः शिरः पराऽहन्, अतिथिग्वाय शंस्यं करिष्यन् वर्त्तसे तस्मात् सत्कर्त्तव्योऽसि॥३॥

भावार्थः-राजा विद्याविनयादिशुभगुणान् राजकार्येषु योजयेत्, उन्नतिञ्च करिष्यन् विद्यादीनां दाता भूत्वा प्रशंसां प्राप्नुयात्॥३॥

पदार्थः-हे तेजस्वि राजन्! **(त्वम्)** आप **(अर्कसातौ)** अन्न आदि के विभाग में **(कविम्)** विद्वान् की **(चोदयः)** प्रेरणा करिये और **(त्वम्)** आप **(कुत्साय)** वज्र के लिये और **(दाशुषे)** दान करने वाले के लिये **(शुष्णम्)** बल को **(वर्क्)** काटते हो और **(त्वम्)** आप **(अमर्मणः)** नहीं विद्यमान मर्म जिसमें उसके **(शिरः)** शिर को **(परा, अहन्)** दूर करिये और **(अतिथिग्वाय)** अतिथियों को प्राप्त होने वाले के लिये **(शंस्यम्)** प्रशंसा करने योग्य कर्म को **(करिष्यन्)** करते हुए वर्त्तमान हो, इससे आप सत्कार करने योग्य हो॥३॥

भावार्थः-राजा विद्या और विनय आदि श्रेष्ठ गुणों से युक्त जनों को राजकार्यों में युक्त करे और उन्नति को करता हुआ विद्या आदि का दाता होकर प्रशंसा को प्राप्त होवे॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वं रथं प्र भरो योधमृष्वमावो युध्यन्तं वृषभं दशद्युम्।

त्वं तुग्रं वेतसवे सचाहन् त्वं तुजिं गृणन्तमिन्द्र तूतोः॥४॥

त्वम्। रथम्। प्र। भरः। योधम्। ऋष्वम्। आवः। युध्यन्तम्। वृषभम्। दशऽद्युम्। त्वम्। तुग्रम्। वेतसवे। सचा। अहन्। त्वम्। तुजिम्। गृणन्तम्। इन्द्र। तूतोरिति तूतोः॥४॥

पदार्थः-**(त्वम्)** **(रथम्)** रमणीयं यानम् **(प्र)** **(भरः)** धर **(योधम्)** युद्धकर्तारम् **(ऋष्वम्)** महान्तम् **(आवः)** रक्ष **(युध्यन्तम्)** **(वृषभम्)** बलिष्ठम् **(दशद्युम्)** दशभिरङ्गुलिभिः प्रकाशप्रदम् **(त्वम्)** **(तुग्रम्)** तेजस्विनम् **(वेतसवे)** व्याप्तैश्वर्ये **(सचा)** सम्बन्धेन **(अहन्)** **(त्वम्)** **(तुजिम्)** बलिष्ठम् **(गृणन्तम्)** स्तुवन्तम् **(इन्द्र)** सेनाध्यक्ष **(तूतोः)** वर्धय॥४॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं रथं प्र भरो वृषभं दशद्युं योधं युध्यन्तमृष्वमावस्त्वं वेतसवे सचा तुग्रमहंस्त्वं गृणन्तं तुजिं तूतोः॥४॥

भावार्थः-यो राजा रथं युद्धकुशलान् वीराँश्च वर्धयति स महत्सुखमाप्नोति॥२॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** सेना के स्वामिन्! **(त्वम्)** आप **(रथम्)** सुन्दर वाहन को **(प्र, भरः)** धारण करिये तथा **(वृषभम्)** बलिष्ठ **(दशद्युम्)** दश अंगुलियों से प्रकाश देने वाले और **(योधम्)** युद्ध करने

वाले से **(युध्यन्तम्)** युद्ध करते हुए **(ऋष्वम्)** बड़े की **(आवः)** रक्षा करिये और **(त्वम्)** आप **(वेतसवे)** व्याप्त ऐश्वर्य वाले में **(सचा)** सम्बन्ध से **(तुग्रम्)** तेजस्वी को **(अहन्)** दूर करिये और **(त्वम्)** आप **(गृणन्तम्)** स्तुति करते हुए **(तुजिम्)** बलिष्ठ को **(तूतोः)** बढ़ाइये॥४॥

भावार्थः-जो राजा रथ और युद्धकुशल वीरों को बढ़ाता है, वह अत्यन्त सुख को प्राप्त होता है॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वं तदुक्थमिन्द्र बर्हणा कः प्र यच्छता सहस्रा शूर दर्षि।
अव गिरेर्दासं शम्बरं हन् प्रावो दिवोदासं चित्राभिरूती॥५॥२१॥

त्वम्। तत्। उक्थम्। इन्द्र। बर्हणा। करिति कः। प्र। यत्। शता। सहस्रा। शूर। दर्षि। अव। गिरेः। दासम्। शम्बरम्। हन्। प्र। आवः। दिवःऽदासम्। चित्राभिः। ऊती॥५॥

पदार्थः-**(त्वम्)** **(तत्)** **(उक्थम्)** प्रशंसनीयं वचनम् **(इन्द्र)** सुखप्रद **(बर्हणा)** वर्धनेन **(कः)** कुर्याः **(प्र)** **(यत्)** यतः **(शता)** शतानि **(सहस्रा)** सहस्राणि **(शूर)** शत्रूणां हिंसक **(दर्षि)** विदृणासि **(अव)** **(गिरेः)** मेघस्य **(दासम्)** सेवकम् **(शम्बरम्)** शङ्करम् **(हन्)** हंसि **(प्र)** **(आवः)** रक्ष **(दिवोदासम्)** प्रकाशवज्ञातदानशीलम् **(चित्राभिः)** अद्भुताभिः **(ऊती)** रक्षाभिः॥५॥

अन्वयः-हे इन्द्र राजन्! यद्यतस्त्वं चित्राभिरूती तदुक्थं बर्हणा कः। हे शूर! शता सहस्रा प्र दर्षि गिरेर्दासं शम्बरमव हन्त्सूर्य इव हंसि तथा दिवोदासं प्रावः॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजन्! भवान्त्सर्वदा प्रजावर्धनं दुष्टनिक्रन्दनं विद्वत्सेवां च करोतु यतोऽसङ्ख्यं सुखं स्यात्॥५॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** सुख के देने वाले राजन्! **(यत्)** जिससे **(त्वम्)** आप **(चित्राभिः)** अद्भुत **(ऊती)** रक्षाओं से **(तत्)** उस **(उक्थम्)** प्रशंसनीय वचन को **(बर्हणा)** बढ़ने से **(कः)** करें और हे **(शूर)** शत्रुओं के नाश करने वाले! **(शता)** सैकड़ों और **(सहस्रा)** हजारों का **(प्र, दर्षि)** नाश करते हो और **(गिरेः)** मेघ के **(दासम्)** सेवक और **(शम्बरम्)** कल्याण करने वाले का **(अव, हन्)** और सूर्य जैसे वैसे नाश करते हो वह आप **(दिवोदासम्)** प्रकाश के समान उत्पन्न दानशील अर्थात् दान देने वाले की **(प्र, आवः)** रक्षा करो॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजन्! आप सर्वदा प्रजा की वृद्धि, दुष्टों का नाश और विद्वानों की सेवा करो, जिससे असङ्ख्य सुख होवे॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वं श्रद्धाभिर्मन्दसानः सोमैर्दभीतये चुमुरिमिन्द्र सिष्वप्।

त्वं रजिं पिठीनसे दशस्यन् षष्टिं सहस्रा शच्या सचाहन्॥६॥

त्वम्। श्रद्धाभिः। मन्दसानः। सोमैः। दभीतये। चुमुरिम्। इन्द्र। सिस्वप्। त्वम्। रजिम्। पिठीनसे। दशस्यन्। षष्टिम्। सहस्रा। शच्या। सचा। अहन्॥६॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**श्रद्धाभिः**) सत्यस्य धारणाभिः (**मन्दसानः**) आनन्दन् (**सोमैः**) ऐश्वर्यैः (**दभीतये**) दुःखहिंसनाय (**चुमुरिम्**) अत्तारम् (**इन्द्र**) राजन् (**सिष्वप्**) स्वापय (**त्वम्**) (**रजिम्**) (**पिठीनसे**) पिठीव नासिका यस्य तस्मै (**दशस्यन्**) प्रयच्छन् (**षष्टिम्**) (**सहस्रा**) सहस्राणि (**शच्या**) प्रज्ञया कर्मणा वा (**सचा**) (**अहन्**) हन्ति॥६॥

अन्वयः-हे इन्द्र राजँस्त्वं श्रद्धाभिः सोमैर्मन्दसानो दभीतये चुमुरिं सिष्वप् त्वं शच्या सचा पिठीनसे रजिं षष्टिं सहस्रा दशस्यन् यथा सूर्य्यो मेघमहँस्तथा शत्रून् जहि॥६॥

भावार्थः-हे राजन्त्सदैव पूर्णप्रीत्या न्यायेन च प्रजापालनं कुर्य्याः सहस्राणि धार्मिकान् विदुषोऽधिकारेषु संस्थाप्य कीर्तिं वर्धय॥६॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) राजन्! (**त्वम्**) आप (**श्रद्धाभिः**) सत्य की धारणाओं से और (**सोमैः**) ऐश्वर्यों से (**मन्दसानः**) आनन्द करते हुए (**दभीतये**) दुःख के नाश के लिये (**चुमुरिम्**) भोजन करने वाले को (**सिष्वप्**) सुलाइये और (**त्वम्**) आप (**शच्या**) बुद्धि वा कर्म के (**सचा**) साथ (**पिठीनसे**) पिठी के सदृश नासिका जिसकी उसके लिये (**रजिम्**) पङ्क्ति (**षष्टिम्**) साठ (**सहस्रा**) हजार (**दशस्यन्**) देता हुआ जैसे सूर्य मेघ का (**अहन्**) नाश करता है, वैसे शत्रुओं का हनन कीजिये॥६॥

भावार्थः-हे राजन्! सदा ही पूर्ण प्रीति और न्याय से प्रजापालन करो और हजारों धार्मिक विद्वानों को अधिकारों में स्थापित करके यश बढ़ाओ॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

अहं चन तत्सूरिभिरानश्यां तव ज्याय इन्द्र सुम्नमोजः।

त्वया यत्स्तवन्ते सधवीर वीरास्त्रिवरूथेन नहुषा शविष्ठ॥७॥

अहम्। चन। तत्। सूरिऽभिः। आनश्याम्। तव। ज्यायः। इन्द्र। सुम्नम्। ओजः। त्वया। यत्। स्तवन्ते। सधऽवीर। वीराः। त्रिऽवरूथेन। नहुषा। शविष्ठ॥७॥

पदार्थः-(**अहम्**) (**चन**) अपि (**तत्**) (**सूरिभिः**) विद्वद्भिः सह (**आनश्याम्**) प्राप्नुयाम् (**तव**) (**ज्यायः**) प्रशस्यम् (**इन्द्र**) सुखप्रद (**सुम्नम्**) सुखम् (**ओजः**) पराक्रमः (**त्वया**) (**यत्**) (**स्तवन्ते**) प्रशंसन्ति (**सधवीर**) समानस्थाने वर्त्तमान वीरपुरुष (**वीराः**) (**त्रिवरूथेन**) त्रीणि त्रिविधानि शीतोष्णवर्षासुखकराणि वरूथानि गृहाणि यस्य तेन (**नहुषा**) मनुष्याः (**शविष्ठ**) बलिष्ठ॥७॥

अन्वयः-हे शविष्ठ सधवीरेन्द्र! वीरा नहुषा विद्वांसो यत्स्तवन्ते तत्त्रिवरूथेन त्वया सूरिभिश्च सहाऽहमानश्यां चनाऽपि तव यज्ज्याय: सुम्नमोजोऽस्ति तदानश्याम्॥७॥

भावार्थः-ये विदुषां सङ्गेन पुरुषार्थिनो भूत्वा प्रशंसनीयं धर्म्यं कर्म कुर्वन्ति ते बलिनो भूत्वोत्तमं सुखं लभन्ते॥७॥

पदार्थः-हे **(शविष्ठ)** बलिष्ठ और **(सधवीर)** तुल्य स्थान में वर्त्तमान वीर जन **(इन्द्र)** सुख के देने वाले! **(वीराः)** वीर **(नहुषा)** मनुष्य विद्वान् **(यत्)** जिसकी **(स्तवन्ते)** प्रशंसा करते हैं **(तत्)** उसको **(त्रिवरूथेन)** तीन प्रकार के शीत, उष्ण और वर्षा में सुखकारक गृह जिनके उन **(त्वया)** आपके और **(सूरिभिः)** विद्वानों के साथ **(अहम्)** मैं **(आनश्याम्)** प्राप्त होऊँ और **(चन)** भी **(तव)** आपका जो **(ज्यायः)** प्रशंसा करने योग्य **(सुम्नम्)** सुख और **(ओजः)** पराक्रम है, उसको प्राप्त होऊँ॥७॥

भावार्थः-जो विद्वानों के सङ्ग से पुरुषार्थी होकर प्रशंसा करने योग्य, धर्मयुक्त कर्म को करते हैं, वे बली होकर उत्तम सुख को प्राप्त होते हैं॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

वयं ते अस्यामिन्द्र द्युम्नहूतौ सखायः स्याम महिन प्रेष्ठाः।
प्रातर्दनिः क्षत्रश्रीरस्तु श्रेष्ठो घने वृत्राणां सनये धनानाम्॥८॥२२॥

वयम्। ते। अस्याम्। इन्द्र। द्युम्नऽहूतौ। सखायः। स्याम। महिन। प्रेष्ठाः। प्रातर्दनिः। क्षत्रऽश्रीः। अस्तु। श्रेष्ठः। घने। वृत्राणाम्। सनये। धनानाम्॥८॥

पदार्थः-**(वयम्)** **(ते)** तव **(अस्याम्)** **(इन्द्र)** सर्वसुखप्रद **(द्युम्नहूतौ)** द्युम्नेन धनेन यशसा वा हूतिराह्वानं यस्यां तस्याम् **(सखायः)** **(स्याम)** **(महिन)** महत्तम **(प्रेष्ठाः)** अतिशयेन प्रियाः **(प्रातर्दनिः)** प्रात:काले दनिर्दानं यस्य **(क्षत्रश्रीः)** राज्यलक्ष्मीः **(अस्तु)** **(श्रेष्ठः)** अतिशयेन प्रशस्तः **(घने)** हनने **(वृत्राणाम्)** धर्मावरकाणाम् **(सनये)** विभागाय **(धनानाम्)**॥८॥

अन्वयः-हे महिनेन्द्र! वयं तेऽस्यां द्युम्नहूतौ प्रेष्ठाः सखायः स्याम। भवान् प्रातर्दनिर्वृत्राणां घने धनानां सनये श्रेष्ठः क्षत्रश्रीरस्तु॥८॥

भावार्थः-यो राजा गुणग्राही पुरुषार्थी श्रेष्ठानां पालको दुष्टानां निवर्त्तकः सर्वस्य मित्रं स्यात्तेन सह सज्जनैः सख्यं विधेयमिति॥८॥

अत्रेन्द्रपरीक्षकसभ्यराजप्रजाकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति षड्विंशं सूक्तं द्वाविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(महिन)** बड़े श्रेष्ठ **(इन्द्र)** सब के सुख देने वाले! **(वयम्)** हम लोग **(ते)** आपकी **(अस्याम्)** इस **(द्युम्नहूतौ)** धन वा यश से आह्वान जिसमें उसमें **(प्रेष्ठाः)** अतिशय प्रिय **(सखायः)** मित्र **(स्याम)** होवें और आप **(प्रातर्दनिः)** प्रात:काल में देना जिनका वह **(वृत्राणाम्)** धर्म के आवरण करने

वालों के **(घने)** नाश करने में **(धनानाम्)** धनों के **(सनये)** विभाग के लिये **(श्रेष्ठः)** अत्यन्त प्रशंसनीय **(क्षत्रश्रीः)** राज्यलक्ष्मीवान् **(अस्तु)** होवें॥८॥

भावार्थः-जो राजा गुणग्राही, पुरुषार्थी, श्रेष्ठ जनों का पालन करने और दुष्ट जनों का निवारण करने वाला तथा सबका मित्र होवे, उसके साथ सज्जनों को चाहिये कि मित्रता करें॥८॥

इस सूक्त में इन्द्र, परीक्षक, श्रेष्ठ, राजा और प्रजा के कृत्य का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये।

यह छब्बीसवाँ सूक्त और बाईसवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथाष्टर्चस्य सप्तविंशतितमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। १-७ इन्द्रः। ८ अभ्यावर्त्तिनश्चायमानस्य दानस्तुतिर्देवता। १, २ स्वराट् पङ्क्तिःछन्दः। पञ्चमः स्वरः। ३, ४ निचृत्त्रिष्टुप्। ५, ७, ८ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ६ ब्राह्मी उष्णिक् छन्दः।

अथात्र प्रश्नानाह॥

अब आठ ऋचावाले सत्ताईसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में प्रश्नों को कहते हैं॥

किम॑स्य॒ मदे॒ किम्व॑स्य पी॒ताविन्द्रः॒ किम॑स्य स॒ख्ये च॑कार।

रणा॑ वा॒ ये नि॒षदि॒ किं ते अ॑स्य पु॒रा वि॑विद्रे॒ किमु॒ नूत॑नासः॥ १॥

किम्। अ॒स्य॒। मदे॑। किम्। ऊँ॒ इति॑। अ॒स्य॒। पी॒तौ। इन्द्रः॑। किम्। अ॒स्य॒। स॒ख्ये। च॒का॒र॒। रणाः॑। वा॒। ये। नि॒ऽसदि॑। किम्। ते। अ॒स्य॒। पु॒रा। वि॒वि॒द्रे॒। किम्। ऊँ॒ इति॑। नूत॑नासः॥ १॥

पदार्थः-(**किम्**) (**अस्य**) (**मदे**) आनन्दे (**किम्**) (उ) (**अस्य**) (**पीतौ**) (**इन्द्रः**) दुःखविदारकः (**किम्**) (**अस्य**) (**सख्ये**) मित्रत्वे (**चकार**) (**रणाः**) रममाणाः (**वा**) (**ये**) (**निषदि**) (**किम्**) (**ते**) (**अस्य**) (**पुरा**) (**विविद्रे**) विदन्ति (**किम्**) (उ) (**नूतनासः**)॥ १॥

अन्वयः-हे वैद्यराजेन्द्रोऽस्य मदे किं चकार। अस्य पीतौ किमु चकारास्य सख्ये किं चकार ये वा निषदि रणा अस्य पुरा किं विविद्रे किमु नूतनासो विविद्रे ते किमनुतिष्ठन्ति॥ १॥

भावार्थः-अत्र सोमलतादिरसपानविषयाः प्रश्नाः सन्ति तेषामुत्तराण्युत्तरस्मिन् मन्त्रे ज्ञेयानि॥ १॥

पदार्थः-हे वैद्यराज! (**इन्द्रः**) दुःख के नाश करने वाले ने (**अस्य**) इसके (**मदे**) आनन्द में (**किम्**) क्या (**चकार**) किया (**अस्य**) इसके (**पीतौ**) पान करने में (**किम्**) क्या (उ) ही किया (**अस्य**) इसके (**सख्ये**) मित्रपने में क्या किया और (**ये**) जो (**वा**) वा (**निषदि**) बैठते हैं जिसमें उस गृह में (**रणाः**) रमते हुए (**अस्य**) इसके (**पुरा**) सम्मुख (**किम्**) क्या (**विविद्रे**) जानते हैं और (**किम्**) क्या (उ) और (**नूतनासः**) नवीन जन जानते हैं (**ते**) वे (**किम्**) क्या अनुष्ठान करते हैं॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में सोमलता आदि के रस के पानविषयक प्रश्न हैं, उनके उत्तर अगले मन्त्र में जानने चाहिये॥ १॥

अथ किं किं द्रव्यं सेवनीयमित्याह॥

अब किस किस द्रव्य का सेवन करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सद॑स्य॒ मदे॒ सद्व॑स्य पी॒ताविन्द्रः॒ सद॑स्य स॒ख्ये च॑कार।

रणा॑ वा॒ ये नि॒षदि॒ सत्ते अ॑स्य पु॒रा वि॑विद्रे॒ सदु॒ नूत॑नासः॥ २॥

सत्। अस्य। मदे। सत्। ऊँ इति। अस्य। पीतौ। इन्द्रः। सत्। अस्य। सख्ये। चकार। रणाः। वा। ये। निऽसदि। सत्। ते। अस्य। पुरा। विविद्रे। सत्। ऊँ इति। नूतनासः॥२॥

पदार्थः-(**सत्**) प्रमादरहितं सत्यं ज्ञानम् (**अस्य**) सोमलतादिमहौषधिगणस्य (**मदे**) आनन्दे (**सत्**) यथार्थम् (उ) (**अस्य**) (**पीतौ**) पाने (**इन्द्रः**) पूर्णविद्यो वैद्यः (**सत्**) (**अस्य**) (**सख्ये**) (**चकार**) (**रणाः**) रममाणाः (**वा**) (**ये**) (**निषदि**) निषीदन्ति यस्मिंस्तस्मिन् गृहे (**सत्**) (**ते**) (**अस्य**) (**पुरा**) (**विविद्रे**) लभन्ते (**सत्**) (उ) (**नूतनासः**)॥२॥

अन्वयः-हे जिज्ञासवः! इन्द्रोऽस्य मदे सच्चकार। अस्य पीतौ सदु चकार। अस्य सख्ये सच्चकार। ये वा निषदि रणाः सन्तोऽस्य सद्विविद्रे ते पुरा नूतनासः सदु विविद्रे॥२॥

भावार्थः-मनुष्यैर्मादकद्रव्यसेवनं विहाय सर्वदा बुद्धिबलायुःपराक्रमवर्धकानि सेव्यन्तां येन सदैव सुखं वर्द्धेत॥२॥

पदार्थः-हे जिज्ञासु जनो! (**इन्द्रः**) पूर्ण विद्यावला वैद्य (**अस्य**) इस सोमलता आदि बड़ी ओषधि समूह के (**मदे**) आनन्द में (**सत्**) प्रमाद से रहित सत्य ज्ञान (**चकार**) करे और (**अस्य**) इसके (**पीतौ**) पान करने में (**सत्**) प्रमाद से रहित सत्य ज्ञान को (उ) भी करे और (**अस्य**) इसके (**सख्ये**) मित्रपने में (**सत्**) प्रमादरहित सत्य ज्ञान को करे (**ये, वा**) अथवा जो (**निषदि**) बैठते हैं जिसमें उस गृह अर्थात् बैठक में (**रणाः**) रमते हुए (**अस्य**) इसके (**सत्**) प्रमादरहित सत्य ज्ञान को (**विविद्रे**) प्राप्त होते हैं (**ते**) वे (**पुरा**) पहिले (**नूतनासः**) नवीन जन (**सत्**) प्रमादरहित सत्य ज्ञान को (उ) ही प्राप्त होते हैं॥२॥

भावार्थः-मनुष्य लोग मादक द्रव्य के सेवन का त्याग करके सर्वदा बुद्धि, बल, आयु और पराक्रम के बढ़ाने वालों का सेवन करें, जिससे सदा ही सुख बढ़े॥२॥

पुनर्मनुष्यैः किं ध्येयमित्याह॥

फिर मनुष्यों को किसका ध्यान करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नहि नु ते महिमनः समस्य न मघवन्मघवत्त्वस्य विद्म।

न राधसोराधसो नूतनस्येन्द्र नकिर्ददृश इन्द्रियं ते॥३॥

नहि। नु। ते। महिमनः। सऽमस्य। न। मघऽवन्। मघवत्ऽत्वस्य। विद्म। न। राधसःऽराधसः। नूतनस्य। इन्द्र। नकिः। ददृशे। इन्द्रियम्। ते॥३॥

पदार्थः-(**नहि**) (**नु**) (**ते**) (**महिमनः**) (**समस्य**) तुल्यस्य (**न**) (**मघवन्**) न्यायोपार्जितधनयुक्त (**मघवत्त्वस्य**) बहुधनयुक्तानां भावस्य (**विद्म**) विजानीयाम (**न**) (**राधसोराधसः**) धनस्य धनस्य (**नूतनस्य**) नवीनस्य (**इन्द्र**) परमैश्वर्यप्रदेश्वर (**नकिः**) (**ददृशे**) दृश्यते (**इन्द्रियम्**) (**ते**) तव॥३॥

अन्वयः-हे मघवन्निन्द्र! यस्य ते महिमनः समस्य कश्चिन्नु नहि ददृशे वयं मघवत्त्वस्य तुल्यं किंचिदपि न विद्म नूतनस्य राधसोराधसः समः नकिर्ददृशे ते तवेन्द्रियं न ददृशे तस्योपासनं वयं कुर्वीमहि॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यस्य महिम्नः समो महिमैश्वर्यसामर्थ्येन समं सामर्थ्यमाकृतिश्च न विद्यते तमेव सर्वव्यापकं सर्वान्तर्यामिनं जगदीश्वरं सततं ध्यायत॥३॥

पदार्थः-हे **(मघवन्)** न्याय से इकट्ठे किये हुए धन से युक्त **(इन्द्र)** अत्यन्त ऐश्वर्य के देने वाले! जिन **(ते)** आपकी **(महिमनः)** महिमा का और **(समस्य)** तुल्यता का कोई **(नु)** भी **(नहि)** नहीं **(ददृशे)** देखा जाता है तथा हम लोग **(मघवत्त्वस्य)** बहुत धन से युक्तपने के तुल्य कुछ भी **(न)** नहीं **(विद्म)** जानें और **(नूतनस्य)** नवीन **(राधसोराधसः)** धन-धन के तुल्य **(नकिः)** नहीं देखा जाता है और **(ते)** आपका **(इन्द्रियम्)** इन्द्रिय **(न)** नहीं देखा जाता है, उनकी उपासना को हम लोग करें॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिसकी महिमा के समान महिमा, ऐश्वर्यसामर्थ्य के समान सामर्थ्य और स्वरूप नहीं विद्यमान है, उसी सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, जगदीश्वर का निरन्तर ध्यान करो॥३॥

पुनाराजप्रजाः कथं वर्तेरन्नित्याह॥

फिर राजा और प्रजा को कैसा वर्त्ताव करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एतत्त्यत्त इन्द्रियमचेति येनावधीर्वरशिखस्य शेषः।

वज्रस्य यत्ते निहतस्य शुष्मात् स्वनाच्चिदिन्द्र परमो ददार॥४॥

एतत्। त्यत्। ते। इन्द्रियम्। अचेति। येन। अवधीः। वरऽशिखस्य। शेषः। वज्रस्य। यत्। ते। निऽहतस्य। शुष्मात्। स्वनात्। चित्। इन्द्र। परमः। ददार॥४॥

पदार्थः-**(एतत्)** **(त्यत्)** तत् **(ते)** तव **(इन्द्रियम्)** **(अचेति)** चेतयति **(येन)** **(अवधीः)** हन्यात् **(वरशिखस्य)** वरा श्रेष्ठा शिखा यस्य तस्य **(शेषः)** **(वज्रस्य)** विद्युतः **(यत्)** **(ते)** तव **(निहतस्य)** निपतितस्य **(शुष्मात्)** बलाच्छोषणात् **(स्वनात्)** शब्दात् **(चित्)** इव **(इन्द्र)** सूर्य इव राजन् **(परमः)** श्रेष्ठः **(ददार)** विदृणाति॥४॥

अन्वयः-हे इन्द्र! परमो भवान् यद्ददार त्यदेतत्ते वज्रस्य सकाशान्निहतस्येन्द्रियमचेति येन वरशिखस्य ते शेषस्त्वमवधीर्विद्युच्चिच्छुष्मात् स्वनाद्भाययति तथैव त्वं दुष्टान्त्सभयान् कुर्याः॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यो राजा विद्युद्वत्पराक्रमी विज्ञानवर्धको न्यायव्यवहारे सूर्यवत्प्रकाशते स एव राजशिरोमणिर्विज्ञेयः॥४॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** सूर्य के समान राजन्! **(परमः)** श्रेष्ठ आप **(यत्)** जिसको **(ददार)** विदीर्ण करते हैं **(त्यत्)** उस **(एतत्)** इसको **(ते)** आपकी **(वज्रस्य)** बिजुली के समीप से **(निहतस्य)** गिराये गए का **(इन्द्रियम्)** मन **(अचेति)** जनाता है **(येन)** जिससे **(वरशिखस्य)** श्रेष्ठ शिखा वाले **(ते)** आपका **(शेषः)** शेष है और आप **(अवधीः)** नाश करें और बिजुली **(चित्)** जैसे **(शुष्मात्)** बल और शोषण से **(स्वनात्)** शब्द से भय देती है, वैसे ही आप दुष्टों को भयभीत करिये॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो राजा बिजुली के समान पराक्रमी, विज्ञान को बढ़ाने वाला, न्याय के व्यवहार में सूर्य के सदृश प्रकाशित होता है, वही राजाओं में शिरोमणि समझना चाहिए॥४॥

पुनः स कीदृश इत्याह॥

फिर वह कैसा है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वधीदिन्द्रो वरशिखस्य शेषोऽभ्यावर्तिने चायमानाय शिक्षन्।

वृचीवतो यद्धरियूपीयायां हन् पूर्वे अर्धे भियसापरो दर्त्॥५॥२३॥

वधीत्। इन्द्रः। वरऽशिखस्य। शेषः। अभिऽआवर्तिने। चायमानाय। शिक्षन्। वृचीवतः। यत्। हरिऽयूपीयायाम्। हन्। पूर्वे। अर्धे। भियसा। अपरः। दर्त्॥५॥

पदार्थः-(**वधीत्**) हन्यात् (**इन्द्रः**) (**वरशिखस्य**) वरा शिखा यस्य तद्वत् मेघस्य (**शेषः**) यः शिष्यते (**अभ्यावर्त्तिने**) अभ्यावर्त्तितुं शीलं यस्य तस्मै (**चायमानाय**) सत्कर्त्रे (**शिक्षन्**) विद्यां ददन् (**वृचीवतः**) वृचिरविद्याछेदनं प्रशस्तं यस्य तस्य (**यत्**) यः (**हरियूपीयायाम्**) हरीन् मुनीनिच्छतां पीयायां पानक्रियायाम् (**हन्**) हन्ति (**पूर्वे**) सम्मुखे (**अर्द्धे**) (**भियसा**) भयेन (**अपरः**) (**दर्त्**) दृणाति॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यद्यः शेष इन्द्रस्सूर्यो वृचीवतो वरशिखस्याऽभ्यावर्त्तिन इव चायमानाय शिक्षन् भियसा हरियूपीयायां पूर्वेऽर्द्धे हन् वधीत्, अपरो विद्युदग्निस्तं दर्त् दृणाति तथा वर्त्तमानमुपदेशकं वयं सत्कुर्याम॥५॥

भावार्थः-ये मनुष्याः पूर्वे वयसि विद्वद्भ्यो विद्यां गृहीत्वा दुर्व्यसनानि हत्वा सुशीला भवन्ति तेऽधर्माचरणाद् बिभ्यति॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यत्**) जो (**शेषः**) अवशिष्ट (**इन्द्रः**) सूर्य (**वृचीवतः**) अविद्या का छेदन प्रशंसित जिसके उस (**वरशिखस्य**) श्रेष्ठ शिखा वाले के समान मेघ के (**अभ्यावर्त्तिने**) चारों ओर घूमनेवाले के लिये जैसे वैसे (**चायमानाय**) सत्कार करने वाले के लिये (**शिक्षन्**) विद्या देता हुआ (**भियसा**) भय से (**हरियूपीयायाम्**) विचारशील मनुष्यों की इच्छा करते हुओं की पान क्रिया में (**पूर्वे**) सन्मुख (**अर्द्धे**) अर्द्धभाग में (**हन्**) नाश करता वा (**वधीत्**) नाश करे (**अपरः**) अन्य बिजुलीरूप अग्नि उसको (**दर्त्**) विदीर्ण करता है, वैसे वर्त्तमान उपदेश का हम लोग सत्कार करें॥५॥

भावार्थः-जो मनुष्य पूर्व अवस्था में विद्वानों से विद्या ग्रहण करके बुरे व्यसनों का त्याग करके उत्तमस्वभावयुक्त होते हैं, वे अधर्माचरण से डरते हैं॥५॥

पुना राज्ञा किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर राजा को क्या करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्रिंशच्छतं वर्मिण इन्द्र साकं यव्यावत्यां पुरुहूत श्रवस्या।

वृचीवन्तः शरवे पत्यमानाः पात्रा भिन्दाना न्यर्थान्यायन्॥६॥

त्रिंशत्ऽशतम्। वर्मिणः। इन्द्र। साकम्। यव्याऽवत्याम्। पुरुऽहूत। श्रवस्या। वृचीवन्तः। शरवे। पत्यमानाः। पात्रा। भिन्दानाः। निऽअर्थानि। आयन्॥६॥

पदार्थः-(**त्रिंशच्छतम्**) त्रिंशच्छतानि यस्मिन् (**वर्मिणः**) कवचिनः (**इन्द्र**) सेनेश (**साकम्**) (**यव्यावत्याम्**) यवे भवा यव्याः पाका विद्यन्ते यस्यां सेनायाम् (**पुरुहूत**) बहुभिः स्तुत (**श्रवस्या**) श्रवस्यन्ते भवानि (**वृचीवन्तः**) रोगाच्छादितवन्तः (**शरवे**) हिंसनाय (**पत्यमानाः**) पतिरिवाचरन्तः (**पात्रा**) शत्रूणां यानानि (**भिन्दानाः**) विदृणन्तः (**न्यर्थानि**) निश्चिता अर्था येषु प्रयोजनेषु तानि (**आयन्**) प्राप्नुवन्ति॥६॥

अन्वयः-हे पुरुहूतेन्द्र! ये त्रिंशच्छतं वर्मिणो वृचीवन्तः शरवे पात्रा भिन्दानाः पत्यमानाः साकं व्यव्यावत्यां सर्वे श्रवस्या न्यर्थान्यायँस्तांस्त्वं सत्कुरु॥६॥

भावार्थः-हे राजन्! ये वीरपुरुषा राजविद्याकुशला दृढारम्भप्रयोजनाः सिद्धवसनाः स्युस्ते भवता सेनायां सत्कृत्य रक्षितव्याः॥६॥

पदार्थः-(**पुरुहूत**) बहुतों से स्तुति किये गये (**इन्द्र**) सेना के स्वामिन्! (**त्रिंशच्छतम्**) तीस सैकड़े (**वर्मिणः**) कवच को धारण किये हुए (**वृचीवन्तः**) रोग से आच्छादित करते हुए (**शरवे**) हिंसन के लिये (**पात्रा**) शत्रुओं के वाहनों को (**भिन्दानाः**) विदीर्ण करते और (**पत्यमानाः**) पति के सदृश आचरण करते हुए (**साकम्**) साथ (**यव्यावत्याम्**) यवों से बने पदार्थों के पाक जिसमें उस सेना में सब लोग (**श्रवस्या**) अन्त में होने वाले (**न्यर्थानि**) निश्चित अर्थ जिनमें उन प्रयोजनों को नहीं (**आयन्**) प्राप्त होते हैं, उनका आप सत्कार करिये॥६॥

भावार्थः-हे राजन्! जो वीरपुरुष, राजविद्या में निपुण, कार्यों के आरम्भ में दृढ़प्रयोजन सिद्धवस्त्रों वाले होवें, वे आपसे सेना में सत्कारपूर्वक रखने योग्य हैं॥६॥

पुना राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यस्य गावावरुषा सूयवस्यू अन्तरू षु चरतो रेरिहाणा।
स सृञ्जयाय तुर्वशं परादाद् वृचीवतो दैववाताय शिक्षन्॥७॥

यस्य। गावौ। अरुषा। सुयवस्यू इति सुऽयवस्यू। अन्तः। ऊँ इति। सु। चरतः। रेरिहाणा। सः। सृञ्जयाय। तुर्वशम्। परा। अदात्। वृचीवतः। दैवऽवाताय। शिक्षन्॥७॥

पदार्थः-(**यस्य**) (**गावौ**) गावौ किरणाविव सेनाराजनीती (**अरुषा**) आरक्ते (**सूयवस्यू**) आत्मनस्सुयवसानिच्छू (**अन्तः**) मध्ये (**उ**) (**सु**) (**चरतः**) (**रेरिहाणा**) आस्वादयन्त्यौ (**सः**) सः

(सृञ्जयाय) उत्पादनाय **(तुर्वशम्)** मनुष्यम् **(परा)** **(अदात्)** दूरी कुर्यात् **(वृचीवतः)** छेदनवतः **(दैववाताय)** दिव्यवायुविज्ञानाय **(शिक्षन्)**॥७॥

अन्वयः-हे राजन्! यस्याऽरुषा सूयवस्यू रेरिहाणा गावाविव सेनानीती प्रजाया अन्तः सु चरतः स दैववाताय सृञ्जयाय वृचीवतस्तुर्वशं च शिक्षन्नु दुरितं पराऽदादखण्डितं राज्यं प्राप्नुयात्॥७॥

भावार्थः-यो राजा नीतिसेने उन्नयति सोऽखण्डितं राज्यं प्राप्नोति॥७॥

पदार्थः-हे राजन्! **(यस्य)** जिसके **(अरुषा)** चारों ओर से रक्त **(सूयवस्यू)** अपने उत्तम यवों की इच्छा करती और **(रेरिहाणा)** आस्वादन करती हुई **(गावौ)** किरणों के सदृश सेना और राजनीति प्रजा के **(अन्तः)** मध्य में **(सु, चरतः)** उत्तम प्रकार चलती हैं **(सः)** वह **(दैववाताय)** श्रेष्ठ वायु के विज्ञान और **(सृञ्जयाय)** उत्पादन के लिये **(वृचीवतः)** छेदन वाले के **(तुर्वशम्)** मनुष्य को **(शिक्षन्)** शिक्षा देता (उ) और दुर्गुण को **(परा, अदात्)** दूर करे और अखण्डित राज्य को प्राप्त होवे॥७॥

भावार्थः-जो राजा नीति और सेना की वृद्धि करता है, वह अखण्डित राज्य को प्राप्त होता है॥७॥

पुना राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

द्वयाँ अग्ने रथिनो विंशतिं गा वधूमन्तो मघवा मह्यं सम्राट्।

अभ्यावर्ती चायमानो ददाति दूणाशेयं दक्षिणा पार्थवानाम्॥८॥२४॥

द्वयान्। अग्ने। रथिनः। विंशतिम्। गाः। वधूऽमन्तः। मघऽवा। मह्यम्। सम्ऽराट्। अभिऽआवर्ती। चायमानः। ददाति। दुःऽनशा। इयम्। दक्षिणा। पार्थवानाम्॥८॥

पदार्थः-**(द्वयान्)** प्रजासेनाजनान् **(अग्ने)** **(रथिनः)** प्रशस्ता रथा येषां सन्ति ते **(विंशतिम्)** **(गाः)** धेनूरिव **(वधूमन्तः)** प्रशस्ता वध्वो विद्यन्ते येषान्ते **(मघवा)** प्रशस्तधनवान् **(मह्यम्)** **(सम्राट्)** यः सम्यग्राजते **(अभ्यावर्ती)** यो विजेतुमभ्यावर्त्तते सः **(चायमानः)** पूज्यमानः **(ददाति)** **(दूणाशा)** दुर्लभो नाशो यस्याः सा **(इयम्)** **(दक्षिणा)** **(पार्थवानाम्)** पृथौ विस्तीर्णायां विद्यायां भवानां राज्ञाम्॥८॥

अन्वयः-हे अग्ने! ये वधूमन्तो रथिनस्स्युर्यान् द्वयान् मघवा सम्राडभ्यावर्त्ती चायमानो भवान् विंशतिं गा ददाति स त्वं मह्यं या पार्थवानामियं दूणाशा दक्षिणा भवता दत्तास्ति तया तान् प्रीणीहि॥८॥

भावार्थः-यो राजा कुलीनान् विद्याव्यवहारविचक्षणान् धार्मिकान् राजप्रजाजनानभयान् करोति सोऽतुलां प्रतिष्ठां प्राप्नोतीति॥८॥

अत्रेन्द्रेश्वरराजप्रजागुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति सप्तविंशतितमं सूक्तं चतुर्विंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के समान वर्त्तमान! जो **(वधूमन्तः)** अच्छी श्रेष्ठ वधुयें और **(रथिनः)** श्रेष्ठ रथों वाले होवें जिन **(द्वयान्)** प्रजा और सेना के जनों को **(मघवा)** प्रशंसित धन वाले **(सम्राट्)** उत्तम प्रकार से शोभित और **(अभ्यावर्त्ती)** जीतने को चारों ओर से वर्त्तमान **(चायमानः)** आदर किये गये आप **(विंशतिम्)** बीस **(गाः)** गौओं को जैसे वैसे **(ददाति)** देते वह आप **(मह्यम्)** मेरे लिये जो **(पार्थवानाम्)** राजाओं की **(इयम्)** यह **(दूणाशा)** दुर्लभ नाश जिसका ऐसी **(दक्षिणा)** दक्षिणा आपसे दी गई है, उससे उनको प्रसन्न करिये॥८॥

भावार्थः-जो राजा कुलीन, विद्या और व्यवहार में निपुण, धार्मिक राजा और प्रजाजनों को भय रहित करता है वह अतुल प्रतिष्ठा को प्राप्त होता है॥८॥

इस सूक्त में इन्द्र, ईश्वर, राजा और प्रजा के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह सत्ताईसवां सूक्त और चौबीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथाष्टर्चस्याष्टविंशतितमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। १, ३-८ गावः। २, ८ गाव इन्द्रो वा देवता। १, ७ निचृत्त्रिष्टुप्। २ स्वराट्त्रिष्टुप्। ५, ६ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ३, ४ जगती छन्दः। निषादः स्वरः। ८ निचृदनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः॥

अथ मनुष्याः किरणगुणान् विजानीयुरित्याह॥

अब मनुष्य किरणों के गुणों को जानें इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ गावो॑ अग्मन्नु॒त भ॒द्रम॑क्र॒न्त्सीद॑न्तु गो॒ष्ठे र॒णय॑न्त्व॒स्मे।

प्र॒जाव॑तीः पुरु॒रूपा॑ इ॒ह स्यु॒रिन्द्रा॑य पू॒र्वीरु॒षसो॒ दुहा॑नाः॥ १॥

आ। गावः॑। अ॒ग्म॒न्। उ॒त। भ॒द्रम्। अ॒क्र॒न्। सीद॑न्तु। गोऽस्थे। र॒णय॑न्तु। अ॒स्मे इति॑। प्र॒जाऽव॑तीः। पु॒रु॒ऽरूपाः॑। इ॒ह। स्यु॒ः। इन्द्रा॑य। पू॒र्वीः। उ॒षसः॑। दुहा॑नाः॥ १॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**गावः**) किरणाः (**अग्मन्**) आगच्छन्ति (**उत**) (**भद्रम्**) कल्याणम् (**अक्रन्**) कुर्वन्ति (**सीदन्तु**) प्राप्नुवन्तु (**गोष्ठे**) गावस्तिष्ठन्ति यस्मिंस्तस्थले (**रणयन्तु**) शब्दयन्तु (**अस्मे**) अस्मभ्यम् (**प्रजावतीः**) बहुप्रजाः विद्यन्ते यासु ताः (**पुरुरूपाः**) बहुरूपाः (**इह**) (**स्युः**) (**इन्द्राय**) परमैश्वर्याय (**पूर्वीः**) प्राचीनाः (**उषसः**) प्रभातवेलाः (**दुहानाः**) काममलंकुर्वाणाः॥ १॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथेहाऽस्मे गाव आऽग्मन्नुत रणयन्तु भद्रमक्रंस्ता गोष्ठे सीदन्तु, यथा पुरुरूपाः पूर्वीर्दुहाना उषस इन्द्राय प्रजावतीः स्युस्तथा युष्मभ्यमपि भवन्तु॥ १॥

भावार्थः-यदि वृक्षारोपणसुगन्धादियुक्तहोमधूमेन वायुकिरणाञ्छुन्धेयुस्तर्ह्येते सर्वान्त्सुखयन्ति॥ १॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**इह**) यहाँ (**अस्मे**) हम लोगों के लिये (**गावः**) किरणें (**आ, अग्मन्**) प्राप्त होती हैं (**उत**) और (**रणयन्तु**) शब्द करावें तथा (**भद्रम्**) कल्याण को (**अक्रन्**) करती हैं, वे (**गोष्ठे**) गौओं के बैठने के स्थान में (**सीदन्तु**) प्राप्त हों और जैसे (**पुरुरूपाः**) बहुत रूपवाली (**पूर्वीः**) प्राचीन (**दुहानाः**) मनोरथ को पूर्ण करती हुई (**उषसः**) प्रभात वेलाएं (**इन्द्राय**) अत्यन्त ऐश्वर्य से युक्त के लिये (**प्रजावतीः**) बहुत प्रजाओं वाली (**स्युः**) होवें, वैसे आप लोगों के लिये भी हों॥ १॥

भावार्थः-जो वृक्षों के लगाने और सुगन्ध आदि से युक्त धूम से पवन के किरणों को शुद्ध करें तो ये सब को सुखयुक्त करते हैं॥ १॥

पुना राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्रो॒ यज्व॑ने पृण॒ते च॑ शिक्ष॒त्युपेद्द॑दाति॒ न स्वं मु॑षायति।

भूयो॑भूयो र॒यिमिद॑स्य व॒र्धय॒न्नभि॑न्ने खि॒ल्ये नि द॑धाति देव॒युम्॥ २॥

इन्द्रः। यज्वने। पृणते। च। शिक्षति। उप। इत्। ददाति। न। स्वम्। मुषायति। भूयःऽभूयः। रयिम्। इत्। अस्य। वर्धयन्। अभिन्ने। खिल्ये। नि। दधाति। देवऽयुम्॥ २॥

पदार्थः-(**इन्द्रः**) राजा (**यज्वने**) यज्ञस्य कर्त्रे (**पृणते**) सुखयते (**च**) (**शिक्षति**) विद्यां ददाति। अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् (**उप**) (**इत्**) (**ददाति**) (**न**) निषेधे (**स्वम्**) स्वकीयं बोधम् (**मुषायति**) चोरयति (**भूयोभूयः**) (**रयिम्**) विद्याधनम् (**इत्**) एव (**अस्य**) संसारस्य मध्ये (**वर्धयन्**) (**अभिन्ने**) एकीभूते व्यवहारे (**खिल्ये**) खण्डेषु भवे (**नि**) (**दधाति**) (**देवयुम्**) देवान् विदुषः कामयमानं विद्वांसम्॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्या! य इन्द्रोऽस्य संसारस्य मध्ये रयिमिद् वर्धयन्नभिन्ने खिल्ये च देवयुं भूयोभूयो नि दधाति स्वं न मुषायति यज्वन उपशिक्षति पृणते च ददाति स इदेव सर्वान् वर्धयितुं शक्नोति॥ २॥

भावार्थः-त एव विद्वांस आप्ताः सन्ति ये निष्कपटत्वेन पुनः पुनः प्रतिदिनं विद्यानिधिं योग्याय ददति॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**इन्द्रः**) राजा (**अस्य**) इस संसार के मध्य में (**रयिम्**) विद्यारूप धन को (**इत्**) (**वर्धयन्**) बढ़ाता हुआ (**अभिन्ने**) इकट्ठे हुए व्यवहार में और (**खिल्ये**) टुकड़ों में हुए के बीच (**च**) भी (**देवयुम्**) विद्वानों की कामना करते हुए विद्वान् को (**भूयोभूयः**) बारंवार (**नि, दधाति**) निरन्तर धारण करता है और (**स्वम्**) अपने ज्ञान को (**न**) नहीं (**मुषायति**) चुराता है और (**यज्वने**) यज्ञ के करने वाले के लिये (**उप, शिक्षति**) विद्या देता है और (**पृणते**) सुखयुक्त करता है (**च**) और (**ददाति**) देता है, वह (**इत्**) ही सबको बढ़ा सकता है॥ २॥

भावार्थः-वे ही विद्वान् यथार्थवक्ता हैं जो निष्कपटता से वार-वार प्रतिदिन विद्याकोश को योग्य के लिये देते हैं॥ २॥

अथ किमुत्तमं दानमित्याह॥

अब कौन उत्तम दान है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

न ता नशन्ति न दभाति तस्करो नासामामित्रो व्यथिरा दधर्षति।
देवांश्च याभिर्यजते ददाति च ज्योगित्ताभिः सचते गोपतिस्सह॥ ३॥

न। ताः। नशन्ति। न। दभाति। तस्करः। न। आसाम्। आमित्रः। व्यथिः। आ। दधर्षति। देवान्। च। याभिः। यजते। ददाति। च। ज्योक्। इत्। ताभिः। सचते। गोऽपतिः। सह॥ ३॥

पदार्थः-(**न**) निषेधे (**ताः**) विद्याः (**नशन्ति**) (**न**) (**दभाति**) हिनस्ति (**तस्करः**) चोरः (**न**) (**आसाम्**) विद्यानाम् (**आमित्रः**) शत्रुः (**व्यथिः**) व्यथा (**आ**) (**दधर्षति**) तिरस्करोति (**देवान्**) विदुषः (**च**) (**याभिः**) विद्याभिः (**यजते**) (**ददाति**) (**च**) (**ज्योक्**) निरन्तरम् (**इत्**) एव (**ताभिः**) विद्याभिः (**सचते**) समवैति (**गोपतिः**) गवां स्वामी (**सह**)॥ ३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! याभिर्यजमानो देवान् यजते ददाति च ज्योगित्ताभिस्सह गोपतिः सचते नासामामित्रो व्यथिश्चाऽऽदधर्षति ता न नशन्ति तस्करो ता न दभाति ता यूयं ब्रह्मचर्यादिना गृह्णीत॥ ३॥

भावार्थः-हे मनुष्याः सर्वेभ्योऽधिकसुखकरमविनाशि सततं वर्धमानं चोरादिभिर्हर्तुमनर्हं विद्यादानमेवास्तीति विजानीत॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(याभिः)** जिन विद्याओं से यजमान **(देवान्)** विद्वानों को **(यजते)** मिलता और **(ददाति)** देता **(च)** भी है तथा **(ज्योक्)** निरन्तर **(इत्)** ही **(ताभिः)** उन विद्याओं के **(सह)** साथ **(गोपतिः)** गौओं का स्वामी **(सचते)** मिलता है **(न)** न **(आसाम्)** इनका **(आमित्रः)** शत्रु और **(व्यथिः)** पीड़ा **(च)** भी **(आ, दधर्षति)** तिरस्कार करती है **(ताः)** वे विद्याएं **(न)** नहीं **(नशन्ति)** नष्ट होती हैं तथा **(तस्करः)** चोर उनका **(न)** नहीं **(दभाति)** नाश करता है, उन विद्याओं को आप लोग ब्रह्मचर्यादि से ग्रहण करिये॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! सब के लिये अधिक सुख करने, नहीं नष्ट होने और निरन्तर बढ़ने वाले और चोर आदिकों से हरने के अयोग्य विद्यादान ही है, यह जानो॥३॥

सा विद्या कं प्राप्नोति कं न प्राप्नोतीत्याह॥

वह विद्या किस को प्राप्त होती और किस को नहीं प्राप्त होती है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

न ता अर्वा॑ रे॒णुक॑काटो अश्नुते॒ न सं॑स्कृ॒त॒त्रमुप॑ यन्ति॒ ता अ॒भि।

उ॒रु॒गा॒यमभ॑यं॒ तस्य॒ ता अनु॒ गावो॒ मर्त॑स्य॒ वि च॑रन्ति॒ यज्व॑नः॥४॥

न। ताः। अर्वा॑। रे॒णुऽक॑काटः। अ॒श्नु॒ते॒। न। सं॒स्कृ॒त॒ऽत्रम्। उप॑। य॒न्ति॒। ताः। अ॒भि। उ॒रु॒ऽगा॒यम्। अभ॑यम्। तस्य॑। ताः। अनु॑। गाव॑ः। मर्त॑स्य। वि। च॒र॒न्ति॒। यज्व॑नः॥४॥

पदार्थः-**(न)** निषेधे **(ताः)** **(अर्वा)** अश्व इव बुद्धिहीनो विषयासक्तः **(रेणुककाटः)** रेणुकाकूप इवान्धकारहृदयः **(अश्नुते)** प्राप्नोति **(न)** **(संकृतत्रम्)** यः संस्कृतं त्रायते रक्षति तम् **(उप)** **(यन्ति)** प्राप्नुवन्ति **(ताः)** **(अभि)** आभिमुख्ये **(उरुगायम्)** बहुभिः प्रशंसनीयम् **(अभयम्)** अविद्यमानं भयं यस्य यस्माद्वा **(तस्य)** **(ताः)** **(अनु)** **(गावः)** किरणा इव **(मर्त्तस्य)** मननशीलस्य नरस्य **(वि)** **(चरन्ति)** **(यज्वनः)** विदुषां सेवकस्य सङ्गच्छमानस्य॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्यास्ता रेणुककाटोऽर्वा नाश्नुते मूढाः संस्कृतत्रं प्राप्य ता नाऽभ्युप यन्ति किन्तु ता उरुगायमभयं जनमभ्युपयन्ति ता गाव इव तस्य यज्वनो मर्त्तस्यानु वि चरन्ति विशेषेण प्राप्नुवन्ति॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! येऽशुद्धाहाराविहारा लम्पटाः पिशुनाः कुसङ्गिनः सन्ति तान् विद्या कदाचिदपि नाप्नोति ये च पवित्राहारविहारा जितेन्द्रिया यथार्थवक्तारः सत्सङ्गिनः पुरुषार्थिनः सन्ति तान् विद्याऽभिगच्छतीति विजानीत॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(ताः)** उन विद्याओं को **(रेणुककाटः)** रेणुकाओं के कूप के समान अन्धकार हृदय वाला **(अर्वा)** घोड़े के समान बुद्धिहीन विषयासक्त जन **(न)** नहीं **(अश्नुते)** प्राप्त होता

है और मूढ़जन **(संस्कृत्रम्)** संस्कारयुक्त की रक्षा करने वाले को प्राप्त होकर **(ताः)** उनके **(न)** नहीं **(अभि)** सन्मुख **(उप, यन्ति)** समीप प्राप्त होते हैं, किन्तु वे **(उरुगायम्)** बहुतों से प्रशंसनीय **(अभयम्)** निर्भय जन के सम्मुख समीप प्राप्त होती हैं और **(ताः)** वे विद्यायें **(गावः)** किरणों के समान **(तस्य)** उस **(यज्वनः)** विद्वानों के सेवक और प्राप्त होते हुए **(मर्त्तस्य)** विचारशील मनुष्य के **(अनु, वि, चरन्ति)** पश्चात् चलती हैं तथा विशेष करके प्राप्त होती हैं॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो अशुद्ध व्यवहार और विहार करने वाले, लम्पट, चुगुल और कुसङ्गी हैं, उनको विद्या कभी नहीं प्राप्त होती है और जो पवित्र आहार और विहार करने वाले, जितेन्द्रिय, यथार्थवक्ता, सत्सङ्गी, पुरुषार्थी हैं, उनको विद्या प्राप्त होती है, ऐसा जानिये॥४॥

मनुष्यैरवश्यं विद्याप्राप्तीच्छा कार्य्येत्याह॥

मनुष्यों को चाहिये कि अवश्य विद्या की इच्छा करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

गावो भगो गाव इन्द्रो मे अच्छान् गावः सोमस्य प्रथमस्य भक्षः।

इमा या गावः स जनास इन्द्र इच्छामीद् धृदा मनसा चिदिन्द्रम्॥५॥

गावः। भगः। गावः। इन्द्रः। मे। अच्छान्। गावः। सोमस्य। प्रथमस्य। भक्षः। इमाः। याः। गावः। सः। जनासः। इन्द्रः। इच्छामि। इत्। हृदा। मनसा। चित्। इन्द्रम्॥५॥

पदार्थः-**(गावः)** किरणा इव **(भगः)** ऐश्वर्यमिच्छुः **(गावः)** सुशिक्षिता वाचः **(इन्द्रः)** विद्यैश्वर्ययुक्तः **(मे)** मम **(अच्छान्)** यच्छन्तु प्रददतु। अत्र **छान्दसो वर्णलोपो वेति** यलोपः **(गावः)** धेनवः **(सोमस्य)** ऐश्वर्यस्य **(प्रथमस्य)** आदिमस्य **(भक्षः)** सेवनीयः **(इमाः)** **(याः)** **(गावः)** वाचः **(सः)** **(जनासः)** विद्वांसः **(इन्द्रः)** **(इच्छामि)** **(इत्)** एव **(हृदा)** आत्मना **(मनसा)** विज्ञानेन **(चित्)** अपि **(इन्द्रम्)**॥५॥

अन्वयः-हे जनासो विद्वांसो! यथा प्रथमस्य सोमस्य सेवमाना गावो वत्सान् दुग्धं प्रयच्छन्ति तथा गावो जना भगो गाव इन्द्रो भक्षश्च मेऽच्छान् या इमा गावो यस्य सन्ति स इन्द्रो मां शिक्षतु। अहं हृदा मनसा चिदिन्द्रमिदिच्छामि॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्या आत्मनाऽन्तःकरणेन च विद्यां प्राप्तुमिच्छन्ति ते सर्वं सुखमश्नुवते॥५॥

पदार्थः-हे **(जनासः)** विद्वान् मनुष्यो! जैसे **(प्रथमस्य)** पहिले **(सोमस्य)** ऐश्वर्य की सेवने वाली **(गावः)** गौएं बछड़ों को दूध देती हैं, वैसे **(गावः)** किरणों के समान जन और **(भगः)** ऐश्वर्य की इच्छा करने वाला **(गावः)** उत्तम प्रकार शिक्षित वाणियों को और **(इन्द्रः)** विद्या और ऐश्वर्य से युक्त **(भक्षः)** सेवा करने योग्य जन **(मे)** मेरे लिये **(अच्छान्)** देवें और **(याः)** जो **(इमाः)** ये **(गावः)** वाणियां जिसकी हैं **(सः)** वह **(इन्द्रः)** विद्या और ऐश्वर्य से युक्त मुझ को शिक्षा देवे और मैं **(हृदा)** आत्मा तथा **(मनसा)** विज्ञान से **(चित्)** भी **(इन्द्रम्)** ऐश्वर्ययुक्त जन की **(इत्)** ही **(इच्छामि)** इच्छा करता हूं॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य आत्मा और अन्तःकरण से विद्या की प्राप्ति की इच्छा करते हैं, वे सब सुख का भोग करते हैं॥५॥

पुनर्मनुष्यैः किमवश्यं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों का क्या अवश्य कर्त्तव्य है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यूयं गावो मेदयथा कृशं चिदश्रीरं चित्कृणुथा सुप्रतीकम्।

भद्रं गृहं कृणुथ भद्रवाचो बृहद्वो वय उच्यते सभासु॥६॥

यूयम्। गावः। मेदयथ। कृशम्। चित्। अश्रीरम्। चित्। कृणुथ। सुऽप्रतीकम्। भद्रम्। गृहम्। कृणुथ। भद्रऽवाचः। बृहत्। वः। वयः। उच्यते। सभासु॥६॥

पदार्थः-(**यूयम्**) (**गावः**) वाचः (**मेदयथा**) स्नेहयथ स्निग्धा मधुराः कुरुत। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। (**कृशम्**) क्षीणम् (**चित्**) (**अश्रीरम्**) अश्लीलममङ्गलमधर्माचरणम् (**चित्**) अपि (**कृणुथा**) कुरुथ। अत्रापि **संहितायामि**ति दीर्घः। (**सुप्रतीकम्**) शोभनानि प्रतीकानि प्रतीतिकराणि द्वारादीनि यस्मिंस्तम् (**भद्रम्**) भन्दनीयं कल्याणकरं शुद्धवायूदकवृक्षम् (**गृहम्**) (**कृणुथ**) (**भद्रवाचः**) या भद्राः कल्याणकर्यः सत्यभाषणान्विता वाचश्च ताः (**बृहत्**) महत् (**वः**) युष्माकम् (**वयः**) जीवनम् (**उच्यते**) (**सभासु**) आप्तैर्विद्वद्भिः प्रकाशमानासु॥६॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यूयं या गावस्ता मेदयथा चिदश्रीरं कृशं कृणुथा चिदपि सुप्रतीकं भद्रं गृहं कृणुथ सभासु भद्रवाचो वरथ यद्वो बृहद्वय उच्यते तत्कृणुथ॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्याः कोमलां सत्यां धर्म्यां वाचं सर्वर्त्तुसुखकरं गृहं सभां दीर्घमायुश्च कुर्वन्ति ते जगति कल्याणकरा भवन्ति॥६॥

पदार्थः-हे विद्वानो! (**यूयम्**) आप लोग जो (**गावः**) वाणियां हैं उनको (**मेदयथा**) मधुर करिये (**चित्**) और (**अश्रीरम्**) अमङ्गलस्वरूप और अधर्माचरण करने वाले को (**कृशम्**) क्षीण (**कृणुथा**) करिये और (**चित्**) भी (**सुप्रतीकम्**) उत्तम प्रतीति कराने वाले द्वार आदि जिसमें उस (**भद्रम्**) कल्याण करने शुद्ध वायु जल और वृक्ष वाले (**गृहम्**) गृह को (**कृणुथ**) करिये और (**सभासु**) आप्त विद्वानों से प्रकाशमान सभाओं में (**भद्रवाचः**) जो कल्याण करने वाली सत्यभाषण से युक्त वाणियां उनको स्वीकार करिये और जो (**वः**) आप लोगों का (**बृहत्**) बड़ा (**वयः**) जीवन (**उच्यते**) कहा जाता है, उसको करिये॥६॥

भावार्थः-जो मनुष्य कोमल, सत्य, धर्मयुक्त वाणी तथा सर्व ऋतुओं में सुख करने वाले घर को, सभा को और अधिक अवस्था को करते हैं, वे संसार में कल्याण करने वाले होते हैं॥६॥

अथ प्रजाः कथं पालेयदित्याह॥

अब प्रजाओं का कैसे पालन करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्रजावतीः सूयवसं रिशन्तीः शुद्धा अपः सुप्रपाणे पिबन्तीः।
मा वः स्तेन ईशत माघशंसः परि वो हेती रुद्रस्य वृज्याः॥७॥

प्रजाऽवतीः। सुऽयवसम्। रिशन्तीः। शुद्धाः। अपः। सुऽप्रपाने। पिबन्तीः। मा। वः। स्तेनः। ईशत। मा। अघऽशंसः। परि। वः। हेतिः। रुद्रस्य। वृज्याः॥७॥

पदार्थः-(**प्रजावतीः**) प्रशस्ताः प्रजा विद्यन्ते यासान्ताः (**सूयवसम्**) शोभनं घासादिकम्। अत्रा**न्येषामपी**त्युकारदैर्घ्यम्। (**रिशन्तीः**) भक्षयन्तीः (**शुद्धाः**) निर्मलाः (**अपः**) जलानि (**सुप्रपाणे**) सुन्दरे जलपानस्थाने (**पिबन्तीः**) (**मा**) (**वः**) युष्माकम् (**स्तेनः**) चोरः (**ईशत**) हन्तुं समर्थो भवेत् (**मा**) (**अघशंसः**) हिंस्रः पापकृत् (**परि**) सर्वतः (**वः**) युष्माकम् (**हेतिः**) वज्रम् (**रुद्रस्य**) रौद्रकर्मकर्तुः (**वृज्याः**) वृणक्तु॥७॥

अन्वयः-हे राजन्! यथा गोपः सूयवसं रिशन्तीः सुप्रपाणे शुद्धा अपः पिबन्तीः प्रजावतीर्गाः पालयति तथा त्वं प्रजाः पालय यथा वः प्रजाः स्तेनोऽघशंसश्च मेशत तथा वो रुद्रस्य हेतिरेतान्मा परि वृज्याः॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये पितृवत्प्रजाः पालयन्ति शुद्धाऽहारविहाराश्च कृत्वा पुरुषार्थयन्ति स्तेनादीन् दुष्टाञ्छिन्दन्ति ते राजामात्यभृत्याः प्रशंसनीया भवन्ति॥७॥

पदार्थः-हे राजन्! जैसे गौवों का पालन करने वाला (**सूयवसम्**) सुन्दर घास आदि को (**रिशन्तीः**) भक्षण करती हुई (**सुप्रपाणे**) सुन्दर जलपान के स्थान में (**शुद्धाः**) निर्मल (**अपः**) जलों को (**पिबन्तीः**) पीती हुई (**प्रजावतीः**) श्रेष्ठ सन्तान वाली गौवों का पालन करता है, वैसे आप प्रजाओं का पालन करिये और जैसे (**वः**) आप लोगों की प्रजाओं को (**स्तेनः**) चोर और (**अघशंसः**) पाप करने वाला डाकू (**मा**) नहीं (**ईशत**) मारने में समर्थ होवे, वैसे (**वः**) आप लोगों के सम्बन्ध में (**रुद्रस्य**) रौद्र कर्म के करने वाले का (**हेतिः**) वज्र इनको (**मा**) मत (**परि, वृज्याः**) परिवर्जन करे॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो पिता के सदृश प्रजाओं का पालन करते और शुद्ध भोजन और विहार वाली करके पुरुषार्थ करते और चोर आदि दुष्टों का छेदन करते हैं, वे राजा, अमात्य और भृत्य प्रशंसा करने योग्य होते हैं॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उपेदमुपपर्चनमासु गोषूप पृच्यताम्।
उप ऋषभस्य रेतस्युपेन्द्र तव वीर्ये॥८॥२५॥६॥

उप। इदम्। उपऽपर्चनम्। आसु। गोषु। उप। पृच्यताम्। उप। ऋषभस्य। रेतसि। उप। इन्द्र। तव। वीर्ये॥८॥

पदार्थः-(**उप**) (**इदम्**) (**उपपर्चनम्**) उपसम्बन्धः (**आसु**) (**गोषु**) पृथिवीषु वाक्षु वा (**उप**) (**पृच्यताम्**) सम्बध्यताम् (**उप**) (**ऋषभस्य**) श्रेष्ठस्य (**रेतसि**) वीर्ये (**उप**) (**इन्द्र**) परमैश्वर्यकारक (**तव**) (**वीर्ये**) पराक्रमे॥८॥

अन्वयः-हे इन्द्र! ऋषभस्य तव वीर्ये प्रजाभिरुप पृच्यताम् रेतसि च त्वयोप पृच्यतामासु गोषूपपर्चनमुप पृच्यतामिदं राजनयमुप पृच्यताम्॥८॥

भावार्थः-ये राजादयो मनुष्या विद्वांसो भूत्वा सभायां परस्परस्यैकां सम्मतिं कृत्वा विरोधविनाशेनैकतायां प्रयतन्ते तेऽखण्डितसामर्थ्या जायन्त इति॥८॥

अत्र गवेन्द्रविद्याप्रजाराजधर्म वर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

अस्मिन्नध्याय इन्द्रसोमसूर्य्योषाराज्यविश्वेदेवयोधृमित्रत्वजगदीश्वराग्निद्यावापृथिवीराजप्रजामरुच्छिल्पि-न्यायेशोपदेशकवाग्विद्यागुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वाध्यायार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्याणां महाविदुषां विरजानन्दसरस्वतीस्वामिनां शिष्येण श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीस्वामिना विरचिते सुप्रमाणयुक्त ऋग्वेदभाष्ये चतुर्थाष्टके षष्ठोऽध्यायः पञ्चविंशो वर्गः, षष्ठे मण्डलेऽष्टाविंशं सूक्तं च समाप्तम्॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य के करने वाले (**ऋषभस्य**) श्रेष्ठ (**तव**) आपके (**वीर्ये**) पराक्रम में प्रजाओं के साथ (**उप, पृच्यताम्**) सम्बन्ध करिये तथा (**रेतसि**) पराक्रम में आपको (**उप**) सम्बन्ध करना चाहिये और (**आसु**) इन (**गोषु**) पृथिवियों वा वाणियों में (**उपपर्चनम्**) समीप सम्बन्ध (**उप**) सम्बन्ध करना चाहिये और (**इदम्**) इस राजनीति का (**उप**) सम्बन्ध करना चाहिये॥८॥

भावार्थः-जो राजा आदि मनुष्य विद्वान् होकर सभा में परस्पर की एक सम्मति करके विरोध के नाश करने से एकता में प्रयत्न करते हैं, वे अखण्डित सामर्थ्यवाले होते हैं॥८॥

इस सूक्त में गो, इन्द्र, विद्या, प्रजा और राजा के धर्म का वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

इस अध्याय में इन्द्र, सोम, सूर्य, प्रातःकाल, राज्य, विश्वेदेव, योधा, मित्रत्व, जगदीश्वर, अग्नि, अन्तरिक्ष, पृथिवी, राजा, प्रजा, पवन, कारीगर, न्यायेश, उपदेशक, वाणी और विद्या के गुणवर्णन करने से इस अध्याय के अर्थ की इससे पूर्व अध्याय के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह श्रीमन्परमहंस परिव्राजकाचार्य विरजानन्द सरस्वती स्वामी जी के शिष्य श्रीमान् दयानन्द सरस्वती स्वामी से रचित उत्तम प्रमाणों से युक्त, ऋग्वेदभाष्य के चतुर्थ अष्टक में छठा अध्याय, पच्चीसवां वर्ग और छठे मण्डल में अट्ठाईसवां सूक्त समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ षडर्चस्यैकोनत्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ३, ५, निचृत्त्रिष्टुप्। ४ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २ भुरिक्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ६ ब्राह्मी उष्णिक् छन्दः। ऋषभः स्वरः॥

अथ मनुष्यैः कथं वर्त्तितव्यमित्याह॥

अब छः ऋचा वाले उनतीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में मनुष्यों को कैसा वर्त्ताव करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

इन्द्रं वो नरः सख्याय सेपुर्महो यन्तः सुमतये चकानाः।
महो हि दाता वज्रहस्तो अस्ति महामु रण्वमवसे यजध्वम्॥१॥

इन्द्रम्। वः। नरः। सख्याय। सेपुः। महः। यन्तः। सुऽमतये। चकानाः। महः। हि। दाता। वज्रऽहस्तः। अस्ति। महाम्। ऊँ इति। रण्वम्। अवसे। यजध्वम्॥१॥

पदार्थः-(**इन्द्रम्**) (**वः**) युष्माकम् (**नरः**) नायकाः (**सख्याय**) मित्रभावाय (**सेपुः**) शपथं कुर्युः (**महः**) महद्विज्ञानम् (**यन्तः**) (**सुमतये**) उत्तमप्रज्ञायै (**चकानाः**) कामयमानाः (**महः**) महतो विज्ञानस्य (**हि**) यतः (**दाता**) (**वज्रहस्तः**) शस्त्रास्त्रपाणिः (**अस्ति**) (**महाम्**) महान्तं महाशयं सर्वाध्यक्षम् (**उ**) (**रण्वम्**) रमणीयमुपदेशकम् (**अवसे**) रक्षणाद्याय (**यजध्वम्**) सङ्गच्छध्वं सत्कुरुत॥१॥

अन्वयः-हे नरो! ये महो यन्तः सुमतये चकाना वः सख्यायेन्द्रं सेपुर्हि यो महो दाता वज्रहस्तोऽस्ति तं रण्वं महामु अवसे रण्वं यजध्वम्॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये युष्माकं मित्रत्वाय दृढं शपथं कृत्वा तनुमनोधनैरुपकाराय यतन्ते तान् यूयं सर्वदा सत्कुरुत तैः सह सखित्वे वर्त्तध्वम्॥१॥

पदार्थः-हे (**नरः**) नायक जनो! जो (**महः**) बड़े विज्ञान को (**यन्तः**) प्राप्त होते और (**सुमतये**) उत्तम बुद्धि के लिये (**चकानाः**) कामना करते हुए (**वः**) आप लोगों के (**सख्याय**) मित्रपने के लिये (**इन्द्रम्**) ऐश्वर्य के करने वाले को (**सेपुः**) शपथ करते हैं तथा (**हि**) जिस कारण जो (**महः**) बड़े विज्ञान का (**दाता**) देने वाले और (**वज्रहस्तः**) शस्त्र और अस्त्रों से युक्त हाथों वाला (**अस्ति**) है उस (**रण्वम्**) रमणीय उपदेशक (**महाम्**) महान् महाशय सर्वाध्यक्ष का (**उ**) ही (**अवसे**) रक्षण आदि के लिये (**यजध्वम्**) मिलिये वा सत्कार करिये॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो आप लोगों के साथ मित्रत्व के लिये दृढ़ शपथ करके तन, मन और धनों से उपकार के लिये प्रयत्न करते हैं, उनका आप लोग सर्वदा सत्कार करिये तथा इनके साथ मित्रपन से बर्त्ताव करिये॥१॥

पुनः स राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ यस्मिन् हस्ते नर्या मिमिक्षुरा रथे हिरण्यये रथेष्ठाः।

आ रश्मयो गभस्त्योः स्थूरयोराध्वन्नश्वासो वृषणो युजानाः॥२॥

आ। यस्मिन्। हस्ते। नर्याः। मिमिक्षुः। आ। रथे। हिरण्यये। रथेऽस्थाः। आ। रश्मयः। गभस्त्योः। स्थूरयोः। आ। अध्वन्। अश्वासः। वृषणः। युजानाः॥२॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**यस्मिन्**) (**हस्ते**) (**नर्याः**) नृभ्यो हितानि (**मिमिक्षुः**) सिञ्चन्ति सम्बध्नन्ति (**आ**) (**रथे**) (**हिरण्यये**) तेजोमये (**रथेष्ठाः**) ये रथे तिष्ठन्ति ते (**आ**) (**रश्मयः**) किरणा इव (**गभस्त्योः**) बाह्वोर्मध्ये (**स्थूरयोः**) स्थूलयोः। अत्र वर्णव्यत्येन लस्य स्थाने रः। (**आ**) (**अध्वन्**) अध्वनि मार्गे (**अश्वासः**) अश्वा इव महान्तो विद्युदादयः पदार्थाः (**वृषणः**) बलिष्ठाः (**युजानाः**) युक्ताः॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! इन्द्रस्य यस्मिन् हस्ते रश्मय आ मिमिक्षुरिव नर्याः शस्त्रास्त्राणि यस्य हिरण्यये रथे रथेष्ठा रथे रथेष्ठा स्थूरयोर्गभस्त्योः शस्त्रास्त्राणि सन्ति यस्य यानेषु वृषणोऽश्वास आ युजाना अध्वन् यानान्या गमयन्ति ते सुखैर्जनाना मिमिक्षुः॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यो राजा शस्त्राशस्त्रविदो वरान् धार्मिकाञ्छूरान् विमानादियाननिर्मातॄञ्छिल्पिनो विद्युदादिविद्याविदुषः सत्कृत्य रक्षति तस्यैव सूर्यरश्मय इव यशंसि प्रथन्ते॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! ऐश्वर्य करने वाले के (**यस्मिन्**) जिस (**हस्ते**) हस्त में (**रश्मयः**) किरणों के समान (**आ**) सब ओर से (**मिमिक्षुः**) सिञ्चन करते सम्बन्ध करते हैं तथा (**नर्याः**) मनुष्यों के लिये हितकारक शस्त्र और अस्त्र जिसके (**हिरण्यये**) तेज के विकार से बने हुए (**रथे**) रथ में और (**रथेष्ठाः**) रथ पर स्थित होने वाले जन और (**स्थूरयोः**) स्थूल (**गभस्त्योः**) बाहुओं के मध्य में शस्त्र और अस्त्र हैं तथा जिसके वाहनों में (**वृषणः**) बलिष्ठ (**अश्वासः**) घोड़ों के समान बड़े बिजुली आदि पदार्थ (**आ**) सब ओर से (**युजानाः**) युक्त (**अध्वन्**) मार्ग में यानों को (**आ**) लाते हैं, वे सुखों से जनों का (**आ**) अच्छे प्रकार सम्बन्ध करते हैं॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो राजा शस्त्र और अस्त्र के जानने वाले, श्रेष्ठ धार्मिक, शूर तथा विमान आदि वाहनों के बनाने वाले शिल्पियों और बिजुली आदि की विद्या को जानने वाले विद्वानों का सत्कार करके रक्षा करता है, उसी के सूर्य के किरणों के समान यश बढ़ते हैं॥२॥

पुनः स राजा कीदृश इत्याह॥

फिर वह राजा कैसा है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

श्रिये ते पादा दुव आ मिमिक्षुर्धृष्णुर्वज्री शवसा दक्षिणावान्।

वसानो अत्कं सुरभिं दृशे कं स्व१र्ण नृतविषिरो बभूथ॥३॥

श्रिये। ते। पादा॑। दुव॑:। आ। मि॒मि॒क्षु॒:। धृ॒ष्णु॒:। व॒ज्री। शव॑सा। दक्षि॑णऽवान्। वसा॑नः। अत्क॑म्। सु॒र॒भिम्। दृ॒शे। कम्। स्व॑:। न। नृ॒तो॒ इति॑। इ॒षि॒रः। ब॒भू॒थ॥ ३॥

पदार्थः-(**श्रिये**) लक्ष्म्यै (**ते**) तव (**पादा**) पादौ (**दुवः**) कार्यसेवनम् (**आ**) (**मिमिक्षुः**) आसिञ्चतः (**धृष्णुः**) प्रगल्भः (**वज्री**) शस्त्रास्त्रधारी (**शवसा**) बलेन (**दक्षिणावान्**) प्रशस्ता दक्षिणा विद्यते यस्य सः (**वसानः**) धारयन् (**अत्कम्**) व्याप्तशीलं वस्त्रम् (**सुरभिम्**) सुगन्धम् (**दृशे**) द्रष्टुम् (**कम्**) सुखकरं सुन्दरम् (**स्वः**) सुखम् (**न**) इव (**नृतो**) नेतः (**इषिरः**) ज्ञानवान् (**बभूथ**) भवेः॥ ३॥

अन्वयः-हे नृतो! यस्य ते पादा दुवः श्रिय आ मिमिक्षुः शवसा धृष्णुर्वज्री दक्षिणावान् दृशे कं सुरभिमत्कं वसानः स्वर्ण इषिरो यस्त्वं बभूथ तं त्वा वयं सेवेमहि॥ ३॥

भावार्थः-हे राजन्! यस्य तावश्रयेण पुष्कलश्रीर्घासाच्छादनयानानि सुखं प्रतिष्ठा च प्राप्नोति सोऽस्माभिर्भवान् कथन्न सेव्यते॥ ३॥

पदार्थः-हे (**नृतो**) नायक अग्रणी जन जिन (**ते**) आपके (**पादा**) पाद (**दुवः**) कार्य सेवन को (**श्रिये**) लक्ष्मी के लिये (**आ, मिमिक्षुः**) चारों ओर सींचते हैं और (**शवसा**) बल से (**धृष्णुः**) ढीठ (**वज्री**) शस्त्र और अस्त्रों को धारण करने वाले (**दक्षिणावान्**) उत्तम दक्षिणावान् (**दृशे**) देखने के लिये (**कम्**) सुख करने वाले सुन्दर (**सुरभिम्**) सुगन्ध को और (**अत्कम्**) व्याप्तिशील वस्त्र को (**वसानः**) धारण करते हुए (**स्वः**) सुख को (**न**) जैसे (**इषिरः**) ज्ञानवान्, वैसे जो आप (**बभूथ**) प्रसिद्ध हो, उन आपकी हम लोग सेवा करें॥ ३॥

भावार्थः-हे राजन्! जिन आपके आश्रय से अत्यन्त लक्ष्मी, घास, ओढ़ना, वाहन, सुख और प्रतिष्ठा प्राप्त होती है, वह आप हम लोगों से कैसे नहीं सेवन करने योग्य हैं॥ ३॥

पुनः स कीदृशो भवेदित्याह॥

फिर वह कैसा होवे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स सोम॒ आमि॑श्लतमः सु॒तो भू॒द्यस्मि॑न् प॒क्तिः प॒च्यते॒ सन्ति॑ धा॒नाः।
इन्द्रं॒ नर॑: स्तु॒वन्तो॑ ब्रह्मका॒रा उ॒क्था शंस॑न्तो दे॒ववा॑ततमाः॥ ४॥

सः। सोम॑ः। आमि॑श्लऽतमः। सु॒तः। भू॒त्। यस्मि॑न्। प॒क्तिः। प॒च्यते॑। सन्ति॑। धा॒नाः। इन्द्र॑म्। नर॑ः। स्तु॒वन्त॑:। ब्र॒ह्म॒ऽका॒राः। उ॒क्था। शंस॑न्तः। दे॒ववा॑तऽतमाः॥ ४॥

पदार्थः-(**सः**) (**सोमः**) ऐश्वर्ययोग ओषधिरसो वा (**आमिश्लतमः**) समन्तादतिशयेन मिश्रितः (**सुतः**) निष्पन्नः (**भूत्**) भवति (**यस्मिन्**) (**पक्तिः**) पाकः (**पच्यते**) (**सन्ति**) (**धानाः**) भ्रष्टान्यन्नानि (**इन्द्रम्**) (**नरः**) विद्वत्सु नायकाः (**स्तुवन्तः**) प्रशंसन्तः (**ब्रह्मकाराः**) ये ब्रह्म धनमन्नं वा कुर्वन्ति ते (**उक्था**) उक्तानि वक्तव्यानि (**शंसन्तः**) उपदिशन्तः (**देववाततमाः**) येऽतिशयेन देवान् विदुषः पदार्थान् वा प्राप्नुवन्ति ते॥ ४॥

अन्वयः-हे नरो! यस्मिन् राजनि पक्तिः पच्यते धानाः सन्त्यामिश्लतमः सुतः सोमो भूद्यमिन्द्रं स्तुवन्तो ब्रह्मकारा देववाततमा उक्था शंसन्तः सन्ति स भवानस्माकं राजा भवतु॥४॥

भावार्थः-यदि स धार्मिको राजा न स्यात्तर्हि सर्वे व्यवहारा विलुप्येरन्। यस्मिन्त्सति धनधान्यैश्वर्यं दधति ता धार्मिक्यः प्रजाः सन्ति॥४॥

पदार्थः-हे **(नरः)** विद्वानों में अग्रणी जनो! **(यस्मिन्)** जिस राजा के होने पर **(पक्तिः)** पाक **(पच्यते)** पकाया जाता है **(धानाः)** भूंजे हुए अन्न हैं **(आमिश्लतमः)** चारों ओर से अत्यन्त मिला हुआ **(सुतः)** उत्पन्न **(सोमः)** ऐश्वर्य का योग वा ओषधि का रस **(भूत्)** होता है और जिस **(इन्द्रम्)** ऐश्वर्यकारक की **(स्तुवन्तः)** प्रशंसा करते हुए **(ब्रह्मकाराः)** धन वा अन्न को करने वाले **(देववाततमाः)** अतिशय विद्वानों वा पदार्थों को प्राप्त होने वाले **(उक्था)** कहने योग्य वचनों को **(शंसन्तः)** उपदेश देते हुए **(सन्ति)** हैं **(सः)** वह आप हम लोगों के राजा हूजिये॥४॥

भावार्थः-जो वह धार्मिक राजा न होवे तो सब व्यवहार लोप होवें। जिसके होने पर धन-धान्य और ऐश्वर्य को धारण करती हैं, वे धर्मयुक्त प्रजायें होती हैं॥४॥

अथेश्वरः कीदृशोऽस्तीत्याह॥

अब ईश्वर कैसा है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

न ते अन्तः शवसो धाय्यस्य वि तु बाबधे रोदसी महित्वा।

आ ता सूरिः पृणति तूतुजानो यूथेवाप्सु समीजमान ऊती॥५॥

न। ते। अन्तः। शवसः। धायि। अस्य। वि। तु। बाबधे। रोदसी इति। महिऽत्वा। आ। ता। सूरिः। पृणति। तूतुजानः। यूथाऽइव। अप्ऽसु। सम्ऽईजमानः। ऊती॥५॥

पदार्थः-**(न)** निषेधे **(ते)** तवेश्वरस्य **(अन्तः)** सीमा **(शवसः)** बलस्य **(धायि)** ध्रियते **(अस्य)** **(वि)** **(तु)** **(बाबधे)** बध्नाति **(रोदसी)** द्यावापृथिव्यौ **(महित्वा)** महत्त्वेन **(आ)** **(ता)** तानि **(सूरिः)** विद्वान् **(पृणति)** सुखयति **(तूतुजानः)** क्षिप्रकारी **(यूथेव)** समूह इव **(अप्सु)** प्राणेषु जलेषु वा **(समीजमानः)** सम्यक्सङ्गच्छमानः **(ऊती)** ऊत्या रक्षणाद्यया क्रियया॥५॥

अन्वयः-हे जगदीश्वर! यस्याऽस्य ते शवसोऽन्तः केनापि न धायि यस्तु महित्वा रोदसी वि बाबधे यस्य ते ता ऊती समीजमानस्तूतुजानः सूरिरप्सु यूथेव सर्वाना पृणाति स भवानस्माभिरीड्योऽस्ति॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्या! योऽनन्तगुणकर्मस्वभावः सर्वस्य प्रबन्धकर्तोपासितः सन्त्सुखप्रदातेश्वरोऽस्ति स एव सर्वैरुपासनीयः॥५॥

पदार्थः-हे जगदीश्वर! जिस **(अस्य)** इस **(ते)** आप ईश्वर के **(शवसः)** बल की **(अन्तः)** सीमा किसी से भी **(न)** नहीं **(धायि)** धारण की जाती है **(तु)** और जो **(महित्वा)** बड़प्पन से **(रोदसी)** अन्तरिक्ष और पृथिवी को **(वि, बाबधे)** बांधता है और जिन आपके **(ता)** उन कर्मों को **(ऊती)** रक्षण

आदि क्रिया से (**समीजमानः**) उत्तम प्रकार मिलता हुआ (**तूतुजानः**) शीघ्र कार्य करने वाला (**सूरिः**) विद्वान् (**अप्सु**) प्राणों वा जलों में (**यूथेव**) समूह के सदृश सब को (**आ, पृणति**) सुखी करता है, वह आप लोगों से स्तुति करने योग्य है॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो अनन्त गुण, कर्म और स्वभावयुक्त और सब का प्रबन्ध करने वाला, उपासना किया हुआ सुख का देने वाला ईश्वर है, वही सब से उपासना करने योग्य है॥५॥

अथेश्वरत्वे राजविषयमाह॥

अब ईश्वरत्व में राजविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एवेदिन्द्रः सुहव ऋष्वो अस्तूती अनूती हिरिशिप्रः सत्वा।
एवा हि जातो असमात्योजाः पुरू च वृत्रा हनति नि दस्यून्॥६॥१॥

एव। इत्। इन्द्रः। सुऽहवः। ऋष्वः। अस्तु। ऊती। अनूती। हिरिऽशिप्रः। सत्वा। एव। हि। जातः। असमातिऽओजाः। पुरु। च। वृत्रा। हनति। नि। दस्यून्॥६॥१॥

पदार्थः-(**एव**) (**इत्**) अपि (**इन्द्रः**) ईश्वरोपासको राजा (**सुहवः**) शोभन इव आह्वानं यस्य (**ऋष्वः**) महान् (**अस्तु**) (**ऊती**) रक्षया (**अनूती**) अरक्षया (**हिरिशिप्रः**) हिरी हरिते शिप्रे हनुनासिके यस्य सः (**सत्वा**) यः सीदति स पुरुषार्थी (**एवा**) अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। (**हि**) खलु (**जातः**) प्रसिद्ध (**असमात्योजाः**) असमाति अतुल्यमोजो यस्य सः (**पुरू**) बहु। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। (**च**) (**वृत्रा**) धनानि (**हनति**) हन्ति (**नि**) नित्यम् (**दस्यून्**) दुष्टाँस्तेनान्॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यः सुहव ऋष्वो हिरिशिप्रस्सत्वेन्द्र ऊत्यनूती सुखकर्त्ता जातश्चाऽस्तु स एवेदानन्दप्रदो भवतु। यो ह्यसमात्योजाः पुरू वृत्रोन्नयति दस्यूँश्च नि हनति स एवा सम्राड् भवितुमर्हति॥६॥

भावार्थः-स एव महान् राजा यो नीतिज्ञान् रक्षित्वा धार्मिकीः प्रजाः सम्पाल्य स्तेनादीन् पापान्न गृह्णाति स एव सज्जनैः सेवनीयोऽस्ति॥६॥

अत्रेन्द्रसखित्वदातृयोधीश्वरगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्येकोनत्रिंशत्तमं सूक्तं प्रथमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो जो (**सुहवः**) सुन्दर पुकारना जिसका ऐसा (**ऋष्वः**) बड़ा (**हिरिशिप्रः**) हरे रंग की ठुड्ढी और नासिका युक्त (**सत्वा**) परिश्रम से पुरुषार्थ करने और (**इन्द्रः**) ईश्वर की उपासना करने वाला राजा (**ऊती**) रक्षा वा (**अनूती**) अरक्षा से सुख करने वाला (**जातः, च**) और प्रसिद्ध (**अस्तु**) हो वह (**एव**) ही (**इत्**) निश्चय से आनन्द देने वाला होवे और जो (**हि**) निश्चय से (**असमात्योजाः**) नहीं

तुल्य पराक्रम जिसका वह **(पुरू)** बहुत **(वृत्रा)** धनों की वृद्धि करता है और **(दस्यून्)** दुष्ट चोरों का **(नि, हनति)** नित्य नाश करता है वह **(एवा)** ही चक्रवर्ती राजा होने के योग्य है॥६॥

भावार्थः-वही बड़ा राजा है जो नीति के जानने वालों की रक्षा करके धर्मिष्ठ प्रजाओं का पालन करके चोर आदि पापियों को नहीं ग्रहण करता है, वही सज्जनों से सेवन करने योग्य है॥६॥

इस सूक्त में इन्द्र, मित्रपन, देने वाले और युद्ध करने वाले तथा ईश्वर के गुणों का वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह उनतीसवाँ सूक्त और पहिला वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ पञ्चर्चस्य त्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ३ निचृत्त्रिष्टुप्। २ विराट्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ४ पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ५ ब्राह्मी उष्णिक् छन्दः। ऋषभः स्वरः॥

अथ राजा कीदृशो भवेदित्याह॥

अब पांच ऋचावाले तीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में राजा कैसा होवे, इस विषय को कहते हैं॥

भूय इद्वावृधे वीर्या॑य एको अजुर्यो दयते वसूनि।
प्र रिरिचे दिव इन्द्रः पृथिव्या अर्धमिदस्य प्रति रोदसी उभे॥१॥

भूयः। इत्। वावृधे। वीर्याय। एकः। अजुर्यः। दयते। वसूनि। प्र। रिरिचे। दिवः। इन्द्रः। पृथिव्याः। अर्धम्। इत्। अस्य। प्रति। रोदसी इति। उभे इति॥१॥

पदार्थः-(**भूयः**) (**इत्**) एव (**वावृधे**) वर्धते (**वीर्याय**) पराक्रमाय (**एकः**) असहायः (**अजुर्यः**) अजीर्णो युवा (**दयते**) ददाति (**वसूनि**) धनानि (**प्र**) (**रिरिचे**) रिणक्त्यतिरिक्तो भवति (**दिवः**) प्रकाशमानात् पदार्थान्तरात् (**इन्द्रः**) सूर्य इव (**पृथिव्याः**) भूमेः (**अर्द्धम्**) भूगोलार्द्धम् (**इत्**) इव (**अस्य**) (**प्रति**) (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**उभे**)॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथेन्द्रो दिवः पृथिव्याः अर्द्धमुभे रोदसी प्रत्यर्द्धं च प्रकाशते सर्वेभ्यः प्र रिरिचेऽश्येदेवाऽऽकर्षणेन सर्वे लोका वर्त्तन्ते तदिद्यो राजा वीर्याय भूयो वावृध एकोऽजुर्यः सन् वसूनि दयते स एव वरो जायते॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यो राजा सूर्यवच्छुभगुणैः सुसहायैः सुसामग्र्या च प्रकाशमानो यशस्वी जायते यथा सूर्यः सर्वेषां भूगोलानां सम्मुखे स्थितानां भूगोलार्धानां प्रकाशं करोति तथैव न्यायाऽन्याययोर्मध्ये न्यायमेव प्रकाशयेत् सर्वेभ्योऽभयं च दद्यात्॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**इन्द्रः**) सूर्य के समान वर्त्तमान जन (**दिवः**) प्रकाशमान पदार्थान्तर और (**पृथिव्याः**) भूमि से (**अर्द्धम्**) भूगोल का अर्द्ध भाग (**उभे**) दोनों (**रोदसी**) अन्तरिक्ष और पृथिवीभूगोल के (**प्रति**) प्रति अर्द्धभाग प्रकाशित होता है और सब से (**प्र, रिरिचे**) समर्थ होता है तथा (**अस्य**) इसके (**इत्**) ही आकर्षण से सम्पूर्ण लोक वर्त्तमान हैं उस (**इत्**) ही प्रकार से जो राजा (**वीर्याय**) पराक्रम के लिये (**भूयः**) फिर (**वावृधे**) बढ़ता और (**एकः**) सहायरहित (**अजुर्य्यः**) युवा हुआ (**वसूनि**) धनों को (**दयते**) देता है, वही श्रेष्ठ होता है॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो राजा सूर्य के समान श्रेष्ठ गुणों, श्रेष्ठ सहायों और उत्तम सामग्री से प्रकाशमान यशस्वी होता है और जैसे सूर्य सम्पूर्ण भूगोलों के सम्मुख स्थित

भूगोल के अर्द्धभागों का प्रकाश करता है, वैसे ही न्याय और अन्याय के बीच में से न्याय का ही प्रकाश करे और सब के लिये दोनों को देवे॥१॥

पुनः स राजा कीदृशो भवेदित्याह॥

फिर वह राजा कैसा होवे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अधा॑ मन्ये बृहद॑सु॒र्य॑मस्य॒ यानि॑ दा॒धार॒ नकि॒रा मि॑नाति।

दि॒वेदि॑वे॒ सूर्यो॑ दर्श॒तो भू॒द्वि सद्मा॑न्यु॒र्वि॒या सु॒क्रतु॑र्धात्॥२॥

अध॑। म॒न्ये॒। बृ॒हत्। अ॒सु॒र्य॑म्। अ॒स्य॒। यानि॑। दा॒धार॑। नकिः॑। आ। मि॒नाति॒। दि॒वेऽदि॑वे। सूर्यः॑। द॒र्श॒तः। भू॒त्। वि। सद्मा॑नि। उ॒र्वि॒या। सु॒ऽक्रतुः॑। धा॒त्॥२॥

पदार्थः-(**अधा**) आनन्तर्ये। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। (**मन्ये**) (**बृहत्**) महत् (**असुर्यम्**) असुरस्य मेघस्येदम् (**अस्य**) (**यानि**) वायुदलानि (**दाधार**) दधाति (**नकिः**) न (**आ**) (**मिनाति**) हिनस्ति (**दिवेदिवे**) प्रतिदिनम् (**सूर्यः**) सविता (**दर्शतः**) द्रष्टव्यः प्रष्टव्यो वा (**भूत्**) भवति (**वि**) (**सद्मानि**) स्थानानि (**उर्विया**) पृथिव्या सह (**सुक्रतुः**) शोभनकर्मा (**धात्**) दधाति॥२॥

अन्वयः-हे राजन्! यथा दर्शतः सुक्रतुः सूर्यो दिवेदिवे यदस्य बृहदसुर्यं यानि च दाधारैनं नकिरा मिनाति। उर्विया सह सद्मानि धात् तथा भवान् वि भूत्। अधैवम्भूतं त्वां राजानमहं मन्ये॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सविता प्रतिदिनं मेघं धृत्वा वर्षित्वा पृथिवीं तत्रस्थान् पदार्थांश्चाऽहिंसित्वा धरति तथैव राज्यं धृत्वा सुखं वर्षित्वा प्रजया सह न्यायकर्माणि राजा दधीत॥२॥

पदार्थः-हे राजन्! जैसे (**दर्शतः**) देखने वा पूछने योग्य (**सुक्रतुः**) शुभ कर्म करने वाला (**सूर्यः**) सूर्य (**दिवेदिवे**) प्रतिदिन जो (**अस्य**) इसके (**बृहत्**) बड़े (**असुर्यम्**) मेघ के सम्बन्धी का और (**यानि**) जिन वायुदलों का (**दाधार**) धारण करता है और इसको (**नकिः**) नहीं (**आ, मिनाति**) नष्ट करता है और (**उर्विया**) पृथिवी के साथ (**सद्मानि**) स्थानों को (**धात्**) धारण करता है, वैसे आप (**वि, भूत्**) होते हैं (**अधा**) इसके अनन्तर ऐसे हुए आपको राजा मैं (**मन्ये**) मानता हूँ॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य प्रतिदिन मेघ को धारण करके वर्षा के पृथिवी और पृथिवीस्थ पदार्थों के नाश नहीं करके धारण करता है, वैसे ही राज्य को धारण करके सुख को वर्षा के प्रजा के साथ न्यायकर्मों को राजा धारण करे॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अद्धा चि॒न्नू चि॒त्तदपो॑ न॒दीनां॒ यदा॑भ्यो॒ अर॑दो गा॒तुमि॑न्द्र।

नि पर्व॑ता अद्म॒सदो॒ न से॑दु॒स्त्वया॑ दृ॒ळ्हानि॑ सुक्रतो॒ रजां॑सि॥३॥

अद्य। चित्। नु। चित्। तत्। अपः। नदीनाम्। यत्। आभ्यः। अरदः। गातुम्। इन्द्र। नि। पर्वताः। अद्मऽसदः। न। सेदुः। त्वया। दृळ्हानि। सुक्रतो इति सुऽक्रतो। रजांसि॥ ३॥

पदार्थः-(**अद्या**) अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। (**चित्**) इव (**नू**) सद्यः। अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। (**चित्**) अपि (**तत्**) तानि (**अपः**) जलानि (**नदीनाम्**) (**यत्**) (**आभ्यः**) नदीभ्यः (**अरदः**) विलिखत्याकर्षति (**गातुम्**) भूमिम् (**इन्द्र**) सूर्य इव वर्तमान (**नि**) (**पर्वताः**) मेघाः (**अद्मसदः**) येऽद्मस्वत्तव्येषु सीदन्ति (**न**) इव (**सेदुः**) सीदन्ति (**त्वया**) रक्षकेण पतिना सह (**दृळ्हानि**) धृतानि (**सुक्रतो**) सुष्ठुकर्मप्रज्ञ (**रजांसि**) लोकविशेषाणि॥ ३॥

अन्वयः-हे सुक्रतो इन्द्र! चित् सूर्यो गातुमरदो नदीनां सकाशादपोऽरदो यदाभ्योऽरदस्तच्चिद्वर्षति तथाऽद्या त्वं नू विधेहि। यथा सूर्येण रजांसि दृळ्हानि धृतानि तथाऽद्याऽद्मसदः पर्वता न त्वया प्रजा राजजनाश्च निषेदुः॥ ३॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। हे राजन्! यथा सूर्योऽखिलेभ्यः पदार्थेभ्योऽष्टौ मासान् रसं धृत्वा मेघमण्डले संस्थाप्य वर्षासु वर्षयित्वा प्रजाः सुखयति तथा त्वमष्टसु मासेषु प्रजाभ्यः करं हृत्वा चातुर्मास्ये दद्याः॥ ३॥

पदार्थः-हे (**सुक्रतो**) श्रेष्ठ कर्मों को उत्तम प्रकार जानने वाले (**इन्द्र**) सूर्य के समान वर्त्तमान (**चित्**) जैसे सूर्य (**गातुम्**) भूमि का (**अरदः**) आकर्षण करता है तथा (**नदीनाम्**) नदियों के समीप से (**अपः**) जलों का आकर्षण करता है और (**यत्**) जो (**आभ्यः**) इन नदियों से खैंचता (**तत्**) वह (**चित्**) भी वर्षता है, वैसे (**अद्याः**) आज आप (**नू**) शीघ्र करिये और जैसे सूर्य से (**रजांसि**) लोकविशेष (**दृळ्हानि**) धारण किये गये, वैसे आज (**अद्मसदः**) उत्तम प्रकार खाने योग्य में स्थित होने वाले (**पर्वताः**) मेघ (**न**) जैसे वैसे (**त्वया**) रक्षक वा स्वामी आपसे प्रजा और राजजन (**नि, सेदुः**) स्थित होते हैं॥ ३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। हे राजन्! जैसे सूर्य सम्पर्ण पदार्थों से आठ महीने रस धारण करके मेघमण्डल में स्थापित करके वर्षाओं में वर्षाके प्रजाओं को सुखी करता है, वैसे आप आठ मासों में प्रजाओं से कर लेकर वर्षाकाल में देवें॥ ३॥

पुनरीश्वरः कीदृशोऽस्तीत्याह॥

फिर ईश्वर कैसा है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सत्यमित्तन्न त्वावाँ अन्यो अस्तीन्द्र देवो न मर्त्यो ज्यायान्।
अहन्नहिं परिशयानमर्णोऽवासृजो अपो अच्छा समुद्रम्॥ ४॥

सत्यम्। इत्। तत्। न। त्वाऽवान्। अन्यः। अस्ति। इन्द्र। देवः। न। मर्त्यः। ज्यायान्। अहन्। अहिम्। परिऽशयानम्। अर्णः। अव। असृजः। अपः। अच्छ। समुद्रम्॥ ४॥

पदार्थः-(**सत्यम्**) सत्सु साधु (**इत्**) एव (**तत्**) (**न**) निषेधे (**त्वावान्**) त्वया सदृशः (**अन्यः**) भिन्नः (**अस्ति**) (**इन्द्र**) सूर्य्य इव स्वप्रकाशमान जगदीश्वर (**देवः**) विद्वान् प्रकाशमानो लोको वा (**न**) (**मर्त्यः**) (**ज्यायान्**) महान् (**अहन्**) हन्ति (**अहिम्**) व्याप्नुवन्तं मेघम् (**परिशयानम्**) सर्वतः शयानमिव (**अर्णः**) उदकम् (**अव**) (**असृजः**) सृजति (**अपः**) जलानि (**अच्छा**) सम्यक्। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**समुद्रम्**) सागरमन्तरिक्षं वा॥४॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यतस्त्वया निर्मितस्सविता परिशयानमहिमहन्नर्णोऽपः समुद्रमच्छाऽवाऽसृजस्तस्मादन्यस्त्वावान् कोऽप्यन्यो ज्यायान्नास्ति न देवो न मर्त्यश्चास्तीति तत्सत्यमिदेवास्ति॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! येन जगत्पालनायाकर्षको वृष्टिप्रकाशकरः सूर्यो निर्मितो मेघश्च तस्माज्जगदीश्वरेण तुल्यः कोऽपि नास्ति कुतोऽधिक इति तथ्यं विजानीत॥४॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) सूर्य्य के सदृश अपने से प्रकाशमान जगदीश्वर! जिससे आपसे बनाया गया सूर्य्य (**परिशायनम्**) चारों ओर से सोते हुए से (**अहिम्**) व्याप्त होने वाले मेघ का (**अहन्**) नाश करता है और (**अर्णः**) भ्रमर पड़ते जल वा अन्य (**अपः**) जलों और (**समुद्रम्**) सागर वा अन्तरिक्ष को (**अच्छा**) उत्तम प्रकार (**अव, असृजः**) उत्पन्न करता है, इससे (**अन्यः**) और (**त्वावान्**) आपके सदृश कोई भी दूसरा (**ज्यायान्**) बड़ा नहीं है (**न**) न (**देवः**) विद्वान् वा प्रकाशमान और (**न**) न (**मर्त्यः**) साधारण मनुष्य (**अस्ति**) है (**तत्**) वह (**सत्यम्**) श्रेष्ठों में श्रेष्ठ (**इत्**) ही है॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिस जगदीश्वर ने जगत् के पालन के लिये आकर्षण करने और वृष्टि तथा प्रकाश करने वाला सूर्य्य और मेघ बनाया, इस कारण से जगदीश्वर के तुल्य कोई भी नहीं है, फिर अधिक कहाँ से हो, यह सत्य जानिये॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वमपो वि दुरो विषूचीरिन्द्र दृळ्हमरुजः पर्वतस्य।

राजाभवो जगतश्चर्षणीनां साकं सूर्यं जनयन् द्यामुषासम्॥५॥२॥

त्वम्। अपः। वि। दुरः। विषूचीः। इन्द्र। अरुजः। पर्वतस्य। राजा। अभव। जगतः। चर्षणीनाम्। साकम्। सूर्यम्। जनयन्। द्याम्। उषसम्॥५॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**अपः**) जलानि प्राणान् वा (**वि**) (**दुरः**) द्वाराणि (**विषूचीः**) व्याप्तानि (**इन्द्र**) परमैश्वर्यप्रद जगदीश्वर (**दृळ्हम्**) ध्रुवम् (**अरुजः**) रुज (**पर्वतस्य**) मेघस्य (**राजा**) (**अभवः**) भवसि (**जगतः**) संसारस्य (**चर्षणीनाम्**) मनुष्याणाम् (**साकम्**) सह (**सूर्य्यम्**) (**जनयन्**) उत्पादयन् (**द्याम्**) प्रकाशम् (**उषासम्**) दिनमुखं प्रभातम्॥५॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यथा सूर्य्यः पर्वतस्य दृळ्हं रुजति विषूचीर्दुरः प्रकाशयन्नपो वि वर्षयति जगतश्चर्षणीनां राजा भवति तथा त्वं सूर्य्यं द्यामुषासं च जनयन्त्सर्वैः साकं व्याप्तः सन् दुःखमरुजो जगतश्चर्षणीनाञ्च राजाऽभवः॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यः सूर्यादीनामुत्पादकः प्रकाशको धर्ता सर्वेषु व्याप्तो जगदीश्वरोऽस्ति तमात्मना सह सततमुपासीध्वमिति॥५॥

अत्रेन्द्रराजसूर्य्येश्वरगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति त्रिशत्तमं सूक्तं द्वितीयो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** अत्यन्त ऐश्वर्य्य के देने वाले जगदीश्वर! जैसे सूर्य्य **(पर्वतस्य)** मेघ के **(दृळ्हम्)** दृढ़ भाग को भङ्ग करता और **(विषूचीः)** व्याप्त **(दुरः)** द्वारों को प्रकाशित करता हुआ **(अपः)** जलों वा प्राणों को **(वि)** विशेष कर वर्षाता है तथा **(जगतः)** संसार के **(चर्षणीनाम्)** मनुष्यों का **(राजा)** राजा होता है, वैसे **(त्वम्)** आप **(सूर्य्यम्)** सूर्य्य और **(द्याम्)** प्रकाश को और **(उषासम्)** दिन के मुख प्रभात को **(जनयन्)** उत्पन्न करते हुए सबके **(साकम्)** साथ व्याप्त हुए दुःख को **(अरुजः)** नष्ट कीजिये और संसार के मनुष्यों के राजा **(अभवः)** हूजिये॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो सूर्य आदि का उत्पन्न करने वाला, प्रकाशक और धारण करने वाला तथा सम्पूर्ण पदार्थों में व्याप्त जगदीश्वर है उसकी आत्मा के साथ निरन्तर उपासना करो॥५॥

इस सूक्त में इन्द्र, राजा, सूर्य, और ईश्वर के गुणों का वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह तीसवाँ सूक्त और दूसरा वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ पञ्चर्चस्यैकत्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य सुहोत्र ऋषिः। इन्द्रो देवता। १ निचृत्त्रिष्टुप्। ५ त्रिष्टुपछन्दः। धैवतः स्वरः। २ स्वराट् पङ्क्तिः। ३ पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ४ निचृदतिजगती छन्दः। निषादः स्वरः॥

अथेश्वरः कीदृशोऽस्तीत्याह॥

अब पांच ऋचावाले इकतीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में ईश्वर कैसा है, इस विषय को कहते हैं॥

अभूरेको रयिपते रयीणामा हस्तयोरधिथा इन्द्र कृष्टीः।
वि तोके अप्सु तनये च सूरेऽवोचन्त चर्षणयो विवाचः॥ १॥

अभूः। एकः। रयिऽपते। रयीणाम्। आ। हस्तयोः। अधिथाः। इन्द्र। कृष्टीः। वि। तोके। अप्ऽसु। तनये। च। सूरे। अवोचन्त। चर्षणयः। विऽवाचः॥ १॥

पदार्थः-(**अभूः**) भवेः (**एकः**) असहायः (**रयिपते**) धनस्वामिन् (**रयीणाम्**) द्रव्याणाम् (**आ**) (**हस्तयोः**) (**अधिथाः**) दध्याः (**इन्द्र**) ऐश्वर्यप्रद राजन् (**कृष्टीः**) मनुष्यादिप्रजाः (**वि**) (**तोके**) सद्यो जाते (**अप्सु**) प्राणेष्वन्तरिक्षे वा (**तनये**) ब्रह्मचारिणि कुमारे (**च**) (**सूरे**) सूर्ये (**अवोचन्त**) वदन्ति (**चर्षणयः**) मनुष्याः (**विवाचः**) विविधविद्याशिक्षायुक्ता वाचो येषान्ते॥१॥

अन्वयः-हे रयीणां रयिपत इन्द्र! त्वं ये विवाचश्चर्षणयोऽप्सु तोके तनये च सूरे च विद्या व्यवोचन्त ताः कृष्टीर्हस्तयोरामलकमिवाऽऽधिथा एकस्सन् प्रजापालकोऽभूः॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। परमेश्वरस्य स्वभावोऽस्ति ये सत्यमुपदिशन्ति तान्त्सदोत्साहाय्ये रक्षणे च दधात्यैश्वर्यं च प्रापयति यथा विनययुक्त एकोऽपि राजा राज्यं पालयितुं शक्नोति तथैव सर्वशक्तिमान् परमात्माऽखिलां सृष्टिं सदा रक्षति॥१॥

पदार्थः-हे (**रयीणाम्**) द्रव्यों के बीच (**रयिपते**) धन के स्वामिन् (**इन्द्र**) ऐश्वर्य्य के देने वाले राजन्! आप जो (**विवाचः**) अनेक प्रकार की विद्या और शिक्षा से युक्त वाणियों वाले (**चर्षणयः**) मनुष्य (**अप्सु**) प्राणों वा अन्तरिक्ष तथा (**तोके**) शीघ्र उत्पन्न हुए सन्तान (**तनये, च**) और ब्रह्मचारी कुमार और (**सूरे**) सूर्य्य में विद्याओं को (**वि, अवोचन्त**) विशेष कहते हैं उन (**कृष्टीः**) मनुष्य आदि प्रजाओं को (**हस्तयोः**) हाथों में आंवले के सदृश (**आ, अधिथाः**) अच्छे प्रकार धारण करिये और (**एकः**) सहायरहित हुए प्रजा के पालन करने वाले (**अभूः**) हूजिये॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। परमेश्वर का स्वभाव है कि जो सत्य का उपदेश देते हैं उनको सदा उत्साहित करता और रक्षा में धारण करता और ऐश्वर्य्य को प्राप्त कराता है और जैसे

विनय से युक्त एक भी राजा राज्यपालन करने को समर्थ होता है, वैसे ही सर्व शक्तिमान् परमात्मा सम्पूर्ण सृष्टि की सदा रक्षा करता है॥१॥

पुनर्मनुष्याः किं जानीयुरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या जानें, इस विषय को कहते हैं॥

त्वद्भियेन्द्र पार्थिवानि विश्वाच्युता चिच्च्यावयन्ते रजांसि।

द्यावाक्षामा पर्वतासो वनानि विश्वं दृळ्हं भयते अज्मन्ना ते॥२॥

त्वत्। भिया। इन्द्र। पार्थिवानि। विश्वा। अच्युता। चित्। च्यवयन्ते। रजांसि। द्यावाक्षामा। पर्वतासः। वनानि। विश्वम्। दृळ्हम्। भयते। अज्मन्। आ। ते॥२॥

पदार्थः-(**त्वत्**) (**भिया**) (**इन्द्र**) विद्युदिव वर्त्तमान (**पार्थिवानि**) पृथिव्यां विदितानां जन्तुविशेषाणि (**विश्वा**) सर्वाणि (**अच्युता**) क्षयरहितानि (**चित्**) (**च्यावयन्ते**) गमयन्ति (**रजांसि**) लोकान् (**द्यावाक्षामा**) द्यावापृथिव्यौ (**पर्वतासः**) शैलाः (**वनानि**) जङ्गलानि (**विश्वम्**) सर्वं जगत् (**दृळ्हम्**) (**भयते**) (**अज्मन्**) मार्गे (**आ**) (**ते**) तव॥२॥

अन्वयः-हे इन्द्र! ते भिया विश्वाच्युता पार्थिवानि रजांसि चित् च्यावयन्ते यथा सूर्येण द्यावाक्षामा पर्वतासो वनानि विश्वञ्च तथा त्वद्दृळ्हमज्मन्नाऽऽभयते॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा न्यायकारिणो वीरपुरुषात् कातरा बिभ्यति तथैव विद्युतः सर्वे प्राणिनो बिभ्यति॥२॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) बिजुली के सदृश वर्त्तमान (**ते**) आपके (**भिया**) भय से (**विश्वा**) सम्पूर्ण (**अच्युता**) नाश से रहित (**पार्थिवानि**) पृथिवी में विदित जन्तु विशेष (**रजांसि**) लोकों को (**चित्**) निश्चित (**च्यावयन्ते**) चलाते हैं तथा जैसे सूर्य्य से (**द्यावाक्षामा**) अन्तरिक्ष और पृथिवी तथा (**पर्वतासः**) पर्वत और (**वनानि**) जंगल (**विश्वम्**) सम्पूर्ण जगत् को चलाते हैं, वैसे (**त्वत्**) आपसे (**दृळ्हम्**) दृढ़ विश्व (**अज्मन्**) मार्ग में (**आ, भयते**) अच्छे प्रकार भय करता है॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे न्यायकारी वीरपुरुष से कायर जन डरते हैं, वैसे ही बिजुली से सब प्राणी डरते हैं॥२॥

पुना राज्ञा किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

त्वं कुत्सेनाभि शुष्णमिन्द्राशुषं युध्य कुयवं गविष्टौ।

दश प्रपित्वे अध सूर्यस्य मुषायश्चक्रमविवे रपांसि॥३॥

त्वम्। कुत्सेन। अभि। शुष्णम्। इन्द्र। अशुषम्। युध्य। कुयवम्। गोऽइष्टौ। दश। प्रऽपित्वे। अध। सूर्यस्य। मुषायः। चक्रम्। अविवेः। रपांसि॥३॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**कुत्सेन**) वज्रेण (**अभि**) (**शुष्णम्**) बलम् (**इन्द्र**) परमैश्वर्यप्रद राजन् (**अशुषम्**) अशुष्कम् (**युध्य**) (**कुयवम्**) कुत्सिता यवा यस्मिंस्तत् (**गविष्टौ**) किरणसमागमे (**दश**) (**प्रपित्वे**) प्राप्तौ (**अध**) (**सूर्यस्य**) (**मुषायः**) चोरय (**चक्रम्**) चक्रमिव (**अविवेः**) व्याप्नुहि (**रपांसि**) हिंसनानि॥३॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं शुष्णमशुषं कुत्सेन गविष्टौ कुयवमभि युध्याध प्रपित्वे दश रपांसि मुषायः सूर्यस्य चक्रमविवेः॥३॥

भावार्थः-हे राजंस्त्वमधर्मिणा शत्रुणा सहैव युध्यस्व न धर्मात्मना, एवं कृते यथा सूर्यस्याऽभितो भूगोलाश्चकवद् भ्रमन्ति तथैव प्रजाजनास्त्वां दृष्ट्वा पुरुषार्थेन प्रचलिष्यन्ति॥३॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य के देने वाले राजन्! (**त्वम्**) आप (**शुष्णम्**) बल और (**अशुषम्**) शुष्करहित को (**कुत्सेन**) वज्र से (**गविष्टौ**) किरणों के समागम में (**कुयवम्**) कुत्सित यव जिसमें उसको (**अभि, युध्य**) अभियोधन करो (**अध**) इसके अनन्तर (**प्रपित्वे**) प्राप्ति में (**दश**) दश (**रपांसि**) हिंसनों को (**मुषायः**) चुराओ और (**सूर्यस्य**) सूर्य्य के (**चक्रम्**) चक्र को (**अविवेः**) व्याप्त होओ॥३॥

भावार्थः-हे राजन्! आप अधर्मी शत्रु के साथ ही युद्ध करिये, धर्मात्मा के साथ न करिये, ऐसा करने पर जिस प्रकार सूर्य्य के चारों ओर भूगोल चक्र के समान घूमते हैं, वैसे ही प्रजाजन आपको देखकर पुरुषार्थ से चलेंगे॥३॥

पुना राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

त्वं श॒तान्यव॒ शम्ब॑रस्य॒ पुरो॑ जघ॒न्थाप्र॒तीनि॒ दस्यो॑ः।

अशि॑क्षो॒ यत्र॒ शच्या॑ शचीवो॒ दिवो॑दासाय सुन्व॒ते सु॑तक्रे भ॒रद्वा॑जाय गृण॒ते वसू॑नि॥४॥

त्वम्। श॒तानि॑। अव॑। शम्ब॑रस्य। पुरः॑। ज॒घ॒न्थ॒। अ॒प्र॒तीनि॑। दस्यो॑ः। अशि॑क्षः। यत्र॑। शच्या॑। श॒ची॒ऽव॒ः। दिव॑ःऽदासाय। सु॒न्व॒ते। सु॒त॒ऽक्रे॒। भ॒रत्ऽवा॑जाय। गृ॒ण॒ते। वसू॑नि॥४॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**शतानि**) (**अव**) (**शम्बरस्य**) मेघस्येव शत्रोः (**पुरः**) पुराणि (**जघन्थ**) हंसि (**अप्रतीनि**) अप्रतीतान्यपि (**दस्योः**) परद्रव्यापहारकस्य दुष्टस्य (**अशिक्षः**) शिक्षय (**यत्र**) (**शच्या**) सुशिक्षितया वाचोत्तमेन कर्म्मणा वा (**शचीवः**) शची प्रशस्ता प्रज्ञा विद्यते यस्य सः (**दिवोदासाय**) विज्ञानस्य दात्रे (**सुन्वते**) सारनिष्पादकाय (**सुतक्रे**) सुष्ठुप्रसन्न (**भरद्वाजाय**) विज्ञानधर्त्रे (**गृणते**) स्तुवते (**वसूनि**) द्रव्याणि॥४॥

अन्वयः-हे शचीवः सुतक्र इन्द्र! राजँस्त्वं यथा सूर्यः शम्बरस्य शतानि पुरोऽव जघन्थ तथा दस्योरप्रतीनि शतानि पुरो जघन्थ शच्यैतानशिक्षो यत्र दिवोदासाय सुन्वते गृणते भरद्वाजाय वसूनि दद्यास्तत्रैतेन विद्याप्रचारं कारय॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यो राजा सूर्य्यवन्न्यायप्रकाशको मेघवद्विद्यादिप्रचाराय पुष्कलधनदाता भवति स एव विजयमाप्नोति॥४॥

पदार्थः-हे **(शचीवः)** उत्तम बुद्धि वाले **(सुतके)** उत्तम प्रकार प्रसन्न अत्यन्त ऐश्वर्य के देने वाले राजन्! **(त्वम्)** आप जैसे सूर्य्य **(शम्बरस्य)** मेघ के समान शत्रु के **(शतानि)** सैकड़ों **(पुरः)** नगरों का **(अव, जघन्थ)** नाश करते हो, वैसे **(दस्योः)** दूसरे के द्रव्य चुराने वाले दुष्टजन के **(अप्रतीनि)** नहीं जाने गये भी सैकड़ों नगरों का नाश करिये और **(शच्या)** उत्तमशिक्षायुक्त वाणी वा उत्तम कर्म्म से इनको **(अशिक्षः)** शिक्षा दीजिये और **(यत्र)** जहाँ **(दिवोदासाय)** विज्ञान के देने तथा **(सुन्वते)** सार के निकालने वाले **(गृणते)** स्तुति करते हुए **(भरद्वाजाय)** विज्ञान के धारण करने वाले के लिये **(वसूनि)** द्रव्यों को दीजिये वहाँ इससे विद्या का प्रचार कराइये॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो राजा सूर्य्य के सदृश न्याय का प्रकाश करने वाला और मेघ के सदृश विद्या आदि के प्रचार के लिये बहुत धन का देने वाला होता है, वही सर्वत्र विजय को प्राप्त होता है॥४॥

पुनस्स राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स सत्यसत्वन् महते रणाय रथमा तिष्ठ तुविनृम्ण भीमम्।
याहि प्रपथिन्नवसोप मद्रिक् प्र च श्रुत श्रावय चर्षणिभ्यः॥५॥३॥

सः। सत्यऽसत्वन्। महते। रणाय। रथम्। आ। तिष्ठ। तुविऽनृम्ण। भीमम्। याहि। प्रऽपथिन्। अवसा। उप। मद्रिक्। प्र। च श्रुत। श्रावय। चर्षणिऽभ्यः॥५॥

पदार्थः-**(सः)** **(सत्यसत्वन्)** सत्यानि सत्वान्यन्तःकरणादीनि यस्य तत्सम्बुद्धौ **(महते)** **(रणाय)** स-ग्रामाय **(रथम्)** रमणीयं यानम् **(आ)** **(तिष्ठ)** **(तुविनृम्ण)** बहुधनयुक्त **(भीमम्)** भयङ्करम् **(याहि)** **(प्रपथिन्)** प्रकृष्टः पन्था विद्यते यस्य तत्सम्बुद्धौ **(अवसा)** रक्षणादिना **(उप)** **(मद्रिक्)** यो मामञ्चति मदभिमुखः **(प्र)** **(च)** **(श्रुत)** शृणु **(श्रावय)** **(चर्षणिभ्यः)** मनुष्येभ्यः॥५॥

अन्वयः-हे सत्यसत्वन् प्रपथिंस्तुविनृम्ण! स त्वं महते रणाय रथमा तिष्ठाऽवसा भीमं स-ग्राममुप याहि मद्रिक् सन् विद्वद्भ्यः श्रुत चर्षणिभ्यश्च प्र श्रावय॥५॥

भावार्थः-यो राजा सत्यवादिभ्यो राजनीतिकृत्यं श्रुत्वाऽन्येभ्यः श्रावयित्वा शुद्धात्मा सन्त्सर्वस्य रक्षणाय दुष्टपराजयं करोति स एवातुलश्रीको भवतीति॥५॥

अत्रेन्द्रराजकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्येकत्रिंशत्तमं सूक्त तृतीयो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(सत्यसत्वन्)** शुद्ध अन्तःकरण आदि इन्द्रियों युक्त **(प्रपथिन्)** उत्तम मार्ग वाले और **(तुविनृम्ण)** बहुत धन से युक्त **(सः)** वह आप **(महते)** बड़े **(रणाय)** स-ग्राम के लिये **(रथम्)** सुन्दर

वाहन पर **(आ, तिष्ठ)** स्थित हूजिये और **(अवसा)** रक्षण आदि से **(भीमम्)** भयङ्कर स- ाम को **(उप, याहि)** प्राप्त हूजिये तथा **(मद्रिक्)** मेरे सम्मुख हुए विद्वानों से **(श्रुत)** सुनिये **(चर्षणिभ्यः, च)** और मनुष्यों के लिये **(प्र, श्रावय)** सुनाइये॥५॥

भावार्थः-जो राजा सत्यवादियों से राजनीति के कृत्य को सुनकर अन्यों को सुना कर शुद्धचित्त वाला सब के रक्षण के लिये दुष्टों का पराजय करता है, वही बहुत लक्ष्मी वाला होता है॥५॥

इस सूक्त में इन्द्र और राजा के कृत्य का वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह इकतीसवाँ सूक्त और तृतीय वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ पञ्चर्चस्य द्वात्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य सुहोत्र ऋषिः। इन्द्रो देवता। १ भुरिक्पङ्क्तिः। २ स्वराट्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ३, ५ त्रिष्टुप्। ४ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ विद्वांसः किं कुर्युरित्याह॥

अब पाँच ऋचावाले बत्तीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में विद्वान् जन क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

अपूर्व्या पुरुतमान्यस्मै महे वीराय तवसे तुराय।
विरप्शिने वज्रिणे शंतमानि वचांस्यासा स्थविराय तक्षम्॥ १॥

अपूर्व्या। पुरुऽतमानि। अस्मै। महे। वीराय। तवसे। तुराय। विऽरप्शिने। वज्रिणे। शम्ऽतमानि। वचांसि। आसा। स्थविराय। तक्षम्॥ १॥

पदार्थः-(**अपूर्व्या**) न विद्यते पूर्वो यस्मात् सोऽपूर्वस्तत्र भवानि (**पुरुतमानि**) अतिशयेन बहूनि (**अस्मै**) (**महे**) महते (**वीराय**) बलपराक्रमविद्यायुक्ताय (**तवसे**) बलाय (**तुराय**) क्षिप्रं कारिणे (**विरप्शिने**) प्रशंसिताय (**वज्रिणे**) प्रशस्तशस्त्रास्त्रयुक्ताय (**शन्तमानि**) अतिशयेन कल्याणकराणि (**वचांसि**) वचनानि (**आसा**) मुखेन (**स्थविराय**) वृद्धाय (**तक्षम्**) उपदिशेयम्॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथाऽहमासाऽस्मै महे वीराय तवसे तुराय विरप्शिने वज्रिणे स्थविरायाऽपूर्व्या पुरुतमानि शन्तमानि वचांसि तक्षं तथा यूयमप्यन्यानुपदिशत॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। विद्वद्भिः सदैव सर्वेभ्यः सत्योपदेशः कर्त्तव्यः येनातुलं सुखं जायेत॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे मैं (**आसा**) मुख से (**अस्मै**) इस (**महे**) बड़े (**वीराय**) बल पराक्रम तथा विद्यायुक्त के लिये और (**तवसे**) बल के लिये (**तुराय**) शीघ्र कार्य करने वाले तथा (**विरप्शिने**) प्रशंसित (**वज्रिणे**) प्रशंसित शस्त्र और अस्त्रों से युक्त (**स्थविराय**) वृद्धजन के लिये (**अपूर्व्या**) नहीं विद्यमान हैं पूर्व जिससे उसमें हुए (**पुरुतमानि**) अतिशय बहुत (**शन्तमानि**) अतीव कल्याण करने वाले (**वचांसि**) वचनों का (**तक्षम्**) उपदेश करूं, वैसे आप लोग भी अन्यों को उपदेश दीजिये॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। विद्वानों को चाहिये कि सदा ही सब के लिये सत्य उपदेश करना चाहिये, जिससे अतुल सुख होवे॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

स मातरा सूर्येणा कवीनामवासयद् रुजदद्रिं गृणानः।

स्वाधीभिर्ऋक्वभिर्वावशान उदुस्त्रियाणामसृजन्निदानम्॥ २॥

सः। मातरा। सूर्येण। कवीनाम्। अवासयत्। रुजत्। अद्रिम्। गृणानः। सुऽआधीभिः। ऋक्वऽभिः। वावशानः। उत्। उस्त्रियाणाम्। असृजत्। निऽदानम्॥ २॥

पदार्थः-(**सः**) (**मातरा**) मातापितरौ (**सूर्येण**) सवित्रा। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**कवीनाम्**) विदुषाम् (**अवासयत्**) वासयति (**रुजत्**) रुजति (**अद्रिम्**) मेघम् (**गृणानः**) स्तुवन् (**स्वाधीभिः**) शोभना आधयस्सन्ति यासां ताभिर्नीतिभिः (**ऋक्वभिः**) प्रशंसनीयैः (**वावशानः**) कामयमानः (**उत्**) अपि (**उस्त्रियाणाम्**) किरणानामिव (**असृजत्**) सृजति (**निदानम्**) निश्चयम्॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा सूर्येणा सहितो विद्युदग्निरद्रिं रुजत् कवीनां च मातराऽवासयत् तथैव स्वाधीभिर्ऋक्वभिस्सह गृणानो वावशानो यथा सवितोस्त्रियाणां निदानमिव निदानमुदसृजत् स राजा सर्वैः सत्कर्त्तव्यः॥ २॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजन्! यथा सूर्यो रश्मिभिः सर्वं प्रकाशयति तथैव विनयादीभिः सर्वं राज्यं प्रकाशय यथा सत्पुत्रा मातापितरौ सेवन्ते तथैव राजधर्मं सेवस्व॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**सूर्येण**) सूर्य्य के सहित बिजुलीरूप अग्नि (**अद्रिम्**) मेघ को (**रुजत्**) स्थिर करता और (**कवीनाम्**) विद्वानों के (**मातरा**) माता-पिता को (**अवासयत्**) वसाता है, वैसे ही जो राजा (**स्वाधीभिः**) सुन्दर स्थान जिनके उन नीतियों और (**ऋक्वभिः**) प्रशंसा के योग्य व्यवहारों के साथ (**गृणानः**) स्तुति करता और (**वावशानः**) कामना करता हुआ जैसे सूर्य्य (**उस्त्रियाणाम्**) किरणों के (**निदानम्**) निश्चय को, वैसे निश्चय को (**उत्, असृजत्**) उत्पन्न करता है (**स**) वह राजा सब से सत्कार करने योग्य है॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजन्! जैसे सूर्य्य किरणों से सबको प्रकाशित करता है, वैसे ही विनय आदिकों से सम्पूर्ण राज्य को प्रकाशित करिये और जैसे श्रेष्ठ पुत्र माता-पिता की सेवा करते हैं, वैसे ही राजधर्म का सेवन करिये॥ २॥

राजा कीदृशैः सह मित्रतां कुर्य्यादित्याह॥

राजा कैसे जनों के साथ मित्रता करे, इस विषय को कहते हैं॥

स वह्निभिर्ऋक्वभिर्गोषु शश्वन्मितज्ञुभिः पुरुकृत्वा जिगाय।
पुरः पुरोहा सखिभिः सखीयन् दृळ्हा रुरोज कविभिः कविः सन्॥ ३॥

सः। वह्निऽभिः। ऋक्वऽभिः। गोषु। शश्वत्। मितज्ञुऽभिः। पुरुऽकृत्वा। जिगाय। पुरः। पुरःऽहा। सखिऽभिः। सखिऽयन्। दृळ्हा। रुरोज। कविऽभिः। कविः। सन्॥ ३॥

पदार्थः-(**सः**) (**वह्निभिः**) वोढृभिः (**ऋक्वभिः**) प्रशंसितैः (**गोषु**) सुशिक्षितासु वाक्षु (**शश्वत्**) निरन्तरम् (**मितज्ञुभिः**) सङ्कुचितजानुभिरासीनैर्विद्वद्भिः (**पुरुकृत्वा**) (**जिगाय**) जयति (**पुरः**) शत्रूणां

नगराणि **(पुरोहा)** पुराणां हन्ता **(सखिभिः)** मित्रैः **(सखीयन्)** सखेवाचरन् **(दृळहाः)** निष्कम्पाः **(रुरोज)** रुजति भनक्ति **(कविभिः)** विपश्चिद्भिः **(कविः)** विद्वान् **(सन्)**॥३॥

अन्वयः-हे सज्जना! यो मितज्ञुभिर्ऋक्वभिर्वह्निभिः कविभिः कविः सन् सखिभिः सखीयन् सन् पुरोहा दृळ्हाः पुरो रुरोज गोषु शश्वत् पुरुकृत्वा शत्रून् जिगाय स एव युष्माभिर्मन्तव्यः॥३॥

भावार्थः-ये मनुष्याः प्रशंसितैर्बलिष्ठैर्मितभाषिभिर्विद्वद्भिर्मित्रैस्सह मैत्रीं कृत्वा राज्यं प्राप्य दुष्टान् हत्वा धार्मिकान् रक्षन्ति ते कृतकृत्या भवन्ति॥३॥

पदार्थः-हे सज्जनो! जो **(मितज्ञुभिः)** सङ्कुचित जांघ वाले बैठे हुए विद्वानों और **(ऋक्वभिः)** प्रशंसित **(वह्निभिः)** धारण करने वाले **(कविभिः)** विद्वानों से **(कविः)** विद्वान् **(सन्)** हुआ और **(सखिभिः)** मित्रों से **(सखीयन्)** मित्र के सदृश आचरण करता हुआ **(पुरोहा)** नगरों का नाश करने वाला **(दृळहाः)** कम्पन क्रिया से रहित **(पुरः)** शत्रुओं के नगरों का **(रुरोज)** भङ्ग करता है और **(गोषु)** उत्तम प्रकार शिक्षित वाणियों में **(शश्वत्)** निरन्तर **(पुरुकृत्वा)** बहुत करके शत्रुओं को **(जिगाय)** जीतता है **(सः)** वही आप लोगों से मानने योग्य है॥३॥

भावार्थः-जो मनुष्य प्रशंसित, बलिष्ठ, थोड़े बोलने वाले, विद्वान् मित्रों के साथ मित्रता कर राज्य को प्राप्त होकर दुष्टों का नाश करके धार्मिकों की रक्षा करते हैं, वे कृतकृत्य होते हैं॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

स नी॒व्या॑भिर्जरि॒तार॒मच्छा॑ म॒हो वाजे॑भिर्म॒हद्भि॑श्च॒ शुष्मैः॑।

पु॒रु॒वीरा॑भिर्वृषभ क्षिती॒नामा गि॑र्वणः सुवि॒ताय॒ प्र या॑हि॥४॥

सः। नी॒व्या॑भिः। ज॒रि॒तार॑म्। अच्छ॑। म॒हः। वाजे॑भिः। म॒हत्ऽभिः॑। च॒। शुष्मैः॑। पु॒रु॒ऽवीरा॑भिः। वृ॒ष॒भ॒। क्षि॒ती॒नाम्। आ। गि॒र्व॒णः। सु॒वि॒ताय॑। प्र। या॒हि॥४॥

पदार्थः-**(सः)** **(नीव्याभिः)** नीविषु प्रापणीयेषु भवाभिः **(जरितारम्)** स्तावकम् **(अच्छा)** अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। **(महः)** महान्तम् **(वाजेभिः)** वेगविज्ञानादिगुणवद्भिः **(महद्भिः)** महाशयैः **(च)** **(शुष्मैः)** प्रशंसितबलैः **(पुरुवीराभिः)** पुरवो बहवो वीरा यासु सेनासु ताभिः **(वृषभ)** बलिष्ठ **(क्षितीनाम्)** मनुष्याणाम् **(आ)** **(गिर्वणः)** यः उत्तमाभिर्वाग्भिः सेव्यते तत्सम्बुद्धौ **(सुविताय)** प्रेरणाय **(प्र)** **(याहि)** प्रयाणं कुरु॥४॥

अन्वयः-हे वृषभ गिर्वण इन्द्र राजन्त्स त्वं नीव्याभिर्वाजेभिर्महद्भिः शुष्मैर्युक्ताभिः पुरुवीराभिः सेनाभिस्सह क्षितीनां सुविताय प्राऽऽयाहि महो जरितारं चाऽच्छा याहि॥४॥

भावार्थः-यो मनुष्यो धार्मिकाणां बलिष्ठानां सुशिक्षितानां सेनाभिर्विजयाय प्रयतेत स ध्रुवं विजयमाप्नुयात्॥४॥

पदार्थः-हे **(वृषभ)** बलयुक्त **(गिर्वणः)** उत्तम वाणियों से सेवा किये गये अत्यन्त ऐश्वर्य्य के करने वाले राजन्! **(सः)** वह आप **(नीव्याभिः)** प्राप्त कराने योग्य पदार्थों में होने वाली तथा **(वाजेभिः)** वेग और विज्ञान आदि गुण वालों तथा **(महद्भिः)** महाशयों और **(शुष्मैः)** प्रशंसित बल वालों से युक्त **(पुरुवीराभिः)** बहुत वीर जिनमें उन सेनाओं के साथ **(क्षितीनाम्)** मनुष्यों की **(सुविताय)** प्रेरणा के लिये **(प्र, आ, याहि)** अच्छे प्रकार यात्रा करिये और **(महः)** बड़े **(जरितारम्, च)** और स्तुति वाले को **(अच्छा)** उत्तम प्रकार प्राप्त हूजिये॥४॥

भावार्थः-जो मनुष्य धार्मिक, बलिष्ठ और उत्तम प्रकार से शिक्षित पुरुषों की सेनाओं से विजय के लिये प्रयत्न करे, वह निश्चय कर विजय को प्राप्त होवे॥४॥

पुनः स राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

स सर्गेण शवसा तक्तो अत्यैरप इन्द्रो दक्षिणतस्तुराषाट्।

इत्था सृजाना अनपावृदर्थं दिवेदिवे विविषुरप्रमृष्यम्॥५॥४॥

सः। सर्गेण। शवसा। तक्तः। अत्यैः। अपः। इन्द्रः। दक्षिणतः। तुराषाट्। इत्था। सृजानाः। अनपऽवृत्। अर्थम्। दिवेऽदिवे। विविषुः। अप्रऽमृष्यम्॥५॥

पदार्थः-**(सः)** **(सर्गेण)** संसर्जनीयेन **(शवसा)** बलेन **(तक्तः)** प्रसन्नः **(अत्यैः)** अश्वैरिव वेगवद्भिः **(अपः)** जलानि **(इन्द्रः)** परमैश्वर्यप्रदः **(दक्षिणतः)** दक्षिणपार्श्वात् **(तुराषाट्)** यस्तुरान् हिंसकान्त्सहते **(इत्था)** अस्माद्धेतोः **(सृजानाः)** सुशिक्षिताः **(अनपावृत्)** यो नापवृणोति **(अर्थम्)** द्रव्यम् **(दिवेदिवे)** प्रतिदिनम् **(विविषुः)** व्याप्नुवन्ति **(अप्रमृष्यम्)** अविचारणीयम्॥५॥

अन्वयः-हे राजन्! स त्वं यथा सूर्योऽपः सृजति तथा तक्त इन्द्रोऽत्यैर्दक्षिणतः सर्गेण शवसा तुराषाडनपावृत् सन् दिवेदिवेऽप्रमृष्यमर्थमा स्वीकुरु यथा सृजानाः कृत्यं विविषुरित्था कर्त्तव्यानि कर्माणि प्रविश॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यो मनुष्योऽधर्मेण कर्त्तव्यमनर्थं न करोति स सूर्य्यवत्प्रकाशितकीर्तिर्भवति यथाऽऽदित्यो वृष्टिं कृत्वा सर्वान् हर्षयति तथैव राजा शुभगुणान् वर्षयित्वा सर्वानानन्दयेदिति॥५॥

अत्रेन्द्रविद्वद्राजगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति द्वात्रिंशत्तमं सूक्तं चतुर्थो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे राजन् **(सः)** वह आप जैसे सूर्य्य **(अपः)** जलों को प्रकट करता है, वैसे **(तक्तः)** प्रसन्न **(इन्द्रः)** अत्यन्त ऐश्वर्य के देने वाले **(अत्यैः)** घोड़ों के समान वेग वाले पदार्थों से और **(दक्षिणतः)** दहिने पसवाड़े से **(सर्गेण)** उत्तम प्रकार प्रकट करने योग्य **(शवसा)** बल से **(तुराषाट्)** हिंसकों को सहने

वाले तथा **(अनपावृत्)** असत्य को नहीं स्वीकार करने वाले हुए आप **(दिवेदिवे)** प्रतिदिन **(अप्रमृष्यम्)** नहीं विचारने योग्य **(अर्थम्)** द्रव्य को सब ओर से स्वीकार करिये और जैसे **(सृजानाः)** उत्तम प्रकार शिक्षित जन कृत्य को **(विविषुः)** व्याप्त होते हैं **(इत्था)** इस हेतु से कर्त्तव्य कर्म्मों में प्रविष्ट हूजिये॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य अधर्म्म से करने योग्य अनर्थ को नहीं करता है, वह सूर्य्य के सदृश प्रकाशित यश वाला होता है और जैसे सूर्य्य वृष्टि करके सब को हर्षित करता, वैसे ही राजा शुभगुणों की वर्षा करके सब को आनन्दित करे॥५॥

इस सूक्त में इन्द्र, विद्वान् और राजा के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह बत्तीसवां सूक्त और चौथा वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ पञ्चर्चस्य त्रयस्त्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य शुनहोत्र ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, २, ३ निचृत्पङ्क्तिः। ४ भुरिक्पङ्क्तिः। ५ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमःस्वरः॥

अथ नृपः किं कृत्वा किं कारयेदित्याह॥

अब पाँच ऋचावाले तेंतीसवें सूक्त का प्रारम्भ किया जाता है उसके प्रथम मन्त्र में राजा क्या करके क्या करावे, इस विषय को कहते हैं॥

य ओजि॑ष्ठ इन्द्र॒ तं सु नो॑ दा॒ मदो॑ वृषन्त्स्वभि॒ष्टिर्दास्वा॑न्।
सौव॑श्व्यं॒ यो व॒नव॒त् स्वश्वो॑ वृ॒त्रा स॒मत्सु॑ सा॒सह॑द॒मित्रा॑न्॥१॥

यः। ओजि॑ष्ठः। इ॒न्द्र॒। तम्। सु। न॒ः। दा॒ः। मदः॑। वृ॒ष॒न्। सु॒ऽअ॒भि॒ष्टिः। दास्वा॑न्। सौव॑श्व्यम्। यः। व॒नव॑त्। सु॒ऽअश्वः॑। वृ॒त्रा। स॒मत्ऽसु। स॒सह॒त्। अ॒मित्रा॑न्॥१॥

पदार्थः-(**यः**) (**ओजिष्ठः**) अतिशयेन बली (**इन्द्र**) ऐश्वर्यप्रद (**तम्**) (**सु**) (**नः**) (**अस्मभ्यम्**) (**दाः**) देहि (**मदः**) हर्षितः (**वृषन्**) तेजस्विन् (**स्वभिष्टिः**) सुष्ठ्वभिनता सङ्गतिर्यस्य सः (**दास्वान्**) दाता (**सौवश्व्यम्**) शोभनेष्वश्वेषु महत्सु पदार्थेषु वा भवम् (**यः**) (**वनवत्**) याचते (**स्वश्वः**) शोभना अश्वा यस्य सः (**वृत्रा**) धनानि (**समत्सु**) स- ामेषु (**सासहत्**) भृशं सहते (**अमित्रान्**) शत्रून्॥१॥

अन्वयः-हे वृषन्निन्द्र! य ओजिष्ठो मदः स्वभिष्टिर्दास्वान् स त्वं नः सौवश्व्यं सु दाः। यः स्वश्वः सन् वृत्रा वनवत् समत्स्वमित्रान्त्सासहत् तं वयं सत्कुर्याम॥१॥

भावार्थः-योऽभयदाता स- ामेषु विजेता स्वं बलमहर्निशं वर्धयति स एव सर्वान् सुखयितुमर्हति॥१॥

पदार्थः-हे (**वृषन्**) तेजस्वी (**इन्द्र**) ऐश्वर्य के देने वाले (**यः**) जो (**ओजिष्ठः**) अतिशय बली (**मदः**) हर्षित हुए (**स्वभिष्टिः**) अच्छी सङ्गति वाले (**दास्वान्**) दाता वह आप (**नः**) हम लोगों के लिये (**सौवश्व्यम्**) सुन्दर घोड़ों और बड़े पदार्थों में हुए को (**सु**) उत्तम प्रकार (**दाः**) दीजिये और (**यः**) जो (**स्वश्वः**) अच्छे घोड़ों वाला हुआ (**वृत्रा**) धनों की (**वनवत्**) याचना करता है तथा (**समत्सु**) संग्रामों में (**अमित्रान्**) शत्रुओं को (**सासहत्**) अत्यन्त सहता है (**तम्**) उसका हम लोग सत्कार करें॥१॥

भावार्थः-जो अभय देने वाला और स- ामों में जीतने वाला तथा दिन-रात अपने बल को बढ़ाता है, वही सब को सुखी करने को योग्य है॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वां ही॒३॑न्द्राव॑से॒ विवा॑चो॒ हव॑न्ते चर्ष॒णय॒ः शूर॑सातौ।
त्वं विप्रे॑भि॒र्वि प॒णीँर॑शाय॒स्त्वोत॒ इत्सनि॑ता॒ वाज॒मर्वा॑॥२॥

त्वाम्। हि। इन्द्र। अवसे। विऽवाचः। हवन्ते। चर्षणयः। शूरऽसातौ। त्वम्। विप्रेभिः। वि। पणीन्। अशायः। त्वाऽऊतः। इत्। सनिता। वाजम्। अर्वा॥२॥

पदार्थः-(**त्वाम्**) (**हि**) यतः (**इन्द्र**) दुःखविदारक राजन् (**अवसे**) रक्षणाद्याय (**विवाचः**) विविधविद्यायुक्ता वाचो येषान्ते (**हवन्ते**) स्तुवन्ति (**चर्षणयः**) विद्वांसः (**शूरसातौ**) शूराणां विभागरूपे स-ामे (**त्वम्**) (**विप्रेभिः**) मेधाविभिः (**वि**) (**पणीन्**) प्रशंसितान् (**अशायः**) शायय (**त्वोतः**) त्वया रक्षितः (**इत्**) एव (**सनिता**) विभाजकः (**वाजम्**) विज्ञानम् (**अर्वा**) अश्व इव शुभगुणग्रहणे वेगवान्॥२॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यो ह्यर्वेव सनिता त्वोतो वाजमाप्नोति तेन सहितस्त्वं विप्रेभिः पणीन् व्यशायस्तमित्त्वामवसे शूरसातौ विवाचश्चर्षणयो हवन्ते॥२॥

भावार्थः-यदि राजा धार्मिकैर्विद्वद्भिः सह राज्यपालनं कुर्यात्तर्हि तं को न प्रशंसेत्॥२॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) दुःख के नाश करने वाले राजन्! जो (**हि**) जिससे (**अर्वा**) घोड़े के समान श्रेष्ठ गुणों के ग्रहण करने वाले वेग वाले (**सनिता**) विभाग करने वाले (**त्वोतः**) आप से रक्षित जन (**वाजम्**) विज्ञान को प्राप्त होता है, उसके सहित (**त्वम्**) आप (**विप्रेभिः**) मेधावी जनों के साथ (**पणीन्**) प्रशंसितों को (**वि, अशायः**) सुलाइये उस (**इत्**) ही (**त्वाम्**) आपकी (**अवसे**) रक्षा आदि के लिये (**शूरसातौ**) शूरवीर जनों के विभागरूप स-ाम में (**विवाचः**) अनेक प्रकार की विद्या से युक्त वाणियों वाले (**चर्षणयः**) विद्वान् जन (**हवन्ते**) स्तुति करते हैं॥२॥

भावार्थः-जो राजा धार्मिक विद्वानों के साथ राज्य का पालन करे तो उसकी कौन नहीं प्रशंसा करे॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

त्वं ताँ इन्द्रोभयाँ अमित्रान् दासा वृत्राण्यार्या च शूर।
वधीर्वनेव सुधितेभिरत्कैरा पृत्सु दर्षि नृणां नृतम॥३॥

त्वम्। तान्। इन्द्र। उभयान्। अमित्रान्। दासा। वृत्राणि। आर्या। च। शूर। वधीः। वनाऽइव। सुऽधितेभिः। अत्कैः। आ। पृत्ऽसु। दर्षि। नृणाम्। नृऽतम॥३॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**तान्**) (**इन्द्र**) राजन् (**उभयान्**) द्विविधान् (**अमित्रान्**) दुष्टान्त्सर्वपीडकान् (**दासा**) दातव्यानि (**वृत्राणि**) धनानि (**आर्या**) धर्मिष्ठानुत्तमान् जनान् (**च**) (**शूर**) दुष्टानां हिंसक (**वधीः**) हन्याः (**वनेव**) अग्निर्वनानीव (**सुधितेभिः**) सुष्ठुतृप्तैः (**अत्कैः**) अश्वैः (**आ**) (**पृत्सु**) स-ामेषु (**दर्षि**) विदारयसि (**नृणाम्**) नायकानां मध्ये (**नृतम**) अतिशयेन नायक॥३॥

अन्वयः-हे नृणां नृतम शूरेन्द्र! त्वं तानमित्रानार्या चोभयान् विभज्याऽमित्रान् पृत्सु वनेव वधीः सुधितेभिरत्कैरा दर्ष्यार्या च रक्षसि दासा वृत्राण्याप्नोषि तस्माद्विवेक्यसि॥३॥

भावार्थः-यो राजोत्तमाननुत्तमान् धार्मिकानधार्मिकांश्च समीक्षया विभज्योत्तमान् रक्षति दुष्टान् दण्डयति स एव सर्वमैश्वर्यमाप्नोति॥३॥

पदार्थः-हे **(नृणाम्)** मुखियाजनों में **(नृतम)** अत्यन्त मुखिया **(शूर)** दुष्टों के नाशक **(इन्द्र)** राजन्! **(त्वम्)** आप **(तान्)** उन **(अमित्रान्)** दुष्ट सब को पीड़ा देने वाले और **(आर्या)** धार्मिष्ठ उत्तम जनों को **(च)** और **(उभयान्)** दो प्रकार के विभाग करके दुष्ट और पीड़ा देने वालों को **(पृत्सु)** स- ग्रामों में **(वनेव)** अग्नि जैसे वनों का, वैसे **(वधीः)** नाश करिये और **(सुधितेभिः)** उत्तम प्रकार से तृप्त किये गये **(अत्कैः)** घोड़ों से **(आ, दर्षि)** विदीर्ण करते हो और धर्म्मिष्ठ उत्तम जनों की रक्षा करते हो तथा **(दासा)** देने योग्य **(वृत्राणि)** धनों को प्राप्त होते हो, इससे विवेकी हो॥३॥

भावार्थः-जो राजा उत्तम, अनुत्तम, धार्मिक और अधार्मिकों का परीक्षा से विभाग करके उत्तमों की रक्षा करता और दुष्टों को दण्ड देता है, वही सम्पूर्ण ऐश्वर्य्य को प्राप्त होता है॥३॥

पुनः स कीदृशः स्यादित्याह॥

फिर वह राजा कैसा हो, इस विषय को कहते हैं॥

स त्वं न॑ इन्द्राक॑वाभिरू॒ती सखा॑ वि॒श्वायु॑रवि॒ता वृ॒धे भूः।
स्व॑र्षाता॒ यद्ध्वया॑मसि त्वा॒ युध्य॑न्तो ने॒मधि॑ता पृ॒त्सु शू॑र॥४॥

सः। त्वम्। नः॒। इ॒न्द्र॒। अक॑वाभिः। ऊ॒ती। सखा॑। वि॒श्वऽआ॑युः। अ॒वि॒ता। वृ॒धे। भूः। स्वः॑ऽसाता। यत्। ह्वया॑मसि। त्वा॒। युध्य॑न्तः। ने॒मऽधि॑ता। पृ॒त्ऽसु। शू॒र॒॥४॥

पदार्थः-**(सः)** राजा **(त्वम्)** **(नः)** अस्माकम् **(इन्द्र)** सुखप्रद **(अकवाभिः)** अनिन्दितृभिः **(ऊती)** रक्षाभिः **(सखा)** सुहृद् **(विश्वायुः)** सर्वायुः **(अविता)** रक्षकः **(वृधे)** वृद्धये **(भूः)** भवेः **(स्वर्षाता)** सुखस्य दाता **(यत्)** यः **(ह्वयामसि)** आह्वयेम **(त्वा)** **(युध्यन्तः)** **(नेमधिता)** धार्मिकाऽधार्मिकयोर्मध्ये धार्मिकाणां ग्रहीतारः **(पृत्सु)** स- ग्रामेषु सेनासु वा **(शूर)** शत्रूणां हिंसक॥४॥

अन्वयः-हे शूरेन्द्र! यद्यस्त्वमकवाभिरूती नः सखा विश्वायुरविता वृधे भूः स त्वं स्वर्षाता सन् विजेता भूस्तं त्वा नेमधिता पृत्सु युध्यन्तो वयं ह्वयामसि॥४॥

भावार्थः-हे राजन्! यथा सखा सख्ये प्रियमाचरति तथैव प्रजायै हितमाचर यत्र यत्र प्रजास्त्वामाह्वयेयुस्तत्र तत्रोपस्थितो भव शत्रुविजये च प्रयतस्व॥४॥

पदार्थः-हे **(शूर)** शूरवीर शत्रुजनों के नाश करने और **(इन्द्र)** सुख के देने वाले! **(यत्)** जो **(त्वम्)** आप **(अकवाभिः)** नहीं निन्दा करने वालों और **(ऊती)** रक्षाओं से **(नः)** हमारे **(सखा)** मित्र **(विश्वायुः)** सम्पूर्ण अवस्था से युक्त **(अविता)** रक्षक **(वृधे)** वृद्धि के लिये **(भूः)** होवें **(सः)** वह आप **(स्वर्षाता)** सुख के देने वाले हुए जीतने वाले हूजिये उन **(त्वा)** आपको **(नेमधिता)** धार्मिक और

अधार्मिक के मध्य में धार्मिकों के ग्रहण करने वाले **(पृत्सु)** स- ामों वा सेनाओं से **(युध्यन्तः)** युद्ध करते हुए हम लोग **(ह्वयामसि)** पुकारें॥४॥

भावार्थः-हे राजन्! जैसे मित्र मित्र के लिये प्रिय आचरण करता है, वैसे ही प्रजा के लिये हित धारण करिये और जहाँ-जहाँ प्रजायें पुकारें वहाँ-वहाँ उपस्थित हूजिये और शत्रुओं के जीतने में प्रयत्न करिये॥४॥

पुनः स राजा कथं वर्तेत इत्याह॥

फिर वह राजा कैसा वर्त्ताव करे, इस विषय को कहते हैं॥

नूनं न इन्द्रापराय च स्या भवा मृळीक उत नो अभिष्टौ।
इत्था गृणन्तो महिनस्य शर्मन् दिवि ष्याम पार्ये गोषतमाः॥५॥५॥

नूनम्। नः। इन्द्र। अपराय। च। स्याः। भव। मृळीकः। उत। नः। अभिष्टौ। इत्था। गृणन्तः। महिनस्य। शर्मन्। दिवि। स्याम। पार्ये। गोसऽतमाः॥५॥

पदार्थः-**(नूनम्)** निश्चितम् **(नः)** अस्माकम् **(इन्द्र)** दुःखविदारक **(अपराय)** अन्यस्मै **(च)** **(स्याः)** भूयाः **(भवा)** अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(मृळीकः)** सुखकर्त्ता **(उत)** अपि **(नः)** अस्माकम् **(अभिष्टौ)** इच्छितसुखे **(इत्था)** अस्मात्कारणात् **(गृणन्तः)** स्तुवन्तः **(महिनस्य)** महतः **(शर्मन्)** शर्मणि गृहे **(दिवि)** कमनीये **(स्याम)** भवेम **(पार्ये)** पूरयितव्ये **(गोषतमाः)** ये गा वाचः सनन्ति सेवन्ते ततोऽतिशयिताः॥५॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वां नो मृळीको भवा, उतापराय नूनं मृळीकः स्या नोऽभिष्टौ च प्रवृत्तो भवेत्था गृणन्तो गोषतमा वयं महिनस्य ते पार्ये दिवि शर्मन्त्स्याम॥५॥

भावार्थः-यदि राजा स्वस्य परस्य वा पक्षपात्यभूत्वा प्रजारक्षणे यत्नवान् भवेत्तर्हि सर्वाः प्रजाः प्रेमास्पदबद्धाः सत्यो राजानमहर्निशं स्तूयुरिति॥५॥

अत्रेन्द्रराजप्रजागुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति त्रयस्त्रिंशत्तमं सूक्तं पञ्चमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** दुःखों के नाश करने वाले आप **(नः)** हम लोगों के **(मृळीकः)** सुखकारक **(भवा)** हूजिये और **(उत)** भी **(अपराय)** अन्य के लिये **(नूनम्)** निश्चय कर सुखकारक **(स्याः)** हूजिये और **(नः)** हम लोगों के **(अभिष्टौ)** अपेक्षित सुख में **(च)** भी प्रवृत्त हूजिये **(इत्था)** इस कारण से

(गृणन्तः) स्तुति करते हुए **(गोषतमाः)** वाणियों को अत्यन्त सेवने वाले हम लोग **(महिनस्य)** बड़े आपके **(पार्ये)** पूर्ण करने और **(दिवि)** कामना करने योग्य **(शर्मन्)** गृह में **(स्याम)** होवें॥५॥

भावार्थः-जो राजा अपने और दूसरे का पक्षपाती न होकर प्रजा के रक्षण में यत्न करने वाला होवे तो सम्पूर्ण प्रजा प्रेम के स्थान में बँधी हुई होकर राजा की दिन-रात स्तुति करे॥५॥

इस सूक्त में इन्द्र, राजा और प्रजा के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह तेंतीसवाँ सूक्त और पाँचवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ पञ्चर्चस्य चतुस्त्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य शुनहोत्र ऋषिः। इन्द्रो देवता। भुरिक्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। २, ४ विराट् त्रिष्टुप्। ३ त्रिष्टुप्। ५ निचृत्त्रिष्टुप् छन्द। धैवतः स्वरः॥

अथ राजा किं कुर्यादित्याह॥

अब पाँच ऋचावाले चौंतीसवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

सं च॒ त्वे ज॒ग्मुर्गिर॑ इन्द्र पू॒र्वीर्वि च॒ त्वद्य॑न्ति वि॒भ्वो॑ मनी॒षाः।
पु॒रा नू॒नं च॑ स्तु॒तय॒ ऋषी॑णां पस्पृ॒ध्र इन्द्रे॒ अध्यु॑क्था॒र्का॥ १॥

सम्। च॒। त्वे॒ इति॑। ज॒ग्मुः। गिरः॑। इ॒न्द्र॒। पू॒र्वीः। वि। च॒। त्वत्। य॒न्ति॒। वि॒ऽभ्वः॑। म॒नी॒षाः। पु॒रा। नू॒नम्। च॒। स्तु॒तयः॑। ऋषी॑णाम्। प॒स्पृ॒ध्रे॒। इन्द्रे॑। अधि॑। उ॒क्थ॒ऽअ॒र्का॥ १॥

पदार्थः-(**सम्**) सम्यक् (**च**) (**त्वे**) केचित् (**जग्मुः**) गच्छन्ति (**गिरः**) सुशिक्षितवाचः (**इन्द्र**) विद्याप्रद (**पूर्वीः**) प्राचीनाः सनातनीः (**वि**) (**च**) (**त्वत्**) तव सकाशात् (**यन्ति**) प्राप्नुवन्ति (**विभ्वः**) विभवो व्याप्तशुभगुणाः (**मनीषाः**) मनस ईषिणो गमनकर्त्तारः (**पुरा**) (**नूनम्**) निश्चयेन (**च**) (**स्तुतयः**) प्रशंसाः (**ऋषीणाम्**) वेदमन्त्रार्थविदां यथार्थमुपदेष्टॄणाम् (**पस्पृध्रे**) स्पर्द्धन्ते (**इन्द्रे**) परमैश्वर्ये (**अधि**) (**उक्थार्का**) उक्थानि प्रशंसितानि वचनान्यर्काणि पूजनीयानि च॥ १॥

अन्वयः-हे इन्द्र! ये त्वे त्वत् पूर्वीर्गिरश्च यन्ति शुभैश्च गुणैः सं जग्मुर्विभ्वो मनीषाः सन्तः परस्परं वि यन्ति। ऋषीणां पुरा स्तुतयश्च नूनं पस्पृध्रे, इन्द्र उक्थार्काऽधि पस्पृध्रे ते सुखमाप्नुवन्ति॥ १॥

भावार्थः-हे राजन्नस्मिन्त्संसारे केचिद्योग्याः केचिदनर्हा जना भवन्ति तेषां मध्यात् प्रशंसनीयैः सज्जनैस्सह सन्धिं कृत्वा सुसहायः सन् धर्म्मेण राज्यपालनं सततं विधेहि॥ १॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) विद्या के देने वाले जो (**त्वे**) कोई (**त्वत्**) आपके समीप से (**पूर्वीः**) प्राचीन (**गिरः**) उत्तम प्रकार शिक्षित वाणियों को (**च**) भी (**यन्ति**) प्राप्त होते हैं (**च**) और श्रेष्ठ गुणों से (**सम्**) उत्तम प्रकार (**जग्मुः**) मिलते हैं तथा (**विभ्वः**) श्रेष्ठ गुणों से व्याप्त (**मनीषाः**) गमन करने वाले हुए परस्पर (**वि**) विशेष करके प्राप्त होते हैं और (**ऋषीणाम्**) वेद के मन्त्रों के अर्थ जानने वालों और यथार्थ उपदेश करने वालों के (**पुरा**) आगे (**स्तुतयः, च**) प्रशंसाओं की भी (**नूनम्**) निश्चय से (**पस्पृध्रे**) स्पर्द्धा करते हैं और (**इन्द्रे**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य देने वाले के लिये (**उक्थार्का**) प्रशंसित और आदर करने योग्य वचनों की (**अधि**) अधिक स्पर्धा करते हैं, वे सुख को प्राप्त होते हैं॥ १॥

भावार्थः-हे राजन्! इस संसार में कोई योग्य, कोई अयोग्य जन होते हैं, उनमें प्रशंसा करने योग्य सज्जनों के साथ मेल करके उत्तम सहाय वाले हुए धर्म्म से राज्यपालन निरन्तर करिये॥ १॥

पुनः स राजा कीदृशो भवेदित्याह॥

फिर वह राजा कैसा होवे, इस विषय को कहते हैं॥

पुरुहूतो यः पुरुगूर्त ऋभ्वाँ एकः पुरुप्रशस्तो अस्ति यज्ञैः।

रथो न महे शवसे युजानो३ऽस्माभिरिन्द्रो अनुमाद्यो भूत्॥२॥

पुरुऽहूतः। यः। पुरुऽगूर्तः। ऋभ्वा। एकः। पुरुऽप्रशस्तः। अस्ति। यज्ञैः। रथः। न। महे। शवसे। युजानः। अस्माभिः। इन्द्रः। अनुमाद्यः। भूत्॥२॥

पदार्थः-(**पुरुहूतः**) बहुभिः सत्कृतः (**यः**) (**पुरुगूर्त्तः**) बहुभिरुद्यमितः कृतपुरुषार्थकः (**ऋभ्वा**) महता मेधाविना (**एकः**) असहायः (**पुरुप्रशस्तः**) बहुषूत्तमः (**अस्ति**) (**यज्ञैः**) विद्वत्सत्कारसङ्गदानैः (**रथः**) विमानादियानम् (**न**) इव (**महे**) महते (**शवसे**) बलाय (**युजानः**) (**अस्माभिः**) (**इन्द्रः**) परमैश्वर्यदाता (**अनुमाद्यः**) अनुहर्षितुं योग्यः (**भूत्**) भवेत्॥२॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यः पुरुहूतः पुरुगूर्त्तः पुरुप्रशस्त एको रथो न महे शवसे यज्ञैर्ऋभ्वा युजान इन्द्रोऽस्माभिस्सहाऽनुमाद्यो भूत् सोऽस्माकं हर्षकोऽस्ति तं राजानं यूयमपि मन्यध्वम्॥२॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथाश्वैरग्न्यादिभिश्च युक्तो रथोऽभीष्टानि कार्याणि करोति, तथैव सुसहायो राजा राज्यकार्याण्यलङ्कर्त्तुं शक्नोति॥२॥

पदार्थः-हे विद्वज्जनो! (**यः**) जो (**पुरुहूतः**) बहुतों से सत्कार किया गया (**पुरुगूर्त्तः**) बहुतों से उत्तम कराया गया (**पुरुप्रशस्तः**) बहुतों में उत्तम (**एकः**) सहायरहित (**रथः**) विमान आदि वाहन (**न**) जैसे वैसे (**महे**) बड़े (**शवसे**) बल के लिये (**यज्ञैः**) विद्वानों के सत्कार और सङ्ग तथा दोनों से और (**ऋभ्वा**) बड़े बुद्धिमान् से (**युजानः**) युक्त हुआ (**इन्द्रः**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य का देने वाला (**अस्माभिः**) हम लोगों के साथ (**अनुमाद्यः**) पीछे से प्रसन्न होने योग्य (**भूत्**) होवे, वह हम लोगों का आनन्दकारक (**अस्ति**) है, उस राजा को आप लोग भी मानिये॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे घोड़ों और अग्नि आदिकों से युक्त रथ अभीष्ट कार्य्यों को करता है, वैसे ही उत्तम सहायों के सहित राजा राज्य के कार्य्यों को पूर्ण करने को समर्थ होता है॥२॥

पुनः स राजा कीदृशो भवतीत्याह॥

फिर वह राजा कैसा होता है, इस विषय को कहते हैं॥

न यं हिंसन्ति धीतयो न वाणीरिन्द्रं नक्षन्तीदभि वर्धयन्तीः।

यदि स्तोतारः शतं यत्सहस्रं गृणन्ति गिर्वणसं शं तदस्मै॥३॥

न। यम्। हिंसन्ति। धीतयः। न। वाणीः। इन्द्रम्। नक्षन्ति। इत्। अभि। वर्धयन्तीः। यदि। स्तोतारः। शतम्। यत्। सहस्रम्। गृणन्ति। गिर्वणसम्। शम्। तत्। अस्मै॥३॥

पदार्थः-(**न**) निषेधे (**यम्**) (**हिंसन्ति**) (**धीतयः**) अङ्गुलयः (**न**) (**वाणीः**) (**इन्द्रम्**) पूर्णविद्यं परमैश्वर्य्यं राजानम् (**नक्षन्ति**) गच्छन्ति प्राप्नुवन्ति। **नक्षतीति गतिकर्मा**। (निघं०२.१४) (**इत्**) एव (**अभि**) (**वर्धयन्तीः**) उन्नयन्त्यः (**यदि**) (**स्तोतारः**) (**शतम्**) (**यत्**) (**सहस्रम्**) असंख्यम् (**गृणन्ति**) स्तुवन्ति (**गिर्वणम्**) यो गीर्भिर्वनति संभजति वनुते याचते वा तम् (**शम्**) सुखम् (**तत्**) (**अस्मै**) स्तोत्रे॥३॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यमिन्द्रमिद् धीतयो न हिंसन्ति यमिन्द्रं वाणीर्न हिंसन्ति यमिन्द्रं वर्धयन्तीर्धीतयो वाणीश्चाभि नक्षन्ति यदि तं गिर्वणसमिन्द्रं स्तोतारो गृणन्ति तर्हि यदस्मै शतं सहस्रं शं प्राप्नोति तदस्मानपि प्राप्नोतु॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यं शत्रुकृता विरुद्धाः क्रिया निन्दिता वाचश्च न व्यथयन्ति तं हर्षशोकरहितं राजानमतुलं सुखं प्राप्नोति॥३॥

पदार्थः-हे विद्वानो! (**यम्**) जिस (**इन्द्रम्**) पूर्ण विद्या वाले और अत्यन्त ऐश्वर्य्य वाले राजा को (**इत्**) ही (**धीतयः**) अङ्गुलियाँ (**न**) नहीं (**हिंसन्ति**) नष्ट करती हैं और जिस पूर्णविद्या और अत्यन्त ऐश्वर्य्य वाले राजा को (**वाणीः**) वाणियाँ (**न**) नहीं नष्ट करती हैं और जिस पूर्ण विद्यावाले और अत्यन्त ऐश्वर्य्ययुक्त राजा को (**वर्धयन्तीः**) बढ़ाती हुई अङ्गुलियाँ और वाणियाँ (**अभि, नक्षन्ति**) प्राप्त होती हैं और (**यदि**) जो उस (**गिर्वणसम्**) वाणियों से सेवा करने और मांगने वाले पूर्ण विद्या और अत्यन्त ऐश्वर्य्ययुक्त राजा की (**स्तोतारः**) स्तुति करने वाले जन (**गृणन्ति**) स्तुति करते हैं तो (**यत्**) जो (**अस्मै**) इस स्तुति करने वाले के लिये (**शतम्**) सैकड़ों और (**सहस्रम्**) असंख्य प्रकार का (**शम्**) सुख प्राप्त होता है (**तत्**) वह हम लोगों को भी प्राप्त हो॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिसको शत्रु से की हुई विरुद्ध क्रियायें और निन्दित वाणियाँ नहीं पीड़ित करती हैं, उस हर्ष और शोक से सहित राजा को अतुल सुख प्राप्त होता है॥३॥

पुनः स राजा किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

अस्मा एतद्दिव्य१र्चेव मासा मिमिक्ष इन्द्रे न्ययामि सोमः।

जनं न धन्वन्नभि सं यदापः सत्रा वावृधुर्हवनानि यज्ञैः॥४॥

अस्मै। एतत्। दिवि। अर्चाऽइव। मासा। मिमिक्षः। इन्द्रे। नि। अयामि। सोमः। जनम्। न। धन्वन्। अभि। सम्। यत्। आपः। सत्रा। ववृधुः। हवनानि। यज्ञैः॥४॥

पदार्थः-(**अस्मै**) (**एतत्**) (**दिवि**) कमनीये शुद्धे व्यवहारे (**अर्चेव**) सत्क्रियेव (**मासा**) चैत्राद्याः (**मिमिक्षः**) संसिञ्च (**इन्द्रे**) दुष्टविदारके राजनि (**नि**) नितराम् (**अयामि**) प्राप्नोमि (**सोमः**) यः सुनोति सः (**जनम्**) (**न**) इव (**धन्वन्**) बालुकायुक्ते स्थले (**अभि**) (**सम्**) (**यत्**) यानि (**आपः**) जलानि (**सत्रा**) सत्येन कारणेन (**वावृधुः**) वर्धन्ते। अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम्। (**हवनानि**) दानादीनि कर्माणि (**यज्ञैः**) विद्वत्सत्क्रियाभिः॥४॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यस्मिन् दिवीन्द्रे मासा वावृधुर्यज्ञैरर्चेव सत्रा यद्धवनानि वावृधुर्धन्वन्नापो जनं न समभि वावृधुरेतदस्मै सोमोऽहं यथा न्ययामि तथा त्वमेनं मिमिक्षः॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा सत्कर्त्तव्यस्य सत्कारो निर्जलदेशे भवस्योदकप्राप्तिः सुखकारिणी भवति तथैव यज्ञानुष्ठानं दिव्यमैश्वर्यं च सर्वेषामानन्दकरे भवतः॥४॥

पदार्थः-हे विद्वन्! जिस **(दिवि)** सुन्दर शुद्ध व्यवहार में **(इन्द्रे)** दुष्टों के नाश करने वाले राजा के होने पर **(मासा)** चैत्र आदि महीने **(वावृधुः)** बढ़ते हैं और **(यज्ञैः)** विद्वानों के सत्कारों से **(अर्चेव)** सत्क्रिया के समान **(सत्रा)** सत्य कारण से **(यत्)** जो **(हवनानि)** दान आदि कर्म बढ़ते हैं तथा **(धन्वन्)** बालुका से युक्त स्थान में **(आपः)** जल **(जनम्)** मनुष्य को **(न)** जैसे वैसे **(सम्, अभि)** उत्तम प्रकार चारों ओर से बढ़ते हैं **(एतत्)** यह **(अस्मै)** इसके लिये **(सोमः)** उत्पन्न करने वाला मैं जैसे **(नि, अयामि)** निरन्तर प्राप्त होता हूँ, वैसे आप इसको **(मिमिक्षः)** सींचिये॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे सत्कार करने योग्य का सत्कार और निर्जल स्थान में हुए को जल का मिलना सुखकारक होता है, वैसे ही यज्ञ का अनुष्ठान और श्रेष्ठ ऐश्वर्य्य सब के आनन्दकारक होते हैं॥४॥

पुनर्विद्वद्भिः कथं वर्त्तितव्यमित्याह॥

फिर विद्वानों को कैसा वर्त्ताव करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

अस्मा॑ ए॒तन्मह्या॑ङ्गू॒षम॑स्मा॒ इन्द्रा॑य स्तो॒त्रं म॒तिभि॑रवाचि।

अस॒द्यथा॑ मह॒ति वृ॑त्र॒तूर्ये॒ इन्द्रो॑ वि॒श्वायु॑रवि॒ता वृ॒धश्च॑॥५॥६॥

अस्मै॑। ए॒तत्। महि॑। आ॒ङ्गू॒षम्। अ॒स्मै॒। इन्द्रा॑य। स्तो॒त्रम्। म॒तिऽभिः॑। अ॒वा॒चि॒। अस॑त्। यथा॑। म॒ह॒ति। वृ॒त्र॒ऽतूर्ये॑। इन्द्रः॑। वि॒श्वऽआ॑युः। अ॒वि॒ता। वृ॒धः। च॒॥५॥

पदार्थः-**(अस्मै)** **(एतत्)** **(महि)** महत् **(आङ्गूषम्)** प्राप्तव्यम् **(अस्मै)** **(इन्द्राय)** ऐश्वर्यकराय राज्ञे **(स्तोत्रम्)** स्तुवन्ति येन तत् **(मतिभिः)** मननशीलैर्मनुष्यैः **(अवाचि)** उच्यते **(असत्)** भवेत् **(यथा)** **(महति)** **(वृत्रतूर्ये)** स-ग्रामे **(इन्द्रः)** शत्रूणां विदारको योद्धा **(विश्वायुः)** पूर्णायुः **(अविता)** रक्षकः **(वृधः)** वर्धकः **(च)**॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा मतिभिरस्मा उपदेशकायैतन्मह्याङ्गूषं स्तोत्रमवाचि यथाऽस्मा इन्द्रायैतन्मह्याङ्गूषं स्तोत्रमवाचि यथेन्द्रो महति वृत्रतूर्ये वृधोऽविता विश्वायुश्चासत्तथा युष्माभिरप्यनुष्ठेयम्॥५॥

भावार्थः-ये विद्वांसः स्युस्ते विद्वदनुकरणेन स्वकीयवर्त्तमानमुत्तमं कुर्य्युरिति॥५॥

अत्रेन्द्रराजप्रजागुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति चतुस्त्रिंशत्तमं सूक्तं षष्ठो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः–हे मनुष्यो! **(यथा)** जैसे **(मतिभिः)** विचारशील मनुष्यों से **(अस्मै)** इस उपदेशक के लिये **(एतत्)** यह **(महि)** बड़ा **(आङ्गूषम्)** प्राप्त होने योग्य **(स्तोत्रम्)** स्तोत्र **(अवाचि)** कहा जाता है और जैसे **(अस्मै)** इस **(इन्द्राय)** ऐश्वर्य्य के करने वाले राजा के लिये यह बड़ा प्राप्त होने योग्य स्तोत्र कहा जाता है और जैसे **(इन्द्रः)** शत्रुओं का नाश करने वाला योद्धा **(महति)** बड़े **(वृत्रतूर्ये)** स– ाम में **(वृधः)** बढ़ाने और **(अविता)** रक्षा करने वाला **(विश्वायुः च)** और पूर्ण अवस्थायुक्त **(असत्)** होवे, वैसे आप लोगों को भी करना चाहिये॥५॥

भावार्थः-जो अविद्वान् हों, वे विद्वानों के अनुकरण से अपना वर्त्ताव उत्तम करें॥५॥

इस सूक्त में इन्द्र, राजा और प्रजा के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह चौंतीसवाँ सूक्त और छठा वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ पञ्चर्चस्य पञ्चत्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य नर ऋषिः। इन्द्रो देवता। १ विराट् त्रिष्टुप्। ३ निचृत्त्रिष्टुप्। ४, ५ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतःस्वरः। २ पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ राजानं प्रति कथमुपदिशेयुरित्याह॥

अब पाँच ऋचावाले पैंतीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में राजा के प्रति कैसा उपदेश करें, इस विषय को कहते हैं॥

कुदा भुवुन् रथुक्षयाणि ब्रह्म कुदा स्तोत्रे सहस्रपोष्यं दाः।

कुदा स्तोमं वासयोऽस्य राया कुदा धियः करसि वाजरत्नाः॥ १॥

कुदा। भुवुन्। रथुऽक्षयाणि। ब्रह्म। कुदा। स्तोत्रे। सहुस्रुऽपोष्यम्। दाः। कुदा। स्तोमम्। वासुयः। अस्य। राया। कुदा। धियः। कुरुसि। वाजऽरत्नाः॥ १॥

पदार्थः-(**कदा**) (**भुवन्**) भवन्ति (**रथक्षयाणि**) रथस्य निवासरूपाणि गृहाणि (**ब्रह्म**) धनम् (**कदा**) (**स्तोत्रे**) प्रशंसासाधने (**सहस्रपोष्यम्**) असङ्ख्यैः पोषणीयम् (**दाः**) दद्याः (**कदा**) (**स्तोमम्**) प्रशंसाम् (**वासयः**) वासयेः (**अस्य**) (**राया**) धनेन (**कदा**) (**धियः**) प्रज्ञा उत्तमानि कर्माणि वा (**करसि**) कुर्याः (**वाजरत्नाः**) धनधान्योन्नतिकरीः॥ १॥

अन्वयः-हे राजँस्त्वं कदा रथक्षयाणि भुवन् कदा स्तोत्रे सहस्रपोष्यं ब्रह्म दाः। कदास्य राया स्तोमं वासयः कदा वाजरत्ना धियः करसि॥ १॥

भावार्थः-सर्वे सभ्या विद्वांस उपदेशकाश्च राजानं प्रत्येवं ब्रूयुर्भवान् कदा सेनाङ्गानि पुष्टिकरमैश्वर्य्यमुत्तमाः प्रज्ञाश्च करिष्यतीति॥ १॥

पदार्थः-हे राजन्! आपके (**कदा**) कब (**रथक्षयाणि**) वाहन के रहने के स्थान (**भुवन्**) होते हैं और (**कदा**) कब (**स्तोत्रे**) प्रशंसा के साधन में (**सहस्रपोष्यम्**) असङ्ख्य जनों के पुष्ट करने योग्य (**ब्रह्म**) धन को (**दाः**) दीजिये और (**कदा**) कब (**अस्य**) इसके (**राया**) धन से (**स्तोमम्**) प्रशंसा को (**वासयः**) बसाइये और आप (**कदा**) कब (**वाजरत्नाः**) धन और धान्य की बढ़ाने वाली (**धियः**) उत्तम बुद्धियों वा उत्तम कर्म्मों को (**करसि**) करें॥ १॥

भावार्थः-सब सभा में बैठने वाले, विद्वान् जन और उपदेशक जन राजा से यह कहें कि आप कब सेना के अङ्गों और पुष्टि करने वाले ऐश्वर्य्य और उत्तम बुद्धियों को करेंगे॥ १॥

पुनः स राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

कर्हि स्वित्तदिन्द्र यन्नृभिर्नॄन् वीरैर्वीरान्नीळयासे जयाजीन्।

त्रिधातु गा अधि जयासि गोष्विन्द्र द्युम्नं स्वर्वद्धेह्यस्मे॥ २॥

कर्हि। स्वित्। तत्। इन्द्र। यत्। नृऽभिः। नॄन्। वीरैः। वीरान्। नीळयासे। जय। आजीन्। त्रिऽधातु। गाः। अधि। जयासि। गोषु। इन्द्र। द्युम्नम्। स्वः॑ऽवत्। धेहि। अस्मे इति॥ २॥

पदार्थः-(**कर्हि**) कस्मिन् समये (**स्वित्**) प्रश्ने (**तत्**) (**इन्द्र**) सेनाधारक (**यत्**) (**नृभिः**) उत्तमैर्नरैः (**नॄन्**) प्रशस्तान्नरान् (**वीरैः**) शौर्यबलादियुक्तैः (**वीरान्**) धृष्टत्वादिगुणयुक्तान् (**नीळयासे**) प्रशंसय (**जय**) (**आजीन्**) स- ग्रमान् (**त्रिधातु**) सुवर्णरजतताम्राणि त्रयो धातवो विद्यन्ते यस्मिंस्तत् (**गाः**) पृथिवीः (**अधि**) (**जयासि**) जय (**गोषु**) पृथिवीषु (**इन्द्र**) प्रतापिन् सेनेश (**द्युम्नम्**) धनं यशो वा (**स्वर्वत्**) बहुसुखयुक्तम् (**धेहि**) (**अस्मे**) अस्मासु॥ २॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं कर्हि स्विद्वीरैर्नृभिर्वीरान्नॄन् नीळयासे गाः कर्ह्यधि जयासि। हे इन्द्र! त्वं गोष्वस्मे यत्स्वर्वत् त्रिधातु द्युम्नमस्ति तदस्मे धेहि एवं विधाऽऽजीन् जय॥ २॥

भावार्थः-हे राजँस्त्वं विद्वद्भिः सह विदुषः शूरैः सह शूरान् सङ्गृह्य स- ग्रमान् जित्वा पृथिवीराज्यं प्राप्य न्यायाचरणेन प्रजाः पालयित्वा महद्यशो धनं च वर्धय॥ २॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) सेना के धारण करने वाले! आप (**कर्हि**) किस समय में (**स्वित्**) कहिये (**वीरैः**) शूरता और बल आदि से युक्त (**नृभिः**) उत्तम मनुष्यों से (**वीरान्**) धृष्टता आदि गुणों से युक्त (**नॄन्**) श्रेष्ठ मनुष्यों को (**नीळयासे**) प्रशंसा कीजिये और (**गाः**) पृथिवियों को कब (**अधि**) (**जयासि**) जीतिये और हे (**इन्द्र**) प्रतापी तथा सेना के धारण करने वाले! आप (**गोषु**) पृथिवियों में और (**अस्मे**) हम लोगों में (**यत्**) जो (**स्वर्वत्**) बहुत सुख से युक्त (**त्रिधातु**) सोना, चाँदी और ताँबा ये तीन धातु जिसमें ऐसा (**द्युम्नम्**) धन वा यश है (**तत्**) उसको हम लोगों में (**धेहि**) धारण करिये सो ऐसा करके (**आजीन्**) स- ग्रमों को (**जय**) जीतिये॥ २॥

भावार्थः-हे राजन्! आप विद्वानों के साथ विद्वानों का तथा शूरवीर जनों के साथ शूरवीरों का अच्छे प्रकार ग्रहण करके तथा स- ग्रमों को जीत कर और पृथिवी के राज्य को प्राप्त कर न्यायाचरण से प्रजाओं का पालन करके बड़े यश वा धन को बढ़ाइये॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

कर्हि स्वित्तदिन्द्र यज्जरित्रे विश्वप्सु ब्रह्म कृणवः शविष्ठ।
कदा धियो न नियुतो युवासे कदा गोमघा हवनानि गच्छाः॥ ३॥

कर्हि। स्वित्। तत्। इन्द्र। यत्। जरित्रे। विश्वऽप्सु। ब्रह्म। कृणवः। शविष्ठ। कदा। धियः। न। निऽयुतः। युवासे। कदा। गोऽमघा। हवनानि। गच्छाः॥ ३॥

पदार्थः-(**कर्हि**) कदा (**स्वित्**) प्रश्ने (**तत्**) (**इन्द्र**) विद्यैश्वर्ययुक्त राजन् (**यत्**) (**जरित्रे**) स्तावकाय (**विश्वप्सु**) विविधरूपम् (**ब्रह्म**) धनम् (**कृणवः**) कुर्याः (**शविष्ठ**) अतिशयेन बलिन् (**कदा**) (**धियः**) प्रज्ञाः (**न**) इव (**नियुतः**) नितरां शुभगुणयुक्तः (**युवासे**) मिश्रय (**कदा**) (**गोमघा**) पृथिवीराज्येन सत्कृतानि धनानि (**हवनानि**) ग्रहीतव्यानि (**गच्छाः**) प्राप्नुयाः॥३॥

अन्वयः-हे शविष्ठेन्द्र! त्वं कर्हि स्विज्जरित्रे यद्विश्वप्सु ब्रह्म कृणवस्तदस्मै वयमपि कुर्याम नियुतो न धियः कदा युवासे गोमघा हवनानि कदा गच्छाः॥३॥

भावार्थः-हे राजँस्त्वमखिलं धनं पूर्णा धिय उत्तमाः क्रियाश्च कदा करिष्यस्यर्थात् सद्य एतानि कुर्विति॥३॥

पदार्थः-हे (**शविष्ठ**) अतिशय बली (**इन्द्र**) विद्या और ऐश्वर्य्य से युक्त राजन्! आप (**कर्हि**) कब (**स्वित्**) कहिये! (**जरित्रे**) स्तुति करने वाले के लिये (**यत्**) जो (**विश्वप्सु**) अनेक रूप (**ब्रह्म**) धन (**कृणवः**) करेंगे (**तत्**) उसको इसके लिये हम लोग भी करें तथा (**नियुतः**) अत्यन्त श्रेष्ठ गुणों से युक्त (**न**) जैसे वैसे (**धियः**) बुद्धियों को (**कदा**) कब (**युवासे**) मिलाइयेगा और (**गोमघा**) पृथिवी के राज्य से सत्कृत धनों तथा (**हवनानि**) ग्रहण करने योग्यों को (**कदा**) कब (**गच्छाः**) प्राप्त हूजियेगा॥३॥

भावार्थः-हे राजन्! आप सम्पूर्ण धन, पूर्ण बुद्धियों और उत्तम क्रियाओं को कब करियेगा? अर्थात् शीघ्र इनको करिये॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

स गोमघा जरित्रे अश्वश्चन्द्रा वाजश्रवसो अधि धेहि पृक्षः।

पीपिहीषः सुदुघामिन्द्र धेनुं भरद्वाजेषु सुरुचो रुरुच्याः॥४॥

सः। गोऽमघाः। जरित्रे। अश्वऽचन्द्राः। वाजऽश्रवसः। अधि। धेहि। पृक्षः। पीपिहि। इषः। सुऽदुघाम्। इन्द्र। धेनुम्। भरत्ऽवाजेषु। सुऽरुचः। रुरुच्याः॥४॥

पदार्थः-(**सः**) (**गोमघाः**) भूमिराज्यधनाः (**जरित्रे**) विद्यागुणप्रकाशकाय (**अश्वश्चन्द्राः**) अश्वाश्चन्द्राणि सुवर्णानि येषान्ते (**वाजश्रवसः**) वाजोऽन्नं विद्याश्रवणं च पूर्णं येषान्ते (**अधि**) (**धेहि**) (**पृक्षः**) सम्पर्चनीयाः (**पीपिहि**) पिब (**इषः**) प्राप्तव्यान् रसान् (**सुदुघाम्**) सुष्ठुकामपूर्णकर्त्रीम् (**इन्द्र**) विद्यैश्वर्यप्रद (**धेनुम्**) विद्याशिक्षायुक्तां वाचम् (**भरद्वाजेषु**) धृतविज्ञानेषु विद्वत्सु (**सुरुचः**) शोभना रुग् रुचिः प्रीतिर्येषां तान् (**रुरुच्याः**) रुचितान् कुर्य्याः॥४॥

अन्वयः-हे इन्द्र राजन्त्स त्वं जरित्रे ये गोमघा अश्वश्चन्द्रा वाजश्रवसः पृक्षस्तानस्मास्वधि धेहि। इषः पीपिहि भरद्वाजेषु सुदुघां धेनुं सुरुचश्च रुरुच्याः॥४॥

भावार्थः-हे राजन्! स्वप्रजासु पूर्णां विद्यामखिलं धनं धृत्वा शरीरारोग्यं वर्धयित्वा धर्म्मे रुचिं कुर्य्याः॥४॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** विद्या और ऐश्वर्य्य के देनेवाले राजन्! **(सः)** वह आप **(जरित्रे)** विद्या और गुण के प्रकाश करने वाले के लिये जो **(गोमघाः)** पृथिवी के राज्यरूप धन वाले **(अश्वश्चन्द्राः)** घोड़े हैं सुवर्ण जिनके वे **(वाजश्रवसः)** अन्न और विद्याश्रवण युक्त **(पृक्षः)** सम्बन्ध करने योग्य हैं उनको हम लोगों में **(अधि, धेहि)** धारण करिये और **(इषः)** प्राप्त होने योग्य रसों को **(पीपिहि)** पीजिये और **(भरद्वाजेषु)** धारण किया विज्ञान जिन्होंने उन विद्वानों में **(सुदुघाम्)** उत्तम प्रकार कामना पूर्ण करने वाली **(धेनुम्)** विद्या और शिक्षा से युक्त वाणी को **(सुरुचः)** तथा उत्तम प्रीति वालों को **(रुरुच्याः)** प्रीतियुक्त करिये॥४॥

भावार्थः-हे राजन्! अपनी प्रजाओं में पूर्ण विद्या और सम्पूर्ण धन को धारण कर और शरीर के आरोग्यपन को बढ़ा के धर्म्म में रुचि करिये॥४॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तमा नूनं वृजनमन्यथा चिच्छूरो यच्छक्र वि दुरो गृणीषे।
मा निररं शुक्रदुघस्य धेनोराङ्गिरसान् ब्रह्मणा विप्र जिन्व॥५॥७॥

तम्। आ। नूनम्। वृजनम्। अन्यथा। चित्। शूरः। यत्। शक्र। वि। दुरः। गृणीषे। मा। निः। अरम्। शुक्रऽदुघस्य। धेनोः। आङ्गिरसान्। ब्रह्मणा। विप्र। जिन्व॥५॥

पदार्थः-**(तम्)** **(आ)** **(नूनम्)** निश्चितम् **(वृजनम्)** व्रजन्ति येन यस्मिन् वा **(अन्यथा)** **(चित्)** अपि **(शूरः)** निर्भयः शत्रुहन्ता **(यत्)** **(शक्र)** शक्तिमन् **(वि)** **(दुरः)** द्वाराणि **(गृणीषे)** प्रशंससि **(मा)** **(निः)** नितराम् **(अरम्)** अलम् **(शुक्रदुघस्य)** आशुपूर्तिकर्त्र्याः **(धेनोः)** वाचः **(आङ्गिरसान्)** अङ्गिरःसु प्राणेषु साधून् **(ब्रह्मणा)** महता धनेनान्नेन वा **(विप्र)** मेधाविन् **(जिन्व)** प्रीणीहि॥५॥

अन्वयः-हे विप्रशक्रेन्द्र! यद् वृजनं नूनमाऽऽगृणीषे तच्चिन्निर्गृणीषे शूरस्त्वं दुरो जिन्व। शुक्रदुघस्य धेनोश्चाङ्गिरसान् ब्रह्मणाऽरं वि जिन्व। कदाचिदन्यथा मा कुर्याः॥५॥

भावार्थः-ये राजादयो जनाः प्रजाः सुखेनालङ्कृत्यान्यायादन्यथाचरणं न कुर्वन्ति ते समग्रैश्वर्येण युक्ता जायन्ते॥५॥

अत्रेन्द्रविद्वद्राजप्रजागुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति पञ्चत्रिंशत्तमं सूक्तं सप्तमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(विप्र)** बुद्धिमान् जन **(शक्र)** सामर्थ्य और अत्यन्त ऐश्वर्य से युक्तराजन् **(यत्)** जो **(वृजनम्)** चलते हैं जिससे वा जिसमें उनकी **(नूनम्)** निश्चित **(आ, गृणीषे)** प्रशंसा करते हो **(तम्)** उसकी **(चित्)** भी **(निः)** निरन्तर प्रशंसा करते हो और **(शूरः)** भयरहित और शत्रुओं के मारने वाले

आप **(दुरः)** द्वारों को **(जिन्व)** पुष्ट करिये तथा **(शुक्रदुघस्य)** शीघ्र पूर्ण करने वाली **(धेनोः)** वाणी के **(आङ्गिरसान्)** प्राणों में श्रेष्ठों को **(ब्रह्मणा)** बड़े धन वा अन्न से **(अरम्)** अच्छे प्रकार से **(वि)** प्रसन्न कीजिये और कभी **(अन्यथा)** अन्यथा **(मा)** न करिये॥५॥

भावार्थ:-जो राजा आदि जन प्रजाओं को सुख से शोभित कर अन्याय से अन्यथा आचरण नहीं करते, वे सम्पूर्ण ऐश्वर्य्य से युक्त होते हैं॥५॥

इस सूक्त में इन्द्र, विद्वान्, राजा और प्रजा के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह पैंतीसवां सूक्त और सातवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ पञ्चर्चस्य षट्त्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य नर ऋषिः। इन्द्रो देवता। १ निचृत्त्रिष्टुप्। धैवतः स्वरः। २, ५ भुरिक् पङ्क्तिः। ३, ४ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ राजा कीदृशो भूत्वा किं धरेदित्याह॥

अब पाँच ऋचावाले छत्तीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में राजा कैसा होकर क्या धारण करे, इस विषय को कहते हैं॥

सुत्रा मदासुस्तव विश्वजन्याः सुत्रा रायोऽध ये पार्थिवासः।

सुत्रा वाजानामभवो विभुक्ता यद्देवेषु धारयथा असुर्यम्॥१॥

सुत्रा। मदासः। तव। विश्वऽजन्याः। सुत्रा। रायः। अध। ये। पार्थिवासः। सुत्रा। वाजानाम्। अभवः। विऽभुक्ता। यत्। देवेषु। धारयथाः। असुर्यम्॥१॥

पदार्थः-(**सत्रा**) सत्याः (**मदासः**) आनन्दकाः (**तव**) (**विश्वजन्याः**) विश्वानि जन्यानि सुखानि येषु ते (**सत्रा**) सत्यानि (**रायः**) धनानि (**अध**) अथ (**ये**) (**पार्थिवासः**) पृथिव्यां विदिताः (**सत्रा**) सत्याः (**वाजानाम्**) अन्नादीनाम् (**अभवः**) भव (**विभक्ता**) विभागं प्राप्ताः (**यत्**) (**देवेषु**) विद्वत्सु (**धारयथाः**) (**असुर्यम्**) असुरेष्वविद्वत्सु भवम्॥१॥

अन्वयः-हे राजन्! तव ये विश्वजन्याः सत्रा मदासस्सत्रा रायस्सत्रा पार्थिवासो वाजानां सत्रा विभक्ता सन्ति तेषां त्वं धारकोऽभवोऽध यद्देवेष्वसुर्यमस्ति तद्धारयथाः॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्या! येऽत्र बुद्ध्यानन्दवर्धका विद्याधनादियोगाः विद्वत्सङ्गाः सन्ति तान् धृत्वा सत्याऽसत्योर्विभाजका भवन्तु॥१॥

पदार्थः-हे राजन्! (**तव**) आपके (**ये**) जो (**विश्वजन्याः**) सम्पूर्ण जन्य सुख जिनमें वे (**सत्रा**) सत्य (**मदासः**) आनन्द देने वाले और (**सत्रा**) सत्य (**रायः**) धन (**सत्रा**) सत्य (**पार्थिवासः**) पृथिवी में विदित और (**वाजानाम्**) अन्न आदिकों के सत्य (**विभक्ता**) विभागों को प्राप्त हुए हैं उनके आप धारण करने वाले (**अभवः**) हूजिये (**अध**) इसके अनन्तर (**यत्**) जो (**देवेषु**) विद्वानों में (**असुर्यम्**) अविद्वानों में हुआ है उसको (**धारयथाः**) धारण कराइये॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो इस संसार में बुद्धि और आनन्द के बढ़ानेवाले, विद्या और धनादि से युक्त और विद्वानों के साथ सत्सङ्ग करने वाले हैं, उनको धारण करके सत्य और असत्य के विभाग करने वाले हूजिये॥१॥

पुनर्मनुष्याः कथं वर्त्तेरन्नित्याह॥

फिर मनुष्य कैसा वर्त्ताव करें, इस विषय को कहते हैं॥

अनु प्र येजे जन ओजो अस्य सुत्रा दधिरे अनु वीर्याय।

स्यूमगृभे दुधयेऽर्वते च क्रतुं वृञ्जन्त्यपि वृत्रहत्ये॥२॥

अनु। प्र। येजे। जनः। ओजः। अस्य। सत्रा। दधिरे। अनु। वीर्याय। स्यूमऽगृभे। दुधये। अर्वते। च। क्रतुम्। वृञ्जन्ति। अपि। वृत्रऽहत्ये॥२॥

पदार्थः-(**अनु**) (**प्र**) (**येजे**) यजति (**जनः**) (**ओजः**) बलम् (**अस्य**) संसारस्य मध्ये (**सत्रा**) सत्यम् (**दधिरे**) दधति (**अनु**) (**वीर्याय**) पराक्रमाय (**स्यूमगृभे**) स्यूमाननुस्यूनान् गृह्णाति तस्मै (**दुधये**) हिंसकाय (**अर्वते**) प्राप्ताय (**च**) (**क्रतुम्**) प्रज्ञाम् (**वृञ्जन्ति**) त्यजन्ति। अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् (**अपि**) (**वृत्रहत्ये**) स- ामे॥२॥

अन्वयः-हे राजन्! यो जनो यथा शूरवीरा अस्य सत्रौजो दधिरे वृत्रहत्ये स्यूमगृभे वीर्याय क्रतुमनु दधिरे दुधयेऽर्वते च क्रतुमपि वृञ्जन्ति तथाऽनु प्र येजे तं तांश्च त्वं गृहाण हिंसकान् वर्जय॥२॥

भावार्थः-ये मनुष्या न्यायदयाभ्यां युक्तां प्रज्ञां धृत्वा धर्म्याणि कर्माणि कृत्वा दुष्टतां निवार्य युद्धे विजयं प्राप्य सत्सङ्गतिं कुर्वन्ति ते प्रत्यहं बुद्धिं वर्धयितुं शक्नुवन्ति॥२॥

पदार्थः-हे राजन्! जो (**जनः**) मनुष्य जैसे शूरवीर जन (**अस्य**) इस संसार के मध्य में (**सत्रा**) सत्य (**ओजः**) बल को (**दधिरे**) धारण करते हैं और (**वृत्रहत्ये**) स- ाम में (**स्यूमगृभे**) एक दूसरे को मिले हुए के ग्रहण करने वाले (**वीर्याय**) पराक्रम के लिये (**क्रतुम्**) बुद्धि को (**अनु**) पीछे धारण करते हैं (**च**) और (**दुधये**) मारने वाले (**अर्वते**) प्राप्त हुए के लिये बुद्धि का (**अपि**) भी (**वृञ्जन्ति**) त्याग करते हैं, वैसे (**अनु, प्र, येजे**) यज्ञ करता है, उसको और उनको आप ग्रहण करिये और हिंसकों को वर्जिये॥२॥

भावार्थः-जो मनुष्य न्याय और दया से युक्त बुद्धि को धारण कर, धर्म्मयुक्त कर्म्मों को कर, दुष्टता को दूर कर और युद्ध में विजय प्राप्त करके श्रेष्ठों की सङ्गति करते हैं, वे दिनरात्रि बुद्धि को बढ़ा सकते हैं॥२॥

पुनस्तमुत्तमं जनं किमाप्नोतीत्याह॥

फिर उस उत्तम मनुष्यों को क्या प्राप्त होता है, इस विषय को कहते हैं॥

तं सध्रीचीरूतयो वृष्ण्यानि पौंस्यानि नियुतः सश्चुरिन्द्रम्।

समुद्रं न सिन्धव उक्थशुष्मा उरुव्यचसं गिर आ विशन्ति॥३॥

तम्। सध्रीचीः। ऊतयः। वृष्ण्यानि। पौंस्यानि। निऽयुतः। सश्चुः। इन्द्रम्। समुद्रम्। न। सिन्धवः। उक्थऽशुष्माः। उरुऽव्यचसम्। गिरः। आ। विशन्ति॥३॥

पदार्थः-(**तम्**) (**सध्रीचीः**) याः सहाऽञ्चन्ति (**ऊतयः**) रक्षाद्याः क्रियाः (**वृष्ण्यानि**) दुष्टशक्तिनिरोधकानि (**पौंस्यानि**) वचनानि (**नियुतः**) वायोर्निश्चिता गतय इव क्रियाः (**सश्चुः**) प्राप्नुयुः। **सश्चतीति गतिकर्मा**। (निघं०२.१४) (**इन्द्रम्**) सत्यं धर्म्मं न्यायं यो दधाति तम् (**समुद्रम्**) (**न**) इव

(सिन्धवः) नद्यः **(उक्थशुष्माः)** उक्थान्युक्तानि शुष्माणि बलानि याभिस्ताः **(उरुव्यचसम्)** बहुषु सद्गुणेषु व्यापकम् **(गिरः)** वाचः **(आ) (विशन्ति)** समन्तात् प्राप्नुवन्ति॥३॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यमुरुव्यचसमिन्द्रमुक्थशुष्मा गिरः समुद्रं सिन्धवो नाऽऽविशन्ति तं सध्रीचीर्नियुत ऊतयो वृष्ण्यानि पौंस्यानि च सश्चुः॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा निम्नगाः सरितः सागरं सर्वतो गच्छन्ति तथैव धार्मिकं राजानं सर्वं बलं सर्वाः रक्षाः सुशिक्षिता वाचश्च प्राप्नुवन्ति॥३॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जिस **(उरुव्यचसम्)** बहुत श्रेष्ठ गुणों में व्यापक **(इन्द्रम्)** सत्य धर्म और न्याय के धारण करनेवाले को **(उक्थशुष्माः)** कहे बल जिनसे वे **(गिरः)** वाणियां **(समुद्रम्)** समुद्र को **(सिन्धवः)** नदियाँ **(न)** जैसे वैसे **(आ, विशन्ति)** सब प्रकार से प्राप्त होती हैं **(तम्)** उसको **(सध्रीचीः)** एक साथ गमन करने वाली **(नियुतः)** वायु की निश्चित गतियों के समान क्रिया और **(ऊतयः)** रक्षण आदि क्रियायें **(वृष्ण्यानि)** दुष्टों के सामर्थ्य को रोकने वाले **(पौंस्यानि)** वचन भी **(सश्चुः)** प्राप्त होवें॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे नीचे चलने वाली नदियाँ समुद्र को सब ओर से प्राप्त होती हैं, वैसे ही धार्मिक राजा को सम्पूर्ण बल, सब रक्षायें और उत्तम प्रकार शिक्षित वाणियाँ भी प्राप्त होती हैं॥३॥

पुना राजा कीदृशो भवेदित्याह॥

फिर राजा कैसा होवे, इस विषय को कहते हैं॥

स रा॒यस्खामुप॑ सृजा गृणा॒नः पु॑रुश्च॒न्द्रस्य॒ त्वमि॑न्द्र॒ वस्वः॑।

पति॑र्बभूथासमो जना॑ना॒मेको॒ विश्व॑स्य॒ भुव॑नस्य॒ राजा॑॥४॥

सः। रा॒यः। खाम्। उप॑। सृ॒ज॒। गृ॒णा॒नः। पु॒रु॒ऽच॒न्द्रस्य॑। त्वम्। इ॒न्द्र॒। वस्वः॑। पतिः॑। ब॒भू॒थ॒। असमः॑। जना॑नाम्। एकः॑। विश्व॑स्य। भुव॑नस्य। राजा॑॥४॥

पदार्थः-**(सः)** **(रायः)** श्रियः **(खाम्)**। **खेति नदीनाम।** (निघं०१.१३) **(उप)** **(सृजा)** निर्मिमीहि। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(गृणानः)** स्तुवन् **(पुरुश्चन्द्रस्य)** बहु चन्द्रं सुवर्णं यस्मिंस्तस्य **(त्वम्)** **(इन्द्र)** धनेश **(वस्वः)** धनस्य **(पतिः)** स्वामी **(बभूथ)** भव **(असमः)** नान्यः समः सदृशो यस्य **(जनानाम्)** धार्मिकाणां मनुष्याणाम् **(एकः)** असहायः **(विश्वस्य)** सम्पूर्णस्य **(भुवनस्य)** संसारस्य **(राजा)** प्रकाशमानः॥४॥

अन्वयः-हे इन्द्र राजन्! यथा विश्वस्य भुवनस्येश्वरोऽसमः स एको राजास्ति तथा त्वं जनानां पुरुश्चन्द्रस्य रायो वस्वः पतिर्बभूथ गृणानस्त्वं खामिव धनस्य कोशमुप सृजा॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजानो! यथेश्वरः पक्षपातं विहाय सर्वस्य न्यायेन पालकोऽस्ति तथैव भूत्वा यूयं धनस्वामिनो भवत॥४॥

पदार्थ:-हे **(इन्द्र)** धन के स्वामिन् राजन्! जैसे **(विश्वस्य)** सम्पूर्ण **(भुवनस्य)** संसार का स्वामी **(असम:)** जिसके समान और नहीं **(स:)** वह **(एक:)** सहायरहित **(राजा)** प्रकाशमान राजा है, वैसे आप **(जनानाम्)** धार्मिक मनुष्यों और **(पुरुश्चन्द्रस्य)** बहुत सुवर्ण जिसमें उसके **(राय:)** लक्ष्मी के **(वस्व:)** धन के **(पति:)** स्वामी **(बभूथ)** हूजिये और **(गृणान:)** स्तुति करते हुए **(त्वम्)** आप **(खाम्)** नदी के समान धन के कोश को **(उपसृजा)** बनाइये॥४॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजा लोगो! जैसे ईश्वर पक्षपात का त्याग करके सब का न्याय से पालन करने वाला है, वैसे ही होकर आप लोग धन के स्वामी हूजिये॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

स तु श्रुधि श्रुत्या यो दुवोयुर्द्यौर्न भूमाभि रायो अर्यः।
असो यथा नः शवसा चकानो युगेयुगे वयसा चेकितानः॥५॥८॥

सः। तु। श्रुधि। श्रुत्या। यः। दुवःऽयुः। द्यौः। न। भूम। अभि। रायः। अर्यः। असः। यथा। नः। शवसा। चकानः। युगेऽयुगे। वयसा। चेकितानः॥५॥

पदार्थ:-**(स:)** **(तु)** **(श्रुधि)** शृणु **(श्रुत्या)** श्रवणेन **(य:)** **(दुवोयु:)** परिचरणं कामयमान: **(द्यौ:)** प्रकाश: **(न)** इव **(भूम)** भवेम **(अभि)** **(राय:)** धनानि **(अर्य:)** स्वामी **(अस:)** भवेत् **(यथा)** **(न:)** अस्माकम् **(शवसा)** बलेन **(चकान:)** कामयमान: **(युगेयुगे)** प्रतिवर्षम् **(वयसा)** आयुषा **(चेकितान:)** विजानन्॥५॥

अन्वय:-हे इन्द्र! यो द्यौर्न दुवोयुरर्य: शवसा चकानो युगेयुगे वयसा चेकितान: श्रुत्या यथा न: समाचारं शृणोति यथा सोऽसो राय: प्राप्ता वयं द्यौर्न भूम तथा तु त्वं सर्वेषां वार्तामभि श्रुधि॥५॥

भावार्थ:-अत्रोपमालङ्कार:। यथा परीक्षको विद्यार्थिनामध्ययनपरीक्षां कृत्वा विदुष: सम्पादयति तथैव राजा यथार्थं न्यायं कृत्वा प्रजा रञ्जयेदिति॥५॥

अत्रेन्द्रविद्वद्राजकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति षट्त्रिंशत्तमं सूक्तमष्टमो वर्गश्च समाप्त:॥

पदार्थ:-हे ऐश्वर्य से युक्त! **(य:)** जो **(द्यौ:)** प्रकाश **(न)** जैसे वैसे **(दुवोयु:)** सेवा की कामना करता हुआ **(अर्य:)** स्वामी **(शवसा)** बल से **(चकान:)** कामना करता हुआ **(युगेयुगे)** प्रतिवर्ष **(वयसा)** अवस्था में **(चेकितान:)** जानता हुआ **(श्रुत्या)** श्रवण से **(यथा)** जैसे **(न:)** हम लोगों के समाचार को सुनता है और जैसे **(स:)** वह **(अस:)** हो तथा **(राय:)** धनों को प्राप्त हुए हम लोग प्रकाश जैसे वैसे **(भूम)** होवें, वैसे **(तु)** तो आप सब की बात को **(अभि, श्रुधि)** सुनें॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे परीक्षक विद्यार्थियों के अध्ययन की परीक्षा करके विद्वान् करता है, वैसे ही राजा यथार्थ न्याय को करके प्रजाओं को प्रसन्न करे॥५॥

इस सूक्त में इन्द्र, विद्वान् और राजा के कृत्य का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह छत्तीसवाँ सूक्त आठवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ पञ्चर्चस्य सप्तत्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ४, ५ विराट्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २ निचृत्पङ्क्तिः। ३ भुरिक्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ मनुष्याः किं कुर्युरित्याह॥

अब पाँच ऋचावाले सैंतीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में मनुष्य क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

अर्वाग् रथं विश्ववारं त उग्रेन्द्र युक्तासो हरयो वहन्तु।
कीरिश्चिद्धि त्वा हवते स्वर्वानृधीमहि सधमादस्ते अद्य॥ १॥

अर्वाक्। रथम्। विश्वऽवारम्। ते। उग्र। इन्द्र। युक्तासः। हरयः। वहन्तु। कीरिः। चित्। हि। त्वा। हवते। स्वःऽवान्। ऋधीमहि। सधऽमादः। ते। अद्य॥ १॥

पदार्थः-(**अर्वाक्**) पश्चात् (**रथम्**) रमणीयं यानम् (**विश्ववारम्**) यो विश्वं सर्वं सुखं करोति तम् (**ते**) तव (**उग्र**) तेजस्विन् (**इन्द्र**) प्रजापते (**युक्तासः**) नियोजिताः (**हरयः**) अश्वा इव शिल्पिनो मनुष्याः (**वहन्तु**) प्रापयन्तु (**कीरिः**) स्तोता विद्वान् (**चित्**) अपि (**हि**) (**त्वा**) त्वाम् (**हवते**) आह्वयति (**स्वर्वान्**) स्वर्बहु सुखं विद्यते यस्य सः (**ऋधीमहि**) समृद्धा भवेम (**सधमादः**) समानस्थानाः (**ते**) तव (**अद्य**) अधुना॥ १॥

अन्वयः-हे उग्रेन्द्र! ये युक्तासो हरयस्ते विश्ववारं रथं वहन्तु यः स्वर्वान् कीरिर्हि त्वा हवते तैस्सधमादो वयं चिदृधीमहि। यस्य तेऽर्वागद्य ये सुखं वहन्ति ते चिदद्य सुखैर्भूषिता जायन्ते॥ १॥

भावार्थः-यो राजा धार्मिकाननुकूलान् जनान्सत्करोति तं सर्वे धर्मिष्ठा विद्वांसः सदा सेवन्ते॥ १॥

पदार्थः-हे (**उग्र**) तेजस्विन् (**इन्द्र**) प्रजा के स्वामिन्! जो (**युक्तासः**) नियुक्त किये गये (**हरयः**) घोड़ों के तुल्य शिल्पी मनुष्य (**ते**) आपके (**विश्ववारम्**) सम्पूर्ण सुख स्वीकार करने वाले (**रथम्**) सुन्दर वाहन को (**वहन्तु**) प्राप्त करावें और जो (**स्वर्वान्**) बहुत सुख विद्यमान जिसमें वह (**कीरिः**) स्तुति करने वाला विद्वान् (**हि**) ही (**त्वा**) आपको (**हवते**) पुकारता है उनके (**सधमादः**) तुल्य स्थान वाले हम लोग (**ऋधीमहि**) समृद्ध होवें। और जिन (**ते**) आपके (**अर्वाक्**) पीछे (**अद्य**) इस समय जो सुख को प्राप्त होते हैं, वे (**चित्**) भी इस समय सुखों से भूषित होते हैं॥ १॥

भावार्थः-जो राजा धार्मिक और अनुकूल मनुष्यों को सत्कार करता है, उसकी सब धर्मिष्ठ विद्वान् सदा सेवा करते हैं॥ १॥

पुनर्मनुष्याः परस्परं कथं वर्त्तेरन्नित्याह॥

फिर मनुष्य परस्पर कैसा वर्त्ताव करें, इस विषय को कहते हैं॥

प्रो द्रोणे हरयः कर्माग्मन् पुनानास ऋज्यन्तो अभूवन्।

इन्द्रो नो अस्य पूर्व्यः पपीयाद् द्युक्षो मदस्य सोम्यस्य राजा॥ २॥

प्रो इति। द्रोणे। हरयः। कर्म। अग्मन्। पुनानासः। ऋज्यन्तः। अभूवन्। इन्द्रः। नः। अस्य। पूर्व्यः। पपीयात्। द्युक्षः। मदस्य। सोम्यस्य। राजा॥ २॥

पदार्थः-(**प्रो**) प्रकर्षे (**द्रोणे**) परिमाणे (**हरयः**) मनुष्याः (**कर्म**) (**अग्मन्**) प्राप्नुवन्ति (**पुनानासः**) पवित्राः। (**ऋज्यन्तः**) ऋजुरिवाचरन्तः (**अभूवन्**) प्रसिद्धा भवन्ति (**इन्द्रः**) परमैश्वर्यः (**नः**) अस्माकम् (**अस्य**) (**पूर्व्यः**) पूर्वैर्निष्पादितः (**पपीयात्**) वर्धेत (**द्युक्षः**) द्यौरिव क्षा भूमिर्यस्य (**मदस्य**) आनन्दस्य (**सोम्यस्य**) सोम ऐश्वर्ये भवस्य (**राजा**) प्रकाशमानः॥ २॥

अन्वयः-य इन्द्रोऽस्य सोम्यस्य मदस्य द्युक्षः पपीयात् पूर्व्यो नो राजा भवेद्ये पुनानास ऋज्यन्तो हरयो द्रोणे कर्म प्रो अग्मन्नभूवँस्तेऽन्यानपि पवित्रयन्ति॥ २॥

भावार्थः-ये राजादयः सभ्याः स्वयं पवित्राः सुशीलाः सरला भूत्वा शुभानि कर्माणि कृत्वा न्यायेनाऽस्मान् रक्षन्ति तेऽस्माभिः सत्कर्त्तव्याः सन्ति॥ २॥

पदार्थः-जो (**इन्द्रः**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य वाला (**अस्य**) इस (**सोम्यस्य**) ऐश्वर्य्य में हुए (**मदस्य**) आनन्द का (**द्युक्षः**) अन्तरिक्ष के सदृश भूमि जिसकी वह (**पपीयात्**) बढ़े और (**पूर्व्यः**) पूर्वजनों से उत्पन्न किया गया (**नः**) हम लोगों का (**राजा**) प्रकाशमान राजा होवे और जो (**पुनानासः**) पवित्र (**ऋज्यन्तः**) सरल के सदृश आचरण करते हुए (**हरयः**) मनुष्य (**द्रोणे**) परिमाण में (**कर्म**) कर्म्म को (**प्रो**) अच्छे प्रकार (**अग्मन्**) प्राप्त होते हैं और (**अभूवन्**) प्रसिद्ध होते हैं, वे अन्यों को भी पवित्र करते हैं॥ २॥

भावार्थः-जो राजा आदि श्रेष्ठ जन स्वयं पवित्र और श्रेष्ठ स्वभाव वाले और सरल होकर श्रेष्ठ कर्म्मों को करके न्याय से हम लोगों की रक्षा करते हैं, वे हम लोगों से सत्कार करने योग्य हैं॥ २॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्या क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

आसस्राणासः शवसानमच्छेन्द्रं सुचक्रे रथ्यासो अश्वाः।

अभि श्रव ऋज्यन्तो वहेयुर्नू चिन्नु वायोरमृतं वि दस्येत्॥ ३॥

आऽसस्राणासः। शवसानम्। अच्छ। इन्द्रम्। सुऽचक्रे। रथ्यासः। अश्वाः। अभि। श्रवः। ऋज्यन्तः। वहेयुः। नु। चित्। नु। वायोः। अमृतम्। वि। दस्येत्॥ ३॥

पदार्थः-(**आसस्राणासः**) समन्ताद्गतिमन्तः (**शवसानम्**) बलवन्तम् (**अच्छ**) (**इन्द्रम्**) राजानम् (**सुचक्रे**) शोभनं करोति (**रथ्यासः**) रथेषु साधवः (**अश्वाः**) तुरङ्गाः (**अभि**) सर्वतः (**श्रवः**) ये शृण्वन्ति ते (**ऋज्यन्तः**) ऋजुरिवाचरन्तः (**वहेयुः**) प्राप्नुवन्तु (**नू**) सद्यः। अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। (**चित्**) अपि (**नु**) क्षिप्रम् (**वायोः**) पवनस्य (**अमृतस्य**) नाशरहितं स्वरूपम् (**वि**) (**दस्येत्**) उपक्षाययेत्॥ ३॥

अन्वयः-य आसस्राणासः रथ्यासोऽश्वा इवाऽभि श्रव ऋज्यन्तो विद्वांसः शवसानमिन्द्रन्नू वहेयुर्यश्चिदेतानच्छ सुचक्रे स वायोरमृतं प्राप्य दुःखानि नु वि दस्येत्॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे प्रजाजना! यथा राजा युष्मान् वर्धयेत्तथा यूयमप्येनं वर्धयत, सर्वे योगाभ्यासं कृत्वा प्राणस्थं परमात्मानं विदित्वा दुःखानि दहन्तु॥३॥

पदार्थः-जो **(आसस्राणासः)** चारों ओर से गमन करने वाले **(रथ्यासः)** वाहनों में श्रेष्ठ **(अश्वाः)** घोड़े जैसे वैसे **(अभि, श्रवः)** चारों ओर से सुनने वाले **(ऋज्यन्तः)** सरल के समान आचरण करते हुए विद्वान् जन **(शवसानम्)** बलयुक्त **(इन्द्रम्)** राजा को **(नू)** शीघ्र **(वहेयुः)** प्राप्त होवें और जो **(चित्)** भी इन को **(अच्छ)** अच्छे प्रकार **(सुचक्रे)** सुन्दर करता है वह **(वायोः)** पवन के **(अमृतम्)** नाशरहित स्वरूप को प्राप्त होकर दुखों की **(नु)** शीघ्र ही **(वि, दस्येत्)** उपेक्षा करे॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे प्रजाजनो! जैसे राजा आप लोगों की वृद्धि करे, वैसे आप लोग भी इसकी वृद्धि करिये और सब योगाभ्यास करके प्राणों में वर्त्तमान परमात्मा को जान कर दुःखों का नाश करो॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

वरिष्ठो अस्य दक्षिणामियर्तीन्द्रो मघोनां तुविकूर्मितमः।

यया वज्रिवः परियास्यंहो मघा च धृष्णो दयसे वि सूरीन्॥४॥

वरिष्ठः। अस्य। दक्षिणाम्। इयर्ति। इन्द्रः। मघोनाम्। तुविकूर्मिऽतमः। यया। वज्रिऽवः। परिऽयासि। अंहः। मघा। च। धृष्णो इति। दयसे। वि। सूरीन्॥४॥

पदार्थः-**(वरिष्ठः)** अतिशयेन वरिता **(अस्य)** राज्यस्य **(दक्षिणाम्)** वर्द्धिकाम् **(इयर्ति)** प्राप्नोति **(इन्द्रः)** राजा **(मघोनाम्)** बहुधनयुक्तानाम् **(तुविकूर्मितमः)** अतिशयेन बहुकर्त्ता **(यया)** दक्षिणया **(वज्रिवः)** प्रशस्तशस्त्राऽस्त्रयुक्त **(परियासि)** सर्वतः परित्यजसि **(अंहः)** अपराधम् **(मघा)** धनानि **(च)** **(धृष्णो)** दृढोत्साह **(दयसे)** ददासि **(वि)** **(सूरीन्)** विदुषः॥४॥

अन्वयः-हे वज्रिवो धृष्णो! यया त्वमंहः परियासि सूरीन् मघा च वि दयसे तामस्य मघोनां दक्षिणां तुविकूर्मितमो वरिष्ठ इन्द्रः सन् भवानियर्ति तस्मात् सत्कर्त्तव्योऽस्ति॥४॥

भावार्थः-स एव राजा स्थिरं राज्यं कर्त्तुमर्हति यो विदुषां धार्मिकाणां चोपरि दयां करोति दुर्व्यसनानि जहाति पुरुषार्थी भूत्वा चारचक्षुः सन् प्रजापालने यत्नवान् भवति॥४॥

पदार्थः-हे **(वज्रिवः)** प्रशंसित शस्त्र और अस्त्र से तथा **(धृष्णो)** दृढ़ उत्साह से युक्त! **(यया)** जिस दक्षिणा से आप **(अंहः)** अपराध का **(परियासि)** सब प्रकार से परित्याग करते हो **(सूरीन्)** विद्वानों **(मघा, च)** और धनों को **(वि)** विशेष करके **(दयसे)** देते हो उस **(अस्य)** इस राज्य के **(मघोनाम्)**

बहुत धनों से युक्तों की **(दक्षिणाम्)** बढ़ाने वाली दक्षिणा को **(तुविकूर्मितमः)** अत्यन्त बहुत करने और **(वरिष्ठः)** अत्यन्त स्वीकार करने वाले **(इन्द्रः)** राजा हुए आप **(इयर्त्ति)** प्राप्त होते हैं, इससे सत्कार करने योग्य हैं॥४॥

भावार्थः-वही राजा स्थिर राज्य करने योग्य है जो विद्वानों और धार्मिक जनों पर दया करता और दुष्ट व्यसनों का त्याग करता है तथा पुरुषार्थी होकर दूतरूप चक्षु वाला हुआ प्रजा के पालन में यत्न वाला होता है॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

इन्द्रो वाजस्य स्थविरस्य दातेन्द्रो गीर्भिर्वर्धतां वृद्धमहाः।
इन्द्रो वृत्रं हनिष्ठो अस्तु सत्वा ता सूरिः पृणति तूतुजानः॥५॥९॥

इन्द्रः। वाजस्य। स्थविरस्य। दाता। इन्द्रः। गीःऽभिः। वर्धताम्। वृद्धऽमहाः। इन्द्रः। वृत्रम्। हनिष्ठः। अस्तु। सत्वा। आ। ता। सूरिः। पृणति। तूतुजानः॥५॥

पदार्थः-(**इन्द्रः**) राजा (**वाजस्य**) अन्नादेः (**स्थविरस्य**) स्थूलस्य (**दाता**) (**इन्द्रः**) विद्यैश्वर्य्ययुक्तः (**गीर्भिः**) वाग्भिः (**वर्धताम्**) (**वृद्धमहाः**) वृद्धैः पूजितः (**इन्द्रः**) सूर्य्यः (**वृत्रम्**) मेघमिव (**हनिष्ठः**) अतिशयेन हन्ता (**अस्तु**) (**सत्वा**) सत्वगुणोपेतः (**आ**) (**ता**) तानि धनानि (**सूरिः**) विद्वान् (**पृणति**) सुखयति (**तूतुजानः**) सद्यः कर्त्ता॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! य इन्द्रः स्थविरस्य वाजस्य दाता य इन्द्रो गीर्भिर्वर्धतां वृद्धमहा इन्द्रो वृत्रमिव शत्रूणां हनिष्ठोऽस्तु यस्तूतुजानः सत्वा सूरिस्ताऽऽपृणति तं सर्वे यूयं सत्कुरुत॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्या! योऽभयस्य दाता विद्यावृद्धाप्तानां सेवको दुष्टानां हन्ता क्षिप्रकारी विद्वान् मनुष्यो भवेत्तमेव यूयं राजानं मन्यध्वमिति॥५॥

अत्रेन्द्रराजप्रजाकर्मवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति सप्तत्रिंशत्तमं सूक्तं नवमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**इन्द्रः**) विद्या और ऐश्वर्य्य से युक्त और (**स्थविरस्य**) स्थूल (**वाजस्य**) अन्न आदि का (**दाता**) देने वाला और जो (**इन्द्रः**) विद्या और ऐश्वर्य्य से युक्त राजा (**गीर्भिः**) वाणियों से (**वर्धताम्**) बढ़े और (**वृद्धमहाः**) वृद्धों से सत्कार किया (**इन्द्रः**) सूर्य्य (**वृत्रम्**) मेघ का जैसे वैसे शत्रुओं का (**हनिष्ठः**) अत्यन्त मारने वाला (**अस्तु**) हो और जो (**तूतुजानः**) शीघ्र करने वाला (**सत्वा**) सतोगुण से

युक्त **(सूरिः)** विद्वान् **(ता)** उन धनों को **(आ, पृणति)** अच्छे प्रकार सुखयुक्त करता है, उसका तुम सब लोग सत्कार करो॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो अभय का देने वाला, विद्या में वृद्धों और आप्तों का सेवक, दुष्टों का मारने वाला, शीघ्रकर्त्ता, विद्वान् मनुष्य हो उसी को तुम लोग राजा मानो॥५॥

इस सूक्त में इन्द्र, राजा और प्रजा के कर्म्मों का वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह सैंतीसवां सूक्त और नवां वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ पञ्चर्चस्याष्टत्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, २,३, ५ निचृत्त्रिष्टुप्। ४ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ मनुष्यैः कीदृशो विद्वान्त्सेवनीय इत्याह॥

अब पाँच ऋचावाले अड़तीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में मनुष्यों को कैसे विद्वान् की सेवा करनी चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

अपा॑दि॒त उदु॑ नश्चि॒त्रत॑मो म॒हीं भ॑र्षद् द्यु॒मती॒मिन्द्र॑हूतिम्।
पन्य॑सीं धी॒तिं दैव्य॑स्य॒ याम॒न् जन॑स्य रा॒तिं व॑नते सु॒दानुः॑॥ १॥

अपा॑त्। इ॒तः। उत्। ऊँ॒ इति॑। न॒ः। चि॒त्रऽत॑मः। म॒हीम्। भ॒र्ष॒त्। द्यु॒ऽमती॑म्। इन्द्र॑ऽहूतिम्। पन्य॑सीम्। धी॒तिम्। दैव्य॑स्य। याम॑न्। जन॑स्य। रा॒तिम्। व॒न॒ते। सु॒ऽदानुः॑॥ १॥

पदार्थः-(**अपात्**) अविद्यमानाः पादा यस्य सः (**इतः**) प्राप्तः (**उत्**) (उ) (**नः**) अस्माकम् (**चित्रतमः**) अतिशयेनाद्भुतगुणकर्मस्वभावः (**महीम्**) महतीं वाचम्। **महीति वाङ्नाम।** (निघं०१.११ (**भर्षत्**) बिभर्ति (**द्युमतीम्**) विद्याप्रकाशवतीम् (**इन्द्रहूतिम्**) परमैश्वर्यप्रकाशिकाम् (**पन्यसीम्**) प्रशंसनीयाम् (**धीतिम्**) धारणायुक्तां धियम् (**दैव्यस्य**) देवेषु दिव्यगुणेषु विद्वत्सु वा भवस्य (**यामन्**) यान्ति यस्मिन् मार्गे तस्मिन् (**जनस्य**) मनुष्यस्य (**रातिम्**) दानम् (**वनते**) सम्भजति (**सुदानुः**) शोभनदानः॥ १॥

अन्वयः-योऽपादितश्चित्रतमस्सुदानुर्नो द्युमतीमिन्द्रहूतिं पन्यसीं दैव्यस्य जनस्य धीतिं महीं यामन् रातिमुद्भर्षदु वनते स विद्वन्मङ्गलकारी भवति॥ १॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यस्याप्तस्य विदुषः सर्वेषामुपरि दया विद्यादानं निष्कपटता सुदृष्टिश्च वर्त्तते स एव सर्वैः सत्कर्त्तव्योऽस्ति॥ १॥

पदार्थः-जो (**अपात्**) पैरों से रहित (**इतः**) प्राप्त हुआ (**चित्रतमः**) अत्यन्त अद्भुत गुण, कर्म्म और स्वभाव वाला (**सुदानुः**) उत्तम दान वाला (**नः**) हम लोगों के लिये (**द्युमतीम्**) विद्या के प्रकाश वाली (**इन्द्रहूतिम्**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य की प्रकाशिका (**पन्यसीम्**) प्रशंसा करने योग्य (**दैव्यस्य**) श्रेष्ठ गुण अथवा विद्वानों में हुए (**जनस्य**) मनुष्य की (**धीतिम्**) धारणा से युक्त बुद्धि को और (**महीम्**) महती वाणी को तथा (**यामन्**) चलते हैं जिसमें उस मार्ग में (**रातिम्**) दान को (**उत्, भर्षत्**) धारण करता (**उ**) और (**वनते**) सेवन करता है, वह विद्वान् मङ्गल करने वाला होता है॥ १॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिस यथार्थवक्ता विद्वान् की सब के ऊपर दया, विद्यादान, निष्कपटता और उत्तम दृष्टि वर्त्तमान है, वही सब से सत्कार करने योग्य होता है॥ १॥

पुनर्मनुष्याः किं गृहीत्वा सेवेयुरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या ग्रहण करके सेवा करें, इस विषय को कहते हैं॥

दूराच्चिदा वसतो अस्य कर्णा घोषादिन्द्रस्य तन्यति ब्रुवाणः।
एयमेनं देवहूतिर्ववृत्यान्मद्र्य१गिन्द्रमियमृच्यमाना॥ २॥

दूरात्। चित्। आ। वसतः। अस्य। कर्णा। घोषात्। इन्द्रस्य। तन्यति। ब्रुवाणः। आ। इयम्। एनम्। देवऽहूतिः। ववृत्यात्। मद्र्यक्। इन्द्रम्। इयम्। ऋच्यमाना॥ २॥

पदार्थः-(**दूरात्**) (**चित्**) अपि (**आ**) समन्तात् (**वसतः**) निवसतः (**अस्य**) (**कर्णा**) श्रोत्रे (**घोषात्**) सुशिक्षिताया वाचः (**इन्द्रस्य**) राज्ञः (**तन्यति**) शब्दायते (**ब्रुवाणः**) उपदिशन् (**आ**) (**इयम्**) वाक् (**एनम्**) विद्वांसम् (**देवहूतिः**) देवैविद्वद्भिः प्रशंसिता (**ववृत्यात्**) वर्त्तयेत् (**मद्र्यक्**) मत्सदृशः (**इन्द्रम्**) परमैश्वर्यम् (**इयम्**) (**ऋच्यमाना**) स्तूयमाना॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यस्यास्येन्द्रस्य दूराच्चिद्वसतः कर्णा घोषाद्य आतन्यति या देवहूतिरियमेनमिन्द्रमाऽऽववृत्यादियमृच्यमाना यश्च मद्र्यग् ब्रुवाणस्तं ववृत्यात् तं तां च यूयं सेवध्वम्॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यस्यात्मा श्रोत्रद्वारा विद्यातृप्तो भवेद्यं सर्वा विद्यायुक्ता वाक् प्राप्नुयात् तमेव संसेव्य पूर्णां विद्यां प्राप्नुत॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जिस (**अस्य**) इस (**इन्द्रस्य**) राजा के (**दूरात्**) दूर से (**चित्**) भी (**वसतः**) निवास करते हुए के (**कर्णा**) दोनों कान (**घोषात्**) उत्तम प्रकार शिक्षित वाणी से जो (**आ, तन्यति**) अच्छे प्रकार शब्दित करता है और जो (**देवहूतिः**) विद्वानों से प्रशंसा की गई (**इयम्**) यह वाणी (**एनम्**) इस (**इन्द्रम्**) ऐश्वर्य्य से युक्त विद्वान् को (**आ**) चारों से (**ववृत्यात्**) वर्त्तित करे और (**इयम्**) यह (**ऋच्यमाना**) स्तुति की गई और जो (**मद्र्यक्**) मुझ सरीखा (**ब्रुवाणः**) उपदेश करता हुआ उसको वर्त्ते, उसकी और उसकी आप लोग सेवा करो॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिसका आत्मा श्रोत्रों के द्वारा विद्या से तृप्त होवे और जिसको सम्पूर्ण विद्या से युक्त वाणी प्राप्त होवे, उसी को उत्तम प्रकार सेवन करके पूर्ण विद्या को प्राप्त हूजिये॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

तं वो धिया परमया पुराजामजरमिन्द्रमभ्यनूष्यर्कैः।
ब्रह्मा च गिरो दधिरे समस्मिन् महांश्च स्तोमो अधि वर्धदिन्द्रे॥ ३॥

तम्। वः। धिया। परमया। पुराऽजाम्। अजरम्। इन्द्रम्। अभि। अनूषि। अर्कैः। ब्रह्म। च। गिरः। दधिरे। सम्। अस्मिन्। महान्। च। स्तोमः। अधि। वर्धत्। इन्द्रे॥ ३॥

पदार्थः-(**तम्**) (**वः**) युष्माकम् (**धिया**) प्रज्ञया कर्मणा वा (**परमया**) अत्युत्कृष्टयाऽत्युत्कृष्टेन वा (**पुराजाम्**) पूर्वजातम् (**अजरम्**) हानिरहितम् (**इन्द्रम्**) विद्युतम् (**अभि**) (**अनूषि**) स्तौमि (**अर्कैः**) सूर्यैः

(ब्रह्मा) वेदम् **(च)** **(गिरः)** वेदवाचः **(दधिरे)** दधति **(सम्)** **(अस्मिन्)** **(महान्)** **(च)** **(स्तोमः)** श्लाध्यगुणकर्मस्वभावः **(अधि)** **(वर्धत्)** वर्धते। अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् **(इन्द्रे)** परमैश्वर्ये॥३॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यथा यूयं ब्रह्मा वः परमया धिया तं पुराजामजरमिन्द्रञ्च प्रशंसत तथाऽर्कैरहमेनमभ्यनूषि। यथाऽस्मिन्निन्द्रे च महाँ स्तोमोऽधि वर्धद्यथा च भवन्तो विदुषां य गिरः सं दधिरे तथा वयमनुष्ठेयाम॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्या विद्वदुपदेशपुरुषार्थाभ्यां विद्युदादिविद्यायुक्तां प्रज्ञां स्वीकुर्वन्ति तेऽत्र श्लाघनीया भवन्ति॥३॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जैसे तुम **(ब्रह्मा)** वेद की और **(वः)** आप लोगों की **(परमया)** अत्यन्त उत्तम **(धिया)** बुद्धि वा कर्म से **(तम्)** उस **(पुराजाम्)** पहिले प्रकट हुए **(अजरम्)** जीर्ण होने से रहित **(इन्द्रम्)** बिजुली की भी प्रशंसा करो, वैसे **(अर्कैः)** सूर्यों से मैं इसकी **(अभि, अनूषि)** स्तुति करता हूँ और जैसे **(च)** भी **(अस्मिन्)** इस **(इन्द्रे)** अत्यन्त ऐश्वर्य्य में **(च)** भी **(महान्)** बड़ा **(स्तोमः)** प्रशंसा करने योग्य गुण कर्म्म, और स्वभाव वाला **(अधि, वर्धत्)** बढ़ता है और जैसे आप विद्वानों की **(गिरः)** वेदवाणियों को **(सम्)** **(दधिरे)** उत्तम प्रकार धारण करते हैं, वैसे हम लोग अनुष्ठान करें॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य विद्वानों के उपदेश और पुरुषार्थ से बिजुली आदि की विद्यायुक्त बुद्धि की स्वीकार करते हैं, वे यहाँ स्तुति करने योग्य होते हैं॥३॥

अथ मनुष्याः किं वर्धयेयुरित्याह॥

अब मनुष्य क्या बढ़ावें, इस विषय को कहते हैं॥

वर्धाद्यं यज्ञ उत सोम इन्द्रं वर्धाद् ब्रह्म गिर उक्था च मन्म।
वर्धाहैनमुषसो यामन्नक्तोर्वर्धान् मासाः शरदो द्याव इन्द्रम्॥४॥

वर्धात्। यम्। यज्ञः। उत। सोमः। इन्द्रम्। वर्धात्। ब्रह्म। गिरः। उक्था। च। मन्म। वर्ध। अह। एनम्। उषसः। यामन्। अक्तोः। वर्धान्। मासाः। शरदः। द्यावः। इन्द्रम्॥४॥

पदार्थः-**(वर्धात्)** वर्धयेत् **(यम्)** **(यज्ञः)** सत्सङ्गत्यादिस्वरूपः **(उत)** अपि **(सोमः)** प्रेरको विद्वान् **(इन्द्रम्)** विद्युदादिविद्याम् **(वर्धात्)** **(ब्रह्म)** धनम् **(गिरः)** वाचः **(उक्था)** प्रशंसनीयानि वचांसि **(च)** **(मन्म)** विज्ञानादि **(वर्ध)** **(अह)** **(एनम्)** **(उषसः)** प्रभातात् **(यामन्)** यान्ति यस्मिंस्तस्मिन् मार्गे **(अक्तोः)** रात्रेः **(वर्धान्)** वर्धयेरन् **(मासाः)** **(शरदः)** ऋतवः **(द्यावः)** प्रकाशयुक्ता दिवसाः प्रकाशा वा **(इन्द्रम्)** परमैश्वर्यम्॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यमिन्द्रं यज्ञ उत सोमो वर्धाद् ब्रह्म वर्धादुक्था मन्म गिरश्च वर्धाहैनमुषसोऽक्तोर्यामन् मासाः शरदो द्यावश्चेन्द्रं वर्धान् तेऽस्मान् वर्धयन्तु॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा विद्वत्सत्कारसङ्गतियो व्यवहारो विद्युदादिविद्यां परमैश्वर्य्यं पुष्कलमायुश्च वर्धयति तथैव यूयं सर्वाञ्छुभान् व्यवहारानहर्निशं वर्धयत॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यम्)** जिस **(इन्द्रम्)** बिजुली आदि की विद्या को **(यज्ञः)** श्रेष्ठों की सङ्गति आदि स्वरूप और **(उत)** भी **(सोमः)** प्रेरणा करने वाला विद्वान् **(वर्धात्)** बढ़ावे और **(ब्रह्म)** धन को **(वर्धात्)** बढ़ावे तथा **(उक्था)** प्रशंसा करने योग्य वचनों और **(मन्म)** विज्ञानों और **(गिरः)** वाणियों को **(च)** भी **(वर्ध)** बढ़ावे और **(अह)** इसके अनन्तर **(एनम्)** इस **(उषसः)** प्रभात से और **(अक्तोः)** रात्रि से **(यामन्)** चलते हैं जिसमें उस मार्ग में **(मासाः)** महीने **(शरदः)** ऋतुयें और **(द्यावः)** प्रकाशयुक्त दिन वा प्रकाश **(इन्द्रम्)** अत्यन्त ऐश्वर्य को **(वर्धान्)** बढ़ावें, वे हम लोगों को बढ़ावें॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे विद्वानों का सत्कार और सङ्गतिस्वरूप व्यवहार, बिजुली आदि की विद्या को तथा अत्यन्त ऐश्वर्य्य और पूर्ण आयु को बढ़ाता है, वैसे ही आप लोग सम्पूर्ण श्रेष्ठ व्यवहारों को दिनरात्रि बढ़ाइये॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

एवा जज्ञानं सहसे असामि वावृधानं राधसे च श्रुताय।
महामुग्रमवसे विप्र नूनमा विवासेम वृत्रतूर्येषु॥५॥१०॥

एव। जज्ञानम्। सहसे। असामि। ववृधानम्। राधसे। च। श्रुताय। महाम्। उग्रम्। अवसे। विप्र। नूनम्। आ। विवासेम। वृत्रऽतूर्येषु॥५॥

पदार्थः-**(एवा)** निश्चये। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। **(जज्ञानम्)** विद्याविनयेषु जायमानम् **(सहसे)** बलाय **(असामि)** अतुलम् **(वावृधानम्)** वर्धमानम् **(राधसे)** असंख्यधनाय **(च)** **(श्रुताय)** अखिलविद्यानां कृतश्रवणाय **(महाम्)** महान्तम् **(उग्रम्)** तेजस्विनम् **(अवसे)** रक्षणाद्याय **(विप्र)** मेधाविन् **(नूनम्)** निश्चितम् **(आ)** समन्तात् **(विवासेम)** नित्यं परिचरेम **(वृत्रतूर्येषु)** शत्रुहिंसनीयेषु स- ामेषु॥५॥

अन्वयः-हे विप्र! असामि सहसे जज्ञानं राधसे श्रुताय च वावृधानं वृत्रतूर्येष्ववसे महामुग्रं वयं नूनमाऽऽविवासेम तमेवा त्वमपि सेवस्व॥५॥

भावार्थः-यदा मनुष्याः सर्वेषु शुभगुणकर्मस्वभावेषु प्रतिष्ठितं शूरवीरं विद्वांसं संसेव्य विद्यां गृहीत्वा बलादिकं वर्धेयुस्तर्हि ते किमुत्तमं कार्य्यं न साध्नुयुरिति॥५॥

अत्रेन्द्रविद्वदुत्तमप्रज्ञावाग्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्यष्टत्रिंशत्तमं सूक्तं दशमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(विप्र)** बुद्धियुक्त **(असामि)** उपमारहित को **(सहसे)** बल के लिये **(जज्ञानम्)** विद्या और विनयों में प्रकट हुए को **(राधसे)** असंख्य धनयुक्त के लिये **(श्रुताय)** सम्पूर्ण विद्याओं का किया श्रवण जिसने उसके लिये **(च)** भी **(वावृधानम्)** बढ़ते हुए को **(वृत्रतूर्येषु)** शत्रुओं में हिंसा करने योग्य

संग्रामों में **(अवसे)** रक्षण आदि के लिये **(महाम्)** बड़े **(उग्रम्)** तेजस्वी को हम लोग **(नूनम्)** निश्चित **(आ)** सब प्रकार से **(विवासेम)** नित्य सेवा करें उस **(एवा)** ही की आप भी सेवा करो॥५॥

भावार्थः-जब मनुष्य सम्पूर्ण श्रेष्ठ गुण, कर्म्म और स्वभावों में वर्त्तमान शूरवीर विद्वान् की सेवा कर और विद्या को ग्रहण करके बल आदि को बढ़ावें तो वे कौन सा उत्तम कार्य्य न सिद्ध कर सकें॥५॥

इस सूक्त में इन्द्र, विद्वान्, उत्तम बुद्धि और वाणी के गुण वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये

यह अड़तीसवां सूक्त और दशवां वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ पञ्चर्चस्यैकोनचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। इन्द्रो देवता। १ विराट् त्रिष्टुप्। २, ३ निचृत्त्रिष्टुप्। ५ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ४ भुरिक्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ विदुषा किं कर्त्तव्यमित्याह॥

अब पाँच ऋचा वाले उनचालीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में विद्वान् को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

मन्द्रस्य कवेर्दिव्यस्य वह्नेर्विप्रमन्मनो वचनस्य मध्वः।
अपा नस्तस्य सचनस्य देवेषो युवस्व गृणते गोअग्राः॥१॥

मन्द्रस्य। कवेः। दिव्यस्य। वह्नेः। विप्रऽमन्मनः। वचनस्य। मध्वः। अपाः। नः। तस्य। सचनस्य। देव। इषः। युवस्व। गृणते। गोऽअग्राः॥१॥

पदार्थः-(**मन्द्रस्य**) आनन्दत आनन्दयतः (**कवेः**) विदुषः (**दिव्यस्य**) कमनीयास्विच्छासु साधोः (**वह्नेः**) सकलविद्यानां वोढुरग्नेरिव (**विप्रमन्मनः**) विप्रस्य मन्म विज्ञानं यस्मिँस्तस्य (**वचनस्य**) (**मध्वः**) माधुर्य्यादिगुणोपेतस्य (**अपाः**) पाहि (**नः**) अस्मभ्यम् (**तस्य**) (**सचनस्य**) समवेतस्य (**देव**) परमविद्वन् (**इषः**) अन्नादीनिच्छा वा (**युवस्व**) संयोजय (**गृणते**) स्तुवते (**गोअग्राः**) गौर्वागग्रा उत्तमा यासु ताः॥१॥

अन्वयः-हे देव! त्वं वह्नेः कवेर्दिव्यस्य मन्द्रस्य विप्रमन्मनो मध्वो वचनस्य व्यवहारमपास्तस्य सचनस्य गृणते गोअग्रा इषश्च नो युवस्व॥१॥

भावार्थः-हे विद्वँस्त्वमेव प्रयत्नं विधेहि यतोऽस्मान् दिव्यं सुखं दिव्यविद्या दिव्यमैश्वर्यं चाप्नुयात्॥१॥

पदार्थः-हे (**देव**) अत्यन्त विद्वन्! आप (**वह्नेः**) सम्पूर्ण विद्याओं के धारण करने वाले अग्नि के सदृश (**कवेः**) विद्वान् और (**दिव्यस्य**) सुन्दर इच्छाओं में श्रेष्ठ (**मन्द्रस्य**) आनन्दित होते और आनन्दित करते हुए (**विप्रमन्मनः**) विद्वान् का विज्ञान जिसमें उस (**मध्वः**) माधुर्य आदि गुण से युक्त (**वचनस्य**) वचन के व्यवहार का (**अपाः**) पालन करिये और (**तस्य**) उस (**सचनस्य**) सम्बद्ध हुए की (**गृणते**) स्तुति करते हुए के लिये (**गोअग्राः**) वाणी उत्तम जिनमें उन (**इषः**) अन्न आदि वा इच्छाओं को (**नः**) हम लोगों के लिये (**युवस्व**) संयुक्त कीजिये॥१॥

भावार्थः-हे विद्वन्! आप ऐसा प्रयत्न करिये जिससे हम लोगों को दिव्य सुख, दिव्य विद्या और दिव्य ऐश्वर्य्य प्राप्त होवे॥१॥

पुनर्विद्वद्भिः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर विद्वानों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

अयमुशानः पर्यद्रिमुस्रा ऋतधीतिभिर्ऋतयुग्युजानः।

रुजदरुग्णं वि वलस्य सानुं पणींर्वचोभिरभि योधदिन्द्रः॥ २॥

अयम्। उशानः। परि। अद्रिम्। उस्राः। ऋतधीतिऽभिः। ऋतऽयुक्। युजानः। रुजत्। अरुग्णम्। वि। वलस्य। सानुम्। पणीन्। वचःऽभिः। अभि। योधत्। इन्द्रः॥ २॥

पदार्थः-(**अयम्**) (**उशानः**) कामयमानः (**परि**) सर्वतः (**अद्रिम्**) मेघम् (**उस्राः**) किरणान् (**ऋतधीतिभिः**) जलधारकैर्गुणैः (**ऋतयुक्**) य ऋतेन सत्येन युनक्ति (**युजानः**) धारयन् (**रुजत्**) भनक्ति (**अरुग्णम्**) रोगरहितम् (**वि**) (**वलस्य**) मेघस्य। **वल इति मेघनाम।** (निघं०१.१०) (**सानुम्**) शिखराकारं घनम् (**पणीन्**) प्रशंसनीयान् व्यवहारान् (**वचोभिः**) वचनैः (**अभि**) (**योधत्**) युध्यते (**इन्द्रः**) सूर्यः॥ २॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथाऽयमृतधीतिभिरुस्रा युजान इन्द्रोऽद्रिं परि रुजद्वलस्य सानुं हन्तुमभि वि योधत् तथर्तयुगुशानो वचोभिरुत्तमं जनमरुग्णं पणींश्च साध्नुहि॥ २॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे विद्वांसो! यथा सूर्यः स्वरश्मिभिर्भूमेर्जलमाकृष्य धृत्वा मेघाकारं हत्वा पृथिव्यां निपात्य सर्वान् व्यवहारान्त्साध्नोति तथैव विद्वद्भ्यः शुभा विद्या आकृष्य धृत्वोत्तमेषु विद्यार्थिषु वर्षित्वाऽविद्यां हत्वा विज्ञानेन धर्मार्थकाममोक्षव्यवहारान्निष्पादयत॥ २॥

पदार्थः-हे विद्वन्! जैसे (**अयम्**) यह (**ऋतधीतिभिः**) जल के धारण करने वाले गुणों से (**उस्राः**) किरणों को (**युजानः**) धारण करता हुआ (**इन्द्रः**) सूर्य्य (**अद्रिम्**) मेघ को (**परि, रुजत्**) विभाग करता है और (**वलस्य**) मेघ के (**सानुम्**) शिखर के आकार मेघ को नाश करने को (**अभि, वि, योधत्**) सब ओर से विशेष कर युद्ध करता है, वैसे (**ऋतयुक्**) सत्य से युक्त होने वाला (**उशानः**) कामना करता हुआ (**वचोभिः**) वचनों से उत्तम जनों को (**अरुग्णम्**) रोगरहित और (**पणीन्**) प्रशंसा करने योग्य व्यवहारों को सिद्ध कीजिये॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे विद्वान् जनो! जैसे सूर्य्य अपनी किरणों से भूमि से जल का आकर्षण कर धारण कर और मेघ के आकार का नाश करके पृथिवी के ऊपर गिराय सम्पूर्ण व्यवहारों को सिद्ध करता है, वैसे ही विद्वानों से श्रेष्ठ विद्याओं का आकर्षण कर, धारण करके उत्तम विद्यार्थियों में वर्षाय और अविद्या का नाश करके विज्ञान से धर्म्म, अर्थ काम और मोक्ष के व्यवहारों को सिद्ध करो॥ २॥

पुनर्विद्वांसः कथं वर्त्तेरन्नित्याह॥

फिर विद्वान् जन कैसा वर्त्ताव करें, इस विषय को कहते हैं॥

अयं द्योतयदद्युतो व्य१क्तून् दोषा वस्तोः शरद इन्दुरिन्द्र।
इमं केतुमदधुर्नू चिदह्नां शुचिजन्मन उषसश्चकार॥ ३॥

अयम्। द्योतयत्। अद्युतः। वि। अक्तून्। दोषा। वस्तोः। शरदः। इन्दुः। इन्द्र। इमम्। केतुम्। अदधुः। नु। चित्। अह्नाम्। शुचिऽजन्मनः। उषसः। चकार॥ ३॥

पदार्थः-(**अयम्**) (**द्योतयत्**) प्रकाशयति (**अद्युतः**) अप्रकाशकान् भूम्यादीन् (**वि**) (**अक्तून्**) रात्रीः (**दोषा**) प्रभातवेलाः (**वस्तोः**) दिनम् (**शरदः**) शरदादीन् ऋतून् (**इन्दुः**) आर्द्रीकरः (**इन्द्र**) सूर्यवद्वर्त्तमान (**इमम्**) (**केतुम्**) प्रज्ञाम् (**अदधुः**) दधतु (**नू**) क्षिप्रम्। अत्र **ऋचि तुनुघेति** चेति दीर्घः। (**चित्**) अपि (**अह्नाम्**) दिनानाम् (**शुचिजन्मनः**) शुचे रवेर्जन्म यस्यास्तस्याः (**उषसः**) प्रभातवेलायाः (**चकार**) करोति॥३॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथाऽयमिन्दुः सूर्योऽद्युतोऽक्तून् दोषा वस्तोः शरदो वि द्योतयदह्नां चिच्छुचिजन्मन उषसः प्रादुर्भावं चकार तथेमं केतुं द्योतय यथेमं प्रकाशमयं सूर्य्यमुषसोऽदधुस्तथा नू विद्याप्रकाशं धेहि॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे विद्वांसो! यूयं यथा सूर्य्योऽन्येषामप्रकाशकानां भूम्यादीनां प्रकाशक आनन्दकरः पवित्रक्षणादीन्त्समयान्निर्निमीते तथा जनानामात्मनां प्रकाशकाः सन्तो विद्यावृद्धिकराणि कर्माणि निष्पादयत कर्माणि च प्रचारयत॥३॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) सूर्य्य के सदृश वर्त्तमान विद्वन्! जैसे (**अयम्**) यह (**इन्दुः**) गीला करने वाला सूर्य्य (**अद्युतः**) नहीं प्रकाश करने वाले भूमि आदिकों को और (**अक्तून्**) रात्रियों को (**दोषा**) प्रभातकालों को (**वस्तोः**) दिन को (**शरदः**) शरद् आदि ऋतुओं को (**वि, द्योतयत्**) प्रकाशित करता है और (**अह्नाम्**) दिनों के (**चित्**) भी (**शुचिजन्मनः**) सूर्य्य से जन्म जिसका उस (**उषसः**) प्रभात वेला की प्रकटता को (**चकार**) करता है, वैसे (**इमम्**) इस (**केतुम्**) बुद्धि को प्रकाशित कीजिये और जैसे इस प्रकाशस्वरूप सूर्य्य को प्रभात वेलायें (**अदधुः**) धारण करें, वैसे (**नू**) शीघ्र विद्या के प्रकाश को धारण करिये॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे विद्वान् जनो! आप लोग जैसे सूर्य्य, अप्रकाशक भूमि आदि का प्रकाश करने और आनन्द करने वाला पवित्र क्षण आदि समयों का निर्म्माण करता है, वैसे मनुष्यों के आत्माओं के प्रकाशक हुए विद्या की वृद्धि करने वाले कर्म्मों को निष्पन्न कीजिये और कर्मों का प्रचार कराइये॥३॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर वह विद्वान् जन क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

अयं रोचयदरुचो रुचानो३ऽयं वासयद् व्यृ१तेन पूर्वीः।
अयमीयत ऋतयुग्भिरश्वैः स्वर्विदा नाभिना चर्षणिप्राः॥४॥

अयम्। रोचयत्। अरुचः। रुचानः। अयम्। वासयत्। वि। ऋतेन। पूर्वीः। अयम्। ईयते। ऋतयुक्ऽभिः। अश्वैः। स्वःऽविदा। नाभिना। चर्षणिऽप्राः॥४॥

पदार्थः-(**अयम्**) (**रोचयत्**) प्रकाशयति (**अरुचः**) प्रकाशरहिताँश्चन्द्रादीन् (**रुचानः**) प्रकाशयन् (**अयम्**) (**वासयत्**) (**वि**) (**ऋतेन**) जलेनेव सत्येन (**पूर्वीः**) प्रागुत्पन्नाः प्रजाः (**अयम्**) (**ईयते**) गच्छति (**ऋतयुग्भिः**) जलस्य योजकैः (**अश्वैः**) महद्भिराशुगामिभिः किरणैः (**स्वर्विदा**) स्वः सुखं विदन्ति येन तेन

(नाभिना) मध्याऽऽकर्षणादिबन्धनेन **(चर्षणिप्राः)** यो विद्यादिभिर्गुणैश्चर्षणीन् मनुष्यान् प्राति व्याप्नोति॥४॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यथाऽयमरुचो रुचानः सूर्य्यः सर्वं जगद्रोचयत्, तथा विद्यया सर्वान् मनुष्यान् प्रकाशयत। यथायं सवितर्त्तेन पूर्वीर्वि वासयत्तथा सकलाः प्रजा सत्येन विज्ञानेन संयोजयत, यथायं रविर्ऋतयुग्भिरश्वैः स्वर्विदा नाभिना चर्षणिप्राः सन्नीयते तथा सत्ययोजकैर्महद्भिर्गुणैः सुखप्रदानेनात्माऽऽकर्षणेन वक्तृत्वेन श्रोतॄन् व्याप्नुवन्तो यत्र तत्र गच्छत॥४॥

भावार्थः-ये विद्वांसः सूर्य्यवत्प्रकाशात्मानो भूत्वाऽविद्यां विनाश्य जनान् विद्यया प्रकाशयन्ति सत्याचरणं प्रत्याकर्षन्ति ते धन्याः सन्ति॥४॥

पदार्थः-हे विद्वन् जनो! जैसे **(अयम्)** यह **(अरुचः)** प्रकाश से रहित चन्द्र आदिकों को **(रुचानः)** प्रकाशित करता हुआ सूर्य्य सम्पूर्ण जगत् को **(रोचयत्)** प्रकाशित करता है, वैसे विद्या से सब मनुष्यों को प्रकाशित करिये जैसे **(अयम्)** यह सूर्य्य **(ऋतेन)** जल के सदृश सत्य से **(पूर्वीः)** पहिले उत्पन्न हुए प्रजाओं को **(वि, वासयत्)** विशेष वसाता है, वैसे सम्पूर्ण प्रजाओं को सत्य विज्ञान से संयुक्त करिये और जैसे **(अयम्)** यह सूर्य्य **(ऋतयुग्भिः)** जल के युक्त करने वालों से **(अश्वैः)** महान् शीघ्रगामी किरणों और **(स्वर्विदा)** सुखको जानते हैं जिससे उस **(नाभिना)** मध्य के आकर्षण आदि बन्धन से **(चर्षणिप्राः)** विद्या आदि गुणों से मनुष्यों के प्रति व्याप्त होने वाला हुआ **(ईयते)** जाता है, वैसे सत्य के युक्त कराने वाले बड़े गुणों से सुख देने वाले आत्मा के आकर्षण से और वक्तृत्व से श्रोताओं को व्याप्त होते हुए जहाँ तहाँ जाइये॥४॥

भावार्थः-जो विद्वान् जन सूर्य्य के सदृश प्रकाशात्मा होकर और अविद्या का विनाश कर मनुष्यों को विद्या से प्रकाशित करते हैं और सत्य आचरण के प्रति आकर्षित करते हैं, वे धन्य हैं॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नू गृ॒णा॒नो गृ॑ण॒ते प्र॑त्न राज॒न्निषः॑ पिन्व वसु॒देया॑य पू॒र्वीः।

अ॒प ओष॑धीरवि॒षा वना॑नि॒ गा अर्व॑तो॒ नॄनृ॒चसे॑ रिरीहि॥५॥११॥

नु। गृ॒णा॒नः। गृ॒ण॒ते। प्र॒त्न॒। रा॒ज॒न्। इषः॑। पि॒न्व॒। व॒सु॒ऽदेया॑य। पू॒र्वीः। अ॒पः। ओष॑धीः। अ॒वि॒षा। वना॑नि। गाः। अर्व॑तः। नॄन्। ऋ॒चसे॑। रि॒री॒हि॒॥५॥

पदार्थः-**(नु)** क्षिप्रम्। अत्र **ऋचि तुनुघेति** चेति दीर्घः। **(गृणानः)** स्तुवन् **(गृणते)** स्तुवते **(प्रत्न)** प्राचीन दीर्घायुष्क **(राजन्)** विद्याविनयाभ्यां प्रकाशमान **(इषः)** अन्नादीन् **(पिन्व)** सेवस्व **(वसुदेयाय)** वसूनि द्रव्याणि देयानि येन तस्मै **(पूर्वीः)** पूर्णसुखान् **(अपः)** जलानि **(ओषधीः)** यवादीन् **(अविषा)** अविद्यमानं विषं येषु तानि **(वनानि)** जङ्गलानि **(गाः)** धेन्वादीन् **(अर्वतः)** अश्वादीन् **(नॄन्)** मनुष्यादीन् **(ऋचसे)** प्रशंसिताय कर्मणे **(रिरीहि)** याचस्व। **रिरीहीति याच्ञाकर्मा।** (निघं०३.१९)॥५॥

अन्वयः-हे राजन् प्रत्न! त्वं गृणते गृणानो वसुदेयाय पूर्वीरिष अप ओषधीरविषा वनानि गा अर्वतो नॄनृचसे पिन्व नू रिरीहि॥५॥

भावार्थः-यो राजा सत्यवादी सत्यवक्तॄन् प्रीणाति विद्वद्भ्यो विद्याविनयौ प्राप्य सदैव प्रजासुखमिच्छति यज्ञेनोत्तमैः सुगन्धितफलपुष्पयुक्तैर्वृक्षैर्लतादिभिः सर्वान्त्सुखयन् जलौषधिवृक्षगोऽश्वमनुष्यसुखवृद्धये परमेश्वरं विदुषो वा याचते स चेहाऽमुत्राऽनन्तमानन्दं प्राप्नोतीति॥५॥

अत्रेन्द्रविद्वत्सूर्य्यराजगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥ इत्येकोनचत्वारिंशत्तमं सूक्तमेकादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(राजन्)** विद्या और विनय से प्रकाशमान **(प्रत्न)** प्राचीन तथा दीर्घ आयु युक्त आप **(गृणते)** स्तुति करते हुए के लिये **(गृणानः)** स्तुति करते हुए **(वसुदेयाय)** द्रव्य देने योग्य जिससे उसके लिये **(पूर्वीः)** पूर्ण सुख वाले **(इषः)** अन्न आदिकों को **(अपः)** जलों को **(ओषधीः)** यव आदिकों को **(अविषा)** नहीं विद्यमान विष जिनमें उन **(वनानि)** जंगलों को **(गाः)** धेनु आदिकों को **(अर्वतः)** अश्व आदिकों को और **(नॄन्)** मनुष्य आदिकों को **(ऋचसे)** प्रशंसित कर्म्म के लिये **(पिन्व)** सेवन करिये और **(नू)** शीघ्र **(रिरीहि)** याचना करिये॥५॥

भावार्थः-जो राजा सत्यवादी है और सत्य बोलने वालों को प्रसन्न करता है और विद्वानों से विद्या और विनय को प्राप्त होकर सदा ही प्रजा के सुख चाहता है तथा यज्ञ और उत्तम सुगन्धित फल पुष्प से युक्त वृक्षों से और लता आदिकों से सब को सुखयुक्त करता हुआ, जल, ओषधि वृक्ष, गौ, घोड़ा और मनुष्यों के सुख की वृद्धि के लिये परमेश्वर वा विद्वानों से याचना करता है, वही इस लोक और परलोक के अनन्त आनन्द को प्राप्त होता है॥५॥

इस सूक्त में इन्द्र, विद्वान्, सूर्य और राजा के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह उनतालीसवां सूक्त और ग्यारहवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ पञ्चर्चस्य चत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ३ विराट् त्रिष्टुप्। २ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ४ भुरिक् पङ्क्तिः। ५ स्वराट्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः।

अथ राज्ञा किं कर्तव्यमित्याह॥

अब पाँच ऋचावाले चालीसवें सूक्त का प्रारम्भ किया जाता है, उसके प्रथम मन्त्र में राजा को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

इन्द्र पिब तुभ्यं सुतो मदायाव स्य हरी वि मुचा सखाया।
उत प्र गाय गण आ निषद्याथा यज्ञाय गृणते वयो धाः॥ १॥

इन्द्र। पिब। तुभ्यम्। सुतः। मदाय। अव। स्य। हरी इति। वि। मुच। सखाया। उत। प्र। गाय। गणे। आ। निऽसद्य। अथ। यज्ञाय। गृणते। वयः। धाः॥ १॥

पदार्थः-(**इन्द्र**) राजन् (**पिब**) (**तुभ्यम्**) त्वदर्थम् (**सुतः**) निष्पादितः (**मदाय**) हर्षाय (**अव**) (**स्य**) निश्चिनुहि (**हरी**) संयुक्तावश्वाविव राजप्रजाजनौ (**वि**) (**मुचा**) यौ दुःखं विमुञ्चतस्तौ (**सखाया**) सुहृदौ सन्तौ (**उत**) (**प्र**) (**गाय**) स्तुहि (**गणे**) गणनीये विद्वत्सङ्घे (**आ**) (**निषद्य**) (**अथा**) अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। (**यज्ञाय**) यो यजति सत्येन सङ्गच्छते (**गृणते**) सत्यविद्याधर्मप्रशंसकाय (**वयः**) कमनीयमायुः (**धाः**) धेहि॥ १॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यस्तुभ्यं मदाय सुतः सोमोऽस्ति तं पिब तेनाऽव स्योत हरी इव वि मुचा सखाया प्र गाय गणे निषद्याथा गृणते यज्ञाय वयश्चाऽऽधाः॥ १॥

भावार्थः-हे राजंस्त्वं सोमादिमहौषधिरसं पीत्वाऽरोगो भूत्वा सत्याऽसत्यं निर्णीय सर्वामित्राणि स्तुत्वा विद्वत्सभायां स्थित्वा सत्यं न्यायं प्रचार्य दीर्घब्रह्मचर्येण विद्याग्रहणाय सर्वा बालिका बालकांश्च प्रवर्त्य सर्वाः प्रजा दीर्घायुषः सम्पादय॥ १॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) राजन्! जो (**तुभ्यम्**) आपके लिये (**मदाय**) हर्ष के अर्थ (**सुतः**) उत्पन्न किया गया सोमलता का रस है उसको (**पिब**) पीजिये उससे (**अव, स्य**) विनाश को अन्त करिये अर्थात् निश्चित रहिये और (**उत**) भी (**हरी**) संयुक्त घोड़ों के सदृश वर्त्तमान राजा और प्रजाजन (**वि, मुचा**) जो कि दुःख का त्याग करने वाले (**सखाया**) मित्र होते हुए हैं उनकी (**प्र, गाय**) स्तुति करिये और (**गणे**) गणना करने योग्य विद्वानों के समूह में (**निषद्य**) स्थित होकर (**अथा**) इसके अनन्तर (**गृणते**) सत्यविद्या और धर्म की प्रशंसा करने वाले के लिये तथा (**यज्ञाय**) सत्य से संयुक्त होने वाले के लिये (**वयः**) कामना करने योग्य अवस्था को (**आ**) सब प्रकार से (**धाः**) धारण कीजिये॥ १॥

भावार्थः-हे राजन्! आप सोमलता आदि बड़ी ओषधियों के रस का पान कर, रोगरहित होकर, सत्य और असत्य का निर्णय कर, सब मित्रों की स्तुति करके, विद्वानों की सभा में स्थित होकर और सत्य, न्याय का प्रचार करके, दीर्घ ब्रह्मचर्य्य से विद्याग्रहण के लिये सम्पूर्ण बालिका और बालकों को प्रवृत्त कराके सम्पूर्ण प्रजाओं को अधिक अवस्था वाली करिये॥१॥

अथ नरैः किं भोक्तव्यं किं च पेयमित्याह॥

अब मनुष्यों को क्या खाना और क्या पीना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

अस्य॑ पिब॒ यस्य॑ जज्ञा॒न इ॑न्द्र॒ मदा॑य॒ क्रत्वे॒ अपि॑बो विरप्शिन्।
तमु॑ ते॒ गावो॒ नर॒ आपो॒ अद्रि॒रिन्दुं॒ सम॑ह्यन् पी॒तये॒ सम॑स्मै॥ २॥

अस्य॑। पि॒ब॒। यस्य॑। ज॒ज्ञा॒नः। इ॒न्द्र॒। मदा॑य। क्रत्वे॑। अपि॑बः। वि॒ऽर॒प्शि॒न्। तम्। ऊँ इति॑। ते॒। गाव॑ः। नर॑ः। आप॑ः। अद्रि॑ः। इन्दु॑म्। सम्। अ॒ह्य॒न्। पी॒तये॑। सम्। अ॒स्मै॥ २॥

पदार्थः-(**अस्य**) (**पिब**) (**यस्य**) (**जज्ञानः**) जायमानः (**इन्द्र**) राजन् (**मदाय**) आनन्दप्रदाय (**क्रत्वे**) प्रज्ञानाय (**अपिबः**) (**विरप्शिन्**) महान् (**तम्**) (**उ**) (**ते**) तव (**गावः**) किरणा इव (**नरः**) नेतारः (**आपः**) जलानि (**अद्रिः**) मेघः (**इन्दुम्**) जलम् (**सम्**) (**अह्यन्**) व्याप्नुवन् (**पीतये**) पानाय (**सम्**) (**अस्मै**)॥२॥

अन्वयः-हे विरप्शिन्निन्द्र! यस्यास्य मदाय क्रत्वे रसमपिबस्तस्य रसं त्वं पुनर्जज्ञानः पिब। यस्य ते गावो नर आपोऽद्रिरिन्दुं तमु प्राप्नुवन्ति, अस्मै पीतये समह्यन्तसँस्त्वं सम्पिब॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजन्! येन भुक्तेन पीतेन बुद्धिबले वर्धेयातां तं भुङ्क्ष्व पिब भोजय पायय च तस्य पानं मा कुर्या न कारयेर्येन बुद्धिभ्रंशः स्यात्॥२॥

पदार्थः-हे (**विरप्शिन्**) बड़े गुण से विशिष्ट (**इन्द्र**) राजन्! (**यस्य**) जिस (**अस्य**) इसके (**मदाय**) आनन्द देने वाले (**क्रत्वे**) प्रज्ञान के लिये रस को (**अपिबः**) पान किया उस रस को आप फिर (**जज्ञानः**) प्रसिद्ध होते हुए (**पिब**) पान करिये और जिन (**ते**) आपके (**गावः**) किरणों के सदृश (**नरः**) मनुष्य और (**आपः**) जल और (**अद्रिः**) मेघ (**इन्दुम्**) जल को जैसे वैसे (**तम्, उ**) उसको ही प्राप्त होते हैं और (**अस्मै**) इस (**पीतये**) पान के लिये (**सम्, अह्यन्**) अच्छे प्रकार व्याप्त होते हुए आप (**सम्**) उत्तम प्रकार पान करिये॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजन्! जिस भोजन और पान से बुद्धि और बल बढ़े उसका भोजन और उसका पान करिए और उसका भोजन और पान कराइये और उसका पान न करिये और न कराइये जिससे बुद्धिभ्रंश होवे॥२॥

पुना राजा राजजनाश्च किं कुर्युरित्याह॥

फिर राजा और राजा के जन क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

समिद्धे अग्नौ सुत इन्द्र सोम आ त्वा वहन्तु हरयो वहिष्ठाः।
त्वायता मनसा जोहवीमीन्द्रा याहि सुविताय महे नः॥ ३॥

सम्ऽइद्धे। अग्नौ। सुते। इन्द्र। सोमे। आ। त्वा। वहन्तु। हरयः। वहिष्ठाः। त्वाऽयता। मनसा। जोहवीमि। इन्द्र। आ। याहि। सुविताय। महे। नः॥ ३॥

पदार्थः-(**समिद्धे**) सम्यक् प्रदीप्ते (**अग्नौ**) पावके (**सुते**) निष्पन्ने (**इन्द्र**) परमैश्वर्यप्रद (**सोमे**) उक्ते महौषधिरसे (**आ**) (**त्वा**) त्वाम् (**वहन्तु**) प्रापयन्तु (**हरयः**) अश्वा इव मनुष्याः (**वहिष्ठाः**) अतिशयेन वोढारः (**त्वायता**) त्वां प्राप्तेन (**मनसा**) विज्ञानेन (**जोहवीमि**) भृशमाह्वयामि (**इन्द्र**) दुःखदारिद्र्यविदारक (**आ**) (**याहि**) समन्तादागच्छ (**सुविताय**) प्रेरणायै (**महे**) महते (**नः**) अस्मान्॥ ३॥

अन्वयः-हे इन्द्र! वहिष्ठा हरयो समिद्धेऽग्नौ सुते सोमे त्वा त्वामाऽऽवहन्तु। हे इन्द्र! यं त्वायता मनसाऽहं त्वां जोहवीमि स त्वं महे सुविताय न आ याहि॥ ३॥

भावार्थः-हे राजन्! त्वमुत्तमैर्मनुष्यैस्सह वैद्यान् सुपरीक्ष्योत्तमान् रसानन्नानि च सम्पाद्य भुक्त्वैक्यमतं कृत्वा प्रजाजनान् रक्षित्वा महदैश्वर्यं प्राप्याऽस्मानपि श्रीमतः सम्पादय॥ ३॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य के देने वाले (**वहिष्ठाः**) अतिशय प्राप्त कराने वाले (**हरयः**) घोड़ों के सदृश मनुष्य (**समिद्धे**) उत्तम प्रकार प्रदीप्त (**अग्नौ**) अग्नि में और (**सुते**) उत्पन्न हुए (**सोमे**) बड़ी औषधी के रस में (**त्वा**) आपको (**आ, वहन्तु**) सब प्रकार से प्राप्त करावें और हे (**इन्द्र**) दुःख दारिद्र्य के विदारने वाले! जिन (**त्वायता**) आपकी प्राप्त हुए (**मनसा**) विज्ञान से मैं आपको (**जोहवीमि**) अत्यन्त पुकारता हूँ वह आप (**महे**) बड़ी (**सुविताय**) प्रेरणा के लिये (**नः**) हम लोगों को (**आ, याहि**) सब प्रकार से प्राप्त हूजिये॥ ३॥

भावार्थः-हे राजन्! आप उत्तम मनुष्यों के साथ वैद्यों की उत्तम प्रकार परीक्षा कर, उत्तम रसों और अन्नों को सम्पन्न कर उनका भोजन कर, एकमत कर और प्रजाजनों की रक्षा करके अत्यन्त ऐश्वर्य्य को प्राप्त होकर हम लोगों को भी धनयुक्त करिये॥ ३॥

पुना राजादिभिः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर राजा आदिकों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

आ याहि शश्वदुशता ययाथेन्द्र महा मनसा सोमपेयम्।
उप ब्रह्माणि शृणव इमा नोऽथा ते यज्ञस्तन्वे३ वयो धात्॥ ४॥

आ। याहि। शश्वत्। उशता। ययाथ। इन्द्र। महा। मनसा। सोमऽपेयम्। उप। ब्रह्माणि। शृणवः। इमा। नः। अथ। ते। यज्ञः। तन्वे। वयः। धात्॥ ४॥

पदार्थः-(**आ**) (**याहि**) आगच्छ (**शश्वत्**) निरन्तरम् (**उशता**) कामयमानेन विदुषा सह (**ययाथ**) गच्छ (**इन्द्र**) परमधनप्रद (**महा**) महता (**मनसा**) विज्ञानयुक्तेन चित्तेन (**सोमपेयम्**) सोमश्चासौ पेयश्च तम्

(उप) **(ब्रह्माणि)** धनानि वेदान् वा **(शृणवः)** शृणुयाः **(इमा)** इमानि **(नः)** अस्माकम् **(अथा)** अनन्तरम्। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। **(यज्ञः)** सद्विद्याव्यवहारवर्धको व्यवहारः **(तन्वे)** शरीराय **(वयः)** जीवनम् **(धात्)** दधाति॥४॥

अन्वयः:- हे इन्द्र! यो यज्ञो नस्ते च तन्वे वयो धात्तेनाथेमा ब्रह्माणि त्वं महा मनसोशता शृणवः शश्वद्ययाथ सोमपेयं पातुमुपायाहि॥४॥

भावार्थः:-हे विद्वांसो राजादयो जना! यूयं विद्वद्भिः सह सङ्गत्य बुद्धिबलवर्द्धकाव्याहारविहारौ सदा कृत्वा परस्परं विचार्य्य ब्रह्मचर्यादिनाऽऽयुर्वर्द्धयत येन सर्वे महाशया आप्ता भवेयुः॥४॥

पदार्थः:-हे **(इन्द्र)** अत्यन्त धन के देने वाले! जो **(यज्ञः)** सद्विद्या और व्यवहार को बढ़ाने वाला व्यवहार **(नः)** हम लोगों के और **(ते)** आपके **(तन्वे)** शरीर के लिये **(वयः)** जीवन को **(धात्)** धारण करता है उससे **(अथा)** इसके अनन्तर **(इमा)** इन **(ब्रह्माणि)** धनों को वेदों को आप **(महा)** बड़े **(मनसा)** विज्ञानयुक्त चित्त से **(उशता)** कामना करते हुए विद्वान् के साथ **(शृणवः)** सुनिये और **(शश्वत्)** निरन्तर **(ययाथ)** प्राप्त हूजिये तथा **(सोमपेयम्)** पीने योग्य सोमलता के रस को पीने के लिये **(उप, आ, याहि)** समीप प्राप्त हूजिये॥४॥

भावार्थः:-हे विद्वान् राजा आदि जनो! आप लोग विद्वानों के साथ मेल कर, बुद्धि और बल के बढ़ाने वाले आहार और विहार को कर, परस्पर विचार करके ब्रह्मचर्य्य आदि से अवस्था को बढ़ावें, जिससे सब महाशय आप्त होवें॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

यदि॑न्द्र दि॒वि पार्ये॒ यदृध॒ग्यद्वा॒ स्वे सद॑ने॒ यत्र॒ वासि॑।

अतो॑ नो य॒ज्ञमव॑से नि॒युत्वा॑न् स॒जोषाः॑ पाहि गिर्वणो म॒रुद्भिः॑॥५॥१२॥

यत्। इ॒न्द्र॒। दि॒वि। पार्ये॑। यत्। ऋध॑क्। यत्। वा॒। स्वे। सद॑ने। यत्र॑। वा॒। असि॑। अतः॑। न॒ः। य॒ज्ञम्। अव॑से। नि॒युत्वा॑न्। स॒ऽजोषाः॑। पा॒हि। गि॒र्व॒णः॒। म॒रुत्ऽभिः॑॥५॥

पदार्थः:-**(यत्)** **(इन्द्र)** विद्वन् **(दिवि)** कमनीये **(पार्ये)** पालयितव्ये राज्ये **(यत्)** **(ऋधक्)** यथार्थम् **(यत्)** **(वा)** **(स्वे)** स्वकीये **(सदने)** स्थाने **(यत्र)** **(वा)** **(असि)** **(अतः)** **(नः)** अस्माकम् **(यज्ञम्)** सत्कर्त्तव्यं न्याय्यव्यवहारम् **(अवसे)** रक्षणाद्याय **(नियुत्वान्)** नियन्तेश्वर इव। **नियुत्वानितीश्वरनाम।** (निघं०२.२१) **(सजोषाः)** समानप्रीतिसेवी **(पाहि)** **(गिर्वणः)** सुशिक्षवाचा स्तुत **(मरुद्भिः)** उत्तमैर्मनुष्यैः॥५॥

अन्वयः:-हे गिर्वण इन्द्र! यत्पार्ये दिवि यदृधग्यद्वा स्वे सदने यत्र वा त्वमसि। अतो नोऽवसे नियुत्वानिव सजोषाः सन्मरुद्भिः सह यज्ञं पाहि॥५॥

भावार्थः-हे राजंस्त्वया सदैव राष्ट्रसंरक्षणं सत्यप्रचारः स्वात्मवत्सर्वेषां ज्ञानमीश्वरवत्पक्षपातं विहाय महाशयैर्धामिकैः सभ्यैः सह प्रजापालनं सततं क्रियतामिति॥५॥

अत्रेन्द्रसोमौषधिराजप्रजाकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति चत्वारिंशत्तमं सूक्तं द्वादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(गिर्वणः)** उत्तम शिक्षित वाणी से स्तुति किये गये **(इन्द्र)** विद्वन्! **(यत्)** जो **(पार्ये)** पालन करने योग्य राज्य में **(दिवि)** कामना करने योग्य में **(यत्)** जो **(ऋधक्)** यथार्थ और **(यत्)** जो **(वा)** वा **(स्वे)** अपने **(सदने)** स्थान में **(यत्र)** जहाँ **(वा)** वा आप **(असि)** हो **(अतः)** इस कारण से **(नः)** हम लोगों के **(अवसे)** रक्षण आदि के लिये **(नियुत्वान्)** नियत करने वाले ईश्वर के सदृश **(सजोषाः)** तुल्य प्रीति के सेवन करने वाले हुए **(मरुद्भिः)** उत्तम मनुष्यों के साथ **(यज्ञम्)** सत्कार करने योग्य न्याय व्यवहार की **(पाहि)** रक्षा कीजिये॥५॥

भावार्थः-हे राजन्! आपको चाहिये कि सदा ही राज्य का उत्तम प्रकार रक्षण, सत्य का प्रचार और अपने सदृश सब का ज्ञान और ईश्वर के सदृश पक्षपात का त्याग करके महाशय धार्म्मिक श्रेष्ठ जनों के साथ प्रजा का पालन निरन्तर करें॥५॥

इस सूक्त में इन्द्र, सोम, ओषधि, राजा और प्रजा के कृत्य का वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह चालीसवाँ सूक्त और बारहवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ पञ्चर्चस्यैकचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। इन्द्रो देवता। १ विराट् त्रिष्टुप्। २, ३,४ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ५ भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ राज्ञा किं कर्त्तव्यमित्याह॥

अब पाँच ऋचावाले एकतालीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में राजा को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

अहेळमान उप याहि यज्ञं तुभ्यं पवन्त इन्दवः सुतासः।
गावो न वज्रिन्त्स्वमोको अच्छेन्द्रा गहि प्रथमो यज्ञियानाम्॥ १॥

अहेळमानः। उप। याहि। यज्ञम्। तुभ्यम्। पवन्ते। इन्दवः। सुतासः। गावः। न। वज्रिन्। स्वम्। ओकः। अच्छ। इन्द्र। आ। गहि। प्रथमः। यज्ञियानाम्॥ १॥

पदार्थः-(**अहेळमानः**) सत्कृतः (**उप**) (**याहि**) समीपमागच्छ (**यज्ञम्**) आहारविहाराख्यम् (**तुभ्यम्**) (**पवन्ते**) पवित्रीकुर्वन्ति (**इन्दवः**) सोमलताद्युदकादीनि (**सुतासः**) निष्पादिताः (**गावः**) धेनवः (**न**) इव (**वज्रिन्**) शस्त्रास्त्रधारिन् (**स्वम्**) स्वकीयम् (**ओकः**) निवासस्थानम् (**अच्छ**) सम्यक् (**इन्द्र**) परमैश्वर्यप्रद (**आ**) (**गहि**) आगच्छ (**प्रथमः**) आदिमः (**यज्ञियानाम्**) यज्ञं सम्पालितुमर्हाणाम्॥ १॥

अन्वयः-हे वज्रिन्निन्द्र! यज्ञियानां प्रथमोऽहेळमानो यं यज्ञं तुभ्यं सुतास इन्दवः पवन्ते तमुप याहि गावो न स्वमाकोऽच्छागहि॥ १॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे राजन्! प्रजाजनैरुत्तमगुणयोगात् सर्वतः सत्कृतः सन् राज्यपालनाख्यं व्यवहारं यथावत्प्राप्नुहि। यथा धेनवः स्ववत्सान्स्वकीयस्थानानि च प्राप्नुवन्ति तथा प्रजापालनाय विनयं याहि॥ १॥

पदार्थः-हे (**वज्रिन्**) शस्त्र और अस्त्र को धारण करने और (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य के देने वाले (**यज्ञियानाम्**) यज्ञ का पालन करने के योग्यों का (**प्रथमः**) पहिला (**अहेळमानः**) सत्कार किया गया जिस (**यज्ञम्**) आहार-विहार नामक यज्ञ को (**तुभ्यम्**) आपके लिये और (**सुतासः**) उत्पन्न किये गये (**इन्दवः**) सोमलता आदि के जल (**पवन्ते**) पवित्र करते हैं उसके (**उप, याहि**) समीप आइये और (**गावः**) गौवें (**न**) जैसे (**स्वम्**) अपने (**ओकः**) निवासस्थान को वैसे (**अच्छ, आ, गहि**) अच्छे प्रकार सब ओर से प्राप्त हूजिये॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे राजन्! प्रजाजनों से उत्तम गुणों के योग के कारण सब से सत्कार किये गये राज्य-पालन नामक व्यवहार को यथावत् प्राप्त हूजिये और जैसे गौवें अपने बछड़े और स्थानों को प्राप्त होती हैं, वैसे प्रजा के पालन के लिये विनय को प्राप्त हूजिये॥ १॥

पुनस्ते किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर वे क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

या ते काकुत् सुकृता या वरिष्ठा यया शश्वत् पिबसि मध्व ऊर्मिम्।
तया पाहि प्र ते अध्वर्युरस्थात् सं ते वज्रो वर्ततामिन्द्र गव्युः॥२॥

या। ते। काकुत्। सुऽकृता। या। वरिष्ठा। यया। शश्वत्। पिबसि। मध्वः। ऊर्मिम्। तया। पाहि। प्र। ते। अध्वर्युः। अस्थात्। सम्। ते। वज्रः। वर्तताम्। इन्द्र। गव्युः॥२॥

पदार्थः-(**या**) (**ते**) तव (**काकुत्**) सुशिक्षिता वाक्। काकुरिति वाङ्नाम। (निघं०१.११) (**सुकृता**) सत्यभाषणादिशुभक्रियायुक्ता (**या**) (**वरिष्ठा**) अतिशयेनोत्तमा (**यया**) (**शश्वत्**) निरन्तरम् (**पिबसि**) (**मध्वः**) मधुरादिगुणयुक्तस्य (**ऊर्मिम्**) तरङ्गमिव (**तया**) (**पाहि**) रक्ष (**प्र**) (**ते**) तव (**अध्वर्युः**) आत्मनोऽध्वरमहिंसाव्यवहारं कामयमानः (**अस्थात्**) तिष्ठति (**सम्**) (**ते**) तव (**वज्रः**) शस्त्रास्त्रसमूहः (**वर्त्तताम्**) (**इन्द्र**) धर्मधर (**गव्युः**) गां पृथिवीराज्यमिच्छुः॥२॥

अन्वयः-हे इन्द्र नरेश! या सुकृता या वरिष्ठा काकुद्यया त्वमूर्मिमिव मध्वो रसं शश्वत् पिबसि यया तेऽध्वर्युः प्रास्थात्। ते वज्रो संवर्त्ततां तया गव्युः सन् सर्वाः प्रजाः पाहि॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। राजा राजसभ्याश्च सुसंस्कृता विद्यायुक्ताः सत्भाषणोज्ज्वलिता वाचः प्राप्य ताभिः प्रजापालनादीन् व्यवहारान्त्सततं संसाध्नुयुः॥२॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) धर्म्म के धारण करने वाले मनुष्यों के स्वामिन्! (**ते**) आपकी (**या**) जो (**सुकृता**) सत्य भाषण आदि उत्तम किया से युक्त और (**या**) जो (**वरिष्ठा**) अतिशय उत्तम (**काकुत्**) उत्तम प्रकार शिक्षा की गई वाणी (**यया**) जिससे आप (**ऊर्मिम्**) तरंग को जैसे वैसे (**मध्वः**) मधुर आदि गुणों से युक्त के रस को (**शश्वत्**) निरन्तर (**पिबसि**) पान करते हो और जिससे (**ते**) आपका (**अध्वर्युः**) अपने अहिंसारूप व्यवहार की कामना करते हुए अच्छे प्रकार से (**प्र, अस्थात्**) स्थित होते हो और जिससे (**ते**) आपका (**वज्रः**) शस्त्र और अस्त्रों का समूह (**सम्, वर्त्तताम्**) उत्तम प्रकार वर्त्तमान होवे (**तया**) उससे (**गव्युः**) पृथिवी राज्य की इच्छा करने वाले हुए सम्पूर्ण प्रजाओं का (**पाहि**) पालन करिये॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। राजा और राजा के सभासद् उत्तम प्रकार संस्कार की विद्या से युक्त, सत्यभाषण से उज्ज्वलित वाणियों को प्राप्त होकर उनसे प्रजापालन आदि व्यवहारों को निरन्तर सिद्ध करें॥२॥

पुनस्ते किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर वे क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

एष द्रप्सो वृषभो विश्वरूप इन्द्राय वृष्णे समकारि सोमः।
एतं पिब हरिवः स्थातरुग्र यस्येशिषे प्रदिवि यस्ते अन्नम्॥३॥

एषः। द्रप्सः। वृषभः। विश्वरूपः। इन्द्राय। वृष्णे। सम्। अकारि। सोमः। एतम्। पिब। हरिऽवः। स्थातः। उग्र। यस्य। ईशिषे। प्रऽदिवि। यः। ते। अन्नम्॥३॥

पदार्थः-(**एषः**) (**द्रप्सः**) दुष्टानां विमोहनम् (**वृषभः**) सुखवर्षकः (**विश्वरूपः**) विविधस्वरूपः (**इन्द्राय**) परमैश्वर्यप्रापणाय (**वृष्णे**) बलादिगुणकराय (**सम्**) (**अकारि**) क्रियते (**सोमः**) महौषधिजन्यो रसः (**एतम्**) (**पिब**) (**हरिवः**) प्रशस्तमनुष्ययुक्त (**स्थातः**) यस्तिष्ठति तत्सम्बुद्धौ (**उग्र**) तेजस्विन् (**यस्य**) (**ईशिषे**) ईश्वरो भवसि (**प्रदिवि**) प्रकर्षेण कमनीये व्यवहारे (**यः**) (**ते**) तव (**अन्नम्**) अत्तव्यम्॥३॥

अन्वयः- हे हरिवः स्थातरुग्र नृप! यस्य ते तवैष द्रप्सो वृषभो विश्वरूपः सोमो वृष्ण इन्द्राय समकारि यः प्रदिव्यन्नं प्रापयत्येतं त्वं पिबाऽस्येशिषे॥३॥

भावार्थः-यस्य राज्ञो विविधा उत्तमा प्रबन्धा उत्तमान्यौषधानि उत्तमाः सेना धार्मिका विद्वांसोऽधिकारिणः सन्ति स एव सर्वां प्रतिष्ठां लभते॥३॥

पदार्थः-हे (**हरिवः**) अच्छे मनुष्यों से युक्त (**स्थातः**) स्थित होने वाले (**उग्र**) तेजस्विन् राजन्! (**यस्य**) जिस (**ते**) आपका (**एषः**) यह (**द्रप्सः**) दुष्टों का विमोह करना (**वृषभः**) सुख का वर्षाने वाला (**विश्वरूपः**) अनेक प्रकार के स्वरूप वाला (**सोमः**) बड़ी-बड़ी ओषधियों से उत्पन्न हुआ रस (**वृष्णे**) बल आदि गुण के करने और (**इन्द्राय**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य को प्राप्त कराने वाले के लिये (**सम्, अकारि**) किया जाता है (**यः**) जो (**प्रदिवि**) अच्छे प्रकार सुन्दर व्यवहार में (**अन्नम्**) भोजन करने योग्य पदार्थ को प्राप्त कराता (**एतम्**) इस का आप (**पिब**) पान करिये और इसके (**ईशिषे**) स्वामी हूजिये॥३॥

भावार्थः-जिस राजा के अनेक प्रकार के उत्तम प्रबन्ध, उत्तम ओषधियाँ, उत्तम सेना और धार्मिक विद्वान् अदिकारी हैं, वही सम्पूर्ण प्रतिष्ठा को प्राप्त होता है॥३॥

पुनः स राजा किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

सुतः सोमो असुतादिन्द्र वस्यानयं श्रेयाञ्चिकितुषे रणाय।
एतं तितिर्व उप याहि यज्ञं तेन विश्वास्तविषीरा पृणस्व॥४॥

सुतः। सोमः। असुतात्। इन्द्र। वस्यान्। अयम्। श्रेयान्। चिकितुषे। रणाय। एतम्। तितिर्वः। उप। याहि। यज्ञम्। तेन। विश्वाः। तविषीः। आ। पृणस्व॥४॥

पदार्थः-(**सुतः**) निष्पादितः (**सोमः**) महैश्वर्ययोगः (**असुतात्**) अनुत्पादितात् (**इन्द्र**) परमैश्वर्ययुक्त (**वस्यान्**) अतिशयेन वासकर्त्ता (**अयम्**) (**श्रेयान्**) अतिशयेन श्रेयःप्राप्तः (**चिकितुषे**) चिकित्सितुं विचारयितुमिष्टाय (**रणाय**) स-ामाय (**एतम्**) (**तितिर्वः**) शत्रूणां बलं तरति उल्लङ्घयितः (**उप**) (**याहि**) (**यज्ञम्**) सुसङ्गमनीयम् (**तेन**) (**विश्वाः**) समग्राः (**तविषीः**) बलयुक्ताः सेनाः (**आ**) (**पृणस्व**) समन्तात् सुखय॥४॥

अन्वयः-हे तितिर्व इन्द्र! योऽयं चिकितुषे रणाय श्रेयान् वस्यानसुतात् सोमः सुतोऽस्ति, एतं यज्ञं त्वमुप याहि तेन विश्वास्तविषीरा पृणस्व॥४॥

भावार्थः-ये राजानः स्वल्पायापि स-ग्रामाय महतीं सामग्रीं सञ्चिन्वन्ति ते शत्रून् विजयमानाः सन्तः सर्वाः प्रजाः सततं सुखयितुमर्हन्ति॥४॥

पदार्थः-हे (**तितिर्वः**) शत्रुओं के बल को उल्लङ्घन करने वाले (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य से युक्त! जो (**अयम्**) यह (**चिकितुषे**) विचार करने को इष्ट (**रणाय**) स-ग्राम के लिये (**श्रेयान्**) अतिशय कल्याण को प्राप्त (**वस्यान्**) अतिशय वास करने वाला (**असुतात्**) नहीं उत्पन्न किये गये पदार्थों से (**सोमः**) बड़े ऐश्वर्यों का योग (**सुतः**) उत्पन्न किया गया है (**एतम्**) इस (**यज्ञम्**) उत्तम प्रकार प्राप्त होने योग्य के आप (**उप, याहि**) समीप प्राप्त हूजिये (**तेन**) उससे (**विश्वाः**) सम्पूर्ण (**तविषीः**) बलयुक्त सेनाओं को (**आ, पृणस्व**) सब प्रकार से सुखी करिये॥४॥

भावार्थः-जो राजा छोटे भी स-ग्राम के लिये बड़ी सामग्री को इकट्ठी करते हैं, वे शत्रुओं को जीतते हुए सम्पूर्ण प्रजाओं को निरन्तर सुखी करने के योग्य हैं॥४॥

पुनः स कीदृशः सन् किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर वह कैसा हुआ क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

ह्वया॑मसि॒ त्वेन्द्र॑ याह्य॒र्वाङरं॑ ते॒ सोम॑स्त॒न्वे॑ भवाति।

शत॑क्रतो मा॒दय॑स्वा सु॒तेषु॒ प्रास्माँ अ॑व॒ पृत॑नासु॒ प्र वि॒क्षु॥५॥१३॥

ह्वया॑मसि। त्वा॒। आ। इ॒न्द्र॒। या॒हि। अ॒र्वाङ्। अर॑म्। ते॒। सोम॑ः। त॒न्वे॑। भ॒वा॒ति॒। शत॑क्रतो॒ इति॒ शत॑ऽक्रतो। मा॒दय॑स्व। सु॒तेषु॑। प्र। अ॒स्मान्। अ॒व॒। पृत॑नासु। प्र। वि॒क्षु॥५॥

पदार्थः-(**ह्वयामसि**) आह्वयामः (**त्वा**) त्वाम् (**आ**) (**इन्द्र**) सर्वतो रक्षक (**याहि**) गच्छ (**अर्वाङ्**) योऽर्वाग् गच्छति सः (**अरम्**) अलम्। अत्र वर्णव्यत्ययेन लस्य स्थाने रः। (**ते**) तव (**सोमः**) महौषध्यादिरसः (**तन्वे**) शरीराय (**भवाति**) भवेत् (**शतक्रतो**) असंख्यप्रज्ञ उत्तमकर्मन् वा (**मादयस्वा**) आनन्दाऽऽनन्दय वा। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**सुतेषु**) निष्पन्नेष्वैश्वर्येषु (**प्र**) (**अस्मान्**) (**अव**) रक्ष (**पृतनासु**) मनुष्येषु सेनासु वा। **पृतना इति मनुष्यनाम।** (निघं०२.३) (**प्र**) (**विक्षु**) प्रजासु॥५॥

अन्वयः-हे शतक्रतो इन्द्र! ते तन्वे यस्सोमोऽर्वाङ् प्र भवाति तं त्वं याहि। यन्त्वा वयमाह्वयामसि स त्वं सुतेष्वस्मान् प्राव पृतनासु विक्ष्वरं मादयस्वा॥५॥

भावार्थः-यो राजा स्वैश्वर्येण सर्वाः प्रजा न्यायेन रक्षति स प्रशंसितश्चिरायुरानन्दित आनन्दयिता च भवतीति॥५॥

अत्रेन्द्रराजसोमगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्येकचत्वारिंशत्तमं सूक्तं त्रयोदशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(शतक्रतो)** असङ्ख्य बुद्धियुक्त तथा उत्तम कर्म्म करने और **(इन्द्र)** सब प्रकार से रक्षा करने वाले **(ते)** आपके **(तन्वे)** शरीर के लिये जो **(सोमः)** बड़ी ओषधि आदि का रस **(अर्वाङ्)** नीचे चलने वाला **(प्र, भवति)** प्रभाव को प्राप्त होता है उसको आप **(याहि)** प्राप्त हूजिये और जिन **(त्वा)** आपको हम लोग **(आ, ह्वयामसि)** पुकारते हैं वह आप **(सुतेषु)** उत्पन्न हुए ऐश्वर्य्यों में **(अस्मान्)** हम लोगों की **(प्र, अव)** उत्तम प्रकार रक्षा करो और **(पृतनासु)** मनुष्यों वा सेनाओं में और **(विक्षु)** प्रजाओं में **(अरम्)** अच्छे प्रकार **(मादयस्वा)** आनन्द करो वा आनन्द कराओ॥५॥

भावार्थः-जो राजा अपने ऐश्वर्य्य से सम्पूर्ण प्रजाओं की न्याय से रक्षा करता है वह प्रशंसित, अधिक अवस्था वाला और आनन्दयुक्त वा आनन्द कराने वाला भी होता है॥५॥

इस सूक्त में इन्द्र, राजा और सोम के रस का गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह इकतालीसवाँ सूक्त और तेरहवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ चतुर्ऋचस्य द्विचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। इन्द्रो देवता। १ स्वराडुष्णिक्छन्दः। ऋषभः स्वरः। २ निचृदनुष्टुप्। ३ अनुष्टुप्। भुरिगनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः॥

अथ राजप्रजाजनाः परस्परं कथं वर्त्तेरन्नित्याह॥

अब चार ऋचा वाले बयालीसवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में राजा और प्रजाजन परस्पर कैसा वर्त्ताव करे, इस विषय को कहते हैं॥

प्रत्य॑स्मै पिपी॑षते॒ विश्वा॑नि वि॒दुषे॑ भर।

अ॒र॒म्ऽग॒माय॒ जग्म॒येऽप॑श्चाद्दध्वने॒ नरे॑॥ १॥

प्रति॑। अ॒स्मै॒। पिपी॑षते। विश्वा॑नि। वि॒दुषे॑। भ॒र। अ॒र॒म्ऽग॒माय॑। जग्म॑ये। अप॑श्चात्ऽदध्वने। नरे॑॥ १॥

पदार्थः-(**प्रति**) (**अस्मै**) (**पिपीषते**) पातुमिच्छवे (**विश्वानि**) सर्वाण्युत्तमानि वस्तूनि (**विदुषे**) आप्ताय विपश्चिते (**भर**) धर (**अरङ्गमाय**) यो विद्यायां अरं पारं गच्छति तस्मै (**जग्मये**) विज्ञानाधिक्याय (**अपश्चाद्दध्वने**) उत्तमेषु व्यवहारेष्वग्रगामिने (**नरे**) नायकाय॥ १॥

अन्वयः-हे विद्वन् राजंस्त्वं जग्मयेऽपश्चाद्दध्वनेऽरङ्गमाय पिपीषते विदुषेऽस्मै नरे विश्वानि भराऽयमपि तुभ्यमेतानि प्रति भरतु॥ १॥

भावार्थः-यो राजा विद्वदर्थे सर्वं धनं सामर्थ्यं वा धरति ये च विद्वांसो राजादिहिताय प्रयतन्ते ते सर्वदोन्नता जायन्ते॥ १॥

पदार्थः-हे विद्वन्! आप (**जग्मये**) विज्ञान की अधिकता के लिये (**अपश्चाद्दध्वने**) उत्तम व्यवहारों में आगे चलने तथा (**अरङ्गमाय**) विद्या के पार जाने और (**पिपीषते**) पान करने की इच्छा करने वाले (**विदुषे**) यथार्थवक्ता विद्वान् के लिये और (**अस्मै**) इस (**नरे**) अग्रणी मनुष्य के लिये (**विश्वानि**) सम्पूर्ण उत्तम वस्तुओं को (**भर**) धारण करिये और यह भी आपके लिये इनको (**प्रति**) धारण करे॥ १॥

भावार्थः-जो राजा विद्वानों के लिये सम्पूर्ण धन वा सामर्थ्य को धारण करता है और जो विद्वान् राजा आदि के हित के लिये प्रयत्न करते हैं, वे सर्वदा उन्नत होते हैं॥ १॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

एमे॑नं प्र॒त्येत॑न॒ सोमे॑भिः सोम॒पात॑मम्।

अमे॑त्रेभिर्ऋजी॒षिण॒मिन्द्रं॑ सु॒तेभि॒रिन्दु॑भिः॥ २॥

आ। ईम्। एनम्। प्रतिऽएतन। सोमेभिः। सोमऽपातमम्। अमत्रेभिः। ऋजीषिणम्। इन्द्रम्। सुतेभिः। इन्दुऽभिः॥ २॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**ईम्**) सर्वतः (**एनम्**) राजानम् (**प्रत्येतन**) प्रतीतिं कुरुत (**सोमेभिः**) ऐश्वर्यैरोषधिगणैर्वा (**सोमपातमम्**) अतिशयेन सोमपातारम् (**अमत्रेभिः**) उत्तमैः पात्रैः (**ऋजीषिणम्**) ऋजूनां सरलानां धार्मिकानां जनानामीषितुं शीलम् (**इन्द्रम्**) ऐश्वर्यप्रदम् (**सुतेभिः**) निष्पादितैः (**इन्दुभिः**) आनन्दकरैरुदकैः॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यूयं सुतेभिः सोमेभिरिन्दुभिरमत्रेभिः सोमपातममृजीषिणमेनमिन्द्रमीमा प्रत्येतन॥ २॥

भावार्थः-हे राजप्रजाजना! यूयमाप्तेषु राजादिविद्वत्सु च विश्वासं कुरुत ते च युष्मासु विश्वसेयुरेवमुभयत्राऽऽनन्दो वर्धेत॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! आप लोग (**सुतेभिः**) उत्पन्न किये गये (**सोमेभिः**) ऐश्वर्य्यों वा ओषधियों के समूहों से (**इन्दुभिः**) आनन्दकारक जलों से तथा (**अमत्रेभिः**) उत्तम पात्रों से (**सोमपातमम्**) अतिशय सोमरस के पीने वाले (**ऋजीषिणम्**) सरल धार्मिक जनों की इच्छा करने के स्वभाव वाले (**एनम्**) इस (**इन्द्रम्**) ऐश्वर्य्य के देने वाले राजा की (**ईम्**) सब ओर से (**प्रत्येतन**) प्रतीति करिये॥ २॥

भावार्थः-हे राजा और प्रजाजनो! आप लोग यथार्थवक्ता तथा राजा आदि विद्वानों में विश्वास करिये और वे आप लोगों में विश्वास करें, इस प्रकार दोनों और आनन्द बढ़े॥ २॥

पुनस्ते परस्परं किं कुर्युरित्याह॥

फिर वे परस्पर क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

यदी सुतेभिरिन्दुभिः सोमेभिः प्रतिभूषथ।
वेदा विश्वस्य मेधिरो धृषत् तन्तमिदेषते॥ ३॥

यदि। सुतेभिः। इन्दुऽभिः। सोमेभिः। प्रतिऽभूषथ। वेद। विश्वस्य। मेधिरः। धृषत्। तम्ऽतम्। इत्। आ। ईषते॥ ३॥

पदार्थः-(**यदी**) अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। (**सुतेभिः**) निष्पादितैः (**इन्दुभिः**) आनन्दकरैः (**सोमेभिः**) ऐश्वर्यैः (**प्रतिभूषथ**) (**वेदा**) जानाति। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**विश्वस्य**) सर्वस्य राज्यस्य (**मेधिरः**) सङ्गन्ता (**धृषत्**) दुष्टानां धर्षकः (**तन्तम्**) (**इत्**) एव (**आ**) (**ईषते**) प्राप्नोति। **ईषतीति गतिकर्मा।** (निघं० २.१४)॥ ३॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यो यो विश्वस्य मेधिरो धृषदेषते राजव्यवहारं वेदा तन्तमिद्यदी सुतेभिरिन्दुभिस्सोमेभिर्यूयं प्रतिभूषथ तर्ह्ययमपि युष्मान् सम्भूषेत्॥ ३॥

भावार्थः-य उत्तमानुत्तमान् जनान्त्सत्कुर्वन्ति ते सर्वाञ्छुभैर्गुणैरलं कुर्वन्ति॥ ३॥

पदार्थः-हे विद्वान् जनो! जो जो **(विश्वस्य)** सम्पूर्ण राज्य का **(मेधिरः)** मेल करने और **(धृषत्)** दुष्टों का दबाने वाला **(आ, ईषते)** प्राप्त होता और राजा के व्यवहार को **(वेदा)** जानता है **(तन्तम्, इत्)** उसी उसको **(यदी)** जो **(सुतेभिः)** उत्पन्न किये **(इन्दुभिः)** आनन्दकारक **(सोमेभिः)** ऐश्वर्यों से आप लोग **(प्रतिभूषथ)** सुशोभित कीजिये तो यह भी आप लोगों को उत्तम प्रकार शोभित करे॥३॥

भावार्थः-जो उत्तम-उत्तम मनुष्यों का सत्कार करते हैं, वे सबको श्रेष्ठ गुणों से शोभित करते हैं॥३॥

पुनर्मनुष्यैः कथं वर्तितव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को कैसा वर्त्ताव करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

अस्माअस्मा इदन्धसोऽध्वर्यो प्र भरा सुतम्।

कुवित्समस्य जेन्यस्य शर्धतोऽभिशस्तेरवस्परत्॥४॥ १४॥

अस्मैऽअस्मै। इत्। अन्धसः। अध्वर्यो इति। प्र। भर। सुतम्। कुवित्। समस्य। जेन्यस्य। शर्धतः। अभिऽशस्तेः। अवऽस्परत्॥४॥

पदार्थः-**(अस्माअस्मै)** **(इत्)** एव **(अन्धसः)** अन्नादेः **(अध्वर्यो)** अहिंसक **(प्र)** **(भरा)** धर। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(सुतम्)** निष्पादितम् **(कुवित्)** महत् **(समस्य)** तुल्यस्य **(जेन्यस्य)** जेतुं योग्यस्य **(शर्धतः)** बलस्य **(अभिशस्तेः)** अभितः प्रशंसितस्य **(अवस्परत्)** पालयति॥४॥

अन्वयः-हे अध्वर्यो! त्वमस्माअस्मा अन्धसः समस्य जेन्यस्य शर्धतोऽभिशस्तेः कुवित्सुतं प्र भरा तेनेदस्मान् भवानवस्परत्॥४॥

भावार्थः-ये विद्वांसः सर्वार्थं सर्वोत्तमान् पदार्थान्त्समर्पयन्ति यावत्सामर्थ्यं धरन्ति तावत्सर्वं परेषां रक्षणाय कुर्वन्ति ते सर्वदा भाग्यशालिनो गणनीया इति॥४॥

अत्रेन्द्रराजविद्वत्प्रजाकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति द्विचत्वारिंशत्तमं सूक्तं चतुर्दशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(अध्वर्यो)** नहीं हिंसा करने वाले आप! **(अस्माअस्मै)** इस इसके लिये **(अन्धसः)** अन्न आदि के **(समस्य)** तुल्य **(जेन्यस्य)** जीतने योग्य **(शर्धतः)** बल के और **(अभिशस्तेः)** चारों ओर से प्रशंसित **(कुवित्)** महान् **(सुतम्)** उत्पन्न किये गये को **(प्र, भरा)** धारण करिये इससे **(इत्)** ही हम लोगों का आप **(अवस्परत्)** पालन करते हैं॥४॥

भावार्थः-जो विद्वान् सब के लिये सम्पूर्ण उत्तम पदार्थों को समर्पित करते हैं और जितने सामर्थ्य का धारण करते हैं, उतना सब औरों के रक्षण के लिये करते हैं, उन सब को भाग्यशाली गिनना चाहिये॥४॥ इस सूक्त में इन्द्र, राजा, विद्वान् और प्रजा के कृत्य का वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह बयालीसवाँ सूक्त और चौदहवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ चतुर्ऋचस्य त्रिचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, २, ३, ४ उष्णिक्छन्दः। ऋषभः स्वरः॥

अथ मनुष्याः किं कुर्य्युरित्याह॥

अब चार ऋचा वाले तैंतालीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में मनुष्य क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

यस्य॒ त्यच्छम्ब॑रं॒ मदे॒ दिवो॑दासाय र॒न्धय॑ः।

अ॒यं स सोम॑ इन्द्र ते सु॒तः पिब॑॥१॥

यस्य॑। त्यत्। शम्ब॑रम्। मदे॑। दिव॑ःऽदासाय। र॒न्धय॑ः। अ॒यम्। सः। सोम॑ः। इन्द्र॒। ते॒। सु॒तः। पिब॑॥१॥

पदार्थः-(**यस्य**) (**त्यत्**) तत् (**शम्बरम्**) मेघमिव (**मदे**) आनन्दकाय (**दिवोदासाय**) विज्ञानप्रदाय (**रन्धयः**) हिंसय (**अयम्**) (**सः**) (**सोमः**) बुद्धिबलवर्धको रसः (**इन्द्र**) परमैश्वर्यप्रापक (**ते**) तुभ्यम् (**सुतः**) निष्पादितः (**पिब**)॥१॥

अन्वयः-हे इन्द्र! सोऽयं सोमस्ते सुतोऽस्ति तं त्वं पिब। शम्बरं सूर्य्य इव मदे दिवोदासाय दुःखप्रदं दुष्टं रन्धयः। यस्य कुकर्मानुष्ठान इच्छा भवेत् त्यत् तं रन्धयः॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजादयो जना! यूयं धार्मिकाणां पीडकान् जनान् यथावद्दण्डयत वैद्यकशास्त्रोक्तरीत्या महौषधिरसं निष्पाद्य संसेव्यारोगा भूत्वा सर्वाः प्रजा अरोगाः कुरुत॥१॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य के प्राप्त कराने वाले (**सः**) वह (**अयम्**) यह (**सोमः**) बुद्धि और बल का बढ़ाने वाला रस (**ते**) आपके लिये (**सुतः**) उत्पन्न किया गया है उसका आप (**पिब**) पान करिये और (**शम्बरम्**) मेघ को सूर्य्य जैसे वैसे (**मदे**) आनन्दकारक (**दिवोदासाय**) विज्ञान के देने वाले के लिये, दुःख के देने वाले दुष्ट का (**रन्धयः**) नाश करिये और (**यस्य**) जिसकी कुकर्म के अनुष्ठान में इच्छा होवे (**त्यत्**) उसका नाश करिये॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजा आदि जनो! आप धार्म्मिक जनों को पीड़ा देने वाले मनुष्यों को यथावत् दण्ड दीजिये और वैद्यकशास्त्र में कही हुई रीति से बड़ी ओषधियों के रस को निकाल कर उसका सेवन कर रोगरहित होकर सम्पूर्ण प्रजाओं को रोगरहित करिये॥१॥

पुना राजा किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

यस्य॑ तीव्र॒सुतं॒ मदं॒ मध्य॒मन्तं॑ च॒ रक्ष॑से।

अ॒यं स सोम॑ इन्द्र ते सु॒तः पिब॑॥२॥

यस्य॑। ती॒व्र॒ऽसु॒त॑म्। मद॑म्। मध्य॑म्। अन्त॑म्। च॒। रक्ष॑से। अ॒यम्। सः। सोम॑ः। इ॒न्द्र॒। ते॒। सु॒तः। पिब॥२॥

पदार्थः-(**यस्य**) (**तीव्रसुतम्**) तीव्रैस्तेजस्विभिः कर्मभिर्निष्पादितम् (**मदम्**) आनन्दकरम् (**मध्यम्**) मध्ये भवम् (**अन्तम्**) अवसानस्थम् (**च**) (**रक्षसे**) (**अयम्**) (**सः**) (**सोमः**) उत्तमौषधिरसः (**इन्द्र**) बलप्रद (**ते**) तुभ्यम् (**सुतः**) निष्पादितः (**पिब**)॥२॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं यस्य तीव्रसुतं मदं मध्यमन्तं च रक्षसे सोऽयं सोमस्ते सुतस्तं त्वं पिब॥२॥

भावार्थः-हे विद्वन् राजँस्त्वं तादृशान्येवौषधानि प्रकटीकुरु यैः सर्वेषां सुखं वर्धेत॥२॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) बल के देने वाले (**यस्य**) जिसके (**तीव्रसुतम्**) तेजस्वियों से कर्म्मों द्वारा उत्पन्न किये (**मदम्**) आनन्द के देने वाले (**मध्यम्**) मध्य में हुए (**अन्तम्**) और अन्त में वर्त्तमान की (**च**) भी (**रक्षसे**) रक्षा करते हो (**सः**) वह (**अयम्**) यह (**सोमः**) उत्तम ओषधियों का रस (**ते**) आपके लिये (**सुतः**) उत्पन्न किया उसका आप (**पिब**) पान करिये॥२॥

भावार्थः-हे विद्यायुक्त राजन्! आप वैसी ही ओषधियों को प्रकट करिये जिससे सब का सुख बढ़े॥२॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

यस्य॒ गा अ॒न्तरश्म॑नो॒ मदे॑ दृ॒ळ्हा अ॒वासृ॑जः।

अ॒यं स सोम॑ इन्द्र ते सु॒तः पिब॑॥३॥

यस्य॑। गाः। अ॒न्तः। अश्म॑नः। मदे॑। दृ॒ळ्हाः। अ॒व॒ऽअसृ॑जः। अ॒यम्। सः। सोम॑। इ॒न्द्र॒। ते॒। सु॒तः। पिब॑॥३॥

पदार्थः-(**यस्य**) (**गाः**) किरणान् (**अन्तः**) मध्ये (**अश्मनः**) मेघस्य (**मदे**) आनन्दाय (**दृळ्हाः**) ध्रुवान् (**अवासृजः**) अवसृजसि (**अयम्**) (**सः**) (**सोमः**) रोगनाशकौषधिरसः (**इन्द्र**) सर्वरोगविदारक (**ते**) तुभ्यम् (**सुतः**) निर्मितः (**पिब**)॥३॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यस्याश्मनोऽन्तर्दृळ्हा गा मदेऽवासृजस्तस्य सम्बन्धेन सोऽयं सोमस्ते सुतस्तं त्वं पिब॥३॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! यस्य परमाणवो मेघमण्डलेऽपि स्थिता ओषधिभ्यस्तस्य निष्पादनं वैद्यकरीत्या कृत्वा तं सेवित्वाऽरोगा भवत॥३॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) सम्पूर्ण रोगों के नाश करने वाले (**यस्य**) जिस (**अश्मनः**) मेघ के (**अन्तः**) मध्य में (**दृळ्हाः**) दृढ़ (**गाः**) किरणों को (**मदे**) आनन्द के लिये (**अवासृजः**) उत्पन्न करता है उसके

सम्बन्ध से **(सः)** वह **(अयम्)** यह **(सोमः)** रोगों को नाश करने वाला ओषधियों का रस **(ते)** आपके लिये **(सुतः)** निर्म्माण किया गया उसको आप **(पिब)** पीजिये॥३॥

भावार्थः-हे विद्वानो! जिनके परमाणु मेघमण्डल में भी वर्त्तमान हैं, ओषधियों से उसका निर्म्माण वैद्यक रीति से कर और उसका सेवन करके रोगरहित हूजिये॥३॥

पुनस्ते किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर वे क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

यस्य॑ मन्दा॒नो अन्ध॑सो॒ माघो॑नं दधि॒षे शव॑:।

अ॒यं स सोम॑ इन्द्र ते सु॒तः पिब॑॥४॥१५॥३॥

यस्य॑। म॒न्दा॒नः। अन्ध॑सः। माघो॑नम्। द॒धि॒षे। शव॑ः। अ॒यम्। सः। सोम॑ः। इन्द्र॑। ते॒। सु॒तः। पिब॑॥४॥

पदार्थः-**(यस्य)** **(मन्दानः)** स्तुवन् आनन्दन् **(अन्धसः)** अन्नादेः **(माघोनम्)** बहुधनवन्तम् **(दधिषे)** धरसि **(शवः)** बलहेतुम् **(अयम्)** **(सः)** **(सोमः)** ऐश्वर्यकरो रसः **(इन्द्र)** वैद्यराज **(ते)** तुभ्यम् **(सुतः)** **(पिब)**॥४॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यस्यान्धसो मन्दानस्त्वं माघोनं शवश्च दधिषे सोऽयं सोमस्ते सुतस्तं पिब॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! येन बलबुद्धिसुखानि वर्धेरंस्तमेव रसमन्नं च सततं सेवध्वमिति॥४॥

अत्रेन्द्रसोमविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्यृग्वेदे षष्ठे मण्डले तृतीयोऽनुवाकस्त्रिचत्वारिंशत्तमं सूक्तं चतुर्थेऽष्टके सप्तमेऽध्याये पञ्चदशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** वैद्यराज! **(यस्य)** जिस **(अन्धसः)** अन्न आदि की **(मन्दानः)** स्तुति करते हुए आप **(माघोनम्)** बहुधनयुक्त को और **(शवः)** बल का हेतु उसको **(दधिषे)** धारण करते हो **(सः)** वह **(अयम्)** यह **(सोमः)** ऐश्वर्य करने वाला रस **(ते)** आपके लिये **(सुतः)** उत्पन्न किया गया उसको आप **(पिब)** पीजिये॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिससे बल, बुद्धि और सुख बढ़े, उसी रस और अन्न का निरन्तर सेवन करो॥४॥

इस सूक्त में इन्द्र, सोम और विद्वान् के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जानी चाहिये॥

यह ऋग्वेद के छठे मण्डल में तृतीय अनुवाक, तेंतीसवाँ सूक्त और चौथे अष्टक में सातवें अध्याय में पन्द्रहवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ चतुर्विंशत्यृचस्य चतुश्चत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य शंयुबार्हस्पत्य ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ३, ४ निचृदनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः। २, ५ स्वराडुष्णिक्छन्दः। ऋषभः स्वरः। ६ आर्षी पङ्क्तिः। ७ भुरिक्पङ्क्तिः। ८ निचृत्पङ्क्तिः। ९, १२, १६ पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। १०, ११, १३, २२ विराट्त्रिष्टुप्। १४, १५, १७, १८, २०, २४ निचृत्त्रिष्टुप्। १९, २१, २३ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ राजादिभिः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

अब चौबीस ऋचा वाले चवालीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में राजा आदि को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

यो र॒यिवो॑ र॒यिन्त॑मो॒ यो द्यु॒म्नैर्द्यु॒म्नव॑त्तमः।
सोम॑: सु॒तः स इ॑न्द्र॒ तेऽस्ति॑ स्वधापते॒ मद॑:॥१॥

यः। र॒यि॒ऽवः॒। र॒यिम्ऽत॑मः। यः। द्यु॒म्नैः। द्यु॒म्नव॑त्ऽतमः। सोम॑ः। सु॒तः। सः। इ॒न्द्र॒। ते॒। अस्ति॑। स्व॒धा॒ऽप॒ते॒। मद॑ः॥१॥

पदार्थः-(**यः**) (**रयिवः**) प्रशस्ता रायो विद्यन्ते यस्य तत्सम्बुद्धौ (**रयिन्तमः**) अतिशयेन धनाढ्यः (**यः**) (**द्युम्नैः**) धनैर्यशोभिर्वा (**द्युम्नवत्तमः**) अतिशयेन यशोधनयुक्तः (**सोमः**) ऐश्वर्यम् (**सुतः**) निर्मितः (**सः**) (**इन्द्र**) धनन्धर (**ते**) तव (**अस्ति**) (**स्वधापते**) अन्नस्वामिन् (**मदः**) आनन्ददः॥१॥

अन्वयः-हे स्वधापते रयिव इन्द्र! यो रयिन्तमो यो द्युम्नैर्द्युम्नवत्तमः सुतः सोमो मदस्तेऽस्ति स त्वया सत्कृत्या स्वीकर्त्तव्यः॥१॥

भावार्थः-हे राजादयो जना! युष्माभिः स्वकीयराज्ये बहवो धनाढ्या विद्वांसः सत्कृत्य रक्षणीया येन सततं श्रीर्वर्धेत॥१॥

पदार्थः-हे (**स्वधापते**) अन्न के स्वामिन् (**रयिवः**) अच्छे धनों वाले (**इन्द्र**) धन के धारण करने वाले! (**यः**) जो (**रयिन्तमः**) अत्यन्त धनाढ्य और (**यः**) जो (**द्युम्नैः**) धनों वा यशों से (**द्युम्नवत्तमः**) अत्यन्त यशोधन युक्त (**सुतः**) निर्म्माण किया गया (**सोमः**) ऐश्वर्य्य (**मदः**) आनन्द देने वाला (**ते**) आपका (**अस्ति**) है (**सः**) वह आपसे सत्कार करके स्वीकार करने योग्य है॥१॥

भावार्थः-हे राजा आदि जनो! आप लोगों को चाहिये कि अपने राज्य में बहुत धनाढ्य विद्वानों का सत्कार करके रक्षा करें, जिससे निरन्तर लक्ष्मी बढ़े॥१॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

यः शुग्मस्तुविशग्म ते रायो दामा मतीनाम्।
सोमः सुतः स इन्द्र तेऽस्ति स्वधापते मदः॥२॥

यः। शुग्मः। तुविऽशग्म। ते। रायः। दामा। मतीनाम्। सोमः। सुतः। सः। इन्द्र। ते। अस्ति। स्वधाऽपते। मदः॥२॥

पदार्थः-(**यः**) (**शग्मः**) शग्मं सुखं विद्यते यस्य सः। **अर्श आदिभ्योऽच्। शग्ममिति सुखनाम।** (निघं०३.६) (**तुविशग्म**) तुवि बहुविधानि शग्मानि सुखानि यस्य तत्सम्बुद्धौ (**ते**) तव (**रायः**) धनानि (**दामा**) दातुं योग्यः (**मतीनाम्**) मननशीलानाम् (**सोमः**) ऐश्वर्य्यसमूहः (**सुतः**) निष्पन्नः प्राप्तः (**सः**) (**इन्द्र**) महैश्वर्य्ययुक्त (**ते**) तव (**अस्ति**) (**स्वधापते**) अन्नादीनां स्वामिन् (**मदः**) आनन्दकरः॥२॥

अन्वयः-हे तुविशग्म स्वधापत इन्द्र! यस्ते शग्मो रायो मतीनां दामा सुतो मदः सोमोऽस्ति स ते धर्मकीर्तिङ्करोतु॥२॥

भावार्थः-ये मनुष्या धनाद्यैश्वर्येण धर्मविद्ये उन्नयन्ति त एव बहुसुखधना भवन्ति॥२॥

पदार्थः-हे (**तुविशग्म**) अनेक प्रकार के सुखों वाले (**स्वधापते**) अन्न आदिकों के स्वामिन् (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य से युक्त! (**यः**) जो (**ते**) आपका (**शग्मः**) सुखयुक्त (**रायः**) धनों को (**मतीनाम्**) विचारशीलों को (**दामा**) देने योग्य (**सुतः**) उत्पन्न किया गया (**मदः**) आनन्दकारक (**सोमः**) ऐश्वर्य्यों का समूह (**अस्ति**) है (**सः**) वह (**ते**) आपके धर्म्म की कीर्त्ति करने वाला हो॥२॥

भावार्थः-जो मनुष्य धन आदि ऐश्वर्य्य से धर्म्म और विद्या की उन्नति करते हैं, वे ही बहुत सुख और धन वाले होते हैं॥२॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

येन वृद्धो न शवसा तुरो न स्वाभिरूतिभिः।
सोमः सुतः स इन्द्र तेऽस्ति स्वधापते मदः॥३॥

येन। वृद्धः। न। शवसा। तुरः। न। स्वाभिः। ऊतिऽभिः। सोमः। सुतः। सः। इन्द्र। ते। अस्ति। स्वधाऽपते। मदः॥३॥

पदार्थः-(**येन**) ऐश्वर्येण (**वृद्धः**) स्थविरः (**न**) इव (**शवसा**) बलेन (**तुरः**) हिंसकः (**न**) इव (**स्वाभिः**) स्वकीयाभिः (**ऊतिभिः**) रक्षाभिः (**सोमः**) ओषधिरसः (**सुतः**) निष्पादितः (**सः**) (**इन्द्र**) राजन् (**ते**) तव (**अस्ति**) (**स्वधापते**) स्वकीयपदार्थानां धर्त्तः (**मदः**) आनन्ददः॥३॥

अन्वयः-हे स्वधापत इन्द्र! त्वं येन शवसा वृद्धो न तुरो न स्वाभिरूतिभिर्मदः स सोमः सुतस्तेऽस्ति तं त्वं वर्धय॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! येन पुरुषार्थेन विद्वांसो भूत्वा युवानोऽपि वृद्धा जायन्ते तं सततं संचिनुत॥३॥

पदार्थः-हे **(स्वधापते)** अपने पदार्थों के धारण करने वाले **(इन्द्र)** राजन्! आप **(येन)** जिस ऐश्वर्य से और **(शवसा)** बल से **(वृद्धः)** **(न)** जैसे वैसे वा **(तुरः)** हिंसक **(न)** जैसे वैसे **(स्वाभिः)** अपनी **(ऊतिभिः)** रक्षाओं से **(मदः)** आनन्द देने वाला **(सः)** वह **(सोमः)** ओषधियों का रस **(सुतः)** उत्पन्न किया गया **(ते)** आपका **(अस्ति)** है, उसकी आप वृद्धि कीजिये॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिस पुरुषार्थ से विद्वान् होकर युवा भी वृद्ध होते हैं, उसको निरन्तर सञ्चित कीजिये अर्थात् स- ह कीजिये॥३॥

पुनर्मनुष्यैः कः स्तोतव्योऽस्तीत्याह॥

फिर मनुष्यों को किसकी स्तुति करनी चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

त्यमु॑ वो॒ अप्र॑हणं गृणी॒षे शव॑स॒स्पति॑म्।

इन्द्रं॑ विश्वा॒साहं॒ नरं॒ मंहि॑ष्ठं वि॒श्वच॑र्षणिम्॥४॥

त्यम्। ऊँ॒ इति॑। व॒ः। अप्र॑ऽहनम्। गृ॒णी॒षे। शव॑सः। पति॑म्। इन्द्र॑म्। वि॒श्व॒ऽसह॑म्। नर॑म्। मंहि॑ष्ठम्। वि॒श्वऽच॑र्षणिम्॥४॥

पदार्थः-**(त्यम्)** तम् (उ) वितर्के **(वः)** युष्मान् **(अप्रहणम्)** योऽन्यायेन कञ्चिन्न प्रहन्ति **(गृणीषे)** स्तौमि। अत्र तिङ्व्यत्ययेनेट्स्थाने से। **(शवसः)** बलस्य सैन्यस्य **(पतिम्)** स्वामिनम् **(इन्द्रम्)** दुष्टाचारिशत्रुविनाशकम् **(विश्वासाहम्)** यो विश्वानि सर्वाणि शत्रुसैन्यानि सहते **(नरम्)** नेतारं नायकम् **(मंहिष्ठम्)** अतिशयेन महान्तम् **(विश्वचर्षणिम्)** विश्वचर्षणयो धार्मिका मनुष्या कार्यद्रष्टारो यस्य तम्॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! अहं वस्त्यमु अप्रहणं शवसस्पतिं विश्वासाहं मंहिष्ठं विश्वचर्षणिं नरमिन्द्रं गृणीषे प्रशंसामि यं त्वं स्तौषि॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! युष्माभिस्तस्य प्रशंसा कार्या यो नित्यं न्यायकारी सर्वसहो महाशयो युद्धादिराजकर्मसु निपुणो दुष्टविदारको दृढोत्साही नरः स्यात्॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! मैं **(वः)** आप लोगों और **(त्यम्)** उसको (उ) वितर्कपूर्वक **(अप्रहणम्)** अन्याय से नहीं किसी को मारने वाले **(शवसः)** सेना के **(पतिम्)** स्वामी **(विश्वासाहम्)** सम्पूर्ण शत्रुओं की सेनाओं को सहने वाले **(मंहिष्ठम्)** अत्यन्त महान् और **(विश्वचर्षणिम्)** धार्मिक मनुष्य काम देखने वाले जिसके उस **(नरम्)** अग्रणी **(इन्द्रम्)** दुष्टाचारी शत्रुओं के विनाशक मनुष्य की **(गृणीषे)** प्रशंसा करता हूँ, जिसकी आप स्तुति करते हो॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! आप लोगों को उसकी प्रशंसा करनी चाहिये जो नित्य न्यायकारी, सबका सहने वाला, महाशय, युद्ध आदि राजकर्म्मों में निपुण, दुष्टों का विदारक, दृढ़ उत्साही, मनुष्य होवे॥४॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

यं वर्धयन्तीद्गिरः पतिं तुरस्य राधसः।

तमिन्न्वस्य रोदसी देवी शुष्मं सपर्यतः॥५॥१६॥

यम्। वर्धयन्ति। इत्। गिरः। पतिम्। तुरस्य। राधसः। तम्। इत्। नु। अस्य। रोदसी इति। देवी इति। शुष्मम्। सपर्यतः॥५॥

पदार्थः-(**यम्**) (**वर्धयन्ति**) (**इत्**) एव (**गिरः**) सुशिक्षिता वाचः (**पतिम्**) स्वामिनम् (**तुरस्य**) दुःखहिंसकस्य (**राधसः**) धनस्य (**तम्**) (**इत्**) (**नु**) सद्यः (**अस्य**) (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**देवी**) कमनीये देदीप्यमाने (**शुष्मम्**) बलम् (**सपर्यतः**) सेवेते॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यं तुरस्य राधसः पतिमिन्द्रमिद् गिरो वर्धयन्त्यस्य देवी रोदसी शुष्मन्नु सपर्यतस्तमिद्यूयं वर्धयित्वा सेवध्वम्॥५॥

भावार्थः-ये मनुष्याः शुभगुणकर्मस्वभावे वर्धमानं जनं वर्धयन्ति ते पञ्चतत्त्वमयं राज्यं भुञ्जते॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यम्**) जिस (**तुरस्य**) दुःख के नाश करने वाले (**राधसः**) धन के (**पतिम्**) स्वामी, ऐश्वर्य्य से युक्त को (**इत्**) ही (**गिरः**) उत्तम प्रकार शिक्षित वाणियाँ (**वर्धयन्ति**) बढ़ाती हैं और (**अस्य**) इसके (**देवी**) सुन्दर प्रकाशमान (**रोदसी**) अन्तरिक्ष और पृथिवी (**शुष्मम्**) बल का (**नु**) शीघ्र (**सपर्यतः**) सेवन करते हैं (**तम्, इत्**) उसी की आप लोग वृद्धि करके सेवा करो॥५॥

भावार्थः-जो मनुष्य श्रेष्ठ गुण, कर्म्म और स्वभावों में वृद्धि को प्राप्त जन की वृद्धि करते हैं, वे पञ्चतत्त्वमय राज्य का भोग करते हैं॥५॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

तद्व उक्थस्य बर्हणेन्द्रायोपस्तृणीषणि।

विपो न यस्योतयो वि यद्रोहन्ति सुक्षितः॥६॥

तत्। वः। उक्थस्य। बर्हणा। इन्द्राय। उपऽस्तृणीषणि। विपः। न। यस्य। ऊतयः। वि। यत्। रोहन्ति। सुऽक्षितः॥६॥

पदार्थः-(**तत्**) (**वः**) युष्माकम् (**उक्थस्य**) प्रशंसितस्य कर्मणः (**बर्हणा**) वर्धनेन (**इन्द्राय**) परमैश्वर्याय (**उपस्तृणीषणि**) उपाच्छादनीयम् (**विपः**) मेधावी। **विप इति मेधाविनाम।** (निघं०३.१५) (**न**) इव (**यस्य**) (**ऊतयः**) रक्षणादीनि कर्माणि (**वि**) विशेषेण (**यत्**) (**रोहन्ति**) (**सक्षितः**) समाननिवासाः॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यस्य सक्षित ऊतयो विपो न यद्विरोहन्ति तद्व उक्थस्य बर्हणेन्द्रोयोपस्तृणीषणि वयं वर्धयेम॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! ये विपश्चिद्वत्प्रजारक्षणेनैश्वर्य्यं वर्धयन्ति ते सर्वतो वर्धन्ते॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यस्य)** जिसके **(सक्षितः)** तुल्य निवास और **(ऊतयः)** रक्षण आदि कर्म **(विपः)** बुद्धिमान् जन **(न)** जैसे वैसे **(यत्)** जिसको **(वि)** विशेष करके **(रोहन्ति)** जमाते हैं **(तत्)** उसको **(वः)** आप लोगों के **(उक्थस्य)** प्रशंसित कर्म्म के **(बर्हणा)** बढ़ाने से **(इन्द्राय)** अत्यन्त ऐश्वर्य्य के लिये **(उपस्तृणीषणि)** ढाँपने योग्य को हम लोग बढ़ावें॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो विद्वानों के सदृश प्रजा के रक्षण से ऐश्वर्य्य को बढ़ाते हैं, वे सब प्रकार से बढ़ते हैं॥६॥

पुना राजा किं कृत्वा किमनुतिष्ठेदित्याह॥

फिर राजा क्या करके क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

अविदद् दक्षं मित्रो नवीयान् पपानो देवभ्यो वस्यो अचैत्।
ससवान्स्तौलाभिर्धौतरीभिरुरुष्या पायुरभवत्सखिभ्यः॥७॥

अविदत्। दक्षम्। मित्रः। नवीयान्। पपानः। देवेभ्यः। वस्यः। अचैत्। ससऽवान्। स्तौलाभिः। धौतरीभिः। उरुष्या। पायुः। अभवत्। सखिऽभ्यः॥७॥

पदार्थः-**(अविदत्)** विन्दति **(दक्षम्)** बलम् **(मित्रः)** सर्वस्य सुहृत् **(नवीयान्)** अतिशयेन नूतनवयस्कः **(पपानः)** पालयन् **(देवेभ्यः)** विद्वद्भ्यः **(वस्यः)** अतिशयेन वासहेतुम् **(अचैत्)** चिनुयात् **(ससवान्)** प्रशस्तानि ससानि विद्यन्ते यस्य सः। **ससमित्यन्ननाम।** (निघं०२.७) **(स्तौलाभिः)** स्थूले भवानि। अत्र वर्णव्यत्ययेन थस्य स्थाने तः। **(धौतरीभिः)** शत्रूणां कम्पयित्रीभिः सेनाभिः **(उरुष्या)** रक्षेत् **(पायुः)** रक्षकः सन् **(अभवत्)** भवेत् **(सखिभ्यः)** मित्रेभ्यः॥७॥

अन्वयः-हे राजन्! यो नवीयान् पपानो मित्रस्ससवान् पायुः स्तौलाभिर्धौतरीभिर्देवेभ्यः सखिभ्यो वस्योऽचैदुरुष्या मित्रोऽभवत् सोऽतुलं दक्षमविदत्॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यः सर्वसुहृद्युवा धनधान्यादियुक्तः सर्वरक्षको महासेनो विद्वान् राजा भवेत्स एव धार्मिकरक्षणाय सत्यं बलं लभेत॥७॥

पदार्थः-हे राजन्! जो **(नवीयान्)** अतिशय थोड़ी अवस्था वाला **(पपानः)** पालन करता हुआ **(मित्रः)** सब का मित्र **(ससवान्)** अच्छे अन्न वाला **(पायुः)** रक्षक हुआ **(स्तौलाभिः)** स्थूल में हुई **(धौतरीभिः)** शत्रुओं को कम्पाने वाली सेनाओं से **(देवेभ्यः)** विद्वानों के और **(सखिभ्यः)** मित्रों के लिये **(वस्यः)** अत्यन्त वास का कारण **(अचैत्)** बटोरे और **(उरुष्या)** रक्षा करे और सब का मित्र **(अभवत्)** हो, वह अतुल **(दक्षम्)** बल को **(अविदत्)** पाता है॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो सब का मित्र, युवा, धन-धान्य आदि से युक्त, सब का रक्षक, बड़ी सेना वाला, विद्वान् राजा होवे, वही धार्म्मिकों के रक्षण के लिये सत्य बल को प्राप्त होवे॥७॥

मनुष्यैः कथं वर्त्तित्वा किं प्राप्य किं कर्त्तव्यमित्याह॥

अब मनुष्यों को कैसा वर्त्ताव करके क्या प्राप्त करके क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

ऋतस्य पथि वेधा अपायि श्रिये मनांसि देवासो अक्रन्।

दधानो नाम महो वचोभिर्वपुर्दृशये वेन्यो व्यावः॥८॥

ऋतस्य। पथि। वेधाः। अपायि। श्रिये। मनांसि। देवासः। अक्रन्। दधानः। नाम। महः। वचःऽभिः। वपुः। दृशये। वेन्यः। वि। आवरित्यावः॥८॥

पदार्थः-(**ऋतस्य**) सत्यस्य (**पथि**) मार्गे (**वेधाः**) मेधावी (**अपायि**) पाति (**श्रिये**) (**मनांसि**) (**देवासः**) विद्वांसः (**अक्रन्**) कुर्वन्ति (**दधानः**) (**नाम**) प्रख्यातिम् (**महः**) कीर्त्तियोगान्महत् (**वचोभिः**) वचनैः (**वपुः**) सुरूपं शरीरम्। **वपुरिति रूपनाम।** (निघं०३.७) (**दृशये**) दर्शनाय (**वेन्यः**) कमनीयः (**वि**) (**आवः**) रक्षति॥८॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा वेधा ऋतस्य पथि श्रियेऽपायि देवासो मनांस्यक्रन् वचोभिर्महो नाम दृशये वपुश्च दधानो वेन्यः सन् व्यावस्तथा यूयमपि प्रयतध्वम्॥८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। मनुष्यैः सर्वदा धर्मपथि गत्वा धनोन्नतये मनांसि निश्चेतव्यानि तथा धनप्राप्तेन धनेनानाथपालनं विद्याधर्मवृद्धिमौषधदानं मार्गशुद्धिं च कृत्वा प्रशंसा सर्वासु दिक्षु प्रसारणीया॥८॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**वेधाः**) बुद्धिमान् (**ऋतस्य**) सत्य के (**पथि**) मार्ग में (**श्रिये**) लक्ष्मी के लिये (**अपायि**) रक्षा करता है और (**देवासः**) विद्वान् जन (**मनांसि**) मनों को (**अक्रन्**) करते हैं और (**वचोभिः**) वचनों से (**महः**) कीर्ति के योग से बड़ी (**नाम**) प्रसिद्धि को (**दृशये**) दिखाने के लिये (**वपुः**) अच्छे रूप वाले शरीर को (**दधानः**) धारण करता (**वेन्यः**) सुन्दर होता और (**वि, आवः**) रक्षा करता है, वैसे आप लोग भी यत्न करो॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। मनुष्यों को चाहिये कि सर्वदा धर्ममार्ग में चलकर धन की उन्नति के लिये मनों को निश्चित करें और धन से प्राप्त हुए धन से अनाथों का पालन, विद्या और धन की वृद्धि तथा औषधदान और मार्ग शुद्धि करके सब दिशाओं में प्रशंसा विस्तारें॥८॥

अथ राजप्रजाजनाः परस्परस्य हितं कथं कुर्य्युरित्याह॥

अब राजा और प्रजाजन का हित कैसे करें, इस विषय को कहते हैं॥

द्युमत्तमं दक्षं धेह्यस्मे सेधा जनानां पूर्वीररातीः।

वर्षीयो वयः कृणुहि शचीभिर्धनस्य सातावस्मां अविड्ढि॥९॥

द्युमत्ऽतमम्। दक्षम्। धेहि। अस्मे इति। सेध। जनानाम्। पूर्वीः। अरातीः। वर्षीयः। वयः। कृणुहि। शचीभिः। धनस्य। सातौ। अस्मान्। अविड्ढि॥९॥

पदार्थः-(**द्युमत्तमम्**) प्रशस्ता द्यौर्विद्याप्रकाशो विद्यते यस्य यस्मिंस्तदतिशयितम् (**दक्षम्**) बलम् (**धेहि**) (**अस्मे**) अस्मासु (**सेधा**) साध्नुहि। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**जनानाम्**) मनुष्याणाम् (**पूर्वीः**) प्राचीनाः (**अरातीः**) अदानक्रियाः (**वर्षीयः**) अतिशयेन श्रेष्ठम् (**वयः**) कमनीयमायुः (**कृणुहि**) (**शचीभिः**) प्रज्ञाभिः कर्मभिर्वा प्रजाभिः सह (**धनस्य**) (**सातौ**) संविभागे (**अस्मान्**) (**अविड्ढि**) प्रवेशय॥९॥

अन्वयः-हे राजन्! त्वं शचीभिरस्मे द्युमत्तमं दक्षं धेहि कार्य्यं सेधा जनानां पूर्वीररातीर्निवर्त्य वर्षीयो वयः कृणुहि धनस्य सातावस्मानविड्ढि॥९॥

भावार्थः-प्रजाजनै राजैवं प्रार्थनीयो हे राजंस्त्वं यद्यस्मान् बलवत्तमान् कृपणतारहितान् ब्रह्मचर्य्यादिना दीर्घायुषः पुरुषार्थिनः सर्वतो रक्षयित्वाऽभयान् कृत्वा धर्मार्थकाममोक्षसाधने प्रवेशयेस्तर्हि भवन्तं वयं सर्वदा वर्धयेम॥९॥

पदार्थः-हे राजन्! आप (**शचीभिः**) बुद्धियों वा कर्मों वा प्रजाओं के साथ (**अस्मे**) हम लोगों में (**द्युमत्तमम्**) प्रशंसित अत्यन्त विद्या के प्रकाश से युक्त (**दक्षम्**) बल को (**धेहि**) धारण करिये और कार्य्य को (**सेधा**) सिद्ध कीजिये और (**जनानाम्**) मनुष्यों की (**पूर्वीः**) प्राचीन (**अरातीः**) नहीं दान करने की क्रियाओं को दूर कीजिये तथा (**वर्षीयः**) अतिशय श्रेष्ठ (**वयः**) सुन्दर अवस्था को (**कृणुहि**) करिये और (**धनस्य**) धन के (**सातौ**) संविभाग में (**अस्मान्**) हम लोगों को (**अविड्ढि**) प्रवेश कराइये॥९॥

भावार्थः-प्रजाजनों को राजा की ऐसी प्रार्थना करनी चाहिये कि हे राजन्! आप जो हम लोगों को बलयुक्त, कृपणता से रहित और ब्रह्मचर्य्य आदि से दीर्घ अवस्था वाले पुरुषार्थी और सब प्रकार से रक्षा करके भयरहित करके धर्म्म, अर्थ, काम और मोक्ष के साधन में प्रवेश कराइये तो आपकी हम लोग सर्वदा वृद्धि करें॥९॥

अथ राजप्रजाजनाः परस्परं कुत्र प्रेरयेयुरित्याह॥

अब राजा और प्रजाजन परस्पर कहाँ प्रेरणा करें, इस विषय को कहते हैं॥

इन्द्र॒ तुभ्य॒मिन्म॑घवन्नभूम व॒यं दा॒त्रे ह॑रिवो॒ मा वि वे॑नः।

नकि॑रा॒पिर्द॑दृशे मर्त्य॒त्रा किम॒ङ्ग र॑ध्र॒चोद॑नं त्वाहुः॥ १०॥ १७॥

इन्द्र॑। तुभ्य॑म्। इत्। म॒घ॒ऽव॒न्। अ॒भू॒म॒। व॒यम्। दा॒त्रे। ह॒रि॒ऽवः॒। मा। वि। वे॒नः॒। नकि॑ः। आ॒पिः। द॒दृ॒शे॒। म॒र्त्य॒ऽत्रा। किम्। अ॒ङ्ग। र॒ध्र॒ऽचोद॑नम्। त्वा॒। आ॒हुः॒॥ १०॥

पदार्थः-(**इन्द्र**) पूर्णविद्य राजन् (**तुभ्यम्**) (**इत्**) एव (**मघवन्**) बहुधनयुक्त (**अभूम**) भवेम (**वयम्**) (**दात्रे**) दानकरणशीलाय (**हरिवः**) प्रशंसितमनुष्ययुक्त (**मा**) (**वि**) विरोधे (**वेनः**) कामयथाः (**नकिः**) निषेधे (**आपिः**) य आप्नोति सः (**ददृशे**) पश्यामि (**मर्त्यत्रा**) मर्त्येषु (**किम्**) (**अङ्ग**) अङ्गवद्वर्त्तमान (**रध्रचोदनम्**) धनस्य प्राप्तये प्रेरकम् (**त्वा**) (**आहुः**) कथयन्ति॥१०॥

अन्वयः-हे अङ्ग हरिवो मघवन्निन्द्र! दात्रे तुभ्यमिद्दातारो वयमभूम त्वमस्मान्मा वि वेन आपिः सन्नहं भवन्तं विरुद्धदृष्ट्या नकिर्ददृशे मर्त्यत्रा किमिच्छसि यतो रध्रचोदनं त्वा विद्वांस आहुस्तस्माद् वयं त्वाश्रयेम॥१०॥

भावार्थः-हे राजप्रजाजना यथा यूयं परस्परस्मै धनादिना सुखदानेन सर्वान्त्सत्कर्मसु प्रेरयेत तथा मिलित्वा सत्यं न्यायपालनानुष्ठानं कुर्यात्॥१०॥

पदार्थः-हे **(अङ्ग)** अङ्ग के तुल्य वर्त्तमान **(हरिवः)** प्रशंसित मनुष्यों से और **(मघवन्)** बहुत धनों से युक्त **(इन्द्र)** पूर्णविद्या वाले राजन्! **(दात्रे)** दान करने के स्वभाव वाले **(तुभ्यम्)** आपके लिये **(इत्)** ही देने वाले **(वयम्)** हम लोग **(अभूम)** होवें आप हम लोगों की **(मा)** मत **(वि, वेनः)** कामना करिये और **(आपिः)** व्याप्त होने वाला हुआ मैं आपको विरुद्ध दृष्टि से **(नकिः)** नहीं **(ददृशे)** देखता हूँ तथा **(मर्त्यत्रा)** मनुष्यों में आप **(किम्)** किस की इच्छा करते हो जिससे **(रध्रचोदनम्)** धन की प्राप्ति के लिये प्रेरणा करने वाले आपको विद्वान् जन **(आहुः)** कहते हैं, इससे हम लोग आपका आश्रयण करें॥१०॥

भावार्थः-हे राजा और प्रजा जनो! जैसे आप लोग आपस के लिये धन आदि से और सुख दान से सबको श्रेष्ठ कर्म्मों में प्रेरणा करिये, वैसे मिल के सत्य, न्यायपालन का अनुष्ठान करिये॥१०॥

मनुष्यैः किमकृत्वा किमनुष्ठेयमित्याह॥

मनुष्यों को क्या नहीं करके क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

मा जस्व॑ने वृषभ नो ररीथा मा ते॑ रे॒वतः॑ स॒ख्ये रि॑षाम।

पू॒र्वीष्ट॑ इन्द्र नि॒ःषिधो॒ जने॑षु ज॒ह्यसु॑ष्वी॒न् प्र वृ॑हापृ॑णतः॥११॥

मा। जस्व॑ने। वृ॒ष॒भ॒। नः॒। र॒री॒थाः॒। मा। ते॒। रे॒वतः॑। स॒ख्ये। रि॒षा॒म॒। पू॒र्वीः॒। ते॒। इ॒न्द्र॒। नि॒ःऽसिधः॑। जने॑षु। ज॒हि। असु॑स्वीन्। प्र। वृ॒ह॒। अपृ॑णतः॥११॥

पदार्थः-**(मा)** निषेधे **(जस्वने)** अन्यायेन परस्वप्रापकाय दुष्टाय राज्ञे। **जसतीति गतिकर्मा।** (निघं०२.१४) **(वृषभ)** बलिष्ठ **(नः)** अस्मान् **(ररीथाः)** दद्याः **(मा)** **(ते)** तव **(इन्द्र)** दुःखविदारक राजन् **(निःषिधः)** निःश्रेयसकर्त्र्यः क्रियाः **(जनेषु)** **(जहि)** **(असुष्वीन्)** अभिषवस्याकर्तॄन् **(प्र)** **(वृह)** पृथक्कुरु **(अपृणतः)** दुःखदातुर्दुर्जनात्॥११॥

अन्वयः-हे वृषभेन्द्र! त्वं जस्वने नोऽस्मान्मा ररीथा वयं ते रेवतः सख्ये मा रिषाम यास्ते जनेषु पूर्वीर्निःषिधस्सन्ति ता ररीथा असुष्वीन् जह्यपृणतोऽस्मान् प्र वृह॥११॥

भावार्थः-हे राजन्! येऽस्मान् पीडयेयुस्तदधीनान्मा कुर्य्याः श्रेयसि क्रियाः प्रापयेस्तथा वयमप्येतत्सर्वं त्वदर्थमनुतिष्ठेम, एवं सखायो भूत्वाऽभीष्टान् कामान्त्सर्वे वयं प्राप्नुयाम॥११॥

पदार्थः-हे **(वृषभ)** बलयुक्त **(इन्द्र)** दुःखों के नाश करने वाले राजन्! आप **(जस्वने)** अन्याय से दूसरे के धन को अन्यत्र प्राप्त कराने वाले दुष्ट राजा के लिये **(नः)** हम लोगों को **(मा)** मत **(ररीथाः)**

दीजिये और हम लोग **(ते)** आप **(रेवतः)** बहुत धन वाले के **(सख्ये)** मित्रपने के लिये **(मा)** नहीं **(रिषाम)** क्रुद्ध होवें और जो **(ते)** आपके **(जनेषु)** मनुष्यों में **(पूर्वीः)** प्राचीन **(निःषिधः)** सुखकारक क्रियायें हैं उनको दीजिये **(असुष्वीन्)** उत्पत्ति के नहीं करने वालों का **(जहि)** त्याग करिये और **(अपृणतः)** दुःख के देने वाले दुर्जन से हम लोगों के **(प्र, वृह)** पृथक् करिये॥११॥

भावार्थः-हे राजन्! जो हम लोगों को पीड़ा देवें उनके आधीन मत करिये और कल्याण में क्रियाओं को प्राप्त कराइये, वैसे हम लोग भी इस सब को आपके लिये करें। इस प्रकार मित्र होकर अभीष्ट मनोरथों को सब हम लोग प्राप्त होवें॥११॥

पुनः स राजा किंवत्किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा किसके सदृश क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

उदुभ्राणीव स्तनयन्नियर्तीन्द्रो राधांस्यश्व्यानि गव्या।
त्वमसि प्रदिवः कारुधाया मा त्वादामान आ दभन्मघोनः॥१२॥

उत्। अभ्राणिऽइव। स्तनयन्। इयर्ति। इन्द्रः। राधांसि। अश्व्यानि। गव्या। त्वम्। असि। प्रऽदिवः। कारुऽधायाः। मा। त्वा। अदामानः। आ। दभन्। मघोनः॥१२॥

पदार्थः-(**उद्**) अपि (**अभ्राणीव**) वायुदलानीव (**स्तनयन्**) शब्दयन् (**इयर्त्ति**) प्राप्नोति (**इन्द्रः**) विद्युदिव (**राधांसि**) सर्वसुखकराणि धनानि (**अश्व्यानि**) अश्वेषु हितानि (**गव्या**) गोषु हितानि (**त्वम्**) (**असि**) (**प्रदिवः**) प्रकर्षेण कमनीयान् (**कारुधायाः**) विदुषां शिल्पानां धारयिता (**मा**) निषेधे (**त्वा**) त्वाम् (**अदामानः**) अदातारः (**आ**) (**दभन्**) हिंसेयुः (**मघोनः**) धनाढ्यान्॥१२॥

अन्वयः-हे राजन्! यतः स्तनयन् कारुधाया इन्द्रोऽभ्राणीवाश्व्यानि गव्या राधांस्युदियर्त्ति प्रदिवो मघोनः स ग्रहीतास्ति यथाऽदामानस्त्वा मा आ दभन्मघोनो मा आदभंस्तथा त्वं यदि कृतवानसि तर्हि त्वयि को नतो भवति॥१२॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यस्याभ्रघटावत्सेना बलवती विद्युद्वत्पराक्रमयुक्ता वर्त्तते येन सर्वे गुणिनः सङ्गृह्यन्ते स एव धनधान्यराज्यपश्वादीन् प्राप्नोति॥१२॥

पदार्थः-हे राजन्! जिससे (**स्तनयन्**) शब्द करता हुआ (**कारुधायाः**) विद्वान् शिल्पी जनों का धारण करने वाला (**इन्द्रः**) बिजुली के सदृश वा (**अभ्राणीव**) वायु के दलों के सदृश (**अश्व्यानि**) घोड़ों में हितकारक (**गव्या**) गौओं में हितकारक (**राधांसि**) सम्पूर्ण सुखों के करने वाले धनों को (**उत्**) भी (**इयर्त्ति**) प्राप्त होता है और (**प्रदिवः**) अत्यन्त सुन्दर (**मघोनः**) धन से युक्त जनों को वह ग्रहण करने वाला है और [जैसे] (**अदामानः**) आदाता जन (**त्वा**) आपको (**मा**) मत (**आ, दभन्**) हिंसा करें और धन से युक्त जनों की मत हिंसा करें, वैसे (**त्वम्**) आप जो कर चुके (**असि**) हैं तो आप में कौन नम्र होता है॥१२॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जिसकी मेघों की घटाओं के समान बलवती सेना, बिजुली के समान पराक्रमयुक्त वर्त्तमान है और जिससे सब गुणी स- ह किये जाते हैं; वही धन, धान्य, राज्य और पशु आदि पदार्थों को प्राप्त होता है॥१२॥

कोऽत्र राजा भवितुं योग्य इत्याह॥

कौन इस पृथिवी पर राजा होने के योग्य है, इस विषय को कहते हैं॥

अध्व॑र्यो वीर॒ प्र म॒हे सु॒ताना॒मिन्द्रा॑य भर॒ स ह्य॑स्य॒ राजा॑।

यः पू॒र्व्याभि॑रु॒त नूत॑नाभिर्गी॒र्भिर्वा॑वृ॒धे गृ॑ण॒तामृषी॑णाम्॥ १३॥

अध्व॑र्यो इति॑। वी॒र॒। प्र। म॒हे। सु॒ताना॑म्। इन्द्रा॑य। भ॒र॒। सः। हि। अ॒स्य॒। राजा॑। यः। पू॒र्व्याभि॑ः। उ॒त। नूत॑नाभिः। गी॒ऽ:भिः। व॒वृ॒धे। गृ॒ण॒ताम्। ऋषी॑णाम्॥ १३॥

पदार्थ:-(**अध्वर्यो**) अहिंसक (**वीर**) दुष्टानां हिंसक (**प्र**) (**महे**) महते (**सुतानाम्**) निष्पन्नानां पदार्थानाम् (**इन्द्राय**) परमैश्वर्याय (**भर**) धर (**सः**) (**हि**) (**अस्य**) (**राजा**) (**यः**) (**पूर्व्याभिः**) पूर्वैः सेविताभिः (**उत**) अपि (**नूतनाभिः**) नवीनाभिर्वर्तमानाभिः (**गीर्भिः**) (**वावृधे**) वर्धते। अत्र **तुजादीनामि**त्यभ्यासदैर्घ्यम्। (**गृणताम्**) प्रशंसकानाम् (**ऋषीणाम्**) मन्त्रार्थविदाम्॥१३॥

अन्वय:-हे अध्वर्यो वीर! यो राजा गृणतामृषीणां पूर्व्याभिरुत नूतनाभिर्गीर्भिर्वावृधे स ह्यस्य राष्ट्रस्य राजा भवितुं योग्यस्तथा त्वं सुतानां मह इन्द्रायैतान् प्र भर॥१३॥

भावार्थ:-स एव राज्यं पालयितुं वर्धयितुं च शक्नोति य आप्तैस्सहितः सुशिक्षितो न्यायेशो भवत्स एव विद्वन् भवति यः शिष्टेभ्यो नित्यमुपदेशं शृणोति॥१३॥

पदार्थ:-हे (**अध्वर्यो**) नहीं हिंसा करने वाले (**वीर**) दुष्टों की हिंसा करने वाले! (**यः**) जो (**राजा**) राजा (**गृणताम्**) प्रशंसा करने वाले (**ऋषीणाम्**) मन्त्रों के अर्थ जानने वालों की (**पूर्व्याभिः**) पूर्व जनों से सेवित (**उत**) भी (**नूतनाभिः**) नवीन वर्त्तमान (**गीर्भिः**) वाणियों से (**वावृधे**) वृद्धि को प्राप्त होता है (**सः, हि**) वही (**अस्य**) इस राज्य का राजा होने को योग्य हो, वैसे आप (**सुतानाम्**) उत्पन्न हुए पदार्थों के (**महे**) बड़े (**इन्द्राय**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य के लिये इन को (**प्र, भर**) धारण करिये॥१३॥

भावार्थ:-वही राज्य पालन करने और बढ़ाने को समर्थ होता है जो यथार्थवक्ताओं के सहित, उत्तम प्रकार शिक्षित और न्यायेश होवे और वही विद्वान् होता है, जो शिष्ट जनों से नित्य उपदेश सुनता है॥१३॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

अ॒स्य मदे॑ पु॒रु वर्पां॑सि वि॒द्वानिन्द्रो॑ वृ॒त्राण्य॑प्र॒ती ज॑घान।

तमु॒ प्र हो॑षि॒ मधु॑मन्तमस्मै॒ सोमं॑ वी॒राय॑ शि॒प्रिणे॒ पिब॑ध्यै॥ १४॥

अस्य। मदे। पुरु। वर्पांसि। विद्वान्। इन्द्रः। वृत्राणि। अप्रति। जघान। तम्। ऊँ इति। प्र। होषि। मधुऽमन्तम्। अस्मै। सोमम्। वीराय। शिप्रिणे। पिबध्यै॥ १४॥

पदार्थः-(**अस्य**) ओषधिगणस्य (**महे**) आनन्दकरे रसे (**पुरु**) बहूनि (**वर्पांसि**) सुन्दराणि रूपाणि (**विद्वान्**) (**इन्द्रः**) सूर्य्यः (**वृत्राणि**) मेघान् इव (**अप्रती**) अप्रतीतानि। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**जघान**) हन्ति (**तम्**) (**उ**) (**प्र**) (**होषि**) जुहोषि (**मधुमन्तम्**) मधुरादिगुणयुक्तद्रव्यसहितम् (**अस्मै**) (**सोमम्**) महौषधिरसम् (**वीराय**) निर्भयाय (**शिप्रिणे**) उत्तमहनुनासिकाय (**पिबध्यै**) पातुम्॥१४॥

अन्वयः-यो विद्वान् यथेन्द्रः सूर्यो वृत्राणि जघान तथाऽस्य मदेऽप्रती पुरु वर्पांसि निर्माय स्वीकरोतु तमु मधुमन्तं सोममस्मै शिप्रिणे वीराय पिबध्यै त्वं प्र होषि तस्मात् सत्कर्तव्योऽसि॥१४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये सूर्यवन्न्यायविजयप्रकाशका युक्ताहारविहारा महौषधिरसस्य पातारः सन्ति ते विविधरूपान् पदार्थान् प्राप्याऽस्मिञ्जगत्यानन्दन्ति॥१४॥

पदार्थः-जो (**विद्वान्**) विद्यायुक्त, जैसे (**इन्द्रः**) सूर्य्य (**वृत्राणि**) मेघों का (**जघान**) नाश करता है, वैसे (**अस्य**) इस ओषधियों के समूह के (**मदे**) आनन्दकारक रस में (**अप्रती**) नहीं विश्वास किये गये (**पुरु**) बहुत (**वर्पांसि**) सुन्दर रूपों का निर्म्माण करके स्वीकार करे (**तम्**) उसके प्रति (**उ**) भी (**मधुमन्तम्**) मधुर आदि गुणों से युक्त द्रव्य के साथ (**सोमम्**) बड़ी ओषधियों के रस को (**अस्मै**) इस (**शिप्रिणे**) उत्तम ठुड्ढी और नासिका वाले (**वीराय**) भयरहित जन के लिये (**पिबध्यै**) पीने को आप (**प्र, होषि**) देते हो, इससे सत्कार करने योग्य हो॥१४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो सूर्य्य के सदृश न्याय और विजय के प्रकाशक, युक्त आहार और विहार वाले और महौषधियों के रस को पीने वाले हैं, वे अनेक प्रकार के पदार्थों को प्राप्त होकर इस जगत् में आनन्द करते हैं॥१४॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

पाता सुतमिन्द्रो अस्तु सोमं हन्ता वृत्रं वज्रेण मन्दसानः।
गन्ता यज्ञं परावतश्चिदच्छा वसुर्धीनामविता कारुधायाः॥ १५॥ १८॥

पाता। सुतम्। इन्द्रः। अस्तु। सोमम्। हन्ता। वृत्रम्। वज्रेण। मन्दसानः। गन्ता। यज्ञम्। पराऽवतः। चित्। अच्छ। वसुः। धीनाम्। अविता। कारुऽधायाः॥ १५॥

पदार्थः-(**पाता**) पानकर्त्ता। अत्राविततेति विहाय सर्वत्र तृन् प्रत्ययः। (**सुतम्**) निष्पन्नम् (**इन्द्रः**) परमैश्वर्यप्रदः (**अस्तु**) (**सोमम्**) ओषधिरसम् (**हन्ता**) (**वृत्रम्**) मेघम् (**वज्रेण**) शस्त्राऽस्त्रसमूहेन (**मन्दसानः**) कामयमानः (**गन्ता**) (**यज्ञम्**) सत्क्रियामयं व्यवहारम् (**परावतः**) दूरदेशात् (**चित्**) अपि (**अच्छा**) (**वसुः**) वासयिता (**धीनाम्**) उत्तमानां। **धीरिति कर्मनाम।** (निघं०२.१) (**अविता**) रक्षकः (**कारुधायाः**) कारूणां शिल्पीनां धारकः॥१५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! य इन्द्रस्सुतं सोमं पाता वज्रेण मन्दसानो वृत्रं सूर्य इव शत्रून् हन्ता यज्ञं गन्ता परावतश्चित्कारुधाया वसुः सन् धीनामच्छाऽविता वर्त्तत इन्द्रोऽस्तु तं यूयं सततं सत्कुरुत॥१५॥

भावार्थः-ये राजादयो मनुष्या वैद्यकशास्त्रसम्पादितमोषधिरसं पिबन्ति शस्त्रास्त्रविद्यया दुष्टान्निवार्य न्यायप्रचाराख्यं प्रचार्य्य सत्कर्मानुष्ठातारः शिल्पविद्याविदः सङ्गृह्यालस्यं विहाय सत्कर्मसु प्रवर्त्तन्ते त एवात्र प्रशंसनीया भवन्ति॥१५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(इन्द्रः)** अत्यन्त ऐश्वर्य्य का देने वाला **(सुतम्)** उत्पन्न हुए **(सोमम्)** ओषधिरस को **(पाता)** पान करने वाला **(वज्रेण)** शस्त्र और अस्त्रों के समूह से **(मन्दसानः)** कामना करता हुआ **(वृत्रम्)** मेघ को सूर्य्य जैसे वैसे शत्रुओं को **(हन्ता)** मारने **(यज्ञम्)** श्रेष्ठ क्रियास्वरूप व्यवहार को **(गन्ता)** प्राप्त होने **(परावतः)** दूर देश से **(चित्)** भी **(कारुधायाः)** शिल्पी जनों का धारण करने वाला और **(वसुः)** बसाने वाला होता हुआ **(धीनाम्)** उत्तम कर्म्मों की **(अच्छा)** अच्छे प्रकार **(अविता)** रक्षा करने वाला है वह अत्यन्त ऐश्वर्य्य से युक्त **(अस्तु)** हो, उसका आप लोग निरन्तर सत्कार करो॥१५॥

भावार्थः-जो राजा आदि मनुष्य वैद्यकशास्त्र की रीति से उत्पन्न किये ओषधियों के रस को पीते हैं तथा शस्त्र और अस्त्र की विद्या से दुष्टों का निवारण करके न्यायप्रचार नामक कर्म्म का प्रचार करके सत्कर्म्म के करने और शिल्पविद्या के जानने वालों को संग्रह करके आलस्य का त्याग करके श्रेष्ठ कर्म्मों में प्रवृत्त होते, वे ही यहाँ प्रशंसनीय होते हैं॥१५॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

इदं त्यत्पात्रमिन्द्रपानमिन्द्रस्य प्रियममृतमपायि।

मत्सद्यथा सौमनसाय देवं व्यस्मद्द्वेषो युयवद् व्यंहः॥१६॥

इदम्। त्यत्। पात्रम्। इन्द्रऽपानम्। इन्द्रस्य। प्रियम्। अमृतम्। अपायि। मत्सत्। यथा। सौमनसाय। देवम्। वि। अस्मत्। द्वेषः। युयवत्। वि। अंहः॥१६॥

पदार्थः-**(इदम्)** **(त्यत्)** तत् **(पात्रम्)** पिबति पाति वा येन **(इन्द्रपानम्)** इन्द्रस्यौषधिरसस्यैश्वर्यस्य वा पानं रक्षणं वा **(इन्द्रस्य)** इन्द्रियस्वामिनो जीवस्य **(प्रियम्)** प्रीतिकरम् **(अमृतम्)** सुस्वादिष्ठम् **(अपायि)** पिबति **(मत्सत्)** आनन्दति **(यथा)** **(सौमनसाय)** सुमनसो भवाय **(देवम्)** दिव्यगुणकर्म **(वि)** **(अस्मत्)** **(द्वेषः)** द्वेषादियुक्तं कर्म शत्रुं वा **(युयवत्)** वियोजयति **(वि)** **(अंहः)** पापाचरणम्॥१६॥

अन्वयः-हे विद्वँस्त्वं सौमनसाय कश्चिद् यथेदं त्यदिन्द्रपानमिन्द्रस्य प्रियममृतं पात्रमपायि येन मत्सद्देवमपाय्यस्मद्द्वेषो वि युयवदस्मदंहो वि युयवत्तथाऽऽचर॥१६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! येन मनसि प्रमादो द्वेषश्च न स्यात्तदेव पातव्यम्। यथा स्वात्मानं सर्वे रक्षन्ति तथैवाऽन्यान्त्सर्वान् रक्षन्तु॥१६॥

पदार्थः-हे विद्वन्! आप **(सौमनसाय)** अच्छे मन के होने के लिये **(यथा)** जैसे **(इदम्)** इस **(त्यत्)** उस **(इन्द्रपानम्)** ओषधियों के रस वा ऐश्वर्य्य के पान वा रक्षण को **(इन्द्रस्य)** इन्द्रियों के स्वामी जीव के **(प्रियम्)** प्रीतिकारक **(अमृतम्)** अच्छे प्रकार स्वादिष्ठ **(पात्रम्)** जिससे पान करता वा रक्षा करता है उसको **(अपायि)** पीता है। और जिससे **(मत्सत्)** आनन्दित होता है तथा **(देवम्)** श्रेष्ठ गुणकर्मयुक्त वस्तु का पान करता है और **(अस्मत्)** हम लोगों से **(द्वेषः)** द्वेष आदि से युक्त कर्म्म वा शत्रु को **(वि, युयवत्)** वियुक्त करता है और हम लोगों से **(अंहः)** पापाचरण को **(वि)** पृथक् करता है, वैसा आचरण करो॥१६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जिससे मन में प्रमाद और द्वेष न होवे उसी का पान करना चाहिये और जैसे अपने आत्मा की सब रक्षा करते हैं, वैसे अन्य सबों की रक्षा करें॥१६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

एना मन्दानो जहि शूर शत्रूञ्जामिमजामिं मघवन्नमित्रान्।

अभिषेणाँ अभ्या३देदिशानान् पराच इन्द्र प्र मृणा जही च॥१७॥

एना। मन्दानः। जहि। शूर। शत्रून्। जामिम्। अजामिम्। मघऽवन्। अमित्रान्। अभिऽसेनान्। अभि। आऽदेदिशानान्। पराचः। इन्द्र। प्र। मृण। जहि। च॥१७॥

पदार्थः-**(एना)** एनेन **(मन्दानः)** प्रकाशितः **(जहि)** **(शूर)** दुष्टानां हिंसक **(शत्रून्)** धर्मविरोधिनः **(जामिम्)** जामात्रादिकम् **(अजामिम्)** अन्यामसम्बन्धाम् **(मघवन्)** बहुधनयुक्त **(अमित्रान्)** मित्रभावरहितान् **(अभिषेणान्)** आभिमुख्या सेना येषां तान् **(अभि)** **(आदेदिशानान्)** भृशमाज्ञाकर्त्तॄन् **(पराचः)** पराङ्मुखान् **(इन्द्र)** दुष्टविदारक **(प्र)** **(मृणा)** बाधस्व। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(जही)** अत्रापि पूर्ववद्दीर्घः **(च)**॥१७॥

अन्वयः-हे शूर मघवन्निन्द्र! त्वमेना मन्दानः सन् जामिमजामिं शत्रूनमित्रान् जहि। अभिषेणानादेदिशानान् पराचोऽभि प्रमृणा। अविद्यादिदोषाँश्च जही॥१७४॥

भावार्थः-हे राजन्त्सेनापते! त्वं ब्रह्मचर्येण सोमपानादिना च स्वयमानन्दितः सन् वीरानानन्द्य सर्वाञ्छत्रून्विजयस्व॥१७॥

पदार्थः-हे **(शूर)** दुष्टों को मारने वाले **(मघवन्)** बहुत धनों से युक्त **(इन्द्र)** दुष्टों के विदारक! आप **(एना)** इससे **(मन्दानः)** प्रशंसित हुए **(जामिम्)** जवाँई आदि को **(अजामिम्)** दूसरी सम्बन्ध रहित को **(शत्रून्)** धर्म्म के विरोधियों **(अमित्रान्)** मित्रभाव रहित वैरियों का **(जहि)** त्याग करो **(अभिषेणान्)**

सन्मुख सेना जिनकी उन **(आदेदिशानान्)** अत्यन्त आज्ञा करने वाले **(पराचः)** पश्चिम की ओर अर्थात् पीछे मुख किये हुओं की **(अभि, प्र, मृणा)** बाधा करो **(च)** और अविद्या आदि दोषों का **(जही)** त्याग करो॥१७॥

भावार्थः-हे राजन् सेना के स्वामिन्! आप ब्रह्मचर्य और सोमलता के रस के पान आदि से स्वयं आनन्दित हुए वीरों को आनन्द देकर सम्पूर्ण शत्रुओं को जीतो॥१७॥

पुना राजप्रजाजनैः सततं किमनुष्ठेयमित्याह॥

फिर राजा और प्रजाजनों को निरन्तर क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

आसु ष्मा णो मघवन्निन्द्र पृत्स्व१स्मभ्यं महि वरिवः सुगं कः।
अपां तोकस्य तनयस्य जेष इन्द्र सूरीन् कृणुहि स्मा नो अर्धम्॥१८॥

आसु। स्म। नः। मघऽवन्। इन्द्र। पृत्ऽसु। अस्मभ्यम्। महि। वरिवः। सुऽगम्। करिति कः। अपाम्। तोकस्य। तनयस्य। जेषे। इन्द्र। सूरीन्। कृणुहि। स्म। नः। अर्धम्॥१८॥

पदार्थः-**(आसु)** **(स्मा)** एव। अत्र **निपातस्य** दीर्घः। **(नः)** अस्मान् **(मघवन्)** महाधनयुक्त **(इन्द्र)** दुष्टानां विदारक **(पृत्सु)** वीरमनुष्यसेनासु **(अस्मभ्यम्)** **(महि)** महत् **(वरिवः)** सेवनम् **(सुगम्)** सुष्ठु गच्छन्ति यस्मिँस्तत् **(कः)** कुर्याः **(अपाम्)** प्राणानाम् **(तोकस्य)** सद्यो जातस्याऽपत्यस्य **(तनयस्य)** सुकुमारस्य **(जेषे)** जेतुम् **(इन्द्र)** सकलैश्वर्यप्रद **(सूरीन्)** युद्धविद्याकुशलान् विपश्चितः **(कृणुहि)** **(स्मा)** एव। अत्रापि **निपातस्य चे**ति दीर्घः। **(नः)** **(अर्धम्)** सुसमृद्धिम्॥१८॥

अन्वयः-हे मघवनिन्द्र! त्वमासु पृत्स्वस्मभ्यं महि सुगं वरिवः कः, नोऽस्मान्त्स्मा विजयिनः कः। हे इन्द्र! त्वमपां तोकस्य तनस्य बोधाय शत्रूञ्जेषे नोऽस्मास्सूरीनर्धं स्मा कृणुहि॥१८॥

भावार्थः-राजा तथा यत्नमातिष्ठेद् यथा स्वकीयाः सेनाः सुशिक्षिता विजयिन्यो बलवत्यो भवेयुः सर्वे बालकाः कन्याश्च ब्रह्मचर्येण विद्यायुक्ता भूत्वा समृद्धिं प्राप्ताः सत्यं न्यायं धर्मं सततं सेवेरन्॥१८॥

पदार्थः-हे **(मघवन्)** बहुत धन से युक्त **(इन्द्र)** दुष्टों के मारने वाले! आप **(आसु)** इन **(पृत्सु)** वीर मनुष्यों की सेनाओं में **(अस्मभ्यम्)** हम लोगों के लिये **(महि)** बड़े **(सुगम्)** उत्तम प्रकार चलते हैं जिसमें उस **(वरिवः)** सेवन को **(कः)** करें **(नः)** हम लोगों को **(स्मा)** ही विजयी करें ओर हे **(इन्द्र)** सम्पूर्ण ऐश्वर्य्यों के देने वाले! आप **(अपाम्)** प्राणों के **(तोकस्य)** शीघ्र उत्पन्न हुए अपत्य के और **(तनयस्य)** सुकुमार के बोध के लिये और शत्रुओं को **(जेषे)** जीतने के लिये **(नः)** हम लोगों को **(सूरीन्)** युद्धविद्या में कुशल विद्वान् और **(अर्धम्)** अच्छे प्रकार समृद्धि को **(स्मा)** ही **(कृणुहि)** करिये॥१८॥

भावार्थ:-राजा वैसा यत्न करे जैसे अपनी सेनायें उत्तम प्रकार शिक्षित, जीतने वाली और बलयुक्त होवें और सम्पूर्ण बालक और कन्यायें ब्रह्मचर्य्य से विद्यायुक्त होकर समृद्धि को प्राप्त हुए सत्य, न्याय और धर्म का निरन्तर सेवन करें॥१८॥

पुना राजामात्याः कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर राजा और मन्त्रीजन कैसे होवें, इस विषय को कहते हैं॥

आ त्वा हर॑यो॒ वृष॑णो युजा॒ना वृष॑रथासो॒ वृष॑रश्मयोऽत्याः॑।
अ॒स्म॒त्राञ्चो॒ वृष॑णो वज्र॒वाहो॒ वृष्णे॒ मदा॑य सु॒युजो॑ वहन्तु॥१९॥

आ। त्वा॒। हर॑यः। वृष॑णः। यु॒जा॒नाः। वृष॑ऽरथासः। वृष॑ऽरश्मयः। अत्याः॑। अ॒स्म॒त्राञ्चः॑। वृष॑णः। व॒ज्र॒ऽवाह॑ः। वृष्णे॑। मदा॑य। सु॒ऽयुज॑ः। व॒ह॒न्तु॒॥१९॥

पदार्थः-(**आ**) (**त्वा**) त्वाम् (**हरयः**) सुशिक्षिता अश्वा इव मनुष्याः (**वृषणः**) बलिष्ठाः (**युजानाः**) समाहितात्मानः (**वृषरथासः**) वृषा बलयुक्ता रथाः सेनाङ्गानि येषां ते (**वृषरश्मयः**) रश्मय इव विजयसुखवर्षकास्तेजस्विनः (**अत्याः**) सकलशुभगुणकर्मव्यापिनः (**अस्मत्राञ्च**) ये शत्रुभ्योऽस्माँस्त्रायन्ते तानञ्चन्ति प्राप्नुवन्ति ते (**वज्रवाहः**) शस्त्रास्त्रविद्यावोढारः (**वृष्णे**) बलकराय (**मदाय**) आनन्दाय (**सुयुजः**) ये सुष्ठु युञ्जते योजयन्ति वा (**वहन्तु**) प्राप्नुवन्तु प्रापयन्तु वा॥१९॥

अन्वयः-हे इन्द्र राजन्! यथा वृषणो युजाना वृषरथासो वृषरश्मयोऽत्या अस्मत्राञ्चो वृषणो वज्रवाहः सुयुजो हरयो वृष्णे मदाय त्वा वहन्तु तथैतांस्त्वं प्रीत्याऽऽवह॥१९॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। राज्ञा सुपरीक्ष्योत्तमगुणकर्मस्वभावा जना राज्यकर्माधिकारेषु नियोजनीयाः स्वयमपि शभगुणकर्मस्वभावः स्यात्॥१९॥

पदार्थ:-हे अत्यन्त ऐश्वर्य्य से युक्त राजन्! जैसे (**वृषणः**) बलयुक्त (**युजानाः**) जिनके सावधान आत्मा और (**वृषरथासः**) बलयुक्त सेना के अङ्ग जिनके वे (**वृषरश्मयः**) किरणों के सदृश विजय सुख के वर्षाने वाले तेजस्वी (**अत्याः**) सम्पूर्ण श्रेष्ठ गुण और कर्म्मों में व्यापी (**अस्मत्राञ्च**) शत्रुओं से हम लोगों की रक्षा करने वालों को प्राप्त होने और (**वृषणः**) शत्रुशक्ति के रोकने वाले (**वज्रवाहः**) शस्त्र और अस्त्रों की विद्या को धारण करने तथा (**सुयुजः**) उत्तम प्रकार युक्त होने वा युक्त कराने वाले (**हरयः**) उत्तम प्रकार शिक्षित घोड़ों के सदृश मनुष्य (**वृष्णे**) बलकारक (**मदाय**) आनन्द के लिये (**त्वा**) आपको (**वहन्तु**) प्राप्त हों वा प्राप्त करावें, वैसे इनको आप प्रीति से (**आ**) प्राप्त हूजिये॥१९॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। राजा को चाहिये कि उत्तम प्रकार परीक्षा करके उत्तम गुण, कर्म्म और स्वभाव वाले मनुष्यों को राज्य कर्म्म के अधिकारों में नियुक्त करे तथा आप भी श्रेष्ठ गुण, कर्म्म और स्वभाव वाला होवे॥१९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

आ ते॑ वृषन् वृष॑णो द्रोण॑मस्थुर्घृतप्रुषो॒ नोर्मयो॒ मद॑न्तः।

इन्द्र॒ प्र तुभ्यं॒ वृष॑भिः सुता॒नां वृष्णे॑ भरन्ति वृष॒भाय॒ सोम॑म्॥ २०॥ १९॥

आ। ते॒। वृ॒ष॒न्। वृष॑णः। द्रोण॑म्। अ॒स्थुः। घृ॒त॒ऽप्रुष॑ः। न। ऊ॒र्मय॑ः। मद॑न्तः। इन्द्र॑। प्र। तु॒भ्य॑म्। वृष॑ऽभिः। सु॒ताना॑म्। वृष्णे॑। भ॒र॒न्ति॒। वृ॒ष॒भाय॑। सोम॑म्॥ २०॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**ते**) तव (**वृषन्**) बलयुक्त (**वृषणः**) बलिष्ठाः (**द्रोणम्**) द्रवन्ति येन विमानादियानेन तत् (**अस्थुः**) आतिष्ठन्ति (**घृतप्रुषः**) ये घृतमुदकं प्रोषयन्ति पूरयन्ति ते (**न**) इव (**ऊर्मयः**) समुद्रादिजलतरङ्गाः (**मदन्तः**) आनन्दन्तः (**इन्द्र**) सकलैश्वर्यसम्पन्न (**प्र**) (**तुभ्यम्**) (**वृषभिः**) बलिष्ठैर्वैद्यैः (**सुतानाम्**) निष्पादितानाम् (**वृष्णे**) बलाय (**भरन्ति**) (**वृषभाय**) बलमिच्छुकाय (**सोमम्**) महौषधिरसम्॥ २०॥

अन्वयः-हे वृषन्निन्द्र! ये ते वृषणो घृतप्रुष ऊर्मयो न त्वां मदन्तो वृषभिः सुतानां सोमं वृष्णे वृषभाय तुभ्यं प्र भरन्ति द्रोणामास्थुस्तांस्त्वं प्रीणीहि॥ २०॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे राजन्! ये सत्यभावेन तव राज्यस्य हितं चिकीर्षन्ति तांस्त्वं सुखिनो रक्षेर्यथा वायुना जलतरङ्गा उल्लसन्ति तथैव सत्सङ्गेन बुद्धयः समुल्लसन्तीति विद्धि॥ २०॥

पदार्थः-हे (**वृषन्**) बल से युक्त (**इन्द्र**) सम्पूर्ण ऐश्वर्य्यों से सम्पन्न! जो (**ते**) आपके (**वृषणः**) बलिष्ठ (**घृतप्रुषः**) जल को पूर्ण करने वाले (**ऊर्मयः**) समुद्र आदि के जल के तरंग (**न**) जैसे वैसे आपको (**मदन्तः**) आनन्द देते हुए (**वृषभिः**) बलिष्ठ वैद्यों से (**सुतानाम्**) उत्पन्न किये हुए (**सोमम्**) बड़ी ओषधियों के रस को (**वृष्णे**) बल के और (**वृषभाय**) बल की इच्छा करने वाले (**तुभ्यम्**) आपके लिये (**प्र, भरन्ति**) अच्छे प्रकार धारण करते हैं तथा (**द्रोणम्**) जाते हैं जिस विमान आदि वाहन से उस पर (**आ**) सब प्रकार से (**अस्थुः**) स्थित होते हैं, उनको आप प्रसन्न करिये॥ २०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे राजन्! जो सत्यभाव से आपके राज्य के हित करने की इच्छा करते हैं, उनको आप सुखी रखिये और जैसे वायु से जल के तरङ्ग हैं, वैसे ही सत्संग से बुद्धियाँ बढ़ती हैं, ऐसा जानो॥ २०॥

पुनः स राजा कीदृशः स्यादित्याह॥

फिर वह राजा कैसा होवे, इस विषय का कहते हैं॥

वृषा॑सि दि॒वो वृ॑ष॒भः पृ॑थि॒व्या वृषा॒ सिन्धू॑नां वृष॒भः स्तिया॑नाम्।

वृष्णे॑ त॒ इन्दु॑र्वृषभ पीपाय स्वा॒दू रसो॑ मधु॒पेयो॒ वरा॑य॥ २१॥

वृषा॑। अ॒सि॒। दि॒वः। वृ॒ष॒भः। पृ॒थि॒व्याः। वृषा॑। सिन्धू॑नाम्। वृ॒ष॒भः। स्तिया॑नाम्। वृष्णे॑। ते॒। इन्दु॑ः। वृ॒ष॒भ॒। पी॒पा॒य॒। स्वा॒दुः। रस॑ः। म॒धु॒ऽपेय॑ः। वरा॑य॥ २१॥

पदार्थः-(**वृषा**) बलिष्ठः (**असि**) (**दिवः**) सूर्य्यस्य (**वृषभः**) बलिष्ठः श्रेष्ठश्च (**पृथिव्याः**) भूमेः (**वृषा**) वर्षकः (**सिन्धूनाम्**) नदीनां समुद्राणां वा (**वृषभः**) अत्यन्तं कर्ता (**स्तियानाम्**) संहतानां स्थावरजङ्गमानां प्राण्यप्राणिनाम् (**वृष्णे**) सुखवर्षकाय (**ते**) तुभ्यम् (**इन्दुः**) सोमः (**वृषभ**) शत्रुशक्तिबन्धक (**पीपाय**) पानाय (**स्वादुः**) स्वादुयुक्तः (**रसः**) (**मधुपेयः**) मधुना सह पातुं योग्यः (**वराय**) उत्तमाय॥२१॥

अन्वयः-हे वृषभेन्द्र! यतस्त्वं दिवो वृषभः पृथिव्या वृषा सिन्धूनां वृषा स्तियानां वृषभोऽसि ते वराय वृष्णे पीपाय स्वादुरिन्दू रसो मधुपेयो रसोऽस्तु॥२१॥

भावार्थः-हे राजन्! यदि त्वं विद्युद्भूमिनदीसमुद्रान्तरिक्षस्थावरजङ्गमानां पदार्थानां विद्योपयोगौ विजानीयास्तर्हि त्वां महानानन्दः प्राप्नुयात्॥२१॥

पदार्थः-हे (**वृषभ**) शत्रुओं के सामर्थ्य के प्रतिबन्धक, ऐश्वर्य्य से युक्त जिससे आप (**दिवः**) सूर्य्य के (**वृषभः**) बलिष्ठ और श्रेष्ठ (**पृथिव्याः**) भूमि से (**वृषा**) वर्षाने वाले और (**सिन्धूनाम्**) नदियों वा समुद्रों के (**वृषा**) वर्षाने वाले और (**स्तियानाम्**) मिले हुए नहीं चलने और चलने वाले प्राणी और अप्राणियों के (**वृषभः**) अत्यन्त करने वाले (**असि**) हैं (**ते**) आप (**वराय**) उत्तम (**वृष्णे**) सुख के वर्षाने वाले के लिये (**पीपाय**) पान को (**स्वादुः**) स्वादु से युक्त (**इन्दुः**) सोमलता का (**रसः**) रस (**मधुपेयः**) सहत के साथ पीने योग्य हो॥२१॥

भावार्थः-हे राजन्! जो आप बिजुली, भूमि, नदी, समुद्र, अन्तरिक्ष, स्थावर और जङ्गम पदार्थों की विद्या और उपयोग को जानिये तो आपको बड़ा आनन्द प्राप्त होवे॥२१॥

पुनः स राजा कस्य सत्कारं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा किसका सत्कार करे, इस विषय को कहते हैं॥

अयं देवः सहसा जायमान इन्द्रेण युजा पणिमस्तभायत्।

अयं स्वस्य पितुरायुधानीन्दुरमुष्णादशिवस्य मायाः॥२२॥

अयम्। देवः। सहसा। जायमानः। इन्द्रेण। युजा। पणिम्। अस्तभायत्। अयम्। स्वस्य। पितुः। आयुधानि। इन्दुः। अमुष्णात्। अशिवस्य। मायाः॥२२॥

पदार्थः-(**अयम्**) (**देवः**) दिव्यगुणः (**सहसा**) बलेन (**जायमानः**) उत्पद्यमानः (**इन्द्रेण**) परमैश्वर्येण (**युजा**) यो युङ्क्ते तेन राज्ञा (**पणिम्**) स्तुत्यं व्यवहारम् (**अस्तभायत्**) स्तभ्नाति स्थिरीकरोति (**अयम्**) (**स्वस्य**) (**पितुः**) जनकस्य (**आयुधानि**) शस्त्रास्त्राणि (**इन्दुः**) आनन्दकरः (**अमुष्णात्**) मुष्णाति चोरयति (**अशिवस्य**) अमङ्गलस्य (**मायाः**) प्रज्ञाः॥२२॥

अन्वयः-हे राजन्! योऽयमिन्द्रेण युजा सहसा जायमानो देवो विद्वान् पणिमस्तभायद् योऽयमिन्दुः स्वस्य पितुरायुधान्यस्तभायदशिवस्य माया अमुष्णात्तं भवान् गुरुवत्सत्करोतु॥२२॥

भावार्थः-हे राजन्! ये धर्म्यं व्यवहारं स्वयमाचर्य्य सर्वत्र प्रचारयन्ति युद्धविद्योपदेशकुशला अमङ्गलं सर्वतो विनाश्य भद्रं जनयन्ति ते त्वत्तः सत्कारं प्राप्नुवन्तु॥२२॥

पदार्थः-हे राजन्! जो **(अयम्)** यह **(इन्द्रेण)** अत्यन्त ऐश्वर्य से **(युजा)** युक्त होने वाले राजा से **(सहसा)** बल से **(जायमानः)** उत्पन्न हुआ **(देवः)** श्रेष्ठ गुण वाला विद्वान् **(पणिम्)** स्तुति करने योग्य व्यवहार को **(अस्तभायत्)** स्थिर करता है और जो **(अयम्)** यह **(इन्दुः)** आनन्दकारक **(स्वस्य)** अपने **(पितुः)** पिता के **(आयुधानि)** शस्त्र और अस्त्रों को स्थिर करता है और **(अशिवस्य)** अमङ्गल की **(मायाः)** बुद्धियों को **(अमुष्णात्)** चुराता है, उसका आप गुरु के सदृश सत्कार करिये॥२२॥

भावार्थः-हे राजन्! जो धर्म्मयुक्त व्यवहार को स्वयं करके सर्वत्र प्रचार करते हैं और युद्धविद्या में और उपदेश में कुशल हुए अमङ्गल का सब प्रकार नाश करके कल्याण को उत्पन्न करते हैं, वे आपसे सत्कार को प्राप्त हों॥२२॥

पुनर्विद्वांसः कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर विद्वान् कैसे होवें, इस विषय को कहते हैं॥

अयमकृणोदुषसः सुपत्नीरयं सूर्ये अदधाज्ज्योतिरन्तः।

अयं त्रिधातु दिवि रोचनेषु त्रितेषु विन्ददमृतं निगूळ्हम्॥२३॥

अयम्। अकृणोत्। उषसः। सुऽपत्नीः। अयम्। सूर्ये। अदधात्। ज्योतिः। अन्तः। अयम्। त्रिऽधातु। दिवि। रोचनेषु। त्रितेषु। विन्दत्। अमृतम्। निऽगूळ्हम्॥२३॥

पदार्थः-**(अयम्)** सूर्य्यः **(अकृणोत्)** करोति **(उषसः)** **(सुपत्नीः)** शोभना भार्या इव **(अयम्)** परमात्मा **(सूर्य्ये)** सवितरि **(अदधात्)** दधाति **(ज्योतिः)** प्रकाशम् **(अन्तः)** मध्ये **(अयम्)** **(त्रिधातु)** सत्वरजस्तमोमयं जगत् **(दिवि)** प्रकाशे **(रोचनेषु)** प्रकाशमानेषु **(त्रितेषु)** प्रसिद्धविद्युत्सूर्येषु **(विन्दत्)** विन्दति **(अमृतम्)** नाशरहितम् **(निगूळ्हम्)** नितरां गुप्तमतीन्द्रियम्॥२३॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यथाऽयं उषसः सुपत्नीरकृणोत्तथैकपत्नीव्रता यूयं भवत यथाऽयमीश्वरः सूर्य्येऽन्तर्ज्योतिरदधात् तथात्मासु विद्याप्रकाशं धत्त यथाऽयं जगदीश्वरो दिवि त्रितेषु रोचनेष्वमृतं निगूळ्हं त्रिधात्वव्यक्तं विन्दत्तथा प्रकृत्यादिकं जगद्विजानीत॥२३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! येऽत्र जगति विवाहितैकस्त्रीव्रता विद्याऽविद्याप्रकाशकाः कार्य्यकारणात्मगुप्तपदार्थविद्यावेत्तारः स्युस्ते सूर्य्यवदीश्वरवदाप्तवन्मन्तव्याः स्युः॥२३॥

पदार्थः-हे विद्वान् जनो! जैसे **(अयम्)** यह सूर्य्य **(उषसः)** प्रातःकाल वेलाओं को **(सुपत्नीः)** सुन्दर भार्य्याओं के सदृश **(अकृणोत्)** करता है, वैसे एक स्त्री के ग्रहणरूप व्रतधारी आप लोग हों और जैसे **(अयम्)** यह परमात्मा **(सूर्य्ये)** सूर्य्य के **(अन्तः)** मध्य में **(ज्योतिः)** प्रकाश को **(अदधात्)** धारण करता है, वैसे आत्माओं में विद्या के प्रकाश को धारण करिये और जैसे **(अयम्)** यह ईश्वर **(दिवि)**

प्रकाश में **(त्रितेषु)** प्रसिद्ध **[=अग्नि)]** बिजुली और सूर्य में **(रोचनेषु)** प्रकाशमानों में **(अमृतम्)** नाश से रहित **(निगूळहम्)** अत्यन्त गुप्त अतीन्द्रिय **(त्रिधातु)** सत्व, रज और तम: स्वरूप जगत् को **(विन्दत्)** प्राप्त होता है, वैसे प्रकृति आदि जगत् को जानिये॥२३॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो इस जगत् में विवाहित एक स्त्री के ग्रहणरूप व्रतधारी, विद्या और अविद्या के प्रकाशक, कार्य्य-कारण स्वरूप गुप्त पदार्थों की विद्या के जानने वाले होवें; वे सूर्य्य, ईश्वर और यथार्थवक्ता जन के सदृश मन्तव्य होवें॥२३॥

विद्वांस ईश्वरवद्वर्त्तेरन्नित्याह॥

विद्वान् जन ईश्वर के सदृश वर्त्तमान करे, इस विषय को कहते हैं॥

अ॒यं द्यावा॑पृथि॒वी वि ष्क॑भायद॒यं रथ॑मयुनक् स॒प्तर॑श्मिम्।

अ॒यं गोषु॒ शच्या॑ प॒क्वम॒न्तः सोमो॑ दाधार॒ दश॑यन्त्रमुत्स॑म्॥२४॥२०॥

अ॒यम्। द्यावा॑पृथि॒वी इति॑। वि। स्क॒भा॒य॒त्। अ॒यम्। रथ॑म्। अ॒यु॒न॒क्। स॒प्तऽर॑श्मिम्। अ॒यम्। गोषु॑। शच्या॑। प॒क्वम्। अ॒न्तरित्य॒न्तः। सोम॑ः। दा॒धा॒र॒। दश॑ऽयन्त्रम्। उत्स॑म्॥२४॥

पदार्थ:-**(अयम्)** **(द्यावापृथिवी)** प्रकाशभूमी **(वि)** विशेषेण **(स्कभायत्)** दधाति **(अयम्)** सर्वधर्त्तेश्वर: **(रथम्)** रमणीयसूर्यलोकम् **(अयुनक्)** युनक्ति **(सप्तरश्मिम्)** सप्तविधा विद्यारश्मयो यस्मिँस्तम् **(अयम्)** धराधर: परमात्मा **(गोषु)** पृथिवीषु धेन्वादिषु वा **(शच्या)** सत्येन कर्मणा **(पक्वम्)** **(अन्त:)** मध्ये **(सोम:)** य: सर्वं जगत् सूते स: **(दाधार)** दधाति। अत्र **तुजादीनामि**त्यभ्यासदैर्घ्यम्। **(दशयन्त्रम्)** सूक्ष्मस्थूलानि दशभूतानि यन्त्रितानि यस्मिँस्तत् **(उत्सम्)** कूपमिव जलेन क्लिन्नम्॥२४॥

अन्वय:-हे विद्वांसो! यथाऽयमीश्वरो द्यावापृथिवी विष्कभायदयं सप्तरश्मिं रथमयुनगयं सोम: शच्या गोष्वन्तरुत्समिव दशयन्त्रं पक्वं दाधार तथा यूयमपि धरत॥२४॥

भावार्थ:-हे विद्वांसो! य: सूर्यवन्न्यायं पृथिवीवत् क्षमां सर्वस्य धारणं दुग्धादीन् रसान्त्सर्वं जगद्यथावन्निर्माय धरति तथा यूयमप्येतत् सर्वं धरतेति॥२४॥

अत्रेन्द्रविद्वदीश्वरगुणकर्मवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति चतुश्चत्वारिंशत्तमं सूक्तं विंशो वर्गश्च समाप्त:॥

पदार्थ:-हे विद्वान् जनो! जैसे **(अयम्)** यह ईश्वर **(द्यावापृथिवी)** प्रकाश और भूमि को **(वि)** विशेष करके **(स्कभायत्)** धारण करता है और **(अयम्)** यह सब को धारण करने वाला ईश्वर **(सप्तरश्मिम्)** सात प्रकार की विद्यारूप किरणें जिसमें उस **(रथम्)** सुन्दर सूर्य्यलोक को **(अयुनक्)** युक्त करता है और **(अयम्)** यह धारण और नहीं धारण करने वाला परमात्मा **(सोम:)** सब जगत् को उत्पन्न करने वाला **(शच्या)** सत्य कर्म्म से **(गोषु)** पृथिवियों वा धेनु आदि के **(अन्त:)** मध्य में **(उत्सम्)** कूप के सदृश जल से खेदित को जैसे वैसे **(दशयन्त्रम्)** सूक्ष्म और स्थूल दश प्रकार के भूत प्राणी यन्त्रित जिसमें उस **(पक्वम्)** पके हुए को **(दाधार)** धारण करता है, वैसे आप लोग भी धारण कीजिये॥२४॥

भावार्थ:-हे विद्वान् जनो! जो सूर्य्य के सदृश न्याय को, पृथिवी के सदृश क्षमा को, सब के धारण और दुग्ध आदि रसों को और सब जगत् को यथावत् निर्माण करके धारण करता है, वैसे आप लोग भी इस सब को धारण करिये॥२४॥

इस सूक्त में इन्द्र, विद्वान् और ईश्वर के गुण कर्मों के वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह चवालीसवाँ सूक्त और बीसवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ त्रयस्त्रिंशदृचस्य पञ्चचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य शंयुबार्हस्पत्य ऋषिः। १-३० इन्द्रः। ३१-३३ बृबुस्तक्षा। १, २,३, ८, १४, २०-२४, २८, ३०, ३२ गायत्री। ४, ७, ९, १०, ११, १२, १३, १५-१९, २५, २६ निचृद्गायत्री। ५, ६, २७ विराड्गायत्री। २९ स्वराडार्ची गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः। ३१ आर्च्युष्णिक्छन्दः। ऋषभः स्वरः। ३३ अनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः॥

अथ राजा किं कुर्यादित्याह॥

अब तेंतीस ऋचा वाले पैंतालीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में राजा क्या करे इस विषय को कहते हैं॥

य आनयत्परावतः सुनीती तुर्वशं यदुम्। इन्द्रः स नो युवा सखा॥१॥

यः। आ। अनयत्। पराऽवतः। सुऽनीती। तुर्वशम्। यदुम्। इन्द्रः। सः। नः। युवा। सखा॥१॥

पदार्थः-(**यः**) (**आ**) समन्तात् (**अनयत्**) (**परावतः**) दूरदेशादपि (**सुनीती**) शोभनेन न्यायेन (**तुर्वशम्**) हिंसकानां वशकरम् (**यदुम्**) प्रयतमानं नरम् (**इन्द्रः**) सर्वैश्वर्यप्रदो राजा (**सः**) (**नः**) अस्माकम् (**युवा**) शरीरात्मबलयुक्तः (**सखा**) मित्रम्॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो युवेन्द्रः सुनीती परावतस्तुर्वशं यदुमाऽनयत् स नः सखा भवतु॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यूयं तेन राज्ञा सह मैत्रीं कुरुत यस्सत्यन्यायेन दूरदेशस्थमपि विद्याविनयपरोपकारकुशलमाप्तं नरं श्रुत्वा स्वसमीपमानयति तेन राज्ञा सह सुहृदः सन्तो वर्त्तध्वम्॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यः**) जो (**युवा**) शरीर और आत्मा के बल से युक्त (**इन्द्रः**) सम्पूर्ण ऐश्वर्य्यों का देने वाला राजा (**सुनीती**) सुन्दर न्याय से (**परावतः**) दूर देश से भी (**तुर्वशम्**) हिंसकों को वश में करने वाले (**यदुम्**) यत्न करते हुए मनुष्य को (**आ**) सब प्रकार से (**अनयत्**) प्राप्त करावे (**सः**) वह (**नः**) हम लोगों का (**सखा**) मित्र हो॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! तुम उस राजा के साथ मैत्री करो जो सत्य न्याय से दूर देश में स्थित भी विद्या, विनय और परोपकार में कुशल, श्रेष्ठ मनुष्य को सुनकर अपने समीप लाता है, उस राजा के साथ मित्र हुए वर्त्ताव करो॥१॥

पुन राजा किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

अविप्रे चिद्वयो दधदनाशुना चिदर्वता। इन्द्रो जेता हितं धनम्॥२॥

अविप्रे। चित्। वयः। दधत्। अनाशुना। चित्। अर्वता। इन्द्रः। जेता। हितम्। धनम्॥२॥

पदार्थः-(**अविप्रे**) अमेधाविनि (**चित्**) अपि (**वयः**) कमनीयं जीवनं विज्ञानं वा (**दधत्**) दधाति (**अनाशुना**) अनश्वेनाचिरेण गन्त्रा (**चित्**) (**अर्वता**) अश्वेन (**इन्द्रः**) शत्रुविदारकः (**जेता**) जयशीलः (**हितम्**) सुखकारि (**धनम्**) द्रव्यम्॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! य इन्द्रोऽविप्रे चिद्वयो दधदनाशुनाऽर्वता चिद्धितं धनं जेता दधत्स कीर्त्तिमान् जायते इति वेद्यम्॥२॥

भावार्थः-यो विद्वान् राजा बालकेष्वज्ञेषु चाध्यापनोपदेशप्रचारेण विद्यां दधाति स कीर्तिमान् भूत्वाऽसेनोऽपि राज्यं लभते॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**इन्द्रः**) शत्रुओं का नाश करने वाला (**अविप्रे**) बुद्धिरहित में (**चित्**) भी (**वयः**) सुन्दर जीवन वा विज्ञान को (**दधत्**) धारण करता है तथा (**अनाशुना**) घोड़े से रहित शीघ्र जाने वाले वाहन से (**अर्वता**) घोड़े से (**चित्**) भी (**हितम्**) सुखकारक (**धनम्**) द्रव्य को (**जेता**) जीतने वाला धारण करता है, वह यशस्वी होता है, यह जानना चाहिये॥२॥

भावार्थः-जो विद्वान् राजा बालकों और अज्ञों में अध्यापन और उपदेश के प्रचार से विद्या को धारण करता है, वह यशस्वी होकर विना सेना के भी राज्य को प्राप्त होता है॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

म॒हीर॑स्य॒ प्रणी॑तयः पू॒र्वीरु॒त प्रश॑स्तयः। नास्य॑ क्षीयन्त ऊ॒तयः॑॥३॥

म॒हीः। अ॒स्य॒। प्रऽनी॑तयः। पू॒र्वीः। उ॒त। प्रऽश॑स्तयः। न। अ॒स्य॒। क्षी॒य॒न्ते॒। ऊ॒तयः॑॥३॥

पदार्थः-(**महीः**) महत्यः (**अस्य**) राज्ञः (**प्रणीतयः**) प्रकृष्टा नीतयः (**पूर्वीः**) प्राचीना वेदोदिताः (**उत**) (**प्रशस्तयः**) सत्कीर्त्तयः (**न**) निषेधे (**अस्य**) (**क्षीयन्ते**) (**ऊतयः**) रक्षणाद्याः क्रियाः॥३॥

अन्वयः- हे मनुष्या! अस्य राज्ञो महीरुत पूर्वीः प्रणीतय ऊतयः सन्त्यस्य प्रशस्तयो न क्षीयन्ते॥३॥

भावार्थः-ये राजानो नित्यं महतीं राजधर्मनीतिं धृत्वा पुत्रवत् प्रजाः पालयन्ति तेषामक्षया कीर्त्तिर्जायते॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**अस्य**) इस राजा की (**महीः**) बड़ी (**उत**) और (**पूर्वीः**) प्राचीन वेदों में कही हुई (**प्रणीतयः**) उत्तम नीति और (**ऊतयः**) रक्षण आदि क्रियायें हैं (**अस्य**) इसकी (**प्रशस्तयः**) श्रेष्ठ कीर्तियाँ (**न**) नहीं (**क्षीयन्ते**) क्षीण होती हैं॥३॥

भावार्थः-जो राजाजन नित्य बड़ी राजधर्म्मनीति को धारण करके पुत्र के सदृश प्रजाओं का पालन करते हैं, उनका नाशरहित यश होता है॥३॥

पुनर्मनुष्यैः कः सत्कर्त्तव्य इत्याह॥

फिर मनुष्यों को किसका सत्कार करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

सखायो ब्रह्मवाहसेऽर्चत प्र च गायत। स हि नः प्रमतिर्मही॥४॥

सखायः। ब्रह्मऽवाहसे। अर्चत। प्र। च। गायत। सः। हि। नः। प्रऽमतिः। मही॥४॥

पदार्थः-(**सखायः**) सुहृदः (**ब्रह्मवाहसे**) वेदेश्वरविज्ञानप्रापणाय (**अर्चत**) सत्कुरुत (**प्र**) प्रकर्षे (**च**) (**गायत**) प्रशंसत (**सः**) जगदीश्वरः (**हि**) यतः (**नः**) अस्मभ्यम् (**प्रमतिः**) प्रकृष्टा प्रज्ञा (**मही**) महती वाक्॥४॥

अन्वयः- हे सखायो यूयं ब्रह्मवाहसे यं प्रार्चत गायत च येन नः प्रमतिर्मही च दीयते स हि परमात्मा विद्वांश्चाऽस्माभिरुपास्यः सेवनीयश्चास्ति॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यूयं परस्परं सुहृदो भूत्वा परमेश्वरं सर्वस्य कल्याणाय प्रवर्त्तमानमाप्तमुपदेशकं च सदैव सत्कुरुत यतोऽस्मानुत्तमा प्रज्ञा वाक् चाप्नुयात्॥४॥

पदार्थः-हे (**सखायः**) मित्रो! आप लोग (**ब्रह्मवाहसे**) वेद और ईश्वर के विज्ञान प्राप्त कराने के लिये जिसका (**प्र, अर्चत**) अत्यन्त सत्कार करो (**गायत, च**) और प्रशंसा करो जिससे (**नः**) हम लोगों के लिये (**प्रमतिः**) अच्छी बुद्धि (**मही**) और बड़ी वाणी दी जाती है (**सः, हि**) वही जगदीश्वर और विद्वान् हम लोगों से उपासना और सेवा करने योग्य है॥४॥

भावार्थः- हे मनुष्यो! आप लोग परस्पर मित्र होकर परमेश्वर और सब के कल्याण के लिये प्रवृत्त यथार्थवक्ता तथा उपदेशक का सदा ही सत्कार करो, जिससे हम लोगों को उत्तम बुद्धि और वाणी प्राप्त होवे॥४॥

पुना राज्ञाऽमात्यैश्च कथं वर्त्तितव्यमित्याह॥

फिर राजा और मन्त्रियों को कैसा वर्त्ताव करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

त्वमेकस्य वृत्रहन्नविता द्वयोरसि। उतेदृशे यथा वयम्॥५॥२१॥

त्वम्। एकस्य। वृत्रहऽन्। अविता। द्वयोः। असि। उत। ईदृशे। यथा। वयम्॥५॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**एकस्य**) असहायस्य (**वृत्रहन्**) यः सूर्यो वृत्रं हन्ति तद्वच्छत्रुहन्तः (**अविता**) रक्षकः (**द्वयोः**) राजप्रजाजनयोः (**असि**) (**उत**) (**ईदृशे**) ईदृग्व्यवहारे (**यथा**) (**वयम्**)॥५॥

अन्वयः-हे वृत्रहन् राजन्! यथा वयमीदृश एकस्योत द्वयो रक्षका भवामस्तथा यतस्त्वमविताऽसि तस्मात् सत्कर्त्तव्योऽसि॥५॥

भावार्थः-हे राजन्! यथा वयं पक्षपातं विहाय स्वकीयपरजनयोर्यथावन्यायं कुर्मस्तथैव भवान् करोतु। ईदृशे धर्म्ये वर्त्तमानानामस्माकं सदैवाभ्युदयनिःश्रेयसे भवतः॥५॥

पदार्थः-हे (**वृत्रहन्**) मेघ को नाश करने वाले सूर्य के समान शत्रुओं के मारने वाले राजन्! (**यथा**) जैसे (**वयम्**) हम लोग (**ईदृशे**) ऐसे व्यवहार में (**एकस्य**) सहायरहित के (**उत**) और (**द्वयोः**) राजा और प्रजाजनों के रक्षक होते हैं, वैसे जिससे (**त्वम्**) आप (**अविता**) रक्षक (**असि**) हो, इससे सत्कार करने योग्य हो॥५॥

भावार्थ:- हे राजन्! जैसे हम लोग पक्षपात का त्याग करके अपने और अन्य जन का यथावत् न्याय करें, वैसे ही आप करिये। ऐसे धर्म्मयुक्त व्यवहार में वर्त्तमान हम लोगों की सदा ही वृद्धि और मोक्ष होते हैं॥५॥

पुना राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

नयसीद्वति द्विषः कृणोष्युक्थशंसिनः। नृभिः सुवीरः उच्यसे॥६॥

नयसि। इत्। ऊँ इति। अति। द्विषः। कृणोषि। उक्थऽशंसिनः। नृऽभिः। सुऽवीरः। उच्यसे॥६॥

पदार्थः-(नयसि) प्राप्नोषि प्रापयसि वा **(इत्)** एव **(उ)** **(अति)** **(द्विषः)** ये द्विषन्ति तान् **(कृणोषि)** **(उक्थशंसिनः)** वेदप्रकाशकरणशीलान् **(नृभिः)** नायकैः **(सुवीरः)** शोभना वीरा यस्य सः **(उच्यसे)**॥६॥

अन्वयः-हे राजन्! यतस्त्वं द्विष उक्थशंसिनः कृणोष्युपायमुल्लङ्घ्येत्वा धर्ममति नयस्यु नृभिः सुवीरः सर्वान् प्रत्युच्यसे तस्मादिन्माननीयोऽसि॥६॥

भावार्थ:-हे राजन्! यदि भवान् विनयवान् विद्वान् भवेत्तर्हि वेदधर्मद्वेष्टृनपि वेदोक्तधर्मप्रियानुपदेशेन विनयेन वा कर्तुं शक्नोति॥६॥

पदार्थ:-हे राजन्! जिससे आप **(द्विषः)** द्वेष करने वालों को **(उक्थसंसिनः)** वेद की प्रशंसा करने वाले को **(कृणोषि)** करते हो और उपाय का उल्लङ्घन करके धर्म्म को **(अति, नयसि)** अत्यन्त प्राप्त होते वा प्राप्त करते हो **(उ)** और **(नृभिः)** नायक अग्रणी मनुष्यों से **(सुवीरः)** श्रेष्ठ वीरों से युक्त हुए सब के प्रति **(उच्यते)** उपदेश किये जाते हो इससे **(इत्)** ही आदर करने योग्य हो॥६॥

भावार्थ:-हे राजन्! जो आप नम्रतायुक्त, विद्वान् होवे तो वेद में कहे हुए धर्म्म से द्वेष करने वालों को भी उपदेश वा विनय से वेदोक्त धर्म्म में प्रीति करने वाले कर सकते हो॥६॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

ब्रह्माणं ब्रह्मवाहसं गीर्भिः सखायमृग्मियम्। गां न दोहसे हुवे॥७॥

ब्रह्माणम्। ब्रह्मऽवाहसम्। गीःऽभिः। सखायम्। ऋग्मियम्। गाम्। न। दोहसे। हुवे॥७॥

पदार्थः-(ब्रह्माणम्) चतुर्वेदविदम् **(ब्रह्मवाहसम्)** वेदानां शब्दार्थसम्बन्धस्वराणां प्रापकम् **(गीर्भिः)** सुशिक्षिताभिर्मधुराभिः सत्याभिर्वाग्भिः **(सखायम्)** सर्वेषां मित्रम् **(ऋग्मियम्)** स्तुतिभिः स्तवनीयम् **(गाम्)** दुग्धदात्रीं धेनुम् **(न)** इव **(दोहसे)** दोग्धुम् **(हुवे)** आह्वयामि प्रशंसामि च॥७॥

अन्वयः-हे राजन्! यथाहं गीर्भिर्दोहसे गां न सखायमृग्मियं ब्रह्मवाहसं ब्रह्माणं हुवे तथैनं भवानाह्वयतु॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा विद्वांसो वेदपारमाप्तं विद्वांसमाश्रित्य सभ्या विपश्चितो जायन्ते तथैतेषां सङ्गेन यूयमपि विद्वांसश्चतुरा वा भवत॥७॥

पदार्थः-हे राजन्! जैसे मैं **(गीर्भिः)** सुशिक्षायुक्त, मधुर, सत्यवाणियों से **(दोहसे)** दोहने पूरण करने को **(गाम्)** गौ के **(न)** समान **(सखायम्)** सब के मित्र **(ऋग्मियम्)** स्तुतियों से स्तुति करने योग्य **(ब्रह्मवाहसम्)** वेदों के शब्दार्थ सम्बन्ध और स्वरों के कराने वाले **(ब्रह्माणम्)** चतुर्वेदवेत्ता विद्वान् को **(हुवे)** बुलाता और उसकी प्रशंसा करता हूँ, वैसे इसको आप बुला और उसकी प्रशंसा करो॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे विद्वान् जन वेदपारगन्ता, आप्त, विद्वान् का आश्रय लेकर सभ्य विपश्चित् होते हैं, वैसे इनके सङ्ग से तुम भी विद्वान् वा चतुर होओ॥७॥

पुनः किं कृत्वा राजैश्वर्यं प्राप्नुयादित्याह॥

फिर क्या करके राजा ऐश्वर्य्य को प्राप्त होवे, इस विषय को कहते हैं॥

यस्य॒ विश्वा॑नि॒ हस्त॑योरू॒चुर्वसू॑नि॒ नि द्वि॒ता। वी॒रस्य॑ पृत॒ना॒षहः॑॥८॥

यस्य॑। विश्वा॑नि। हस्त॑योः। ऊ॒चुः। वसू॑नि। नि। द्वि॒ता। वी॒रस्य॑। पृ॒त॒ना॒ऽसहः॑॥८॥

पदार्थः-**(यस्य)** राजादेर्विदुषः **(विश्वानि)** सर्वाणि **(हस्तयोः)** **(ऊचुः)** वदन्ति **(वसूनि)** द्रव्याणि **(नि)** निश्चितम् **(द्विता)** द्वयो राजप्रजयोरुपदेशकोपदेश्योर्वा भावः **(वीरस्य)** शत्रुबलमभिव्याप्तुं शीलस्य **(पृतनाषहः)** ये पृतनां शत्रुसेनां सहन्ते ते॥८॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यस्य वीरस्य हस्तयोर्विश्वानि वसूनि पृतनाषहो न्यूचुस्तेन सह द्विता रक्षताम्॥८॥

भावार्थः-यदि राजा विद्याविनयाभ्यां पुत्रवत्प्रजाः पालयेत्तर्हि सर्वमैश्वर्यमखिलं सुखं च तदधीनमेव भवेद्येनोत्तमानमात्यान् प्रशंसितां सेनां प्राप्य राजा प्रजाजनानां कल्याणं कर्तुं शक्नोति॥८॥

पदार्थः-हे विद्वान् जनो! **(यस्य)** जिस राजादि विद्वान् **(वीरस्य)** शत्रु के बल को दबाने वाले के **(हस्तयोः)** हाथों में **(विश्वानि)** सम्पूर्ण **(वसूनि)** द्रव्यों को **(पृतनाषहः)** शत्रुओं की सेना को सहने वाले **(नि)** निश्चित **(उचुः)** कहते हैं उसके साथ **(द्विता)** दोनों-राजा और प्रजा तथा उपदेश देने वाले और उपदेश देने योग्यपने की रक्षा करो॥८॥

भावार्थः-जो राजा विद्या और विनय से पुत्र के सदृश प्रजाओं की पालना करे तो सम्पूर्ण ऐश्वर्य्य और सम्पूर्ण सुख उसके आधीन ही होवे, जिससे उत्तम मन्त्री और प्रशंसित सेना को प्राप्त होकर राजा प्रजाजनों के कल्याण को कर सकता है॥८॥

पुनर्मनुष्याः किं निवार्य किं प्राप्नुयुरित्याह॥

फिर मनुष्य किसका निवारण करके किसको प्राप्त होवें, इस विषय को कहते हैं॥

वि दृ॒ळ्हानि॑ चिदद्रिवो॒ जना॑नां शचीपते। वृ॒ह मा॒या अ॑नानत॥९॥

वि। दृ॒ळ्हानि॑। चि॒त्। अ॒द्रि॒ऽवः॒। जना॑नाम्। श॒ची॒ऽप॒ते॒। वृ॒ह। मा॒याः। अ॒ना॒न॒त॒॥९॥

पदार्थः-(**वि**) (**दृळहानि**) निश्चितानि (**चित्**) अपि (**अद्रिवः**) मेघकरसूर्यवद्वर्त्तमान (**जनानाम्**) मनुष्याणाम् (**शचीपते**) प्रजास्वामिन् (**वृह**) उच्छिन्धि (**मायाः**) कपटानि (**अनानत**) शत्रूणां समीपे नम्रतारहित॥९॥

अन्वयः-हे अद्रिवोऽनानत शचीपते! त्वं माया वृह चिदपि जनानां दृळहानि सैन्यानि सम्पाद्य शत्रून् वि वृह॥९॥

भावार्थः-स एव राजाऽऽचार्योऽध्यापको वोत्तमः स्याद्यो छलादिदोषान्निवार्य्य मनुष्यान् धर्माचारान्तसततं कुर्यात्॥९॥

पदार्थः-हे (**अद्रिवः**) मेघों के करने वाले सूर्य्य के सदृश वर्त्तमान (**अनानत**) शत्रुओं के समीप में नम्रता से रहित (**शचीपते**) प्रजा के स्वामिन्! आप (**मायाः**) कपटों को (**वृह**) काटो और (**चित्**) भी (**जनानाम्**) मनुष्यों की (**दृळहानि**) निश्चित सेनाओं को करके शत्रुओं का (**वि**) विशेष करके नाश करिये॥९॥

भावार्थः-वह राजा, आचार्य्य वा अध्यापक उत्तम होवे, जो छल आदि दोषों का निवारण करके मनुष्यों को धर्म्म के आचरण से युक्त निरन्तर करे॥९॥

पुना राजप्रजाजनाः परस्परं कथं वर्त्तेयुरित्याह॥

फिर राजा और प्रजाजन परस्पर कैसा वर्त्ताव करें, इस विषय को कहते हैं॥

तमु त्वा सत्य सोमपा इन्द्र वाजानां पते। अहूमहि श्रवस्यवः॥१०॥२२॥

तम्। ऊँ इति। त्वा। सत्य। सोमऽपाः। इन्द्र। वाजानाम्। पते। अहूमहि। श्रवस्यवः॥१०॥

पदार्थः-(**तम्**) (**उ**) (**त्वा**) त्वाम् (**सत्य**) सत्सु साधो (**सोमपाः**) यः सोममैश्वर्यं पाति तत्सम्बुद्धौ (**इन्द्र**) परमैश्वर्यप्रद (**वाजानाम्**) विज्ञानान्नादीनाम् (**पते**) पालक स्वामिन् (**अहूमहि**) प्रशंसेम (**श्रवस्यवः**) य आत्मनः श्रवोऽन्नादिकमिच्छवः॥१०॥

अन्वयः-हे सत्य सोमपा वाजानां पत इन्द्र! श्रवस्यवो वयं त्वाऽहूमहि तथा तमु सर्व आह्वयन्तु॥१०॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजन् वा विद्वान्! भवाञ्छुभगुणकर्मस्वभावः प्रजापालनतत्परः सुशीलो जितेन्द्रियो भवेद् भविष्यति तावद्वयं त्वां मंस्यामहे॥१०॥

पदार्थः-हे (**सत्य**) श्रेष्ठों में श्रेष्ठ (**सोमपाः**) ऐश्वर्य की रक्षा करने तथा (**वाजानाम्**) विज्ञान और अन्न आदिकों के (**पते**) पालने और (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य के देने वाले! (**श्रवस्यवः**) अपने अन्न आदि की इच्छा करने वाले हम लोग (**त्वा**) आपकी (**अहूमहि**) प्रशंसा करें, वैसे (**तम्, उ**) उन्हीं को सब लोग पुकारें॥१०॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजन् वा विद्वन्! आप श्रेष्ठ गुण, कर्म और स्वभाव से युक्त होकर प्रजा के पालन में तत्पर सुशील और इन्द्रियों के जीतने वाले जब तक होंगे तबतक हम लोग आपको मानेंगे॥१०॥

पुना राजप्रजाजना: परस्परं कथं वर्त्तेरन्नित्याह॥

फिर राजा और प्रजाजन परस्पर कैसा वर्त्ताव करें, इस विषय को कहते हैं॥

तमु त्वा यः पुरासिथ यो वा नूनं हिते धने। हव्यः स श्रुधी हवम्॥११॥

तम्। ऊँ इति। त्वा। यः। पुरा। आसिथ। यः। वा। नूनम्। हिते। धने। हव्यः। सः। श्रुधि। हवम्॥११॥

पदार्थ:-(**तम्**) (**उ**) (**त्वा**) त्वाम् (**यः**) (**पुरा**) प्रथमतः (**आसिथ**) (**यः**) (**वा**) (**नूनम्**) निश्चितम् (**हिते**) सुखकरे (**धने**) (**हव्यः**) आह्वयितुं योग्यः (**सः**) (**श्रुधी**) अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**हवम्**) वार्त्ताम्॥११॥

अन्वय:-हे राजन्! यस्त्वं हिते धने पुराऽऽसिथ यो वा नूनं हिते धने हव्योऽसि तमु त्वा वयं श्रावयेम स त्वमस्माकं हवं श्रुधी॥११॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! यो राजा सर्वेषां हितमिच्छेत् सर्वान् धनैश्वर्य्ययुक्तान् करोति स सबलनिर्बलानां वार्त्ताः प्रीत्या श्रुत्वा यथार्थं न्यायं करोति तमेव सर्वे सततं सत्कुर्वन्तु॥११॥

पदार्थ:-हे राजन्! (**यः**) जो आप (**हिते**) सुखकारक (**धने**) धन में (**पुरा**) प्रथम से (**आसिथ**) थे और (**यः**) जो (**वा**) वा (**नूनम्**) निश्चित सुखकारक धन में (**हव्यः**) पुकारने के योग्य हो (**तम्, उ**) उन्हीं (**त्वा**) आपको हम लोग सुनावें (**सः**) वह आप हम लोगों की (**हवम्**) बात को (**श्रुधी**) सुनिये॥११॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जो राजा सब के हित की इच्छा करे और सब को धन और ऐश्वर्य्य से युक्त करता है, वह बलिष्ठ और निर्बलों की बातों की प्रीति से सुन कर यथार्थ न्याय करता है, उसी का सब लोग निरन्तर सत्कार करें॥११॥

पुना राजादिभिः किं प्राप्य किं प्रापणीयमित्याह॥

फिर राजा आदिकों को क्या प्राप्त करके क्या प्राप्त करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

धीभिरर्वद्भिरर्वतो वाजाँ इन्द्र श्रवाय्यान्। त्वया जेष्म हितं धनम्॥१२॥

धीभिः। अर्वत्ऽभिः। अर्वतः। वाजान्। इन्द्र। श्रवाय्यान्। त्वया। जेष्म। हितम्। धनम्॥१२॥

पदार्थ:-(**धीभिः**) प्रज्ञाभिः कर्मभिर्वा (**अर्वद्भिः**) अश्वैः (**अर्वतः**) अश्वानिव (**वाजान्**) वेगवतः (**इन्द्र**) शत्रुविदारक (**श्रवाय्यान्**) श्रोतुमिष्टान् (**त्वया**) स्वामिना सह (**जेष्म**) जयेम (**हितम्**) सुखकारकम् (**धनम्**)॥१२॥

अन्वय:-हे इन्द्र! यथा वयं धीभिरर्वद्भिर्वाजाञ्छ्रवाय्यानर्वतः प्राप्य त्वया सह हितं धनं जेष्म तथा भवानस्माभिः सह सुखेन वर्त्तताम्॥१२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यदा राजादयो जना ऐकमत्यं विधायोत्तमानि सेनाङ्गानि सम्पाद्याऽन्यायकारिणो दुष्टाञ्जित्वा न्यायप्राप्तेन धनेन सर्वहितं कुर्युस्तदैव स्वहितसिद्धा जायेरन्॥१२॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** शत्रुओं के नाश करनेवाले! जैसे हम लोग **(धीभिः)** बुद्धियों वा कर्मों से **(अर्वद्भिः)** शब्द करते हुए घोड़ों से **(वाजान्)** वेगयुक्त **(श्रवाय्यान्)** सुनने को इष्ट **(अर्वतः)** घोड़ों के सदृश प्राप्त होकर **(त्वया)** आपके साथ **(हितम्)** सुखकारक **(धनम्)** धन को **(जेष्म)** जीतें, वैसे आप हम लोगों के साथ सुख से वर्त्ताव करो॥१२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जब राजा आदि जन एक सम्मति कर उत्तम सेना के अङ्गों को सम्पादन कर और अन्यायकारी दुष्टों को जीत कर न्याय से प्राप्त हुए धन से सब का हित करें, तभी अपने हित की सिद्धि से युक्त होवें॥१२॥

पुनः स राजा किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

अभूँरु वीर गिर्वणो महाँ इन्द्र धने हिते भरे वितन्तसाय्यः॥१३॥

अभूः। ऊँ इति। वीर। गिर्वणः। महान्। इन्द्र। धने। हिते। भरे। वितन्तसाय्यः॥१३॥

पदार्थः-**(अभूः)** भवेः **(उ)** **(वीर)** शौर्य्यादिगुणोपेत **(गिर्वणः)** यो गीर्भिर्वन्यते याच्यते तत्सम्बुद्धौ **(महान्)** महाशयः **(इन्द्र)** परमैश्वर्य्यप्रद **(धने)** **(हिते)** सुखकारके **(भरे)** स-ामे **(वितन्तसाय्यः)** यो वितन्तस्यतिविजयेऽस्ति सः॥१३॥

अन्वयः-हे गिर्वणो वीरेन्द्र! त्वा महान् वितन्तसाय्यः सन् हिते धन उ भरे विजेताऽभूः॥१३॥

भावार्थः-यदि राजा सर्वहितं प्रेप्सुः पुरुषज्ञानी कृतज्ञो योद्धप्रियो भवेत्तस्य सदैव विजयेन प्रतिष्ठैश्वर्ये वर्धेयाताम्॥१३॥

पदार्थः-हे **(गिर्वणः)** वाणियों से याचना किये गये **(वीर)** शूरता आदि गुणों से युक्त **(इन्द्र)** अत्यन्त ऐश्वर्य्य के देने वाले! आप **(महान्)** महाशय **(वितन्तसाय्यः)** अत्यन्त विजय में होने वाले हुए **(हिते)** सुखकारक **(धने)** धन में **(उ)** और **(भरे)** स-ाम में जीतने वाले **(अभूः)** हूजिये॥१३॥

भावार्थः-जो राजा सब के हित के प्राप्त होने की इच्छा करता हुआ पुरुषों में ज्ञानी, किये हुए को जानने वाला और योद्धाओं का प्रिय होवे, उसके सदा ही विजय से प्रतिष्ठा और ऐश्वर्य्य बढ़े॥१३॥

पुना राजा किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर राजा क्या करे इस विषयको कहते हैं॥

या त ऊतिरमित्रहन् मक्षूजवस्तमासति। तया नो हिनुही रथम्॥१४॥

या। ते। ऊतिः। अमित्रऽहन्। मक्षुजवःऽतमा। असति। तया। नः। हिनुहि। रथम्॥१४॥

पदार्थः-(**या**) (**ते**) तव (**ऊतिः**) रक्षाद्या क्रिया (**अमित्रहन्**) अरिहन् (**मक्षूजवस्तमा**) सद्योऽतिशयेन वेगयुक्ता (**असति**) भवेत् (**तया**) (**नः**) (**हिनुही**) वर्धय। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। (**रथम्**) विमानादियानम्॥१४॥

अन्वयः-हे अमित्रहन्! या ते मक्षूजवस्तमोतिरसति तया नो रथं प्रापय्य हिनुही॥१४॥

भावार्थः-यो राजा वेगादिगुणयुक्तया रक्षया प्रजाः प्रसाद्योन्नयेत् स एव सततं वर्धेत॥१४॥

पदार्थः-हे (**अमित्रहन्**) शत्रुओं के मारने वाले (**या**) जो (**ते**) आपकी (**मक्षूजवस्तमा**) शीघ्र अतिशय वेग से युक्त (**ऊतिः**) रक्षा आदि क्रिया (**असति**) होवे (**तया**) उससे (**नः**) हम लोगों की (**रथम्**) विमान आदि वाहन को प्राप्त कराके (**हिनुही**) वृद्धि कीजिये॥१४॥

भावार्थः-जो राजा वेग आदि गुणों से युक्त रक्षा से प्रजाओं को प्रसन्न करके उन्नति करे, वही निरन्तर वृद्धि को प्राप्त होवे॥१४॥

पुनः स राजा केन किं जयेदित्याह॥

फिर वह राजा किससे किसको जीते, इस विषय को कहते हैं॥

स रथेन रथीतमोऽस्माकेनाभियुग्वना। जेषि जिष्णो हितं धनम्॥१५॥२३॥

सः। रथेन। रथिऽतमः। अस्माकेन। अभिऽयुग्वना। जेषि। जिष्णो इति। हितम्। धनम्॥१५॥

पदार्थः-(**सः**) (**रथेन**) (**रथीतमः**) बहवो रथा विद्यन्ते यस्य सोऽतिशयितः (**अस्माकेन**) अस्मदीयेन (**अभियुग्वना**) योऽभियुज्यते वन्यते विभज्यते तेन (**जेषि**) जयसि। अत्र शपो लुक्। (**जिष्णो**) जयशील (**हितम्**) प्रवृद्धम् (**धनम्**)॥१५॥

अन्वयः-हे जिष्णो! स रथीतमस्त्वमभियुग्वनाऽस्माकेन रथेन हितं धनं जेषि तस्मात् प्रशंसनीयो भवसि॥१५॥

भावार्थः-यो राजा प्रशंसनीयेन वाहनादिना बहु धनं जयति स प्रशंसनीयो भवति॥१५॥

पदार्थः-हे (**जिष्णो**) जीतने वाले (**सः**) वह (**रथीतमः**) अतिशय करके बहुत रथों वाले आप (**अभियुग्वना**) विभक्त होने वाले (**अस्माकेन**) हमारे (**रथेन**) वाहन से (**हितम्**) प्रवृद्ध (**धनम्**) धन को (**जेषि**) जीतते हो, इससे प्रशंसा करने योग्य होते हो॥१५॥

भावार्थः-जो राजा प्रशंसनीय वाहन आदि से बहुत धन को जीतता है, वह प्रशंसनीय होता है॥१५॥

पुनः स राजा कीदृशो भवेदित्याह॥

फिर वह राजा कैसा होवे, इस विषय को कहते हैं॥

य एक इत्तमु ष्टुहि कृष्टीनां विचर्षणिः। पतिर्जज्ञे वृषक्रतुः॥१६॥

यः। एकः। इत्। तम्। ऊँ इति। स्तुहि। कृष्टीनाम्। विऽचर्षणिः। पतिः। जज्ञे। वृषऽक्रतुः॥१६॥

पदार्थः-(**यः**) (**एकः**) असहायः (**इत्**) एव (**तम्**) वीरपुरुषम् (उ) (**स्तुहि**) प्रशंसय (**कृष्टीनाम्**) मनुष्याणाम् (**विचर्षणिः**) विचक्षणो द्रष्टा (**पतिः**) स्वामी (**जज्ञे**) जायते (**वृषक्रतुः**) वृषा बलवती क्रतुः प्रज्ञा यस्य सः॥१६॥

अन्वयः-हे मनुष्य! य एक इत्कृष्टीनां पतिर्विचर्षणिषर्वृषक्रतुर्जज्ञे तमु स्तुहि॥१६॥

भावार्थः-हे प्रजाजना योऽखिलविद्यः शुभगुणकर्मस्वभावः सततं न्यायेन प्रजापालनतत्परः स्यात्तमेव राजानं मन्यध्वं नेतरं क्षुद्राशयम्॥१६॥

पदार्थः-हे मनुष्य! (**यः**) जो (**एकः**) सहायरहित (**इत्**) ही (**कृष्टीनाम्**) मनुष्यों का (**पतिः**) स्वामी (**विचर्षणिः**) देखने वाला (**वृषक्रतुः**) बलयुक्त बुद्धि वाला (**जज्ञे**) होता है (**तम्**) उस वीर पुरुष की (उ) ही (**स्तुहि**) प्रशंसा करिये॥१६॥

भावार्थः-हे प्रजाजनो! जो सम्पूर्ण विद्या और श्रेष्ठ गुण, कर्म, स्वभाव वाला निरन्तर न्याय से प्रजाओं के पालन में तत्पर होवे, उसको राजा मानो, दूसरे क्षुद्राशय को नहीं॥१६॥

पुनः स राजा कीदृग्भवेदित्याह॥

फिर वह राजा कैसा होवे, इस विषय को कहते हैं॥

यो गृणतामिदासिथापिरूती शिवः सखा। स त्वं न इन्द्र मृळय॥१७॥

यः। गृणताम्। इत्। आसिथ। आपिः। ऊती। शिवः। सखा। सः। त्वम्। नः। इन्द्र। मृळय॥१७॥

पदार्थः-(**यः**) (**गृणताम्**) प्रशंसकानाम् (**इत्**) एव (**आसिथ**) भवसि (**आपिः**) शुभगुणव्यापकः (**ऊती**) ऊत्या रक्षणादिक्रियया (**शिवः**) मङ्गलकारी (**सखा**) सुहृद् (**सः**) (**त्वम्**) (**नः**) अस्मानस्माकं वा (**इन्द्र**) दुःखविदारक (**मृळय**) सुखय ॥१७॥

अन्वयः-हे इन्द्र राजन्! यो गृणतां न आपिश्शिवः सखाऽऽसिथ स इत्त्वमूती नो मृळय॥१७॥

भावार्थः-हे राजन्! यदि त्वमजातशत्रुर्विश्वमित्रः सर्वस्य मङ्गलकारी प्रजासु भवेस्तर्हि सद्यो धर्मार्थकाममोक्षान् साध्नुयाः॥१७॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) दुःखों के नाश करने वाले राजन्! (**यः**) जो (**गृणताम्**) प्रशंसा करने वाले (**नः**) हम लोगो के (**आपिः**) श्रेष्ठ गुणों से व्यापक (**शिवः**) मङ्गलकारी (**सखा**) मित्र (**आसिथ**) होते हो (**सः इत्**) वही (**त्वम्**) आप (**ऊती**) रक्षण आदि क्रिया से हम लोगों को (**मृळय**) सुखी करो॥१७॥

भावार्थः-हे राजन्! जो आप शत्रुरहित और संसार के मित्र, सब के मङ्गल करने वाले प्रजाओं में हूजिये तो शीघ्र धर्म्म, अर्थ, काम और मोक्ष को सिद्ध करिये॥१७॥

पुना राजादयः किं ध्यात्वां किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर राजा आदि क्या ध्यान करके क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

धिष्व वज्रं गभस्त्यो रक्षोहत्याय वज्रिवः। सासहीष्ठा अभि स्पृधः॥१८॥

धि॒ष्व। वज्र॑म्। गभ॑स्त्योः। र॒क्षः॒ऽहत्या॑य। व॒ज्रि॒ऽवः॒। सा॒स॒ही॒ष्ठाः। अ॒भि। स्पृध॑ः॥ १८॥

पदार्थः-(**धिष्व**) धेहि (**वज्रम्**) शस्त्रास्त्रसमूहम् (**गभस्त्योः**) हस्तयोर्मध्ये (**रक्षोहत्याय**) दुष्टानां हननाय (**वज्रिवः**) प्रशस्तशस्त्रास्त्रप्रयोगकुशल (**सासहीष्ठाः**) भृशं सहेथाः (**अभि**) आभिमुख्ये (**स्पृधः**) स्पर्द्धणीयान्त्स- ग्रामान्॥ १८॥

अन्वयः-हे वज्रिव इन्द्र राजंस्त्वं रक्षोहत्याय गभस्त्योर्वज्रं धिष्व स्पृधोऽभि सासहीष्ठाः॥ १८॥

भावार्थः-हे राजन्त्सेनाजना वा यूयं शस्त्रास्त्रप्रयोगेषु कुशला भूत्वा दस्य्वादीन् शत्रून् हत्वा सहनशीला भवत॥ १८॥

पदार्थः-हे (**वज्रिवः**) प्रशंसित शस्त्र और अस्त्रों के चलाने में चतुर और अत्यन्त ऐश्वर्य्य से युक्त राजन्! आप (**रक्षोहत्याय**) दुष्टों के मारने के लिये (**गभस्त्योः**) हाथों के मध्य में (**वज्रम्**) शस्त्र और अस्त्रों के समूह को (**धिष्व**) धारण करिये तथा (**स्पृधः**) स्पृहा करने योग्य स- ग्रामों के (**अभि**) सन्मुख (**सासहीष्ठाः**) अत्यन्त सहिये॥ १८॥

भावार्थः-हे राजन् वा सेना के जनो! आप लोग शस्त्र और अस्त्रों के चलाने में चतुर होकर डाकू आदि शत्रुओं का नाश करके सहनशील हूजिये॥ १८॥

मनुष्याः कीदृशं जनं प्रशंसेयुरित्याह॥

मनुष्य कैसे जन की प्रशंसा करें, इस विषय को कहते हैं॥

प्र॒त्नं र॑यी॒णां यु॒जं सखा॑यं कीरि॒चोद॑नम्। ब्रह्म॑वाहस्तमं हुवे॥ १९॥

प्र॒त्नम्। र॒यी॒णाम्। यु॒जम्। सखा॑यम्। की॒रि॒ऽचोद॑नम्। ब्रह्म॑वाहःऽतमम्। हु॒वे॥ १९॥

पदार्थः-(**प्रत्नम्**) प्राचीनम् (**रयीणाम्**) धनानाम् (**युजम्**) योजकम् (**सखायम्**) सर्वसुहृदम् (**कीरिचोदनम्**) कीरीणां विद्यार्थिनां प्रेरकम् (**ब्रह्मवाहस्तमम्**) अतिशयेन वेदेश्वरविद्याप्रापकम् (**हुवे**) स्तौमि॥ १९॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथाऽहं रयीणां युजं कीरिचोदनं ब्रह्मवाहस्तमं प्रत्नं सखायं हुवे तथैनं यूयमपि प्रशंसत॥ १९॥

भावार्थः-ये सर्वजनहितसम्पादकं विद्वत्तमं सत्यग्रहणायाऽसत्यत्यागायऽध्यापनोपदेशाभ्यां प्रेरकं स्थिरमित्रं सत्कृत्य प्रशंसन्ति त एव गुणग्राहका भवन्ति॥ १९॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे मैं (**रयीणाम्**) धनों के (**युजम्**) युक्त कराने वाले (**कीरिचोदनम्**) विद्यार्थियों के प्रेरक (**ब्रह्मवाहस्तमम्**) अतिशय वेद और ईश्वर की जो विद्या उसके प्राप्त कराने वाले (**प्रत्नम्**) प्राचीन (**सखायम्**) सब के मित्र की (**हुवे**) स्तुति करता हूँ, वैसे इसकी आप लोग भी प्रशंसा करो॥ १९॥

भावार्थ:-जो सम्पूर्ण जनों के हितकारक, अत्यन्त विद्वान्, सत्य के ग्रहण और असत्य के त्याग के लिये अध्यापन और उपदेश से प्रेरणा करने वाले, स्थिर मित्र का सत्कार करके प्रशंसा करते हैं, वे ही गुणग्राहक होते हैं॥१९॥

पुनर्मनुष्यै: कीदृशो राजा कर्त्तव्य इत्याह॥

फिर मनुष्यों को कैसा राजा करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

स हि विश्वा॑नि॒ पार्थि॑वाँ॒ एको॒ वसू॑नि॒ पत्य॑ते। गिर्व॑णस्तमो॒ अध्रि॑गुः॥२०॥२४॥

सः। हि। विश्वा॑नि। पार्थि॑वा। एकः॑। वसू॑नि। पत्य॑ते। गिर्व॑णःऽतमः। अध्रि॑ऽगुः॥२०॥

पदार्थ:-(**सः**) (**हि**) यतः (**विश्वानि**) (**पार्थिवा**) पृथिव्यां विदितानि (**एकः**) असहायः (**वसूनि**) द्रव्याणि (**पत्यते**) पतिरिवाचरति (**गिर्वणस्तमः**) अतिशयेन वाग्भिः प्रशंसनीयः (**अध्रिगुः**) सत्यगतिः॥२०॥

अन्वय:-हे मनुष्याः! स ह्येको गिर्वणस्तमोऽध्रिगू राजा विश्वानि पार्थिवा वसूनि पत्यतेऽतोऽस्माभिः सत्कर्तव्योऽस्ति॥२०॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! योऽद्वितीयबुद्धिविद्यः पृथिव्यादिपदार्थविद्यावित्प्रशंसनीयगुणकर्मस्वभावः सत्याचारी जनो भवेत्तमेव राजानं कुरुत॥२०॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! (**सः**) वह (**हि**) जिससे (**एकः**) सहायरहित (**गिर्वणस्तमः**) अतिशयित वाणियों से प्रशंसा करने योग्य (**अध्रिगुः**) सत्यगमन वाला राजा (**विश्वानि**) समस्त (**पार्थिवा**) पृथिवी में जाने हुए (**वसूनि**) द्रव्यों को (**पत्यते**) स्वामी के सदृश आचरण करता है, इससे हम लोगों से सत्कार करने योग्य है॥२०॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जो विलक्षण बुद्धि और विद्या से युक्त, पृथिवी आदि पदार्थों की विद्या का जानने वाला, प्रशंसा करने योग्य गुण, कर्म, और स्वभावयुक्त और सत्य आचरण करने वाला जन होवे, उसी को राजा करो॥२०॥

पुना राजप्रजाजना परस्परं किमलङ्कुर्य्युरित्याह॥

फिर राजा और प्रजाजन परस्पर किसकी शोभा करें, इस विषय को कहते हैं॥

स नो॑ नि॒युद्भि॒रा पृ॑ण॒ कामं॒ वाजे॑भिर॒श्विभि॑:। गोम॑द्भि॒र्गोपते धृ॒षत्॥२१॥

सः। न॒:। नि॒युत्ऽभि॑:। आ। पृ॒ण॒। काम॑म्। वाजे॑भि:। अ॒श्विऽभि॑:। गोम॑त्ऽभि:। गो॒ऽप॒ते॒। धृ॒षत्॥२१॥

पदार्थ:-(**सः**) (**नः**) अस्माकम् (**नियुद्भिः**) निश्चितहेतुभिः (**आ**) समन्तात् (**पृण**) पूरय (**कामम्**) (**वाजेभिः**) विज्ञानान्नादिकारिभिः (**अश्विभिः**) सूर्य्याचन्द्रमआदिभिः (**गोमद्भिः**) प्रशस्तभूमिधेनुवाग्युक्तैः (**गोपते**) गवां स्वामिन् (**धृषत्**) प्रगल्भः सन्॥२१॥

अन्वय:-हे गोपते! स धृषत्त्वं वाजेभिर्नियुद्भिर्गोमद्भिरश्विभिर्नः काममा पृण॥२१॥

भावार्थः-हे राजन्! यदि त्वमस्माकं कामनां पूरयेस्तर्हि वयमपि तवेच्छां पूरयेम॥१॥

पदार्थः-हे **(गोपते)** इन्द्रियों के स्वामिन्! **(सः)** वह **(धृषत्)** ढीठ, धर्षण करने वाले आप **(वाजेभिः)** विज्ञान और अन्न आदि के करने वाले **(नियुद्भिः)** निश्चित कारण तथा **(गोमद्भिः)** प्रशंसित भूमि, गौ और वाणी से युक्त **(अश्वभिः)** सूर्य्य और चन्द्रमा आदिकों से **(नः)** हम लोगों के **(कामम्)** मनोरथ की **(आ)** सब प्रकार से **(पृण)** पूर्त्ति करिये॥२१॥

भावार्थः-हे राजन्! जो आप हम लोगों के मनोरथ की पूर्त्ति करिये तो हम लोग भी आपकी इच्छा की पूर्त्ति करें॥२१॥

पुनर्मनुष्याः कस्मै किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्य किसके लिये क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

तद्वो गाय सुते सचा पुरुहूताय सत्वने। शं यद्गवे न शाकिने॥२२॥

तत्। वः। गाय। सुते। सचा। पुरुऽहूताय। सत्वने। शम्। यत्। गवे। न। शाकिने॥२२॥

पदार्थः-**(तत्)** ते **(वः)** युष्मभ्यम् **(गाय)** स्तुहि **(सुते)** उत्पन्नेऽस्मिञ्जगति **(सचा)** समवेतेन सत्येन **(पुरुहूताय)** बहुभिः प्रशंसिताय **(सत्वने)** शुद्धान्तःकरणाय **(शम्)** **(यत्)** ये **(गवे)** स्तावकाय **(न)** इव **(शाकिने)** शक्तिमते॥२२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यद्वः प्रशंसन्ति तच्छाकिने गवे न सुते सचा पुरुहूताय सत्वने स्युस्तान् हे इन्द्र! त्वं शं गाय॥२॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा सर्वविद्यापारगस्याऽध्यापनोपदेशेन कर्मणा सर्वेषां मङ्गलं वर्धते तथैवोत्तमेन राज्ञा प्रजासुखमुन्नतं भवति॥२२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यत्)** जो **(वः)** आप लोगों के लिये प्रशंसा करते हैं **(तत्)** वे **(शाकिने)** सामर्थ्ययुक्त **(गवे)** स्तुति करने वाले के लिये **(न)** जैसे वैसे **(सुते)** उत्पन्न हुए इस संसार में **(सचा)** संयुक्त सत्य से **(पुरुहूताय)** बहुतों से प्रशंसित **(सत्वने)** शुद्ध अन्तःकरण वाले के लिये हों उनकी हे **(इन्द्र)** ऐश्वर्य्य से युक्त! आप **(शम्)** सुखपूर्वक **(गाय)** स्तुति कीजिये॥२२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे सम्पूर्ण विद्याओं के पार जाने वाले के अध्यापन और उपदेशरूप कर्म्म से सब का मङ्गल बढ़ता है, वैसे ही उत्तम राजा से प्रजा का सुख उन्नत होता है॥२२॥

पुना राजप्रजाजनाः परस्परं कथं वर्त्तेरन्नित्याह॥

फिर राजा प्रजाजन परस्पर कैसा वर्त्ताव करें, इस विषय को कहते हैं॥

न घा वसुर्नि यमते दानं वाजस्य गोमतः। यत्सीमुप श्रवद्गिरः॥२३॥

न। घ। वसुः। नि। यमते। दानम्। वाजस्य। गोऽमतः। यत्। सीम्। उप। श्रवत्। गिरः॥२३॥

पदार्थः-(**न**) निषेधे (**घा**) एव। अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। (**वसुः**) वासयिता (**नि**) नितराम् (**यमते**) यच्छति ददाति (**दानम्**) (**वाजस्य**) विज्ञानस्य (**गोमतः**) प्रशस्तवाग्युक्तस्य (**यत्**) (**सीम्**) सर्वतः (**उप**) (**श्रवत्**) शृणुयात् (**गिरः**) वाचः॥२३॥

अन्वयः-यद्यो जनो गोमतो वाजस्य वसुर्दानं नि यमते गिरः सीमुप श्रवत्स न घा हन्यते॥२३॥

भावार्थः-यो मनुष्यो विद्याभयदाने ददाति सर्वेभ्यो विद्वद्भ्यः सत्यं शृणोति सोऽत्र जगति विघ्नैर्नैव हन्यते॥२३॥

पदार्थः-(**यत्**) जो जन (**गोमतः**) प्रशंसित वाणी से युक्त (**वाजस्य**) विज्ञान का (**वसुः**) वास दिलाने वाला (**दानम्**) दान को (**नि**) अत्यन्त (**यमते**) देता है (**गिरः**) वाणियों को (**सीम्**) सब प्रकार से (**उप, श्रवत्**) सुने वह (**न, घा**) नहीं मारा जाता है॥२३॥

भावार्थः-जो मनुष्य विद्या और अभयदान देता और सम्पूर्ण विद्वानों से सत्य सुनता है, वह इस संसार में विघ्नों से नहीं मारा जाता है॥२३॥

पुनः स राजा कीदृग्भवेदित्याह॥

फिर वह राजा कैसा होवे, इस विषय को कहते हैं॥

कुवित्संस्य प्र हि व्रजं गोमन्तं दस्युहा गमत्। शचीभिरप नो वरत्॥२४॥

कुवित्ऽसंस्य। प्र। हि। व्रजम्। गोऽमन्तम्। दस्युऽहा। गमत्। शचीभिः। अप। नः। वरत्॥२४॥

पदार्थः-(**कुवित्सस्य**) यः कुविन्महत्सनति विभजति तस्य (**प्र**) (**हि**) (**व्रजम्**) व्रजन्ति यस्मिंस्तम् (**गोमन्तम्**) प्रशस्ता गावो विद्यन्ते यस्मिँस्तम् (**दस्युहा**) दस्यून् दुष्टाञ्चोरान् हन्ति (**गमत्**) गच्छति (**शचीभिः**) प्रज्ञाभिः कर्म्मभिर्वा (**अप**) दूरीकरणे (**नः**) अस्मान् (**वरत्**) वृणुयात्॥२४॥

अन्वयः-यो दस्युहा राजा शचीभिः कुवित्सस्य गोमन्तं व्रजमप गमत्स हि नः प्र वरत्॥२४॥

भावार्थः-यो राजा दस्यून् दुष्टाञ्जनान् दूरीकृत्य न्यायव्यवहारप्रचारायोत्तमान् जनान्त्स्वीकरोति स महतोः सत्यासत्ययोर्विवेचको भवति॥२४॥

पदार्थः-जो (**दस्युहा**) दुष्ट चोरों को मारने वाला राजा (**शचीभिः**) बुद्धि वाले कर्मों से (**कुवित्सस्य**) अत्यन्त विभाग करने वाले के (**गोमन्तम्**) प्रशंसित गौवें विद्यमान और (**व्रजम्**) चलते हैं जिसमें उसकी (**अप, गमत्**) प्राप्त होता है वह (**हि**) ही (**नः**) हम लोगों को (**प्र, वरत्**) स्वीकार करे॥२४॥

भावार्थः-जो राजा दुष्टजनों को दूर करके न्याय व्यवहार के प्रचार के लिये उत्तम जनों का स्वीकार करता है, वह बड़े सत्य और असत्य का विचार करने वाला होता है॥३४॥

पुनर्धर्म्मात्मानं सर्वे प्रशंसन्त्वित्याह॥

फिर धर्म्मात्मा राजा की सब प्रशंसा करें, इस विषय को कहते हैं॥

इमा उ त्वा शतक्रतोऽभि प्र णोनुवुर्गिरः। इन्द्र वत्सं न मातरः॥२५॥२५॥

इमाः। ऊँ इति। त्वा। शतक्रतो इति शतऽक्रतो। अभि। प्र। नोनुवुः। गिरः। इन्द्र। वत्सम्। न। मातरः॥२५॥

पदार्थः-(**इमाः**) प्रजाः (उ) वितर्के (**त्वा**) त्वाम् (**शतक्रतो**) अमितप्रज्ञ (**अभि**) (**प्र**) (**नोनुवुः**) भृशं प्रशंसेयुः (**गिरः**) वाचः (**इन्द्र**) प्रजापालनतत्पर (**वत्सम्**) (**न**) इव (**मातरः**) मान्यप्रदाः॥२५॥

अन्वयः-हे शतक्रतो इन्द्र! वत्सं मातरो न य इमा गिरस्त्वा प्र णोनुवुस्ता उ त्वमभि स्तुहि॥२५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे राजन्! यथा गावो वात्सल्येन स्वान् वत्सान् प्रीणन्ति तथैव सुशिक्षिता वाचः सर्वानान्दयन्तीति विद्धि॥२५॥

पदार्थः-हे (**शतक्रतो**) अथाह बुद्धि वाले (**इन्द्र**) प्रजाओं के पालन में तत्पर! (**वत्सम्**) बछड़े को (**मातरः**) आदर देने वाली माता (**न**) जैसे वैसे जो (**इमाः**) ये प्रजायें और (**गिरः**) वाणियाँ (**त्वा**) आपकी (**प्र, नोनुवुः**) अत्यन्त प्रशंसा करें उनकी (उ) वितर्क के साथ आप (**अभि**) सब प्रकार से स्तुति करिये॥२५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे राजन्! जैसे गौवें प्रेम से अपने बछड़ों को प्रसन्न करती हैं, वैसे ही उत्तम प्रकार शिक्षित वाणियाँ सब को आनन्द देती हैं, ऐसा जानो॥२५॥

केषां सख्यं न जीर्यत इत्याह॥

किन की मित्रता नहीं जीर्ण होती है, इस विषय को कहते हैं॥

दूणाशं सख्यं तव गौरसि वीर गव्यते। अश्वो अश्वायते भव॥२६॥

दुःऽनशम्। सख्यम्। तव। गौः। असि। वीर। गव्यते। अश्वः। अश्वऽयते। भव॥२६॥

पदार्थः-(**दूणाशम्**) दुर्लभो नाशो यस्य तत् (**सख्यम्**) मित्रत्वम् (**तव**) (**गौः**) धेनुरिव (**असि**) (**वीर**) धैर्य्यादिगुणयुक्त (**गव्यते**) गौरिवाचरते (**अश्वः**) तुरङ्गः (**अश्वायते**) अश्वमिवाचरते (**भव**)॥२६॥

अन्वयः-हे वीर राजन् विद्वन् वा! यस्त्वं गव्यते गौरिवाश्वायतेऽश्व इवासि यस्य तव प्रेमास्पदबद्धं दूणाशं सख्यमस्ति स त्वमस्माकं सुहृद्भव॥२६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा गोषु वृषभो वडवास्वश्वः प्रीतः सदैव वर्त्तते तथैव सज्जनानां मित्रताऽविनाशिनी भवतीति सर्वे विजानन्तु॥२६॥

पदार्थः-हे (**वीर**) धीरता आदि गुणों से युक्त राजन् वा विद्वान्! जो आप (**गव्यते**) गौ के सदृश आचरण करते हुए के लिये (**गौः**) गाय जैसे वैसे (**अश्वायते**) घोड़ों के सदृश आचरण करते हुए के लिये (**अश्वः**) घोड़ा जैसे वैसे (**असि**) हैं और जिन (**तव**) आपका प्रेम के आस्पद में बन्धा हुआ (**दूणाशम्**) दुर्लभ नाश जिसका वह (**सख्यम्**) मित्रपन है वह आप हम लोगों के मित्र (**भव**) हूजिये॥२६॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे गौओं में बैल और घोड़ियों में घोड़ा प्रसन्न सदा ही होता है, वैसे ही सज्जनों की मित्रता अविनाशिनी होती है, ऐसा सब लोग जानें॥२६॥

पुनः स राजा कीदृग्भवेदित्याह॥

फिर वह राजा कैसा होवे, इस विषय को कहते हैं॥

स मन्दस्वा ह्यन्धसो राधसे तन्वा महे। न स्तोतारं निदे करः॥२७॥

सः। मन्दस्व। हि। अन्धसः। राधसे। तन्वा। महे। न। स्तोतारम्। निदे। करः॥२७॥

पदार्थः-(**सः**) (**मन्दस्वा**) आनन्दाऽऽनन्दय वा। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**हि**) यतः (**अन्धसः**) अन्नादेः (**राधसे**) धनाय (**तन्वा**) शरीरेण (**महे**) महते (**न**) निषेधे (**स्तोतारम्**) (**निदे**) निन्दाकर्त्रे (**करः**) कुर्याः॥२७॥

अन्वयः-हे विद्वन्! हि त्वं तन्वा महे राधसेऽन्धसो मन्दस्वा निदे स्तोतारं न करस्तस्मात् स भवाञ्जनप्रियोऽस्ति॥२७॥

भावार्थः-हे राजप्रजाजना! यूयमन्नादिना सर्वानानन्दयत। अनिन्द्यान्मा निन्दत। ऐश्वर्यवृद्धये सततं प्रयतध्वम्॥२७॥

पदार्थ:-हे विद्वन्! (**हि**) जिससे आप (**तन्वा**) शरीर से (**महे**) बड़े (**राधसे**) धन के लिये (**अन्धसः**) अन्न आदि से (**मन्दस्वा**) आनन्दित हूजिये वा आनन्दित करिये और (**निदे**) निन्दा करने वाले के लिये (**स्तोतारम्**) स्तुति करने वाले को (**न**) नहीं (**करः**) करिये इससे (**सः**) वह आप जनों को प्रिय हैं॥२७॥

भावार्थ:-हे राजा और प्रजाजनो! आप लोग अन्न आदि से सब को आनन्दित करिये और निन्दा न करने योग्यों की मत निन्दा करिये तथा ऐश्वर्य्य की वृद्धि के लिये निरन्तर प्रयत्न करिये॥२७॥

अथ कस्मै क्व किं प्राप्नुयादित्याह॥

अब किसके लिये कहाँ प्राप्त होवे, इस विषय को कहते हैं॥

इमा उ त्वा सुतेसुते नक्षन्ते गिर्वणो गिरः। वत्सं गावो न धेनवः॥२८॥

इमाः। ऊँ इति। त्वा। सुतेऽसुते। नक्षन्ते। गिर्वणः। गिरः। वत्सम्। गावः। न। धेनवः॥२८॥

पदार्थः-(**इमाः**) (**उ**) (**त्वा**) त्वाम् (**सुतेसुते**) उत्पन्न उत्पन्ने जगति (**नक्षन्ते**) व्याप्नुवन्तु प्राप्नुवन्तु। (**गिर्वणः**) गीर्भिः प्रशंसनीय (**गिरः**) सुशिक्षिता वाचः (**वत्सम्**) (**गावः**) (**न**) इव (**धेनवः**) दुग्धदात्र्यः॥२८॥

अन्वयः-हे गिर्वण! सुतेसुतेऽस्मिञ्जगतीमा गिरो वत्सं धेनवो गावो न त्वा नक्षन्ते ता उ अस्मानपि प्राप्नुवन्तु॥२८॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये शुभाचरणाः सन्ति तान् गौः स्ववत्समिव सर्वा विद्या वाचः प्राप्नुवन्तु॥२८॥

पदार्थः-हे (**गिर्वणः**) वाणियों से प्रशंसा करने योग्य! (**सुतेसुते**) उत्पन्न-उत्पन्न हुए इस संसार में (**इमाः**) ये (**गिरः**) उत्तम प्रकार शिक्षित वाणियाँ (**वत्सम्**) बछड़े को (**धेनवः**) दुग्ध को देने वाली (**गावः**) गौवें (**न**) जैसे वैसे (**त्वा**) आपको (**नक्षन्ते**) व्याप्त हों, वे (**उ**) और हम लोगों को भी प्राप्त हों॥२८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो श्रेष्ठ आचरण करने वाले हैं, उनको गौ जैसे बछड़े को, वैसे सम्पूर्ण विद्या और वाणियाँ प्राप्त होती हैं॥२८॥

पुनः क उत्तम इत्याह॥

फिर कौन उत्तम है, इस विषय को कहते हैं॥

पुरूतमं पुरूणां स्तोतृणां विवाचि। वाजेभिर्वाजयताम्॥२९॥

पुरुऽतमम्। पुरूणाम्। स्तोतृणाम्। विऽवाचि। वाजेभिः। वाजऽयताम्॥२९॥

पदार्थः-(**पुरूतमम्**) अतिशयेन बहुविद्यम् (**पुरूणाम्**) बहूनाम् (**स्तोतृणाम्**) विदुषाम् (**विवाचि**) विविधार्थसत्यार्थप्रकाशिका वाचो यस्मिन् व्यवहारे (**वाजेभिः**) अन्नादिभिः (**वाजयताम्**) प्रापयताम्॥२९॥

अन्वयः-हे मनुष्या! या गिरो वाजेभिर्वाजयतां पुरूणां स्तोतृणां विवाचि पुरूतमं प्राप्नुवन्ति ता अस्मानपि प्राप्नुवन्तु॥२९॥

भावार्थः-त एव बहुषूत्तमाः सन्ति ये विद्याविनयधर्म्माचरणं प्राप्ताः सन्ति॥२९॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो वाणियाँ (**वाजेभिः**) अन्न आदिकों से (**वाजयताम्**) प्राप्त कराने वाले (**पुरूणाम्**) बहुत (**स्तोतृणाम्**) विद्वानों के (**विवाचि**) अनेक प्रकार की सत्य अर्थ को प्रकाश करने वाली वाणियाँ जिसमें उस व्यवहार में (**पुरूतमम्**) अतिशय बहुत विद्यायुक्त व्यवहार को प्राप्त होती हैं, वे हम लोगों को निश्चित प्राप्त हों॥२९॥

भावार्थः-वे ही बहुतों में उत्तम हैं जो विद्या, विनय और धर्म्माचरण को प्राप्त हुए हैं॥२९॥

राजा राजप्रजाजनाश्चैकमत्यं कुर्य्युरित्याह॥

राजा और प्रजाजन एकमति करें, इस विषय को कहते हैं॥

अस्माकमिन्द्र भूतु ते स्तोमो वाहिष्ठो अन्तमः। अस्मान् राये महे हिनु॥३०॥

अस्माकम्। इन्द्र। भूतु। ते। स्तोमः। वाहिष्ठः। अन्तमः। अस्मान्। राये। महे। हिनु॥३०॥

पदार्थः-(**अस्माकम्**) (**इन्द्र**) धनप्रद (**भूतु**) भवतु (**ते**) तव (**स्तोमः**) प्रशंसामयो व्यवहारः (**वाहिष्ठः**) अतिशयेन वोढा (**अन्तमः**) निकटस्थः (**अस्मान्**) (**राये**) (**महे**) (**हिनु**) वर्धयतु॥३०॥

अन्वयः-हे इन्द्रास्माकं वाहिष्ठोऽन्तमः स्तोमः ते वर्द्धको भूतु। यश्च तेऽन्तमो वाहिष्ठः स्तोमो भूतु सोऽस्मान् महे राये हिनु॥३०॥

भावार्थः-हे राजन्! यदैश्वर्यं तव तच्च प्रजाया यत्प्रजायास्तत्तवास्तु नैवं विना राजप्रजाजनानामुन्नतिः सम्भवति॥३०॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** धन के देने वाले! **(अस्माकम्)** हम लोगों का **(वाहिष्ठः)** अतिशय धारण करने वाला **(अन्तमः)** समीप में वर्त्तमान **(स्तोमः)** प्रशंसास्वरूप व्यवहार **(ते)** आपका बढ़ाने वाला **(भूतु)** होवे और जो आपके समीप में वर्त्तमान अतिशय धारण करने वाला प्रशंसारूप व्यवहार हो वह **(अस्मान्)** हम लोगों को **(महे)** बड़े **(राये)** धन के लिये **(हिनु)** बढ़ावे॥३०॥

भावार्थः-हे राजन्! जो ऐश्वर्य्य आपका वह प्रजा का, और जो प्रजा का वह आपका हो ऐसा करने के विना राजा और प्रजा की उन्नति का नहीं सम्भव है॥३०॥

अथ व्यापारविषयमाह॥

अब व्यापार विषय को कहते हैं॥

अधि बृबुः पणीनां वर्षिष्ठे मूर्धन्नस्थात्। उरुः कक्षो न गाङ्ग्यः॥३१॥

अधि। बृबुः। पणीनाम्। वर्षिष्ठे। मूर्धन्। अस्थात्। उरुः। कक्षः। न। गाङ्ग्यः॥३१॥

पदार्थः-**(अधि)** उपरि **(बृबुः)** छेत्ता **(पणीनाम्)** प्रशंसितानां व्यवहर्त्तृणाम् **(वर्षिष्ठे)** अतिशयेन वृद्धे **(मूर्द्धन्)** मूर्धनि **(अस्थात्)** तिष्ठति **(उरुः)** बहुः **(कक्षः)** क्रान्तस्तटादिः **(न)** इव **(गाङ्ग्यः)** यो गां गच्छति तस्या अदूरभवः॥३१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यः उरुः कक्षो गाङ्ग्यो न पणीनां वर्षिष्ठे मूर्द्धन् बृबुरध्यस्थात् स युष्माभिः कार्य्ये संप्रयोजनीयः॥३१॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा भूमिषु गच्छन्त्याः सरितो मध्यस्थाः कक्षास्तटाश्च निकटे वर्त्तन्ते तथैव व्यापारिणां समीपे शिल्पिनो वर्त्तन्ताम्॥३१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(उरुः)** बहुत **(कक्षः)** जल का उल्लङ्घन करने बाला टापू वा तट आदि **(गाङ्ग्यः)** पृथिवी को प्राप्त होने वाली के समीप में वर्त्तमान **(न)** जैसे वैसे **(पणीनाम्)** प्रशंसा करने योग्य व्यवहार करने वालों के **(वर्षिष्ठे)** अतिशय वृद्ध **(मूर्द्धन्)** मस्तक में **(बृबुः)** काटने वाला **(अधि)** ऊपर **(अस्थात्)** स्थित होता है, वह आप लोगों से कार्य्य में उत्तम प्रकार संयुक्त करने योग्य है॥३१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे पृथिवियों में जाती हुई नदी के मध्यस्थ टापू और तट समीप में वर्त्तमान हैं, वैसे ही व्यापारियों के समीप में शिल्पीजन वर्त्तमान होवें॥३१॥

सद्विद्यादिदानेन किं भवतीत्याह॥

श्रेष्ठ विद्या आदि के दान से क्या होता है, इस विषय को कहते हैं॥

यस्य॑ वा॒योरि॑व द्र॒वद्भ॒द्रा रा॒तिः स॑ह॒स्रिणी॑। स॒द्यो दा॒नाय॒ मंह॑ते॥३२॥

यस्य॑। वा॒योःऽइ॑व। द्र॒वत्। भ॒द्रा। रा॒तिः। स॒ह॒स्रिणी॑। स॒द्यः। दा॒नाय॑। मंह॑ते॥३२॥

पदार्थः-(**यस्य**) (**वायोरिव**) (**द्रवत्**) द्रवति प्राप्नोति सद्यो गच्छति वा (**भद्रा**) मङ्गलकारिणी (**रातिः**) दानक्रिया (**सहस्रिणी**) असङ्ख्याः पदार्था दीयन्ते यस्यां सा (**सद्यः**) तूर्णम् (**दानाय**) (**मंहते**) वर्धते॥३२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यस्य सहस्रिणी भद्रा रातिर्वायोरिव द्रवत् स सद्यो दानाय मंहत इति वेद्यम्॥३२॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये विद्यादिदानप्रिया जनाः स्युस्ते वायुरिव पूर्णमभीष्टं सुखं लभन्ते ये च शिल्पविद्यामुन्नयन्ति तेऽसङ्ख्यं धनं प्राप्नुवन्ति॥३२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यस्य**) जिसकी (**सहस्रिणी**) असङ्ख्य पदार्थ दिये जाते हैं जिसमें वह (**भद्रा**) मङ्गल करने वाली (**रातिः**) दान-क्रिया (**वायोरिव**) वायु के सदृश (**द्रवत्**) प्राप्त होती वा शीघ्र जाती है वह (**सद्यः**) शीघ्र (**दानाय**) दान के लिये (**मंहते**) बढ़ता है, ऐसा जानना चाहिये॥३२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो विद्या आदि के दान में प्रिय जन होवें, वे वायु के सदृश पूर्ण अभीष्ट सुख को प्राप्त होते हैं और जो शिल्पविद्या की वृद्धि करते हैं, वे असङ्ख्य धन को प्राप्त होते हैं॥३२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

तत्सु नो॒ विश्वे॑ अ॒र्य आ सदा॑ गृणन्ति का॒रव॑ः।

बृ॒बुं स॑हस्र॒दात॑मं सू॒रिं स॑हस्र॒दात॑मं सू॒रिं स॑हस्रसात॑मम्॥३३॥२६॥

तत्। सु। नः॒। विश्वे॑। अ॒र्यः। आ। सदा॑। गृ॒णन्ति॑। का॒रव॑ः। बृ॒बुम्। स॒ह॒स्र॒ऽदात॑मम्। सू॒रिम्। स॒ह॒स्र॒ऽसात॑मम्॥३३॥

पदार्थः-(**तत्**) (**सु**) (**नः**) अस्माकम् (**विश्वे**) सर्वे (**अर्यः**) स्वामी वैश्यो वा (**आ**) समन्तात् (**सदा**) (**गृणन्ति**) (**कारवः**) शिल्पिनः (**बृबुम्**) मुख्यं शिल्पिनम् (**सहस्रदातमम्**) अतिशयेनासङ्ख्यदातारम् (**सूरिम्**) विद्वांसम् (**सहस्रसातमम्**) असङ्ख्यानां पदार्थानामतिशयेन विभक्तारम्॥३३॥

अन्वयः-ये नो विश्वे कारवस्सहस्रदातमं बृबुं सहस्रसातमं सूरिं स्वा गृणन्ति ते तदतुल्यमैश्वर्य्यं सदा प्राप्नुवन्ति य एषामर्यो भवेत्स एतान् सत्कृत्य संरक्षेत्॥३३॥

भावार्थ:-ये क्रियाकुशलान् विदुषः शिल्पिनः प्रशंसन्ति तेऽसङ्ख्यं धनं प्राप्यासङ्ख्यं धनं दातुमर्हन्तीति॥३३॥

अत्र राजनीतिधनजेतृमित्रत्ववेदविदिन्द्रदातृशिल्पिकारुस्वामिकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति पञ्चचत्वारिंशत्तमं सूक्तं षट्विंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थ:-जो **(नः)** हम लोगों के **(विश्वे)** सब **(कारवः)** कारीगर जन **(सहस्रदातमम्)** अतिशय असङ्ख्य देने वाले **(बृबुम्)** मुख्य शिल्पी **(सहस्रासातमम्)** अतिशय असङ्ख्य पदार्थ बाँटने वाले **(सूरिम्)** विद्वान् को **(सु)** उत्तमता से **(आ)** सब प्रकार **(गृणन्ति)** स्वीकार करते हैं, वे **(तत्)** उस अतुल ऐश्वर्य्य को **(सदा)** सर्वकाल में प्राप्त होते हैं और जो इन में **(अर्यः)** स्वामी वा वैश्य होवे, वह इन का उत्तम प्रकार सत्कार कर रक्षा करे॥३३॥

भावार्थ:-जो जन क्रिया में निपुण विद्वानों और कारीगरों की प्रशंसा करते हैं, वे असङ्ख्य धन को प्राप्त होकर असङ्ख्य धन देने योग्य होते हैं॥३३॥

इस सूक्त में राजनीति, धन के जीतने वाले, मित्रपन, वेद के जानने वाले, ऐश्वर्य्य से युक्त, दाता, कारीगर और स्वामी के कृत्य का वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह पैंतालीसवाँ सूक्त और छब्बीसवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ चतुर्दशर्चस्य षट्चत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य शंयुर्बार्हस्पत्य ऋषिः। इन्द्रः प्रगाथं वा देवता। १ निचृदनुष्टुप्। ५, ७ स्वराडनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः। २ स्वराड्बृहती। ४, ८ भुरिग्बृहती। ९ विराड्बृहती। ११ निचृद्बृहती। ३, १३ बृहती छन्दः। मध्यमः स्वरः। ६ स्वराड् ब्राह्मी गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः। १० पङ्क्तिः। १२, १४ विराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ पुनः शिल्पविद्यामाह॥

अब चौदह ऋचा वाले छयालीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में फिर शिल्पविद्या को कहते हैं॥

त्वामिद्धि हवा॑महे सा॒ता वाज॑स्य का॒रव॑ः।

त्वां वृ॒त्रेष्वि॑न्द्र सत्प॑तिं॒ नर॒स्त्वां काष्ठा॒स्वर्व॑तः॥ १॥

त्वाम्। इत्। हि। हवा॑महे। सा॒ता। वाज॑स्य। का॒रव॑ः। त्वाम्। वृ॒त्रेषु॑। इ॒न्द्र॒। सत्ऽप॑तिम्। नर॑ः। त्वाम्। काष्ठा॑सु। अर्व॑तः॥ १॥

पदार्थः-(**त्वाम्**) (**इत्**) एव (**हि**) (**हवामहे**) (**साता**) विभागे (**वाजस्य**) विज्ञानस्य (**कारवः**) कारकराः (**त्वाम्**) (**वृत्रेषु**) धनेषु (**इन्द्र**) (**सत्पतिम्**) सतां पालकम् (**नरः**) (**त्वाम्**) (**काष्ठासु**) दिक्षु (**अर्वतः**) अश्वानिव॥ १॥

अन्वयः-हे इन्द्र! कारवो नरो वयं त्वां हि वाजस्य साता हवामहे वृत्रेषु सत्पतिं त्वां हवामहेऽर्वतः सारथिरिव त्वां काष्ठास्विद्धवामहे॥ १॥

भावार्थः-हे धनाढ्य! यदि त्वमस्माकं सहायो भवेस्तर्हि त्वद्धनेन वयं शिल्पविद्ययाऽनेकान् पदार्थान् रचयित्वा त्वामधिकं धनाढ्यं कुर्याम॥ १॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य से युक्त जन! (**कारवः**) कारीगर (**नरः**) जन हम लोग (**त्वाम्**) आपको (**हि**) ही (**वाजस्य**) विज्ञान के (**साता**) विभाग में (**हवामहे**) ग्रहण करें और (**वृत्रेषु**) धनों में (**सत्पतिम्**) श्रेष्ठों के पालने वाले (**त्वाम्**) आपको पुकारें तथा (**अर्वतः**) घोड़ों को जैसे सारथी, वैसे (**त्वाम्**) आपको (**काष्ठासु**) दिशाओं में (**इत्**) ही पुकारें॥ १॥

भावार्थः-हे धन से युक्त! जो आप हम लोगों के सहायक होवें तो आपके धन से हम लोग शिल्पविद्या से अनेक पदार्थों को रचकर आपको बड़ा धनी करें॥ १॥

पुनर्मनुष्याः शिल्पविद्यया किं लभन्त इत्याह॥

फिर मनुष्य शिल्पविद्या से क्या पाते हैं, इस विषय को कहते हैं॥

स त्वं न॑श्चित्र वज्रहस्त धृष्णु॒या म॒हः स्त॑वा॒नो अ॑द्रिवः।

गामश्वं रथ्यमिन्द्र सं किर सत्रा वाजं न जिग्युषे॥

सः। त्वम्। नः। चित्र। वज्रऽहस्त। धृष्णुऽया। महः। स्तवानः। अद्रिऽवः। गाम्। अश्वम्। रथ्यम्। इन्द्र। सम्। किर। सत्रा। वाजम्। न। जिग्युषे॥ २॥

पदार्थः-(**सः**) (**त्वम्**) (**नः**) अस्मभ्यम् (**चित्र**) अद्भुतविद्य (**वज्रहस्त**) शस्त्रास्त्रपाणे (**धृष्णुया**) दृढत्वेन प्रागल्भ्येन वा (**महः**) महत् (**स्तवानः**) प्रशंसन् (**अद्रिवः**) मेघयुक्तसूर्यवद्वर्तमान (**गाम्**) धेनुम् (**अश्वम्**) तुरङ्गम् (**रथ्यम्**) रथाय हितम् (**इन्द्र**) (**सम्**) (**किर**) विक्षिप (**सत्रा**) सत्येन विज्ञानेन (**वाजम्**) स- ामम् (**न**) इव (**जिग्युषे**) जेतुं शीलाय॥ २॥

अन्वयः-हे अद्रिवश्चित्र वज्रहस्तेन्द्र! स त्वं धृष्णुया महः स्तवानः सत्रा वाजं न जिग्युषे नोऽस्मभ्यं गां रथ्यमश्वं सङ्किर॥ २॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे राजादयो मनुष्या यथा जयशीला योद्धारः स- ामे विजयं प्राप्य धनं प्रतिष्ठां च लभन्ते तथैव शिल्पविद्याकुशला महदैश्वर्यं प्राप्नुवन्ति॥ २॥

पदार्थः-हे (**अद्रिवः**) मेघ से युक्त सूर्य्य के समान वर्त्तमान (**चित्र**) अद्भुत विद्या वाले (**वज्रहस्त**) हाथ में शस्त्र और अस्त्र को धारण किये हुए (**इन्द्र**) ऐश्वर्य्य से युक्त! (**सः**) वह (**त्वम्**) आप (**धृष्णुया**) निश्चयपने वा ढिठाई से (**महः**) बड़े की (**स्तवानः**) प्रशंसा करते हुए (**सत्रा**) सत्य विज्ञान से (**वाजम्**) स- ाम को (**न**) जैसे वैसे (**जिग्युषे**) जीतने वाले (**नः**) हम लोगों के लिये (**गाम्**) गौ को (**रथ्यम्**) और वाहन के लिये हितकारक (**अश्वम्**) घोड़ों को (**सम्, किर**) सङ्कीर्ण करो-इकट्ठा करो॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे राजा आदि मनुष्यो! जैसे जीतने वाले योद्धा जन स- ाम में विजय को प्राप्त होकर धन और प्रतिष्ठा को प्राप्त होते हैं, वैसे ही शिल्पविद्या में चतुर जन बड़े ऐश्वर्य्य को प्राप्त होते हैं॥ २॥

पुनर्मनुष्याः स- ामे कथं वर्त्तेरन्नित्याह॥

फिर मनुष्य स- ाम में कैसा वर्त्ताव करें, इस विषय को कहते हैं॥

यः सत्राहा विचर्षणिरिन्द्रं तं हूमहे वयम्।

सहस्रमुष्क तुविनृम्ण सत्पते भवा समत्सु नो वृधे॥ ३॥

यः। सत्राऽहा। विऽचर्षणिः। इन्द्रम्। तम्। हूमहे। वयम्। सहस्रऽमुष्क। तुविऽनृम्ण। सत्ऽपते। भव। समत्ऽसु। नः। वृधे॥ ३॥

पदार्थः-(**यः**) (**सत्राहा**) सत्यदिनानि (**विचर्षणिः**) विद्वान् मनुष्यः (**इन्द्रम्**) ऐश्वर्य्ययुक्तम् (**तम्**) (**हूमहे**) प्रशंसामः (**वयम्**) (**सहस्रमुष्क**) असङ्ख्यवीर्य्य (**तुविनृम्ण**) बहुधन (**सत्पते**) सतां विदुषां पालक (**भवा**) अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**समत्सु**) स- ामेषु (**नः**) अस्माकम् (**वृधे**) वर्धनाय॥ ३॥

अन्वय:-हे सहस्रमुष्क तुविनृम्ण सत्पत इन्द्र! यो विचर्षणि: सत्राहेन्द्रमाह्वयति तथा तं वयं हूमहे स त्वं समत्सु नो वृधे भव॥३॥

भावार्थ:-तमेव वयं प्रशंसामो य: प्रतिदिनमस्माकं रक्षो विधत्ते तमेव वयं स-ामे संरक्षेम॥३॥

पदार्थ:-हे **(सहस्रमुष्क)** असङ्ख्य पराक्रम वाले **(तुविनृम्ण)** बहुत धनों से युक्त **(सत्पते)** विद्वानों के पालने वाले अत्यन्त ऐश्वर्य्य से युक्त **(य:)** जो **(विचर्षणि:)** विद्वान् मनुष्य **(सत्राहा)** सत्य दिनों में **(इन्द्रम्)** अत्यन्त ऐश्वर्य्य से युक्त को पुकारता है, वैसे **(तम्)** उसकी **(वयम्)** हम लोग **(हूमहे)** प्रशंसा करते हैं और आप **(समत्सु)** स-ामों में **(न:)** हम लोगों की **(वृधे)** वृद्धि के लिये **(भव)** हूजिये॥३॥

भावार्थ:-उसी की हम लोग प्रशंसा करते हैं, जो प्रतिदिन हम लोगों की रक्षा करता है और उसी की हम लोग स-ाम में रक्षा करें॥३॥

पुना राजप्रजाजना: किं प्रतिजानीरन्नित्याह॥

फिर राजा और प्रजाजन किसकी प्रतिज्ञा करें, इस विषय को कहते हैं॥

बाधसे जनान् वृषभेव मन्युना घृषौ मीळ्ह ऋचीषम।
अस्माकं बोध्यविता महाधने तनूष्वप्सु सूर्ये॥४॥

बाधसे। जनान्। वृषभाऽइव। मन्युना। घृषौ। मीळ्हे। ऋचीषम। अस्माकम्। बोधि। अविता। महाऽधने। तनूषु। अप्ऽसु। सूर्ये॥४॥

पदार्थ:-**(बाधसे)** **(जनान्)** **(वृषभेव)** बलिष्ठवृषभवत् **(मन्युना)** क्रोधेन **(घृषौ)** दुष्टानां घर्षणे **(मीळ्हे)** स-ामे **(ऋचीषम)** ऋचा तुल्यप्रशंसनीय **(अस्माकम्)** **(बोधि)** विज्ञापय **(अविता)** **(महाधने)** स-ामे **(तनूषु)** शरीरेषु **(अप्सु)** प्राणेषु **(सूर्ये)** सवितरि॥४॥

अन्वय:-हे ऋचीषमेन्द्र राजन्! ये मन्युना वृषभेव घृषौ मीळ्हे जनान् बाधन्ते यतस्त्वं तान् बाधसेऽस्माकं तनूष्वप्सु महाधनेऽविता सन्त्सूर्य्ये प्रकाश इवाऽस्मान् बोधि तस्माद्भवान् माननीयोऽस्ति॥४॥

भावार्थ:-अत्रोपमालङ्कार:। हे राजन्! वयं दुष्टानां बाधनाय स-ामेऽस्मदीयानां रक्षणाय त्वां स्वीकुर्मस्त्वमस्मान्त्सत्यन्यायकृत्यानि सदैव बोधये:॥४॥

पदार्थ:-हे **(ऋचीषम)** ऋचा के सदृश प्रशंसा करने योग्य अत्यन्त ऐश्वर्य से युक्त राजन्! जो **(मन्युना)** क्रोध से **(वृषभेव)** बलयुक्त बैल जैसे वैसे **(घृषौ)** दुष्टों के घर्षण में **(मीळ्हे)** स-ाम में **(जनान्)** मनुष्यों की बाधा करते हैं, जिससे आप उनकी **(बाधसे)** बाधा करते हो और **(अस्माकम्)** हम लोगों के **(तनूषु)** शरीरों में और **(अप्सु)** प्राणों में **(महाधने)** स-ाम में **(अविता)** रक्षा करने वाले हुए **(सूर्य्ये)** सूर्य्य में प्रकाश जैसे वैसे हम लोगों को **(बोधि)** जनाइये इससे आप आदर करने योग्य हैं॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे राजन्! हम लोग दुष्टों के बाधने के लिये और स- ाम में अपने लोगों की रक्षा के लिये आपका स्वीकार करें तथा आप हम लोगों को सत्य न्यायकृत्य सदा ही जनाइये॥४॥

पुनः स राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

इन्द्र ज्येष्ठं न आ भरँ ओजिष्ठं पपुरि श्रवः।
येनेमे चित्र वज्रहस्त रोदसी ओभे सुशिप्र प्राः॥५॥२७॥

इन्द्र। ज्येष्ठम्। नः। आ। भर। ओजिष्ठम्। पपुरि। श्रवः। येन। इमे इति। चित्र। वज्रऽहस्त। रोदसी इति। आ। उभे इति। सुऽशिप्र। प्राः॥५॥

पदार्थः-(**इन्द्र**) शुभगुणानां धर्त्तः (**ज्येष्ठम्**) अतिशयेन प्रशस्तम् (**नः**) अस्मदर्थम् (**आ**) (**भर**) (**ओजिष्ठम्**) अतिशयेन बलप्रदम् (**पपुरि**) पालकं पुष्टिकरम् (**श्रवः**) अन्नं श्रवणं वा (**येन**) (**इमे**) (**चित्र**) अद्भुतगुणकर्मस्वभाव (**वज्रहस्त**) शस्त्रास्त्रपाणे (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**आ**) समन्तात् (**उभे**) (**सुशिप्र**) सुशोभितहनुनासिक (**प्राः**) व्याप्नुयाः॥५॥

अन्वयः-हे सुशिप्र चित्र वज्रहस्तेन्द्र! त्वं ज्येष्ठमोजिष्ठं पपुरि श्रवो न आ भर येनोभे इमे रोदसी आ प्राः॥५॥

भावार्थः-हे राजन्! भवानीदृशान् गुणकर्मस्वभावान्स्वीकुर्याद्येन न्यायं भूमिं राज्यं सेनां विजयं च धर्तुं शक्नुयात्॥५॥

पदार्थः-हे (**सुशिप्र**) सुन्दर ठुड्ढी और नासिका युक्त (**चित्र**) अद्भुत गुण, कर्म्म और स्वभाव वाले (**वज्रहस्त**) शस्त्र और अस्त्र हाथ में जिसके ऐसे और (**इन्द्र**) श्रेष्ठ गुणों के धारण करने वाले! आप (**ज्येष्ठम्**) अतिशय प्रशंसित (**ओजिष्ठम्**) अतिशय बल के देने (**पपुरि**) पालन करने और पुष्टि करने वाले (**श्रवः**) अन्न वा श्रवण को (**नः**) हम लोगों के लिये (**आ, भर**) धारण करो (**येन**) जिससे (**उभे**) दोनों (**इमे**) इन (**रोदसी**) अन्तरिक्ष और पृथिवी को (**आ**) सब प्रकार से (**प्राः**) व्याप्त होओ॥५॥

भावार्थः-हे राजन्! आप ऐसे गुण, कर्म्म और स्वभाव का स्वीकर करें, जिससे न्याय, भूमि, राज्य, सेना और विजय को धारण करने को समर्थ होवें॥५॥

पुनः स राजा कीदृशो भवेदित्याह॥

फिर वह राजा कैसा होवे, इस विषय को कहते हैं॥

त्वामुग्रमवसे चर्षणीसहं राजन् देवेषु हूमहे।
विश्वा सु नो विथुरा पिब्दना वसोऽमित्रान्त्सुषहान् कृधि॥६॥

त्वाम्। उग्रम्। अवसे। चर्षणिऽसहम्। राजन्। देवेषु। हूमहे। विश्वा। सु। नः। विथुरा। पिब्दना। वसो इति। अमित्रान्। सुऽसहान्। कृधि॥६॥

पदार्थः-(**त्वाम्**) (**उग्रम्**) तेजस्विनम् (**अवसे**) रक्षणाद्याय (**चर्षणीसहम्**) शत्रुसेनायाः सोढारम् (**राजन्**) विद्याविनयाभ्यां प्रकाशमान (**देवेषु**) विद्वत्सु (**हूमहे**) आह्वयामः (**विश्वा**) सर्वाणि (**सु**) (**नः**) अस्माकम् (**विथुरा**) व्यथायुक्तानि (**पिब्दना**) पेष्टुमर्हाणि शत्रुसैन्यानि (**वसो**) सुखे वासयितः (**अमित्रान्**) शत्रून् (**सुसहान्**) सुखेन सोढुं योग्यान् (**कृधि**) कुरु॥६॥

अन्वयः-हे वसो राजन्! वयं विश्वा देवेष्ववस उग्रं चर्षणीसहं त्वां सु हूमहे त्वं नोऽमित्रान्त्सुसहान् कृधि पिब्दना विथुरा कृधि॥६॥

भावार्थः-यो राजाऽमात्यप्रजाजनानां सुखदुःखे स्वात्मवद् ज्ञात्वा यथा शत्रूणां पराभवः स्यात्तथाऽनुष्ठाता भवेत्तमेव सर्वे जनाः पितृवन्मन्येरन्॥६॥

पदार्थः-हे (**वसो**) सुख में वसाने वाले (**राजन्**) विद्या और विनय से प्रकाशमान! हम लोग (**विश्वा**) सम्पूर्ण कार्य्यों के प्रति और (**देवेषु**) विद्वानों में (**अवसे**) रक्षण आदि के लिये (**उग्रम्**) तेजस्वी और (**चर्षणीसहम्**) शत्रुओं की सेना के सहने वाले (**त्वाम्**) आपको (**सु, हूमहे**) [अच्छी प्रकार] पुकारें और आप (**नः**) हम लोगों के (**अमित्रान्**) शत्रुओं को (**सुसहान्**) सुख के सहने योग्य (**कृधि**) करिये और (**पिब्दना**) पीसने योग्य शत्रुसैन्यों को (**विथुरा**) व्यथायुक्त करिये॥६॥

भावार्थः-जो राजा मन्त्री और प्रजाजनों के सुख और दुःख को अपने सदृश जान कर जैसे शत्रुओं का पराभव होवे वैसा उपाय करने वाला होवे, उसी को सब लोग पिता के सदृश मानें॥६॥

पुना राज्ञा कुत्र किं धर्त्तव्यमित्याह॥

फिर राजा को कहाँ क्या धारण करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

यदिन्द्र नाहुषीष्वाँ ओजो नृम्णं च कृष्टिषु।

यद्वा पञ्च क्षितीनां द्युम्नमा भर सत्रा विश्वानि पौंस्या॥७॥

यत्। इन्द्र। नाहुषीषु। आ। ओजः। नृम्णम्। च। कृष्टिषु। यत्। वा। पञ्च। क्षितीनाम्। द्युम्नम्। आ। भर। सत्रा। विश्वानि। पौंस्या॥७॥

पदार्थः-(**यत्**) (**इन्द्र**) प्रजाप्रियधर्त्तः (**नाहुषीषु**) नहुषाणां मनुष्याणामासु प्रजासु (**आ**) (**ओजः**) बलकरमन्नादिकम् (**नृम्णम्**) धनम् (**च**) (**कृष्टिषु**) मनुष्येषु (**यत्**) (**वा**) (**पञ्च**) पञ्चानां तत्त्वाख्यानाम् (**क्षितीनाम्**) राजसम्बन्धिधीनां भूमीनां मध्ये (**द्युम्नम्**) शुद्धं यशः (**आ**) (**भर**) (**सत्रा**) सत्यानि (**विश्वानि**) सर्वाणि (**पौंस्या**) पुरुषार्थजानि बलानि॥७॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं कृष्टिषु नाहुषीषु यदोजो नृम्णं च भवेत्तदाऽऽभर वा पञ्च क्षितीनां यद् द्युम्नमस्त्यथवा सत्रा विश्वानि पौंस्या वर्त्तन्ते तानि चाऽऽभर॥७॥

भावार्थ:-हे राजन्! यदि भवान्त्सर्वा: प्रजा धनधान्यविद्यायुक्ता: कुर्यात्तर्हि पञ्चतत्त्वाख्यं राज्यं प्राप्य धवलं यश: प्राप्नुयात्॥७॥

पदार्थ:-हे **(इन्द्र)** प्रजा के प्रिय को धारण करने वाले! आप **(कृष्टिषु)** मनुष्यों में और **(नाहुषीषु)** मनुष्यसम्बन्धी प्रजाओं में **(यत्)** जो **(ओज:)** बलकारक अन्न आदि **(नृम्णम्)** धन **(च)** और होवे उसको **(आ, भर)** धारण करिये **(वा)** वा **(पञ्च)** पांच तत्त्वों और **(क्षितीनाम्)** राजसम्बन्धिनी भूमियों के मध्य में **(यत्)** जो **(द्युम्नम्)** शुद्ध यश है अथवा **(सत्रा)** सत्य **(विश्वानि)** सम्पूर्ण **(पौंस्या)** पुरुषार्थ से उत्पन्न हुए बल वर्त्तमान हैं, उनको **(आ)** धारण करिये॥७॥

भावार्थ:-हे राजन्! जो आप सम्पूर्ण प्रजाओं को धन-धान्य और विद्या से युक्त करिये तो पञ्चतत्त्वनामक राज्य को प्राप्त होकर धवलित यश को प्राप्त हूजिये॥७॥

पुन: स राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

यद्वा तृक्षौ मघवन् द्रुह्यावा जने यत्पूरौ कच्च वृष्ण्यम्।
अस्मभ्यं तद्रिरीहि सं नृषाह्येऽमित्रान् पृत्सु तुर्वणे॥८॥

यत्। वा। तृक्षौ। मघऽवन्। द्रुह्यौ। आ। जने। यत्। पूरौ। कत्। च। वृष्ण्यम्। अस्मभ्यम्। तत्। रिरीहि। सम्। नृऽसह्ये। अमित्रान्। पृत्ऽसु। तुर्वणे॥८॥

पदार्थ:-**(यत्)** **(वा)** **(तृक्षौ)** विद्याशुभगुणप्राप्ते **(मघवन्)** न्यायोपार्जितधन **(द्रुह्यौ)** द्रोग्धुं योग्ये **(आ)** **(जने)** मनुष्ये **(यत्)** **(पूरौ)** पूर्णबले **(कत्)** कदा **(च)** **(वृष्ण्यम्)** वृषसु हितं बलम् **(अस्मभ्यम्)** **(तत्)** **(रिरीहि)** प्रापय **(सम्)** **(नृषाह्ये)** नृभिस्सोढुं योग्ये स-ामे **(अमित्रान्)** शत्रून् **(पृत्सु)** सेनासु **(तुर्वणे)** हिंसनाय॥८॥

अन्वय:-हे मघवँस्त्वं तृक्षौ द्रुह्यौ जने यद्रिरीहि पूरौ जने यद्वृष्ण्यं रिरीहि तदस्मभ्यं च कत्प्रापये: कदा वा चास्माकममित्रान् नृषाह्ये पृत्सु तुर्वणे समा रिरीहि॥८॥

भावार्थ:-हे राजन्! यदा त्वमुत्तमेषु मनुष्येषु प्रतिष्ठां दुष्टेषु तिरस्कारं दध्यास्तदैव शत्रुविजयाय योग्यो भवे:॥८॥

पदार्थ:-हे **(मघवन्)** न्याय से धन इकट्ठा करने वाले! आप **(तृक्षौ)** विद्या और श्रेष्ठ गुणों से प्राप्त **(द्रुह्यौ)** द्रोह करने योग्य **(जने)** मनुष्य में **(यत्)** जो **(रिरीहि)** प्राप्त कराइये और **(पूरौ)** पूर्ण बल वाले मनुष्य में **(यत्)** जो **(वृष्ण्यम्)** उत्तमों में हितकारक जो बल उसको प्राप्त कराइये **(तत्)** वह **(अस्मभ्यम्)** हम लोगों के लिये **(च)** और **(कत्)** कब प्राप्त कराइये और कब **(वा)** वा हम लोगों के **(अमित्रान्)** शत्रुओं को **(नृषाह्ये)** मनुष्यों से सहने योग्य स-ाम में **(पृत्सु)** सेनाओं में **(तुर्वणे)** हिंसन के लिये **(सम्)** अच्छे प्रकार **(आ)** सब ओर से प्राप्त कराइये॥८॥

भावार्थः-हे राजन्! जब आप उत्तम मनुष्यों में प्रतिष्ठा और दुष्टों में तिरस्कार धारण करें, तभी शत्रुओं के विजय के लिये योग्य होवें॥८॥

मनुष्याः कीदृशं गृहं निर्मिमीरन्नित्याह॥

मनुष्य कैसे गृह को बनावें, इस विषय को कहते हैं॥

इन्द्र॑ त्रि॒धातु॑ शर॒णं त्रि॒वरू॑थं स्वस्ति॒मत्।

छ॒र्दिर्य॑च्छ म॒घव॑द्भ्यश्च॒ मह्यं॑ च या॒वया॑ दि॒द्युमे॑भ्यः॥९॥

इन्द्र॑। त्रि॒ऽधातु॑। श॒र॒णम्। त्रि॒ऽवरू॑थम्। स्व॒स्ति॒ऽमत्। छ॒र्दिः। य॒च्छ॒। म॒घव॑त्ऽभ्यः। च॒। मह्य॑म्। च॒। य॒वय॑। दि॒द्युम्। ए॒भ्यः॥९॥

पदार्थः-(**इन्द्र**) (**त्रिधातु**) त्रयः सुवर्णरजतताम्रा धातवो यस्मिंस्तत् (**शरणम्**) आश्रयितुं योग्यम् (**त्रिवरूथम्**) शीतोष्णवर्षासूत्तमम् (**स्वस्तिमत्**) बहुसुखयुक्तम् (**छर्दिः**) गृहम् (**यच्छ**) गृहाण देहि वा (**मघवद्भ्यः**) बहुधनेभ्यः (**च**) (**मह्यम्**) धनाढ्याय (**च**) (**यावय**) संयोजय। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। (**दिद्युम्**) सुप्रकाशम् (**एभ्यः**) वर्त्तमानेभ्यः॥९॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं त्रिधातु त्रिवरूथं शरणं स्वस्तिमच्छर्दिर्यच्छ येभ्यो मघवद्भ्यो मह्यं च यच्छैभ्यो दिद्युं च यावया॥९॥

भावार्थः-मनुष्यैर्यत्सर्वर्त्तुषु सुखकरं धनधान्ययुक्तं वृक्षपुष्पफलशुद्धवायूदकधार्मिकधनाढ्यसमन्वितं गृहं तन्निर्माय तत्र निवसनीयं यतः सर्वदाऽऽरोग्येन सुखं वर्धेत॥९॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) ऐश्वर्य्यों से युक्त आप (**त्रिधातु**) तीन सुवर्ण, चाँदी और ताँबा ये धातु जिसमें उस (**त्रिवरूथम्**) शीत, उष्ण और वर्षा ऋतु में उत्तम (**शरणम्**) आश्रय करने योग्य (**स्वस्तिमत्**) बहुत सुख से युक्त (**छर्दिः**) गृह को (**यच्छ**) ग्रहण करिये वा दीजिये और जिन (**मघवद्भ्यः**) बहुत धन वालों के और (**मह्यम्**) मुझ धनयुक्त के लिये (**च**) भी ग्रहण करिये वा दीजिये (**एभ्यः**) इन वर्त्तमानों के लिये (**दिद्युम्**) सुप्रकाश को (**च**) भी (**यावया**) संयुक्त कराइये॥९॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि जो सब ऋतुओं में सुखकारक, धन धान्य से युक्त, वृक्ष, पुष्प, फल, शुद्ध वायु जल तथा धार्मिक और धनाढ्यों से युक्त गृह उसको बनाकर वहाँ निवास करें जिससे सर्वदा आरोग्य से सुख बढ़े॥९॥

पुनः स राजा केषां किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा किन को क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

ये ग॑व्य॒ता मन॑सा॒ शत्रु॑मादभु॒र॑भिप्र॒घ्नन्ति॑ धृष्णु॒या।

अध॑ स्मा नो मघवन्निन्द्र गिर्वणस्तनू॒पा अन्त॑मो भव॥१०॥२८॥

ये। गव्यता। मनसा। शत्रुम्। आऽदभुः। अभिऽप्रघ्नन्ति। धृष्णुऽया। अध। स्म। नः। मघऽवन्। इन्द्र। गिर्वणः। तनूऽपाः। अन्तमः। भव॥ १०॥

पदार्थः-(**ये**) (**गव्यता**) गवा वाचेवाचरता (**मनसा**) (**शत्रुम्**) (**आदभुः**) समन्ताद्धिंसन्ति (**अभिप्रघ्नन्ति**) आभिमुख्ये प्रकर्षेण घ्नन्ति (**धृष्णुया**) प्रगल्भत्वादिना (**अध**) आनन्तर्ये (**स्मा**) एव। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। (**नः**) अस्माकम् (**मघवन्**) बहुधनयुक्त (**इन्द्र**) शत्रुविदारक (**गिर्वणः**) सुशिक्षिताभिर्वाग्भिः सेवित (**तनूपाः**) स्वस्यान्येषां च शरीराणां रक्षकः (**अन्तमः**) समीपस्थः (**भव**)॥१०॥

अन्वयः-हे गिर्वणो मघवन्निन्द्र! ये धृष्णुया गव्यता मनसा शत्रुमादभुरथास्य सेनामभिप्रघ्नन्ति तैस्सह स्मा नस्तनूपा अन्तमो भव॥१०॥

भावार्थः-हे राजन्! ये दस्य्वादिदुष्टानां शत्रूणां च निग्रहीतारः प्रजापालनतत्परा धार्मिकजनाः स्युस्तेषां विश्वासेन राज्यकृत्यादीन्यलङ्कुर्याः॥१०॥

पदार्थः-हे (**गिर्वणः**) उत्तम प्रकार शिक्षित वाणियों से सेवा किये गये (**मघवन्**) बहुत धन से युक्त (**इन्द्र**) शत्रुओं को नाश करने वाले! (**ये**) जो (**धृष्णुया**) ढीठपन आदि से (**गव्यता**) वाणी के सदृश आचरण करते हुए (**मनसा**) मन से (**शत्रुम्**) शत्रु का (**आदभुः**) सब प्रकार से नाश करते हैं (**अध**) इसके अनन्तर इसकी सेना का (**अभिप्रघ्नन्ति**) सम्मुख अत्यन्त नाश करते हैं, उनके साथ (**स्मा**) ही (**नः**) हम लोगों के (**तनूपाः**) अपने और अन्यों के शरीरों के रक्षक (**अन्तमः**) समीप में स्थित (**भव**) हूजिये॥१०॥

भावार्थः-हे राजन्! जो ठग आदि दुष्ट शत्रुओं के बाँधने वाले तथा प्रजाओं के पालन में तत्पर धार्मिक जन हों, उनके विश्वास से राज्य के कृत्यों को शोभित करिये॥१०॥

पुनः स राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

अध स्मा नो वृधे भवेन्द्र नायमवा युधि।

यदन्तरिक्षे पतयन्ति पर्णिनो दिद्यवस्तिग्ममूर्धानः॥ ११॥

अध। स्म। नः। वृधे। भव। इन्द्र। नायम्। अव। युधि। यत्। अन्तरिक्षे। पतयन्ति। पर्णिनः। दिद्यवः। तिग्मऽमूर्धानः॥ ११॥

पदार्थः-(**अध**) आनन्तर्य्ये (**स्मा**) एव। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। (**नः**) अस्माकम् (**वृधे**) (**भव**) (**इन्द्र**) ऐश्वर्यवर्धक (**नायम्**) नेतुम् (**अवा**) रक्ष। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**युधि**) स-ामे (**यत्**) (**अन्तरिक्षे**) (**पतयन्ति**) गच्छन्ति (**पर्णिनः**) पक्षिणः (**दिद्यवः**) प्रकाशमानाः (**तिग्ममूर्द्धानः**) तिग्म उपरि वर्तमानाः॥११॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यद्येऽन्तरिक्षे पर्णिन इव दिद्यवस्तिग्ममूर्द्धानो योद्धारो युधि पतयन्त्यध विजयं नायं प्रयतन्ते तैः सह नो वृधे भव युध्यस्मान् स्मा सततमवा॥११॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजन्! भवान् विमानादीनि यानानि संस्थाप्य पक्षिवदन्तरिक्षमार्गेण गमनागमने कृत्वोत्तमैः पुरुषैः सह विजयं प्राप्य सर्वोत्कृष्टो भव॥११॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** ऐश्वर्य्य के बढ़ाने वाले सेना के स्वामी! **(यत्)** जो **(अन्तरिक्षे)** अन्तरिक्ष में **(पर्णिनः)** पक्षियों के समान **(दिद्यवः)** प्रकाशमान **(तिग्ममूर्द्धानः)** ऊपर वर्त्तमान योद्धा जन **(युधि)** सङ्ग्राम में **(पतयन्ति)** जाते हैं **(अध)** इसके अनन्तर विजय को **(नायम्)** प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं उनके साथ **(नः)** हम लोगों की **(वृधे)** वृद्धि के लिये **(भव)** प्रसिद्ध हूजिये और स-ग्राम में हम लोगों की **(स्मा)** ही निरन्तर **(अवा)** रक्षा कीजिये॥११॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजन्! आप विमान आदि वाहनों को स्थापित कर पक्षियों के सदृश अन्तरिक्ष मार्ग से गमन और आगमन करके तथा उत्तम पुरुषों के साथ विजय को प्राप्त होकर सब से श्रेष्ठ हूजिये॥११॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

यत्र शूरा॑सस्त॒न्वो॑ वितन्व॒ते प्रि॒या शर्म॑ पि॒तॄणाम्।

अध॑ स्मा यच्छ त॒न्वे॒३॒॑ तने॑ च छ॒र्दिर॒चित्तं॑ या॒वय॒ द्वेषः॑॥१२॥

यत्र॑। शूरा॑सः। त॒न्वः॑। वि॒ऽत॒न्व॒ते। प्रि॒या। शर्म॑। पि॒तॄणाम्। अध॑। स्म॒। य॒च्छ। त॒न्वे॑। तने॑। च॒। छ॒र्दिः। अ॒चित्त॑म्। य॒वय॑। द्वेषः॑॥१२॥

पदार्थः-**(यत्र)** यस्मिन् युद्धे **(शूरासः)** **(तन्वः)** शरीराणि **(वितन्वते)** **(प्रिया)** प्रियाणि **(शर्म)** शर्माणि गृहाणि **(पितॄणाम्)** जनकानां स्वामिनां वा **(अध)** **(स्मा)** एव अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। **(यच्छ)** गृहाण **(तन्वे)** शरीराय **(तने)** विस्तृते **(च)** **(छर्दिः)** गृहम् **(अचित्तम्)** चेतनरहितम् **(यावय)** वियोजय। अत्र **तुजादीनामि**त्यभ्यासदैर्घ्यम्। **(द्वेषः)** शत्रून्॥१२॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यत्र शूरासः पितॄणां तन्वो वितन्वते प्रिया शर्म वितन्वतेऽध तन्वे तने चाऽचित्तं छर्दिस्त्वं यच्छ तत्र द्वेषः स्म यावय॥१२॥

भावार्थः-हे राजन्! शूरवीरान् धार्मिकाञ्जनान्त्सत्कारपुरःसरं संरक्ष्य शत्रून्निवार्य्योत्तमेषु गृहेषु स्वामिभ्यः कमनीयान् भोगान् दत्त्वा स्वयशो विस्तृणीहि॥१२॥

पदार्थः-हे ऐश्वर्य्य के बढ़ाने वाले! **(यत्र)** जहाँ **(शूरासः)** युद्ध में चतुर जन **(पितॄणाम्)** अपने पिता और स्वामियों के **(तन्वः)** शरीरों को **(वितन्वते)** बढ़ाते हैं और **(प्रिया)** प्रिय **(शर्म)** गृहों को बढ़ाते हैं **(अध)** इसके अनन्तर **(तन्वे)** शरीर के लिये **(तने)** बढ़े हुए व्यवहार में **(च)** भी **(अचित्तम्)** चेतनता

से रहित **(छर्दिः)** गृह को आप **(यच्छ)** ग्रहण करिये वहाँ **(द्वेषः)** शत्रुओं को **(स्म)** ही **(यावय)** पृथक् कराइये॥१२॥

भावार्थः-हे राजन्! शूरवीर धार्मिक जनों की सत्कारपूर्वक उत्तम प्रकार रक्षा कर शत्रुओं का निवारण कर उत्तम गृहों में पितरों और स्वामी जनों के लिये सुन्दर भोगों को देकर अपने यश का विस्तार करो॥१२॥

पुनर्मनुष्यैः कथं गमनादिकं कार्य्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को कैसे गमनादिक करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

यदिन्द्र सर्गे अर्वतश्चोदयासे महाधने।

असमने अध्वनि वृजिने पथि श्येनाँइव श्रवस्यतः॥१३॥

यत्। इन्द्र। सर्गे। अर्वतः। चोदयासे। महाऽधने। असमने। अध्वनि। वृजिने। पथि। श्येनान्ऽइव। श्रवस्यतः॥१३॥

पदार्थः-**(यत्)** यस्मिन् **(इन्द्र)** वीरशत्रुविदारक **(सर्गे)** संस्रष्टुमर्हे **(अर्वतः)** अश्वादीन् **(चोदयासे)** चोदय **(महाधने)** महान्ति धनानि यस्मात् तस्मिन् **(असमने)** अविद्यमानं समनं स-ामो यस्मिँस्तस्मिन् **(अध्वनि)** मार्गे **(वृजिने)** बले **(पथि)** **(श्येनानिव)** **(श्रवस्यतः)** आत्मनः श्रव इच्छतः॥१३॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यद्यत्र सर्गे महाधनेऽसमने वृजिनेऽध्वनि पथि श्येनानिव श्रवस्यतोऽर्वतश्च चोदयासे तत्र ते दूरस्थमपि स्थानं निकटमिव स्यात्॥१३॥

भावार्थः-हे राजन्! युद्धमन्तरापि यदा यदा कार्य्यार्थं गमनं भवान् कुर्य्यात्तदा तदा सद्य एव गन्तव्यं, शैथिल्यं पद्भ्यां यानेन वा गमने नैव कार्य्यम्॥१३॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** वीर शत्रुओं के नाश करने वाले **(यत्)** जहाँ **(सर्गे)** मिलने योग्य **(महाधने)** बड़े धन जिससे उस और **(असमने)** नहीं विद्यमान स-ाम जिसमें ऐसे **(वृजिने)** बलकारक **(अध्वनि)** मार्ग में और **(पथि)** आकाशमार्ग में **(श्येनानिव)** बाजों को जैसे वैसे **(श्रवस्यतः)** सुख की इच्छा करते हुए **(अर्वतः)** घोड़े आदि को **(चोदयासे)** प्रेरणा करिये, वहाँ आपका दूर भी स्थित स्थान निकटसा होवे॥१३॥

भावार्थः-हे राजन्! युद्ध के विना भी जब जब कार्य्य के लिये गमन आप करें तब तब शीघ्र ही जाना चाहिये और शिथिलता पैरों से वा वाहन से जाने में नहीं करनी चाहिये॥१३॥

पुनस्ते राजादयः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर वे राजा आदि क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

सिन्धूँरिव प्रवण आशुया यतो यदि क्लोशमनु ष्वणि।

आ ये वयो न वर्वृतत्यामिषि गृभीता बाह्वोर्गवि॥१४॥२९॥

सिन्धूंन्ऽइव। प्रवणे। आशुऽया। यतः। यदि। क्लोशम्। अनु। स्वनि। आ। ये। वयः। न। वर्वृतति। आमिषि। गृभीताः। बाह्वोः। गवि॥१४॥

पदार्थः-(**सिन्धूनिव**) नदीरिव (**प्रवणे**) निम्नस्थाने (**आशुया**) आशुगैरश्वैः (**यतः**) यस्मात् (**यदि**) (**क्लोशम्**) क्रोशम् (**अनु**) (**स्वनि**) शब्दे (**आ**) (**ये**) (**वयः**) पक्षिणः (**न**) इव (**वर्वृतति**) भृशं गच्छति (**आमिषि**) मांसे दृष्टे सति (**गृभीताः**) गृहीताः (**बाह्वोः**) (**गवि**) पृथिव्याम्॥१४॥

अन्वयः-हे राजन्! भवान् यदि प्रवणे सिन्धूनिवाशुया स्वन्यामिषि वयो न गवि क्लोशमनुवर्वृतति। बाह्वोर्गृभीता रश्मयः कला वा यथावच्चलन्ति तर्हि स्थानान्तरप्राप्तिर्दुर्लभा नास्ति ये यतो गच्छन्त्यागच्छन्ति तेऽप्येवमनुतिष्ठन्तु॥१४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यूयं यथोदकमुच्चस्थानान् निम्नं देशं सद्यो गच्छति यथा वा श्येनादयः पक्षिणो मांसार्थं तूर्णं धावन्ति तथैव भूम्यन्तरिक्षे जले वा यानैः सद्यो गच्छतेति॥१४॥

अत्र राजवीरस- ग्रमगृहशूरवीरयानकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति षट्चत्वारिंशत्तमं सूक्तमेकोनत्रिंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे राजन्! आप (**यदि**) जो (**प्रवणे**) नीचे के स्थान में (**सिन्धूनिव**) नदियों को जैसे वैसे (**आशुया**) शीघ्र चलने वाले घोड़ों से वा (**स्वनि**) शब्द के होने और (**आमिषि**) मांस के देखने पर (**वयः**) पक्षी (**नः**) जैसे वैसे (**गवि**) पृथिवी में (**क्लोशम्**) कोश को (**अनु, वर्वृतति**) अत्यन्त वा बारम्बार प्राप्त होते हैं वा (**बाह्वोः**) बाहुओं में (**गृभीताः**) ग्रहण की गई किरणों वा कलायें यथावत् जाती हैं तो दूसरे स्थान में प्राप्त होना दुर्लभ नहीं है (**ये**) जो (**यतः**) जहाँ से जाते (**आ**) आते हैं, वे भी ऐसा करें॥१४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! तुम जैसे जल ऊँचे स्थान से नीचे के स्थान को शीघ्र जाता है और जैसे बाज आदि पक्षी माँस के लिये शीघ्र जाते हैं, वैसे भूमि, अन्तरिक्ष वा जल में वाहनों से शीघ्र जाओ॥१४॥

इस सूक्त में राजा, वीर, सं- ग्राम, गृह, शूरवीर और यान कृत्य के वर्णन से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्तार्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह छयालीसवाँ सूक्त और उनतीसवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथैकत्रिंशदृचस्य सप्तचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य १-३१ गर्ग ऋषिः। १-५ सोमः। ६-१९, २१ इन्द्रः। २० लिङ्गोक्ता देवताः। २२-२५ प्रस्तोकस्य सर्ञ्जयस्य दानस्तुतिः। २६-२८ रथः। २९-३१ दुन्दुभिर्देवता॥ १, ३, ५, २१, २२, २८ निचृत्त्रिष्टुप्। ४, ८, ११ विराट् त्रिष्टुप्। ६, ७, १०, १५, १६, २० त्रिष्टुप्। १८, २९, ३० भुरिक्त्रिष्टुप्। २७ स्वराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २, ९, १२, १३, २६, ३१ भुरिक् पङ्क्तिः। १४, १७ स्वराट् पङ्क्तिः। २३ आर्चीपङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। १९ बृहती छन्दः। मध्यमः स्वरः। २४, २५ विराड्गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः॥

अथ किं कृत्वा राजा शत्रुभिरसोढव्यः स्यादित्याह॥

अब एकतीस ऋचा वाले सैंतालीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में क्या करके राजा शत्रुओं से नहीं सहने योग्य होवे, इस विषय को कहते हैं॥

स्वादुष्किलायं मधुमाँ उतायं तीव्रः किलायं रसवाँ उतायम्।
उतो न्व१स्य पपिवांसमिन्द्रं न कश्चन सहत आहवेषु॥१॥

स्वादुः। किल। अयम्। मधुऽमान्। उत। अयम्। तीव्रः। किल। अयम्। रसऽवान्। उत। अयम्। उतो इति। नु। अस्य। पपिऽवांसम्। इन्द्रम्। न। कः। चन। सहते। आऽहवेषु॥१॥

पदार्थः-(**स्वादुः**) सुस्वादयुक्तः (**किलः**) निश्चये (**अयम्**) (**मधुमान्**) मधुरादिगुणयुक्तः (**उत**) (**अयम्**) (**तीव्रः**) तेजस्वी वेगवान् (**किल**) (**अयम्**) (**रसवान्**) महौषधिप्रशस्तरसप्रचुरः (**उत**) (**अयम्**) (**उतो**) (**नु**) क्षिप्रम् (**अस्य**) (**पपिवांसम्**) पिबन्तम् (**इन्द्रम्**) राजादिकं शूरवीरम् (**न**) निषेधे (**कः**) (**चन**) कश्चिदपि (**सहते**) (**आहवेषु**) सङ्ग्रामेषु॥१॥

अन्वयः-हे शूरवीरा! योऽयं स्वादुः किल उतायं मधुमान् किलाऽयं तीव्र उतायं रसवानोषधिसारोऽस्ति। अस्योतो पपिवांसमिन्द्रमाहवेषु नु कश्चन न सहते॥१॥

भावार्थः-ये ब्रह्मचर्य्यजितेन्द्रियत्वादियुक्ताऽऽहारविहारैः शरीरात्मबलयुक्ता भवन्ति तान् स- ामेषु सोढुं शत्रवो न शक्नुवन्ति॥१॥

पदार्थः-हे शूरवीर जनो! जो (**अयम्**) यह (**स्वादुः**) सुन्दर स्वाद से युक्त (**किल**) निश्चय करके (**उत**) और (**अयम्**) यह (**मधुमान्**) मधुरादि गुणों से युक्त (**किल**) निश्चय करके (**अयम्**) यह (**तीव्रः**) तेजस्वी और वेगयुक्त (**उत**) और (**अयम्**) यह (**रसवान्**) बड़ी ओषधि का प्रशंसित रसयुक्त सार है (**अस्य**) इसके (**उतो**) भी (**पपिवांसम्**) पीने वाले (**इन्द्रम्**) राजा आदि शूरवीर को (**आहवेषु**) स- ामों में (**नु**) शीघ्र (**कः**) (**चन**) कोई भी (**न**) नहीं (**सहते**) सहता है॥१॥

भावार्थः-जो ब्रह्मचर्य्य, जितेन्द्रियत्व और युक्त आहार-विहारों से शरीर और आत्मा के बल से युक्त होते हैं, उनको स- ामों में सहने को शत्रु समर्थ नहीं हो सकते हैं॥१॥

पुनर्मनुष्याः कं सेवित्वा किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्य किसका सेवन करके क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

अयं स्वादुरिह मदिष्ठ आस यस्येन्द्रो वृत्रहत्ये ममाद।

पुरूणि यश्च्यौत्ना शम्बरस्य वि नवतिं नव च देह्यो३ हन्॥२॥

अयम्। स्वादुः। इह। मदिष्ठः। आस। यस्य। इन्द्रः। वृत्रऽहत्ये। ममाद। पुरूणि। यः। च्यौत्ना। शम्बरस्य। वि। नवतिम्। नव। च। देह्यः। हन्॥२॥

पदार्थः-**(अयम्)** **(स्वादुः)** स्वादयुक्तः **(इह)** **(मदिष्ठः)** अतिशयेनानन्दप्रदः **(आस)** **(यस्य)** सूर्य्य इव प्रतापवान् **(वृत्रहत्ये)** स- ामे **(ममाद)** हर्षति **(पुरूणि)** बहूनि **(यः)** **(च्यौत्ना)** बलानि। **च्यौत्नमिति बलनाम।** (निघं०२.९) **(शम्बरस्य)** मेघस्य **(वि)** **(नवतिम्)** **(नव, च)** नवनवतिप्रकारा मेघगतयः **(देह्यः)** उपचेतुं योग्यः **(हन्)** हन्ति॥२॥

अन्वयः-य इन्द्रो राजा योऽयमिह स्वादुर्मदिष्ठ आस यस्य पानेन ममाद तत्पीत्वा यथा सूर्य्यः शम्बरस्य नव च नवतिं विहंस्तथा देह्यः सन् वृत्रहत्ये शत्रूणां पुरूणि च्यौत्ना हन्यात् स एव विजयी स्यात्॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्या! भवन्तो यस्योत्तमः स्वादुर्यस्माद्बलबुद्धिपराक्रमा वर्धन्ते तत्सेवनेन शत्रूञ्जित्वा निष्कण्टकं राज्यं सेवन्ताम्॥२॥

पदार्थः-**(यः)** जो **(इन्द्रः)** सूर्य्य के सदृश प्रतापी राजा और जो **(अयम्)** यह **(इह)** संसार में **(स्वादुः)** अच्छे स्वाद से युक्त **(मदिष्ठः)** अतिशय आनन्द देने वाले **(आस)** होता और **(यस्य)** जिसके पान करने से **(ममाद)** प्रसन्न होता है, उसका पान करके जैसे सूर्य प्रतापयुक्त **(शम्बरस्य)** मेघ के **(नव, च)** नव **(नवतिम्)** नब्बे प्रकार मेघगतियों का **(वि, हन्)** नाश करता है, उस प्रकार से **(देह्यः)** वृद्धि करने के योग्य हुआ **(वृत्रहत्ये)** स- ाम में शत्रुओं की **(पुरूणि)** बहुत **(च्यौत्ना)** सेनाओं का नाश करे, वही विजयी होवे॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जिसका उत्तम स्वाद और जिससे बल बुद्धि तथा पराक्रम बढ़ते हैं उसके सेवन से शत्रुओं को जीत कर निष्कण्टक राज्य का सेवन करो॥२॥

पुनः स सोमः किं करोतीत्याह॥

फिर वह सोम क्या करते है, इस विषय को कहते हैं॥

अयं मे पीत उदियर्ति वाचमयं मनीषामुशतीमजीगः।

अयं षळुर्वीरमिमीत धीरो न याभ्यो भुवनं कच्चनारे॥३॥

अयम्। मे। पीतः। उत्। इयर्ति। वाचम्। अयम्। मनीषाम्। उशतीम्। अजीगरिति। अयम्। षट्। उर्वीः। अमिमीत। धीरः। न। याभ्यः। भुवनम्। कत्। चन। आरे॥ ३॥

पदार्थः-(**अयम्**) (**मे**) मम (**पीतः**) (**उत्**) (**इयर्त्ति**) उन्नयति (**वाचम्**) (**अयम्**) (**मनीषाम्**) प्रज्ञाम् (**उशतीम्**) कामयमानाम् (**अजीगः**) गच्छति प्राप्नोति (**अयम्**) (**षट्**) (**उर्वीः**) षड्विधा भूमीः (**अमिमीत**) (**धीरः**) ध्यानवान् मेधावी (**न**) (**याभ्यः**) (**भुवनम्**) (**कत्**) कदा (**चन**) अपि (**आरे**) दूरे समीपे वा॥ ३॥

अन्वयः- हे मनुष्या! यथायं पीतः सोमो मे वाचमुशतीं मनीषामुदियर्त्ति येनाऽयं जनः काममजीगः। येनायं षडुर्वीर्धीरो नामिमीत याभ्य आरे कच्चन भुवनमिमीत सोऽयं वैद्यकशास्त्ररीत्या निर्मातव्यः॥ ३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! येन पीतेन वाग्बुद्धितनू वर्धेते येन शास्त्राणि सङ्गृहीतानि स्युस्तस्यैव सेवनं कार्यं न च बुद्ध्यादिनाशकस्य॥ ३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**अयम्**) यह (**पीतः**) पान किया गया सोमलता का रस (**मे**) मेरी (**वाचम्**) वाणी को (**उशतीम्**) कामना करती हुई (**मनीषाम्**) बुद्धि को (**उत्, इयर्त्ति**) बढ़ाता है जिससे (**अयम्**) यह जन कामना को (**अजीगः**) प्राप्त होता है जिससे (**अयम्**) यह (**षट्**) छः प्रकार की (**उर्वीः**) भूमियों को (**धीरः**) ध्यान करने वाला बुद्धिमान् जन (**न**) जैसे (**अमिमीत**) निर्म्माण करता है और (**याभ्यः**) जिन से (**आरे**) दूर वा समीप में (**कत्**) कभी (**चन**) भी (**भुवनम्**) संसार को रचता है, यह वैद्यकशास्त्र की रीति से बनाने योग्य है॥ ३॥

भावार्थः- इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जिस पिये हुए से वाणी, बुद्धि, शरीर बढ़े और जिससे शस्त्र उत्तम प्रकार ग्रहण किये जायें, इसका ही सेवन करना चाहिये न कि बुद्धि आदिकों के नाश करने वाले का॥ ३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

अयं स यो वरिमाणं पृथिव्या वर्ष्माणं दिवो अकृणोदयं सः।

अयं पीयूषं तिसृषु प्रवत्सु सोमो दाधारोर्व१न्तरिक्षम्॥ ४॥

अयम्। सः। यः। वरिमाणम्। पृथिव्याः। वर्ष्माणम्। दिवः। अकृणोत्। अयम्। सः। अयम्। पीयूषम्। तिसृषु। प्रवत्ऽसु। सोमः। दाधार। उरु। अन्तरिक्षम्॥ ४॥

पदार्थः-(**अयम्**) (**सः**) (**यः**) (**वरिमाणम्**) वरस्य भावम् (**पृथिव्याः**) (**वर्ष्माणम्**) वर्षकम् (**दिवः**) सूर्य्यप्रकाशात् (**अकृणोत्**) करोति (**अयम्**) (**सः**) (**अयम्**) (**पीयूषम्**) (**तिसृषु**) भूम्यादिषु (**प्रवत्सु**) निम्नेषु (**सोमः**) (**दाधार**) धरति (**उरु**) बहु (**अन्तरिक्षम्**) अन्तरक्षयं कारणाख्यम्॥ ४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! योऽयं सोमस्तिसृषु प्रवत्सु पीयूषं दाधार योऽयं पृथिव्या वरिमाणं दिवो वर्ष्माणमकृणोत् स सर्वैर्मनुष्यैः स- ह्यो योऽयमुर्वन्तरिक्षं दाधार सोऽयं सर्वेषां सुखकरोऽस्ति॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यस्सोमो वायुना सह भूमिं किरणैस्सह सूर्य्यं दधाति तं सङ्गृह्य सेवित्वा सर्वेऽरोगा भवत॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यः)** जो **(अयम्)** यह **(सोमः)** सोमलता का रस **(तिसृषु)** तीन भूमि आदिकों **(प्रवत्सु)** नीचे के स्थलों में **(पीयूषम्)** अमृत को **(दाधार)** धारण करता है और जो **(अयम्)** यह **(पृथिव्याः)** पृथिवी से **(वरिमाणम्)** श्रेष्ठपने को और **(दिवः)** सूर्य्य के प्रकाश से **(वर्ष्माणम्)** वृष्टि करने वाले को **(अकृणोत्)** करता है **(सः)** वह सब मनुष्यों से उत्तम प्रकार ग्रहण करने योग्य और जो **(अयम्)** यह **(उरु)** बहुत **(अन्तरिक्षम्)** मध्य में नहीं नष्ट होने वाले को धारण करता है **(सः)** वह यह सब का सुख करने वाला है॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो सोमलतारूप ओषधि का रस वायु के साथ भूमि को, किरणों के साथ सूर्य्य को धारण करता है, उसको ग्रहण और सेवन करके सब रोगरहित होओ॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

अयं विदच्चित्रदृशीकमर्णः शुक्रसद्मनामुषसामनीके।

अयं महान् महता स्कम्भनेनोद् द्यामस्तभ्नाद् वृषभो मरुत्वान्॥५॥३०॥

अयम्। विदत्। चित्रऽदृशीकम्। अर्णः। शुक्रऽसद्मनाम्। उषसाम्। अनीके। अयम्। महान्। महता। स्कम्भनेन। उत्। द्याम्। अस्तभ्नात्। वृषभः। मरुत्वान्॥५॥

पदार्थः-**(अयम्)** **(विदत्)** प्राप्नोति **(चित्रदृशीकम्)** आश्चर्य्यदर्शनम् **(अर्णः)** जलम् **(शुक्रसद्मनाम्)** शुद्धस्थानानाम् **(उषसाम्)** प्रभातवेलानाम् **(अनीके)** सैन्ये **(अयम्)** **(महान्)** **(महता)** **(स्कम्भनेन)** धारणेन **(उत्)** **(द्याम्)** **(अस्तभ्नात्)** स्तभ्नाति **(वृषभः)** वर्षकः **(मरुत्वान्)** मरुतो बहवो वायवो विद्यन्ते यस्मिन् सः॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथायं वृषभो मरुत्वान्त्सूर्य्यः शुक्रसद्मनामुषसामनीके चित्रदृशीकमर्णो विदत्। योऽयं महान् महता स्कम्भनेन द्यामुदस्तभ्नात्तं कार्य्योपयोगिनं कुरुत॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे विद्वांसो! यूयं सूर्य्यवत्प्रातः समयमारभ्य प्रयत्नेन विद्याः प्रकाश्य सुखं लभध्वम्॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(अयम्)** यह **(वृषभः)** वृष्टि करने वाला **(मरुत्वान्)** बहुत वायु विद्यमान जिसमें ऐसा सूर्य्य **(शुक्रसद्मनाम्)** शुद्ध स्थानों और **(उषसाम्)** प्रभात वेलाओं की **(अनीके)** सेना में **(चित्रदृशीकम्)** आश्चर्य्ययुक्त दर्शन जिसका ऐसे **(अर्णः)** जल को **(विदत्)** प्राप्त होता है और जो

(अयम्) यह **(महान्)** बड़ा **(महता)** बड़े **(स्कम्भनेन)** धारण से **(द्याम्)** प्रकाश को **(उत्, अस्तभ्नात्)** ऊपर को उठाया है, उसको कार्य्य का उपयोगी करो॥५॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे विद्वान् जनो! आप लोग सूर्य्य के सदृश प्रात:काल से लेकर प्रयत्न से विद्याओं को प्रकाशित करके सुख को प्राप्त होओ॥५॥

पुन: स राजा कीदृशो भवेदित्याह॥

फिर वह राजा कैसा होवे, इस विषय को कहते हैं॥

धृषत्पिब कुलशे सोममिन्द्र वृत्रहा शूर समुरे वसूनाम्।
माध्यंदिने सवन आ वृषस्व रयिस्थानो रयिमस्मासु धेहि॥६॥

धृषत्। पिब। कुलशे। सोमम्। इन्द्र। वृत्रऽहा। शूर। सम्ऽअरे। वसूनाम्। माध्यंदिने। सवने। आ। वृषस्व। रयिऽस्थानः। रयिम्। अस्मासु। धेहि॥६॥

पदार्थ:-**(धृषत्)** प्रगल्भ: सन् **(पिब)** **(कलशे)** पात्रे **(सोमम्)** महौषधिरसम् **(इन्द्र)** सूर्यवद्वत्तमान सेनेश **(वृत्रहा)** यो वृत्रं हन्ति **(शूर)** निर्भय **(समरे)** स-ग्रामे **(वसूनाम्)** पृथिव्यादीनां मध्यात् **(माध्यन्दिने)** मध्यं दिने भवे **(सवने)** प्रेरणे **(आ)** **(वृषस्व)** बलिष्ठो भव **(रयिस्थान:)** रायस्तिष्ठन्ति यस्मिन्त्स: **(रयिम्)** **(अस्मासु)** **(धेहि)**॥६॥

अन्वय:-हे शूरेन्द्र! यथा वृत्रहा माध्यन्दिने सवने वसूनां मध्याज्जलमत्यन्तं पिबति तथा समरे धृषत् सन् कलशे सोमं पिब रयिस्थानस्सन्नावृषस्वाऽस्मासु रयिं धेहि॥६॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कार:। हे राजन्! यथा मध्याह्नस्थ: सूर्य: सर्वं सन्निहितं जगत्प्रकाशयति तथा न्यायस्थस्सन् वादिप्रतिवादिनां जनानां व्यवस्थां कृत्वा राजनीत्या न्यायं प्रकाशय॥६॥

पदार्थ:-हे **(शूर)** भय से रहित **(इन्द्र)** सूर्य्य के सदृश वर्त्तमान सेना के स्वामिन्! जैसे **(वृत्रहा)** मेघ का नाश करने वाला **(माध्यन्दिने)** मध्य दिन में की गई **(सवने)** प्रेरणा में **(वसूनाम्)** पृथिवी आदिकों के मध्य से जल को अत्यन्त पीता है, वैसे **(समरे)** स-ग्राम में **(धृषत्)** ढीठ हुए **(कलशे)** पात्र में **(सोमम्)** बड़ी ओषधियों के रस को **(पिब)** पीजिये और **(रयिस्थान:)** धनों से युक्त हुए **(आ, वृषस्व)** बलिष्ठ हूजिये और **(अस्मासु)** हम लोगों में **(रयिम्)** धन को **(धेहि)** धारण करिये॥६॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजन्! जैसे मध्याह्न में वर्त्तमान सूर्य्य सम्पूर्ण समीप में वर्त्तमान जगत् को प्रकाशित करता है, वैसे न्याय में वर्त्तमान हुए आप वादी और प्रतिवादी जनों की व्यवस्था करके राजनीति से न्याय को प्रकाशित कीजिये॥६॥

पुन: स राजा कीदृशो भवेदित्याह॥

फिर वह राजा कैसा होवे, इस विषय को कहते हैं॥

इन्द्र प्र णः पुरएतेव पश्य प्र नो नय प्रतरं वस्यो अच्छ।

भवा सुपारो अतिपारयो नो भवा सुनीतिरुत वामनीतिः॥७॥

इन्द्र। प्र। नः। पुरएताऽइव। पश्य। प्र। नः। नय। प्रऽतरम्। वस्यः। अच्छ। भव। सुऽपारः। अतिऽपारयः। नः। भव। सुऽनीतिः। उत। वामऽनीतिः॥७॥

पदार्थः-(**इन्द्र**) दुष्टविनाशक राजन् (**प्र**) (**नः**) अस्माकम् (**पुरएतेव**) (**पश्य**) (**प्र**) (**नः**) अस्मान् (**नय**) (**प्रतरम्**) शत्रूणां बलोल्लङ्घनम् (**वस्यः**) वसीयोऽतिशयेन सुष्ठुधनम् (**अच्छ**) (**भवा**) अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**सुपारः**) शोभनः पारो यस्मात्सः (**अतिपारयः**) योऽत्यन्तं पारयति सः (**नः**) अस्माकम् (**भवा**) अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**सुनीतिः**) शोभना नीतिर्न्यायो यस्य सः (**उत**) (**वामनीतिः**) वामा प्रशंसिता नीतिर्यस्य सः॥७॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं पुरएतेव नः प्र पश्य नः प्रतरमच्छ प्र णय नः प्रतरं वस्योऽच्छ प्रणय नः सुपारोऽतिपारयो भवा सुनीतिरुत वामनीतिर्भव॥७॥

भावार्थः-यो राजा मनुष्यपरीक्षकः सर्वेषां न्यायपथेनैश्वर्य्यप्रापको दुःखात्स- ामाच्च पारे गमयिता सदा धर्म्यनीतिर्भवेत्स एवात्र प्रशंसां लभेत॥७॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) दुष्टों के नाश करने वाले राजन्! आप (**पुरएतेव**) आगे चलने वाले के सदृश (**नः**) हम लोगों को (**प्र, पश्य**) अच्छे प्रकार देखिये और (**नः**) हम लोगों के (**प्रतरम्**) शत्रुओं के बल के उल्लङ्घन को (**अच्छ**) अच्छे प्रकार (**प्र, नय**) प्राप्त करिये और (**नः**) हम लोगों के शत्रुओं के बल का उल्लङ्घन और (**वस्यः**) अतिशय धन को अच्छे प्रकार प्राप्त कराइये और हम लोगोंर का (**सुपारः**) सुन्दर पार जिनसे ऐसे (**अतिपारयः**) अत्यन्त पार करने वाले (**भवा**) हूजिये तथा (**सुनीतिः**) अच्छे न्याय वाले और (**उत**) भी (**वामनीतिः**) प्रशंसित नीति वाले (**भवा**) हूजिये॥७॥

भावार्थः-जो राजा मनुष्यों की परीक्षा लेने वाला और सब को न्याय मार्ग से ऐश्वर्य्य को प्राप्त कराने और दुःख और स- ाम से पार पहुँचाने वाला और सदा धर्मपूर्वक नीतियुक्त होवे, वही इस संसार में प्रशंसा को पावे॥७॥

राजा स्वाश्रयान् प्रति कथं वर्त्तेतेत्याह॥

राजा अपने आश्रितों के प्रति कैसा वर्त्ताव करे, इस विषय को कहते हैं॥

उरुं नो लोकमनु नेषि विद्वान्त्स्वर्वज्ज्योतिरभयं स्वस्ति।
ऋष्वा त इन्द्र स्थविरस्य बाहू उप स्थेयाम शरणा बृहन्ता॥८॥

उरुम्। नः। लोकम्। अनु। नेषि। विद्वान्। स्वःऽवत्। ज्योतिः। अभयम्। स्वस्ति। ऋष्वा। ते। इन्द्र। स्थविरस्य। बाहू इति। उप। स्थेयाम। शरणा। बृहन्ता॥८॥

पदार्थः-(**उरुम्**) बहुम् (**नः**) अस्मान् (**लोकम्**) दर्शनमभ्युदयं वा (**अनु**) (**नेषि**) प्रापयसि (**विद्वान्**) (**स्वर्वत्**) बहुसुखयुक्तम् (**ज्योतिः**) ज्ञानप्रकाशम् (**अभयम्**) भयरहितम् (**स्वस्ति**) सुखम्

(ऋष्वा) ऋष्वौ महान्तौ **(ते)** तव **(इन्द्र)** न्यायप्रापक **(स्थविरस्य)** विद्याविनयाभ्यां वृद्धस्य **(बाहू)** बलवीर्याभ्यामुपेतौ भुजौ **(उप)** **(स्थेयाम)** तिष्ठेम **(शरणा)** शरणौ शत्रूणां हिंसकौ **(बृहन्ता)** महान्तौ॥८॥

अन्वयः-हे इन्द्र राजन्! यस्य स्थविरस्य ते शरणा बृहन्ता ऋष्वा बाहू वयमुपस्थेयाम स विद्वांस्त्वं यतो न उरुं स्वर्वज्ज्योतिरभयं स्वस्ति लोकमनु नेषि तस्मात्सदैवास्माभिः पूज्योऽसि॥८॥

भावार्थः-राज्ञा महता प्रयत्नेन स्वाधीनाः प्रजा विद्याऽभयसुखयुक्ताः कार्य्याः। येन सर्वाः प्रजा अनुकूलाः स्युः॥८॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** न्याय को प्राप्त कराने वाले राजन्! जिस **(स्थविरस्य)** विद्या और विनय से वृद्ध **(ते)** आपके **(शरणा)** शत्रुओं के नाश करने वाले **(बृहन्ता)** बड़े **(ऋष्वौ)** श्रेष्ठ **(बाहू)** बल और वीर्य्य से युक्त भुजाओं को हम लोग **(उप, स्थेयाम)** प्राप्त होवें वह **(विद्वान्)** विद्वान् आप जिससे **(नः)** हम लोगों को **(उरुम्)** बहुत **(स्वर्वत्)** अत्यन्त सुख से युक्त **(ज्योतिः)** ज्ञान का प्रकाश और **(अभयम्)** भय से रहित **(स्वस्ति)** सुख **(लोकम्)** दर्शन वा वृद्धि को **(अनु, नेषि)** प्राप्त कराते हो, इससे हम लोगों से आदर करने योग्य हो॥८॥

भावार्थः-राजा बड़े प्रयत्न से अपने आधीन प्रजाओं को विद्या और अभय सुख से युक्त करे, जिससे सब प्रजा अनुकूल होवें॥८॥

पुनः स राजा कान् प्रति कथं वर्त्तेतेत्याह॥

फिर वह राजा किन के प्रति कैसा वर्त्ताव करे, इस विषय को कहते हैं॥

वरिष्ठे न इन्द्र वन्धुरे धा वहिष्ठयोः शतावन्नश्वयोरा।

इषमा वक्षीषां वर्षिष्ठां मा नस्तारीन्मघवन् रायो अर्यः॥९॥

वरिष्ठे। नः। इन्द्र। वन्धुरे। धाः। वहिष्ठयोः। शतऽवन्। अश्वयोः। आ। इषम्। आ। वक्षि। इषाम्। वर्षिष्ठाम्। मा। नः। तारीत्। मघऽवन्। रायः। अर्यः॥९॥

पदार्थः-**(वरिष्ठे)** अतिशयेन वरे **(नः)** अस्मान् **(इन्द्र)** **(वन्धुरे)** प्रेमबन्धने **(धाः)** धेहि **(वहिष्ठयोः)** अतिशयेन वोढ्रोः **(शतावन्)** शतानि बलानि विद्यन्ते यस्य तत्सम्बुद्धौ **(अश्वयोः)** क्षिप्रं गमयित्रोः **(आ)** **(इषम्)** **(आ)** **(वक्षि)** आवह **(इषाम्)** अन्नादीनाम् **(वर्षिष्ठाम्)** अतिशयेन वृद्धाम् **(मा)** **(नः)** अस्मान् **(तारीत्)** तारयेः **(मघवन्)** बहुधनयुक्त **(रायः)** धनस्य **(अर्यः)** स्वामी॥९॥

अन्वयः-हे शतावन्मघवन्निन्द्र! रायोऽर्यस्त्वं वहिष्ठयोरश्वयोर्वरिष्ठे वन्धुरे रथेन न आ धाः। इषमावक्षि नो वर्षिष्ठामिषां मा तारीत्॥९॥

भावार्थः-प्रजासेनाजनैरेवं राजा प्रेरणीयो भवानस्मानुत्तमेषु यानेषु संस्थाप्य पुष्कलं धनं नयतु येनास्माकं वञ्चनं कदाचिज्जना मा कुर्य्युः॥९॥

पदार्थः-हे **(शतावन्)** सेनाओं से युक्त **(मघवन्)** बहुत धन वाले **(इन्द्र)** ऐश्वर्य्यवान् सज्जन! **(रायः)** धन के **(अर्यः)** स्वामी आप **(वहिष्ठयोः)** अतिशय ले चलने वाले **(अश्वयोः)** शीघ्र पहुँचाने वालों के **(वरिष्ठे)** अतिशय श्रेष्ठ **(वन्धुरे)** प्रेम बन्धन में वाहन से **(नः)** हम लोगों को **(आ, धाः)** सब प्रकार से धारण करिये तथा **(इषम्)** अन्न को **(आ, वक्षि)** प्राप्त हूजिये और **(नः)** हमें लोगों को **(वर्षिष्ठाम्)** अतिशय वृद्ध **(इषाम्)** अन्न आदिकों को **(मा)** नहीं **(तारीत्)** अलग करिये॥९॥

भावार्थः-प्रजा और सेना के जनों को चाहिये कि राजा को ऐसी प्रेरणा करें कि आप हम लोगों को उत्तम वाहनों में उत्तम प्रकार बैठाकर अधिक धन प्राप्त कराइये जिससे हम लोगों के वञ्चन को कभी मनुष्य न करें अर्थात् हम लोगों को कभी न ठगें॥९॥

पुनः स राजा किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

इन्द्र॑ मृ॒ळ मह्यं॑ जी॒वातु॑मिच्छ चो॒दय॒ धिय॒मय॑सो॒ न धारा॑म्।

यत्कि॒ञ्चाहं त्वा॒युरि॒दं वदा॑मि॒ तज्जु॑षस्व कृ॒धि मा॑ दे॒वव॑न्तम्॥१०॥ ३१॥

इन्द्र॑। मृ॒ळ। मह्य॑म्। जी॒वातु॑म्। इ॒च्छ॒। चो॒दय॑। धिय॑म्। अय॑सः। न। धारा॑म्। यत्। किम्। च॒। अ॒हम्। त्वा॒ऽयुः। इ॒दम्। वदा॑मि। तत्। जु॒ष॒स्व॒। कृ॒धि। मा॒। दे॒वऽव॑न्तम्॥ १०॥

पदार्थः-**(इन्द्र)** सर्वार्थस्य सुखस्य धर्त्तः **(मृळ)** सुखय **(मह्यम्)** **(जीवातुम्)** जीवनम् **(इच्छ)** **(चोदय)** **(धियम्)** प्रज्ञां धर्म्यं कर्म वा **(अयसः)** हिरण्यस्य। **अय इति हिरण्यनाम।** (निघं०१.२) **(न)** इव **(धाराम्)** प्रगल्भां वाचम् **(यत्)** **(किम्)** **(च)** **(अहम्)** **(त्वायुः)** त्वां कामयमानः **(इदम्)** **(वदामि)** **(तत्)** **(जुषस्व)** सेवस्व **(कृधि)** कुरु **(मा)** माम् **(देववन्तम्)** देवा विद्वांसो विद्यन्ते सम्बन्धे यस्य तम्॥१०॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं मा मां मृळ मह्यं जीवातुमिच्छाऽयसो न धियं धारां चोदय। त्वायुरहं यत्किञ्च वदामि तदिदं जुषस्व देववन्तं मां कृधि॥१०॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे राजन्! यथा सर्वे जना हिरण्यादिधनस्येच्छां कुर्वन्ति तथैव त्वं प्रजापालनेच्छां कुरु सर्वाः प्रजा यथा सुशिक्षितां वाचं प्रमामायुर्विद्वत्सङ्गं प्राप्नुयुस्तथा विधेहि॥१०॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** सब के लिये सुख के धारण करने वाले आप **(मा)** मुझको **(मृळ)** सुखी करिये और **(मह्यम्)** मेरे लिये **(जीवातुम्)** जीवन की **(अच्छ)** इच्छा करिये और **(अयसः)** सुवर्ण के **(न)** समान **(धियम्)** बुद्धि वा धर्म्मयुक्त कर्म्म को और **(धाराम्)** प्रगल्भ वाणी को **(चोदय)** प्रेरणा करिये और **(त्वायुः)** आपकी कामना करता हुआ **(अहम्)** मैं **(यत्)** जो **(किम्)** कुछ **(भी)** **(वदामि)** कहता हूँ **(तत्)** उस **(इदम्)** इसको **(जुषस्व)** सेवन करिये और **(देववन्तम्)** विद्वान् जिसके सम्बन्ध में ऐसा मुझको **(कृधि)** करिये॥१०॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे राजन्! जैसे सब जन सुवर्ण आदि धन की इच्छा करते हैं, वैसे ही आप अपनी प्रजा के पालन की इच्छा करिये और सम्पूर्ण प्रजायें जैसे उत्तम प्रकार शिक्षित वाणी, यथार्थ ज्ञान, अवस्था और विद्वानों के सङ्ग को प्राप्त होवें, वैसे करिये॥१०॥

पुनः स राजा किं कुर्यात् प्रजाश्च तं किमर्थमाश्रयेरन्नित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे और प्रजायें उसका किसलिये आश्रयण करें, इस विषय को कहते हैं॥

त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रं हवेहवे सुहवं शूरमिन्द्रम्।

ह्वयामि शक्रं पुरुहूतमिन्द्रं स्वस्ति नो मघवा धात्विन्द्रः॥११॥

त्रातारम्। इन्द्रम्। अवितारम्। इन्द्रम्। हवेऽहवे। सुऽहवम्। शूरम्। इन्द्रम्। ह्वयामि। शक्रम्। पुरुऽहूतम्। इन्द्रम्। स्वस्ति। नः। मघऽवा। धातु। इन्द्रः॥११॥

पदार्थ:-(**त्रातारम्**) पालकम् (**इन्द्रम्**) परमैश्वर्यवन्तम् (**अवितारम्**) ज्ञानादिप्रदम् (**इन्द्रम्**) अविद्यादुष्टजनविनाशकम् (**हवेहवे**) स-ामे स-ामे (**सुहवम्**) शोभनो हव आह्वानं स-ामो वा यस्य तम् (**शूरम्**) निर्भयत्वादिगुणोपेतम् (**इन्द्रम्**) सेनाधरम् (**ह्वयामि**) आह्वयामि (**शक्रम्**) शक्तिमन्तम् (**पुरुहूतम्**) बहुभिराहूतम् (**इन्द्रम्**) शुभगुणधरम् (**स्वस्ति**) सुखम् (**नः**) अस्मभ्यम् (**मघवा**) परमपूजितधनयुक्तः (**धातु**) दधातु (**इन्द्रः**) परमैश्वर्यः॥११॥

अन्वय:-हे मनुष्या! यो मघवेन्द्रो नः स्वस्ति धातु तं हवेहवे त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रं सुहवं शूरमिन्द्रं शक्रं पुरुहूतमिन्द्रं ह्वयामि तथैतं यूयमप्याह्वयत॥११॥

भावार्थ:-ये मनुष्या यथा सर्वत्र सहायं परमेश्वरमाह्वयन्ति ते तथाभूतं राजानमपि सर्वत्राऽऽश्रयन्तु॥११॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! जो (**मघवा**) अत्यन्त श्रेष्ठ धन से युक्त (**इन्द्रः**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य वाला (**नः**) हम लोगों के लिये (**स्वस्ति**) सुख को (**धातु**) धारण करे उसको (**हवेहवे**) स-ाम स-ाम में (**त्रातारम्**) पालन करने वाले (**इन्द्रम्**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य से युक्त (**अवितारम्**) ज्ञानादि के देने और (**इन्द्रम्**) अविद्या से दुष्ट जन के नाश करने वाले (**सुहवम्**) सुन्दर पुकारना वा स-ाम जिसका उस (**शूरम्**) निर्भयत्व आदि गुणों से युक्त (**इन्द्रम्**) श्रेष्ठ गुणों के धारण करने वाले (**शक्रम्**) समर्थ (**पुरुहूतम्**) बहुतों से पुकारे गये (**इन्द्रम्**) सेना के धारण करने वाले को (**ह्वयामि**) पुकारता हूँ, वैसे इसको आप लोग भी पुकारो॥११॥

भावार्थ:-जो मनुष्य जैसे सर्वत्र सहायक परमेश्वर को पुकारते हैं, वे वैसे ही राजा का भी सर्वत्र आश्रयण करें॥११॥

पुनः स कीदृशो भवेत्तस्य रक्षा कैः कार्येत्याह॥

फिर वह कैसा हो और उसकी रक्षा कौन करें, इस विषय को कहते हैं॥

इन्द्रः सुत्रामा स्ववाँ अवोभिः सुमृळीको भवतु विश्ववेदाः।

बाधतां द्वेषो अभयं कृणोतु सुवीर्यस्य पतयः स्याम॥१२॥

इन्द्रः। सुऽत्रामा। स्वऽवान्। अवःऽभिः। सुऽमृळीकः। भवतु। विश्वऽवेदाः। बाधताम्। द्वेषः। अभयम्। कृणोतु। सुऽवीर्यस्य। पतयः। स्याम॥ १२॥

पदार्थः-(**इन्द्रः**) दुष्टताविदारको राजा (**सुत्रामा**) सुष्ठुरक्षकः (**स्ववान्**) बहवः स्वे विद्यन्ते यस्य सः (**अवोभिः**) रक्षणादिभिः (**सुमृळीकः**) सुष्ठु सुखकरः (**भवतु**) (**विश्ववेदाः**) यो विश्वं विज्ञानं वेत्ति (**बाधताम्**) निवारयतु (**द्वेषः**) द्वेषादिदोषयुक्तान् (**अभयम्**) भयराहित्यम् (**कृणोतु**) करोतु (**सुवीर्यस्य**) शोभनं वीर्यं पराक्रमो ब्रह्मचर्यं यस्य तस्य (**पतयः**) पालकाः स्वामिनः (**स्याम**)॥ १२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यः सुत्रामा स्ववान् विश्ववेदा इन्द्रोऽवोभिरस्माकं सुमृळीको भवतु द्वेषो बाधतामभयं कृणोतु तस्य सुवीर्यस्य वयं पतयः स्याम तस्य रक्षका यूयमपि भवत॥ १२॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यो राजाऽखिलविद्यः कृतपूर्णब्रह्मचर्यो बहुमित्रः स्वात्मवच्छ्रेष्ठस्य रक्षको दुष्टस्य दण्डकृत्सर्वतो निर्भयतां करोति तस्य रक्षा सर्वैः सर्वथा कर्त्तव्या॥ १२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**सुत्रामा**) उत्तम प्रकार रक्षा करने वाला (**स्ववान्**) बहुत अपने जन विद्यमान जिसके ऐसा (**विश्ववेदाः**) सम्पूर्ण विज्ञान को जानने वाला (**इन्द्रः**) दुष्टता का नाश करने वाला (**अवोभिः**) रक्षण आदि से हम लोगों का (**सुमृळीकः**) उत्तम प्रकार सुख करने वाला (**भवतु**) हो तथा (**द्वेषः**) आदि दोषों से युक्त जनों का (**बाधताम्**) निवारण करे और (**अभयम्**) निर्भयपन (**कृणोतु**) करे उस (**सुवीर्यस्य**) सुन्दर पराक्रम वा ब्रह्मचर्य्य वाले के हम लोग (**पतयः**) पालन करने वाले स्वामी (**स्याम**) होवें, उसके रक्षक आप लोग भी हूजिये॥ १२॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो राजा सम्पूर्ण विद्या और किये हुए पूर्ण ब्रह्मचर्य्य से युक्त बहुत मित्रों वाला और अपने सदृश श्रेष्ठ का रक्षक, दुष्टों को दण्ड देने वाला, सब प्रकार से निर्भयता करता है, उसकी रक्षा सब को चाहिये कि सब प्रकार से करें॥ १२॥

पुना राजप्रजाजनाः कथं वर्त्तेरन्नित्याह॥

फिर राजा और प्रजाजन कैसा वर्त्ताव करें, इस विषय को कहते हैं॥

तस्य वयं सुमतौ यज्ञियस्यापि भद्रे सौमनसे स्याम।

स सुत्रामा स्ववाँ इन्द्रो अस्मे आराच्चिद् द्वेषः सनुतर्युयोतु॥ १३॥

तस्य। वयम्। सुऽमतौ। यज्ञियस्य। अपि। भद्रे। सौमनसे। स्याम। सः। सुऽत्रामा। स्वऽवान्। इन्द्रः। अस्मे इति। आरात्। चित्। द्वेषः। सनुतः। युयोतु॥ १३॥

पदार्थः-(**तस्य**) प्रतिपादितपूर्वस्य विद्याविनययुक्तस्य राज्ञः (**वयम्**) (**सुमतौ**) शोभनायां प्रज्ञायाम् (**यज्ञियस्य**) विद्वत्सेवासङ्गविद्यादानानि कर्तुमर्हस्य (**अपि**) (**भद्रे**) कल्याणकरे (**सौमनसे**) सुष्ठु धर्मयुक्ते मानसे व्यवहारे (**स्याम**) (**सः**) (**सुत्रामा**) सर्वेषां सम्यक्पालकः (**स्ववान्**) स्वकीयसामर्थ्ययुक्तः (**इन्द्रः**) विद्याप्रदः (**अस्मे**) अस्माकम् (**आरात्**) समीपाद् दूराद्वा (**चित्**) अपि (**द्वेषः**) धर्मद्विष्ट्न् (**सनुतः**) सदैव (**युयोतु**) पृथक्करोतु॥ १३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! वयं तस्य यज्ञियस्य सुमतौ सौमनसे भद्रेऽपि निश्चयेन वर्त्तमानाः स्याम। यः स्ववानिन्द्रोऽस्मे सुत्रामा सन्नस्माकमाराद् दूराच्चिद् द्वेषः सनुतर्युयोतु सोऽस्माभिः सदैव सत्कर्त्तव्यः॥१३॥

भावार्थः-हे राजप्रजाजन यस्मिञ्छुद्धे न्याये शुभेषु गुणेषु च राजा वर्त्तेत तथैवात्र वयमपि वर्त्तेमहि, सर्वे मिलित्वा मनुष्येभ्यो दोषान् दूरीकृत्य गुणान् संयोज्य सर्वदा न्यायधर्मपालका भवेम॥१३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(वयम्)** हमलोग **(तस्य)** उस पहिले प्रतिपादन किये विद्या और विनय से युक्त राजा के और **(यज्ञियस्य)** विद्वानों की सेवा, सङ्ग और विद्या के दान करने के योग्य की **(सुमतौ)** सुन्दर बुद्धि में **(सौमनसे)** उत्तम धर्म से युक्त मानस व्यवहार में **(भद्रे)** कल्याण करने वाले में **(अपि)** भी निश्चय से वर्त्तमान **(स्याम)** होवें और जो **(स्ववान्)** अपने सामर्थ्य से युक्त **(इन्द्रः)** विद्या देने वाला **(अस्मे)** हम लोगों की **(सुत्रामा)** उत्तम प्रकार पालना करने वाला होता हुआ हम लोगों के **(आरात्)** समीप वा दूर से **(चित्)** भी **(द्वेषः)** धर्म से द्वेष करने वालों को **(सनुतः)** सदा ही **(युयोतु)** पृथक् करे **(सः)** वह हम लोगों से सदा सत्कार करने योग्य है॥१३॥

भावार्थः-हे राजा और प्रजाजनो! जिस शुद्ध, न्याय और श्रेष्ठ गुणों में राजा वर्त्ताव करे, वैसे इस विषय में हम लोग भी वर्त्ताव करें और सब मिलकर मनुष्यों से दोषों को दूर करके गुणों को संयुक्त करके सब काल में न्याय और धर्म्म के पालन करने वाले होवें॥१३॥

पुनस्तं राजानं के गुणा सेवन्त इत्याह॥

फिर उस राजा का कौन गुण सेवन करते हैं, इस विषय को कहते हैं॥

अव॒ त्वे इ॑न्द्र प्र॒वतो॒ नोर्मिर्गिरो॒ ब्रह्मा॑णि नि॒युतो॑ धवन्ते।

उ॒रू न राधः॒ सव॑ना पु॒रूण्य॒पो गा व॑ज्रिन् युव॒से समिन्दू॑न्॥१४॥

अव॑। त्वे॒ इति॑। इ॒न्द्र॒। प्र॒ऽवतः॑। न। ऊ॒र्मिः॑। गिरः॑। ब्रह्मा॑णि। नि॒ऽयुतः॑। ध॒व॒न्ते॒। उ॒रु। न। राधः॑। सव॑ना। पु॒रूणि॑। अ॒पः। गाः। व॒ज्रि॒न्। यु॒व॒से। सम्। इन्दू॑न्॥१४॥

पदार्थः-**(अव)** **(त्वे)** त्वयि **(इन्द्र)** राजन् **(प्रवतः)** नम्रान् **(न)** **(ऊर्मिः)** तरङ्गः **(गिरः)** सुवाचः **(ब्रह्माणि)** धनान्यन्नानि वा **(नियुतः)** निश्चितसत्यवादाः **(धवन्ते)** चालयन्ति **(उरू)** बहु **(न)** इव **(राधः)** धनानि **(सवना)** सवनानि प्रेरणानि **(पुरूणि)** बहूनि **(अपः)** जलानि **(गाः)** भूमीर्वाचो वा **(वज्रिन्)** शस्त्रास्त्रयुक्त **(युवसे)** संयोजयसि **(सम्)** **(इन्दून्)** आह्लादान्॥१४॥

अन्वयः-हे वज्रिन्निन्द्र! यस्त्वे नियुतो गिरो ब्रह्माणि प्रवत ऊर्मिर्नाऽव धवन्ते, उरू राधो न पुरूणि सवनाऽव धवन्ते यतोऽपो गा इन्दूँश्च संयुवसे तस्माद्भवाञ्छ्रेष्ठोऽस्ति॥१४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये ब्रह्मचर्यादीनि शुभानि कर्माण्याचरन्ति तान्निम्नदेशं जलमिव पुरुषार्थिनं श्रीरिव सर्वा विद्याः सकलमैश्वर्य्यमखिलानन्दश्च प्राप्नुवन्ति॥१४॥

पदार्थः-हे **(वज्रिन्)** शस्त्र और अस्त्रों से युक्त **(इन्द्र)** राजन्! जो **(त्वे)** आप में **(नियुतः)** निश्चित सत्यवाद जिनमें ऐसी **(गिरः)** श्रेष्ठ वाणियाँ **(ब्रह्माणि)** धनों वा अन्नों को और **(प्रवतः)** निम्नों को **(ऊर्मिः)** लहर **(न)** जैसे वैसे **(अव, धवन्ते)** चलाती हैं और **(उरू)** बहुत **(राधः)** धनों को **(न)** जैसे वैसे **(पुरूणि)** बहुत **(सवना)** प्रेरणायें प्राप्त होती हैं और जिस कारण **(अपः)** जलों **(गाः)** भूमि वा वाणियों को और **(इन्दून्)** आनन्दों को **(सम्) (युवसे)** संयुक्त करते हो, इससे आप श्रेष्ठ हो॥१४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो ब्रह्मचर्य्य आदि श्रेष्ठ कर्मों को करते हैं, उनको नीचे के स्थान को जल जैसे और पुरुषार्थी को लक्ष्मी जैसे वैसे सम्पूर्ण विद्या, सम्पूर्ण ऐश्वर्य और सम्पूर्ण आनन्द प्राप्त होते हैं॥१४॥

पुनः के कान् पृच्छेयुः समादध्युश्चेत्याह॥

फिर कौन किनसे पूछें और समाधान करें, इस विषय को कहते हैं॥

क ईं स्तवत् कः पृणात्को यजाते यदुग्रमिन्मघवा विश्वहावेत्।
पादाविव प्रहरन्नन्यमन्यं कृणोति पूर्वमपरं शचीभिः॥१५॥३२॥

कः। ईम्। स्तवत्। कः। पृणात्। कः। यजाते। यत्। उग्रम्। इत्। मघऽवा। विश्वहा। अवेत्। पादौऽइव। प्रऽहरन्। अन्यम्ऽअन्यम्। कृणोति। पूर्वम्। अपरम्। शचीभिः॥१५॥

पदार्थः-**(कः) (ईम्)** प्राप्तव्यं परमात्मानम्। **ईमिति पदनाम।** (निघं०४.२) **(स्तवत्)** स्तूयात् **(कः) (पृणात्)** पालयेत् **(कः) (यजाते) (यत्) (उग्रम्)** तेजस्विनम् **(इत्)** एव **(मघवा)** बहुधनः **(विश्वहा)** सर्वाणि दिनानि **(अवेत्)** रक्षेत् **(पादाविव)** चरणाविव **(प्रहरन्) (अन्यमन्यम्) (कृणोति) (पूर्वम्)** प्रथमम् **(अपरम्)** पश्चिमम् **(शचीभिः)** कर्मभिः॥१५॥

अन्वयः-हे विद्वांसोऽत्र क ईं स्तवत्कः सर्वं पृणात् कस्सत्यं यजाते यद्यो मघवा शचीभिर्विश्वहोग्रमिदवेत् पादाविवान्यमन्यं प्रहरन् पूर्वमपरं कृणोति॥१५॥

भावार्थः- अत्रोपमालङ्कारः। हे विद्वांसो! वयं युष्मान् पृच्छामोऽस्मिञ्जगति क ईश्वरं प्रशंसति कः सर्वं न्यायेन पृणाति कश्च विदुषः सत्करोतीत्येतेषां क्रमेणोत्तराणि- यो विद्यायोगधनः स सर्वदा परमेश्वरमेव स्तौति, यो न्यायकारी राजा पक्षपातं विहायाऽपराधिनं दण्डयति धार्मिकं सत्करोति स सर्वरक्षको, यश्च स्वयं विद्वान् गुणदोषज्ञो भवति, स एव विदुषः सत्कर्तुमर्हतीत्युत्तराणि॥१५॥

पदार्थः-हे विद्वान् जनो! इस संसार में **(कः)** कौन **(ईम्)** प्राप्त होने योग्य परमात्मा की **(स्तवत्)** स्तुति करे और **(कः)** कौन सबका **(पृणात्)** पालन करे **(कः)** कौन सत्य का **(यजाते)** यजन करे कि **(यत्)** जो **(मघवा)** बहुत धन वाला **(शचीभिः)** कर्म्मों से **(विश्वहा)** सब दिन **(उग्रम्)** तेजस्वी **(इत्)** ही की **(अवेत्)** रक्षा करे तथा **(पादाविव)** चरणों को जैसे वैसे **(अन्यमन्यम्)** दूसरे-दूसरे को **(प्रहरन्)** मारता हुआ **(पूर्वम्)** पहिले वाले को **(अपरम्)** पीछे **(कृणोति)** करता है॥१५॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे विद्वान् जनो! हम लोग आप लोगों से पूछते हैं कि इस संसार में कौन ईश्वर की प्रशंसा करता, कौन सब का न्याय से पालन करता और कौन विद्वानों का सत्कार करता है, इन प्रश्नों का क्रम से उत्तर- जो विद्या के योग से धन से युक्त है, वह सर्वदा परमेश्वर ही की स्तुति करता है और जो न्यायकारी राजा पक्षपात का त्याग कर अपराधी को दण्ड देता और धार्मिक का सत्कार करता है वह सर्वरक्षक है और जो स्वयं विद्वान् गुण और दोषों का जानने वाला है, वही विद्वानों का सत्कार करने योग्य है, ये उत्तर हैं॥१५॥

पुनः स राजा कीदृशो भवेदित्याह॥

फिर वह राजा कैसा होवे, इस विषय को कहते हैं॥

शृण्वे वी॒र उ॒ग्रमु॑ग्रं दमा॒यन्न॒न्यम॑न्यमतिनेनी॒यमा॑नः।

ए॒ध॒मा॒न॒द्वि॒ळु॒भय॑स्य॒ राजा॑ चोष्कूयते॒ विश॒ इन्द्रो॑ मनु॒ष्या॑न्॥१६॥

शृण्वे। वी॒रः। उ॒ग्रम्ऽउ॑ग्रम्। द॒म॒ऽयन्। अ॒न्यम्ऽअ॑न्यम्। अ॒ति॒ऽने॒नी॒यमा॑नः। ए॒ध॒मा॒न॒ऽद्विट्। उ॒भय॑स्य। राजा॑। चो॒ष्कू॒यते॑। विशः॑। इन्द्रः॑। म॒नु॒ष्या॑न्॥१६॥

पदार्थः-(**शृण्वे**) (**वीरः**) शौर्यादिगुणोपेतः (**उग्रमुग्रम्**) तेजस्विनं तेजस्विनम् (**दमायन्**) दमनं कुर्वन् (**अन्यमन्यम्**) भिन्नं भिन्नम् (**अतिनेनीयमानः**) भृशं न्यायव्यवस्थां प्रापयन् (**एधमानद्विट्**) यो वर्धमानान् वर्धमानान् द्वेष्टि सः (**उभयस्य**) राजप्रजाजनसमुदायस्य (**राजा**) न्यायविनयाभ्यां प्रकाशमानः (**चोष्कूयते**) भृशमाह्वयति (**विशः**) प्रजाः (**इन्द्रः**) विद्याविनयधरः (**मनुष्यान्**)॥१६॥

अन्वयः-हे अमात्या! यो वीर उग्रमुग्रं दमायन्नन्यमन्यमतिनेनीयमान एधमानद्विळुभयस्य राजेन्द्रो विशो मनुष्याञ्चोष्कूयते तमहं न्यायेशं शृण्वे॥१६॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यो मनुष्यो दुष्टान्दुष्टाँस्ताडयञ्छ्रेष्ठान् सत्कुर्वन्नन्यस्य वृद्धिं दृष्ट्वा द्वेष्टॄन् दण्डयन् प्रसन्नांश्च सत्कुर्वन् सर्वेषां वादिप्रतिवादिनां वचांसि यथावच्छ्रुत्वा सत्यं न्यायं करोति स एव राजा भवितुमर्हति॥१६॥

पदार्थः-हे मन्त्री जनो! जो (**वीरः**) शूरता आदि गुणों से युक्त जन (**उग्रमुग्रम्**) तेजस्वी तेजस्वी जन को (**दमायन्**) इन्द्रियों का निग्रह कराता हुआ और (**अन्यमन्यम्**) दूसरे दूसरे को (**अतिनेनीयमानः**) अत्यन्त न्याय की व्यवस्था को प्राप्त कराता हुआ (**एधमानद्विट्**) वृद्धि को प्राप्त होते हुओं से द्वेष करने वाला और (**उभयस्य**) राजा तथा प्रजाजन समुदाय का (**राजा**) न्याय और विनय से प्रकाशमान राजा (**इन्द्रः**) विद्या और विनय को धारण करने वाला (**विशः, मनुष्यान्**) प्रजाजनों को (**चोष्कूयते**) निरन्तर पुकारता है, उसको मैं न्यायेश (**शृण्वे**) सुनता हूँ॥१६॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो मनुष्य दुष्टों-दुष्टों को ताड़न करता, श्रेष्ठों-श्रेष्ठों का सत्कार करता, अन्य की वृद्धि देख कर द्वेष करने वालों को दण्ड देता और प्रसन्नों का सत्कार करता हुआ सम्पूर्ण वादी और प्रतिवादी के वचनों को यथावत् सुन के सत्य न्याय को करता है, वही राजा होने के योग्य है॥१६॥

पुनः स राजा किमकृत्वा किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या नहीं करके क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

परा पूर्वेषां सख्या वृणक्ति वितर्तुराणो अपरेभिरेति।

अनानुभूतीरवधून्वानः पूर्वीरिन्द्रः शरदस्तर्तरीति॥१७॥

परा। पूर्वेषाम्। सख्या। वृणक्ति। विऽतर्तुराणः। अपरेभिः। एति। अनानुऽभूतीः। अवऽधून्वानः। पूर्वीः। इन्द्रः। शरदः। तर्तरीति॥१७॥

पदार्थः-(**परा**) (**पूर्वेषाम्**) (**सख्या**) मित्रेण (**वृणक्ति**) त्यजति (**वितर्तुराणः**) विशेषेण भृशं हिंसन् (**अपरेभिः**) अन्यैः (**एति**) गच्छति (**अनानुभूतीः**) अनुभवरहितान्। अत्र**ान्येषामपी**ति दीर्घः। (**अवधून्वानः**) अर्वाक्कम्पयन् (**पूर्वीः**) प्राचीनाः (**इन्द्रः**) सूर्य्य इव राजा (**शरदः**) शरदाद्यृतून् (**तर्तरीति**) भृशं तरति॥१७॥

अन्वयः-यः सूर्य्य इवेन्द्रः पूर्वेषां सख्या वितर्तुराणोऽनानुभूतीरवधून्वानः परावृणक्त्यपरेभिस्सहैति सः सूर्य्यः पूर्वीः शरद इव संवत्सराँस्तर्तरीति॥१७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यो राजा वृद्धानां सखित्वं हित्वा नीचान् सखीनाप्नोति स श्रेयसश्च्युतो भवति यश्चानभिज्ञान् सखीन् विहायाऽभिज्ञान् सुहृदः करोति स एव पूर्णमायुः सुखेन तरति॥१७॥

पदार्थः-जो सूर्य्य के सदृश (**इन्द्रः**) राजा (**पूर्वेषाम्**) पूर्वजनों के (**सख्या**) मित्र से (**वितर्तुराणः**) विशेष करके अत्यन्त हिंसा करता और (**अनानुभूतीः**) अनुभव से रहित जनों को (**अवधून्वानः**) नीचे को कम्पाता हुआ (**परा, वृणक्ति**) त्यागता है और (**अपरेभिः**) अन्यों के साथ (**एति**) जाता है वह जैसे सूर्य्य (**पूर्वीः**) प्राचीन (**शरदः**) शरद् आदि ऋतुओं को, वैसे वर्षों के (**तर्तरीति**) अत्यन्त पार होता है॥१७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो राजा वृद्ध जनों के मित्रपन का त्याग करके नीच मित्रों को प्राप्त होता है, वह कल्याण से च्युत होता है और जो अनभिज्ञ मित्रों का त्याग करके अभिज्ञों को मित्र करता है, वही पूर्ण आयु भर सुख से पार होता है॥१७॥

पुनरयं जीवात्मा कीदृशो भवतीत्याह॥

फिर यह जीवात्मा कैसा होता है, इस विषय को कहते हैं॥

रूपंरूपं प्रतिरूपो बभूव तदस्य रूपं प्रतिचक्षणाय।

इन्द्रो मायाभिः पुरुरूप ईयते युक्ता ह्यस्य हरयः शता दश॥१८॥

रूपम्ऽरूपम्। प्रतिऽरूपः। बभूव। तत्। अस्य। रूपम्। प्रतिऽचक्षणाय। इन्द्रः। मायाभिः। पुरुऽरूपः। ईयते। युक्ताः। हि। अस्य। हरयः। शता। दश॥ १८॥

पदार्थः-(**रूपंरूपम्**) (**प्रतिरूपः**) तदाकारवर्तमानः (**बभूव**) भवति (**तत्**) (**अस्य**) जीवात्मनः (**रूपम्**) (**प्रतिचक्षणाय**) प्रत्यक्षकथनाय (**इन्द्रः**) जीवः (**मायाभिः**) प्रज्ञाभिः (**पुरुरूपः**) बहुशरीरधारणेन विविधरूपः (**ईयते**) (**युक्ताः**) (**हि**) खलु (**अस्य**) देहिनः (**हरयः**) अश्वा इवेन्द्रियाण्यन्तःकरणप्राणाः (**शता**) शतानि (**दश**)॥ १८॥

अन्वयः-हे मनुष्या! य इन्द्रो मायाभिः प्रतिचक्षणाय रूपंरूपं प्रतिरूपो बभूव पुरुरूप ईयते तदस्य रूपमस्ति, यस्याऽस्य हि दश शता हरयो युक्ताः शरीरं वहन्ति तदस्य सामर्थ्यं वर्त्तते॥ १८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा विद्युत्पदार्थं पदार्थं प्रति तद्रूपा भवति तथैव जीवः शरीरं प्रति तत्स्वभावो जायते यदा बाह्यं विषयं द्रष्टुमिच्छति तदा तद्दृष्ट्वा तदाकारं ज्ञानमस्य जायते या अस्य शरीरे विद्युत्सहिता असङ्ख्या नाड्यः सन्ति ताभिरयं सर्वस्य शरीरस्य समाचारं जानाति॥ १८॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**इन्द्रः**) जीव (**मायाभिः**) बुद्धियों से (**प्रतिक्षणाय**) प्रत्यक्ष कथन के लिये (**रूपंरूपम्**) रूप-रूप के (**प्रतिरूपः**) प्रतिरूप अर्थात् उसके स्वरूप से वर्त्तमान (**बभूव**) होता है और (**पुरुरूपः**) बहुत शरीर धारण करने से अनेक प्रकार का (**ईयते**) पाया जाता है (**तत्**) वह (**अस्य**) इस शरीर का (**रूपम्**) रूप है और जिस (**अस्य**) इस जीवात्मा के (**हि**) निश्चय करके (**दश**) दश सङ्ख्या से विशिष्ट और (**शता**) सौ सङ्ख्या से विशिष्ट (**हरयः**) घोड़ों के समान इन्द्रिय अन्तःकरण और प्राण (**युक्ताः**) युक्त हुए शरीर को धारण करते हैं, वह इसका सामर्थ्य है॥ १८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! बिजुली पदार्थ के प्रति तद्रूप होती है, वैसे ही जीव शरीर-शरीर के प्रति तत्स्वभाव वाला होता है और जब बाह्य विषय के देखने की इच्छा करता है, तब उसको देख के तत्स्वरूपज्ञान इस जीव को होता है और जो जीव के शरीर में बिजुली के सहित असङ्ख्य नाड़ी हैं, उन नाड़ियों से यह सब शरीर के समाचार को जानता है॥ १८॥

पुनः स जीवोऽत्र देहे कथं वर्त्तेतेत्याह॥

फिर वह जीव इस देह में कैसा वर्त्ताव करे, इस विषय को कहते हैं॥

युजानो हरिता रथे भूरि त्वष्टेह राजति।
को विश्वाहा द्विषतः पक्ष आसत उतासीनेषु सूरिषु॥ १९॥

युजानः। हरिता। रथे। भूरि। त्वष्टा। इह। राजति। कः। विश्वाहा। द्विषतः। पक्षः। आसते। उत। आसीनेषु। सूरिषु॥ १९॥

पदार्थः-(**युजानः**) समादधानः (**हरिता**) हरणशीलावश्वौ (**रथे**) रमणीये यान इव शरीरे (**भूरि**) बहु (**त्वष्टा**) तनूकर्त्ता जीवः (**इह**) अस्मिञ्छरीरे (**राजति**) प्रकाशते (**कः**) (**विश्वाहा**) सर्वाण्यहानि

(द्विषत:) द्वेषयुक्तस्य **(पक्ष:)** परिग्रह: **(आसते)** आस्ते। अत्र **बहुलं छन्दसी**त्येकवचनस्य बहुवचनम्। **(उत) (आसीनेषु)** स्थितेषु **(सूरिषु)** विद्वत्सु॥१९॥

अन्वय:-यथा कश्चिच्छारथी रथे हरिता युजानो भूरि राजति तता त्वष्टेह शरीरे राजति क इह विश्वाहा द्विषत: पक्ष आसते, उताप्यासीनेषु सूरिषु मूर्खाश्रयं क: करोति॥१९॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कार:। हे मनुष्या:! सदैव मूर्खाणां पक्षं विहाय विद्वत्पक्षे वर्त्तन्ताम्। यथा सुसारथिरश्वान् सन्नियम्य रथे योजयित्वा सुखेन गमनादिकार्य्यं साध्नोति तथा जितेन्द्रियो जीव: सर्वाणि स्वप्रयोजनानि साद्धुं शक्नोति यथा कश्चिद्दुष्टसारथिरश्वयुक्ते रथे स्थित्वा दु:खी भवति तथैवाऽजितेन्द्रियशरीरे स्थित्वा जीवो दु:खी जायते॥१९॥

पदार्थ:-जैसे (**क:**) कोई भी सारथी **(रथे)** सुन्दर वाहन के सदृश शरीर में **(हरिता)** ले चलने वाले घोड़ों को **(युजान:)** जोड़ता हुआ **(भूरि)** बहुत **(राजति)** प्रकाशित होता है, वैसे **(त्वष्टा)** सूक्ष्म करने वाला जीव **(इह)** इस शरीर में **(राजति)** प्रकाशित होता है और **(क:)** कौन **(इह)** इस शरीर में **(विश्वाहा)** सब दिन **(द्विषत:)** द्वेष से युक्त का **(पक्ष:)** ग्रहण करता **(आसते)** है और **(उत)** भी **(आसीनेषु)** स्थित **(सूरिषु)** विद्वानों में मूर्ख का आश्रय कौन करता है॥१९॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! सदा ही मूर्खों का पक्ष त्याग के विद्वानों के पक्ष में वर्त्ताव करिये और जैसे अच्छा सारथी घोड़ों को अच्छे प्रकार [वश में करके] रथ में जोड़ कर सुख से गमन आदि कार्यों को सिद्ध करता है, वैसे जितेन्द्रिय जीव सम्पूर्ण अपने प्रयोजनों को सिद्ध कर सकता है और जैसे कोई दुष्ट सारथी घोड़ों से युक्त रथ में स्थित होकर दु:खी होता है, वैसे ही अजित इन्द्रियाँ जिसमें ऐसे शरीर में स्थित होकर जीव दु:खी होता है॥१९॥

पुनर्मनुष्या: कथमारोग्यं प्राप्नुयुरित्याह॥

फिर मनुष्य कैसे आरोग्य को प्राप्त होवें, इस विषय को कहते हैं॥

अगव्यूति क्षेत्रमागन्म देवा उर्वी सती भूमिरंहूरणाभूत्।

बृहस्पते प्र चिकित्सा गविष्टावित्था सते जरित्र इन्द्र पन्थाम्॥२०॥३३॥

अगव्यूति। क्षेत्रम्। आ। अगन्म। देवा:। उर्वी। सती। भूमि:। अंहूरणा। अभूत्। बृहस्पते। प्र। चिकित्स। गोऽइष्टौ। इत्था। सते। जरित्रे। इन्द्र। पन्थाम्॥२०॥

पदार्थ:-**(अगव्यूति)** क्रोशद्वयपरिमाणरहितम् **(क्षेत्रम्)** क्षियन्ति निवसन्ति तं देशम् **(आ) (अगन्म)** समन्तात् प्राप्नुयाम **(देवा:)** विद्वांस: **(उर्वी)** बहुफलाद्युपेता **(सती)** वर्त्तमाना **(भूमि:)** पृथिवी **(अंहूरणा)** येंऽहयन्ति तेंऽहवो गन्तारस्तेषां रण: स-रमो यस्यां सा **(अभूत्)** भवति **(बृहस्पते)** बृहतां पालक **(प्र) (चिकित्सा)** यश्चिकित्सति रोगपरीक्षां करोति तत्संबुद्धौ। अत्र **संहितायामिति** दीर्घ:। **(गविष्टौ)** गौ: सुशिक्षिताया वाच: सङ्गतौ **(इत्था)** अनेन प्रकोरणऽस्माद्धेतोर्वा **(सते) (जरित्रे)** स्तावकाय **(इन्द्र)** रोगदोषनिवारक **(पन्थाम्)** पन्थानम्॥२०॥

अन्वयः-हे बृहस्पते चिकित्सेन्द्र वैद्यराजंस्त्वत्सहायेन या उर्वी सत्यूंहरणा भूमिरभूद्यत्राऽगव्यूति क्षेत्रमभूतां देवा वयमागन्मेत्था गविष्टौ सते जरित्रे पन्थां प्रागन्म॥२०॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये सद्वैद्याः स्युस्तन्मित्रतयारोगा दीर्घायुषो बलिष्ठा विद्वांसो भूत्वा भूमिराज्यं प्राप्य यत्र कुत्र विमानादियानैर्गत्वाऽऽगत्य विद्वन्मार्गमाश्रयन्तु॥२०॥

पदार्थः-हे **(बृहस्पते)** बड़ों के पालन करने **(चिकित्सा)** रोगों की परीक्षा करने और **(इन्द्र)** रोग और दोषों के दूर करने वाले वैद्यराज! आपके सहाय से **(उर्वी)** बहुत फल आदि से युक्त **(सती)** वर्त्तमान **(अंहूरणा)** चलने वालों का स-1म जिसमें वह **(भूमिः)** पृथिवी **(अभूत्)** होती है और जहाँ **(अगव्यूति)** दो कोश के परिमाण से रहित **(क्षेत्रम्)** निवास करते हैं जिस स्थान में ऐसा स्थान होता है उसको **(देवाः)** विद्वान् हम लोग **(आ, अगन्म)** सब प्रकार से प्राप्त होवें **(इत्था)** इस प्रकार से वा इस हेतु से **(गविष्टौ)** उत्तम प्रकार शिक्षितवाणी की सङ्गति में **(सते)** वर्त्तमान **(जरित्रे)** स्तुति करने वाले के लिये **(पन्थाम्)** मार्ग को **(प्र)** अच्छे प्रकार प्राप्त होवें॥२०॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो श्रेष्ठ वैद्य होवें उनके साथ मित्रता से रोग रहित, अधिक अवस्था वाले, बलिष्ठ, विद्वान् हो और भूमि के राज्य को प्राप्त होकर जहाँ कहीं विमान आदि वाहनों से जा-आ कर विद्वानों के मार्ग का आश्रयण करो॥२०॥

पुनस्तौ राजप्रजाजनौ कथं वर्त्तेयातामित्याह॥

फिर वे राजा और प्रजाजन कैसा वर्त्ताव करें, इस विषय को कहते हैं॥

दिवेदिवे सदृशीरन्यमर्धं कृष्णा असेधदप सद्मनो जाः।

अहन् दासा वृषभो वस्नयन्तोदव्रजे वर्चिनं शंबरं च॥२१॥

दिवेऽदिवे। सऽदृशीः। अन्यम्। अर्धम्। कृष्णाः। असेधत्। अप। सद्मनः। जाः। अहन्। दासा। वृषभः। वस्नऽयन्ता। उदऽव्रजे। वर्चिनम्। शम्बरम्। च॥२१॥

पदार्थः-**(दिवेदिवे)** प्रतिदिनम् **(सदृशीः)** समानस्वरूपाः **(अन्यम्)** **(अर्द्धम्)** अर्द्धकम् **(कृष्णाः)** निकृष्टवर्णाः कर्षिता वा **(असेधत्)** सेधते **(अप)** **(सद्मनः)** सीदन्ति यस्मिँस्तस्य **(जाः)** जायमानः सूर्यः **(अहन्)** हन्ति **(दासा)** दासावुपक्षयितारौ **(वृषभः)** वृष्टिकरः **(वस्नयन्ता)** वस्नमिवाचरन्तौ राजप्रजाजनौ **(उदव्रजे)** उदकानि व्रजन्ति यस्मिँस्तस्मिन् **(वर्चिनम्)** देदीप्यमानम् **(शम्बरम्)** मेघम् **(च)**॥२१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा जाः सूर्यो दिवेदिवे सदृशीः कृष्णा अन्यमर्धं चाऽसेधत् सद्मनोऽन्धकारमपासेधद् वृषभ उदव्रजे वर्चिनं शम्बरमहँस्तथा वस्नयन्ता दासा वर्त्तेयाताम्॥२१॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! यथा सूर्यमेघौ सर्वां पृथिवीमाकृष्य प्रकाशजलयुक्तां कुरुतः। यथा सूर्योऽस्या अर्धं भाग प्रकाशयति वृष्टिं च करोत्यन्धकारं निवार्य्य सर्वान् सुखयति तथैव राजप्रजाजनौ सत्यमाकृष्याऽसत्यं त्यक्त्वाऽन्यायं निवार्य्य न्यायं प्रचार्य्य सद्विद्योपदेशवृष्टिं विधाय सर्वान् मनुष्यान् सुखयेताम्॥२१॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! जैसे **(जा:)** प्रकट हुआ सूर्य्य **(दिवेदिवे)** प्रतिदिन **(सदृशी:)** तुल्यस्वरूपयुक्त **(कृष्णा:)** खराब वर्ण वाली वा खोदी गई पृथिवियों और **(अन्यम्)** अन्य **(अर्द्धम्)** आधे को **(च)** भी **(असेधत्)** अलग करता है और **(सद्मन:)** निवास करते हैं जिसमें उस गृह के अन्धकार को **(अप)** अलग करता है तथा **(वृषभ:)** वृष्टि करने वाला **(उदक्ने)** जल जाते हैं जिसमें उसमें **(वर्चिनम्)** प्रकाशमान **(शम्बरम्)** मेघ का **(अहन्)** नाश करता है, वैसे **(वस्नयन्ता)** निवास करते हुए के समान आचरण करते हुए राजा और प्रजाजन **(दासा)** उपेक्षा करने वाले हुए वर्त्ताव करें॥२१॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जैसे सूर्य और मेघ समस्त पृथिवी का आकर्षण कर प्रकाश और जलयुक्त करते हैं वा जैसे सूर्य इस पृथिवी के अर्द्धभाग को प्रकाशित करता और वर्षा को करता है तथा अन्धकार का निवारण कर सबको सुखी करता है, वैसे ही राजा और प्रजाजन सत्य को खैंच असत्य को त्याग कर अन्याय का निवारण कर न्याय का प्रचार कर और उत्तम विद्या के उपदेशों की वृष्टि कर सब मनुष्यों को सुखी करें॥२१॥

पुनस्तौ राजप्रजाजनौ परस्परं कथं वर्त्तेयातामित्याह॥

फिर वे राजा और प्रजाजन परस्पर कैसा वर्त्ताव करें, इस विषय को कहते हैं॥

प्रस्तोक इन्नु राधसस्त इन्द्र दश कोशयीर्दश वाजिनोऽदात्।

दिवोदासादतिथिग्वस्य राधः शांबरं वसु प्रत्यग्रभीष्म॥२२॥

प्रऽस्तोकः। इत्। नु। राधसः। ते। इन्द्र। दश। कोशयीः। दश। वाजिनः। अदात्। दिवःऽदासात्। अतिथिऽग्वस्य। राधः। शांबरम्। वसु। प्रति। अग्रभीष्म॥२२॥

पदार्थ:-**(प्रस्तोक:)** यः प्रस्तौति **(इत्)** एव **(नु)** सद्यः **(राधस:)** धनस्य **(ते)** तव **(इन्द्र)** सूर्य इव परमैश्वर्ययुक्त **(दश)** **(कोशयी:)** याः कोशान् यान्ति ता भूमीः **(दश)** एतत्संख्याकाः **(वाजिन:)** बह्वन्नयुक्तस्य **(अदात्)** ददाति **(दिवोदासात्)** प्रकाशदातुः **(अतिथिग्वस्य)** योऽतिथीनागच्छति तस्य **(राध:)** **(शाम्बरम्)** शंबरे मेघे भवम् **(वसु)** जलाख्यं द्रव्यम् **(प्रति)** **(अग्रभीष्म)** गृह्णीयाम॥२२॥

अन्वय:-हे इन्द्र! यस्ते वाजिनो राधसो दश कोशयीः प्रस्तोकोऽदात्। दशगुणं सम्पादयति यदतिथिग्वस्य दिवोदासात् प्राप्तं राधः शाम्बरं वसु च वयं प्रत्यग्रभीष्म तदिन्नु भवानस्मभ्यं प्रयच्छतु तदिन्नु वयं तुभ्यं दद्याम॥२२॥

भावार्थ:-हे राजन्! यस्ते राष्ट्रेऽसङ्ख्यधनप्रदो वृष्टिकरोऽतिथिसङ्गसेवनो जनो भवेत्तस्य रक्षां त्वं विधेहि। यदस्मान् धनं प्राप्नुयात्तत्तुभ्यं वयं दद्याम यत्त्वामीयात्तदस्मभ्यं देहि॥२॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** सूर्य्य के सदृश अत्यन्त ऐश्वर्य्य से युक्त! जो **(ते)** आपके **(वाजिनः)** बहुत अन्नों से युक्त **(राधसः)** धन की **(दश)** दश **(कोशयीः)** कोशों खजानों को प्राप्त होने वाली भूमियों की **(प्रस्तोकः)** स्तुति करने वाला **(अदात्)** देता है और **(दश)** दशगुनी सम्पादित करता और जिस **(अतिथिग्वस्य)** अतिथियों को प्राप्त होने वाले के **(दिवोदासात्)** प्रकाश देने वाले से प्राप्त हुए **(राधः)** धन को **(शाम्बरम्)** और मेघ में हुए **(वसु)** जल नामक द्रव्य को हम लोग **(प्रति, अग्रभीष्म)** ग्रहण करें उसको **(इत्)** ही **(नु)** शीघ्र आप हम लोगों के लिये दीजिये, उसको ही शीघ्र हम लोग आपके लिये देवें॥२२॥

भावार्थः-हे राजन्! जो आपके राज्य में असङ्ख्य धनों को देने, वृष्टि करने तथा अतिथियों के सङ्ग का सेवन करने वाला जन होवे, उसकी रक्षा को आप करिये और जो हम लोगों को धन प्राप्त होवे, उसको आपके लिये हम लोग देवें और जो आपको प्राप्त होवे उसको हम लोगों के लिये दीजिये॥२२॥

पुनरमात्या राज्ञः किं प्राप्नुयुरित्याह॥

फिर मन्त्रीजन राजा से क्या प्राप्त होवें, इस विषय को कहते हैं॥

दशाश्वान् दश कोशान् दश वस्त्राधिभोजना।

दशो हिरण्यपिण्डान् दिवोदासादसानिषम्॥२३॥

दश। अश्वान्। दश। कोशान्। दश। वस्त्रा। अधिऽभोजना। दशो इति। हिरण्यऽपिण्डान्। दिवःऽदासात्। असानिषम्॥२३॥

पदार्थः-**(दश)** एतत्सङ्ख्याकान् **(अश्वान्)** तुरङ्गादीन् **(दश)** **(कोशान्)** दशगुणधनपूर्णान् **(दश)** दशगुणानि **(वस्त्रा)** वस्त्राणि **(अधिभोजना)** अधिकानि भोजनानि **(दशो)** **(हिरण्यपिण्डान्)** सुवर्णादिसमूहान् **(दिवोदासात्)** कमनीयधनदातुः **(असानिषम्)** सम्भज्य प्राप्नुयाम्॥२३॥

अन्वयः-हे इन्द्र राजन्! दिवोदासात्त्वद्दशाऽश्वान् दश कोशान् दश वस्त्रा दशाऽधिभोजना दशो हिरण्यपिण्डांश्चाऽहमसानिषं प्राप्नुयाम्॥२३॥

भावार्थः-ये धार्मिकाः शूरवीराः शत्रूणां विजेतारो राजभक्ताः प्रजापालनतत्परा विद्वांसोऽमात्याः स्युस्तेऽश्वादीन् सर्वान् पदार्थान् दशगुणान् राजसकाशात् प्राप्नुयुरिति॥२३॥

पदार्थः-हे ऐश्वर्य्य से युक्त राजन्! **(दिवोदासात्)** सुन्दर धन के देने वाले आप से **(दश)** दश सङ्ख्या से युक्त **(अश्वान्)** घोड़ों और **(दश)** दश सङ्ख्या से युक्त **(कोशान्)** दशगुने धन से पूर्ण खजानों और **(दश)** दश प्रकार के **(वस्त्रा)** वस्त्रों को और दश प्रकार के **(अधिभोजना)** अधिक भोजनों को और **(दशो)** दश प्रकार के **(हिरण्यपिण्डान्)** सुवर्ण आदि समूहों को मैं **(असानिषम्)** संविभाग करके प्राप्त होऊँ॥२३॥

भावार्थ:-जो धार्मिक, शूरवीर और शत्रुओं के जीतने वाले, राजभक्त और प्रजा के पालन में तत्पर विद्वान् मन्त्रीजन होवें, वे घोड़े आदि सम्पूर्ण पदार्थों को दशगुने राजा के समीप से प्राप्त होवें॥२३॥

पुन: स राजाऽधिकारं कस्मै दद्यादित्याह॥

फिर वह राजा अधिकार किसके लिये देवे, इस विषय को कहते हैं॥

दश रथान् प्रष्टिमतः शतं गा अथर्वभ्यः। अश्वथः पायवेऽदात्॥२४॥

दश। रथान्। प्रष्टिऽमतः। शतम्। गाः। अथर्वऽभ्यः। अश्वथः। पायवे। अदात्॥२४॥

पदार्थ:-**(दश)** **(रथान्)** **(प्रष्टिमतः)** प्रष्टयोऽनीप्सा विद्यन्ते येषु तान् **(शतम्)** **(गाः)** धेनूः **(अथर्वभ्यः)** अहिंसकेभ्यः **(अश्वथः)** योऽश्नुते सः **(पायवे)** पालनाय **(अदात्)** दद्यात्॥२४॥

अन्वय:-हे राजन् गृहस्थ वा! यथाऽश्वथो मेधावी पायवेऽथर्वभ्यः प्रष्टिमतो दश रथाञ्छतं गा अदात्तथा त्वमपि देहि॥२४॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये राजादयो जनाः पालनार्हाय पशुरथादिरक्षणाऽधिकारं ददति ते सुसामग्रीयुक्ता भवन्ति॥२४॥

पदार्थ:-हे राजन् वा गृहस्थ लोगो! जैसे **(अश्वथः)** भोजन करने वाला बुद्धिमान् जन **(पायवे)** पालन के लिये **(अथर्वभ्यः)** नहीं हिंसा करने वालों को **(प्रष्टिमतः)** नहीं इच्छा विद्यमान जिनमें उन **(दश)** सङ्ख्या से विशिष्ट **(रथान्)** वाहनों को और **(शतम्)** सौ **(गाः)** गौओं को **(अदात्)** देवे, वैसे आप भी दीजिये॥२४॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो राजा आदि जन पालन करने योग्य के लिये पशु रथ आदि के रक्षण के अधिकार को देते हैं, वे अच्छी सामग्री से युक्त होते हैं॥२४॥

पुन: स राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

महि राधो विश्वजन्यं दधानान् भरद्वाजान्त्सार्ञ्जयो अभ्ययष्ट॥२५॥३४॥

महि। राधः। विश्वऽजन्यम्। दधानान्। भरत्ऽवाजान्। सार्ञ्जयः। अभि। अयष्ट॥२५॥

पदार्थ:-**(महि)** महत् **(राधः)** धनम् **(विश्वजन्यम्)** विश्वाञ्जनयितुं योग्यं विश्वसुखजनकं वा **(दधानान्)** धारकान् **(भरद्वाजान्)** ये वाजानन्नादीन् भरन्ति तान् **(सार्ञ्जयः)** यो विविधान्याययुक्तान् व्यवहारान् सृजति तस्यापत्यम् **(अभि)** आभिमुख्ये **(अयष्ट)** अभिसङ्गच्छेत॥२५॥

अन्वय:-यः सार्ञ्जयो महि विश्वजन्यं राधो दधानान् भरद्वाजानभ्यष्ट स राजा सम्राट् स्यात्॥२५॥

भावार्थ:-यो ब्रह्मचर्य्येण शरीरात्मानौ बलिष्ठौ कृत्वा सकलैश्वर्य्यमुन्नीयोत्तमान् पुरुषान् सङ्गृह्णाति स एव राजा राज्यमुन्नेतुमर्हेत्॥२५॥

पदार्थः-जो **(साञ्जयः)** अनेक प्रकार के न्याययुक्त व्यवहारों को बनाने वाले का सन्तान **(महि)** बड़े **(विश्वजन्यम्)** संसार से वा सम्पूर्ण से उत्पन्न होने योग्य वा सम्पूर्ण सुख को उत्पन्न करने वाले **(राधः)** धन को **(दधानान्)** धारण करने वाले **(भरद्वाजान्)** अन्न आदि के धारणकर्त्ताओं के **(अभि, अयष्ट)** सन्मुख जावे, मेघावी वह राजा चक्रवर्ती होवे॥२५॥

भावार्थः-जो ब्रह्मचर्य्य से शरीर और आत्मा को बलिष्ठ कर और सम्पूर्ण ऐश्वर्य्य को बढ़ाय के उत्तम पुरुषों को ग्रहण करता है, वही राजा राज्य के बढ़ाने के योग्य होवे॥२५॥

पुनः स राजा कीदृशान् सुहृद इच्छेदित्याह॥

फिर वह राजा कैसे मित्रों की इच्छा करे, इस विषय को कहते हैं॥

वन॑स्पते वी॒ड्व॑ङ्गो॒ हि भू॒या अ॒स्मत्स॑खा प्र॒तर॑णः सु॒वीरः॑।
गोभि॒: संन॑द्धो असि वी॒ळय॑स्वास्था॒ता ते॑ जयतु॒ जेत्वा॑नि॥२६॥

वन॑स्पते। वी॒ळुऽअ॑ङ्गः। हि। भू॒याः। अ॒स्मत्ऽस॑खा। प्र॒ऽतर॑णः। सु॒ऽवीरः॑। गोभिः॑। सम्ऽन॑द्धः। अ॒सि। वी॒ळय॑स्व। आ॒ऽस्था॒ता। ते॒। ज॒यतु॒। जेत्वा॑नि॥२६॥

पदार्थः-**(वनस्पते)** वनानां किरणानां पालकः सूर्य इव **(वीड्वङ्गः)** वीळूनि बलिष्ठान्यङ्गानि यस्य सः **(हि)** यतः **(भूयाः)** **(अस्मत्सखा)** अस्माकं मित्रम् **(प्रतरणः)** प्रतारकः **(सुवीरः)** सुष्ठु वीरयुक्तः **(गोभिः)** सुशिक्षिताभिर्वाग्भिः **(सन्नद्धः)** सम्यक् सन्नः **(असि)** **(वीळयस्व)** दृढान् कारय **(आस्थाता)** आस्थायुक्तः **(ते)** तव **(जयतु)** **(जेत्वानि)** जेतुं योग्यानि शत्रुसैन्यानि॥२६॥

अन्वयः-हे वनस्पते! हि यतो वीड्वङ्गः प्रतरणः सुवीरो गोभिस्सह सन्नद्धस्त्वमसि तस्मादस्मत्सखा भूयाः। आस्थाता सन्नस्मान् वीळयस्व ते सेना जेत्वानि जयतु॥२६॥

भावार्थः-मनुष्यैर्धार्मिकेन बलवता मित्रता कार्या येन सर्वदा विजयः स्यात्॥२६॥

पदार्थः-हे **(वनस्पते)** किरणों के पालन करने वाले सूर्य्य के समान वर्त्तमान **(हि)** जिससे **(वीड्वङ्गः)** बलिष्ठ अङ्ग जिसके वह **(प्रतरणः)** पार करने वाले **(सुवीरः)** अच्छे प्रकार वीरों से युक्त **(गोभिः)** उत्तम प्रकार शिक्षित वाणियों के साथ **(सन्नद्धः)** अच्छे प्रकार तैयार हुए आप **(असि)** हो इससे **(अस्मत्सखा)** हम लोगों के मित्र **(भूयाः)** हूजिये और **(आस्थाता)** स्थिति से युक्त हुए हम लोगों को **(वीळयस्व)** दृढ़ कराइये **(ते)** आपकी सेना **(जेत्वानि)** जीतने योग्य शत्रुओं की सेनाओं को **(जयतु)** जीते॥२६॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि धार्मिक बलवान् के साथ मित्रता करें, जिससे सर्वदा विजय हो॥२६॥

पुनर्मनुष्यैः केभ्य उपकारा ग्राह्या इत्याह॥

फिर मनुष्यों को किन से उपकार ग्रहण करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

दिवस्पृथिव्याः पर्योज उद्भृतं वनस्पतिभ्यः पर्याभृतं सहः।
अपामोज्मानं परि गोभिरावृतमिन्द्रस्य वज्रं हविषा रथं यज॥२७॥

दिवः। पृथिव्याः। परि। ओजः। उत्ऽभृतम्। वनस्पतिऽभ्यः। परि। आऽभृतम्। सहः। अपाम्। ओज्मानम्। परि। गोभिः। आऽवृतम्। इन्द्रस्य। वज्रम्। हविषा। रथम्। यज॥२७॥

पदार्थः-(**दिवः**) विद्युतस्सूर्याद्वा (**पृथिव्याः**) भूमेरन्तरिक्षाद्वा (**परि**) (**ओजः**) बलम् (**उद्भृतम्**) उत्कृष्टरीत्या धृतम् (**वनस्पतिभ्यः**) वटादिभ्यः (**परि**) सर्वतः (**आभृतम्**) आभिमुख्येन धृतम् (**सहः**) बलम् (**अपाम्**) जलानाम् (**ओज्मानम्**) बलकारिणम् (**परि**) सर्वतः (**गोभिः**) किरणैः (**आवृतम्**) आच्छादितम् (**इन्द्रस्य**) विद्युतः (**वज्रम्**) प्रहारम् (**हविषा**) सामग्र्या दानेन (**रथम्**) विमानादियानविशेषम् (**यज**) सङ्गच्छस्व॥२७॥

अन्वयः-हे विद्वँस्त्वं दिवः पृथिव्या वनस्पतिभ्य ओज उद्भृतं सहः पर्याभृतं गोभिरपामोज्मानं पर्यावृतमिन्द्रस्य वज्रं रथं च हविषा परि यज॥२७॥

भावार्थः-ये मनुष्याः सर्वतो बलं गृहीत्वा सूर्य्योऽपामोज्मानं मेघमिव सुखं वर्षयन्ति ते सर्वतः सत्कृता जायन्ते॥२७॥

पदार्थः-हे विद्वन्! आप (**दिवः**) बिजुली से वा सूर्य्य से (**पृथिव्याः**) भूमि वा अन्तरिक्ष से (**वनस्पतिभ्यः**) वट आदि वनस्पतियों से (**ओजः**) बल (**उद्भृतम्**) उत्तम रीति से धारण किया गया वा (**सहः**) बल (**परि**) सब प्रकार से (**आभृतम्**) सन्मुख धारण किया गया और (**गोभिः**) किरणों से (**अपाम्**) जलों के (**ओज्मानम्**) बलकारी (**परि**) सब ओर से (**आवृतम्**) ढाँपे गये (**इन्द्रस्य**) बिजुली के (**वज्रम्**) प्रहार को और (**रथम्**) विमान आदि वाहन विशेष को (**हविषा**) सामग्री के दान से (**परि, यज**) उत्तम प्रकार प्राप्त हूजिये॥२७॥

भावार्थः-जो मनुष्य सब ओर से बल को ग्रहण करके जलों के बलकारी मेघ को जैसे वैसे सुख को वर्षाते हैं, वे सब प्रकार से सत्कृत होते हैं॥२७॥

पुना राज्ञा विद्युता किं साधनीयमित्याह॥

फिर राजा को बिजुली से क्या सिद्ध करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

इन्द्रस्य वज्रो मरुतामनीकं मित्रस्य गर्भो वरुणस्य नाभिः।
सेमां नो हव्यदातिं जुषाणो देव रथ प्रति हव्या गृभाय॥२८॥

इन्द्रस्य। वज्रः। मरुताम्। अनीकम्। मित्रस्य। गर्भः। वरुणस्य। नाभिः। सः। इमाम्। नः। हव्यऽदातिम्। जुषाणः। देव। रथ। प्रति। हव्या। गृभाय॥२८॥

पदार्थः-(**इन्द्रस्य**) विद्युतः (**वज्रः**) प्रहारः शब्दो वा (**मरुताम्**) मनुष्याणाम् (**अनीकम्**) सैन्यमिव (**मित्रस्य**) प्राणस्य (**गर्भः**) मध्यस्थः (**वरुणस्य**) श्रेष्ठस्य वायोः (**नाभिः**) बन्धनम् (**सः**) (**इमाम्**) (**नः**)

अस्माकम् **(हव्यदातिम्)** दातव्यदानक्रियाम् **(जुषाणः)** सेवमानः **(देव)** विद्वन् **(रथ)** रमणीय **(प्रति)** प्रतीतौ **(हव्या)** आदातुमर्हाणि **(गृभाय)** गृहाण॥२८॥

अन्वयः-हे देव रथ विद्वन् राजंस्त्वं यो मरुतामनीकमिवेन्द्रस्य वज्रो मित्रस्य गर्भो वरुणस्य नाभिरस्ति स न इमां हव्यदातिं जुषाणः सन् हव्या प्रति ददाति तं त्वं प्रति गृभाय॥२८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे विद्वांसो! विद्युदादिपदार्थैः सर्वमूर्त्तद्रव्यान्तःस्थैः कर्मभिर्युक्तां सेनां सम्पाद्य विजयेनालङ्कृता भवन्तु॥२८॥

पदार्थः-हे **(देव, रथ)** सुन्दर विद्वन् राजन्! आप जो **(मरुताम्)** मनुष्यों की **(अनीकम्)** सेना के सदृश **(इन्द्रस्य)** बिजुली की **(वज्रः)** धमक वा शब्द **(मित्रस्य)** प्राण के **(गर्भः)** मध्य में स्थित और **(वरुणस्य)** श्रेष्ठ वायु का **(नाभिः)** बन्धन है **(सः)** वह **(नः)** हम लोगों की **(इमाम्)** इस **(हव्यदातिम्)** देने योग्य दान की क्रिया को **(जुषाणः)** सेवन करता हुआ **(हव्या)** ग्रहण करने योग्यों को देता है, उसको आप **(प्रति, गृभाय)** प्रतीति से ग्रहण करिये॥२८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे विद्वान् जनो! बिजुली आदि पदार्थों और सम्पूर्ण मूर्त्त द्रव्यों के मध्य में वर्त्तमान कर्म्मों से युक्त सेना को करके विजय से शोभित हूजिये॥२८॥

पुनर्विद्वद्भिः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर विद्वानों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

उप॑ श्वासय पृथि॒वीमु॒त द्यां पु॑रु॒त्रा ते॑ मनुतां॒ विष्ठि॑तं॒ जग॑त्।

स दु॑न्दुभे स॒जूरिन्द्रे॑ण दे॒वैर्दू॒राद् दवी॑यो॒ अप॑ सेध॒ शत्रू॑न्॥२९॥

उप॑। श्वा॒स॒य॒। पृ॒थि॒वीम्। उ॒त। द्याम्। पु॒रु॒ऽत्रा। ते॒। म॒नु॒ता॒म्। विऽस्थि॑तम्। जग॑त्। सः। दु॒न्दु॒भे॒। स॒ऽजूः। इन्द्रे॑ण। दे॒वैः। दू॒रात्। दवी॑यः। अप॑। से॒ध॒। शत्रू॑न्॥२९॥

पदार्थः-**(उप)** **(श्वासय)** प्राणय **(पृथिवीम्)** भूमिमन्तरिक्षं वा **(उत)** **(द्याम्)** सूर्य्यं विद्युतं वा **(पुरुत्रा)** पुरुषु पदार्थेषु भवान् **(ते)** तव **(मनुताम्)** विजानातु **(विष्ठितम्)** विशेषेण स्थितम् **(जगत्)** यद् गच्छति **(सः)** **(दुन्दुभे)** दुन्दुभिरिव गर्जक **(सजूः)** संयुक्तः **(इन्द्रेण)** विद्युदस्त्रेण **(देवैः)** विद्वद्भिर्वीरैः **(दूरात्)** **(दवीयः)** अतिशयेन दूरम् **(अप)** **(सेध)** अप नय **(शत्रून्)**॥२९॥

अन्वयः-हे दुन्दुभे! यथा स जगदीश्वरः पृथिवीमुत द्यां विष्ठितं जगन्मनुतां तेन पुरुत्रेन्द्रेण देवैः सजूस्त्वं शत्रून् दूराद्दवीयोऽप सेध यस्ते कल्याणं मनुतां तमुपास्य सर्वानुपश्वासय॥२९॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे विद्वांसो! यथेश्वरेण पृथिवीसूर्य्यादि सर्वं जगत्स्वसत्तया स्थापितं तथैव विद्युता मूर्तिमद्द्रव्याण्यभिव्याप्य प्रवर्त्यन्त, ईश्वरोपासनेन विद्युदादिप्रयोगेण दूरस्थानपि शत्रून् विजित्य सकलाः प्रजीवयत॥२९॥

पदार्थः-हे **(दुन्दुभे)** दुन्दुभि के सदृश गर्जने वाले! जैसे **(सः)** वह जगदीश्वर **(पृथिवी)** भूमि वा अन्तरिक्ष को और **(उत)** भी **(द्याम्)** सूर्य्य वा बिजुली को **(विष्ठितम्)** विशेष करके स्थित **(जगत्)** व्यतीत होने वाले संसार को **(मनुताम्)** जाने उस ज्ञान से **(पुरुत्रा)** सम्पूर्ण पदार्थों से हुए **(इन्द्रेण)** बिजुलीरूप अस्त्र से और **(देवैः)** विद्वान् वीरों से **(सजूः)** संयुक्त आप **(शत्रून्)** शत्रुओं को **(दूरात्)** दूर से **(दवीयः)** अति दूर **(अप, सेध)** हराइये और जो **(ते)** आपके कल्याण को जाने उसकी उपासना करके सब को **(उप, श्वासय)** समझाइये॥२९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे विद्वानो! जैसे ईश्वर ने पृथिवी और सूर्यादि सम्पूर्ण संसार को अपनी सत्ता से स्थापित किया, वैसे ही बिजुली सम्पूर्ण द्रव्यों में अभिव्याप्त होकर मध्य में प्रविष्ट है, ईश्वर की उपासना और बिजुली आदि के प्रयोगों से दूर पर स्थित भी शत्रुओं को जीत कर सब को जिलाओ॥२९॥

पुनः स राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

आ क्रन्दय बलमोजो न आ धा निः ष्टनिहि दुरिता बाधमानः।

अप प्रोथ दुन्दुभे दुच्छुना इत इन्द्रस्य मुष्टिरसि वीळयस्व॥३०॥

आ। क्रन्दय। बलम्। ओजः। नः। आ। धाः। निः। स्तनिहि। दुःऽइता। बाधमानः। अप। प्रोथ। दुन्दुभे। दुच्छुनाः। इतः। इन्द्रस्य। मुष्टिः। असि। वीळयस्व॥३०॥

पदार्थः-**(आ)** समन्तात् **(क्रन्दय)** रोदयाऽऽह्वय वा **(बलम्)** **(ओजः)** पराक्रमम् **(नः)** अस्मभ्यम् **(आ)** **(धाः)** धेहि **(निः)** नितराम् **(स्तनिहि)** शब्दय **(दुरिता)** दुष्टव्यसनानि **(बाधमानः)** **(अप)** **(प्रोथ)** जेतुं पर्याप्तो भव शत्रूनसमर्थान् कुरु **(दुन्दुभे)** दुन्दुभिरिव वर्त्तमान **(दुच्छुनाः)** दुष्टश्वान इव वर्त्तमानान् **(इतः)** अस्मात् **(इन्द्रस्य)** विद्युतः **(मुष्टिः)** मुष्टिवद्दुष्टानां हन्ता **(असि)** **(वीळयस्व)** बलयस्व॥३०॥

अन्वयः-हे दुन्दुभे! त्वं नो बलमोज आ धाः शत्रूनाक्रन्दयास्मान्निः ष्टनिहि दुरिता बाधमानो दुच्छुना इव वर्त्तमानाञ्छत्रूनप प्रोथ। यतस्त्वमिन्द्रस्य मुष्टिरसीतोऽस्मान् वीळयस्व॥३०॥

भावार्थः-हे राजंस्त्वमीदृशं बलं धरेर्येन दुर्व्यसनानि दुष्टाः शत्रवो नश्येयुः प्रजाः पोषयितुं शक्नुयाः॥३०॥

पदार्थः-**(दुन्दुभे)** दुन्दुभी के समान वर्त्तमान! आप **(नः)** हम लोगों के लिये **(बलम्)** सामर्थ्य को और **(ओजः)** पराक्रम को **(आ, धाः,)** धरिये और शत्रुओं को **(आ)** सब ओर से **(क्रन्दय)** रुलाइये और बुलाइये तथा हम लोगों को **(निः)** अत्यन्त **(स्तनिहि)** शब्द कराइये और **(दुरिता)** दुष्ट व्यसनों को **(बाधमानः)** नष्ट करते हुए **(दुच्छुनाः)** दुष्ट कुत्तों के समान वर्त्तमान शत्रुओं के **(अप, प्रोथ)** जीतने को

पर्याप्त हूजिये अर्थात् शत्रुओं को असमर्थ करिये जिससे आप **(इन्द्रस्य)** बिजुली की **(मुष्टिः)** मुष्टि के समान दुष्टों के मारने वाले **(असि)** हो **(इतः)** इससे हम लोगों को **(वीळयस्व)** बलयुक्त करिये॥३०॥

भावार्थः-हे राजन्! आप ऐसे बल को धारण करिये जिससे दुष्ट व्यसन, और दुष्ट शत्रु नष्ट होवें और प्रजाओं के पोषण करने को समर्थ होवें॥३०॥

पुना राजदयो जनाः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर राजा आदि जन क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

आमूरज प्रत्यावर्तयेमाः केतुमद् दुन्दुभिर्वावदीति।
समश्वपर्णाश्चरन्ति नो नरोऽस्माकमिन्द्र रथिनो जयन्तु॥३१॥३५॥७॥

आ। अमूः। अज। प्रतिऽआवर्तय। इमाः। केतुऽमत्। दुन्दुभिः। वावदीति। सम्। अश्वऽपर्णाः। चरन्ति। नः। नरः। अस्माकम्। इन्द्र। रथिनः। जयन्तु॥३१॥

पदार्थः-**(आ)** **(अमूः)** इमाः शत्रुसेनाः **(अज)** समन्ताद् दूरे प्रक्षिप **(प्रत्यावर्त्तय)** **(इमाः)** स्वकीयाः **(केतुमत्)** प्रशस्तप्रज्ञायुक्तम् **(दुन्दुभिः)** **(वावदीति)** भृशं वदति **(सम्)** **(अश्वपर्णाः)** महान्तः पर्णाः पक्षा येषान्ते **(चरन्ति)** **(नः)** अस्मान् **(नरः)** नायकाः **(अस्माकम्)** **(इन्द्र)** शत्रुविदारक **(रथिनः)** प्रशस्ता रथा विद्यन्ते येषां ते **(जयन्तु)**॥३१॥

अन्वयः-हे इन्द्र राजँस्त्वं यथा दुन्दुभिः केतुमद्वावदीति तथेमा अश्वपर्णाः स्वसेनाः प्रत्यावर्त्तय ताभिरमूः शत्रुसेना दूर आज। येऽस्माकं रथिनो नरोऽस्माकं शत्रूञ्जयन्तु। ये विजयाय संचरन्ति ते नोऽस्मानलंकुर्वन्तु॥३१॥

भावार्थः-हे राजादयो जना यूयं दुन्दुभ्यादिवादित्रभूषिता हृष्टाः पुष्टाः सेनाः संरक्ष्याभिर्दूरस्थानपि शत्रून् विजित्य प्रजा धर्म्येण पालयतेति॥३१॥

अत्र सोमप्रश्नोत्तरविद्युद्राजप्रजासेनावादित्रकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

अस्मिन्नध्याय इन्द्रसोमेश्वरराजप्रजामेघसूर्य्यवीरसेनायानयज्ञमित्रैश्वर्य्यप्रज्ञाविद्युन्मेधावीवाक्सत्यबल-पराक्रमराजनीतिस- मशत्रुजयादिगुणवर्णनादेतदध्यायस्य पूर्वाध्यायेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य्यश्रीमद्विरजानन्दसरस्वतीस्वामिशिष्यश्रीमद्दयानन्दसरस्वतीस्वामिविरचिते सुप्रमाणयुक्त आर्य्यभाषाविभूषित ऋग्वेदभाष्ये चतुर्थाष्टके सप्तमोऽध्यायः, पञ्चविंशो वर्गः, षष्ठे मण्डले सप्तचत्वारिंशत्तमं सूक्तं च समाप्तम्॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** शत्रुओं के विदीर्ण करने वाले राजन्! आप जैसे **(दुन्दुभिः)** नगाड़ा **(केतुमत्)** प्रशंसा योग्य बुद्धियुक्त **(वावदीति)** निरन्तर बजाता, वैसे **(इमाः)** यह **(अश्वपर्णाः)** महान् पक्षों वाली

अपनी सेनाएँ **(प्रत्यावर्त्तय)** लौटाइये और उनसे **(अमूः)** यह शत्रुसेनाएँ दूर **(आ, अज)** फेंकिये जो **(अस्माकम्)** हमारे **(रथिनः)** प्रशंसित रथ वाले **(नरः)** नायक वीर हमारे शत्रुओं को **(जयन्तु)** जीतें और जो विजय के लिये **(सम्, चरन्ति)** सम्यक् विचरते हैं, वे **(नः)** हम लोगों को सुशोभित करें॥३१॥

भावार्थः-हे राजा आदि जनो! तुम लोग दुन्दुभि आदि वाजनों से भूषित, हर्ष वा पुष्टि से युक्त सेनाओं को अच्छे प्रकार रख कर इनसे दूरस्थ भी शत्रुओं को अच्छे प्रकार जीतकर प्रजाओं को धर्मयुक्त व्यवहार से पालन करो॥३१॥

इस सूक्त में सोम, प्रश्नोत्तर, बिजुली, राजा, प्रजा, सेना और वाजनों से भूषित कृत्य का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

इस अध्याय में इन्द्र, सोम, ईश्वर, राजा, प्रजा, मेघ, सूर्य, वीर, सेना, यान, यज्ञ, मित्र, ऐश्वर्य्य, प्रज्ञा, बिजुली, बुद्धिमान्, वाणी, सत्य, बल, पराक्रम, राजनीति, स- ग्राम और शत्रुविजय आदि गुणों का वर्णन होने से इस अध्याय की पूर्वाध्याय के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य श्रीमद् विरजानन्द सरस्वती स्वामी के शिष्य श्रीमद्दयानन्द सरस्वती स्वामिविरचित, सुप्रमाणयुक्त, आर्यभाषाविभूषित, ऋग्वेदभाष्य के चौथे अष्टक में सप्तम अध्याय पैंतीसवाँ वर्ग और छठे मण्डल में सैंतालीसवाँ सूक्त भी समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ चतुर्थाष्टकेष्टमाध्यायारम्भः॥

ओं विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद्भ॒द्रं तन्न॒ आ सु॑व॥ १॥

अथ द्वाविंशत्यृचस्याष्टचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य शंयुर्बार्हस्पत्य ऋषिः। तृणपाणिकं पृश्निसूक्तम्॥ १-१० अग्निः। ११, १२, २०, २१ मरुतः। १३-१५ मरुतो लिङ्गोक्ता देवता वा। १६-१९ पूषा। २२ पृश्निर्द्यावाभूमी वा॥ १, ४, ५, १४ बृहती। ३, १९ विराड्बृहती। १०, १२, १७ भुरिग्बृहती छन्दः। मध्यमः स्वरः। २ स्वराडार्षी जगती छन्दः। १५ निचृदतिजगती छन्दः। निषादः स्वरः। ६, २१ त्रिष्टुप्। ७ निचृत्त्रिष्टुप्। ८ भुरिक्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ९ भुरिगनुष्टुप्। २० स्वराडनुष्टुप्। २२ अनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः। ११, १६ उष्णिक्। १३, १८ निचृदुष्णिक्छन्दः। ऋषभः स्वरः॥

अथ विद्वद्भिः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

अब चतुर्थाष्टक के अष्टमाध्याय का आरम्भ है, इसमें बाईस ऋचा वाले अड़तालीसवें सूक्त के प्रथम मन्त्र में विद्वानों को क्या करना चाहिये, इस विषय का वर्णन करते हैं॥

य॒ज्ञाय॑ज्ञा वो अ॒ग्नये॑ गि॒रागि॑रा च॒ दक्ष॑से।
प्रप्र॑ व॒यम॒मृतं॑ जा॒तवे॑दसं प्रि॒यं मि॒त्रं न शं॑सिषम्॥ १॥

य॒ज्ञाऽय॑ज्ञा। व॒ः। अ॒ग्नये॑। गि॒राऽगि॑रा। च॒। दक्ष॑से। प्रऽप्र॑। व॒यम्। अ॒मृत॑म्। जा॒तऽवे॑दसम्। प्रि॒यम्। मि॒त्रम्। न। शं॒सि॒षम्॥ १॥

पदार्थः-(**यज्ञायज्ञा**) यज्ञेयज्ञे (**वः**) युष्माकम् (**अग्नये**) पावकाय (**गिरागिरा**) वाचा वाचा (**च**) (**दक्षसे**) (**प्रप्र**) (**वयम्**) (**अमृतम्**) नाशरहितम् (**जातवेदसम्**) जातविद्यम् (**प्रियम्**) कमनीयम् (**मित्रम्**) सखायम् (**न**) इव (**शंसिषम्**)॥ १॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! वो यज्ञायज्ञा गिरागिरा चाऽग्नये दक्षसे वयं प्रयेतम ह्यमृतं जातवेदसं प्रियं मित्रं न युष्मानहं यथा प्रप्र शंसिषं तथा यूयमप्यस्मान् प्रशंसत॥ १॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा विद्वांसो युष्मासु प्रीतिं जनयेयुस्तथा यूयमप्यस्माकं कार्यसाधनाय प्रीतिं जनयत॥ १॥

पदार्थः-हे विद्वान् जनो! (**वः**) आपके (**यज्ञायज्ञा**) यज्ञ-यज्ञ में (**गिरागिरा, च**) और वाणी-वाणी से (**अग्नये**) अग्नि (**दक्षसे**) जो कि विलक्षण है उसके लिये (**वयम्**) हम लोग प्रयत्न करें। और (**अमृतम्**) नाश से रहित (**जातवेदसम्**) जातवेदस् अर्थात् जिससे विद्या उत्पन्न हुई ऐसे अग्नि (**प्रियम्**)

मनोहर **(मित्रम्)** मित्र के **(न)** समान तुम लोगों की मैं जैसे **(प्रप्र, शंसिषम्)** वार-वार प्रशंसा करूं, वैसे आप भी हम लोगों की प्रशंसा कीजिये॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे विद्वान् जन आप लोगों की प्रीति उत्पन्न करें, वैसे आप भी हमारे कार्य साधने के लिये प्रीति उत्पन्न कीजिये॥१॥

पुना राजप्रजाजनाः परस्परं कथं वर्तेरन्नित्याह॥

फिर राजा और प्रजाजन परस्पर कैसे वर्तें, इस विषय को कहते हैं॥

ऊर्जो नपा॑तं॒ स हि॒नायम॑स्म॒युर्दाशे॑म ह॒व्यदा॑तये।

भुव॒द्वाजे॑ष्ववि॒ता भुव॑द् वृ॒ध उ॒त त्रा॒ता त॒नूना॑म्॥२॥

ऊ॒र्जः। नपा॑तम्। सः। हि॒न। अ॒यम्। अ॒स्म॒ऽयुः। दाशे॑म। ह॒व्यऽदा॑तये। भुव॑त्। वाजे॑षु। अ॒वि॒ता। भुव॑त्। वृ॒धः। उ॒त। त्रा॒ता। त॒नूना॑म्॥२॥

पदार्थः-**(ऊर्जः)** पराक्रमस्य **(नपातम्)** अपातयितारमनाशकम् **(सः)** **(हिन)** खलु **(अयम्)** **(अस्मयुः)** अस्मान् कामयमानः **(दाशेम)** दद्याम **(हव्यदातये)** दातव्यदानाय **(भुवत्)** भवेत् **(वाजेषु)** स-ग्रामेषु **(अविता)** रक्षकः **(भुवत्)** भवेत् **(वृधः)** वृद्धिकरः **(उत)** **(त्राता)** पालकः **(तनूनाम्)** शरीराणाम्॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! योऽयमस्मयुर्हव्यदातयेऽविता भुवद्वाजेष्वविता भुवत् वृधो रक्षको भुवदुत तनूनां त्राता भुवत् तमूर्जो नपातं संरक्ष्य वयं सुखं दाशेम स हिनाऽस्मभ्यं सुखं दद्यात्॥२॥

भावार्थः-हे प्रजासेनाजना! यो राजा स-ग्रामेऽस-ग्रामे च सर्वेषां रक्षकः सततं भवेत्तदनुकूलं वर्त्तित्वा वयं तस्मै पुष्कलं सुखं दद्याम॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(अयम्)** यह **(अस्मयुः)** हम लोगों की कामना करने वाला तथा **(हव्यदातये)** देने योग्य दान के लिये **(अविता)** रक्षा करने वाला **(भुवत्)** होवे और **(वाजेषु)** स-ग्रामों में रक्षा करने वाला **(भुवत्)** हो तथा **(वृधः)** वृद्धि करने वा रक्षा करने वाला हो **(उत)** और **(तनूनाम्)** शरीरों का **(त्राता)** पालन करने वाला हो उसकी **(ऊर्जः)** पराक्रम के **(नपातम्)** न पातन कराने अर्थात् न विनाश कराने वाले की अच्छे प्रकार रक्षा कर हम सुख **(दाशेम)** देवें **(सः, हिन)** वही हमारे लिये सुख देवे॥२॥

भावार्थः-हे प्रजासेनाजनो! जो राजा स-ग्राम वा अस-ग्राम में सबकी रक्षा करने वाला निरन्तर हो, तनुकूल वर्ताव कर हम लोग उसके लिये पुष्कल सुख देवें॥२॥

पुनः स राजा किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वृषा॒ ह्य॑ग्ने अ॒जरो॑ म॒हान् वि॒भास्य॒र्चिषा॑।

अजस्रेण शोचिषा शोशुचच्छुचे सुदीतिभिः सु दीदिहि॥३॥

वृषा। हि। अग्ने। अजरः। महान्। विऽभासि। अर्चिषा। अजस्रेण। शोचिषा। शोशुचत्। शुचे। सुदीतिऽभिः। सु। दीदिहि॥३॥

पदार्थः-(**वृषा**) बलिष्ठः (**हि**) यतः (**अग्ने**) पावक इव वर्त्तमान (**अजरः**) जरारहितः (**महान्**) (**विभासि**) (**अर्चिषा**) सत्कारेण दीप्त्या वा (**अजस्रेण**) निरन्तरेण (**शोचिषा**) प्रकाशेन (**शोशुचत्**) भृशं पवित्रयन् (**शुचे**) विद्याविनयाभ्यां प्रकाशित (**सुदीतिभिः**) सुष्ठु दीप्तिभिः (**सु**) (**दीदिहि**) प्रकाशय॥३॥

अन्वयः-हे शुचेऽग्ने! हि यतो वृषाऽजरो महांस्त्वमजस्रेणार्चिषा शोचिषा सुदीतिभिः सर्वान् विभासि तस्मादस्मान् सु दीदिहि॥३॥

भावार्थः-हे राजंस्त्वया सततं विद्याविनयप्रकाशेन दुर्व्यसनक्षयेण प्रजाः सततं पालनीयाः॥३॥

पदार्थः-हे (**शुचे**) विद्या और विनय से प्रकाशित (**अग्ने**) पावक के समान वर्त्तमान! (**हि**) जिससे (**वृषा**) अत्यन्त बलवान् (**अजरः**) जरा अवस्था से रहित (**महान्**) बड़े आप (**अजस्रेण**) निरन्तर (**अर्चिषा**) सत्कार वा दीप्ति से (**शोचिषा**) वा प्रकाश से (**शोशुचत्**) निरन्तर पवित्र करते हुए (**सुदीतिभिः**) उत्तम दीप्तियों से सबको (**विभासि**) विशेषता से प्रकाशित करते हैं, इससे हम लोगों को (**सु, दीदिहि**) प्रकाशित कीजिये॥३॥

भावार्थः-हे राजन्! आपको चाहिये कि निरन्तर विद्या और विनय के प्रकाश से और दुष्ट व्यसनों के नाश से प्रजा की निरन्तर पालना करो॥३॥

पुनः स राजा किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

महो देवान् यजसि यक्ष्यानुषक्तव क्रत्वोत दंसना।
अर्वाचः सीं कृणुह्यग्नेऽवसे रास्व वाजोत वंस्व॥४॥

महः। देवान्। यजसि। यक्षि। आनुषक्। तव। क्रत्वा। उत। दंसना। अर्वाचः। सीम्। कृणुहि। अग्ने। अवसे। रास्व। वाजा। उत। वंस्व॥४॥

पदार्थः-(**महः**) महतः (**देवान्**) विदुषः (**यजसि**) सङ्गच्छसे (**यक्षि**) यजसि (**आनुषक्**) आनुकूल्ये (**तव**) (**क्रत्वा**) प्रज्ञया (**उत**) अपि (**दंसना**) कर्माणि (**अर्वाचः**) येऽर्वागञ्चन्ति तान् (**सीम्**) सर्वतः (**कृणुहि**) (**अग्ने**) अग्निरिव वर्त्तमान राजन् (**अवसे**) (**रास्व**) देहि (**वाजा**) अन्नानि (**उत**) (**वंस्व**) सम्भज॥४॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वमर्वाचो महो देवान् यजसि। आनुषग्दंसना यक्षि तस्य तव क्रत्वा वयमेतान् यजेम। उताऽवसेऽस्मभ्यं रास्व सीं सुखं कृणुहि, उत वाजा वंस्व॥४॥

भावार्थः-ये मूर्खान् विदुषः सम्पादयन्ति ते महदनुकूलं सुखं प्राप्नुवन्ति॥४॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के समान वर्त्तमान राजन्! आप **(अर्वाचः)** जो प्राप्त होते उन **(महः)** महान् अत्युत्तम महात्मा **(देवान्)** विद्वान् जनों से **(यजसि)** सङ्गत होते हैं और **(आनुषक्)** अनुकूलता में **(दंसना)** कर्मों को **(यक्षि)** सङ्गत करते हैं उन **(तव)** आपकी **(क्रत्वा)** प्रज्ञा से हम लोग उनको सङ्गत करें **(उत)** और **(अवसे)** रक्षा के अर्थ हम लोगों के लिये **(रास्व)** दीजिये और **(सीम्)** सब ओर से सुख **(कृणुहि)** कीजिये **(उत)** और **(वाजा)** अन्नों का **(वंस्व)** सेवन कीजिये॥४॥

भावार्थः-जो मूर्खों को विद्वान् करते हैं, वे महत् अनुकूल सुख को प्राप्त होते हैं॥४॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

यमापो अद्रयो वना गर्भमृतस्य पिप्रति।

सहसा यो मथितो जायते नृभिः पृथिव्या अधि सानवि॥५॥१॥

यम्। आपः। अद्रयः। वना। गर्भम्। ऋतस्य। पिप्रति। सहसा। यः। मथितः। जायते। नृऽभिः। पृथिव्याः। अधि। सानवि॥५॥

पदार्थः-**(यम्)** **(आपः)** जलानि **(अद्रयः)** मेघाः **(वना)** किरणाः **(गर्भम्)** **(ऋतस्य)** जलस्य **(पिप्रति)** पूरयन्ति **(सहसा)** बलेन **(यः)** **(मथितः)** विलोडितः **(जायते)** **(नृभिः)** नायकैः **(पृथिव्याः)** **(अधि)** उपरि **(सानवि)** पवर्तस्य शिखरे॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यमृतस्य गर्भमापोऽद्रयो वना पिप्रति यो नृभिः सहसा मथितः पृथिव्या अधि सानवि जायते त यूयं सम्प्रयुङ्ध्वम्॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये सर्वान्तःस्थमग्निं विद्वांसः प्राप्नुवन्ति मथित्वा प्रदीपयन्ति ते भूमिराज्येऽधिष्ठातारो जायन्ते॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यम्)** जिस **(ऋतस्य)** जल के **(गर्भम्)** गर्भरूप संसार को **(आपः)** जल **(अद्रयः)** मेघ और **(वना)** किरण **(पिप्रति)** पूरण करते हैं और **(यः)** जो **(नृभिः)** नायक मनुष्यों से **(सहसा)** बल से **(मथितः)** मथा हुआ **(पृथिव्याः)** पृथिवी के **(अधि)** ऊपर **(सानवि)** पर्वत के शिखर पर **(जायते)** प्रसिद्ध होता है, उस अग्नि को तुम अच्छे प्रकार युक्त करो॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो सब में व्याप्त होकर रहने वाले अग्नि को विद्वान् जन प्राप्त होते और मथि के प्रदीप्त करते हैं, वे भूमि के राज्य करने में अधिष्ठाता होते हैं॥५॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

आ यः पप्रौ भानुना रोदसी उभे धूमेन धावते दिवि।

तिरस्तमो ददृश ऊर्म्यास्वा श्यावास्वरुषो वृषा श्यावा अरुषो वृषा॥६॥

आ। यः। पप्रौ। भानुना। रोदसी इति। उभे इति। धूमेन। धावते। दिवि। तिरः। तमः। ददृशे। ऊर्म्यासु। आ। श्यावासु। अरुषः। वृषा। आ। श्यावाः। अरुषः। वृषा॥६॥

पदार्थः-(**आ**) (**यः**) (**पप्रौ**) व्याप्नोति (**भानुना**) किरणेन (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**उभे**) (**धूमेन**) (**धावते**) (**दिवि**) अन्तरिक्षे (**तिरः**) तिरस्करणे (**तमः**) अन्धकारः (**ददृशे**) दृश्यते (**ऊर्म्यासु**) रात्रिषु। **ऊर्म्येति रात्रिनाम।** (निघं०१.७) (**आ**) (**श्यावासु**) कृष्णासु (**अरुषः**) आरक्तगुणः (**वृषा**) वर्षकः (**आ**) (**श्यावाः**) सवितुर्वेगवन्तः किरणाः। **श्यावा इति सवितुरादिष्टोपयोगिनः।** (निघं०१.१५) (**अरुषः**) (**वृषा**) वर्षकः॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यूयं यो भानुनोभे रोदसी आ पप्रौ धूमेन दिवि धावते श्यावासूर्म्यासु यत्तमस्तत्तिरस्कृत्याऽरुषो वृषा यस्य श्यावा अरुषो वृषा आ ददृशे तमाविजानीत॥६॥

भावार्थः-येन विद्युदग्निना भूमिसूर्यौ प्रदृश्येते यस्मादधिको वेगवान् कोऽपि नास्ति योऽन्धकारनिवर्त्तकोऽस्ति तं यूयं सम्प्रयुङ्ध्वम्॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! तुम (**यः**) जो (**भानुना**) किरण से (**उभे**) दोनों (**रोदसी**) द्यावापृथिवी को (**आ, पप्रौ**) व्याप्त होता और (**धूमेन**) धूम से (**दिवि**) अन्तरिक्ष में (**धावते**) दौड़ता है तथा (**श्यावासु**) काली (**ऊर्म्यासु**) रात्रियों में जो (**तमः**) अन्धकार उसको (**तिरः**) तिरस्कार कर (**अरुषः**) लाल रंग वाला (**वृषा**) वर्षा का निमित्त है और जिसकी (**श्यावाः**) वेगवती किरणें विद्यमान हैं जो (**अरुषः**) कुछ लाली लिये हुए है वह (**वृषा**) वर्षा करने वाला सूर्य्य (**आ, ददृशे**) अच्छे प्रकार देखा जाता है उसे (**आ**) अच्छे प्रकार जानो॥६॥

भावार्थः-जिस बिजुलीरूप आग से भूमि और सूर्य्य दिखाते हैं, जिससे अधिक वेगवान् कोई नहीं तथा जो अन्धकार की निवृत्ति करने वाला है, उसका अच्छे प्रकार प्रयोग करो॥६॥

पुनर्मनुष्यैः कथं वर्त्तितव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को कैसा वर्त्तना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

बृहद्भिरग्ने अर्चिभिः शुक्रेण देव शोचिषा।
भरद्वाजे समिधानो यविष्ठ्य रेवन्नः शुक्र दीदिहि द्युमत्पावक दीदिहि॥७॥

बृहत्ऽभिः। अग्ने। अर्चिऽभिः। शुक्रेण। देव। शोचिषा। भरत्ऽवाजे। सम्ऽइधानः। यविष्ठ्य। रेवत्। नः। शुक्र। दीदिहि। द्युऽमत्। पावक। दीदिहि॥७॥

पदार्थः-(**बृहद्भिः**) महद्भिः (**अग्ने**) अग्निरिव वर्त्तमान (**अर्चिभिः**) तेजोभिः (**शुक्रेण**) शुद्धेन (**देव**) दातः (**शोचिषा**) न्यायप्रकाशेन (**भरद्वाजे**) विज्ञानादिधारके (**समिधानः**) देदीप्यमानः (**यविष्ठ्य**) अतिशयेन युवन् (**रेवत्**) प्रशस्तैश्वर्ययुक्तं धनम् (**नः**) अस्मभ्यम् (**शुक्र**) आशुकर्त्तः (**दीदिहि**) प्रकाशय (**द्युमत्**) प्रशस्तप्रकाशयुक्तम् (**पावक**) पवित्रकर्त्तः (**दीदिहि**) देहि॥७॥

अन्वयः-हे शुक्र पावक यविष्ठ्य देवाग्ने! यथा वह्निर्बृहद्भिरर्चिभिर्भरद्वाजे समिधानो नो द्युमद्रेवद्दाति तथा शुक्रेण शोचिषैतद्दीदिहि, विद्याविनये च दीदिहि॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये विद्वांसस्सूर्यवच्छुभेषु गुणेषु बलेन सुशीलत्वेन वा श्रियं प्राप्य प्रकाशन्ते ते सत्कर्त्तव्या भवन्ति॥७॥

पदार्थः-हे **(शुक्र)** शीघ्र कर्म करने **(पावक)** वा पवित्र करने **(यविष्ठ्य)** वा अतीव युवा अवस्था रखने वा **(देव)** देने वाले **(अग्ने)** अग्नि के समान वर्त्तमान विद्वन्! जैसे अग्नि **(बृहद्भिः)** महान् **(अर्चिभिः)** तेजों से **(भरद्वाजे)** विज्ञानादि के धारण करने वाले व्यवहार में **(समिधानः)** अच्छे प्रकार देदीप्यमान **(नः)** हमारे लिये **(द्युमत्)** प्रशस्त प्रकाश वा **(रेवत्)** प्रशस्त ऐश्वर्य से युक्त धन को देता है, वैसे **(शुक्रेण)** शुद्ध **(शोचिषा)** न्याय के प्रकाश से उसे **(दीदिहि)** प्रकाशित कीजिये, तथा विद्या और नम्रता **(दीदिहि)** दीजिये॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो विद्वान् जन सूर्य के समान शुभ गुणों में बल वा सुशीलता से लक्ष्मी को प्राप्त होकर प्रकाशित होते हैं, वे सत्कार करने योग्य हैं॥७॥

पुनः स राजा किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

विश्वा॑सां गृहप॑तिर्वि॒शाम॑सि॒ त्वम॑ग्ने॒ मानु॑षीणाम्।

श॒तं पू॒र्भिर्य॑विष्ठ पा॒ह्यंह॑सः समे॒द्धारं॑ श॒तं हिमाः॑ स्तो॒तृभ्यो॒ ये च॒ दद॑ति॥८॥

विश्वा॑साम्। गृह॑ऽप॑तिः। वि॒शाम्। अ॒सि॒। त्वम्। अ॒ग्ने॒। मानु॑षीणाम्। श॒तम्। पू॒ःऽभिः। य॒वि॒ष्ठ॒। पा॒हि। अंह॑सः। स॒म्ऽइ॒द्धार॑म्। श॒तम्। हिमाः॑। स्तो॒तृऽभ्यः॑। ये। च॒। दद॑ति॥८॥

पदार्थः-**(विश्वासाम्)** सर्वासाम् **(गृहपतिः)** गृहस्य स्वामी **(विशाम्)** प्रजानाम् **(असि)** **(त्वम्)** **(अग्ने)** दुष्टानां दाहक **(मानुषीणाम्)** **(शतम्)** **(पूर्भिः)** नगरैः **(यविष्ठ)** शरीरात्मबलाभ्यां युक्त **(पाहि)** **(अंहसः)** दुष्टाचारात् **(समेद्धारम्)** सम्यक् प्रकाशकम् **(शतम्)** **(हिमाः)** वृद्धीर्हेमन्तानृतून् वा **(स्तोतृभ्यः)** विद्वद्भ्यः **(ये)** **(च)** सद्गुणान् **(ददति)**॥८॥

अन्वयः-हे यविष्ठाग्ने! ये स्तोतृभ्यः शतं हिमाः समेद्धारं ददति शुभान् गुणांश्च गृहीत्वा प्रयच्छन्ति तैस्सह युक्तानां विश्वासां मानुषीणां विशां यतस्त्वं गृहपतिरसि पूर्भिस्सहैतेभ्यः शतं ददाति तस्मादस्मानंहसः पाहि॥८॥

भावार्थः-हे राजन्! येऽत्र प्रजायां विद्याधर्मादिशुभगुणान् ग्राहयन्ति तांस्त्वं सततं सत्कुर्यास्ते भवन्तं च सत्कुर्युः॥८॥

पदार्थः-हे **(यविष्ठ)** शरीर और आत्मा के बल से युक्त **(अग्ने)** दुष्टों के दाह करने वाले! **(ये)** जो **(स्तोतृभ्यः)** स्तुति करने वाले विद्वानों से **(शतम्)** सौ **(हिमाः)** वृद्धि वा हेमन्त आदि ऋतुओं तक **(समेद्धारम्)** अच्छे प्रकार प्रकाश करने वाले को **(ददति)** देते **(च)** और शुभ गुणों को ग्रहण कर दूसरों

को देते हैं, उनके साथ युक्त **(विश्वासाम्)** समस्त **(मानुषीणाम्)** मनुष्य सम्बन्धी **(विशाम्)** प्रजाजनों के बीच जिससे **(त्वम्)** आप **(गृहपतिः)** धन के स्वामी **(असि)** हैं वा **(पूर्भिः)** नगरों के साथ इनके लिये **(शतम्)** सौ पदार्थ देते हैं, इस कारण हम लोगों की **(अंहसः)** दुष्ट आचरण से **(पाहि)** रक्षा करो॥८॥

भावार्थः-हे राजन्! जो इस प्रजा में विद्या और धर्म आदि शुभ गुणों को ग्रहण कराते हैं, उनका तुम निरन्तर सत्कार करो और वे आपका भी सत्कार करें॥८॥

पुनर्विद्वांसोऽपत्यानि कथं शिक्षेरन्नित्याह॥

फिर विद्वान् जन सन्तानों को कैसे शिक्षा दें, इस विषय को कहते हैं॥

त्वं नश्चित्र ऊत्या वसो राधांसि चोदय।

अस्य रायस्त्वमग्ने रथीरसि विदा गाधं तुचे तु नः॥९॥

त्वम्। नः। चित्रः। ऊत्या। वसो इति। राधांसि। चोदय। अस्य। रायः। त्वम्। अग्ने। रथीः। असि। विदाः। गाधम्। तुचे। तु। नः॥९॥

पदार्थः-**(त्वम्)** **(नः)** अस्माकम् **(चित्रः)** अद्भुतपुरुषार्थः **(ऊत्या)** रक्षया **(वसो)** वासयितः **(राधांसि)** समृद्धानि धनानि **(चोदय)** **(अस्य)** **(रायः)** धनस्य **(त्वम्)** **(अग्ने)** विद्युदिव पुरुषार्थिन् **(रथीः)** बहुप्रशंसितरथः **(असि)** **(विदाः)** विज्ञानवान् **(गाधम्)** विलोडनम् **(तुचे)** अपत्याय। **तुगित्यपत्यनाम।** (निघं०२.२) **(तु)** **(नः)** अस्माकम्॥९॥

अन्वयः-हे वसोऽग्ने! चित्रस्त्वमूत्या नो राधांसि रक्षाऽस्य रायश्चोदय यतस्त्वं विदा रथीरसि तस्मात्तु नस्तुचे गाधं चोदय॥९॥

भावार्थः-हे विद्वन्! भवान् यथैतेषामस्माकमपत्यानां प्रज्ञाविलोडनेन विद्याप्राप्तिः स्यात्तथाऽनुविधेहि। यथा पुरुषार्थी धनैश्वर्यं प्राप्तुं प्रेरयति तथैव भवाननुशिक्षताम्॥९॥

पदार्थः-हे **(वसो)** वास कराने वाले **(अग्ने)** बिजुली के समान पुरुषार्थी जन **(चित्रः)** अद्भुत पुरुषार्थ करने वाले **(त्वम्)** आप **(ऊत्या)** रक्षा से **(नः)** हम लोगों के **(राधांसि)** समृद्ध धनों की रक्षा करो तथा **(अस्य)** इसके **(रायः)** धन की **(चोदय)** प्रेरणा करो जिस कारण **(त्वम्)** आप **(विदाः)** विज्ञानवान् और **(रथीः)** बहुत प्रशंसायुक्त रथ वाले **(असि)** हैं इस कारण से **(तु)** फिर **(नः)** हम लोगों के **(तुचे)** सन्तान के लिये **(गाधम्)** बुद्धि विलोडने की प्रेरणा करो॥९॥

भावार्थः-हे विद्वन्! आप जैसे इन हमारे सन्तानों की बुद्धि के विलोडने से विद्या प्राप्ति हो, वैसे अनुविधान कीजिये तथा जैसे पुरुषार्थी जन धन और ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिये प्रेरणा करता है, वैसे ही आप शिक्षा दीजिये॥९॥

पुनर्मनुष्यैः के सत्कर्त्तव्या इत्याह॥

फिर मनुष्यों को कौन सत्कार करने योग्य हैं, इस विषय को कहते हैं॥

पर्षि तोकं तनयं पर्तृभिष्ट्वमदब्धैरप्रयुत्वभिः।

अग्ने हेळांसि दैव्या युयोधि नोऽदेवानि ह्वरांसि च॥१०॥२॥

पर्षि। तोकम्। तनयम्। पर्तृऽभिः। त्वम्। अदब्धैः। अप्रयुत्वऽभिः। अग्ने। हेळांसि। दैव्या। युयोधि। नः। अदेवानि। ह्वरांसि। च॥१०॥

पदार्थः-(**पर्षि**) पालयसि (**तोकम्**) सद्योजातमपत्यम् (**तनयम्**) सुकुमारम् (**पर्तृभिः**) पालकैः (**त्वम्**) (**अदब्धैः**) अहिंसनैः (**अप्रयुत्वभिः**) अविभक्तैः (**अग्ने**) अध्यापक (**हेळांसि**) अनादररूपाणि (**दैव्या**) देवेषु प्रयुक्तानि (**युयोधि**) वियोजय (**नः**) अस्माकम् (**अदेवानि**) अशुद्धानि (**ह्वरांसि**) कुटिलानि कर्माणि (**च**)॥१०॥

अन्वयः-हे अग्ने! यतस्त्वमप्रयुत्वभिरदब्धैः पर्तृभिर्नस्तोकं तनयं पर्षि। अदेवानि दैव्या हेळांसि ह्वरांसि च युयोधि तस्मात् सत्कर्तव्योऽसि॥१०॥

भावार्थः-येऽध्यापकोपदेशका अध्यापनोपदेशाभ्यां शुभान् गुणान् ग्राहयित्वा सर्वेषां दोषान्निवारयन्ति त एव सर्वदा सत्कर्त्तव्या भवन्ति॥१०॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) पढ़ाने वाला! जिस कारण (**त्वम्**) आप (**अप्रयुत्वभिः**) न मिले हुए अर्थात् अलग-अलग विद्यमान (**अदब्धैः**) हिंसारहित (**पर्तृभिः**) पालना करने वाले व्यवहारों से (**नः**) हमारे (**तोकम्**) शीघ्र उत्पन्न हुए सन्तान वा (**तनयम्**) सुन्दर कुमार की (**पर्षि**) पालना करते हो और (**अदेवानि**) अशुद्ध (**दैव्या**) विद्वानों में कहे गये (**हेळांसि**) अनादरों और (**ह्वरांसि**) कुटिल कर्मों को (**च**) भी (**युयोधि**) अलग करते हो, इससे सत्कार करने योग्य हो॥१०॥

भावार्थः-जो अध्यापक वा उपदेशक पढ़ाने तथा उपदेश करने से शुभ गुणों को ग्रहण करा कर सब के दोषों का निवारण कराते हैं, वे ही सदा सत्कार करने योग्य होते हैं॥१०॥

केऽत्र सुहृदः सन्तीत्याह॥

कौन इस संसार में मित्र हैं, इस विषय को कहते हैं॥

आ सखायः सबर्दुघां धेनुमजध्वमुप नव्यसा वचः। सृजध्वमनपस्फुराम्॥

आ। सखायः। सबःऽदुघाम्। धेनुम्। अजध्वम्। उप। नव्यसा। वचः। सृजध्वम्। अनपऽस्फुराम्॥११॥

पदार्थः-(**आ**) (**सखायः**) सुहृदः (**सबर्दुघाम्**) सर्वकामनाप्रपूरिकाम् (**धेनुम्**) वाचम्। **धेनुरिति वाङ्नाम**। (निघं०१.११) (**अजध्वम्**) प्राप्नुत (**उप**) (**नव्यसा**) अतिशयेन नवीनाध्यापनेनोपदेशेन वा (**वचः**) वचनम् (**सृजध्वम्**) विविधविद्यायुक्तं कुरुत (**अनपस्फुराम्**) निश्चलां दृढाम्॥११॥

अन्वयः-हे सखायो! यूयं नव्यसा सबर्दुघामनपस्फुरां धेनुमजध्वम्। वच उपाऽऽसृजध्वम्॥११॥

भावार्थः-ये सुहृदो भूत्वा सत्यां सुशिक्षितां वाचं विद्यां च विद्यार्थिनो ग्राहयन्ति ते जगच्छोधका भवन्ति॥११॥

पदार्थः-हे **(सखायः)** मित्रवर्गो! तुम **(नव्यसा)** अतीव नवीन पढ़ाने वा उपदेश करने से **(सबर्दुघाम्)** समस्त कामनाओं की पूर्ण करने वाली **(अनपस्फुराम्)** निश्चल दृढ़ **(धेनुम्)** वाणी को **(अजध्वम्)** प्राप्त करिये तथा **(वचः)** अर्थात् वचन को **(उप, आ, सृजध्वम्)** विविध प्रकार की विद्या से युक्त करो॥११॥

भावार्थः-जो सुहृद् होकर सत्य, सुन्दर शिक्षायुक्त वाणी और विद्या को विद्यार्थियों को ग्रहण कराते हैं, वे संसार के शुद्ध करने वाले होते हैं॥११॥

अथ मातरः सन्तानान् सदा शिक्षेरन्नित्याह॥

अब माता जन सन्तानों को सदा शिक्षा देवें, इस विषय को कहते हैं॥

या शर्धाय मारुताय स्वभानवे श्रवोऽमृत्यु धुक्षत।

या मृळीके मरुतां तुराणां या सुम्नैरेवयावरी॥१२॥

या। शर्धाय। मारुताय। स्वऽभानवे। श्रवः। अमृत्यु। धुक्षत। या। मृळीके। मरुताम्। तुराणाम्। या। सुम्नैः। एवऽयावरी॥१२॥

पदार्थः-**(या)** विद्यासुशिक्षायुक्ता- अध्यापिकोपदेशिका या **(शर्धाय)** बलाय **(मारुताय)** मरुतां मनुष्याणामस्मै **(स्वभानवे)** स्वकीयप्रज्ञाप्रदीप्तये **(श्रवः)** श्रवणम् **(अमृत्यु)** अविद्यमानं मृत्युभयं यस्मिन् **(धुक्षत)** प्रपूरयेत् **(या)** विदुषी स्त्री **(मृळीके)** सुखकारके व्यवहारे **(मरुताम्)** मनुष्याणाम् **(तुराणाम्)** शीघ्रकारिणाम् **(या)** शिक्षिका **(सुम्नैः)** सुखैः **(एवयावरी)** दुःखनिवारिका॥१२॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! या मारुताय स्वभानवे शर्धायामृत्यु श्रवो धुक्षत या मृळीके तुराणां मरुताममृत्यु श्रवो धुक्षत सुम्नैरेवयावरी सन्तानाञ्छिक्षितान् करोति सैवाऽत्र माननीया भवति॥१२॥

भावार्थः-ता एव स्त्रियो धन्याः सन्ति याः स्वापत्यानि विद्यासुशिक्षायुक्तानि कर्तुं कारयितुं च सततं प्रयतन्ते॥१२॥

पदार्थः-हे विद्वान् जनो! **(या)** जो विद्या और सुन्दरशिक्षायुक्त विद्या पढ़ाने वा उपदेश करने वाली **(मारुताय)** मनुष्यों के इस **(स्वभानवे)** अपनी विशेष बुद्धि के प्रकाश वा **(शर्धाय)** बल के लिये **(अमृत्यु)** जिसमें मृत्युभय विद्यमान नहीं उस **(श्रवः)** श्रवण को **(धुक्षत)** परिपूर्ण करे वा **(या)** जो विदुषी स्त्री **(मृळीके)** सुख करने वाले व्यवहार में **(तुराणाम्)** शीघ्रकारी **(मरुताम्)** मनुष्यों के बीच मृत्युभय जिसमें नहीं उस श्रवण को परिपूर्ण करे तथा **(सुम्नैः)** सुखों से **(या)** जो शिक्षा करने वा **(एवयावरी)** दुःख निवारण वाली सन्तानों की शिक्षा करती है, वही यहाँ मानने योग्य होती है॥१२॥

भावार्थः-वे ही स्त्रियाँ धन्य हैं, जो अपने सन्तानों को विद्या और सुन्दर शिक्षायुक्त करने व कराने को निरन्तर प्रयत्न करती हैं॥१२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

भरद्वाजायाव धुक्षत द्विता। धेनुं च विश्वदोहसमिषं च विश्वभोजसम्॥१३॥

भरत्ऽवाजाय। अव। धुक्षत। द्विता। धेनुम्। च। विश्वऽदोहसम्। इषम्। च। विश्वऽभोजसम्॥१३॥

पदार्थः-(**भरद्वाजाय**) धृतविज्ञानाय (**अव**) (**धुक्षत**) अलङ्कुरुते (**द्विता**) द्वयोर्भावः (**धेनुम्**) विद्यायुक्तां वाचम् (**च**) (**विश्वदोहसम्**) विश्वं सर्वविज्ञानान् दोग्धि यया ताम् (**इषम्**) अन्नं विज्ञानं वा (**च**) (**विश्वभोजसम्**) विश्वस्य समग्रस्य जनस्य पालकम्॥१३॥

अन्वयः-या विदुषी माता भरद्वाजाय विश्वदोहसं धेनुमवधुक्षत विश्वभोजसमिषं चावधुक्षत सा द्विता चानया प्रचारिण्या क्रियया भवति॥१३॥

भावार्थः-याः स्त्रियः सत्यभाषणान्वितां वाचं सर्वोत्तमां सत्यां विद्यां च सन्तानेभ्यः प्रयच्छन्ति ता एव देव्यो बहुमान्या भवन्ति॥१३॥

पदार्थः-जो विदुषी माता (**भरद्वाजाय**) जिसने विज्ञान धारण किया उसके लिये (**विश्वदोहसम्**) जिससे समस्त विज्ञान को पूर्ण करती उस (**धेनुम्**) विद्या युक्त वाणी को (**अव, धुक्षत**) परिपूर्ण करती है और (**विश्वभोजसम्**) समस्त मनुष्यमात्र के पालक (**इषम्**) अन्न वा विज्ञान को (**च**) भी परिपूर्ण करती है वह (**द्विता**) दोनों विज्ञान वा अन्न की चेष्टा वाली (**च**) भी इस प्रचारिणी क्रिया से होती है॥१३॥

भावार्थः-जो स्त्रीजन सत्यभाषणयुक्त वाणी और सर्वोत्तम सत्य विद्या को सन्तानों के लिये देती हैं, वे ही देवी विदुषी स्त्रियाँ बहुत मान करने के योग्य होती हैं॥१३॥

पुनर्मनुष्याः कं प्रशंसेयुरित्याह॥

फिर मनुष्य किसकी प्रशंसा करें, इस विषय को कहते हैं॥

तं व इन्द्रं न सुक्रतुं वरुणमिव मायिनम्।
अर्यमणं न मन्द्रं सृप्रभोजसं विष्णुं न स्तुष आदिशे॥१४॥

तम्। वः। इन्द्रम्। न। सुऽक्रतुम्। वरुणम्ऽइव। मायिनम्। अर्यमणम्। न। मन्द्रम्। सृप्रऽभोजसम्। विष्णुम्। न। स्तुषे। आऽदिशे॥१४॥

पदार्थः-(**तम्**) विद्वांसम् (**वः**) युष्मदर्थम् (**इन्द्रम्**) विद्युद्वत्तीव्रबुद्धिम् (**न**) इव (**सुक्रतुम्**) उत्तमप्रज्ञम् (**वरुणमिव**) पाशैर्बन्धकं व्याधमिव (**मायिनम्**) कुत्सितप्रज्ञम् (**अर्यमणम्**) न्यायेशम् (**न**) इव (**मन्द्रम्**) आनन्दप्रदम् (**सृप्रभोजसम्**) प्राप्तानां पालकं (**विष्णुम्**) व्यापकं जगदीश्वरम् (**न**) इव (**स्तुषे**) प्रशंससि (**आदिशे**) आज्ञापालनाय॥१४॥

अन्वयः-हे विद्वंस्त्वं यमिममिन्द्रं न सुक्रतुं वरुणिव मायिनमर्यमणं न मन्द्रं विष्णुं सृप्रभोजसं स्तुषे तं व आदिशेऽहं प्रशंसामि॥१४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये मनुष्याः सूर्यवद्विद्याप्रकाशकं व्याधवद् दुष्टहिंसकमाप्तवन्न्यायकारिण-मीश्वरवत्सर्वपालकं सत्योपदेष्टारं धर्मकारिणं नरं प्रशंसन्ति त एवाऽत्र परीक्षकाः सन्ति॥१४॥

पदार्थः-हे विद्वन्! आप जिस इस **(इन्द्रम्)** बिजुली के समान तीव्रबुद्धि के **(न)** समान **(सुक्रतुम्)** उत्तम बुद्धि वाले **(वरुणस्य)** वरुण के समान **(मायिनम्)** कुत्सित बुद्धि वाले वा **(अर्यमणम्)** न्यायाधिपति के **(न)** समान **(मन्द्रम्)** आनन्द देने वाले **(विष्णुम्)** व्यापक जगदीश्वर के **(न)** समान **(सुप्रभोजसम्)** प्राप्त हुए पदार्थों के पालने की **(स्तुषे)** प्रशंसा करते हैं **(तम्)** उसको **(वः)** तुम लोगों के लिये **(आदिशे)** आज्ञा पालन के अर्थ मैं उसकी प्रशंसा करता हूँ॥१४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो मनुष्य सूर्य्य के समान विद्याप्रकाशक, व्याध के समान दुष्टों के मारने वाले, आप्त विद्वान् के समान न्याय के करने वाले, ईश्वर के समान सर्व के पालने वाले, सत्य के उपदेश करने वाले तथा धर्म करने वाले मनुष्य की प्रशंसा करते हैं, वे ही इस संसार में परीक्षा करने वाले होते हैं॥१४॥

पुनर्विद्वद्भिः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर विद्वानोंको क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

त्वेषं शर्धो न मारुतं तुविष्वण्यनर्वाणं पूषणं सं यथा शता।

सं सहस्रा कारिषच्चर्षणिभ्य आँ आविर्गूळ्हा वसू करत्सुवेदा नो वसू करत्॥१५॥

त्वेषम्। शर्धः। न। मारुतम्। तुविऽस्वनि। अनर्वाणम्। पूषणम्। सम्। यथा। शता। सम्। सहस्रा। कारिषत्। चर्षणिऽभ्यः। आ। आविः। गूळ्हा। वसु। करत्। सुऽवेदा। नः। वसु। करत्॥१५॥

पदार्थः-**(त्वेषम्)** दीप्तिमत् **(शर्धः)** बलम् **(न)** इव **(मारुतम्)** मनुष्याणामिदम् **(तुविष्वणि)** बहुस्वनम् **(अनर्वाणम्)** अविद्यमानाश्वम् **(पूषणम्)** पुष्टिकरम् **(सम्)** **(यथा)** **(शता)** शतानि **(सम्)** सम्यक् **(सहस्रा)** सहस्राणि **(कारिषत्)** कुर्यात् **(चर्षणिभ्यः)** मनुष्येभ्यः **(आ)** समन्तात् **(आविः)** प्राकट्ये **(गूळ्हा)** गुप्तानि **(वसू)** धनानि। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(करत्)** कुर्यात् **(सुवेदा)** शोभनं विज्ञानं यस्य सः **(नः)** अस्मभ्यम् **(वसू)** विज्ञानानि धनानि वा **(करत्)** कुर्यात्॥१५॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यथा सुवेदा नस्त्वेषं तुविष्वणि मारुतं शर्धो नानर्वाणं पूषणं करत् यथा चर्षणिभ्यः शता सहस्रा गूळ्हा वस्वा सं कारिषद् गूळ्हा वस्वा समाविष्करत्तथैतानि यूयं कुरुत॥१५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा विद्वांसो विज्ञानदानेन गुप्ता विद्या युष्मदर्थं प्रकटीकुर्वन्ति युष्माकं शरीरात्मबलं च वर्धयन्ति तथैतान् यूयं वर्धयत॥१५॥

पदार्थः-हे विद्वानो! **(यथा)** जैसे **(सुवेदा)** सुशोभित विज्ञान जिसका वह **(नः)** हम लोगों के लिये **(त्वेषम्)** दीप्तिमत् **(तुविष्वणि)** बहुत शब्दों वाले **(मारुतम्)** मनुष्य सम्बन्धी **(शर्धः)** बल के **(न)** समान **(अनर्वाणम्)** अविद्यमान हैं अश्व जिसमें उस पदार्थ को **(पूषणम्)** पुष्टि करने वाला **(करत्)** करे

वा जैसे **(चर्षणिभ्यः)** मनुष्यों के लिये **(शता)** सैकड़ों वा **(सहस्रा)** सहस्रों **(गूळहा)** गुप्त **(वसू)** धनों को **(आ, सम्, कारिषत्)** सब ओर अच्छे प्रकार सिद्ध करे और गुप्त **(वसू)** विज्ञान वा धनों को **(सम्, आविष्करत्)** प्रकट करे, वैसे इनको आप करें॥१५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे विद्वान् जन विज्ञानदान से गुप्त विद्याओं को तुम्हारे लिये प्रकट करते हैं और आपके शारीरिक और आत्मिक बल को बढ़ाते हैं, वैसे इनको तुम बढ़ाओ॥१५॥

पुनर्मनुष्याः परस्परं कथं वर्त्तेरन्नित्याह॥

फिर मनुष्य परस्पर कैसे वर्त्ते, इस विषय को कहते हैं॥

आ मा॑ पूषन्नुप॑ द्रव॒ शंसि॑षं॒ नु ते॑ अपिक॒र्ण आ॑घृणे।

अ॒घा अ॒र्यो अरा॑तयः॥१६॥३॥

आ। मा॒। पू॒ष॒न्। उप॑। द्र॒व॒। शंसि॑षम्। नु। ते॒। अ॒पि॒ऽक॒र्णे। आ॒घृ॒णे॒। अ॒घाः। अ॒र्यः। अरा॑तयः॥१६॥

पदार्थः-**(आ)** समन्तात् **(मा)** माम् **(पूषन्)** पुष्टिकर्त्तः **(उप)** **(द्रव)** समीपमागच्छ **(शंसिषम्)** प्रशंसेयम् **(नु)** सद्यः **(ते)** तव **(अपिकर्णे)** आच्छादितश्रोत्रे **(आघृणे)** सर्वतो दीप्तिमान् **(अघाः)** हन्याः **(अर्यः)** स्वामी सन् **(अरातयः)** अदातारः॥१६॥

अन्वयः-हे पूषन्नाघृणे! यस्य तेऽपिकर्णेऽहं नु सत्यं शंसिषं सोऽर्यस्त्वमा मा मामुप द्रव य अरातयः स्युस्तान्नु अघाः॥१६॥

भावार्थः-हे पालनीय जन! त्वं रक्षार्थं मत्सन्निधिमागच्छाऽहञ्च सत्योपदेशेन विचक्षणं कुर्यां वयं सर्वे मिलित्वा दुष्टान् विनाशयेम॥१६॥

पदार्थः-हे **(पूषन्)** पुष्टि करने वाले **(आघृणे)** सब ओर से प्रकाशमान! जिन **(ते)** आपके **(अपिकर्णे)** ढंपे हुए कर्ण में मैं **(नु)** शीघ्र सत्य की **(शंसिषम्)** प्रशंसा करूं सो **(अर्यः)** स्वामी हुए आप **(आ)** सब ओर से **(मा)** मेरे **(उप, द्रव)** समीप आओ और जो **(अरातयः)** न देने वाले जन हों उन्हें शीघ्र **(अघाः)** हनिये अर्थात् मारिये॥१६॥

भावार्थः-हे पालनीय जन! आप रक्षा के लिये मेरे समीप आओ, मैं सत्योपदेश से तुम्हें विचक्षण करूँ तथा हम सब लोग मिल के दुष्टों का विनाश करें॥१६॥

मनुष्यैः किं न कर्त्तव्यमित्याह॥

मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

मा काकं॒बीर॒मुद् वृ॑हो व॒न॒स्पति॒मश॑स्ती॒र्वि हि नीन॑शः।

मोत सूरो॒ अह॑ ए॒वा च॒न ग्री॒वा आ॒दध॑ते॒ वेः॥१७॥

मा। काकंबीरम्। उत्। वृहः। वनस्पतिम्। अशस्तीः। वि। हि। नीनशः। मा। उत। सूरः। अहरिति। एव। चन। ग्रीवाः। आऽदधते। वेरिति। वेः॥ १७॥

पदार्थः-(**मा**) निषेधे (**काकंबीरम्**) काकानां गोपकम् (**उत्**) (**वृहः**) उच्छेदयेः (**वनस्पतिम्**) वटादिकम् (**अशस्तीः**) अप्रशंसिताः (**वि**) (**हि**) खलु (**नीनशः**) भृशं नाशयेः (**मा**) (**उत**) (**सूरः**) सूर्यः (**अहः**) दिनम् (**एवा**) अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। (**चन**) अपि (**ग्रीवाः**) कण्ठान् (**आदधते**) समन्ताद् धरन्ति (**वेः**) पक्षिणः॥ १७॥

अन्वयः-हे विद्वंस्त्वं काकंबीरं वनस्पतिं मोद्वृहोऽशस्तीर्हि वि नीनशः सूरोऽहरेवा यथा वेर्ग्रीवाश्चनाऽऽदधते तथोतास्मान् मा पीडय॥ १७॥

भावार्थः-केनापि मनुष्येण श्रेष्ठा वृक्षा वनस्पतयो वा नो हिंसनीया एतत्स्थान् दोषान्निवार्योत्तमाः सम्पादनीयाः, हे मनुष्य! यथा श्येनेन पक्षिणां ग्रीवा गृह्यन्ते तथा कञ्चिदपि मा दुःखय॥ १७॥

पदार्थः-हे विद्वन्! आप (**काकंबीरम्**) कौओं की पुष्टि करने वाले (**वनस्पतिम्**) वट आदि वृक्ष को (**मा, उत, वृहः**) मत उच्छिन्न करो तथा (**अशस्तीः**) और अप्रशंसित (**हि**) ही कर्मों की (**वि, नीनशः**) विशेषता से निरन्तर नाश करो और (**सूरः**) सूर्य (**अहः, एवा**) दिन में ही जैसे (**वेः**) पक्षी के (**ग्रीवाः**) कण्ठों को (**चन**) निश्चय से (**आदधते**) अच्छे प्रकार धारण करते हैं, वैसे (**उत**) तो हम लोगों को (**मा**) मत पीड़ा देओ॥ १७॥

भावार्थः-किसी मनुष्य को श्रेष्ठ वृक्ष वा वनस्पति न नष्ट करने चाहियें, किन्तु इनमें जो दोष हों, उनको निवारण करके इन्हें उत्तम सिद्ध करने चाहियें, हे मनुष्य! जैसे श्येन वाज पक्षी और पखेरूओं की गर्दनें पकड़ घोटता है, वैसे किसी को दुःख न देओ॥ १७॥

केषां मित्रत्वं न नश्यतीत्याह॥

किन की मित्रता नहीं नष्ट होती है, इस विषय को कहते हैं॥

दृतेरिव तेऽवृकमस्तु सख्यम्। अच्छिद्रस्य दधन्वतः सुपूर्णस्य दधन्वतः॥ १८॥

दृतेःऽइव। ते। अवृकम्। अस्तु। सख्यम्। अच्छिद्रस्य। दधन्ऽवतः। सुऽपूर्णस्य। दधन्ऽवतः॥ १८॥

पदार्थः-(**दृतेरिव**) मेघस्येव। **दृतिरिति मेघनाम।** (निघं० १.१०) (**ते**) तव (**अवृकम्**) अचौर्यम् (**अस्तु**) (**सख्यम्**) मित्रत्वम् (**अच्छिद्रस्य**) अखण्डितस्य (**दधन्वतः**) दृढत्वेन धर्तुः (**सुपूर्णस्य**) सुष्ठ्वलंजातस्य (**दधन्वतः**) विद्याशुभगुणधर्तॄणां धारकस्य॥ १८॥

अन्वयः-हे विद्वन्नच्छिद्रस्य दधन्वतो दृतेरिव सुपूर्णस्य दधन्वतस्तेऽवृकं सख्यमस्तु॥ १८॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा मेघभूम्योर्मित्रवद्व्यवहारोऽस्ति तथैव धार्मिकाणां विदुषां मित्रताऽजस्राऽमरा वर्त्तते॥ १८॥

पदार्थः-हे विद्वन्! **(अच्छिद्रस्य)** अखण्डित और **(दधन्वतः)** दृढ़ता से धारण करने वालों को धारण करने वाले **(ते)** तुम्हारी **(अवृकम्)** चोरी से रहित **(सख्यम्)** मित्रता **(अस्तु)** हो॥१८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे मेघ और भूमि का मित्रवत् व्यवहार है, वैसे ही धार्मिक विद्वानों की मित्रता अजर-अमर वर्त्तमान है॥१८॥

मनुष्यैः कीदृशैर्भवितव्यमित्याह॥

मनुष्यों को कैसा होना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

पुरो हि मर्त्यैरसि समो देवैरुत श्रिया।

अभि ख्यः पूषन् पृतनासु नस्त्वमवा नूनं यथा पुरा॥१९॥

परः। हि। मर्त्यैः। असि। समः। देवैः। उत। श्रिया। अभि। ख्यः। पूषन्। पृतनासु। नः। त्वम्। अव। नूनम्। यथा। पुरा॥१९॥

पदार्थः-**(परः)** उत्कृष्टः **(हि)** यतः **(मर्त्यैः)** मनुष्यैः सह **(असि)** **(समः)** तुल्यः **(देवैः)** विद्वद्भिः **(उत)** अपि **(श्रिया)** लक्ष्म्या **(अभि)** **(ख्यः)** प्रकथयसि **(पूषन्)** पुष्टिकर्त्तः **(पृतनासु)** मनुष्यसेनासु **(नः)** अस्माकम् **(त्वम्)** **(अवा)** अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। **(नूनम्)** निश्चितम् **(यथा)** **(पुरा)**॥१९॥

अन्वयः-हे पूषन्! यथा हि पुरा त्वं नः पृतनास्वभि ख्यस्तथा नूनं मर्त्यैर्देवैरुत श्रिया सह परः समोऽस्यतोऽवा॥१९॥

भावार्थः-यो विद्वद्भिस्तुल्यः स विद्वान् यो मनुष्यैः सदृशः स मध्यमो य पशुभिस्सदृशः सोऽधमो मनुष्योऽस्तीति सर्वे जानन्तु॥१९॥

पदार्थः-हे **(पूषन्)** पुष्टि करने वाले! **(यथा)** जैसे **(हि)** जिस कारण **(पुरा)** पहिले **(त्वम्)** आप **(नः)** हमारी **(पृतनासु)** मनुष्य सेनाओं में **(अभि, ख्यः)** सब ओर से अच्छे प्रकार कथन करते हैं, वैसे **(नूनम्)** निश्चित **(मर्त्यैः)** साधारण मनुष्य वा **(देवैः)** विद्वान् **(उत)** और **(श्रिया)** लक्ष्मी के साथ **(परः)** उत्कृष्ट अत्युत्तम वा **(समः)** समान **(असि)** हैं इससे **(अवा)** रक्षा कीजिये॥१९॥

भावार्थः-जो विद्वानों के तुल्य है वह विद्वान्, जो मनुष्यों के तुल्य है वह मध्यम, और जो पशुओं के तुल्य है वह अधम मनुष्य है, इसको सब जानें॥१९॥

पुनर्मनुष्यैः कीदृशी नीतिर्धार्येत्याह॥

फिर मनुष्यों को कैसी नीति धारण करनी चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

वामी वामस्य धूतयः प्रणीतिरस्तु सूनृता।

देवस्य वा मरुतो मर्त्यस्य वेजानस्य प्रयज्यवः॥२०॥

वामी। वामस्य। धूतयः। प्रऽनीतिः। अस्तु। सूनृता। देवस्य। वा। मरुतः। मर्त्यस्य। वा। ईजानस्य। प्रऽयज्यवः॥ २०॥

पदार्थः-(**वामी**) बहुप्रशस्तकर्मा (**वामस्य**) प्रशस्यस्य (**धूतयः**) कंपयितारः (**प्रणीतिः**) प्रकृष्टा नीतिः (**अस्तु**) (**सूनृता**) सत्यभाषणादियुक्ता (**देवस्य**) विदुषः (**वा**) (**मरुतः**) मरणधर्मस्य (**मर्त्यस्य**) साधारणमनुष्यस्य (**वा**) (**ईजानस्य**) यज्ञकर्तुः (**प्रयज्यवः**) प्रकर्षेण यज्ञसम्पादकाः॥ २०॥

अन्वयः-हे धूतयः प्रयज्यवो! युष्मासु वामस्य वामी देवस्य वा मरुत ईजानस्य वा मर्त्यस्य सूनृता प्रणीतिरस्तु॥ २०॥

भावार्थः-आप्तो राजाऽमात्यानुपदिशेत् भवन्तो न्यायकारिणो धर्मात्मानो भूत्वा पुत्रवत्प्रजाः पालयन्त्विति॥ २०॥

पदार्थः-हे (**धूतयः**) कम्पन कराने वाले (**प्रयज्यवः**) उत्तमता से यज्ञसम्पादको! तुम में (**वामस्य**) प्रशंसा करने योग्य का सम्बन्धी (**वामी**) बहुत प्रशंसित कर्मकर्त्ता और (**देवस्य**) विद्वान् की (**वा**) वा (**मरुतः**) मरणधर्मा तथा (**ईजानस्य**) यज्ञकर्त्ता (**वा**) वा (**मर्त्यस्य**) साधारण मनुष्य की (**सूनृता**) सत्यभाषणादि युक्त (**प्रणीतिः**) उत्तम नीति (**अस्तु**) हो॥ २०॥

भावार्थः-आप्त राजा मन्त्रियों को उपदेश देवे कि-आप लोग न्यायकारी तथा धर्मात्मा होकर पुत्र के समान प्रजाजनों को पालें॥ २०॥

कस्य राज्ञः पुण्यकीर्त्तिर्जायत इत्याह॥

किस राजा की पुण्यरूप कीर्त्ति होती है, इस विषय को कहते हैं॥

सद्यश्चिद्यस्य चर्कृतिः परि द्यां देवो नैति सूर्यः।

त्वेषं शवो दधिरे नाम यज्ञियं मरुतो वृत्रहं शवो ज्येष्ठं वृत्रहं शवः॥ २१॥

सद्यः। चित्। यस्य। चर्कृतिः। परि। द्याम्। देवः। न। एति। सूर्यः। त्वेषम्। शवः। दधिरे। नाम। यज्ञियम्। मरुतः। वृत्रऽहम्। शवः। ज्येष्ठम्। वृत्रऽहम्। शवः॥ २१॥

पदार्थः-(**सद्यः**) (**चित्**) अपि (**यस्य**) (**चर्कृतिः**) भृशमुत्तमा क्रिया (**परि**) सर्वतः (**द्याम्**) प्रकाशम् (**देवः**) देदीप्यमानः (**न**) इव (**एति**) प्राप्नोति गच्छति वा (**सूर्यः**) सविता (**त्वेषम्**) देदीप्यमानम् (**शवः**) बलम् (**दधिरे**) दधति (**नाम**) संज्ञाम् (**यज्ञियम्**) यज्ञसम्पादकम् (**मरुतः**) मनुष्याः (**वृत्रहम्**) शत्रुनाशकम् (**शवः**) बलम् (**ज्येष्ठम्**) प्रवृद्धम् (**वृत्रहम्**) धनप्रापकम् (**शवः**) बलम्॥ २१॥

अन्वयः-यस्य राज्ञश्चर्कृतिर्देवः सूर्यो द्यां न सद्यो विनयं पर्य्येति यस्य मरुतस्त्वेषं नाम यज्ञियं शवो दधिरे वृत्रहं शवो ज्येष्ठं वृत्रहं शवश्चिद्दधिरे तस्य सर्वत्रैव विजयो सूर्य्यवत् कीर्तिः प्रसरति॥ २१॥

भावार्थः-यो राजा विद्याविनययुक्तः पुरुषार्थी दृढप्रतिज्ञो जितेन्द्रियो धार्मिकः सत्यवादी सन् धार्मिकान् विदुषोऽधिकारे संस्थाप्य पुत्रवत्प्रजाः पालयति तस्याऽत्र जगति सूर्य्यवत् कीर्तिः प्रसरति॥ २१॥

पदार्थ:-(**यस्य**) जिस राजा की (**चर्कृति:**) निरन्तर उत्तम क्रिया (**देव:**) देदीप्यमान (**सूर्य:**) सविता और (**द्याम्**) प्रकाश के (**न**) समान (**सद्य:**) शीघ्र विनय को (**परि, एति**) सब ओर से प्राप्त होती वा जिसके (**मरुत:**) प्रजा जन (**त्वेषम्**) देदीप्यमान (**नाम**) संज्ञा (**यज्ञियम्**) यज्ञ सम्पादक और (**शव:**) बल को (**दधिरे**) धारण करते हैं वा (**वृत्रहम्**) शत्रुओं के नाश करने वाले (**शव:**) बल वा (**ज्येष्ठम्**) प्रशंसित (**वृत्रहम्**) धन प्राप्त करने वाले (**शव:, चित्**) बल को भी धारण करते हैं, उसका सर्वत्र विजय होता है॥२१॥

भावार्थ:-जो राजा विद्या और विनय से युक्त, पुरुषार्थी, दृढप्रतिज्ञा करने वाला, जितेन्द्रिय, धार्मिक, सत्यवादी होकर धार्म्मिक विद्वानों को अधिकार में संस्थापन कर पुत्र के समान प्रजाजनों को पालता है, उसकी इस जगत् में सूर्य्य के समान कीर्ति फैलती है॥२१॥

अथ प्रजाकृत्यमाह॥

अब प्रजा के कृत्य को कहते हैं॥

सकृद्ध द्यौरजायत सकृद्भूमिरजायत।
पृश्न्या दुग्धं सकृत्पयस्तदन्यो नानु जायते॥२२॥४॥

सकृत्। ह। द्यौ:। अजायत। सकृत्। भूमि:। अजायत। पृश्न्या:। दुग्धम्। सकृत्। पय:। तत्। अन्य:। न। अनु। जायते॥२२॥

पदार्थ:-(**सकृत्**) एकवारम् (**ह**) खलु (**द्यौ:**) सूर्य: (**अजायत**) जायते (**सकृत्**) एकवारम् (**भूमि:**) (**अजायत**) जायते (**पृश्न्या:**) अन्तरिक्षे भवा: सृष्टय: (**दुग्धम्**) (**सकृत्**) (**पय:**) उदकम् (**तत्**) तस्मात् (**अन्य:**) भिन्न: (**न**) (**अनु**) (**जायते**)॥२२॥

अन्वय:-हे मनुष्या! यथा ह द्यौ: सकृदजायत भूमि: सकृदजायत पृश्न्या: सकृज्जायन्ते दुग्धं पयश्च सकृज्जायते तदन्यो नानु जायते तथैव यूयं विजानीत॥२२॥

भावार्थ:-हे विद्वांसो! येनेश्वरेण सूर्यादिकं जगद्युगपदुत्पाद्यते स एतया सृष्ट्या सह न जायतेऽस्या भिन्न: सन् सर्वं सद्यो जनयति तमेव यूयं ध्यायतेति॥२२॥

अत्राग्निमरुत्पूषन्पृश्निसूर्य्यभूमिविद्वद्राजप्रजाकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्यष्टचत्वारिंशत्तमं सूक्तं चतुर्थो वर्गश्च समाप्त:॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! जैसे (**ह**) निश्चय के साथ (**द्यौ:**) सूर्य (**सकृत्**) एक वार (**अजायत**) उत्पन्न होता है तथा (**भूमि:**) भूमि (**सकृत्**) एक वार (**अजायत**) उत्पन्न होती है और (**पृश्न्या:**) अन्तरिक्ष में उत्पन्न होने वाली सृष्टियाँ (**सकृत्**) एक वार उत्पन्न होती हैं तथा (**दुग्धम्**) दूध और (**पय:**) जल एक वार उत्पन्न होता है (**तत्**) उससे (**अन्य:**) और (**न**) नहीं (**अनु, जायते**) अनुकरण करता, वैसे तुम जानो॥२२॥

भावार्थ:-हे विद्वानो! जिस ईश्वर ने सूर्य आदि जगत् एक वार उत्पन्न किया वह इस सृष्टि के साथ नहीं उत्पन्न होता, किन्तु इस सृष्टि से भिन्न अर्थात् भेद को प्राप्त होकर सबको शीघ्र उत्पन्न करता है, उसी का ध्यान तुम लोग करो॥२२॥

इस सूक्त में अग्नि, मरुत्, पूषा, पृश्नि, सूर्य, भूमि, विद्वान्, राजा और प्रजा के कृत्य का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ ही इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ संङ्गति जाननी चाहिये॥

यह अड़तालीसवां सूक्त और चतुर्थ वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ पञ्चदशर्चस्यैकोनपञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य ऋजिष्वा ऋषिः। विश्वेदेवा देवताः। १, ३, ४, १०, ११ त्रिष्टुप्। ५, ६, ९, १३ निचृत्त्रिष्टुप्। ८, १२ विराट्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २, १४ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ७ ब्राह्म्युष्णिक् छन्दः। ऋषभः स्वरः। १५ अतिजगती छन्दः। निषादः स्वरः॥

अथ मनुष्याः किं कुर्य्युरित्याह॥

अब पन्द्रह ऋचावाले उनचासवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में मनुष्य क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

स्तुषे जनं सुव्रतं नव्यसीभिर्गीर्भिर्मित्रावरुणा सुम्नयन्ता।
त आ गमन्तु त इह श्रुवन्तु सुक्षत्रासो वरुणो मित्रो अग्निः॥ १॥

स्तुषे। जनम्। सुऽव्रतम्। नव्यसीभिः। गीःऽभिः। मित्राऽवरुणा। सुम्नऽयन्ता। ते। आ। गमन्तु। ते। इह। श्रुवन्तु। सुऽक्षत्रासः। वरुणः। मित्रः। अग्निः॥ १॥

पदार्थः-(**स्तुषे**) स्तौमि (**जनम्**) मनुष्यम् (**सुव्रतम्**) शोभनानि व्रतानि कर्माणि यस्य तम् (**नव्यसीभिः**) अतिशयेन नवीनाभिः (**गीर्भिः**) सद्यः सुशिक्षिताभिः वाग्भिः (**मित्रावरुणा**) प्राणोदानाविवाध्यापकोपदेशकौ (**सुम्नयन्ता**) सुखं प्रापयन्तौ (**ते**) (**आ**) (**गमन्तु**) आगच्छन्तु (**ते**) (**इह**) (**श्रुवन्तु**) शृण्वन्तु (**सुक्षत्रासः**) शोभनं क्षत्रं राष्ट्रं धनं वा येषान्ते (**वरुणः**) श्रेष्ठः (**मित्रः**) सखा (**अग्निः**) अग्निरिव तेजस्वी॥ १॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! नव्यसीभिर्गीर्भिः सुव्रतं जनं सुम्नयन्ता मित्रावरुणा चाऽहं स्तुषे। ये मित्रो वरुणोऽग्निः सुक्षत्रासो वर्त्तन्ते त इहाऽऽगमन्तु ते श्रुवन्तु॥ १॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये युष्मान्नवीनां नवीनां विद्यामुपदिशन्ति तानाहूय सङ्गत्य तेभ्यः श्रुत्वा विद्याः प्राप्नुत॥ १॥

पदार्थः-हे विद्वानो! (**नव्यसीभिः**) अतीव नवीन (**गीर्भिः**) शीघ्र सुशिक्षित वाणियों से (**सुव्रतम्**) जिसके शुभ व्रत अर्थात् कर्म हैं उस (**जनम्**) मनुष्य की और (**सुम्नयन्ता**) सुख प्राप्ति कराने वाले (**मित्रावरुणा**) प्राण और उदान के समान पढ़ाने और उपदेश करने वाले की मैं (**स्तुषे**) स्तुति करता हूँ तथा जो (**मित्रः**) मित्र (**वरुणः**) श्रेष्ठ (**अग्निः**) अग्नि के समान तेजस्वी और (**सुक्षत्रासः**) जिनका सुन्दर राज्य वा धन है ऐसे वर्त्तमान हैं (**ते**) वे (**इह**) यहाँ (**आ, गमन्तु**) आवें और (**ते**) वे (**श्रुवन्तु**) श्रवण करें॥ १॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो तुमको नवीन-नवीन विद्या का उपदेश करते हैं, उनको बुलाकर वा उनसे मेलकर उनसे सुनकर विद्याओं को प्राप्त होओ॥ १॥

पुनर्मनुष्याः कं स्तूयुरित्याह॥

फिर मनुष्य किसकी स्तुति करें, इस विषय को कहते हैं॥

विशोविश ईड्यमध्वरेष्वदृप्तक्रतुमरतिं युवत्योः।
दिवः शिशुं सहसः सूनुमग्निं यज्ञस्य केतुमरुषं यजध्यै॥ २॥

विशःऽविशः। ईड्यम्। अध्वरेषु अदृप्तऽक्रतुम्। अरतिम्। युवत्योः। दिवः। शिशुम्। सहसः। सूनुम्। अग्निम्। यज्ञस्य। केतुम्। अरुषम्। यजध्यै॥ २॥

पदार्थः-(**विशोविशः**) प्रजायाः प्रजाया मध्ये (**ईड्यम्**) स्तोतुमर्हम् (**अध्वरेषु**) अहिंसनीयेषु व्यवहारेषु (**अदृप्तक्रतुम्**) अमोहितप्रज्ञम् (**अरतिम्**) विषयेष्वरममाणम् (**युवत्योः**) युवावस्थां प्राप्तयोः स्त्रीपुरुषयोः (**दिवः**) कमनीयस्य (**शिशुम्**) बालकम् (**सहसः**) बलवतः (**सूनुम्**) (**अग्निम्**) पावकमिव वर्त्तमानम् (**यज्ञस्य**) (**केतुम्**) प्रज्ञापकम् (**अरुषम्**) आरक्तगुणम् (**यजध्यै**) यष्टुं सङ्गन्तुम्॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्या! अध्वरेषु विशोविशो मध्येऽरतिमदृप्तक्रतुमीड्यं युवत्योर्दिवः शिशुं सहसस्सूनुमग्निमिव वर्त्तमानमरुषं यज्ञस्य केतुं यजध्यै स्तुवन्तु॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यो ब्रह्मचर्य्येण युवावस्थां प्राप्तयोः स्त्रीपुरुषयोरुत्तमाद् बलाज्जातोऽग्निरिव तेजस्वी भवेत्तमेव राजानमधिकारिणं वा कुरुत॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**अध्वरेषु**) अहिंसनीय व्यवहारों में (**विशोविशः**) प्रजा-प्रजा के बीच (**अरतिम्**) विषयों में विना रमते हुए (**अदृप्तक्रतुम्**) जिसकी बुद्धि मोहित नहीं हुई उस (**ईड्यम्**) स्तुति करने योग्य (**युवत्योः**) युवावस्था को प्राप्त हुए स्त्री-पुरुष के (**दिवः**) मनोहर व्यवहारसम्बन्धी (**शिशुम्**) बालक की (**सहसः**) वा बलवान् के (**सूनुम्**) उस पुत्र की जो (**अग्निम्**) अग्नि के समान वर्त्तमान तथा (**अरुषम्**) कुछ लाल रंग युक्त और (**यज्ञस्य**) यज्ञादि कर्म का (**केतुम्**) अच्छे प्रकार समझाने वाला है (**यजध्यै**) सङ्ग करने के लिये स्तुति करो॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो ब्रह्मचर्य्य से युवा अवस्था को प्राप्त स्त्री-पुरुषों के उत्तम बल से उत्पन्न, अग्नि के समान तेजस्वी हो, उसको राजा वा अधिकारी करो॥ २॥

अथ स्त्रीपुरुषौ कीदृशौ भूत्वा कथं वर्त्तेयातामित्याह॥

अब स्त्री-पुरुष कैसे होकर कैसे वर्त्ताव करें, इस विषय को कहते हैं॥

अरुषस्य दुहितरा विरूपे स्तृभिरन्या पिपिशे सूरो अन्या।
मिथस्तुरा विचरन्ती पावके मन्म श्रुतं नक्षत ऋच्यमाने॥ ३॥

अरुषस्य। दुहितरा। विरूपे इति विऽरूपे। स्तृऽभिः। अन्या। पिपिशे। सूरः। अन्या। मिथःऽतुरा। विचरन्ती इति विऽचरन्ती। पावके इति। मन्म। श्रुतम्। नक्षतः। ऋच्यमाने इति॥ ३॥

पदार्थः-(**अरुषस्य**) आरक्तगुणस्याग्नेः (**दुहितरा**) कन्ये इव वर्त्तमाने (**विरूपे**) विविधरूपे विरुद्धरूपे वाऽहोरात्रे (**स्तृभिः**) नक्षत्रादिभिः (**अन्या**) द्वयोर्भिन्ना (**पिपिशे**) पिनष्ट्यवयव इव वर्त्तते (**सूरः**) सूर्य्यः (**अन्या**) दिनाख्या (**मिथस्तुरा**) मिथो हिंसके (**विचरन्ती**) विविधगत्या प्राप्नुवन्ती (**पावके**) पवित्रे (**मन्म**) विज्ञानम् (**श्रुतम्**) (**नक्षतः**) व्याप्नुतः (**ऋच्यमाने**) स्तूयमाने॥३॥

अन्वयः-हे स्त्रीपुरुषौ राजप्रजे वा! यथाऽरुषस्य विरूपे मिथस्तुरा विचरन्ती ऋच्यमाने पावके दुहितरेव वर्त्तते तयोरन्या रात्रिः स्तृभिः पिपिशेऽन्या सूरः किरणैः पिपिशे सर्वं जगन्नक्षतस्तथा संहितौ भूत्वा प्रीत्या श्रुतं मन्म युवां प्राप्नुयाताम्॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सूर्य्यरूपस्याग्ने रात्रिदिने पुत्रीवद्वर्त्तेते तथा द्वे विलक्षणे सदा सम्बद्धे च भवतस्तथैव विचित्रवस्त्राभरणौ विविधविद्याढ्यौ प्रशंसितौ सन्तौ विद्याविज्ञानधर्म्मोन्नतिसम्बद्धप्रीती स्त्रीपुरुषौ भवेताम्॥३॥

पदार्थः-हे स्त्री पुरुषो वा राजा और प्रजाजनो! जैसे (**अरुषस्य**) कुछ लाल रंग वाले अग्नि के (**विरूपे**) विविधरूप वा विरुद्धस्वरूपयुक्त दिन और रात्रि (**मिथस्तुरा**) परस्पर हिंसा करने वाले (**विचरन्ती**) विविध गति से प्राप्त होते हुए (**ऋच्यमाने**) स्तूयमान (**पावके**) पवित्र (**दुहितरा**) कन्याओं के समान वर्तमान हैं उनमें (**अन्या**) और अर्थात् दोनों से अलग रात्रिरूप कन्या (**स्तृभिः**) नक्षत्रादिकों के साथ (**पिपिशे**) पीसती हुई अङ्ग के समान वर्त्तमान है (**अन्या**) और दिनरूप कन्या अर्थात् (**सूरः**) सूर्य्य किरणों से पीसती हुई वर्त्तमान है, वे दोनों समस्त जगत् को (**नक्षतः**) व्याप्त होते हैं, वैसे मिलकर प्रीति से (**श्रुतम्**) श्रवण वा (**मन्म**) विज्ञान को तुम दोनों प्राप्त होओ॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य्यरूप अग्नि के रात्रि-दिन पुत्री के समान वर्त्तमान हैं तथा दोनों विलक्षण सदा सम्बन्ध करने वाले होते हैं, वैसे ही विचित्र वस्त्र और आभूषण वाले, विविध विद्यायुक्त और प्रशंसित होते हुए विद्या विज्ञान और धर्मोन्नति में सम्बन्ध और प्रीति करने वाले स्त्री-पुरुष हों॥३॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

प्र वायुमच्छा बृहती मनीषा बृहद्रयिं विश्ववारं रथप्राम्।

द्युतद्यामा नियुतः पत्यमानः कविः कविमियक्षसि प्रयज्यो॥४॥

प्र। वायुम्। अच्छ। बृहती। मनीषा। बृहत्ऽरयिम्। विश्वऽवारम्। रथऽप्राम्। द्युतत्ऽयामा। निऽयुतः। पत्यमानः। कविः। कविम्। इयक्षसि। प्रयज्यो इति प्रऽयज्यो॥४॥

पदार्थः-(**प्र**) प्रकर्षेण (**वायुम्**) पवनम् (**अच्छा**) अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**बृहती**) महती (**मनीषा**) प्रज्ञा (**बृहद्रयिम्**) महान् रयिर्यस्मात्तम् (**विश्ववारम्**) यो विश्वं सर्वमुत्तमं व्यवहारं वृणोति तम् (**रथप्राम्**) यो रथानि यानानि पूर्यते तम् (**द्युतद्यामा**) द्युतन्तो विद्योतमाना पदार्था यया सा (**नियुतः**)

निश्चितगतिमतः **(पत्यमानः)** ऐश्वर्यमिच्छन् **(कविः)** विद्वान् **(कविम्)** विद्वांसमिव क्रान्तप्रज्ञम् **(इयक्षसि)** सङ्गच्छसे प्राप्नोषि वा। **इयक्षतीति गतिकर्म्मा।** (निघं०२.१४) **(प्रयज्यो)** यः प्रकर्षेण यजति तत्सम्बुद्धौ॥४॥

अन्वयः-हे प्रयज्यो! पत्यमानः कविस्त्वं या द्युतद्यामा बृहती मनीषा तया यदि बृहद्रयिं विश्ववारं रथप्रां कविं वायुमस्य नियुतश्चाच्छा प्रेयक्षसि तर्हि किं किमभीष्टं न प्राप्नोषि॥४॥

भावार्थः-ये मनुष्याः शुद्धया बुद्ध्या योगाभ्यासेन च सर्वसुखप्रदं सर्वजगद्धरं वायुं प्राणायामे वशीकुर्वन्ति ते सर्वाणि सुखानि प्राप्नुवन्ति॥४॥

पदार्थः-हे **(प्रयज्यो)** उत्तमता से यज्ञ करने वाले! **(पत्यमानः)** ऐश्वर्य की इच्छा करते हुए **(कविः)** विद्वान् आप जो **(द्युतद्यामा)** जिससे विशेषकर पदार्थ प्रकाशित होते हैं ऐसी **(बृहती)** बड़ी **(मनीषा)** बुद्धि है उससे जो **(बृहद्रयिम्)** जिससे बहुत धन सिद्ध होता उस **(विश्ववारम्)** और जो समस्त उत्तम व्यवहार को स्वीकार करता वा **(रथप्राम्)** रथ को परिपूर्ण करता वा **(कविम्)** विद्वान् के समान क्रमपूर्वक बुद्धि प्राप्त होती उस **(वायुम्)** वायु और इसके **(नियुतः)** निश्चित गति वाले वेगरूप घोड़ों को **(अच्छा)** **(प्र, इयक्षसि)** मिलते हैं तो कौन-कौन चाहे हुए पदार्थ को नहीं प्राप्त होते हैं॥४॥

भावार्थः-जो मनुष्य शुद्ध बुद्धि और योगाभ्यास से सर्व सुख देने तथा सर्व जगत् के धारण करने वाले पवन को प्राणायाम में वश करते हैं, वे सर्वसुख को प्राप्त होते हैं॥४॥

पुनर्मनुष्याः केन किं प्राप्नुयुरित्याह॥

फिर मनुष्य किससे किसको प्राप्त होवें, इस विषय को कहते हैं॥

स मे वपुश्छदयदश्विनोर्यो रथो विरुक्मान् मनसा युजानः।

येन नरा नासत्येषयध्यै वर्तिर्याथस्तनयाय त्मने च॥५॥५॥

सः। मे। वपुः। छदयत्। अश्विनोः। यः। रथः। विरुक्मान्। मनसा। युजानः। येन। नरा। नासत्या। इषयध्यै। वर्तिः। याथः। तनयाय। त्मने। च॥५॥

पदार्थः-**(सः)** **(मे)** मम **(वपुः)** शरीरं रूपं वा **(छदयत्)** बलयति **(अश्विनोः)** प्राणाऽपानयोः **(यः)** **(रथः)** रमणीयो व्यवहारः **(विरुक्मान्)** विविधदीप्तियुक्तः **(मनसा)** अन्तःकरणेन **(युजानः)** **(येन)** **(नरा)** नरौ नायकौ **(नासत्या)** अविद्यमानाऽसत्यौ **(इषयध्यै)** एषयितुम् **(वर्त्तिः)** मार्गः **(याथः)** प्राप्नुतः **(तनयाय)** सन्तानाय **(त्मने)** आत्मने **(च)**॥५॥

अन्वयः-हे विद्वांसौ! योऽश्विनोर्विरुक्मान् मनसा युजानो रथो मे वपुश्छदयद्येन तनयाय त्मने च नरा नासत्या अध्यापकोपदेशकौ योगिनाविषयध्यै यो वर्त्तिस्तं याथः स युष्माभिर्विदित्वा मनसात्मनि नियोजनीयः॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्या! येन वायुना योगिनो विविधं विज्ञानं प्राप्नुवन्ति येन सर्वं जगत्सर्वे प्राणिनश्च जीवन्ति तदभ्यासेन परमात्मानं विदित्वा मुक्तिपथेनानन्दं प्राप्नुत॥५॥

पदार्थः-हे विद्वानो! **(यः)** जो **(अश्विनोः)** प्राण और अपान के **(विरुक्मान्)** विविधदीप्तियुक्त **(मनसा)** अन्तःकरण से **(युजानः)** युक्त होता हुआ **(रथः)** रमणीय व्यवहार **(मे)** मेरे **(वपुः)** शरीर वा रूप को **(छदयत्)** बली करता है तथा **(येन)** जिससे **(तनयाय)** सन्तान के लिये **(त्मने, च)** और अपने लिये **(नरा)** नायक अग्रगामी **(नासत्या)** जिनके असत्य विद्यमान नहीं वे अध्यापक और उपदेशक योगीजन **(इषयध्यै)** चलने के लिये जो **(वर्त्तिः)** मार्ग है उसको **(याथः)** प्राप्त होते हैं **(सः)** वह तुम लोगों को चाहिये कि जानकर अन्तःकरण से आत्मा में निरन्तर यत्न **[=युक्त]** करने योग्य हो॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिस वायु से योगीजन विविध प्रकार के विज्ञान को प्राप्त होते हैं तथा जिससे सब जगत् वा सब प्राणी जीते हैं उसके अभ्यास से परमात्मा को जान कर मुक्ति-पथ से आनन्द को प्राप्त होओ॥५॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

पर्जन्यवाता वृषभा पृथिव्याः पुरीषाणि जिन्वतमप्यानि।

सत्यश्रुतः कवयो यस्य गीर्भिर्जगतः स्थातर्जगदा कृणुध्वम्॥६॥

पर्जन्यवाता। वृषभा। पृथिव्याः। पुरीषाणि। जिन्वतम्। अप्यानि। सत्यऽश्रुतः। कवयः। यस्य। गीःऽभिः। जगतः। स्थातः। जगत्। आ। कृणुध्वम्॥६॥

पदार्थः-**(पर्जन्यवाता)** पर्जन्यस्थौ वायू **(वृषभा)** वर्षकौ **(पृथिव्याः)** अन्तरिक्षात् **(पुरीषाणि)** उदकानि। **पुरीषमित्युदकनाम।** (निघं०१.१२) **(जिन्वतम्)** गमयतम्प्राप्नुतं वा, **जिन्वतीति गतिकर्मा।** (निघं०२.१४) **(अप्यानि)** अप्सु भवानि **(सत्यश्रुतः)** ये सत्यं शृण्वन्ति **(कवयः)** विद्वांसः **(यस्य)** **(गीर्भिः)** वाग्भिः **(जगतः)** संसारस्य मध्ये **(स्थातः)** यस्तिष्ठति तत्सम्बुद्धौ **(जगत्)** **(आ)** **(कृणुध्वम्)**॥६॥

अन्वयः-हे वृषभा यजमानपुरोहितौ! यथा पर्जन्यवाता पृथिव्या अप्यानि पुरीषाणि प्रापयतस्तथा युवां जिन्वतं सत्यश्रुतः कवयः सन्तः पुरीषाण्याकृणुध्वम्। हे स्थातर्विद्वन्! यस्य गीर्भिजगतो जगद्विजानासि तं त्वं सत्कुर्याः॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्या वायुवज्जगद्धितकराः सत्यस्य श्रोतारः सन्ति त एव जगद्विज्ञायान्यानेतज्ज्ञापयितुं शक्नुवन्ति॥६॥

पदार्थः-हे **(वृषभा)** वृष्टि कराने वाले यजमान और पुरोहितो! जैसे **(पर्जन्यवाता)** मेघस्थ पवन **(पृथिव्याः)** अन्तरिक्ष से **(अप्यानि)** जलों में प्रसिद्ध हुए **(पुरीषाणि)** जलों को पहुँचाते है, वैसे तुम **(जिन्वतम्)** पहुँचो वा पदार्थ को पहुँचाओ और **(सत्यश्रुतः)** जो सत्य को सुनने वाले जन हैं, वे **(कवयः)** विद्वान् होते हुए जलों को **(आ, कृणुध्वम्)** अच्छे प्रकार सिद्ध करें। हे **(स्थातः)** स्थिर होने

वाले विद्वान् जन! **(यस्य)** जिसकी **(गीर्भिः)** वाणियों से **(जगतः)** संसार के बीच **(जगत्)** जगत् को विशेषता से जानते हो, उसका आप सत्कार करें॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य पवन के समान जगत् के हित करनेवाले तथ सत्य के सुनने वाले हैं, वे ही जगत् को जान कर औरों को इस जगत् का ज्ञान दे सकते हैं॥६॥

पुनः कीदृशी स्त्री सुखं दद्यादित्याह॥

फिर कैसी स्त्री सुख देवे इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

पावीरवी कन्या चित्रायुः सरस्वती वीरपत्नी धियं धात्।

ग्नाभिरच्छिद्रं शरणं सजोषा दुराधर्षं गृणते शर्म यंसत्॥७॥

पावीरवी। कन्या। चित्रऽआयुः। सरस्वती। वीरऽपत्नी। धियम्। धात्। ग्नाभिः। अच्छिद्रम्। शरणम्। सऽजोषाः। दुःऽआधर्षम्। गृणते। शर्म। यंसत्॥७॥

पदार्थः-**(पावीरवी)** शोधयित्री **(कन्या)** कमनीया **(चित्रायुः)** चित्रामायुर्यस्याः सा **(सरस्वती)** विज्ञानाढ्या **(वीरपत्नी)** वीरः पतिर्यस्याः सा **(धियम)** शास्त्रोत्थां प्रज्ञामुत्तमं कर्म वा **(धात्)** दधाति **(ग्नाभिः)** सुशिक्षिताभिर्वाग्भिः **(अच्छिद्रम्)** छेदरहितम् **(शरणम्)** आश्रयम् **(सजोषाः)** समानप्रीतिसेविका **(दुराधर्षम्)** दुःखेन धर्षितुं योग्यम् **(गृणते)** स्तावकाय **(शर्म)** गृहं सुखं वा **(यंसत्)** ददाति॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्या! या पावीरवी चित्रायुः सरस्वती वीरपत्नी कन्या ग्नाभिर्धियं धाद्या गृणते मेऽच्छिद्रं या सजोषाः सती गृणते मे शरणं दुराधर्षं शर्म यंसत्सैव मया सदैव सत्कर्त्तव्या॥७॥

भावार्थः-या विदुषी शुभगुणकर्मस्वभावा कन्या स्यात्तामेव वीरपुरुष उद्वहेत्। यस्याः सङ्गप्रीती कदाचिन्न नश्येतां या सर्वदा सुखं दद्यात्सा पत्नी पत्या यथावत् सत्कर्त्तव्या॥७॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(पावीरवी)** शुद्ध करने वाली **(चित्रायुः)** चित्र विचित्र जिसकी आयु वह **(सरस्वती)** विज्ञानयुक्त **(वीरपत्नी)** वीर पति वाली **(कन्या)** मनोहर **(ग्नाभिः)** सुन्दर शिक्षित वाणियों से **(धियम्)** शास्त्रोत्थ प्रज्ञा उत्तम बुद्धि वा कर्म को **(धात्)** धारण करती है वा जो **(गृणते)** स्तुति करने वाले मेरे लिये **(अच्छिद्रम्)** छिद्ररहित व्यवहार को तथा जो **(सजोषाः)** समान प्रीति की सेवने वाली होती हुई स्तुति करने वाले मेरे लिये **(शरणम्)** आश्रय को वा जो **(दुराधर्षम्)** दुःख से धृष्टता के योग्य **(शर्म)** घर वा सुख को **(यंसत्)** देती है, वही मुझसे सदैव सत्कार करने योग्य है॥७॥

भावार्थः-जो विदुषी शुभ गुण, कर्म, स्वभाव वाली कन्या हो, उसी को वीर पुरुष विवाहे, जिसका सङ्ग वा प्रीति कभी नष्ट न हो तथा जो सर्वदा सुख दे, वह पत्नी पति से सर्वदा सत्कार करने योग्य है॥७॥

पुनर्मनुष्यैः कः सेवनीय इत्याह॥

फिर मनुष्यों को किसका सेवन करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

पथस्पथः परिपतिं वचस्या कामेन कृतो अभ्यानळर्कम्।
स नो रासच्छुरुधश्चन्द्राग्रा धियंधियं सीषधाति प्र पूषा॥८॥

पथःऽपथः। परिऽपतिम्। वचस्या। कामेन। कृतः। अभि। आनट्। अर्कम्। सः। नः। रासत्। शुरुधः। चन्द्रऽअग्राः। धियम्ऽधियम्। सीसधाति। प्र। पूषा॥८॥

पदार्थः-(**पथस्पथः**) मार्गान् मार्गान् (**परिपतिम्**) पतिं वर्जयित्वा वा सर्वतः स्वामिनम् (**वचस्या**) वचसि साधूनि (**कामेन**) (**कृतः**) (**अभि**) (**आनट्**) अभिव्याप्नोति (**अर्कम्**) सत्कर्त्तव्यं क्रियामयं व्यवहारम् (**सः**) (**नः**) अस्मभ्यम् (**रासत्**) दद्यात् (**शुरुधः**) सद्यो रोधिकाः (**चन्द्राग्राः**) चन्द्रं सुवर्णमग्रमुत्तमं यासु ताः (**धियंधियम्**) प्रज्ञां प्रज्ञां कर्म कर्म वा (**सीषधाति**) साधयति प्रसाधयति (**प्र**) (**पूषा**)॥८॥

अन्वयः-य पूषा कामेन नः पथस्पथः परिपतिं वचस्या कृतोऽर्कमभ्यानट्। नः शुरुधश्चन्द्राग्रा रासद्धियंधियं प्र सीषधाति स उपदेष्टा न्यायशोऽस्माकं भवेत्॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यो युष्मान् सन्मार्गं दर्शयित्वा दुष्टमार्गान्निवार्य्य सत्याचारं स्वामिनं सेवयित्वा दुष्टपतिं निवर्त्य प्रज्ञां वर्धयति स एव युष्माभिः सत्कर्त्तव्यो भवति॥८॥

पदार्थः-जो (**पूषा**) पुष्टि करने वाला (**कामेन**) कामना से (**पथस्पथः**) मार्गों मार्गों को (**परिपतिम्**) स्वामी को छोड़ के वा सब ओर से स्वामी को और (**वचस्या**) वचन में उत्तम व्यवहारों को (**कृतः**) किये हुए (**अर्कम्**) सत्कार करने योग्य क्रियामय व्यवहार को (**अभि, आनट्**) सब ओर से व्याप्त होता है तथा (**नः**) हम लोगों के लिये (**शुरुधः**) शीघ्र रोकने वाली (**चन्द्राग्राः**) जिनके तीर सुवर्ण उत्तम विद्यमान उनको (**रासत्**) देवे तथा (**धियंधियम्**) प्रज्ञा प्रज्ञा वा कर्म कर्म को (**प्र, सीषधाति**) अच्छे प्रकार सिद्ध करता है (**सः**) वह उपदेशकर्त्ता तथा न्याय करने वाला हम लोगों का हो॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो तुमको सन्मार्ग दिखाकर दुष्ट मार्गों का निवारण कर सत्याचरण करने वाले स्वामी का सेवन करा और दुष्टपति का निवारण कराके बुद्धि को बढ़ाता है, वही तुम लोगों को सत्कार करने योग्य होता है॥८॥

पुनर्मनुष्याः कं सेवेरन्नित्याह॥

फिर मनुष्य किसका सेवन करें, इस विषय को कहते हैं॥

प्रथमभाजं यशसं वयोधां सुपाणिं देवं सुगभस्तिमृभ्वम्।
होता यक्षद्यजतं पस्त्यानामग्निस्त्वष्टारं सुहवं विभावा॥९॥

प्रथमऽभाजम्। यशसम्। वयःऽधाम्। सुऽपाणिम्। देवम्। सुऽगभस्तिम्। ऋभ्वम्। होता। यक्षत्। यजतम्। पस्त्यानाम्। अग्निः। त्वष्टारम्। सुऽहवम्। विभाऽवा॥९॥

पदार्थः-(**प्रथमभाजम्**) यः प्रथमान् भजति सेवते (**यशसम्**) यशः कीर्तिविद्यते यस्य तम् (**वयोधाम्**) यो वयो जीवनं दधाति तम् (**सुपणिम्**) शोभनौ धर्मकर्मकरौ पाणी श्रेष्ठो व्यवहारो वा यस्य तम् (**देवम्**) दातारं विद्वांसम् (**सुगभस्तिम्**) सुष्ठुप्रकाशम् (**ऋभ्वम्**) मेधाविनम् (**होता**) दाता (**यक्षत्**) सङ्गच्छेत् (**यजतम्**) सङ्गन्तव्यम् (**पस्त्यानाम्**) गृहाणाम् (**अग्निः**) पावक इव वर्त्तमानः (**त्वष्टारम्**) छेत्तारम् (**सुहवम्**) सुष्ठ्वाह्वयितुं योग्यम् (**विभावा**) यो विशेषेण भाति॥९॥

अन्वयः-हे मनुष्या! योऽग्निरिव विभावा होता त्वष्टारं सुहवं पस्त्यानां मध्ये यजतमृभ्वं सुगभस्तिं प्रथमभाजं यशसं वयोधां सुपाणिं देवं यक्षत्स एव युष्माभिः सङ्गन्तव्यः॥९॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्या विद्यावृद्धान् पावकवदविद्यादुःखदाहकान् विदुषः सेवन्ते ते गृहे दीप इवोपदेश्यानामात्मनः प्रकाशयितुमर्हन्ति॥९॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**अग्निः**) पावक के समान वर्त्तमान (**विभावा**) विशेषता से प्रकाशमान (**होता**) दानशील जन (**त्वष्टारम्**) छेदन-भेदन करने वाले (**सुहवम्**) बुलाने योग्य वा (**पस्त्यानाम्**) घरों के बीच (**यजतम्**) सङ्ग करने योग्य वा (**ऋभ्वम्**) बुद्धिमान् (**सुगभस्तिम्**) सुन्दर प्रकाशक (**प्रथमभाजम्**) अगलों को सेवते हुए (**यशसम्**) कीर्त्तिमान् तथा (**वयोधाम्**) जीवन धारण करने वाले तथा (**सुपाणिम्**) सुन्दर व्यवहार वाले वा शोभन धर्म कर्मकारी हस्त जिसके उस (**देवम्**) दान करने वाले विद्वान् जन का (**यक्षत्**) सङ्ग करे, वही तुमको सङ्ग करने योग्य है॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य विद्यावृद्ध, अग्नि के समान अविद्याजन्य दुःख के जलाने वाले विद्वानों की सेवा करते हैं, वे घर में दीपक के समान उपदेश देने योग्यों को आत्माओं के प्रकाश करने को योग्य हैं॥९॥

पुनर्मनुष्यैः कः प्रशंसनीयोऽस्तीत्याह॥

फिर मनुष्यों को कौन प्रशंसा करने योग्य है, इस विषय को कहते हैं॥

भुवनस्य पितरं गीर्भिराभी रुद्रं दिवा वर्धया रुद्रमक्तौ।

बृहन्तमृष्वमजरं सुषुम्नमृधग्घुवेम कविनेषितासः॥ १०॥ ६॥

भुवनस्य। पितरम्। गीःऽभिः। आभिः। रुद्रम्। दिवा। वर्धय। रुद्रम्। अक्तौ। बृहन्तम्। ऋष्वम्। अजरम्। सुऽसुम्नम्। ऋधक्। हुवेम। कविना। इषितासः॥ १०॥

पदार्थः-(**भुवनस्य**) संसारस्य (**पितरम्**) पालकम् (**गीर्भिः**) वाग्भिः (**आभिः**) वर्त्तमानाभिः (**रुद्रम्**) दुष्टानां रोदयितारम् (**दिवा**) कामनया विद्यादीप्त्या वा (**वर्धया**) अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**रुद्रम्**) यो रुद्रोगं द्रावयति तम् (**अक्तौ**) रात्रौ (**बृहन्तम्**) वर्धकम् (**ऋष्वम्**) महान्तम् (**अजरम्**) जराव्याधिरहितम् (**सुषुम्नम्**) सुष्ठु सुखयुक्तम् (**ऋधक्**) सत्यम् (**हुवेम**) स्तूयामहि (**कविना**) विदुषा (**इषितासः**) प्रेरिताः सन्तः॥१०॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथा कविनेषितासो वयमाभिर्गीर्भिर्भुवनस्य पितरमक्तौ रुद्रं बृहन्तमृष्वमजरं सुषुम्नं रुद्रमृधग्घुवेम तथैतं रुद्रं त्वं दिवा वर्धया॥१०॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। सर्वे मनुष्या विद्वत्प्रेरिताः सन्तो विद्याविनयव्यवहारे वृद्धा भूत्वा सर्वस्य जगतः पालकं परमात्मानं सत्येन व्यवहारेण प्रशंसन्तु यतोऽविनाशि सुखं प्राप्ताः सर्वे भवेयुः॥१०॥

पदार्थः-हे विद्वन्! जैसे **(कविना)** विद्वान् से **(इषितासः)** प्रेरणा किये हुए हम लोग **(आभिः)** इन वर्त्तमान **(गीर्भिः)** वाणियों से **(भुवनस्य)** संसार के **(पितरम्)** पालने वाले **(अक्तौ)** रात्रि में **(रुद्रम्)** दुष्टों को रुलाने और **(बृहन्तम्)** बढ़ाने वाले **(ऋष्वम्)** बड़े **(अजरम्)** जरावस्थारहित **(सुषुम्नम्)** सुन्दर सुखयुक्त **(रुद्रम्)** रोग भगाने वाले जन की **(ऋधक्)** सत्य **(हुवेम)** स्तुति करें, वैसे इस रुद्र को आप **(दिवा)** कामना वा विद्यादीप्ति से **(वर्धया)** बढ़ाओ॥१०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। सब मनुष्य विद्वान् से प्रेरणा को पाये हुए विद्या और नम्रता के व्यवहार में वृद्ध होकर सब जगत् के पालने वाले परमात्मा की सत्य व्यवहार से प्रशंसा करें, जिससे अविनाशी सुख को सब प्राप्त हों॥१०॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्या क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

आ युवानः कवयो यज्ञियासो मरुतो गन्त गृणतो वरस्याम्।

अचित्रं चिद्धि जिन्वथा वृधन्त इत्था नक्षन्तो नरो अङ्गिरस्वत्॥११॥

आ। युवानः। कवयः। यज्ञियासः। मरुतः। गन्त। गृणतः। वरस्याम्। अचित्रम्। चित्। हि। जिन्वथ। वृधन्तः। इत्था। नक्षन्तः। नरः। अङ्गिरस्वत्॥११॥

पदार्थः-**(आ) (युवानः)** प्राप्तयौवनाः **(कवयः)** सर्वशास्त्रविदः **(यज्ञियासः)** ये सत्यप्रियं व्यवहारं कर्तुमर्हन्ति **(मरुतः)** मनुष्याः **(गन्त)** प्राप्नुवन्तु **(गृणतः)** सत्यप्रशंसकान् **(वरस्याम्)** स्वीकर्त्तव्यां प्रशंसाम् **(अचित्रम्)** अनद्भुतम् **(चित्)** अपि **(हि)** यतः **(जिन्वथा)** प्राप्नुवन्ति। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। **(वृधन्तः)** वर्धमानाः **(इत्था)** अनेन प्रकारेण **(नक्षन्तः)** प्राप्नुवन्तः **(नरः)** नायकाः **(अङ्गिरस्वत्)** प्रशस्ता अङ्गिरसो वायवस्तद्वत्॥११॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ये युवानो यज्ञियासः कवयो मरुतोऽङ्गिरस्वद्वरस्यां गृणत आ गन्ताऽचित्रं वृधन्त इत्था नक्षन्तो नरश्चिज्जिन्वथा ते हि जगद्धितैषिणो भवन्ति॥११॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये मनुष्या विद्वांसो युवानो भूत्वा सत्क्रियां कृत्वा सर्वान् वर्धयन्ति ते वृद्धियुक्ता भवन्ति॥११॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(युवानः)** युवा पुरुष **(यज्ञियासः)** सत्य प्रिय व्यवहार को करने योग्य हैं तथा **(कवयः)** सर्व शास्त्रवेत्ता **(मरुतः)** मनुष्य **(अङ्गिरस्वत्)** प्रशंसित वायुओं के समान **(वरस्याम्)** स्वीकार करने योग्य प्रशंसा को तथा **(गृणतः)** सत्य की प्रशंसा करने वाले विद्वानों को **(आ, गन्त)** प्राप्त

हों तथा **(अचित्रम्)** साधारण **(वृधन्तः)** बढ़ाने और **(इत्था)** इस प्रकार से **(नक्षन्तः)** व्याप्त होते हुए **(नरः)** नायक मनुष्य **(चित्)** ही **(जिन्वथा)** प्राप्त हों वे **(हि)** ही जगत्-हितैषी होते हैं॥११॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो मनुष्य विद्वान् तथा युवावस्था वाले होकर और अच्छी क्रिया कर सब को बढ़ाते हैं, वे वृद्धियुक्त होते हैं॥११॥

पुनर्मनुष्याः किंवत् किं प्राप्नुयुरित्याह॥

फिर मनुष्य किसके तुल्य किसको प्राप्त हों इस विषय को कहते हैं॥

प्र वीराय प्र तवसे तुरायाजा यूथेव पशुरक्षिरस्तम्।
स पिस्पृशति तन्वि श्रुतस्य स्तृभिर्न नाकं वचनस्य विपः॥१२॥

प्र। वीराय। प्र। तवसे। तुराय। अजा। यूथाऽइव। पशुऽरक्षिः। अस्तम्। सः। पिस्पृशति। तन्वि। श्रुतस्य। स्तृऽभिः। न। नाकम्। वचनस्य। विपः॥१२॥

पदार्थः-**(प्र)** **(वीराय)** शौर्यादिगुणोपेताय **(प्र)** **(तवसे)** वर्धकाय **(तुराय)** दुःखहिंसकाय **(अजा)** छागः **(यूथेव)** समूह इव **(पशुरक्षिः)** पशूनां रक्षकः **(अस्तम्)** गृहम् **(सः)** **(पिस्पृशति)** अत्यन्तं स्पृशति **(तन्वि)** शरीरे **(श्रुतस्य)** **(स्तृभिः)** नक्षत्रैः **(न)** इव **(नाकम्)** अविद्यमानदुःखमन्तरिक्षम् **(वचनस्य)** **(विपः)** मेधावी॥१२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो विपः स्तृभिर्नाकं न तन्वि श्रुतस्य वचनस्याऽजा यूथेव पशुरक्षिरस्तमिव वीराय तवसे तुरायास्तं प्र पिस्पृशति स सुखानि प्र पिस्पृशति॥१२॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। मनुष्यो यथाऽजाऽवयो धावित्वा स्वसमुदायं यथा वा सायं समये गोपालो गृहं तथा सकलविद्याश्रवणं प्राप्नोति॥१२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(विपः)** मेधावीजन **(स्तृभिः)** नक्षत्रों से **(नाकम्)** जिसमें दुःख नहीं विद्यमान उस अन्तरिक्ष को **(न)** जैसे **(तन्वि)** शरीर में **(श्रुतस्य)** सुने हुए **(वचनस्य)** वचन का वा **(अजा)** छाग **(यूथेव)** समूहों को जैसे वैसे वा **(पशुरक्षिः)** पशुओं की रक्षा करने वाला **(अस्तम्)** घर को जैसे वैसे **(वीराय)** शूरता आदि गुणों से युक्त **(तवसे)** बढ़ाने वाले **(तुराय)** दुःखनाशक के लिये घर का **(प्र, पिस्पृशति)** अत्यन्त स्पर्श करता **(सः)** वह सुखों का **(प्र)** अच्छे प्रकार अत्यन्त स्पर्श करता है॥१२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। मनुष्य, जैसे भेड़ बकरी दौड़ के अपने झुण्ड को वा जैसे सायङ्काल में गोपाल घर को, वैसे समस्त विद्या के श्रवण को प्राप्त होता है॥१२॥

पुनर्मनुष्यैः किं ज्ञातव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या जानने योग्य है, इस विषय को कहते हैं॥

यो रजांसि विममे पार्थिवानि त्रिश्चिद्विष्णुर्मनवे बाधिताय।

तस्यं ते शर्मन्नुपदुद्यमाने राया मदेम तन्वा३ तना च॥ १३॥

यः। रजांसि। विऽमुमे। पार्थिवानि। त्रिः। चित्। विष्णुः। मनवे। बाधिताय। तस्य। ते। शर्मन्। उपऽदुद्यमाने। राया। मुदेम। तुन्वा। तना। चु॥ १३॥

पदार्थः-(**यः**) (**रजांसि**) लोकान् (**विममे**) रचयति (**पार्थिवानि**) पृथिव्यां भवानि (**त्रिः**) त्रिवारम् (**चित्**) अपि (**विष्णुः**) यो वेवेष्टि स जगदीश्वरः (**मनवे**) मनुष्याय (**बाधिताय**) पीडिताय (**तस्य**) (**ते**) तव (**शर्मन्**) शर्म्मणि गृहे (**उपदद्यमाने**) उपादीयमाने (**राय**) धनेन (**मदेम**) आनन्देम (**तन्वा**) शरीरेण (**तना**) विस्तृतेन (**च**)॥ १३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो विष्णुर्बाधिताय मनवे पार्थिवानि रजांसि त्रिश्चिद् विममे तस्य सम्बन्धे त उपदद्यमाने शर्मन् शर्मणि तना राया तन्वा च सह वयं मदेम॥ १३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यो जगदीश्वरः सर्वं जगन्निर्माय मनुष्याद्युपकारं करोति तस्याश्रयेणैव वयं धनवन्तश्चिरायुषो भवेम॥ १३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यः**) जो (**विष्णुः**) चराचर में प्रवेश होता वह जगदीश्वर (**बाधिताय**) पीड़ित (**मनवे**) मनुष्य के लिये (**पार्थिवानि**) पृथिवी में सिद्ध हुए (**रजांसि**) लोकों को (**त्रिः**) तीन वार (**चित्**) ही (**विममे**) रचता है (**तस्य**) उसके सम्बन्ध में (**ते**) आपके (**उपदद्यमाने**) समीप ग्रहण किये (**शर्मन्**) घर में (**तना**) विस्तृत (**राया**) धन (**तन्वा, च**) और शरीर के साथ हम लोग (**मदेम**) आनन्दित हों॥ १३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो जगदीश्वर सब जगत् का निर्माण करके मनुष्यादिकों का उपकार करता है, उसके आश्रय से ही हम लोग धनवान् और बहुत आयु वाले हों॥ १३॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

तन्नोऽहिर्बुध्न्यो अद्भिरर्कैस्तत्पर्वतस्तत्सविता चनो धात्।
तदोषधीभिरभि रातिषाचो भर्गः पुरंधिर्जिन्वतु प्र राये॥ १४॥

तत्। नुः। अहिः। बुध्न्यः। अत्ऽभिः। अर्कैः। तत्। पर्वतः। तत्। सुविता। चर्नः। धात्। तत्। ओषधीभिः। अभि। रातिऽसाचः। भगः। पुरम्ऽधिः। जिन्वतु। प्र। राये॥ १४॥

पदार्थः-(**तत्**) गृहम् (**नः**) अस्मभ्यम् (**अहिः**) मेघः (**बुध्न्यः**) अन्तरिक्षे भवः (**अद्भिः**) जलादिभिः (**अर्कैः**) सत्कारसाधनैः (**तत्**) (**पर्वतः**) मेघः (**तत्**) (**सविता**) सूर्य्यः (**चनः**) अन्नादिकम् (**धात्**) दधाति (**तत्**) (**ओषधीभिः**) सोमलतादिभिः (**अभि**) आभिमुख्ये (**रातिषाचः**) दानकर्त्तारः (**भगः**) भगवान् (**पुरंधिः**) जगद्धर्त्ता (**जिन्वतु**) प्रापयतु (**प्र**) (**राये**) धनाय॥ १४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथाऽर्कैरद्भिरोषधीभिश्च सह बुध्न्योऽहिर्नो राये यच्चनस्तद्धात् तत्पर्वतो धात् तत्सविता धात् तद्रातिषाचो दधति तत्पुरन्धिर्भगः प्र जिन्वतु तदभि प्र जिन्वतु॥१४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा परमेश्वरेण प्राण्युपकारार्थं जगन्निर्मितं तथाऽस्माद्यूयं पुष्कलानुपकारान् गृह्णीत॥१४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(अर्कैः)** सत्कार साधनों वाले **(अद्भिः)** जलादिकों के **(ओषधीभिः)** सोमलतादि ओषधियों के साथ **(बुध्न्यः)** अन्तरिक्ष में प्रसिद्ध हुआ **(अहिः)** मेघ **(नः)** हम लोगों के लिये **(राये)** धन के लिये **(चनः)** अन्नादिक को वा **(तत्)** उस गृह को **(धात्)** धारण करता वा **(तत्)** उसको **(पर्वतः)** पर्वताकार मेघ धारण करता वा **(तत्)** उसको **(सविता)** सूर्य धारण करता वा **(तत्)** उसको **(रातिषाचः)** दान करने वाले धारण करते उसको **(पुरन्धिः)** जगत् को धारणकर्ता **(भगः)** ऐश्वर्यवान् **(प्र, जिन्वतु)** अच्छे प्रकार प्राप्त करावे उसको **(अभि)** सब ओर से प्राप्त करावे॥१४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे परमेश्वर ने प्राणियों के उपकार के लिये जगत् बनाया वैसे इससे तुम लोग पुष्कल उपकार ग्रहण करो॥१४॥

पुनर्दातृभिः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर दाताओं को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

नू नो रयिं रथ्यं चर्षणिप्रां पुरुवीरं मह ऋतस्य गोपाम्।

क्षयं दाताजरं येन जनान्त्स्पृधो अदेवीरभि च

क्रमाम विश आदेवीरभ्यश्नवाम॥१५॥७॥४॥

नु। नः। रयिम्। रथ्यम्। चर्षणिऽप्राम्। पुरुऽवीरम्। महः। ऋतस्य। गोपाम्। क्षयम्। दात। अजरम्। येन। जनान्। स्पृधः। अदेवीः। अभि। च। क्रमाम। विशः। आऽदेवीः। अभि। अश्नवाम॥१५॥

पदार्थः-**(नू)** सद्यः **(नः)** अस्मभ्यम् **(रयिम्)** श्रियम् **(रथ्यम्)** रथेषु विमानादियानेषु हितम् **(चर्षणिप्राम्)** यश्चर्षणीन् मनुष्यान् प्राति व्याप्नोति तम् **(पुरुवीरम्)** पुरवो बहवो वीरा यस्मात्तम् **(महः)** महतः **(ऋतस्य)** सत्यस्य **(गोपाम्)** रक्षकम् **(क्षयम्)** निवासयितुम् **(दात)** **(अजरम्)** हानिरहितम् **(येन)** **(जनान्)** मनुष्यान् **(स्पृधः)** स्पर्द्धमानान् **(अदेवीः)** विद्यारहिताः **(अभि)** आभिमुख्ये **(च)** **(क्रमाम)** अनुक्रमेण प्राप्नुयाम **(विशः)** प्रजाः **(आदेवीः)** समन्ताद्देदीप्यमाना विदुषीः **(अभि)** **(अश्नवाम)** अभितः प्राप्नुयाम॥१५॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! येन स्पृधो जनानदेवीर्विशो वयमभि क्रमामादेवीर्विशश्च वयमभ्यश्नवाम तं रथ्यं चर्षणिप्रां पुरुवीरं [क्षयमजरं] मह ऋतस्य गोपां रयिं नो नू दात॥१५॥

भावार्थः-त एव दातार उत्तमा ये धर्मेण धनादिकं सञ्चित्य विद्यादिसद्गुणरूपपरोपकाराय प्रददति तदेव धनं येन विदुष्योऽविदुष्यश्च प्रजा अत्यन्तं सुखं प्राप्य मादेरन्निति॥१५॥

अत्र विश्वेदेवगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्यृग्वेदे षष्ठे मण्डले चतुर्थोऽनुवाक एकोनपञ्चाशत्तमं सूक्तं चतुर्थेऽष्टकेऽष्टमेऽध्याये सप्तमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे विद्वानो! **(येन)** जिससे **(स्पृधः)** स्पर्द्धा करते हुए **(जनान्)** मनुष्यों को तथा **(अदेवीः)** विद्यारहित **(विशः)** प्रजाओं को हम लोग **(अभि, क्रमाम)** अनुक्रम से प्राप्त हों वा **(आदेवीः)** सब ओर से निरन्तर प्रकाशमान विदुषी **(च)** और प्रजाओं को हम लोग **(अभि, अश्नवाम)** सब ओर से प्राप्त हों। तथा **(रथ्यम्)** विमान आदि रथों में हितरूप **(चर्षणिप्राम्)** मनुष्यों को व्याप्त होने तथा **(पुरुवीरम्)** बहुत वीरों के कारण **(क्षयम्)** निवास कराने को **(अजरम्)** हानिरहित अर्थात् पुष्ट **(महः)** और बड़े **(ऋतस्य)** सत्य की **(गोपाम्)** रक्षा करने वाले **(रयिम्)** धन को **(नः)** हम लोगों के लिये **(नू)** शीघ्र **(दात)** दीजिये॥१५॥

भावार्थः-वे ही देने वाले उत्तम हैं जो धर्म से धनादिकों को सञ्चित कर विद्यादिसद्गुणरूप परोपकार के लिये देते हैं और वही धन है जिससे विदुषी वा अविदुषी प्रजाएं अत्यन्त सुख पाय हर्षित हों॥१५॥

इस सूक्त में समस्त विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह ऋग्वेद के छठे मण्डल में चतुर्थ अनुवाक, उनचासवाँ सूक्त तथा चतुर्थ अष्टक के आठवें अध्याय में सातवाँ वर्ग पूरा हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ पञ्चदशर्चस्य पञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य ऋजिष्वा ऋषिः। विश्वेदेवा देवताः। १, ७ त्रिष्टुप्। ३, ५, ६, १०, ११, १२ निचृत्त्रिष्टुप्। ४, ८, १३ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २ स्वराट्पङ्क्तिः। ९ पङ्क्तिः। १४ भुरिक्पङ्क्तिः। १५ निचृत्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ विद्वांसः किमर्थं किं कुर्य्युरित्याह॥

अब पन्द्रह ऋचा वाले पचासवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में विद्वान् जन किसलिये क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

हुवे वो देवीमदितिं नमोभिर्मृळीकाय वरुणं मित्रमग्निम्।
अभिक्षदामर्यमणं सुशेवं त्रातॄन् देवान्त्सवितारं भगं च॥१॥

हुवे। वः। देवीम्। अदितिम्। नमःऽभिः। मृळीकाय। वरुणम्। मित्रम्। अग्निम्। अभिऽक्षदाम्। अर्यमणम्। सुऽशेवम्। त्रातॄन्। देवान्। सवितारम्। भगम्। च॥१॥

पदार्थः-(**हुवे**) आह्वयाम्याददे वा (**वः**) युष्माकम् (**देवीम्**) देदीप्यमानां विदुषीम् (**अदितिम्**) अमातरम् (**नमोभिः**) सत्कारान्नादिभिः (**मृळीकाय**) सुखाय (**वरुणम्**) उदानमिवोत्कृष्टम् (**मित्रम्**) प्राण इव प्रियम् (**अग्निम्**) पावकम् (**अभिक्षदाम्**) ये भिक्षां न ददति तेषाम् (**अर्यमणम्**) न्यायकारिणम् (**सुशेवम्**) सुष्ठुसुखम् (**त्रातॄन्**) रक्षकान् (**देवान्**) विदुषः (**सवितारम्**) सत्कर्मसु प्रेरकं राजानम् (**भगम्**) ऐश्वर्य्यम् (**च**)॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथाऽहं नमोभिर्वोऽभिक्षदां मृळीकायाऽदितिं देवीं वरुणं मित्रमग्निमर्यमणं सुशेवं त्रातॄन् देवान् सवितारं भगं च हुवे तथैतानस्मदर्थं यूयमाह्वयत॥१॥

भावार्थः-ये विद्वांसः सुपात्रेभ्यो भिक्षां प्रददति सर्वान् पुरुषार्थिनः कृत्वैतदर्थं विदुषीं मातरं वरुणादींश्चाददति ते जगद्धितैषिणः सन्ति॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे मैं (**नमोभिः**) सत्कार और अन्नादिकों के साथ (**वः**) तुम लोगों के (**अभिक्षदाम्**) जो भिक्षा नहीं देते उनके (**मृळीकाय**) सुख के लिये (**अदितिम्**) जो माता नहीं उस (**देवीम्**) देदीप्यमान विदुषी वा (**वरुणम्**) उदान के समान सर्वोत्कृष्ट वा (**मित्रम्**) प्राण के समान प्यारे वा (**अग्निम्**) अग्नि तथा (**अर्यमणम्**) न्यायकारी और (**सुशेवम्**) सुन्दर सुख वाले जन को वा (**त्रातॄन्**) रक्षा करने वाले व (**देवान्**) विद्वानों व (**सवितारम्**) सत्कर्मों में प्रेरणा देने वाले राजा (**भगम्, च**) और ऐश्वर्य्य को (**हुवे**) बुलाता वा देता हूं, वैसे इनको हमारे लिये तुम बुलाओ वा देओ॥१॥

भावार्थः-जो विद्वान् जन सुपात्रों के लिये भिक्षा देते और सब को पुरुषार्थी कर उनके लिये विदुषी माता वा वरुण आदि को लेते हैं, वे जगत् के हितैषी हैं॥१॥

अथ मनुष्याः सततं किं कुर्य्युरित्याह॥

अब मनुष्य निरन्तर क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

सुज्योतिषः सूर्य दक्षपितॄननागास्त्वे सुमहो वीहि देवान्।
द्विजन्मानो य ऋतसापः सत्याः स्वर्वन्तो यजता अग्निजिह्वाः॥ २॥

सुऽज्योतिषः। सूर्य। दक्षऽपितॄन्। अनागाःऽत्वे। सुऽमहः। वीहि। देवान्। द्विऽजन्मानः। ये। ऋतऽसापः। सत्याः। स्वःऽवन्तः। यजताः। अग्निऽजिह्वाः॥ २॥

पदार्थः-(**सुज्योतिषः**) सुष्ठुविनयप्रकाशकाः (**सूर्य**) सूर्य्य इव वर्त्तमान (**दक्षपितॄन्**) चतुरान् जनकानध्यापकान् वा (**अनागस्त्वे**) अनपराधित्वे (**सुमहः**) सुष्ठु महतो महाशयान् (**वीहि**) प्राप्नुहि कामय वा (**देवान्**) विदुषः (**द्विजन्मानः**) द्वे उत्पत्तिविद्याप्राप्तिरूपे जन्मनी येषान्ते (**ये**) (**ऋतसापः**) य ऋतेन सत्येन सपन्ति सम्बध्नन्ति (**सत्याः**) प्रतिज्ञां कुर्वन्ति (**स्वर्वन्तः**) बहुसुखयुक्ताः (**यजताः**) ये सर्वा विद्याः सङ्गच्छन्ते (**अग्निजिह्वाः**) अग्निरिव सत्यविद्यया सुप्रकाशिता जिह्वा येषान्ते॥ २॥

अन्वयः-हे सूर्य इव विद्वन्! येऽनागास्त्वे द्विजन्मान ऋतसापः सत्याः स्वर्वन्तो यजता अग्निजिह्वाः सुज्योतिषो विद्वांसः स्युस्तान् सुमहो दक्षपितॄन् देवांस्त्वं सततं वीहि, एवं सति सर्वदा कल्याणं निवहेत्॥ २॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्याः सूर्य्यवद्विद्याधर्मप्रकाशकानध्यापकोपदेशकान् विदुषः सुसेवन्ते तेऽपि तादृशा भवन्ति॥ २॥

पदार्थः-हे (**सूर्य**) सूर्य के समान वर्त्तमान (**ये**) जो (**अनागास्त्वे**) अनपराधिपन में (**द्विजन्मानः**) उत्पत्ति और विद्याप्राप्तिरूप जन्म वाले (**ऋतसापः**) सत्य से सम्बन्ध करते वा (**सत्याः**) प्रतिज्ञा करते (**स्वर्वन्तः**) वा बहु सुखयुक्त (**यजताः**) समस्त विद्याओं का सङ्ग करते (**अग्निजिह्वाः**) वा अग्नि के समान सत्य विद्या से सुन्दर प्रकाशित जिह्वाएं जिनकी वा (**सुज्योतिषः**) सुन्दर विनय के प्रकाश करने वाले विद्वान् हों उन (**सुमहः**) श्रेष्ठ महान् महाशय (**दक्षपितॄन्**) चतुर पिता और विद्या पढ़ाने वाले (**देवान्**) विद्वानों को आप निरन्तर (**वीहि**) प्राप्त होओ व उनकी कामना करो, ऐसा होने पर सर्वदा कल्याण प्राप्त होवे॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य सूर्य के समान विद्या और धर्म के प्रकाश करने वाले अध्यापक, उपदेशक वा विद्वानों की सेवा करते हैं, वे भी वैसे ही होते हैं॥ २॥

पुनर्विद्वांसः किवत्किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर विद्वान् जन किसके तुल्य क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

उत द्यावापृथिवी क्षत्रमुरु बृहद्रोदसी शरणं सुषुम्ने।
महस्करथो वरिवो यथा नोऽस्मे क्षयाय धिषणे अनेहः॥ ३॥

उत। द्यावापृथिवी इति। क्षत्रम्। उरु। बृहत्। रोदसी इति। शरणम्। सुसुम्ने। महः। करथः। वरिवः। यथा। नः। अस्मे इति। क्षयाय। धिषणे इति। अनेहः॥ ३॥

पदार्थः-(**उत**) (**द्यावापृथिवी**) विद्युद्भूमी (**क्षत्रम्**) धनं राज्यं क्षत्रियकुलं वा (**उरु**) बहु (**बृहत्**) महत् (**रोदसी**) बहुकार्य्यकरे (**शरणम्**) आश्रयम् (**सुषुम्ने**) सुष्ठु सुखकरे (**महः**) महत् (**करथः**) (**वरिवः**) परिचरणम् (**यथा**) (**नः**) अस्माकम् (**अस्मे**) अस्मासु (**क्षयाय**) निवासाय (**धिषणे**) धारिके (**अनेहः**) अहन्तव्यं सततं रक्षणीयं व्यवहारम्॥३॥

अन्वयः-हे अध्यापकोपदेशकौ! युवां यथा रोदसी सुषुम्ने धिषणे द्यावापृथिवी न उरु बृहच्छरणं क्षत्रं कुरुतस्तथा महो वरिव उताऽनेहोऽस्मे क्षयाय करथः कुर्य्यातम्॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। येऽध्यापकोपदेशकाः सूर्यभूमिवत्सर्वेभ्यो विद्यादानधारणशरणानि प्रयच्छन्ति तथा ये सत्यस्याप्तानां विदुषां च सततं सेवां कुर्वन्ति ते सर्वथा माननीया भवन्ति॥३॥

पदार्थः-हे अध्यापक और उपदेशको! तुम (**यथा**) जैसे (**रोदसी**) बहुत कार्य और (**सुषुम्ने**) सुन्दर सुख करने वाली (**धिषणे**) व्यवहारों को धारण करने वाली (**द्यावापृथिवी**) बिजुली और भूमि (**नः**) हमारे (**उरु**) बहुत (**बृहत्**) महान् (**शरणम्**) आश्रय और (**क्षत्रम्**) धन राज्य वा क्षत्रियकुल को सिद्ध करते हैं, वैसे (**महः**) बड़े (**वरिवः**) सेवन (**उत**) और (**अनेहः**) न नष्ट करने योग्य व्यवहार (**अस्मे**) हम लोगों में (**क्षयाय**) निवास करने के लिये (**करथः**) सिद्ध करो॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो अध्यापन और उपदेश करने वाले जन सूर्य और भूमि के तुल्य सब को विद्यादान, धारण और शरण देते हैं तथा जो सत्य, यथार्थवक्ता और विद्वानों की सेवा करेत हैं, वे सर्वथा माननीय होते हैं॥३॥

पुनर्विद्वांसः कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर विद्वान् कैसे हों इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ नो रुद्रस्य सूनवो नमन्तामद्या हूतासो वसवोऽधृष्टाः।

यदीमर्भे महति वा हितासो बाधे मरुतो अह्वाम देवान्॥४॥

आ। नः। रुद्रस्य। सूनवः। नमन्ताम्। अद्य। हूतासः। वसवः। अधृष्टाः। यत्। ईम्। अर्भे। महति। वा। हितासः। बाधे। मरुतः। अह्वाम। देवान्॥४॥

पदार्थः-(**आ**) (**नः**) अस्मान् (**रुद्रस्य**) दुष्टानां रोदयितुः (**सूनवः**) अपत्यानि (**नमन्ताम्**) (**अद्या**) इदानीम्। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। (**हूतासः**) कृताह्वानाः सन्तः (**वसवः**) आदिकोटिस्था विद्वांसः (**अधृष्टाः**) अप्रगल्भाः (**यत्**) ये (**ईम्**) सर्वतः (**अर्भे**) अल्पवयसि जने (**महति**) (**वा**) (**हितासः**) (**बाधे**) (**मरुतः**) मनुष्याः (**अह्वाम**) इच्छेम (**देवान्**) विदुषः॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यद्ये हूतासोऽधृष्टा वसवो बाधेऽर्भे महति वा हितासो रुद्रस्य सूनवो [मरुतो] नोऽद्याऽऽनमन्तां तान् देवान् वयमीमह्वाम॥४॥

भावार्थः-ये विद्वांसश्चक्रवर्त्तिनि राजनि क्षुद्रे जने वा पक्षपातं विहाय हिताय वर्त्तमाना नम्रा विद्वत्प्रिया मनुष्याः सन्ति तेऽत्र भाग्यशालिनो वर्त्तन्ते॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यत्)** जो **(हूतासः)** बुलाये हुए **(अधृष्टाः)** अप्रगल्भ **(वसवः)** आदि कोटिवाले विद्वान् जन **(बाधे)** विलोड़न के निमित्त **(अर्भे)** थोड़ी अवस्था वाले **(महति, वा)** वा बहुत अवस्था वाले जन में **(हितासः)** हित करने वाले वा **(रुद्रस्य)** दुष्टों के रुलाने वाले के **(सूनवः)** सन्तान **(मरुतः)** मनुष्य **(नः)** हम लोगों को **(अद्या)** आज **(आ, नमन्ताम्)** अच्छे प्रकार नमें उन **(देवान्)** विद्वानों को हम लोग **(ईम्)** सब ओर से **(अह्वाम)** चाहें॥४॥

भावार्थः-जो विद्वान् जन, चक्रवर्ती राजा वा क्षुद्रजन में पक्षपात छोड़ कर हित के लिये वर्त्तमान, नम्र, विद्वानों के प्रिय मनुष्य हैं, वे यहाँ भाग्यशाली होते हैं॥४॥

पुनर्विद्वद्भिः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर विद्वान् जनों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

मिम्यक्ष येषु रोदसी नु देवी सिषक्ति पूषा अभ्यर्धयज्वा।

श्रुत्वा हवं मरुतो यद्ध याथ भूमा रेजन्ते अध्वनि प्रविक्ते॥५॥८॥

मिम्यक्षं। येषुं। रोदसी। नु। देवी। सिसंक्ति। पूषा। अभ्यर्धऽयज्वा। श्रुत्वा। हवम्। मरुतः। यत्। ह। याथ। भूमं। रेजन्ते। अध्वंनि। प्रऽविक्ते॥५॥

पदार्थः-**(मिम्यक्ष)** तूर्णं गच्छ **(येषु)** वाय्वादिषु **(रोदसी)** प्रकाशभूमी **(नु)** **(देवी)** दिव्यगुणे **(सिषक्ति)** सिञ्चति **(पूषा)** पुष्टिकरो मेघः **(अभ्यर्धयज्वा)** आभिमुख्यस्यार्द्धे सङ्गन्ता **(श्रुत्वा)** **(हवम्)** शब्दम् **(मरुतः)** मनुष्याः **(यत्)** ये **(ह)** किल **(याथ)** गच्छथ **(भूमा)** भूमी। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। **(रेजन्ते)** कम्पन्ते गच्छन्ति वा **(अध्वनि)** मार्गे **(प्रविक्ते)** प्रकर्षेण चलितव्ये॥५॥

अन्वयः-हे मरुतो! येषु रोदसी देवी अभ्यर्धयज्वा पूषा सिषक्ति त्वमतो नु मिम्यक्ष यद्ध ह भूमा प्रविक्तेऽध्वनि रेजन्ते तेषां हवं श्रुत्वैतान् यूयं याथ॥५॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! यूयं सूर्यपृथिवीवत्प्रकाशक्षमाशीला भूत्वा सर्वेषां प्रश्नाञ्छ्रुत्वा समाधत्त, यथा भूम्यादिलोकाः स्वस्वमार्गे नियमेन गच्छन्ति तथा नियमेन धर्ममार्गे गच्छत॥५॥

पदार्थः-हे **(मरुतः)** मनुष्यो! **(येषु)** जिन वायु आदि पदार्थों में **(रोदसी)** प्रकाश और भूमि **(देवी)** जो कि दिव्यगुण वाली हैं उनको **(अभ्यर्धयज्वा)** मुख्य के आधे में सङ्गत होने वाला **(पूषा)** पुष्टि करने वाला मेघ **(सिषक्ति)** सींचता है आप इससे **(नु)** शीघ्र **(मिम्यक्ष)** शीघ्र जाइये **(यत्)** जो **(ह)** निश्चय कर **(भूमा)** भूमि में वा **(प्रविक्ते)** प्रकर्षकर चलने योग्य **(अध्वनि)** मार्ग में **(रेजन्ते)** कांपते वा जाते हैं उनके **(हवम्)** शब्द को **(श्रुत्वा)** सुनकर उनको तुम **(याथ)** प्राप्त होओ॥५॥

भावार्थ:-हे विद्वानो! तुम सूर्य्य और पृथिवी के तुल्य प्रकाश और क्षमाशील होकर सबके प्रश्नों को सुनकर समाधान देओ, जैसे भूमि आदि लोक अपने-अपने मार्ग में नियम से जाते हैं, वैसे नियम से धर्म मार्ग में जाओ॥५॥

पुनर्विदुषा किमुपदिश्य किं कारयितव्यमित्याह॥

फिर विद्वानों को क्या उपदेश कर क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

अभि त्यं वीरं गिर्वणसमर्चेन्द्रं ब्रह्मणा जरितर्नवेन।

श्रवदिद्धवमुप च स्तवानो रासद्वाजाँ उप महो गृणानः॥६॥

अभि। त्यम्। वीरम्। गिर्वणसम्। अर्च। इन्द्रम्। ब्रह्मणा। जरितः। नवेन। श्रवत्। इत्। हवम्। उप। च। स्तवानः। रासत्। वाजान्। उप। महः। गृणानः॥६॥

पदार्थः-(**अभि**) (**त्यम्**) तम् (**वीरम्**) वीरवन्तम् (**गिर्वणसम्**) गीर्भिः सेव्यमानम् (**अर्च**) सत्कुरु (**इन्द्रम्**) परमैश्वर्यवन्तम् (**ब्रह्मणा**) धनेनान्नादिना वा (**जरितः**) स्तावक (**नवेन**) नूतनेन (**श्रवत्**) शृणुयात् (**इत्**) एव (**हवम्**) सत्यप्रशंसाम् (**उप**) (**च**) (**स्तवानः**) स्तुवन् (**रासत्**) (**वाजान्**) अन्नादीन् (**उप**) (**महः**) महतः (**गृणानः**) प्रशंसन्॥६॥

अन्वयः-हे जरितो! भवान् महो वाजान् गृणान् उप रासत् स्तवानो हवमुप श्रवदित्। नवेन ब्रह्मणा त्वं गिर्वणसं वीरमिन्द्रं चाभ्यर्च॥६॥

भावार्थ:-हे विद्वंस्त्वं सर्वेषां प्रश्नाञ्छ्रुत्वा समाधानान्नादीन् प्रापयन् धार्मिकान् वीरान् धनाढ्यांश्च सर्वदा शिक्षेथा येनैतेषामैश्वर्यमन्यायमार्गे विनष्टं न स्यात्॥६॥

पदार्थः-हे (**जरितः**) स्तुति करने वाले जन! आप (**महः**) बहुत (**वाजान्**) अन्नादिकों की (**गृणानः**) प्रशंसा करते हुए (**उप, रासत्**) समीप में दें और (**स्तवानः**) स्तुति करते हुए (**हवम्**) सत्य की प्रशंसा को (**उप, श्रवत्**) सुनें (**इत्**) ही तथा (**नवेन**) नवीन (**ब्रह्मणा**) धन वा अन्नादि से (**त्यम्**) उस (**गिर्वणसम्**) वाणियों से सेव्यमान (**वीरम्**) वीरवान् तथा (**इन्द्रम्**) परमैश्वर्यवान् का (**च**) भी (**अभि, अर्च**) सब ओर से सत्कार करो॥६॥

भावार्थ:-हे विद्वन्! आप सब के प्रश्नों को सुनकर समाधान देते हुए और अन्नादि पदार्थों की प्राप्ति कराते हुए धार्मिक वीरों को और धनाढ्यों को सर्वदा शिक्षा देवें, जिससे इनका ऐश्वर्य अन्याय मार्ग में नष्ट न हो॥६॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्युरित्याह॥

फिर विद्वान् जन क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

ओमानमापो मानुषीरमृक्तं धात तोकाय तनयाय शं योः।

यूयं हि ष्ठा भिषजो मातृतमा विश्वस्य स्थातुर्जगतो जनित्रीः॥७॥

ओमानम्। आपः। मानुषीः। अमृक्तम्। धात। तोकाय। तनयाय। शम्। योः। यूयम्। हि। स्थ। भिषजः। मातृऽतमाः। विश्वस्य। स्थातुः। जगतः। जनित्रीः॥७॥

पदार्थः-(**ओमानम्**) रक्षादिकर्त्तारम् (**आपः**) जलानीव (**मानुषीः**) मनुष्यसम्बन्धिनीः प्रजाः (**अमृक्तम्**) अशुद्धं जनम् (**धात**) धरत (**तोकाय**) अल्पवयसे (**तनयाय**) सुकुमाराय सन्तानाय (**शम्**) सुखम् (**योः**) प्रापयति (**यूयम्**) (**हि**) यतः (**स्था**) भवत। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**भिषजः**) सद्वैद्याः (**मातृतमाः**) अतिशयेन मातृवत् कृपालवः (**विश्वस्य**) संसारस्य (**स्थातुः**) स्थावरस्य (**जगतः**) जङ्गमस्य (**जनित्रीः**) जनन्यः॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा मातृतमा जनित्रीस्तोकाय तनयाय शं कुर्वन्ति तथा यूयमाप इवाऽमृक्तमोमानं मानुषीः प्रजा धात स्थातुर्जगतो विश्वस्य हि यूयं भिषजः स्था यथा न्यायेशः सर्वान् सुखं योः प्रापयति तथैवाऽत्र वर्त्तध्वम्॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे अध्यापकोपदेशका यूयमशुद्धं जनं सत्यं ग्राहयित्वा शुद्धं सम्पादयत सर्वस्य जगतो रक्षणेऽविद्यारोगनिवारकः सन्तः सर्वान् मातृवत् पालयत॥७॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**मातृतमाः**) अतीव माता के समान कृपालु तथा (**जनित्रीः**) उत्पन्न करने वाली (**तोकाय**) थोड़ी आयु वाले सन्तान वा (**तनयाय**) सुन्दर कुमार सन्तान के लिये (**शम्**) सुख करती हैं, वैसे (**यूयम्**) तुम (**आपः**) जलों के समान (**अमृक्तम्**) अशुद्ध जन को वा (**ओमानम्**) रक्षा आदि करने वाले को और (**मानुषीः**) मनुष्य सम्बन्धी प्रजाओं को (**धात**) धारण करो तथा (**स्थातुः**) स्थावर वा (**जगतः**) जङ्गम (**विश्वस्य**) संसार के (**हि**) जिस कारण तुम (**भिषजः**) वैद्य (**स्था**) हो, वा जैसे न्यायाधीश सबको सुख (**योः**) पहुंचता है, वैसे यहाँ वर्त्तो॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे अध्यापक और उपदेशको! तुम अपवित्र जन को सत्य ग्रहण कराकर शुद्ध करो तथा सब जगत् की रक्षा करने के निमित्त अविद्यारूपी रोग के निवारण करने वाले होते हुए सब को माता के तुल्य पालो॥७॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर विद्वान् जन क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

आ नो देवः सविता त्रायमाणो हिरण्यपाणिर्यजतो जगम्यात्।
यो दत्रवाँ उषसो न प्रतीकं व्यूर्णुते दाशुषे वार्याणि॥८॥

आ। नः। देवः। सविता। त्रायमाणः। हिरण्यऽपाणिः। यजतः। जगम्यात्। यः। दत्रऽवान्। उषसः। न। प्रतीकम्। विऽऊर्णुते। दाशुषे। वार्याणि॥८॥

पदार्थः-(**आ**) (**नः**) अस्मान् (**देवः**) दिव्यगुणकर्मस्वभावः (**सविता**) सूर्य इव (**त्रायमाणः**) रक्षकः (**हिरण्यपाणिः**) हिरण्यं सुवर्णादिकं पाणौ हस्ते यस्य सः (**यजतः**) सङ्गन्ता (**जगम्यात्**) भृशं

प्राप्नुयात् **(यः)** **(दत्रवान्)** दानवान् **(उषसः)** प्रभातवेलायाः **(न)** इव **(प्रतीकम्)** प्रतीतिकरम् **(व्यूर्णुते)** आच्छादयति **(दाशुषे)** दात्रे **(वार्याणि)** स्वीकर्त्तुमर्हाणि वस्तूनि॥८॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो दत्रवान् हिरण्यपाणिर्यजतो देवः सविता त्रायमाण उषसो न समयाद् दाशुषे प्रतीकं वार्याणि च व्यूर्णुते नोऽस्मानाऽऽजगम्यात्तं वयं सदा सुखयेम॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये दानशीलाः प्रभातवेलावत्सुप्रकाशकाः सर्वेभ्यो विद्याऽभयदाने प्रयच्छन्ति ते जगति वरा गण्यन्ते॥८॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यः)** जो **(दत्रवान्)** दान देने वाला **(हिरण्यपाणिः)** हाथ में सुवर्णादि लिये हुए और **(यजतः)** सङ्ग करने वाला **(देवः)** दिव्य गुण, कर्म, स्वभावयुक्त **(सविता)** सूर्य के तुल्य **(त्रायमाणः)** रक्षक जन **(उषसः)** प्रभातवेला के **(न)** समान समय से **(दाशुषे)** देने वाले के लिये **(प्रतीकम्)** प्रतीति करने वाले पदार्थ और **(वार्याणि)** स्वीकार करने योग्य पदार्थों को **(व्यूर्णुते)** आच्छादित करता है तथा **(नः)** हम लोगों को **(आ, जगम्यात्)** सब ओर से निरन्तर प्राप्त हो, उसको हम लोग सदा सुखी करें॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो दानशील प्रभातवेला के समान सुन्दर प्रकाश करने वाले जन सब के लिये विद्या और अभयदान देते हैं, वे संसार में श्रेष्ठ गिने जाते हैं॥८॥

पुनर्मनुष्यैः कस्मात् किं प्रार्थनीयमित्याह॥

फिर मनुष्यों को किससे क्या प्रार्थना करनी योग्य है, इस विषय को कहते हैं॥

उत त्वं सूनो सहसो नो अद्या देवाँ अस्मिन्नध्वरे ववृत्याः।

स्यामहं ते सदमिद्रातौ तव स्यामग्नेऽवसा सुवीरः॥९॥

उत। त्वम्। सूनो इति। सहसः। नः। अद्य। आ। देवान्। अस्मिन्। अध्वरे। ववृत्याः। स्याम्। अहम्। ते। सदम्। इत्। रातौ। तव। स्याम्। अग्ने। अवसा। सुऽवीरः॥९॥

पदार्थः-**(उत)** **(त्वम्)** **(सूनो)** विद्यासन्तान **(सहसः)** शरीरात्मबलवतो विदुषः **(नः)** अस्मान् **(अद्या)** अस्मिन्दिने। अत्र संहितायामिति दीर्घः। **(आ)** **(देवान्)** विदुषो दिव्यान् भोगान् वा **(अस्मिन्)** **(अध्वरे)** अहिंसनीये विद्याप्राप्तिव्यवहारे **(ववृत्याः)** प्रवर्त्तयेः **(स्याम्)** भवेयम् **(अहम्)** **(ते)** तव **(सदम्)** प्राप्तव्यम् **(इत्)** एव **(रातौ)** दाने **(तव)** **(स्याम्)** **(अग्ने)** पावकवत्प्रकाशात्मन् **(अवसा)** रक्षणादिना **(सुवीरः)** सुभटः॥९॥

अन्वयः-हे सहसः सूनोऽग्ने! त्वमद्याऽस्मिन्नध्वरे नो देवाना ववृत्या येनाहं सदं प्राप्य ते रातौ स्थिरः स्यामुत तवावसा सुवीरोऽहमिदेव स्याम्॥९॥

भावार्थः-हे विद्वन्! यदि भवानिदानीमस्मान् सुखं प्रापयेत्तर्हि वयं विद्यादातारो महावीरा भूत्वा तव सेवां सततं कुर्याम॥९॥

पदार्थः-हे **(सहसः)** शरीर और आत्मा के बल से युक्त विद्वान् के **(सूनो)** विद्यासम्बन्धी पुत्र **(अग्ने)** अग्नि के तुल्य प्रकाशित आत्मा वाले! **(त्वम्)** आप **(अद्य)** आज **(अस्मिन्)** इस **(अध्वरे)** न नष्ट करने योग्य विद्या प्राप्ति के व्यवहार में **(नः)** हम **(देवान्)** विद्वानों को वा दिव्य भोगों को **(आ, ववृत्याः)** अच्छे प्रकार प्रवृत्त कीजिये जिससे **(अहम्)** मैं **(सदम्)** प्राप्त होने योग्य पदार्थ को पाकर **(ते)** आपके **(रातौ)** दान कर्म में स्थिर **(स्याम्)** होऊं **(उत)** और **(तव)** आपके **(अवसा)** रक्षा आदि कर्म से **(सुवीरः)** सुन्दर योद्धाओं वाला मैं **(इत्)** ही **(स्याम्)** होऊं॥९॥

भावार्थः-हे विद्वन्! यदि आप सब हमको सुख पहुंचाइये तो हम विद्या देने वाले महावीर होकर आपकी सेवा को निरन्तर करें॥९॥

पुनर्मनुष्यैः केषां सङ्गेन कीदृशैर्भवितव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को किनके सङ्ग से कैसा होना योग्य है, इस विषय को कहते हैं॥

उत त्या मे हवमा जग्म्यातं नासत्या धीभिर्युवमङ्ग विप्रा।
अत्रिं न महस्तमसोऽमुमुक्तं तूर्वतं नरा दुरितादभीके॥१०॥८॥

उत। त्या। मे। हवम्। आ। जग्म्यातम्। नासत्या। धीभिः। युवम्। अङ्ग। विप्रा। अत्रिम्। न। महः। तमसः। अमुमुक्तम्। तूर्वतम्। नरा। दुःऽइतात्। अभीके॥१०॥

पदार्थः-**(उत)** अपि **(त्या)** तौ **(मे)** मम **(हवम्)** आदातव्यम् **(आ) (जग्म्यातम्)** प्राप्नुयातम् **(नासत्या)** सत्याचारिणौ **(धीभिः)** प्रज्ञाभिः कर्मभिर्वा **(युवम्)** युवाम् **(अङ्ग)** मित्र **(विप्रा)** मेधाविनावध्यापकोपदेशकौ **(अत्रिम्)** सूर्यम् **(न)** इव **(महः)** महतः **(तमसः)** अन्धकारस्य **(अमुमुक्तम्)** मोचयेतम् **(तूर्वतम्)** हिंस्यातम् **(नरा)** नायकौ **(दुरितात्)** अधर्माचरणात् **(अभीके)** समीपे॥१०॥

अन्वयः-हे अङ्ग! नासत्या विप्रा नरा त्या युवं धीभिर्मेऽभीके हवमा जग्म्यातमुत यथा महस्तमसोऽत्रिं न दुरितादमुमुक्तं दुर्गुणांस्तूर्वतम्॥१०॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा सूर्योदयं प्राप्य सर्वे पदार्थास्तमसो मुक्ता जायन्ते तथा धार्मिकं विद्वांसं प्राप्याऽविद्याया जना मुक्ता जायन्ते॥१०॥

पदार्थः-हे **(अङ्ग)** मित्र! **(नासत्या)** सत्य आचरण करने वाले **(विप्रा)** मेधावी अध्यापक और उपदेशक **(नरा)** नायक सब में श्रेष्ठजन **(त्या)** वे **(युवम्)** तुम दोनों **(धीभिः)** उत्तम बुद्धि वा कर्मों से **(मे)** मेरे **(अभीके)** समीप में **(हवम्)** लेने योग्य पदार्थ को **(आ, जग्म्यातम्)** सब ओर से प्राप्त होओ **(उत)** और जैसे **(महः)** महान् **(तमसः)** अन्धकार से **(अत्रिम्)** सूर्य को **(न)** वैसे **(दुरितात्)** अधर्माचरण से **(अमुमुक्तम्)** छुड़ाओ और दुर्गुणों को **(तूर्वतम्)** नष्ट करो॥१०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे सूर्योदय का प्राप्त होकर सब पदार्थ अन्धकार से छूट जाते हैं, वैसे धार्मिक विद्वान् को प्राप्त होकर अविद्या से मनुष्य मुक्त होते हैं॥१०॥

पुनर्मनुष्याः कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर मनुष्य कैसे हों, इस विषय को कहते हैं॥

ते नो॑ रा॒ये द्यु॒मतो॒ वाज॑वतो दा॒तारो॑ भूत नृ॒वत॑ः पु॒रु॒क्षोः।

द॒श॒स्यन्तो॑ दि॒व्याः पार्थि॑वासो॒ गोजा॑ता॒ अप्या॑ मृळता॑ च देवाः॥ ११॥

ते। नः। रा॒यः। द्यु॒ऽमत॑ः। वाज॑ऽवतः। दा॒तार॑ः। भू॒त। नृ॒ऽवत॑ः। पु॒रु॒ऽक्षोः। द॒श॒स्यन्त॑ः। दि॒व्याः। पार्थि॑वासः। गोऽजा॑ताः। अप्या॑ः। मृ॒ळत॑। च॒। दे॒वाः॥ ११॥

पदार्थः-(**ते**) (**नः**) अस्माकम् (**रायः**) (**द्युमतः**) प्रशस्ता द्यौः कामना विद्यते यस्य तस्य (**वाजवतः**) बह्वन्नादियुक्तस्य (**दातारः**) (**भूत**) भवत (**नृवतः**) बहूत्तममनुष्यसहितस्य (**पुरुक्षोः**) बह्वन्नं यस्मिंस्तस्य (**दशस्यन्तः**) प्रयच्छन्तः (**दिव्याः**) (**पार्थिवासः**) पृथिव्यां भवाः (**गोजाताः**) गव्यन्तरिक्षे प्रसिद्धाः (**अप्याः**) अप्सु भवाः (**मृळता**) सुखयत। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**च**) (**देवाः**) विद्वांसः॥ ११॥

अन्वयः-हे देवा! ये यूयं नो द्युमतो वाजवतो नृवतः पुरुक्षोर्दशस्यन्तो रायो दातारो भूत ते च ये दिव्याः पार्थिवासो गोजाता अप्याः सन्ति ते च यूयमस्मान् मृळता॥ ११॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! भवन्तः सततं विद्याधने प्रापणीये प्राप्य सर्वाञ्जनान् सुखयन्तु॥ ११॥

पदार्थः-हे (**देवाः**) विद्वानो! जो तुम (**नः**) हमारे (**द्युमतः**) जिसकी प्रशंसायुक्त कामना विद्यमान उस (**वाजवतः**) बहुत अन्नादि पदार्थयुक्त (**नृवतः**) बहुत उत्तम मनुष्ययुक्त (**पुरुक्षोः**) बहुत अन्न वाले पदार्थ के (**दशस्यन्तः**) देनेवाले और (**रायः**) धन के (**दातारः**) देनेवाले (**भूत**) होओ (**ते**) वे (**च**) और जो (**दिव्याः**) उत्तम (**पार्थिवासः**) पृथिवी के बीच हुए (**गोजाताः**) अन्तरिक्ष में प्रसिद्ध (**अप्याः**) और जलों में प्रसिद्ध हैं, वे भी आप हम लोगों को (**मृळता**) सुखी करो॥ ११॥

भावार्थः-हे विद्वानो! तुम निरन्तर प्राप्त होने योग्य विद्या और धनों को प्राप्त होकर सब मनुष्यों को सुखी करो॥ ११॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्युरित्याह॥

फिर विद्वान् जन क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

ते नो॑ रु॒द्रः सर॑स्वती स॒जोषा॑ मी॒ळ्हुष्म॑न्तो॒ विष्णु॑र्मृळन्तु वा॒युः।

ऋ॒भु॒क्षा वाजो॒ दैव्यो॑ विधा॒ता प॒र्जन्या॒वाता॑ पिप्यता॒मिषं॑ नः॥ १२॥

ते। नः। रु॒द्रः। सर॑स्वती। स॒ऽजोषा॑ः। मी॒ळ्हुष्म॑न्तः। विष्णु॑ः। मृ॒ळ॒न्तु॒। वा॒युः। ऋ॒भु॒क्षाः। वाज॑ः। दैव्य॑ः। वि॒ऽधा॒ता। प॒र्जन्या॒वाता॑। पि॒प्य॒ता॒म्। इष॑म्। नः॥ १२॥

पदार्थः-(**ते**) (**नः**) अस्मान् (**रुद्रः**) दुष्टानां रोदयिता (**सरस्वती**) बहुविज्ञानयुक्ता (**सजोषाः**) समानप्रीतिसेवी (**मीळ्हुष्मन्तः**) मीळ्हुषो बहवो वीर्यसेचकादयो गुणा येषां ते (**विष्णुः**) व्यापको विद्युदग्निः (**मृळन्तु**) (**वायुः**) (**ऋभुक्षाः**) मेधावी (**वाजः**) अन्नम् (**दैव्यः**) देवैः कृतः (**विधाता**) विधानकर्त्ता (**पर्जन्यावाता**) पर्जन्यश्च वातश्च तौ (**पिप्यताम्**) वर्धयेताम् (**इषम्**) अन्नादिकम् (**नः**) अस्मभ्यमस्मान् वा॥१२॥

अन्वयः-हे अध्यापकोपदेशकौ! सरस्वती सजोषाः पजन्यावातेव भवन्तौ यथा ते रुद्रो विष्णुर्वायुर्ऋभुक्षा वाजो दैव्यो विधाता मीळ्हुष्मन्तो नो मृळन्तु तथा न इषं पिप्यताम्॥१२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे विद्वांसो! यथेश्वरेण निर्मिताः पृथिव्यादयः पदार्थाः प्राणिनः सुखयन्ति तथैव यूयं विद्यादिदानेन सर्वान् सुखयत॥१२॥

पदार्थः-हे अध्यापक और उपदेशको! (**सरस्वती**) बहुत विज्ञानयुक्त (**सजोषाः**) समान प्रीति सेवने वाले (**पर्जन्यावाता**) मेघ और वात के समान आप दोनों जैसे (**ते**) वे अर्थात् (**रुद्रः**) दुष्टों को रुलाने वाला (**विष्णुः**) व्यापक अग्नि (**वायुः**) पवन (**ऋभुक्षाः**) मेधावी जन (**वाजः**) अन्न (**दैव्यः**) विद्वानों से किया हुआ व्यवहार और (**विधाता**) विधान करने वाला ये सब (**मीळ्हुष्मन्तः**) बहुत वीर्य सेचक आदि गुणों वाले होते हुए (**नः**) हम लोगों को (**मृळन्तु**) सुखी करें, वैसे (**नः**) हम लोगों के लिये (**इषम्**) अन्नादि पदार्थों को (**पिप्यताम्**) बढ़ाओ॥१२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे विद्वानो! जैसे ईश्वर से निर्मित किये हुए पृथिवी आदि पदार्थ प्राणियों को सुखी करते हैं, वैसे ही तुम विद्यादान से सब को सुखी करो॥१२॥

पुनर्विद्वद्भिः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर विद्वानों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

उत स्य देवः सविता भगो नोऽपां नपादवतु दानु पप्रिः।
त्वष्टा देवेभिर्जनिभिः सजोषा द्यौर्देवेभिः पृथिवी समुद्रैः॥१३॥

उत। स्यः। देवः। सविता। भगः। नः। अपाम्। नपात्। अवतु। दानु। पप्रिः। त्वष्टा। देवेभिः। जनिऽभिः। सऽजोषाः। द्यौः। देवेभिः। पृथिवी। समुद्रैः॥१३॥

पदार्थः-(**उत**) अपि (**स्यः**) सः (**देवः**) देदीप्यमानः (**सविता**) प्रसवकर्त्ता सूर्य्यः (**भगः**) भजनीयः प्राणः (**नः**) अस्मान् (**अपाम्**) जलानाम् (**नपात्**) यो विद्युद्रूपोऽग्निर्न पतति सः (**अवतु**) (**दानु**) दानम् (**पप्रिः**) पूरयन् (**त्वष्टा**) छेदकः (**देवेभिः**) दिव्यगुणैः (**जनिभिः**) जन्मभिर्जनकैर्वा (**सजोषाः**) समानप्रीतिसेवी (**द्यौः**) सूर्य्यः (**देवेभिः**) सूर्यादिभिर्दिव्यैर्वा (**पृथिवी**) भूमिः (**समुद्रैः**) सागरैस्सह॥१३॥

अन्वयः-हे विद्वन्! भवान् यथा स्यो देवः सविता भग उताऽपां नपाद्देवेभिर्जनिभिः सह त्वष्टा सजोषा देवेभिस्सह द्यौः समुद्रैः सह पृथिवी दानु पप्रिरिव नोऽवतु॥१३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथेश्वरेण सृष्टाः सूर्य्यादयः पदार्थाः सर्वमनुष्यादिप्राणिनां कार्य्यसिद्धिनिमित्तानि तथा भवन्तोऽपि सर्वेषां कार्य्यसिद्धिकराः सन्तु॥१३॥

पदार्थः-हे विद्वन्! आप जैसे **(स्यः)** वह **(देवः)** देदीप्यमान **(सविता)** उत्पत्ति करने वाला सूर्य **(भगः)** सेवने योग्य प्राण **(उत)** और **(अपाम्)** जलों के बीच **(नपात्)** न गिरने वाला विद्युत् रूप अग्नि तथा **(देवेभिः)** दिव्य गुणों के और **(जनिभिः)** जन्म वा जन्म देने वालों के साथ **(त्वष्टा)** छिन्न-भिन्न कर्त्ता **(सजोषाः)** समान प्रीति का सेवने वाला **(देवेभिः)** सूर्यादि वा दिव्य पदार्थों के साथ **(द्यौः)** सूर्य **(समुद्रैः)** समुद्रों के साथ **(पृथिवी)** भूमि **(दानु)** दान को **(पप्रिः)** पूर्ण करते हुए **(नः)** हम लोगों की **(अवतु)** रक्षा करे॥१३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे ईश्वर से रचे हुए सूर्यादि पदार्थ सब मनुष्य आदि प्राणियों के कार्यसिद्धि के निमित्त हैं, वैसे आप लोग भी सब की कार्यसिद्धि करने वाले हों॥१३॥

पुनर्मनुष्यैः किमाकाङ्क्षितव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या आकाङ्क्षा करने योग्य है, इस विषय को कहते हैं॥

उत नोऽहिर्बुध्न्यः शृणोत्वज एकपात् पृथिवी समुद्रः।
विश्वेदेवा ऋतावृधो हुवानाः स्तुता मन्त्राः कविशस्ता अवन्तु॥१४॥

उत। नः। अहिः। बुध्न्यः। शृणोतु। अजः। एकऽपात्। पृथिवी। समुद्रः। विश्वे। देवाः। ऋतऽवृधः। हुवानाः। स्तुताः। मन्त्राः। कविऽशस्ताः। अवन्तु॥१४॥

पदार्थः-**(उत)** अपि **(नः)** अस्माकम् **(अहिः)** मेघः **(बुध्न्यः)** बुध्नेऽन्तरिक्षे भवः **(शृणोतु)** **(अजः)** यः कदाचिन्न जायते स ईश्वरः **(एकपात्)** एकः पादो जगति यस्य सः **(पृथिवी)** भूमिः **(समुद्रः)** अन्तरिक्षम् **(विश्वे)** सर्वे **(देवाः)** विद्वांसः **(ऋतावृधः)** सत्यस्य वर्धकाः **(हुवानाः)** आह्वातारः **(स्तुताः)** प्रशंसिताः **(मन्त्राः)** वेदस्य श्रुतयो विचारा वा **(कविशस्ताः)** कविभिर्मेधाविभिः शस्ताः प्रशंसिता अध्यापिता वा **(अवन्तु)**॥१४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! स एकपादजः परमात्मा नस्तां प्रार्थनां शृणोतु यया बुध्न्योऽहिः पृथिवी समुद्र उतर्तावृधो हुवाना विश्वे देवाः कविशस्ताः स्तुता मन्त्रा नोऽवन्तु॥१४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यूयं यो जन्ममरणादिव्यवहाररहितो जगदीश्वरोऽस्ति तत्कृपया पुरुषार्थेन च सर्वेषां पृथिव्यादिपदार्थानां विज्ञानेन स्वोन्नतीः सततं विदधत॥१४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! [वह] **(एकपात्)** जिसका जगत् में एक पाद है **(अजः)** जो कभी नहीं उत्पन्न होता वह परमात्मा **(नः)** हमारी उस प्रार्थना को **(शृणोतु)** सुने जिसने **(बुध्न्यः)** अन्तरिक्ष में होने वाला **(अहिः)** मेघ **(पृथिवी)** भूमि **(समुद्रः)** अन्तरिक्ष **(उत)** और **(ऋतावृधः)** सत्य के बढ़ाने वाला

(हुवानाः) और आह्वान करने वाले तथा **(विश्वे, देवाः)** समस्त विद्वान् **(कविशस्ताः)** कवि मेधावी जनों से प्रशंसित वा पढ़ाये हुए और **(स्तुताः)** प्रशंसित **(मन्त्राः)** वेद की श्रुति वा वेदविचार हम लोगों की **(अवन्तु)** रक्षा करें॥१४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! तुम-जो जन्म-मरणादि व्यवहार से रहित जगदीश्वर है, उसकी कृपा और पुरुषार्थ से तथा सम्पूर्ण पृथिवी आदि पदार्थों के विज्ञान से अपनी उन्नति निरन्तर करो॥१४॥

पुनर्जिज्ञासवः कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर जिज्ञासु जन कैसे हों, इस विषय को कहते हैं॥

एवा नपातो मम तस्य धीभिर्भरद्वाजा अभ्यर्चन्त्यर्कैः।
ग्ना हुतासो वसवोऽधृष्टा विश्वे स्तुतासो भूता यजत्राः॥१५॥१०॥

एव। नपातः। मम। तस्य। धीभिः। भरत्ऽवाजाः। अभि। अर्चन्ति। अर्कैः। ग्नाः। हुतासः। वसवः। अधृष्टाः। विश्वे। स्तुतासः। भूत। यजत्राः॥१५॥

पदार्थः-**(एवा)** अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। **(नपातः)** पातरहिताः **(मम)** **(तस्य)** **(धीभिः)** प्रज्ञाभिः कर्मभिर्वा **(भरद्वाजाः)** धृतविज्ञानाः **(अभि)** **(अर्चन्ति)** सत्कुर्वन्ति **(अर्कैः)** विचारैः **(ग्नाः)** वाचः **(हुतासः)** सत्कारेण हुताः **(वसवः)** ये विद्यादिषु वसन्ति ते **(अधृष्टाः)** धृष्टतारहिता अप्रगल्भाः **(विश्वे)** सर्वे **(स्तुतासः)** प्राप्तप्रशंसाः **(भूता)** भवत। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(यजत्राः)** सङ्गन्तारः॥१५॥

अन्वयः-हे यजत्रा! यथा मम तस्य च धीभिर्भरद्वाजा नपातो हुतासः स्तुतासो विश्वे देवा मम तस्य च धीभिरर्कैश्च ग्ना अभ्यर्चन्ति तथैवाऽधृष्टा वसवो यूयं भूत॥१५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये विद्यार्थिनो विद्यां प्रगल्भतां चेच्छन्ति त आप्तानामीश्वरस्य च गुणकर्मस्वभावान् धृत्वेष्टाम्मतिं विद्यां चाप्नुवन्तीति॥१५॥

अत्र विश्वेदेवगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति पञ्चाशत्तमं सूक्तं पञ्चदशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(यजत्राः)** सङ्ग करने वालो! जैसे **(मम)** मेरी और **(तस्य)** उसकी **(धीभिः)** बुद्धि वा कर्मों से **(भरद्वाजाः)** धारण किया है विज्ञान जिन्होंने वे सज्जन और **(नपातः)** पातरहित **(हुतासः)** सत्कार से ग्रहण किये हुए **(स्तुतासः)** प्रशंसा को प्राप्त **(विश्वे)** सब विद्वान् मेरी और उसकी बुद्धि वा कर्मों से **(अर्कैः)** विचारों से **(ग्नाः)** वाणियों को **(अभि, अर्चन्ति)** सब ओर से सत्कृत करते हैं, वैसे **(एवा)** ही **(अधृष्टाः)** धृष्टतारहित **(वसवः)** विद्यादिकों में बसने वाले तुम **(भूत)** होओ॥१५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो विद्यार्थी विद्या और प्रगल्भता की इच्छा करते हैं, वे यथार्थवक्ता तथा ईश्वर के गुण कर्म और स्वभावों को धारण कर इष्ट मति और विद्या को प्राप्त होते हैं॥१५॥

इस सूक्त में विश्वे देवों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह पचासवां सूक्त और पन्द्रहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ षोडशर्चस्यैकपञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य ऋजिष्वा ऋषिः। विश्वेदेवा देवताः। १, २,३, ५, ७, १०, ११, १२ निचृत्त्रिष्टुप्। ८, त्रिष्टुपछन्दः। धैवतः स्वरः। ४, ६,९ स्वराट्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। १३, १४, निचृदुष्णिक्। १५ उष्णिक् छन्दः। ऋषभः स्वरः। १६ निचृदनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः॥

पुनर्मनुष्यैः किमेष्टव्यमित्याह॥

अब सोलह ऋचावाले इक्यावनवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में फिर मनुष्यों को क्या चाहने योग्य है, इस विषय को कहते हैं॥

उदु त्यच्चक्षुर्महि मित्रयोराँ एति प्रियं वरुणयोरदब्धम्।
ऋतस्य शुचि दर्शतमनीकं रुक्मो न दिव उदिता व्यद्यौत्॥१॥

उत्। ऊँ इति। त्यत्। चक्षुः। महि। मित्रयोः। आ। एति। प्रियम्। वरुणयोः। अदब्धम्। ऋतस्य। शुचि। दर्शतम्। अनीकम्। रुक्मः। न। दिवः। उत्ऽइता। वि। अद्यौत्॥१॥

पदार्थः-(**उत्**) (**उ**) (**त्यत्**) तत् (**चक्षुः**) चष्टेऽनेन तत् (**महि**) महत् (**मित्रयोः**) सुहृदोरध्यापकाऽध्येत्रोर्बाह्याभ्यन्तरस्थयोः प्राणयोर्वा (**आ**) (**एति**) (**प्रियम्**) यत्प्रीणाति तत् (**वरुणयोः**) उदान इव वर्त्तमानयोः (**अदब्धम्**) अहिंसितम् (**ऋतस्य**) सत्यस्य (**शुचि**) पवित्रम् (**दर्शतम्**) द्रष्टव्यम् (**अनीकम्**) सैन्यमिव कार्यसिद्धिप्रापकम् (**रुक्मः**) रोचमानस्सूर्यः (**न**) इव (**दिवः**) विद्युतः सकाशात् (**उदिता**) सूर्य्योदये (**वि**) (**अद्यौत्**) प्रकाशयति॥१॥

अन्वयः-हे अध्यापकोपदेशका! यदि युष्मांस्त्यन्महि वरुणयोः प्रियं मित्रयोरदब्धमृतस्य शुचि दर्शतं दिव उदिता रुक्मो नाऽनीकं महि चक्षुर्व्यद्यौदा उदेति तर्हि भवन्ति उ विद्वांसो भवेयुः॥१॥

भावार्थः-ये मनुष्याः धर्मेण यानं प्राप्तुमिच्छन्ति ते सूर्यप्रकाशवत्प्राप्तविज्ञाना जायन्ते ये सत्यस्य पदार्थस्य विद्यामुन्नयन्ति ते सर्वत्र सत्कृता भवन्ति॥१॥

पदार्थः-हे अध्यापक और उपदेशको! जो तुम लोगों को (**त्यत्**) वह उत्तम (**महि**) बड़ा वस्तु वा (**वरुणयोः**) उदान के समान वर्त्तमान दो सज्जनों का (**प्रियम्**) प्रिय पदार्थ वा (**मित्रयोः**) दो मित्रों का अध्यापक और अध्येताओं का वा शरीर के बाहर और भीतर रहने वाला प्राण वायुओं का (**अदब्धम्**) अविनष्ट व्यवहार वा (**ऋतस्य**) सत्य का (**शुचि**) पवित्र (**दर्शतम्**) देखने योग्य (**दिवः**) बिजुली की उत्तेजना से (**उदिता**) सूर्योदयकाल में (**रुक्मः**) प्रकाशमान सूर्य के (**न**) समान (**अनीकम्**) सेना समूह के समान कार्यसिद्धि का पहुंचाने वाला (**चक्षुः**) जिससे देखते हैं वह (**वि, अद्यौत्**) विशेषता से प्रकाशित होता है (**आ, उत्, एति**) उत्कृष्टता से प्राप्त होता है तो आप लोग (**उ**) तर्क-वितर्क से विद्वान् होओ॥१॥

भावार्थ:-जो मनुष्य धर्म से यान पाने की इच्छा करते हैं, वे सूर्य के प्रकाश के तुल्य विज्ञान को प्राप्त होते हैं, जो सत्य पदार्थ की विद्या की उन्नति करते हैं, वे सर्वत्र सत्कृत होते हैं॥१॥

पुनर्मेधाविनः किं जानीयुरित्याह॥

फिर मेधावी जन क्या जानें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वेद॒ यस्त्रीणि॑ वि॒दथा॑न्येषां दे॒वानां॒ जन्म॑ सनु॒तरा च॒ विप्र॑:।
ऋ॒जु मर्ते॑षु वृ॒जि॒ना च॒ पश्य॑न्न॒भि च॑ष्टे॒ सूरो॑ अ॒र्य एवा॑न्॥२॥

वेद॑। यः। त्रीणि॑। वि॒दथा॑नि। ए॒षा॒म्। दे॒वाना॑म्। जन्म॑। स॒नु॒तः। आ। च॒। विप्र॑:। ऋ॒जु। मर्ते॑षु। वृ॒जि॒ना। च॒। पश्य॑न्। अ॒भि। च॒ष्टे॒। सूर॑:। अ॒र्यः। एवा॑न्॥२॥

पदार्थ:-**(वेद)** जानाति **(यः)** **(त्रीणि)** **(विदथानि)** वेदितुं योग्यानि कर्मोपासनाज्ञानानि **(एषाम्)** **(देवानाम्)** विदुषाम् **(जन्म)** प्रादुर्भावम् **(सनुतः)** सदा **(आ)** **(च)** **(विप्रः)** मेधावी **(ऋजु)** सरलम् **(मर्त्तेषु)** मनुष्येषु **(वृजिना)** बलानि **(च)** **(पश्यन्)** **(अभि)** **(चष्टे)** प्रकाशयति **(सूरः)** सूर्य्य इव **(अर्यः)** स्वामी **(एवान्)** प्राप्तव्यान्॥२॥

अन्वय:-योऽर्यो विप्रः सूर एवानिवैषां देवानां सनुतर्जन्म त्रीणि विदथानि मर्त्तेषु वृजिना ऋजु च पश्यन्नभ्याचष्टे स चैतान् वेद॥२॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्या मनुष्याणां विद्याजन्म जानन्ति ते मनुष्येषु पूर्णं शरीरात्मबलं प्राप्य सर्वान् पदार्थान् वेत्तुमर्हन्ति ये कर्मोपासनाज्ञानानि प्राप्नुवन्ति ते स्वामिनो भवन्ति॥२॥

पदार्थ:-**(यः)** जो **(अर्यः)** स्वामी **(विप्रः)** बुद्धिमान् **(सूरः)** सूर्य के समान **(एवान्)** प्राप्त होने योग्य पदार्थों के तुल्य **(एषाम्)** इन **(देवानाम्)** विद्वानों के **(सनुतः)** सर्वदा **(जन्म)** उत्पन्न होने वाल **(त्रीणि)** तीन **(विदथानि)** जानने के योग्य कर्म, उपासना और ज्ञानों को **(मर्त्तेषु)** मनुष्यों में **(वृजिना)** बलों और **(ऋजु, च)** सरल व्यवहार को **(पश्यन्)** देखता हुआ **(अभि, आ, चष्टे)** सब ओर से प्रकाशित करता है, वह **(च)** भी इन उक्त पदार्थों को **(वेद)** जानता है॥२॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य मनुष्यों के विद्याजन्म को जानते हैं, वे मनुष्यों में पूर्ण शरीर और आत्मा के बल को पाय सब पदार्थों के जानने योग्य होते हैं, जो कर्म उपासना और ज्ञानों को प्राप्त होते हैं, वे स्वामी होते हैं॥२॥

पुनर्मनुष्याः केषां प्रशंसां कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य किन की प्रशंसा करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स्तु॒ष उ॑ वो म॒ह ऋ॒तस्य॑ गो॒पानदि॑तिं मि॒त्रं वरु॑णं सुजा॒तान्।
अ॒र्य॒मणं॒ भग॒मद॑ब्धधीति॒नच्छा॑ वोचे स॒धन्य॑: पाव॒कान्॥३॥

स्तुषे। ऊँ इति। वः। महः। ऋतस्य। गोपान्। अदितिम्। मित्रम्। वरुणम्। सुऽजातान्। अर्यमणम्। भगम्। अदब्धऽधीतीन्। अच्छ। वोचे। सऽधन्यः। पावकान्॥ ३॥

पदार्थः-(**स्तुषे**) स्तौमि (उ) (**वः**) युष्माकम् (**महः**) महतः (**ऋतस्य**) सत्यस्य (**गोपान्**) पालकान् (**अदितिम्**) अखण्डितां विद्यां प्रकृतिं वा (**मित्रम्**) सुहृदम् (**वरुणम्**) ईप्सिततमम् (**सुजातान्**) सुष्ठु प्रसिद्धान् (**अर्यमणम्**) न्यायेशम् (**भगम्**) ऐश्वर्यम् (**अदब्धधीतीन्**) अहिंसिताध्ययनान् (**अच्छा**) अत्र **संहितायामिति** दीर्घः (**वोचे**) वदेयम् (**सधन्यः**) धन्यैः सह वर्त्तमानः (**पावकान्**) पवित्रकरान्॥ ३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यः सधन्योऽहं वो मह ऋतस्य गोपानदितिं मित्रं वरुणमर्यमणं भगमदब्धधीतीन् सुजातान् पावकान् स्तुष उ युष्मान् प्रत्यच्छा वोचे तं मां यूयं सङ्गच्छध्वम्॥ ३॥

भावार्थः-ये मनुष्या विदुषः प्रशंस्य सङ्गत्य सकलान् प्रकृत्यादिपदार्थविद्यादीन् विदित्वाऽन्यानध्यापयन्ति ते सर्वेषां पवित्रकराः सन्ति॥ ३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**सधन्यः**) धन्य प्रशंसितों के साथ वर्त्तमान मैं (**वः**) तुम्हारे (**महः**) बड़े (**ऋतस्य**) सत्य के (**गोपान्**) पालने वालों वा (**अदितिम्**) अखण्डित विद्या वा प्रकृति वा (**मित्रम्**) मित्र वा (**वरुणम्**) इच्छा करने योग्य वा (**अर्यमणम्**) न्यायाधीश वा (**भगम्**) ऐश्वर्य वा (**अदब्धधीतीन्**) अविनष्ट अध्ययन व्यवहार वालों वा (**सुजातान्**) सुन्दर प्रसिद्ध वा (**पावकान्**) पवित्र करने वाले पदार्थों की (**स्तुषे**) प्रशंसा करता हूँ (**उ**) और तुम्हारे प्रति (**अच्छा**) अच्छे प्रकार (**वोचे**) कहूं उस मुझे तुम अच्छे प्रकार प्राप्त होओ॥ ३॥

भावार्थः-जो मनुष्य विद्वानों की प्रशंसा कर वा विद्वानों का सङ्ग कर सकल प्रकृति आदि पदार्थविद्या आदि पदार्थों को जान कर औरों को पढ़ाते हैं, वे सबके पवित्र करने वाले हैं॥ ३॥

पुनर्मनुष्याः कीदृशान् पार्थिवान् मन्येरन्नित्याह॥

फिर मनुष्य कैसे राजजनों को मानें, इस विषय को कहते हैं॥

रिशादसः सत्पतीँरदब्धान् महो राज्ञः सुवसनस्य दातॄन्।
यूनः सुक्षत्रान् क्षयतो दिवो नॄनादित्यान् याम्यदितिं दुवोयु॥ ४॥

रिशादसः। सत्ऽपतीन्। अदब्धान्। महः। राज्ञः। सुऽवसनस्य। दातॄन्। यूनः। सुऽक्षत्रान्। क्षयतः। दिवः। नॄन्। आदित्यान्। यामि। अदितिम्। दुवःऽयु॥ ४॥

पदार्थः-(**रिशादसः**) हिंसकान् नाशकान् (**सत्पतीन्**) सत्यस्य पालकान् (**अदब्धान्**) अहिंसितानहिंसकान् (**महः**) महतः (**राज्ञः**) नृपान् (**सुवसनस्य**) सुष्ठुवासस्य (**दातॄन्**) (**यूनः**) प्राप्तयौवनान् (**सुक्षत्रान्**) उत्तमधनाञ्छ्रेष्ठराज्यान् वा (**क्षयतः**) निवसतः (**दिवः**) कमनीयान् कामयमानान् वा (**नॄन्**) (**आदित्यान्**) कृताष्टचत्वारिंशद्[वर्ष]ब्रह्मचर्येण पूर्णविदुषः (**यामि**) प्राप्नोमि (**अदितिम्**) अखण्डितां नीतिम् (**दुवोयु**) दुवः परिचरणं कामयमानान्॥ ४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथाहं रिशादसः सत्पतीनदब्धान् सुवसनस्य दातॄन् सुक्षत्रानदितिं क्षयतो दिवो नॄनादित्यान् यूनो दुवोयु महो राज्ञो यामि तथेदृशान् यूयमपि प्राप्नुत॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! ये चोरादीनां निष्कासका धर्मात्मनां पालका हिंसादिदोषरहिताः सर्वस्मै सुखेन वासं ददन्तः पूर्णविद्याजितेन्दिया न्यायेन पितृवत्प्रजापालकाः पूर्णयौवना दुर्व्यसनविरहा गुणग्राहिणः स्युस्तानेव यूयं स्वामिनो मन्यध्वं नेतरान् क्षुद्राशयान्॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे मैं **(रिशादसः)** हिंसक वा नाश करने वाले वा **(सत्पतीन्)** सत्य के पालने वाले वा **(अदब्धान्)** विनाश को न प्राप्त हुए उनको वा न हिंसनेवाले वा **(सुवसनस्य)** सुन्दर वास के **(दातॄन्)** देने वाले वा **(सुक्षत्रान्)** उत्तम धन और राज्यों को वा **(अदितिम्)** अखण्डित नीति को **(क्षयतः)** स्थिर होते हुए **(दिवः)** कामना करने योग्य और काम करने वा **(नॄन्)** मनुष्यों वा **(आदित्यान्)** किया है अड़तालीस वर्ष ब्रह्मचर्य्य जिन्होंने उन वा **(यूनः)** जवान मनुष्यों वा **(दुवोयु)** सेवन की कामना करने वालों को तथा **(महः)** महान् **(राज्ञः)** राजाओं को मैं **(यामि)** प्राप्त होता हूं, वैसे ऐसों को तुम भी प्राप्त होओ॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो चोर आदि के निकासने और धर्मात्माओं के पालने वाले, हिंसादि दोषों से रहित, सब के लिये सुख से निवास देनेवाले, पूर्ण विद्यायुक्त, जितेन्द्रिय, न्याय से पिता के समान प्रजा के पालने वाले, पूर्ण यौवनयुक्त, दुष्ट व्यसनों से रहित, गुणग्राही जन हों; उन्हीं को तुम स्वामी मानो और क्षुद्र हृदय वालों को न मानो॥४॥

पित्रादिभिः सन्तानेभ्यः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

पित्रादिकों को सन्तानों के लिये क्या करना योग्य है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

द्यौ३ष्पितः पृथिवि मातरध्रुगग्ने भ्रातर्वसवो मृळता नः।

विश्व आदित्या अदिते सजोषा अस्मभ्यं शर्म बहुलं वि यन्त॥५॥११॥

द्यौः। पितरिति। पृथिवि। मातः। अध्रुक्। अग्ने। भ्रातः। वसवः। मृळत। नः। विश्वे। आदित्याः। अदिते। सऽजोषाः। अस्मभ्यम्। शर्म। बहुलम्। वि। यन्त॥५॥

पदार्थः-**(द्यौः)** सूर्य्य इव **(पितः)** पालक **(पृथिवि)** भूमिरिव **(मातः)** जननि **(अध्रुक्)** द्रोहरहितः **(अग्ने)** पावकवत् प्रकाशात्मन् **(भ्रातः)** बन्धो **(वसवः)** सुखवासप्रदाः **(मृळता)** सुखयत। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(नः)** अस्मान् **(विश्वे)** सर्वे **(आदित्याः)** पूर्णकृतब्रह्मचर्यविद्याः **(अदिते)** अखण्डितज्ञानैश्वर्य्ये **(सजोषाः)** समानप्रीतिसेविका **(अस्मभ्यम्)** **(शर्म)** सुखकारणं गृहम् **(बहुलम्)** बहुपदार्थान्वितम् **(वि)** **(यन्त)** ददति॥५॥

अन्वयः-हे पितर्द्यौरिव! त्वं हे मातः पृथिवि भूमिरिव! त्वं हे अग्ने! अग्निरिव भ्रातस्त्वमध्रुक्सन् वसवो यूयं नो मृळता। हे अदिते! यथा विश्व आदित्या अस्मभ्यं बहुलं शर्म वि यन्त तथा सजोषास्त्वं बहुसुखं विद्यां च देहि॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। येषां सूर्य्यवत्सुशिक्षया पालकः पिता पृथिवीवत् क्षमादिविद्यागुणान्विता माताऽग्निवद्भ्राता वर्त्तते स एव सुखी जायते यथा पूर्णविद्यावन्तो जना अयनविद्यां प्रयच्छन्ति तथैव विद्याग्रहीतारोऽध्यापकान्त्सततं सत्कुर्वन्ति॥५॥

पदार्थः–हे **(पितः)** पालने वाले **(द्यौः)** सूर्य्य के समान! तुम हे **(मातः)** माता **(पृथिवि)** भूमि के समान! तुम हे **(अग्ने)** के समान प्रकाशात्मा **(भ्रातः)** भ्राता! तुम **(अध्रुक्)** द्रोहरहित होते हुए **(वसवः)** सुख वास के देने वाले तुम सब **(नः)** हमको **(मृळता)** सुखी करो हे **(अदिते)** अखण्डिते ज्ञान और ऐश्वर्य्यवती पण्डिता स्त्री! जैसे **(विश्वे)** सब **(आदित्याः)** पूर्ण की है ब्रह्मचर्य्य से विद्या जिन्होंने वे सज्जन **(अस्मभ्यम्)** हम लोगों के लिये **(बहुलम्)** बहुत पदार्थयुक्त **(शर्म)** सुख करने वाले घर को **(वि, यन्त)** देते हैं, वैसे **(सजोषाः)** समान एकसी प्रीति को सेवने वाली तू बहुत सुख और विद्या को दे॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जिनका सूर्य के समान सुन्दर शिक्षा से पालने वाला पिता, पृथिवी के समान सहनशीलता आदि गुण और विद्यायुक्त माता, अग्नि के समान प्रकाशमान भ्राता वर्त्तमान है, वही सुखी होता है तथा जिसे पूर्ण विद्यावान् जन सन्मार्ग को पूंछते [=देते] हैं, वैसे ही विद्या पढ़ने वाले पढ़ाने वालों का निरन्तर सत्कार करते हैं॥५॥

पुनर्मनुष्यैः किं नैषितव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को किसकी इच्छा नहीं करनी चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

मा नो॒ वृका॑य वृ॒क्ये॑ सम॒स्मा अ॑घाय॒ते री॑रधता यजत्राः।

यू॒यं हि ष्ठा र॒थ्यो॑ नस्त॒नूनां॑ यू॒यं दक्ष॑स्य॒ वच॑सो बभू॒व॥६॥

मा। नः॒। वृका॑य। वृ॒क्ये॑। स॒मस्मै॑। अ॒घ॒ऽयते॑। री॒र॒ध॒त॒। य॒ज॒त्राः॒। यू॒यम्। हि। स्थ। र॒थ्यः॑। नः॒। त॒नूना॑म्। यू॒यम्। दक्ष॑स्य। वच॑सः। ब॒भू॒व॥६॥

पदार्थः–**(मा)** निषेधे **(नः)** अस्मान् **(वृकाय)** स्तेनाय **(वृक्ये)** वृकेषु स्तेनेषु भवे व्यवहारे **(समस्मै)** सर्वस्मै **(अघायते)** आत्मनोऽघमिच्छते **(रीरघता)** भृशं हिंसत। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। **(यजत्राः)** सङ्गन्तारः **(यूयम्)** **(हि)** यतः **(स्था)** अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। **(रथ्यः)** रथेषु साधुः **(नः)** अस्माकम् **(तनूनाम्)** शरीराणाम् **(यूयम्)** **(दक्षस्य)** बलयुक्तस्य **(वचसः)** वचनस्य **(बभूव)** भवत॥६॥

अन्वयः-हे यजत्रा! यूयं वृकाय वृक्ये समस्मा अघायते नोऽस्मान् मा रीरधता नस्तनूनां दक्षस्य वचसो रथ्य इव यूयं स्था हि सुखकारका बभूव॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। सर्वैर्मनुष्यैः स्तेनादीनां दुष्टानां व्यवहारः कदाचिन्न कर्त्तव्यः ये च धर्म्मात्मानोऽजातशत्रवः सर्वेषां रक्षका भवेयुस्तान् यूयं सततं सेवध्वम्॥६॥

पदार्थः-हे **(यजत्राः)** सङ्ग करने वालो! **(यूयम्)** तुम **(वृकाय)** चोर के लिये वा **(वृक्ये)** चोरों में उत्पन्न हुए व्यवहार के निमित्त **(अघायते)** अघ की इच्छा करने वाले **(समस्मै)** सर्वजन के लिये **(नः)** हम लोगों को **(मा)** मत **(रीरधता)** नष्ट करो तथा **(नः)** हमारे **(तनूनाम्)** शरीरों के **(दक्षस्य)** बलयुक्त **(वचसः)** वचन का **(रथ्यः)** रथों में साधु उत्तम जो व्यवहार उसके समान **(यूयम्)** तुम **(स्था)** हो **(हि)** जिससे सुख करने वाले **(बभूव)** होओ॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। सब मनुष्यों को चोर आदि दुष्टों का व्यवहार कभी नहीं कर्त्तव्य है और जो धर्मात्मा, अजातशत्रु अर्थात् जिनके शत्रु नहीं हुआ तथा सबकी रक्षा करने वाले हों, उनकी तुम निरन्तर सेवा करो॥६॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

मा व एनो अन्यकृतं भुजेम मा तत्कर्म वसवो यच्चयध्वे।

विश्वस्य हि क्षयथ विश्वदेवाः स्वयं रिपुस्तन्वं रीरिषीष्ट॥७॥

मा। वः। एनः। अन्यऽकृतम्। भुजेम। मा। तत्। कर्म। वसवः। यत्। चयध्वे। विश्वस्य। हि। क्षयथ। विश्वऽदेवाः। स्वयम्। रिपुः। तन्वम्। रिरिषीष्ट॥७॥

पदार्थः-**(मा)** निषेधे **(वः)** युष्माकम् **(एनः)** अपराधम् **(अन्यकृतम्)** अन्येन कृतम् **(भुजेम)** **(मा)** **(तत्)** **(कर्म)** कुर्य्याम **(वसवः)** वासहेतवः **(यत्)** **(चयध्वे)** संचिनुथे **(विश्वस्य)** **(हि)** यतः **(क्षयथ)** निवसथ **(विश्वदेवाः)** सर्वे विद्वांसः **(स्वयम्)** **(रिपुः)** शत्रुः **(तन्वम्)** शरीरम् **(रीरिषीष्ट)** भृशं हिंस्यात्॥७॥

अन्वयः-हे वसवो विश्वदेवा! यूयं विश्वस्य मध्ये यच्चयध्वे यद्धि क्षयथ यथा रिपुस्तन्वं स्वशरीरं रीरिषीष्ट तथा तद्वोऽन्यकृतमेनो वयं मा भुजेम तद्दुष्टं कर्म मा कर्म॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे विद्वांसो! यूयं कस्यापि दुष्टस्यानुकरणं मा कुरुत स्वशरीरघातं मा विधत्ताऽन्यकृतस्याऽपराधस्य सङ्गिनो मा भवत॥७॥

पदार्थः-हे **(वसवः)** वास के हेतु **(विश्वदेवाः)** सब विद्वानो! तुम **(विश्वस्य)** संसार के बीच **(यत्)** जो **(चयध्वे)** इकट्ठा करो और **(हि)** जिससे जिसको **(क्षयथ)** निवास करो जैसे **(रिपुः)** शत्रु **(तन्वम्)** अपने शरीर को **(स्वयम्)** आप **(रीरिषीष्ट)** निरन्तर मारे, वैसे उस **(वः)** तुम्हारे **(अन्यकृतम्)** और से किये हुए **(एनः)** अपराध को हम लोग **(मा)** मत **(भुजेम)** भोगें **(तत्)** उस दुष्ट कर्म को **(मा)** मत **(कर्म)** करें॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे विद्वानो! तुम किसी दुष्ट का अनुकरण मत करो, अपने शरीर को नष्ट मत करो तथा और के किये हुए अपराध के सङ्ग मत होओ॥७॥

मनुष्याः सदैव नम्रा भवेयुरित्याह॥

मनुष्य सदैव नम्र हों, इस विषय को कहते हैं॥

नम॒ इदु॒ग्रं नम॒ आ वि॑वासे॒ नमो॑ दाधार पृथि॒वीमु॒त द्याम्।
नमो॑ दे॒वेभ्यो॒ नम॑ ईश एषां कृ॒तं चि॒देनो॒ नम॒सा वि॑वासे॥८॥

नम॑ः। इत्। उ॒ग्रम्। नम॑ः। आ। वि॒वा॒से॒। नम॑ः। दा॒धा॒र॒। पृ॒थि॒वीम्। उ॒त। द्याम्। नम॑ः। दे॒वेभ्य॑ः। नम॑ः। ई॒शे॒। ए॒षा॒म्। कृ॒तम्। चि॒त्। एन॑ः। नम॑सा। आ। वि॒वा॒से॒॥८॥

पदार्थः-(**नमः**) सत्करणीयम् (**इत्**) (**उग्रम्**) तीव्रम् (**नमः**) अन्नम् (**आ**) (**विवासे**) सेवे (**नमः**) नमस्करणीयम्ब्रह्म (**दाधार**) दधाति (**पृथिवीम्**) भूमिम् (**उत**) अपि (**द्याम्**) सूर्य्यम् (**नमः**) (**देवेभ्यः**) विद्वद्भ्यः (**नमः**) (**ईशे**) ईष्ट इच्छामि (**एषाम्**) (**कृतम्**) (**चित्**) अपि (**एनः**) (**नमसा**) सत्कारेण (**आ**) (**विवासे**)॥८॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यन्नमः पृथिवीमुत द्यां दाधार तदहमुग्रं नम आ विवासे देवेभ्यो नम आ विवासे नमो नम ईशे तेन नमसैषां कृतं चिदेन इदा विवासे॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्या! सर्वैर्नमस्करणीयस्य परमेश्वरस्य सहायेन वयं सत्क्रियां धृत्वा दुष्टतां निवार्य्य विद्वद्भ्यो हितं सम्पाद्य सर्वोपकारं सदैव कुर्य्याम॥८॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**नमः**) नमस्कार करने योग्य ब्रह्म (**पृथिवीम्**) भूमि (**उत**) और (**द्याम्**) सूर्य को (**दाधार**) धारण करते उस (**उग्रम्**) तीव्र (**नमः**) नमस्कार करने योग्य ब्रह्म का मैं (**आ, विवासे**) सेवन करूं (**देवेभ्यः**) विद्वानों के लिये (**नमः**) अन्न की सेवा करूं (**नमः**) सत्कार वा (**नमः**) अन्न की (**ईशे**) इच्छा करूं उस (**नमसा**) सत्कार से (**एषाम्**) इनके (**कृतम्**) किये उत्तम कर्म (**चित्**) और (**एनः**) अनुत्तम कर्म का (**इत्**) ही (**आ, विवासे**) योग्य सेवन करूं॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! सब से नमस्कार करने योग्य परमेश्वर के सहायरूप से हम लोग उत्तम क्रिया को धारण कर और दुष्टता को निवार विद्वानों के लिये हित सिद्ध कर सबका उपकार सदैव करें॥८॥

पुनः सर्वैः के नमस्करणीयाः सन्तीत्याह॥

फिर सब को कौन नमस्कार करने योग्य हैं, इस विषय को कहते हैं॥

ऋ॒तस्य॑ वो र॒थ्य॑ः पू॒तद॑क्षानृ॒तस्य॑ पस्त्य॒सदो॒ अद॑ब्धान्।
ताँ आ नमो॑भिरुरु॒चक्ष॑सो॒ नॄन् विश्वा॑न् व॒ आ न॑मे म॒हो यज॑त्राः॥९॥

ऋ॒तस्य॑। व॒ः। र॒थ्य॑ः। पू॒तऽद॑क्षान्। ऋ॒तस्य॑। प॒स्त्य॒ऽसद॑ः। अद॑ब्धान्। तान्। आ। नम॑ःऽभिः। उ॒रु॒ऽच॒क्ष॑सः। नॄन्। विश्वा॑न्। व॒ः। आ। न॒मे॒। म॒हः। य॒ज॒त्रा॒ः॥९॥

पदार्थः-(**ऋतस्य**) सत्यस्य (**वः**) युष्मान् (**रथ्यः**) रथेषु साधुः (**पूतदक्षान्**) पवित्रबलान् (**ऋतस्य**) यथार्थस्य धर्म्यस्य व्यवहारस्य (**पस्त्यसदः**) ये पस्त्येषु गृहेषु सीदन्ति तान् (**अदब्धान्**) अहिंसितानहिंसकान् वा (**तान्**) (**आ**) (**नमोभिः**) बहुभिस्सत्कारैः (**उरुचक्षसः**) बहुदर्शनान् (**नृन्**) उत्तमान् विदुषः (**विश्वान्**) समग्रान् (**वः**) युष्मान् (**आ**) (**नमे**) समन्तान्नमामि (**महः**) महतो महाशयान् (**यजत्रा**) सद्व्यवहारं सङ्गच्छमानाः॥९॥

अन्वयः-हे यजत्रा! रथ्योऽहमृतस्य पूतदक्षानृतस्य पस्त्यसदोऽदब्धानुरुचक्षसो विश्वान् महो नॄन् व आ नमे येऽस्मान् सत्यं बोधयन्ति तान् वो नमोभिर्वयं सततमा सत्कुर्याम॥९॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यूयं सर्वोत्कृष्टविद्यान् धर्मिष्ठान् परोपकारिणो जनानेव सदा नमतैभ्यो विनयमधिगच्छत॥९॥

पदार्थः-हे (**यजत्राः**) अच्छे व्यवहार का सङ्ग करते हुए सज्जनो! (**रथ्यः**) रथों में उत्तम व्यवहार वर्त्तने वाला मैं (**ऋतस्य**) सत्य के (**पूतदक्षान्**) पवित्र बलों वा (**ऋतस्य**) यथार्थ धर्मयुक्त व्यवहार के (**पस्त्यसदः**) जो घरों में स्थिर होते उन (**अदब्धान्**) अविनष्ट कार्य्यों वा नष्ट न करने वाले पदार्थों वा (**उरुचक्षसः**) बहुत दर्शनों वा (**विश्वान्**) समग्र (**महः**) महाशय (**नृन्**) उत्तम विद्वान् (**वः**) आप लोगों को (**आ, नमे**) अच्छे प्रकार नमस्कार करता हूँ जो हम लोगों को सत्य बोध कराते हैं (**तान्**) उन (**वः**) आप लोगों का (**नमोभिः**) बहुत सत्कारों से हम लोग निरन्तर (**आ**) अच्छे प्रकार सत्कार करें॥९॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! तुम सब से उत्कृष्ट विद्या वाले, धर्मिष्ठ, परोपकारी जनों ही को सदा नमो, तथा इन से विनय (नम्रता) को प्राप्त होओ॥९॥

पुनः के सत्कर्त्तव्या इत्याह॥

फिर कौन सत्कार करने योग्य हैं, इस विषय को कहते हैं॥

ते हि श्रेष्ठवर्चसस्त उ नस्तिरो विश्वानि दुरिता नयन्ति।

सुक्षत्रासो वरुणो मित्रो अग्निर्ऋतधीतयो वक्मराजसत्याः॥१०॥१२॥

ते। हि। श्रेष्ठऽवर्चसः। ते। ऊँ इति। नः। तिरः। विश्वानि। दुःऽइता। नयन्ति। सुऽक्षत्रासः। वरुणः। मित्रः। अग्निः। ऋतऽधीतयः। वक्मराजऽसत्याः॥१०॥

पदार्थः-(**ते**) (**हि**) यतः (**श्रेष्ठवर्चसः**) श्रेष्ठं वर्चोऽध्ययनं येषान्ते (**ते**) तव (**उ**) (**नः**) अस्माकम् (**तिरः**) तिरस्करणे (**विश्वानि**) सर्वाणि (**दुरिता**) दुष्टाचरणानि (**नयन्ति**) (**सुक्षत्रासः**) उत्तमराज्यधनाः (**वरुणः**) श्रेष्ठः (**मित्रः**) सुहृत् (**अग्निः**) पावक इव शुद्धान्तःकरणः (**ऋतधीतयः**) सत्यधारकाः (**वक्मराजसत्याः**) वक्मेषु वक्तृषु राजसु सत्यप्रतिपादकाः॥१०॥

अन्वयः-हे मनुष्या! हि यतस्ते श्रेष्ठवर्चसः सुक्षत्रासो वरुणो मित्रोऽग्निश्चेव वर्त्तमाना ऋतधीतयो वक्मराजसत्या नो विश्वानि दुरिता तिरो नयन्ति तस्मादु ते माननीयाः सन्ति॥१०॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यस्माद्विद्वांसो धर्मात्मानो निष्कपटत्वेनाऽन्येषां हितसाधका विद्यादानोपदेशद्वारा सर्वान् दुष्टाचारान्निवार्य सत्याचारे प्रवर्त्तकाः सन्ति तस्मादेव सत्कर्त्तव्या वर्त्तन्ते॥१०॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(हि)** जिससे **(ते)** वे **(श्रेष्ठवर्चसः)** श्रेष्ठ पढ़ने वाले **(सुक्षत्रासः)** उत्तम राज्य वा धनयुक्त **(वरुणः)** श्रेष्ठ जन **(मित्रः)** मित्र **(अग्निः)** अग्नि के समान शुद्धान्तःकरण पुरुष, इनके समान वर्त्तमान **(ऋतधीतयः)** सत्य के धारण करने वाले **(वक्मराजसत्याः)** कहने वाले राजाओं में सत्य के प्रतिपादन करने वाले सज्जन **(नः)** हम लोगों के **(विश्वानि)** समस्त **(दुरिता)** दुष्टाचरणों को **(तिरः)** तिरस्कार को **(नयन्ति)** पहुंचाते हैं उस कारण से **(उ)** ही **(ते)** वे मान करने योग्य हैं॥१०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जिससे विद्वान् धर्मात्मा जन निष्कपटता से औरों के हित साधने वाले, विद्यादान और उपदेश द्वारा सब दुष्ट आचरणों को निवार के सत्य आचरण में प्रवृत्त करने वाले हैं, इसी से सत्कार करने योग्य हैं॥१०॥

पुनः किंवत् के माननीयाः सन्तीत्याह॥

फिर किसके तुल्य कौन मानने योग्य हैं, इस विषय को कहते हैं॥

ते न इन्द्रः पृथिवी क्षाम वर्धन् पूषा भगो अदितिः पञ्च जनाः।
सुशर्माणः स्ववसः सुनीथा भवन्तु नः सुत्रात्रासः सुगोपाः॥११॥

ते। नः। इन्द्रः। पृथिवी। क्षाम। वर्धन्। पूषा। भगः। अदितिः। पञ्च। जनाः। सुऽशर्माणः। सुऽअवसः। सुऽनीथाः। भवन्तु। नः। सुऽत्रात्रासः। सुऽगोपाः॥११॥

पदार्थः-**(ते)** **(नः)** अस्मान् **(इन्द्रः)** विद्युत् **(पृथिवी)** अन्तरिक्षम् **(क्षाम)** भूमिः **(वर्धन्)** वर्धयन्तु **(पूषा)** वायुः **(भगः)** भगवान् **(अदितिः)** जननी **(पञ्च, जनाः)** पञ्च प्राणा इवोत्तममनुष्याः। **पञ्चजना इति मनुष्यनाम।** (निघं०२.३) **(सुशर्माणः)** प्रशंसितगृहाः **(स्ववसः)** शोभनमवो येषान्ते **(सुनीथाः)** शोभनो नीथो न्यायो येषान्ते **(भवन्तु)** **(नः)** अस्माकम् **(सुत्रात्रासः)** सुष्ठुत्रातारः **(सुगोपाः)** सुष्ठु गवां धेनूनां पृथिव्यादीनां वा रक्षकाः॥११॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यतस्त इन्द्रः पृथिवी क्षाम पूषा भगोऽदितिः सुशर्माणः स्ववसः सुनीथाः पञ्च जनाः सन्ति ततो नो वर्धन्नः सुगोपाः सुत्रात्रासो भवन्तु॥११॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यतो विद्वांसो विद्युद्भूम्यन्तरिक्षप्राणैश्वर्य्यमातृवत् सर्वेषां वर्धकाः पालकाः सन्ति तस्मादेव पूज्या भवन्ति॥११॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जिससे **(ते)** वे **(इन्द्रः)** बिजुली **(पृथिवी)** अन्तरिक्ष **(क्षाम)** भूमि **(पूषा)** वायु **(भगः)** ऐश्वर्यवान् जन और **(अदितिः)** जन्म देने वाली माता के समान **(सुशर्माणः)** प्रशंसित घरों वाले **(स्ववसः)** जिन की सुन्दर रक्षा और **(सुनीथाः)** न्याय विद्यमान वे **(पञ्च, जनाः)** पांच प्राणों के समान उत्तम मनुष्य हैं, उससे **(नः)** हमको **(वर्धन्)** बढ़ावें और **(नः)** हमारे **(सुगोपाः)** सुन्दर गौ वा पृथिव्यादिकों के रक्षा करने वाले तथा **(सुत्रात्रासः)** उत्तमता से पालना करने वाले **(भवन्तु)** हों॥११॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जिससे विद्वान् जन बिजुली, भूमि, अन्तरिक्ष, प्राण, ऐश्वर्य और माता के तुल्य सब के बढ़ाने पालने वाले हैं, इसी से पूज्य होते हैं॥११॥

पुन: के धन्यवादार्हा: सन्तीत्याह॥

फिर कौन धन्यवाद के योग्य हैं, इस विषय को कहते हैं॥

नू स॒द्मानं॑ दि॒व्यं नंशि॑ देवा॒ भार॑द्वाज: सुम॒तिं या॑ति होता॑।
आ॒सा॒नेभि॒र्यज॑मानो मि॒येधै॑र्दे॒वानां॒ जन्म॑ वसू॒युर्व॑वन्द॥१२॥

नु। स॒द्मान॑म्। दि॒व्यम्। नंशि॑। दे॒वा॒:। भार॑त्ऽवाज:। सु॒ऽम॒तिम्। या॒ति॒। होता॑। आ॒सा॒नेभि॑:। यज॑मान:। मि॒येधै॑:। दे॒वाना॑म्। जन्म॑। व॒सु॒ऽयु:। व॒व॒न्द॒॥१२॥

पदार्थ:-(**नू**) सद्य:। अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घ:। (**सद्मानम्**) यस्मिन् सीदति तम् (**दिव्यम्**) कमनीयम् (**नंशि**) व्याप्नोति (**देवा:**) विद्वांस: (**भारद्वाज:**) धृतविज्ञान: (**सुमतिम्**) शोभनां प्रज्ञाम् (**याति**) प्राप्नोति (**होता**) दाता (**आसानेभि:**) आसीनैर्ऋत्विग्भिस्सह (**यजमान:**) यज्ञकर्ता (**मियेधै:**) प्रेरकै: (**देवानाम्**) विदुषाम् (**जन्म**) प्रादुर्भावम् (**वसूयु:**) वसूनि द्रव्याणि कामयमान: (**ववन्द**) वन्दति प्रशंसति॥१२॥

अन्वय:-हे देवा विद्वांसो! यो भारद्वाजो होता सुमतिं याति स नू दिव्यं सद्मानं नंशि। यो वसूयुर्यजमानो मियेधैरासानेभिस्सह देवानां जन्म ववन्द तं यूयं सत्कुरुत॥१२॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! ये राज्ञो विद्याजन्मी प्रशंसन्ति ते शुद्धं सुखमाप्नुवन्ति यथा बहुभिर्विद्वद्भिस्सह यजमानो यज्ञमलङ्कृत्य सर्वं जगदुपकरोति तथैव विद्वांसोऽध्यापनोपदेशाभ्यां सर्वान् प्रज्ञान् कृत्वा प्रशंसा यान्ति॥१२॥

पदार्थ:-हे (**देवा**) विद्वानो! जो (**भारद्वाज:**) विज्ञान को धारण किये (**होता**) देने वाला (**सुमतिम्**) शोभन बुद्धि को (**याति**) प्राप्त होता है वह (**नू**) शीघ्र (**दिव्यम्**) मनोहर (**सद्मानम्**) जिसमें स्थिर होता उस घर को (**नंशि**) व्याप्त होता है। जो (**वसूयु:**) द्रव्यों की कामना करने और (**यजमान:**) यज्ञ करने वाला (**मियेधै:**) प्रेरणा देनेवाले (**आसानेभि:**) बैठे हुए ऋत्विजों के साथ (**देवानाम्**) विद्वानों के (**जन्म**) उत्पन्न होने की (**ववन्द**) प्रशंसा करता है, उसका तुम सत्कार करो॥१२॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जो राजा के विद्या और जन्म की प्रशंसा करते वे शुद्ध सुख को प्राप्त होते हैं, जैसे बहुत विद्वानों के साथ यज्ञ करने वाला यज्ञ को सुभूषित कर समस्त जगत् का उपकार करता है, वैसे ही विद्वान् जन पढ़ाने और उपदेशों से सब को प्राज्ञ (उत्तम ज्ञाता) कर प्रशंसा को प्राप्त होते हैं॥१२॥

पुन: के दूरीकरणीया इत्याह॥

फिर कौन दूर करने योग्य हैं, इस विषय को कहते हैं॥

अप त्यं वृजिनं रिपुं स्तेनमग्ने दुराध्यम्।

दविष्ठमस्य सत्पते कृधी सुगम्॥ १३॥

अप। त्यम्। वृजिनम्। रिपुम्। स्तेनम्। अग्ने। दुःऽआध्यम्। दविष्ठम्। अस्य। सत्ऽपते। कृधि। सुऽगम्॥ १३॥

पदार्थः-(**अप**) दूरीकरणे (**त्यम्**) तम् (**वृजिनम्**) वर्जनीयम् (**रिपुम्**) विद्याशत्रुम् (**स्तेनम्**) चोरम् (**अग्ने**) विद्वन् (**दुराध्यम्**) दुःखेन वशीकर्तुम् योग्यम् (**दविष्ठम्**) अतिशयेन दूरम् (**अस्य**) (**सत्पते**) सत्यस्य पालक (**कृधी**) कुरु। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**सुगम्**) सुष्ठु गच्छन्ति यस्मिँस्तम्॥ १३॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्यं दविष्ठं वृजिनं दुराध्यं रिपुं स्तेनं सुगं कृधी। हे सत्पते! त्वमस्याऽप नयनं कृधी॥ १३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यूयं विद्यामभ्यस्य शरीरात्मबलयुक्ताः सन्तो दुस्साध्यानपि शत्रून् सुसाध्यान् कुरुत यतस्ते दूरस्था एव भयेन सद्धर्मानुष्ठाना भवेयुः॥ १३॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) विद्वन्! (**त्यम्**) उस (**दविष्ठम्**) अतीव दूर (**वृजिनम्**) त्यागने (**दुराध्यम्**) वा दुःख से वश में करने योग्य (**रिपुम्**) विद्याशत्रु (**स्तेनम्**) चोर को (**सुगम्**) सुगम (**कृधी**) करो, हे (**सत्पते**) सत्य के पालने वाले! आप (**अस्य**) इसका (**अप**) दूरीकरण करो॥ १३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! तुम विद्या का अभ्यास कर शरीर और आत्मा के बल से युक्त होते हुए दुःसाध्य भी शत्रुओं को सुसाध्य अर्थात् उत्तमता से सूधे करो, जिससे वे दूर स्थित ही भय से सद्धर्म के अनुष्ठान करने वाले हों॥ १३॥

पुनः केन सह मित्रता कृत्वा के निवारणीया इत्याह॥

फिर किससे मित्रता कर कौन दूर करने योग्य हैं, इस विषय को कहते हैं॥

ग्रावाणः सोम नो हि कं सखित्वनाय वावशुः।

जही न्यत्रिणं पणिं वृको हि षः॥ १४॥

ग्रावाणः। सोम। नः। हि। कम्। सखिऽत्वनाय। वावशुः। जहि। नि। अत्रिणम्। पणिम्। वृकः। हि। सः॥ १४॥

पदार्थः-(**ग्रावाणः**) मेघा इव (**सोम**) प्रेरक (**नः**) अस्मान् (**हि**) यतः (**कम्**) सुखम् (**सखित्वनाय**) सख्युर्भावाय (**वावशुः**) कामयन्ते (**जही**) अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**नि**) (**अत्रिणम्**) परस्वापहारकम् (**पणिम्**) व्यवहर्त्तारम् (**वृकः**) स्तेनः (**हि**) खलु (**सः**)॥ १४॥

अन्वयः-हे सोम! ये ग्रावाण इव सखित्वनाय नो हि वावशुस्ते कमाप्नुयुर्योऽत्रिणं पणिं सम्बध्नाति स हि वृकोऽस्तीत्यनेन त्वं नि जही॥ १४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यदि धर्मात्मानो विद्वांसो धर्मिष्ठैर्विद्वद्भिः सह मित्रत्वं रक्षन्ति तर्हि ते सततं सुखं प्राप्य मेघवत् सर्वान् वर्धयित्वा दुष्टाचारान् कितवादीन् सद्यो घ्नन्ति॥१४॥

पदार्थः-हे **(सोम)** प्रेरणा देने वाले! जो **(ग्रावाणः)** मेघों के समान **(सखित्वनाय)** मित्रपन के लिये **(नः)** हम लोगों को **(हि)** ही **(वावशुः)** चाहते हैं, वे **(कम्)** सुख को प्राप्त हों जो **(अत्रिणम्)** दूसरे का सर्वस्व हरने वाला **(पणिम्)** व्यवहारकर्त्ता का संबन्ध करता है **(सः, हि)** वही **(वृकः)** चोर है, इस हेतु से इसे आप **(नि, जही)** निरन्तर मारो॥१४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। यदि धर्मात्मा विद्वान् जन धर्मिष्ठ विद्वानों के साथ मित्रता रखते हैं तो वे निरन्तर सुख को प्राप्त होकर मेघ के समान सबको बढ़ाके दुष्ट आचरण करने वाले छलियों को शीघ्र मारते हैं॥१४॥

केऽत्राऽऽनन्ददाः सन्तीत्याह॥

कौन इस संसार में आनन्द के देनेवाले हैं, इस विषय को कहते हैं॥

यूयं हि ष्ठा सुदानव इन्द्रज्येष्ठा अभिद्यवः।

कर्ता नो अध्वन्ना सुगं गोपा अमा॥१५॥

यूयम्। हि। स्थ। सुऽदानवः। इन्द्रऽज्येष्ठाः। अभिऽद्यवः। कर्त। नः। अध्वन्। आ। सुऽगम्। गोपाः। अमा॥१५॥

पदार्थः-**(यूयम्)** **(हि)** **(स्था)** तिष्ठत। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(सुदानवः)** उत्तमगुणदानाः **(इन्द्रज्येष्ठाः)** सूर्य्यो ज्येष्ठो महान् येषां लोकानां तद्वद्वर्त्तमानाः **(अभिद्यवः)** आभ्यान्तरे कामयमानाः प्रकाशवन्तः **(कर्त्ता)** कुरुत। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(नः)** अस्मान् **(अध्वन्)** अध्वनि **(आ)** **(सुगम्)** सुष्ठु गच्छेयुर्यस्मिंस्तत् **(गोपाः)** रक्षकाः **(अमा)** गृहम्। **अमेति गृहनाम** (निघं०३.४)॥१५॥

अन्वयः-हे सुदानवो विद्वांस इन्द्रज्येष्ठा इवाऽभिद्यवो गोपा अध्वन्न: सुगममाऽऽकर्त्ता तत्र हि यूयं स्था॥१५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्या दुर्गमान् मार्गान् सुगमान् कुर्वन्ति उत्तमानि गृहाणि निर्माय स्वयमन्याँश्च तत्र निवासयन्ति त एव जगति सुखकरा भवन्ति॥१५॥

पदार्थः-हे **(सुदानवः)** उत्तम गुणों के देने वाले विद्वानों! **(इन्द्रज्येष्ठाः)** सूर्यलोक महान् ज्येष्ठ जिन लोकों का उनके समान वर्त्तमान **(अभिद्यवः)** पदार्थज्ञान के भीतर प्रकाशमान **(गोपाः)** रक्षा करने वाले **(अध्वन्)** मार्ग में **(नः)** हम लोगों को तथा **(सुगम्)** सुन्दरता से जिसमें जाते **(अमा)** ऐसे घर को **(आ, कर्त्ता)** प्रकट करो उस **(हि)** ही घर में **(यूयम्)** तम **(स्था)** स्थित होओ॥१५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य दुर्गम मार्गों को सुगम करते हैं और उत्तम घरों को बनाकर आप तथा औरों को निवास करते कराते हैं, वे ही जगत् में सुख करने वाले होते हैं॥१५॥

पुनः कीदृशा मार्गा निर्मातव्या इत्याह॥

फिर कैसे मार्ग सिद्ध करने चाहियें, इस विषय को कहते हैं॥

अपि॒ पन्था॑मगन्महि स्वस्ति॒गाम॑ने॒हस॑म्।

येन॒ विश्वा॒: परि॒ द्विषो॑ वृ॒णक्ति॑ वि॒न्दते॒ वसु॑॥१६॥१३॥

अपि॑। पन्था॑म्। अ॒ग॒न्म॒हि॒। स्व॒स्ति॒ऽगाम्। अ॒नेहस॑म्। येन॑। विश्वा॑:। परि॑। द्विष॑:। वृ॒णक्ति॑। वि॒न्दते॑। वसु॑॥१६॥

पदार्थः-(**अपि**) (**पन्थाम्**) मार्गम् (**अगन्महि**) गच्छेम (**स्वस्तिगाम्**) सुखं गच्छन्ति यस्मिँस्तम् (**अनेहसम्**) अहन्तव्यम् (**येन**) (**विश्वाः**) सर्वाः (**परि**) (**द्विषः**) शत्रून् (**वृणक्ति**) दूरीकरोति (**विन्दते**) प्राप्नोति (**वसु**) द्रव्यम्॥१६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! येन वीरो विश्वा द्विषः परि वृणक्ति वसु विन्दते तमनेहसं स्वस्तिगां पन्थां वयमप्यगन्महि॥१६॥

भावार्थः-राजादिमनुष्या ईदृशान् मार्गान् सृजन्तु येषु गच्छतां चोरभयं न स्याद् द्रव्यलाभश्च भवेदिति॥१६॥

अत्र विश्वेदेवकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्येकपञ्चाशत्तमं सूक्तं त्रयोदशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**येन**) जिसको वीर जन (**विश्वाः**) सब (**द्विषः**) शत्रुओं को (**परि, वृणक्ति**) सब ओर से दूर करता और (**वसु**) धन को (**विन्दते**) प्राप्त होता है उस (**अनेहसम्**) न नष्ट करने योग्य और (**स्वस्तिगाम्**) जिसमें सुख को प्राप्त होते उस (**पन्थाम्**) मार्ग को हम लोग (**अपि**) भी (**अगन्महि**) प्राप्त हों॥१६॥

भावार्थः-राजादि मनुष्य ऐसे मार्गों को बनावें जिनमें जाते हुओं को चोरों का भय न हो और द्रव्य का लाभ भी हो॥१६॥

इस सूक्त में विश्वे देवों के कर्मों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह इक्यावनवां सूक्त और तेरहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ सप्तदशर्चस्य द्विपञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य ऋजिष्वा ऋषिः। विश्वेदेवा देवताः। १, ४, १५, १६ निचृत्त्रिष्टुप्। २, ३,६, १३, १७ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ५ भुरिक्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ७, ८, ११ गायत्री। ९, १०, १२ निचृद्गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः। १४ विराड्जगती छन्दः। निषादः स्वरः॥

अथ केनाऽधिकं सुखं जायत इत्याह॥

अब सत्रह ऋचावाले बावनवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में किस से अधिक सुख होता है, इस विषय को कहते हैं॥

न तद्दिवा न पृथिव्यानु मन्ये न यज्ञेन नोत शमीभिराभिः।
उब्जन्तु तं सुभ्व१ः पर्वतासो नि हीयतामतियाजस्य यष्टा॥१॥

न। तत्। दिवा। न। पृथिव्या। अनु। मन्ये। न। यज्ञेन। न। उत। शमीभिः। आभिः। उब्जन्तु। तम्। सुऽभ्वः। पर्वतासः। नि। हीयताम्। अतिऽयाजस्य। यष्टा॥१॥

पदार्थः-(**न**) (**तत्**) (**दिवा**) दिवसे (**न**) (**पृथिव्या**) भूम्या (**अनु**) (**मन्ये**) (**न**) (**यज्ञेन**) होमादिना (**न**) (**उत**) (**शमीभिः**) कर्मभिः (**आभिः**) क्रियाभिः (**उब्जन्तु**) कुटिलं कुर्वन्तु (**तम्**) (**सुभ्वः**) ये सुष्ठु भवन्ति (**पर्वतासः**) मेघाः (**नि**) (**हीयताम्**) त्यज्यताम् (**अतिवाजस्य**) योऽतिशयेन यष्टुं योग्यस्य यज्ञस्य (**यष्टा**) सङ्गन्ता॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा सुभ्वः पर्वतासस्तमुब्जन्तु तथा योऽतियाजस्य यष्टा वर्त्तते स तद्दिवा न नि हीयतां न पृथिव्यां न यज्ञेन नोताऽऽभिर्न शमीभिर्हीयतामहमनु मन्ये॥१॥

भावार्थः-यत्सुखं मेघैर्जायते तत्सुखं न दिवसे न पृथिव्या न सङ्गत्या न कर्मणा भवति तस्माद्यजमानो हि सुखभाग्भवति॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**सुभ्वः**) जो अच्छे होते हैं, वे (**पर्वतासः**) मेघ (**तम्**) उसको (**उब्जन्तु**) कुटिल करें, वैसे (**अतियाजस्य**) जो अतीव यज्ञ करने योग्य है उसका (**यष्टा**) सङ्ग करने वाला वर्त्तमान है वह (**तत्**) उस कारण से (**दिवा**) दिन में (**न**) न (**नि, हीयताम्**) छोड़ने योग्य है (**न**) न (**पृथिव्या**) भूमि से (**न**) न (**यज्ञेन**) होम आदि कर्म से (**न**) न (**उत**) और (**आभिः**) क्रियाओं से वा (**शमीभिः**) कर्मों से छोड़ने योग्य है, उसे मैं (**अनु, मन्ये**) अनुकूलता से मानता हूँ॥१॥

भावार्थः-जो सुख मेघों से उत्पन्न होता है, वह सुख न दिवस में, न पृथिवी, न सङ्गति, न कर्म से होता है, इससे यज्ञ करने वाला ही सुखभागी होता है॥१॥

पुनः के मनुष्या निन्द्या वर्ज्जनीयाश्च सन्तीत्याह॥

फिर कौन मनुष्य निन्दा करने और वर्जने योग्य हैं, इस विषय को कहते हैं॥

अति॑ वा॒ यो म॑रुतो॒ मन्य॑ते नो॒ ब्रह्म॑ वा॒ यः क्रि॒यमा॑णं॒ निनि॑त्सात्।
तपूं॑षि॒ तस्मै॑ वृजि॒नानि॑ सन्तु ब्रह्म॒द्विष॑म॒भि तं शो॑चतु॒ द्यौः॥ २॥

अति॑। वा॒। यः॒। म॒रु॒तः॒। मन्य॑ते। नः॒। ब्रह्म॑। वा॒। यः। क्रि॒यमा॑णम्। निनि॑त्सात्। तपूं॑षि। तस्मै॑। वृ॒जि॒नानि॑। स॒न्तु॒। ब्र॒ह्म॒ऽद्विष॑म्। अ॒भि। तम्। शो॒च॒तु॒। द्यौः॥ २॥

पदार्थः-(**अति**) (**वा**) (**यः**) (**मरुतः**) मनुष्याः (**मन्यते**) (**नः**) अस्मान् (**ब्रह्म**) धनम् (**वा**) (**यः**) (**क्रियमाणम्**) (**निनित्सात्**) निन्दितुमिच्छेत् (**तपूंषि**) तेजोमयानि (**तस्मै**) (**वृजिनानि**) बाधकानि (**सन्तु**) (**ब्रह्मद्विषम्**) धनस्य द्वेष्टारम् (**अभि**) (**तम्**) (**शोचतु**) (**द्यौः**) कामयमानो विद्वान्॥ २॥

अन्वयः-हे मरुतो! यो नोऽस्मानति मन्यते वा यः क्रियमाणं ब्रह्माऽति मन्यते वा निनित्सात् तं ब्रह्मद्विषं द्यौरभि शोचतु तस्मै तपूंषि वृजिनानि सन्तु॥ २॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! ये मनुष्या अतिमानं धनादिद्वेषमाप्तनिन्दाञ्च कुर्वन्ति ते दण्डनीया निन्दनीयाः शोचनीयाश्च सन्ति॥ २॥

पदार्थः-हे (**मरुतः**) मनुष्यो! (**यः**) जो (**नः**) हम लोगों को (**अति, मन्यते**) अत्यन्त मानता है (**वा**) वा (**यः**) जो (**क्रियमाणम्**) क्रियमाण (**ब्रह्म**) धन को अत्यन्त मानता है (**वा**) वा (**निनित्सात्**) निन्दा करने को चाहे (**तम्**) उस (**ब्रह्मद्विषम्**) धन के द्वेषीजन को (**द्यौः**) कामना करता हुआ विद्वान् (**अभि, शोचतु**) सब ओर से शोचे (**तस्मै**) इसके लिये (**तपूंषि**) तेजोमय व्यवहार (**वृजिनानि**) बाधक (**सन्तु**) हों॥ २॥

भावार्थः-हे विद्वानो! जो मनुष्य अतिमान, धनादिकों से द्वेष और अच्छे सज्जनों की निन्दा करते हैं, वे दण्ड देने, निन्दा करने और शोक करने योग्य होते हैं॥ २॥

पुनर्मनुष्याः कीदृक् परीक्षकाः स्युरित्याह॥

फिर मनुष्य कैसे परीक्षक हों, इस विषय को कहते हैं॥

किम॒ङ्ग त्वा॒ ब्रह्म॑णः सोम गो॒पां किम॒ङ्ग त्वा॑हुरभिशस्ति॒पां नः॑।
किम॒ङ्ग नः॑ पश्यसि नि॒द्यमा॑नान् ब्रह्म॒द्विषे॒ तपु॑षिं हे॒तिम॑स्य॥ ३॥

किम्। अ॒ङ्ग। त्वा॒। ब्रह्म॑णः। सो॒म॒। गो॒पाम्। किम्। अ॒ङ्ग। त्वा॒। आ॒हुः॒। अ॒भि॒श॒स्ति॒ऽपाम्। न॒ः। किम्। अ॒ङ्ग। न॒ः। प॒श्य॒सि॒। नि॒द्यमा॑नान्। ब्र॒ह्म॒ऽद्विषे॑। तपु॑षिम्। हे॒तिम्। अ॒स्य॒॥ ३॥

पदार्थः-(**किम्**) (**अङ्ग**) मित्र (**त्वा**) त्वाम् (**ब्रह्मणः**) धनस्य (**सोम**) ऐश्वर्यमिच्छो (**गोपाम्**) रक्षकम् (**किम्**) (**अङ्ग**) सखे (**त्वा**) त्वाम् (**आहुः**) कथयन्तु (**अभिशस्तिपाम्**) अभिमुखप्रशंसारक्षितारम् (**नः**) अस्मान् (**किम्**) (**अङ्ग**) (**नः**) अस्मान् (**पश्यसि**) (**निद्यमानान्**) प्राप्तनिन्दान् (**ब्रह्मद्विषे**) वेदविद्याद्वेष्ट्रे (**तपुषिम्**) प्रतप्तम् (**हेतिम्**) वज्रम् (**अस्य**)॥ ३॥

अन्वयः-हे अङ्ग सोम! किं त्वा ब्रह्मणो गोपामाहुः। हे अङ्ग! किं त्वाऽभिशस्तिपामाहुः। हे अङ्ग! त्वं नः किं पश्यसि। हे अङ्ग! त्वं निद्यमानान्नः किं पश्यसि। ब्रह्मद्विषे तपुषिं हेतिं किं न पश्यसि। अस्योपरि वज्रप्रहारं कुर्य्याः॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यूयमस्य धनस्य गोप्तारः किमर्थं न भवथ स्तावकानस्मान्निन्दकान् भ्रमेण मा पश्यत, ये हि धनेश्वरवेदविद्यां द्विषन्ति तेषां सङ्गं युद्धमन्तरा मा कुरुत॥३॥

पदार्थः-हे **(अङ्ग)** मित्र **(सोम)** ऐश्वर्य की इच्छा करने वाले जन! **(किम्)** क्या **(त्वा)** तुझे **(ब्रह्मणः)** धन का **(गोपाम्)** रक्षा करने वाला **(आहुः)** कहें। हे **(अङ्ग)** मित्र! **(किम्)** क्या **(त्वा)** तुझे **(अभिशस्तिपाम्)** सामने प्रशंसा रखने वाले कहते हैं। हे **(अङ्ग)** सखे मित्र! तू **(नः)** हम लोगों को **(किम्)** क्या **(पश्यसि)** देखता है। हे मित्र तू **(निद्यमानान्)** निन्दा प्राप्त **(नः)** लोगों को क्या देखता है **(ब्रह्मद्विषे)** वेदविद्या द्वेषी जन के लिये **(तपुषिम्)** अति तपे हुए **(हेतिम्)** वज्र को क्या नहीं देखता **(अस्य)** इस पर वज्र प्रहार कर॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! तुम इस धन के रक्षक क्यों नहीं होते हो, स्तुति (प्रशंसा) करने वाले हम लोगों को निन्दा करने वाले भ्रम से मत देखो, निश्चय धनपति तथा वेदविद्या से द्वेष करते हैं, उनका सङ्ग युद्ध विना मत करो॥३॥

पुनर्मनुष्यैः कथमाचरणीयमित्याह॥

फिर मनुष्यों को कैसा आचरण करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

अवन्तु मामुषसो जायमाना अवन्तु मा सिन्धवः पिन्वमानाः।

अवन्तु मा पर्वतासो ध्रुवासोऽवन्तु मा पितरो देवहूतौ॥४॥

अवन्तु। माम्। उषसः। जायमानाः। अवन्तु। मा। सिन्धवः। पिन्वमानाः। अवन्तु। मा। पर्वतासः। ध्रुवासः। अवन्तु। मा। पितरः। देवऽहूतौ॥४॥

पदार्थः-**(अवन्तु)** रक्षन्तु **(माम्)** **(उषसः)** प्रभातवेलाः **(जायमानाः)** उत्पद्यमानाः **(भवन्तु)** **(मा)** माम् **(सिन्धवः)** नद्यः **(पिन्वमानाः)** सिञ्चन्त्यः **(अवन्तु)** **(मा)** माम् **(पर्वतासः)** शैलाः **(ध्रुवासः)** निश्चलाः **(अवन्तु)** **(मा)** माम् **(पितरः)** जनका अध्यापका ऋतवो वा **(देवहूतौ)** दिव्यगुणानां विदुषां वा स- हणे॥४॥

अन्वयः-हे उपदेष्टारो! यूयं देवहूतौ यथा जायमाना उषसो मामवन्तु पिन्वमानाः सिन्धवो माऽवन्तु ध्रुवासः पर्वतासो माऽवन्तु पितरो माऽवन्तु तथा शिक्षत॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यूयमेवं युक्ताहारविहारं कुर्यात येन सर्वे सृष्टिस्थाः पदार्था दुःखप्रदा न स्युः शुभान् गुणांश्च यूयं प्राप्नुत॥४॥

पदार्थः-हे उपदेश करने वालो! तुम **(देवहूतौ)** दिव्यगुण वा विद्वानों के स-ह में जैसे **(जायमानाः)** उत्पद्यमान **(उषसः)** प्रभातवेलाएं **(माम्)** मेरी **(अवन्तु)** रक्षा करें तथा **(पिन्वमानाः)** सेवन करती हुई **(सिन्धवः)** नदियां **(मा)** मेरी **(अवन्तु)** रक्षा करें और **(ध्रुवासः)** निश्चल **(पर्वतासः)** शैल पहाड़ **(मा)** मेरी **(अवन्तु)** रक्षा करें और **(पितरः)** पिता वा पढ़ाने वाला वा ऋतु वसन्त आदि **(मा)** मेरी **(अवन्तु)** रक्षा करें, वैसी शिक्षा करो॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! तुम इस प्रकार युक्त आहार-विहार करो, जिससे सब सृष्टिस्थ पदार्थ दुःख देने वाले न हों और शुभ गुणों को तुम लोग प्राप्त होओ॥४॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

विश्वऽदानीं सुमनसः स्याम पश्येम नु सूर्यमुच्चरन्तम्।
तथा करद्वसुपतिर्वसूनां देवाँ ओहानोऽवसागमिष्ठः॥५॥१४॥

विश्वऽदानीम्। सुऽमनसः। स्याम। पश्येम। नु। सूर्यम्। उत्ऽचरन्तम्। तथा। करत्। वसुऽपतिः। वसूनाम्। देवान्। ओहानः। अवसा। आऽगमिष्ठः॥५॥

पदार्थः-**(विश्वदानीम्)** सर्वदा **(सुमनसः)** प्रसन्नचित्ताः **(स्याम)** **(पश्येम)** **(नु)** सद्यः **(सूर्य्यम्)** **(उच्चरन्तम्)** ऊर्ध्वं प्राप्नुवन्तम् **(तथा)** **(करत्)** कुर्यात् **(वसुपतिः)** वसूनां पदार्थानां पालकः **(वसूनाम्)** **(देवान्)** विदुषः **(ओहानः)** रक्षकः **(अवसा)** रक्षणादिना **(आगमिष्ठः)** अतिशयेनाऽऽगन्ता॥५॥

अन्वयः-हे विद्वन्नवसाऽऽगमिष्ठो वसूनां वसुपतिरोहानो भवान् यथाऽस्मान् देवान् करत् तथा वयं विश्वदानीं सूर्य्यमुच्चरन्तं पश्येम नु सुमनसः स्याम॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा प्रीत्याऽध्यापकोपदेशका विद्यार्थिनः श्रोतॄंश्च विदुषः कृत्वा सुखिनः कुर्वन्ति तथैवाऽध्येतृभिः श्रोतृभिश्च विद्वांसो भूत्वाप्येते सदा सत्करणीयाः॥५॥

पदार्थः-हे विद्वन्! **(अवसा)** रक्षा आदि के साथ **(आगमिष्ठः)** अतीव आने और **(वसूनाम्)** वसुओं के बीच **(वसुपतिः)** पदार्थों की पालना करने वाले और **(ओहानः)** रक्षक आप जैसे हम लोगों को **(देवान्)** विद्वान् **(करत्)** करें **(तथा)** वैसे हम लोग **(विश्वदानीम्)** सर्वदा **(सूर्य्यम्)** सूर्यमण्डल जो **(उच्चरन्तम्)** ऊपर को चढ़ता है उसे **(पश्येम)** देखें और **(नु)** शीघ्र **(सुमनसः)** प्रसन्नचित्त **(स्याम)** होवें॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे प्रीति से अध्यापक और उपदेशक विद्यार्थियों को और उपदेश सुनने वालों को विद्वान् करके सुखी करते हैं, वैसे ही पढ़ने वालों और उपदेश सुनने वालों को चाहिये कि विद्वान् होकर भी इनका सदा सत्कार करें॥५॥

पुनः स राजा कीदृशो भवेदित्याह॥

फिर वह राजा कैसा हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्रो नेदिष्ठमवसागमिष्ठः सरस्वती सिन्धुभिः पिन्वमाना।
पर्जन्यो न ओषधीभिर्मयोभुरग्निः सुशंसः सुहवः पितेव॥६॥

इन्द्रः। नेदिष्ठम्। अवसा। आऽगमिष्ठः। सरस्वती। सिन्धुऽभिः। पिन्वमाना। पर्जन्यः। न। ओषधीभिः। मयःऽभुः। अग्निः। सुऽशंसः। सुऽहवः। पिताऽइव॥६॥

पदार्थः-(**इन्द्रः**) परमैश्वर्यवान् (**नेदिष्ठम्**) अतिशयेन समीपम् (**अवसा**) रक्षणादिना (**आगमिष्ठः**) अतिशयेनागन्ता (**सरस्वती**) प्रशस्तं सरो वेगो यस्याः सा नदी (**सिन्धुभिः**) नदीभिः (**पिन्वमाना**) संयुक्ता (**पर्जन्यः**) मेघः (**नः**) अस्मान् (**ओषधीभिः**) (**मयोभुः**) सुखंभावुकः (**अग्निः**) वह्निरिव (**सुशंसः**) शोभनस्तुतिः (**सुहवः**) शोभनो हवस्सत्कारो यस्य (**पितेव**) जनक इव॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! योऽवसा नेदिष्ठमागमिष्ठः सिन्धुभिः पिन्वमाना सरस्वतीव सुशंसः सुहवोऽग्निरिवौषधीभिः पर्जन्यो मयोभुरिव पितेवेन्द्रो नः पालयति स राजाऽस्माभिः सततं सत्कर्त्तव्यः॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यो राजा न्यायपुरुषार्थाभ्यां प्रजाः सततं रक्षति तं प्रजाः पितरमिव पालयन्ति॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**अवसा**) रक्षा आदि से (**नेदिष्ठम्**) अतीव समीप को (**आगमिष्ठः**) अतीव आने वाला वा (**सिन्धुभिः**) नदियों से (**पिन्वमाना**) संयुक्त (**सरस्वती**) प्रशंसित सरस् वेग जिसका उस नदी के समान (**सुशंसः**) शोभन तथा (**सुहवः**) शोभन सत्कार वाले (**अग्निः**) अग्नि के समान (**ओषधिभिः**) ओषधियों से युक्त (**पर्जन्यः**) मेघ (**मयोभुः**) सुख हुवाने तथा (**पितेव**) जन्म देने वाले पिता के समान (**इन्द्रः**) परमैश्वर्यवान् राजा (**नः**) हम लोगों को पालना करता है, वह राजा हम लोगों से निरन्तर सत्कार करने योग्य है॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो राजा न्याय और पुरुषार्थ से प्रजा की निरन्तर रक्षा करता है, उसकी पिता के समान प्रजाजन पालना करते हैं॥६॥

पुनरध्येतृभिः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर पढ़ने वालों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

विश्वे देवास आ गत शृणुता म इमं हवम्। एदं बर्हिनि षीदत॥७॥

विश्वे। देवासः। आ। गत। शृणुत। मे। इमम्। हवम्। आ। इदम्। बर्हिः। नि। सीदत॥७॥

पदार्थः-(**विश्वे**) सर्वे (**देवासः**) विद्वांसः (**आ**) (**गत**) आगच्छत (**शृणुता**) अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। (**मे**) मम विद्यार्थिनः (**इमम्**) वर्त्तमाने पठितम् (**हवम्**) श्रुताधीतविषयम् (**आ**) (**इदम्**) वर्त्तमानम् (**बर्हिः**) उत्तमासनम् (**नि**) नितराम् (**सीदत**) आसीना भवत॥७॥

अन्वयः-हे विश्वे देवासो! यूयमस्माकं नेदिष्ठमा गत, इदं बर्हिर्नि षीदत म इमं हवमा शृणुता॥७॥

भावार्थः-अत्र नेदिष्ठमितिपदं पूर्वमन्त्रादनुवर्त्तते॥ विद्यार्थिभिः परीक्षकान् विदुषः प्रार्थ्य परीक्षायां नियोज्यः सर्वः श्रुताऽधीतविषयस्तत्समीपे निवेदनीयस्ते च सम्यक् परीक्ष्य गुणदोषानुपदिशेयुरेवं कृते सत्यध्ययनं निर्दोषं स्यात्॥७॥

पदार्थः-हे **(विश्वे, देवासः)** सब विद्वानो! तुम हमारे अति समीप **(आ, गत)** आओ तथा **(इदम्)** इस **(बर्हिः)** उत्तम आसन पर **(नि, सीदत)** निरन्तर स्थिर होओ तथा **(मे)** मुझ विद्यार्थी के **(इमम्)** इस **(हवम्)** सुने पढ़े विषय को **(आ, शृणुता)** अच्छे प्रकार सुनो॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में 'नेदिष्ठम्' यह पद पिछले मन्त्र से अनुवृत्ति में आता है॥ विद्यार्थियों को चाहिये कि परीक्षा करने वाले विद्वानों की प्रार्थना कर परीक्षा में सुनाने योग्य समस्त सुना और पढ़ा विषय उनके समीप में निवेदन करें तथा वे परीक्षक भी अच्छे प्रकार परीक्षा कर गुण और दोषों का उपदेश दें, ऐसा करने पर पढ़ना निर्दोष हो॥७॥

पुनरध्यापकाऽध्येतारः परस्परं कथं वर्तेरन्नित्याह॥

फिर अध्यापक और अध्ययन करने वाले परस्पर कैसे वर्त्ताव करें, इस विषय को कहते हैं॥

यो वो देवा घृतस्नुना हव्येन प्रतिभूषति। तं विश्व उप गच्छथ॥८॥

यः। वः। देवाः। घृतऽस्नुना। हव्येन। प्रतिऽभूषति। तम्। विश्वे। उप। गच्छथ॥८॥

पदार्थः-**(यः)** **(वः)** युष्मान् **(देवाः)** अध्यापकोपदेष्टारः **(घृतस्नुना)** घृतमिव शुद्धेन **(हव्येन)** आदातुं दातुमर्हेण प्रशंसितेनाऽध्ययनेन श्रवणेन वा **(प्रतिभूषति)** प्रत्यक्षतयाऽलङ्करोति **(तम्)** **(विश्वे)** सर्वे **(उप)** **(गच्छथ)**॥८॥

अन्वयः-हे देवा! यो घृतस्नुना हव्येन वः प्रतिभूषति तं विश्वे यूयमुप गच्छथ॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यः सत्येन विद्यादानेन सर्वान् युष्मान् भूषयति तं यूयं प्रतिभूषत॥८॥

पदार्थः-हे **(देवाः)** पढ़ाने और उपदेश करने वाले विद्वानो! **(यः)** जो **(घृतस्नुना)** घृत के समान शुद्ध **(हव्येन)** लेने-देने योग्य वा प्रशंसित पढ़ने और सुनने से **(वः)** तुम लोगों को **(प्रतिभूषति)** प्रत्यक्षता से सुभूषित करता है **(तम्)** उसके **(विश्वे)** सब तुम लोग **(उप, गच्छथ)** समीप प्राप्त होओ॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो सत्य विद्यादान से सब तुम लोगों को सुभूषित करता है, उसे तुम सब प्रतिभूषित करो अर्थात् बदले में सुशोभित करो॥८॥

पुनर्मनुष्यैः कीदृशो नियमः कर्त्तव्य इत्याह॥

फिर मनुष्यों को कैसा नियम करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

उप नः सूनवो गिरः शृण्वन्त्वमृतस्य ये। सुमृळीका भवन्तु नः॥९॥

उप। नः। सूनवः। गिरः। शृण्वन्तु। अमृतस्य। ये। सुऽमृळीकाः। भवन्तु। नः॥९॥

पदार्थः-(**उप**) (**नः**) अस्माकम् (**सूनवः**) अपत्यानि (**गिरः**) विद्यायुक्ता वाचः (**शृण्वन्तु**) (**अमृतस्य**) नाशरहितस्य विज्ञानस्य (**ये**) (**सुमृळीकाः**) सुष्ठु सुखिनः (**भवन्तु**) (**नः**) अस्मान्॥९॥

अन्वयः-हे राजन्विद्वांसो वा! ये नः सूनवः स्युस्तेऽमृतस्य गिर उप शृण्वन्तु सुमृळीका भूत्वा नः सेवका भवन्तु॥९॥

भावार्थः-पितृभी राजनीतौ स्वकुले वाऽयं दृढो नियमः कर्त्तव्यो यावन्त्यस्माकमपत्यानि स्युस्तावन्ति ब्रह्मचर्येण समस्तविद्याग्रहणाय ब्रह्मचर्यं कुर्य्युर्योऽस्य विच्छेदं कुर्यात्तं राजा कुलीनाश्च भृशं दण्डयेयुः॥९॥

पदार्थः-हे राजन् वा विद्वानो! (**ये**) जो (**नः**) हमारे (**सूनवः**) सन्तान हों वे (**अमृतस्य**) नाशरहित विज्ञान की (**गिरः**) विद्यायुक्त वाणियों को (**उप, शृण्वन्तु**) समीप में सुनें तथा (**सुमृळीकाः**) सुन्दर सुख वाले होकर (**नः**) हमारी सेवा करने वाले (**भवन्तु**) हों॥९॥

भावार्थः-पितृजनों को राजनीति वा अपने कुल में यह दृढ़ नियम करना चाहिये कि जितने हमारे सन्तान हैं, वे ब्रह्मचर्य्य से विद्याओं के समस्त ग्रहण के लिये ब्रह्मचर्य्य आश्रम को करें, जो इसका विनाश करे उसे राजा वा कुलीन निरन्तर दण्ड देवें॥९॥

पुनर्मनुष्याः किमुशित्वा विद्याः प्राप्नुयुरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या कामना कर विद्याओं को प्राप्त होवें, इस विषय को कहते हैं॥

विश्वे॑ दे॒वा ऋ॑ता॒वृध॑ ऋ॒तुभि॑र्हवन॒श्रुतः॑। जु॒षन्तां॒ युज्यं॒ पयः॑॥ १०॥ १५॥

विश्वे॑। दे॒वाः। ऋ॒त॒ऽवृधः॑। ऋ॒तुऽभिः॑। ह॒व॒न॒ऽश्रुतः॑। जु॒षन्ता॑म्। युज्य॑म्। पयः॑॥ १०॥

पदार्थः-(**विश्वे**) सर्वे (**देवाः**) विद्वांसः (**ऋतावृधः**) सत्यविद्यावर्धकाः (**ऋतुभिः**) वसन्तादिभिः (**हवनश्रुतः**) ये हवनमध्ययनं शृण्वन्ति ते (**जुषन्ताम्**) (**युज्यम्**) समाधातुमर्हम् (**पयः**) दुग्धमुदकमन्नं वा। **पय इत्युदकनाम॥** (निघं०१.१२) **अन्ननाम च** (निघं०२.७)॥१०॥

अन्वयः-हे ऋतावृधो हवनश्रुतो विश्वे देवा! भवन्त ऋतुभिर्युज्यं पयो जुषन्ताम्॥१०॥

भावार्थः-येऽध्येतुं परीक्षयितुं चेच्छेयुस्ते मादककुत्सितबुद्धिनाशकानि द्रव्याणि त्यक्त्वा पय आदीनि बुद्धिवर्द्धकानि सेवेरन्॥१०॥

पदार्थः-हे (**ऋतावृधः**) सत्य विद्या के बढ़ाने वालो (**हवनश्रुतः**) जो अध्ययन को सुनते हैं, वे (**विश्वे, देवाः**) सब विद्वान्! आप लोग (**ऋतुभिः**) वसन्तादिकों के साथ (**युज्यम्**) समाधान करने योग्य (**पयः**) दूध, जल वा अन्न को (**जुषन्ताम्**) सेवें॥१०॥

भावार्थः-जो अध्ययन करने और परीक्षा कराने को चाहें वे मद करने, कुत्सित बुद्धि वा नाश करने वाले पदार्थों को छोड़ के दुग्ध आदि बुद्धि के बढ़ाने वाले उत्तम पदार्थों को सेवें॥१०॥

पुनर्मनुष्याः केन सह किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्य किसके साथ क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

स्तोत्रमिन्द्रो मरुद्गणस्त्वष्टृमान्मित्रो अर्यमा। इमा हव्या जुषन्त नः॥११॥

स्तोत्रम्। इन्द्रः। मरुत्ऽगणः। त्वष्टृऽमान्। मित्रः। अर्यमा। इमा। हव्या। जुषन्त। नः॥११॥

पदार्थः-(**स्तोत्रम्**) स्तुवन्ति येन तत् (**इन्द्रः**) परमैश्वर्य्यवान् राजा (**मरुद्गणः**) मरुतामुत्तमानां मनुष्याणां गणः समूहो यस्य (**त्वष्टृमान्**) त्वष्टार उत्तमाः शिल्पिनो विद्यन्ते यस्य सः (**मित्रः**) सर्वस्य सुहृत् (**अर्यमा**) न्यायकारी (**इमा**) इमानि (**हव्या**) दातुमादातुमर्हाण्यन्नादीनि (**जुषन्त**) सेवन्ताम् (**नः**) अस्माकम्॥११॥

अन्वयः-हे मनुष्या! भवन्तो यो मरुद्गणस्त्वष्टृमान् मित्रोऽर्यमेन्द्रो भवेत्तेन सह न स्तोत्रमिमा हव्या च जुषन्त॥११॥

भावार्थः-त एव मनुष्या इष्टानि प्राप्तुं शक्नुवन्ति ये सर्वेभ्यः श्रेष्ठं पुरुषमधिष्ठातारं कुर्वन्ति॥११॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! आप जो (**मरुद्गणः**) जिसके उत्तम मनुष्यों का समूह और (**त्वष्टृमान्**) उत्तम शिल्पीजन विद्यमान हैं तथा (**मित्रः**) जो कि सबका मित्र (**अर्यमा**) न्याय करने वाला और (**इन्द्रः**) परमैश्वर्यवान् राजा हो उसके साथ (**नः**) हमारे (**स्तोत्रम्**) उस स्तोत्र को जिससे स्तुति करते हो और (**इमा**) इन (**हव्या**) लेने-देने योग्य अन्नादि पदार्थों को (**जुषन्त**) सेवो॥११॥

भावार्थः-वे ही मनुष्य चाहे हुए पदार्थों को पा सकते हैं, जो सब के लिये श्रेष्ठ पुरुष को अधिष्ठाता करते हैं॥११॥

पुनर्मनुष्याः कीदृशं राजानं कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्य कैसे राजा को करें, इस विषय को कहते हैं॥

इमं नो अग्ने अध्वरं होतर्वयुनशो यज। चिकित्वान् दैव्यं जनम्॥१२॥

इमम्। नः। अग्ने। अध्वरम्। होतः। वयुनऽशः। यज। चिकित्वान्। दैव्यम्। जनम्॥१२॥

पदार्थः-(**इमम्**) (**नः**) अस्माकम् (**अग्ने**) पावक इव वर्त्तमान (**अध्वरम्**) अहिंसनीयं न्यायव्यवहारम् (**होतः**) दातः (**वयुनशः**) प्रज्ञानेन (**यज**) सङ्गच्छस्व (**चिकित्वान्**) ज्ञानवान् (**दैव्यम्**) विद्वद्भिः सत्कृतम् (**जनम्**) शुभाचरणैः प्रसिद्धम्॥१२॥

अन्वयः-हे होतरग्ने! वयुनशो न इममध्वरं चिकित्वांस्त्वं दैव्यं जनं यज॥१२॥

भावार्थः-हे राजप्रजाजन! त्वं योऽस्माकं मध्ये शुभगुणकर्मस्वभावयुक्तः स्यात्तमेव राज्यकरणे सङ्गतं कुरु॥१२॥

पदार्थः-हे (**होतः**) देने वाले (**अग्ने**) अग्नि के समान वर्त्तमान राजन्! आप (**वयुनशः**) उत्तम ज्ञान से (**नः**) हमारे (**इमम्**) इस (**अध्वरम्**) न नष्ट करने योग्य न्याय व्यवहार को (**चिकित्वान्**) जानने योग्य वाले आप (**दैव्यम्**) विद्वानों से सत्कार को प्राप्त हुए (**जनम्**) शुभाचरणों से प्रसिद्ध जन को (**यज**) अच्छे प्रकार प्राप्त हों॥१२॥

भावार्थ:-हे राजा प्रजाजन! आप जो हमारे बीच शुभ गुणकर्मस्वभावयुक्त हो, उसी को राज्य करने में अच्छे प्रकार युक्त करो॥१२॥

पुनर्मनुष्यैः क आहूय सत्कर्त्तव्या इत्याह॥

फिर मनुष्यों को कौन बुला कर सत्कार करने योग्य हैं, इस विषय को कहते हैं॥

विश्वे॑ देवाः शृणुतेमं हवं॑ मे॒ ये अ॒न्तरि॑क्षे॒ य उप॒ द्यवि॒ ष्ठ।
ये अ॑ग्निजि॒ह्वा उ॒त वा॒ यज॑त्रा आ॒सद्या॒स्मिन् ब॒र्हिषि॑ मादयध्वम्॥१३॥

विश्वे॑। दे॒वाः॒। शृ॒णु॒त। इ॒मम्। हव॑म्। मे॒। ये। अ॒न्तरि॑क्षे। ये। उप॑। द्यवि॑। स्थ। ये। अ॒ग्नि॒ऽजि॒ह्वाः। उ॒त। वा॒। यज॑त्राः। आ॒ऽसद्य॑। अ॒स्मिन्। ब॒र्हिषि॑। मा॒द॒य॒ध्व॒म्॥१३॥

पदार्थः-(**विश्वे**) सर्वे (**देवाः**) विद्वांसः (**शृणुत**) (**इमम्**) (**हवम्**) श्रुताधीतज्ञातविषयम् (**मे**) मम (**ये**) (**अन्तरिक्षे**) अन्तरक्षय आकाशे (**ये**) (**उप**) (**द्यवि**) प्रकाशे (**स्थ**) (**ये**) (**अग्निजिह्वाः**) अग्निना सत्येन सुप्रकाशिता जिह्वा येषान्ते (**उत**) (**वा**) (**यजत्राः**) सङ्गन्तव्याः (**आसद्य**) स्थित्वा (**अस्मिन्**) (**बर्हिषि**) उत्तम आसने स्थाने वा (**मादयध्वम्**)॥१३॥

अन्वयः-हे विश्वे देवा! येऽन्तरिक्षे ये द्यवि येऽग्निजिह्वा उत वा यजत्राः स्युस्तैः सह म इमं हवमुप शृणुत समीपे च स्थ। अस्मिन् बर्हिष्याऽऽसद्याऽस्मान् मादयध्वम्॥१३॥

भावार्थः-मनुष्यैः सदैव ये विमानस्था अन्तरिक्षे, ये विद्युद्विद्यायां कुशला ये चाऽध्यापने परीक्षायां च निपुणा धर्मिष्ठा आप्ता विद्वांसः स्युस्तत्सन्निधौ गत्वा तान् स्वसमीपमाहूय सत्कृत्यैतेभ्यः श्रोतव्यं श्रुतं श्राव्यञ्च यतः श्रवणे विज्ञाने वा श्रमो न स्यात्॥१३॥

पदार्थ:-हे (**विश्वे, देवाः**) सब विद्वानो! (**ये**) जो (**अन्तरिक्षे**) भीतर अविनाशी आकाश में (**ये**) जो (**द्यवि**) प्रकाश में (**ये**) जो (**अग्निजिह्वाः**) सत्य से प्रकाशमान जिह्वा जिन की (**उत, वा**) अथवा (**यजत्राः**) सङ्ग करने योग्य हों उन सब के साथ (**मे**) मेरे (**इमम्**) इस (**हवम्**) सुने पढ़े और जाने हुए विषय को (**उप, शृणुत**) समीप में सुनो और समीप में (**स्थ**) स्थिर होओ तथा (**अस्मिन्**) इस (**बर्हिषि**) उत्तम आसन वा स्थान में (**आसद्य**) बैठ के हम लोगों को (**मादयध्वम्**) आनन्दित करो॥१३॥

भावार्थ:-मनुष्यों को सदैव जो विमानस्थ, अन्तरिक्ष में, वा जो बिजुली की विद्या में कुशल हैं और जो पढ़ाने वा परीक्षा करने में निपुण, धर्मिष्ठ, आप्त विद्वान् हों; उनके निकट जाकर और उनको अपने समीप बुलाकर सत्कार कर इनसे सुनना चाहिये और सुना हुआ सुनाना चाहिये, जिससे सुनने में वा विज्ञान में श्रम न हो॥१३॥

पुनः के सङ्गन्तुमर्हा इत्याह॥

फिर कौन सङ्ग करने योग्य हैं, इस विषय को कहते हैं॥

विश्वे॑ दे॒वा मम॑ शृण्वन्तु य॒ज्ञिया॑ उ॒भे रोद॑सी अ॒पां नपा॑च्च॒ मन्म॑।

मा वो वचांसि परिचक्ष्याणि वोचं सुम्नेष्विद्वो अन्तमा मदेम॥१४॥

विश्वे। देवाः। मम। शृण्वन्तु। यज्ञियाः। उभे इति। रोदसी इति। अपाम्। नपात्। च। मन्म। मा। वः। वचांसि। परिऽचक्ष्याणि। वोचम्। सुम्नेषु। इत्। वः। अन्तमाः। मदेम॥१४॥

पदार्थः-(**विश्वे**) सर्वे (**देवाः**) विद्वांसः (**मम**) (**शृण्वन्तु**) (**यज्ञियाः**) ये सत्सङ्गतिं कर्त्तुमर्हाः (**उभे**) (**रोदसी**) द्यावापृथिव्याविव सर्वेषां रक्षकाः (**अपाम्**) प्राणानाम् (**नपात्**) अनाशकम् (**च**) (**मन्म**) विज्ञानम् (**मा**) (**वः**) युष्माकम् (**वचांसि**) वचनानि (**परिचक्ष्याणि**) परितः सर्वतः ख्यातुं योग्यानि (**वोचम्**) (**सुम्नेषु**) सुखेषु (**इत्**) एव (**वः**) युष्माकम् (**अन्तमाः**) समीपस्थाः (**मदेम**) आनन्देम॥१४॥

अन्वयः-हे विश्वे देवा! भवन्त उभे रोदसी इव यज्ञियाः सन्तो मम वचांसि शृण्वन्तु वोऽपां नपान्मन्म विरुद्धमहं मा वोचं परिचक्ष्याणि च प्रशंसेयमेवं वर्त्तमाना वयं वोऽन्तमाः सन्तः सुम्नेषु सदेन्मदेम॥१४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! येषां विदुषां वचनं वितथं न भवति येषां सङ्गः सर्वदा सुखविज्ञानवर्धको ये भूमिसूर्य्यवत्सर्वेषां पालका विवादं श्रुत्वा पक्षपातं विहाय न्यायकर्त्तारस्स्युस्तत्सन्निधौ स्थित्वा सदैवाऽऽनन्दं प्राप्नुवन्तु॥१४॥

पदार्थः-हे (**विश्वे, देवाः**) सब विद्वानो! आप (**उभे**) दोनों (**रोदसी**) आकाश और पृथिवी के तुल्य सब की रक्षा करने वाले (**यज्ञियाः**) सज्जनों का सङ्ग करने वाले होते हुए (**मम**) मेरे (**वचांसि**) वचनों को (**शृण्वन्तु**) सुनिये तथा (**वः**) आपके (**अपाम्**) प्राणों के (**नपात्**) न विनाश करने वाले (**मन्म**) विज्ञान को, विरुद्ध मैं (**मा, वोचम्**) मत कहूँ (**परिचक्ष्याणि, च**) और सब ओर से कहने के योग्यों की प्रशंसा करूं, इस प्रकार वर्त्तमान हम लोग (**वः**) आपके (**अन्तमाः**) समीप स्थिर होते हुए (**सुम्नेषु**) सुखों में (**इत्**) सर्वदैव (**मदेम**) आनन्दित हों॥१४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जिन विद्वानों का वचन असत्य नहीं होता तथा जिनका सङ्ग सर्वदा सुख और विज्ञान का बढ़ाने वाला है और जो भूमि और सूर्य के तुल्य सब के पालने वाले और विवाद सुनकर पक्षपात को छोड़ न्याय करने वाले हों, उनके निकट स्थित होकर सदैव आनन्द को प्राप्त होओ॥१४॥

पुनर्मनुष्यैः के नित्यं सत्कर्त्तव्या इत्याह॥

फिर मनुष्यों से कौन नित्य सत्कार करने योग्य हैं, इस विषय को कहते हैं॥

ये के च ज्मा महिनो अहिमाया दिवो जज्ञिरे अपां सधस्थे।

ते अस्मभ्यमिषये विश्वमायुः क्षप उस्रा वरिवस्यन्तु देवाः॥१५॥

ये। के। च। ज्मा। महिनः। अहिऽमायाः। दिवः। जज्ञिरे। अपाम्। सधऽस्थे। ते। अस्मभ्यम्। इषये। विश्वम्। आयुः। क्षपः। उस्राः। वरिवस्यन्तु। देवाः॥१५॥

पदार्थः-(**ये**) (**के**) (**च**) केचित् (**ज्मा**) पृथिव्या मध्ये (**महिनः**) महान्तः (**अहिमायाः**) मेघस्य मायाः कुटिलगतयः (**दिवः**) सूर्यप्रकाशात् (**जज्ञिरे**) जायन्ते (**अपाम्**) जलानाम् (**सधस्थे**) समानस्थाने मेघण्डले (**ते**) (**अस्मभ्यम्**) (**इषये**) विज्ञानायाऽन्नाय वा (**विश्वम्**) पूर्णम् (**आयुः**) जीवनम् (**क्षपः**) रात्रीः (**उस्राः**) दिनानि (**वरिवस्यन्तु**) सेवन्ताम् (**देवाः**) दिव्यगुणा विद्वांसः॥१५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ये के च महिनो यथा ज्माऽहिमाया दिवोऽपां सधस्थे जज्ञिरे तथा वर्त्तमाना अस्मभ्यमिषये क्षप उस्रा विश्वमायुर्वरिवस्यन्तु ते देवा अस्माभिः सततं सेवनीयाः॥१५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! येऽत्र वर्त्तमानसमयेऽहर्निशं मनुष्याणामारोग्यायुर्विज्ञानवर्धकाः पर्जन्य इव पोषकाः स्युस्त एव सर्वैः सत्कर्त्तव्या भवन्तु॥१५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**ये**) जो (**के, च**) कोई भी (**महिनः**) महान् जैसे (**ज्मा**) पृथिवी के बीच (**अहिमायाः**) मेघ की कुटिल गतियां (**दिवः**) सूर्य्य के प्रकाश से (**अपाम्**) जलों के (**सधस्थे**) समानस्थान वाले मेघमण्डल में (**जज्ञिरे**) उत्पन्न होती हैं, वैसे वर्त्तमान (**अस्मभ्यम्**) हम लोगों के लिये (**इषये**) अन्न वा विज्ञान के अर्थ (**क्षपः**) रात्रि (**उस्राः**) दिन और (**विश्वम्**) पूर्ण (**आयुः**) जीवन को (**वरिवस्यन्तु**) सेवें (**ते**) वे (**देवाः**) दिव्यगुण वा विद्वान् जन हम लोगों से निरन्तर सेवने योग्य हैं॥१५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो इस वर्त्तमान समय में दिन-रात्रि मनुष्यों के आरोग्य, आयु और विज्ञान के बढ़ाने और मेघ के समान पुष्टि करने वाले हों, वे ही सब से सत्कार करने योग्य हैं॥१५॥

पुनस्ते विद्वांसः कथं किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर वे विद्वान् कैसे क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

अग्नीपर्जन्यावव॑तं धियं॑ मे॒ऽस्मिन् हवे॑ सुहवा सुष्टुतिं नः॑।
इळा॑म॒न्यो ज॒नय॒द्गर्भ॑म॒न्यः प्र॒जाव॑ती॒रिष॒ आ ध॑त्तम॒स्मे॥१६॥

अग्नी॑पर्जन्यौ। अव॑तम्। धिय॑म्। मे॒। अ॒स्मिन्। हवे॑। सु॒ऽह॒वा॒। सु॒ऽस्तु॒तिम्। न॒ः। इळा॑म्। अ॒न्यः। ज॒नय॑त्। गर्भ॑म्। अ॒न्यः। प्र॒जाऽव॑तीः। इषः॑। आ। ध॒त्त॒म्। अ॒स्मे इति॑॥१६॥

पदार्थः-(**अग्निपर्जन्यौ**) विद्युन्मेघाविव (**अवतम्**) रक्षतम् (**धियम्**) प्रज्ञाम् (**मे**) मम (**अस्मिन्**) (**हवे**) प्रशंसनीये धर्म्ये व्यवहारे (**सुहवा**) सुष्ठुप्रशंसितावध्यापकोपदेशकौ (**सुष्टुतिम्**) शोभनां प्रशंसाम् (**नः**) अस्माकम् (**इळाम्**) महतीं वाचम् (**अन्यः**) विद्युन्मयोऽग्निः (**जनयत्**) जनयति (**गर्भम्**) (**अन्यः**) मेघः (**प्रजावतीः**) बहुप्रशंसितप्रजायुक्ताः (**इषः**) अन्नादीच्छाः (**आ**) (**धत्तम्**) (**अस्मे**) अस्माकम्॥१६॥

अन्वयः-हे सुहवाऽग्नीपर्जन्याविवाऽस्मिन् हवे युवाम्मे धियमवतं नः सुष्टुतिमवतं यथाऽग्नीपर्जन्ययोर्मध्येऽन्योऽग्निरिळामन्यो मेघो गर्भं जनयत्तथाऽस्मे प्रजावतीरिष आ धत्तम्॥१६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! ये वह्निमेघवत्सर्वेषां बुद्धिवर्धका रक्षकाः सर्वाः प्रजाः सुखे धरन्ति ते यथा मेघः पृथिव्यां गर्भं धृत्वौषधीर्जनयति यथा चाऽग्निर्वाचं विदधाति तथा ते सुखविधायका भवन्तीति भवन्तो विजानीयुः॥१६॥

पदार्थः-हे (**सुहवा**) सुन्दर प्रशंसित अध्यापक और उपदेशको! तुम (**अग्नीपर्जन्यौ**) बिजुलीरूप अग्नि और मेघ के तुल्य (**अस्मिन्**) इस (**हवे**) प्रशंसनीय धर्मयुक्त व्यवहार में तुम दोनों (**मे**) मेरी (**धियम्**) बुद्धि की (**अवतम्**) रक्षा करो तथा (**नः**) हमारी (**सुष्टुतिम्**) शोभन प्रशंसा की रक्षा करो जैसे अग्नि और मेघ के बीच (**अन्यः**) और बिजुलीमय अग्नि (**इळाम्**) महान् वाणी को (**अन्यः**) और मेघ (**गर्भम्**) गर्भरूप (**जनयत्**) उत्पन्न करता है, वैसे (**अस्मे**) हमारी (**प्रजावतीः**) बहुप्रशंसित प्रजायुक्त (**इषः**) अन्नादि पदार्थों की इच्छाओं को (**आ, धत्तम्**) सब ओर से धारण करो॥१६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो वह्नि और मेघ के समान सब की बुद्धि के बढ़ाने वाले वा रक्षा करने वाले, सब प्रजाजनों को सुख में धारण करते हैं, वे जैसे मेघ पृथिवी पर गर्भ को धारण कर ओषधियों को उत्पन्न करता और जैसे अग्नि वाणी का विधान करता अर्थात् बिजुलीरूप होकर तड़कता है, वैसे वे सुखों का विधान करने वाले होते हैं, यह आप जानो॥१६॥

पुनः केऽत्राऽऽनन्दप्रदाः सन्तीत्याह॥

फिर कौन इस संसार में आनन्द देने वाले होते हैं, इस विषय को कहते हैं॥

स्तीर्णे बर्हिषि समिधाने अग्नौ सूक्तेन महा नमसा विवासे।

अस्मिन्नो अद्य विदथे यजत्रा विश्वे देवा हविषि मादयध्वम्॥१७॥१६॥

स्तीर्णे। बर्हिषि। सम्ऽइधाने। अग्नौ। सुऽउक्तेन। महा। नमसा। आ। विवासे। अस्मिन्। नः। अद्य। विदथे। यजत्राः। विश्वे। देवाः। हविषि। मादयध्वम्॥१७॥

पदार्थः-(**स्तीर्णे**) इन्धनादिभिराच्छादिते (**बर्हिषे**) यज्ञकुण्डे (**समिधाने**) प्रदीप्ते (**अग्नौ**) पावके (**सूक्तेन**) वेदमन्त्रसमूहेन (**महा**) महता (**नमसा**) अन्नादिना (**आ, विवासे**) सेवेय (**अस्मिन्**) (**नः**) अस्मान् (**अद्य**) अस्मिन् अहनि (**विदथे**) विज्ञानमये यज्ञे (**यजत्राः**) सङ्गमयितारः (**विश्वे**) सर्वे (**देवाः**) विद्वांसः (**हविषि**) दातव्येऽत्तव्ये वाऽन्नादौ (**मादयध्वम्**) सुखयत॥१७॥

अन्वयः-हे यजत्रा विश्वे देवा! यूयमद्याऽस्मिन् विदथे यथाऽहं सूक्तेन महा नमसा स्तीर्णे बर्हिषि समिधानेऽग्नावा विवासे तथा नो हविषि मादयध्वम्॥१७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथेन्धनैः प्रदीप्तेऽग्नौ वेदमन्त्रैः सुगन्ध्यादियुक्तं हुतं द्रव्यं सर्वं जगत् सुखयति तथा सुपात्रेषु विद्वद्भिरुप्ता विद्या जगदानन्दयतीति॥१७॥

अत्र विश्वेदेवगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति द्विपञ्चाशत्तमं सूक्तं षोडशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थ:-हे **(यजत्रा:)** सङ्ग कराने वालो **(विश्वे, देवा)** सब विद्वानो! तुम **(अद्य)** आज के दिन **(अस्मिन्)** इस **(विदथे)** विज्ञानमय यज्ञ में जैसे मैं **(सूक्तेन)** वेद मन्त्र समूह से **(महा, नमसा)** अन्नादि समूह से **(स्तीर्णे)** इन्धनादि से आच्छादित **(बर्हिषि)** यज्ञकुण्ड में **(समिधाने)** प्रदीप्त **(अग्नौ)** अग्नि के बीच **(आ, विवासे)** सब ओर से सेवन करूं, वैसे **(न:)** हम लोगों के **(हविषि)** देने वा भोजन करने योग्य अन्नादि पदार्थों में **(मादयध्वम्)** सुखी करो॥१७॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे इन्धनों से प्रदीप्त अग्नि में वेदमन्त्रों से सुगन्ध्यादियुक्त होम किया पदार्थ सब जगत् को सुखी करता है, वैसे सुपात्र में विद्वानों की बोई हुई विद्या सब जगत् को आनन्दित करती है॥१७॥

इस सूक्त में विश्वेदेवों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह बावनवां सूक्त और सोलहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ दशर्चस्य त्रिपञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। पूषा देवता। १, ३, ४, ६, ७, १० गायत्री। २, ५, ९ निचृद्गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः। ८ निचृदनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः॥

अथ मनुष्याः कस्मै कान् सेवेरन्नित्याह॥

अब दश ऋचा वाले त्रेपनवें सूक्त का आरम्भ है, इसके प्रथम मन्त्र में मनुष्य किसके लिये किनका सेवन करें, इस विषय को कहते हैं॥

वयमु त्वा पथस्पते रथं न वाजसातये। धिये पूषन्नयुज्महि॥ १॥

वयम्। ऊँ इति। त्वा। पथः। पते। रथम्। न। वाजऽसातये। धिये। पूषन्। अयुज्महि॥ १॥

पदार्थः-**(वयम्)** **(उ)** **(त्वा)** त्वाम् **(पथः)** मार्गस्य **(पते)** स्वामिन् **(रथम्)** विमानादियानम् **(न)** इव **(वाजसातये)** स- ग्रमविभाजिकायै **(धिये)** प्रज्ञायै **(पूषन्)** पुष्टिकर्त्तः **(अयुज्महि)** प्रयुञ्ज्महि॥ १॥

अन्वयः-हे पूषन् पथस्पते! वयमु वाजसातये धिये त्वा रथं नाऽयुज्महि॥ १॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। ये मनुष्याः प्रज्ञाप्राप्तये विदुषः सेवन्ते ते वेगवता रथेन स्थानान्तरमिव विद्यान्तरं सद्यः प्राप्नुवन्ति॥ १॥

पदार्थः-हे **(पूषन्)** पुष्टि करने वाले **(पथः)** मार्ग के **(पते)** स्वामिन्! **(वयम्)** हम लोग **(उ)** ही **(वाजसातये)** संग्राम का विभाग करने वाली **(धिये)** प्रज्ञा के लिये **(त्वा)** आपको **(रथम्)** विमान आदि यान के **(न)** समान **(अयुज्महि)** प्रयुक्त करते हैं॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य उत्तम बुद्धि पाने के लिये विद्वानों की सेवा करते हैं, वे वेगवान् रथ से एक स्थान से दूसरे स्थान के समान एक विद्या से दूसरी विद्या को शीघ्र प्राप्त होते हैं॥ १॥

अथ स्त्रीपुरुषैः किमेष्टव्यमित्याह॥

अब स्त्रीपुरुषों को क्या चाहने योग्य है, इस विषय को कहते हैं॥

अभि नो नर्यं वसु वीरं प्रयतदक्षिणम्। वामं गृहपतिं नय॥ २॥

अभि। नः। नर्यम्। वसु। वीरम्। प्रयतऽदक्षिणम्। वामम्। गृहऽपतिम्। नय॥ २॥

पदार्थः-**(अभि)** आभिमुख्ये **(नः)** अस्मान् **(नर्यम्)** नृषु साधु **(वसु)** धनम् **(वीरम्)** शुभलक्षणान्वितं पुरुषम् **(प्रयतदक्षिणम्)** प्रयताः प्रयत्नेन दत्ता दक्षिणा यस्मात्तत् **(वामम्)** प्रशस्तम् **(गृहपतिम्)** गृहस्वामिनम् **(नय)** प्रापय॥ २॥

अन्वयः-हे पूषंस्त्वं नः प्रयतदक्षिणं नर्यं वसु वामं वीरं गृहपतिं चाभि नय॥ २॥

भावार्थः-हे विद्वन् विदुषी वा! त्वामस्मदर्थमुत्तमं पतिमुत्तमां भार्यां प्रशस्तं धनं प्रापय्य सुशिक्षया धर्म्माचारं प्रापय॥२॥

पदार्थः-हे पुष्टि करने वाले! आप **(नः)** हम लोगों को **(प्रयतदक्षिणम्)** जिससे प्रयत्नपूर्वक दक्षिणा दी गई उस **(नर्यम्)** मनुष्यों में उत्तम **(वसु)** धन और **(वामम्)** प्रशंसित **(वीरम्)** शुभलक्षणयुक्त पुरुष को **(गृहपतिम्)** गृहस्वामी को भी **(अभि,)** नय सब ओर से पहुंचाओ॥२॥

भावार्थः-हे विद्वन् वा विदुषी! आप हम लोगों के लिये उत्तम पति, उत्तम भार्या, प्रशंसित धन की प्राप्ति करा के उत्तम शिक्षा से धर्म्म आचरण की प्राप्ति कराइये॥२॥

पुनर्विद्वान् कस्मै किं प्रेरयेदित्याह॥

फिर विद्वान् जन किसके लिये क्या प्रेरणा करे, इस विषय को कहते हैं॥

अदित्सन्तं चिदाघृणे पूषन् दानाय चोदय। पणेश्चिद्वि म्रदा मनः॥३॥

अदित्सन्तम्। चित्। आघृणे। पूषन्। दानाय। चोदय। पणेः। चित्। वि। म्रदा। मनः॥३॥

पदार्थः-**(अदित्सन्तम्)** दातुमनिच्छन्तम् **(चित्)** अपि **(आघृणे)** समन्तात् प्रकाशात्मन् **(पूषन्)** पुष्टिकर विद्वन् **(दानाय)** **(चोदय)** प्रेरय **(पणेः)** द्यूतकर्त्तुः **(चित्)** अपि **(वि)** विशेषेण **(म्रदा)** दण्डय। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(मनः)** अन्तःकरणम्॥३॥

अन्वयः-हे आघृणे पूषँस्त्वमदित्सन्तं चिदपि दातारं दानाय चोदय चिदपि दातारं स्वस्य मनश्च चोदय पणेश्चिन्मनो वि म्रदा॥३॥

भावार्थः-हे अध्यापकोपदेशकौ राजन्वा! विद्यादिशुभगुणस्य प्रवृत्तयेऽदातॄनपि दानकरणाय प्रेरय द्यूतकर्तॄंश्च पाखण्डिनो हिन्धि॥३॥

पदार्थः-हे **(आघृणे)** सब ओर से प्रकाशात्मन् **(पूषन्)** पुष्टि करने वाले विद्वन्! आप **(अदित्सन्तम्)** देने की अनिच्छा करते हुए **(चित्)** भी देने वाले को **(दानाय)** देने के लिये **(चोदय)** प्रेरणा देओ **(चित्)** फिर भी देने वालो को और अपने **(मनः)** मन को भी प्रेरणा देओ और **(पणेः)** जुआं खेलने वाले के भी अन्तःकरण को **(वि, म्रदा)** विशेषता से मर्दी अर्थात् दण्ड देओ॥३॥

भावार्थः-हे अध्यापक, उपदेशक वा राजन्! विद्यादि शुभगुणों की प्रवृत्ति के लिये न देने वालों को भी दान करने के लिये प्रेरणा देओ और जुआं खेलनेवाले पाखण्डियों को मारो अर्थात् ताड़ना देओ॥३॥

पुना राजा किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वि पथो वाजसातये चिनुहि वि मृधो जहि। साधन्तामुग्र नो धियः॥४॥

वि। पथः। वाजऽसातये। चिनुहि। वि। मृधः। जहि। साधन्ताम्। उग्र। नः। धियः॥४॥

पदार्थः-(**वि**) (**पथः**) मार्गात् (**वाजसातये**) विज्ञानस्य धनस्य वा प्राप्तयेऽथवा सङ्ग्रामाय (**चिनुहि**) सञ्चयं कुरु (**वि**) विशेषेण (**मृधः**) स-ग्रामेषु प्रवृत्तान् दुष्टान् (**जहि**) (**साधन्ताम्**) साध्नुवन्तु (**उग्र**) तेजस्विन् (**नः**) अस्माकम् (**धियः**) प्रज्ञाः॥४॥

अन्वयः-हे उग्र सेनेश! त्वं वाजसातये पथो वि चिनुहि मृधो वि जहि यतो नो धियः कार्याणि साधन्ताम्॥४॥

भावार्थः-हे राजँस्त्वमुत्तमान्निर्भयान् मार्गान् विधेहि तत्र परिपन्थिनो हिन्धि, येन सर्वेषां प्रज्ञा उत्तमकर्मोन्नतये प्रवर्त्तेरन्॥४॥

पदार्थः-हे (**उग्र**) तेजस्वी सेनापति! आप (**वाजसातये**) विज्ञान वा धन की प्राप्ति वा स-ग्राम के लिये (**पथः**) मार्ग से (**वि, चिनुहि**) सञ्चय करो तथा (**मृधः**) स-ग्रामों में प्रवृत्त दुष्टों को (**वि, जहि**) विशेषता से मारो जिससे (**नः**) हमारी (**धियः**) बुद्धियां कार्यों को (**साधन्ताम्**) सिद्ध करें॥४॥

भावार्थः-हे राजन्! आप उत्तम निर्भय मार्गों को बनाओ, उन में विपथगामियों को मारो जिससे सब की बुद्धि उत्तम कर्मों की उन्नति करने के लिये प्रवृत्त हों॥४॥

पुनर्नृपेण के पीडनीया इत्याह॥

फिर राजा से कौन पीड़ा देने योग्य हैं, इस विषय को कहते हैं॥

परि॑ तृन्धि प॒णी॒नामार॑या हृ॒दया॑ कवे। अथे॑म॒स्मभ्यं॑ रन्धय॥५॥१७॥

परि॑। तृ॒न्धि॒। प॒णी॒नाम्। आर॑या। हृ॒दया॑। क॒वे॒। अथ॑। ई॒म्। अ॒स्मभ्य॑म्। र॒न्ध॒य॒॥५॥

पदार्थः-(**परि**) सर्वतः (**तृन्धि**) हिन्धि (**पणीनाम्**) द्यूतादिव्यवहारकर्त्तृणां (**आरया**) प्रतोदेन (**हृदया**) हृदयानि (**कवे**) विद्वन् राजन् (**अथ**) (**ईम्**) सर्वतः (**अस्मभ्यम्**) (**रन्धय**)॥५॥

अन्वयः-हे कवे! त्वमारया पणीनां हृदया परि तृन्धि। अथाऽस्मभ्यमीं दुष्टान् रन्धयाऽस्मभ्यं सुखं देहि॥५॥

भावार्थः-हे राजन्! त्वं येऽपूतशासनकर्त्तारः कितवाश्च स्वराज्ये स्युस्तान् सम्यग्दण्डय सतो न्यायमार्गे वर्त्तमाना वयं सुखिनः स्याम॥५॥

पदार्थः-हे (**कवे**) विद्वन् सज्जन्! आप (**आरया**) उत्तम कोड़ा से (**पणीनाम्**) द्यूत आदि व्यवहार करने वाले पुरुषों के (**हृदया**) हृदयों को (**परि, तृन्धि**) सब ओर से मारो (**अथ**) इसके अनन्तर (**अस्मभ्यम्**) हमारे लिये (**ईम्**) सब ओर से दुष्टों को (**रन्धय**) पीड़ित करो और हमारे लिये सुख देओ॥५॥

भावार्थः-[हे राजन्! आप] जो अपवित्र शिक्षा देने वाले और छली पुरुष अपने राज्य में हों, उनको अच्छे प्रकार दण्डो, जिससे न्यायमार्ग के बीच हम लोग सुखी हों॥५॥

पुना राजा किं कुर्य्यादित्याह॥

पिर राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

वि पूषन्नारया तुद पणेरिच्छ हृदि प्रियम्। अथेमस्मभ्यं रन्धय॥६॥

वि। पूषन्। आरया। तुद। पणेः। इच्छ। हृदि। प्रियम्। अथ। ईम्। अस्मभ्यम्। रन्धय॥६॥

पदार्थः-(**वि**) (**पूषन्**) पुष्टिकर्त्तः (**आरया**) (**तुद**) व्यथय (**पणेः**) प्रशंसितव्यवहारकर्त्तुः (**इच्छ**) (**हृदि**) हृदये (**प्रियम्**) (**अथ**) (**ईम्**) सर्वतः (**अस्मभ्यम्**) (**रन्धय**)॥६॥

अन्वयः-हे पूषँस्त्व दुष्टानीम्रन्धयाऽस्मभ्यं हृदि प्रियमिच्छाऽथाऽऽरया वृषभानिव पणेरसम्बन्धिनो वि तुद॥६॥

भावार्थः-हे राजंस्त्वं दुष्टान् दण्डयित्वा श्रेष्ठान् सत्कृत्य सर्वान् सत्कर्मसु प्रेरय॥६॥

पदार्थः-हे (**पूषन्**) पुष्टि करने वाले! आप दुष्टों को (**ईम्**) सब ओर से (**रन्धय**) अति पीड़ित करो तथा (**अस्मभ्यम्**) हमारे लिये (**हृदि**) हृदय में (**प्रियम्**) प्यारे पदार्थ की (**इच्छ**) इच्छा करो (**अथ**) इसके अनन्तर (**आरया**) कोड़ा से बैलों के समान (**पणेः**) प्रशंसित व्यवहार करने वाले के असम्बन्धी जनों को (**वि, तुद**) विशेषता से पीड़ा देओ॥६॥

भावार्थः-हे राजन्! आप दुष्टों को दण्ड देकर श्रेष्ठों का सत्कार कर सब को श्रेष्ठ कर्मों में प्रेरणा देओ॥६॥

पुना राजा किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर राजा क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

आ रिख किकिरा कृणु पणीनां हृदया कवे। अथेमस्मभ्यं रन्धय॥७॥

आ। रिख। किकिरा। कृणु। पणीनाम्। हृदया। कवे। अथ। ईम्। अस्मभ्यम्। रन्धय॥७॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**रिख**) लिख (**किकिरा**) व्यवस्थापत्राणि (**कृणु**) (**पणीनाम्**) व्यवहर्तृणाम् (**हृदया**) हृदयानि (**कवे**) विद्वन् (**अथ**) (**ईम्**) सुखम् (**अस्मभ्यम्**) (**रन्धय**) ताडय॥७॥

अन्वयः-हे कवे! त्वं पणीनां किकिराऽऽरिख दुष्टानां हृदया रन्धयाऽथाऽस्मभ्यमीं कृणु॥७॥

भावार्थः-राजा वादिप्रतिवादिनां लेखपुरस्सरं न्यायं कुर्यात्॥७॥

पदार्थः-हे (**कवे**) विद्वन्! आप (**पणीनाम्**) व्यवहार करने वालों के (**किकिरा**) व्यवस्थापत्रों को (**आ, रिख**) सब ओर से लिखो तथा दुष्टों के (**हृदया**) हृदयों को (**रन्धय**) अति पीड़ा देओ (**अथ**) इसके अनन्तर (**अस्मभ्यम्**) हम लोगों के लिये (**ईम्**) सुख (**कृणु**) करो॥७॥

भावार्थः-राजा वादी और प्रतिवादी अर्थात् झगड़ालु प्रतिझगड़ालूओं का लिखापढ़ी पूर्वक न्याय करे॥७॥

पुनर्विदुषा कथं कस्मै प्रेरणा कार्येत्याह॥

फिर विद्वान् को कैसे किसके लिये प्रेरणा करनी योग्य है, इस विषय को कहते हैं॥

यां पूषन् ब्रह्मचोदनीमारां बिभर्ष्याघृणे। तया समस्य हृदयमा रिख किकिरा कृणु॥८॥

याम्। पूषन्। ब्रह्मऽचोदनीम्। आराम्। बिभर्षि। आघृणे। तया। समस्य। हृदयम्। आ। रिख। किकिरा। कृणु॥८॥

पदार्थः-(**याम्**) (**पूषन्**) पुष्टिकर्त्तः (**ब्रह्मचोदनीम्**) विद्याधनप्राप्तये प्रेरिकाम् (**आराम्**) काष्ठविभाजिकाम् (**बिभर्षि**) (**आघृणे**) सर्वतो न्यायप्रकाशिन् (**तया**) (**समस्य**) तुल्यस्य (**हृदयम्**) (**आ**) (**रिख**) लिख (**किकिरा**) विकीर्णानि (**कृणु**)॥८॥

अन्वयः-हे पूषन्नाघृणे! त्वं यां ब्रह्मचोदनीमारां बिभर्षि तया समस्य हृदयमारिख किकिरा कृणु॥८॥

भावार्थः-हे राजँस्त्वं विद्याधनप्राप्तिप्रेरणामिव राजनीतिं धर येन सर्वेषां न्यायव्यवस्था स्यात्॥८॥

पदार्थः-हे (**पूषन्**) पुष्टि करने वाले (**आघृणे**) सब ओर से न्याय के प्रकाश करने वाले! आप (**याम्**) जिस (**ब्रह्मचोदनीम्**) विद्या और धन की प्राप्ति के लिये प्रेरणा करने तथा काष्ठ के विभाग करने वाली आरी को (**बिभर्षि**) धारण करते हो (**तया**) उससे (**समस्य**) तुल्य के समान अर्थात् जो सब में बुद्धि वाला है उसके (**हृदयम्**) हृदय को (**आ, रिख**) अच्छे प्रकार लिखो और (**किकिरा**) उत्तम गुणों को विकीर्ण (**कृणु**) करो फैलाओ॥८॥

भावार्थः-हे राजन्! आप विद्या और धन की प्राप्ति की प्रेरणा के समान राजनीति को धारण करो, जिससे सब की न्यायव्यवस्था हो॥८॥

मनुष्यैः किं वर्धयित्वा किं प्रार्थनीयमित्याह॥

मनुष्यों को क्या बढ़ा कर किसकी प्रार्थना करनी चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

या ते अष्ट्रा गोओपशाघृणे पशुसाधनी। तस्यास्ते सुम्नमीमहे॥९॥

या। ते। अष्ट्रा। गोऽओपशा। आघृणे। पशुऽसाधनी। तस्याः। ते। सुम्नम्। ईमहे॥९॥

पदार्थः-(**या**) (**ते**) तव (**अष्ट्रा**) व्यापिका (**गोओपशा**) गाव आ उप शेरते यस्यां सा (**आघृणे**) समन्तात्पशुविद्याप्रकाशक (**पशुसाधनी**) पशून् साध्नुवन्ति यया सा (**तस्याः**) (**ते**) तव (**सुम्नम्**) सुखम् (**ईमहे**) याचामहे॥९॥

अन्वयः-हे आघृणे! या तेऽष्ट्रा गोओपशा पशुसाधनी वर्तते तस्यास्ते सुम्नं वयमीमहे॥९॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यया क्रियया पशवो वर्धेरंस्तां वर्धयित्वा सुखं याचध्वम्॥९॥

पदार्थः-हे (**आघृणे**) सब ओर से पशुविद्या के प्रकाश करने वाले (**या**) जो (**ते**) आपकी (**अष्ट्रा**) व्याप्त होने वाली (**गोओपशा**) जिसमें गौएं परस्पर सोती हैं और (**पशुसाधनी**) जिससे पशुओं को सिद्ध करते हैं वह क्रिया वर्तमान है (**तस्याः**) उससे (**ते**) आपके (**सुम्नम्**) सुख को हम लोग (**ईमहे**) जांचते अर्थात् मांगते हैं॥९॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिस क्रिया से पशु बढ़ें, उस क्रिया को बढ़ाकर सुख को मांगो॥९॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

उत नो गोषणिं धियमश्वसां वाजसामुत। नृवत् कृणुहि वीतये ॥१०॥१८॥

उत। नः। गोऽसनिम्। धियम्। अश्वऽसाम्। वाजऽसाम्। उत। नृऽवत्। कृणुहि। वीतये॥१०॥

पदार्थः-(**उत**) अपि (**नः**) अस्मभ्यम् (**गोषणिम्**) गवां विभाजिकाम् (**धियम्**) प्रज्ञाम् (**अश्वसाम्**) अश्वानां संविभाजिकाम् (**वाजसाम्**) वाजस्याऽन्नादेर्विभाजिकाम् (**उत**) अपि (**नृवत्**) मनुष्यवत् (**कृणुहि**) (**वीतये**) प्राप्तये॥९॥

अन्वयः-हे पशुपाल विद्वंस्त्वं नो वीतये गोषणिमुताऽश्वसामुत वाजसां धियं नृवत्कृणुहि॥१०॥

भावार्थः-मनुष्यैर्गवाश्वधनधान्यवृद्धये पुरुषार्थिवन्महान् पुरुषार्थः कर्त्तव्यः॥१०॥

अत्र राजमार्गदस्युनिवारणोत्तमदक्षिणादानप्रेरणा दुष्टहिंसनं श्रेष्ठपालनं पशुवर्धनं चोक्तमत एतत्सूक्तार्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति त्रिपञ्चाशत्तमं सूक्तमष्टादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे पशु पालने वाले विद्वन्! आप (**नः**) हम लोगों के (**वीतये**) प्राप्ति के अर्थ (**गोषणिम्**) गौओं को अलग-अलग करने वाली (**उत**) और (**अश्वसाम्**) घोड़ों का विभाग करने वाली (**उत**) और (**वाजसाम्**) अन्नादि पदार्थों का विभाग करने वाली (**धियम्**) उत्तम बुद्धि को (**नृवत्**) मनुष्यों के तुल्य (**कृणुहि**) करो॥१०॥

भावार्थः-मनुष्यों को गौ, अश्व और धन-धान्य की वृद्धि के लिये पुरुषार्थी जनों के समान महान् पुरुषार्थ करना योग्य है॥१०॥

इस सूक्त में राजमार्ग, डाकुओं का निवारण, उत्तम दक्षिणा देने वालों को प्रेरणा, दुष्टों को मारना, श्रेष्ठों की पालना और पशुओं का बढ़ाना कहा है, इस कारण इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी योग्य है॥

यह त्रेपनवां सूक्त और अठारहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ दशर्चस्य चतु:पञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषि:। पूषा देवता। १, २, ४, ६,७, ८, ९ गायत्री। ३, १० निचृद्गायत्री। ५ विराड्गायत्री छन्द:। षड्ज: स्वर:॥

अथ मनुष्यै: कस्य सङ्ग एष्टव्य इत्याह॥

अब दश ऋचा वाले चौवनवें सूक्त का आरम्भ है, इसके प्रथम मन्त्र में मनुष्यों को किसका सङ्ग चाहने योग्य है, इस विषय को कहते हैं॥

सं पूषन् विदुषा नय यो अञ्जसानुशासति। य एवेदमिति ब्रवत्॥ १॥

सम्। पूषन्। विदुषा। नय। य:। अञ्जसा। अनुऽशासति। य:। एव। इदम्। इति। ब्रवत्॥ १॥

पदार्थ:-(**सम्**) (**पूषन्**) (**विदुषा**) (**नय**) (**य:**) (**अञ्जसा**) (**अनुशासति**) अनुशासनं करोति। अत्र **बहुलं छन्दसी**ति शपो लुङ् न। (**य:**) (**एव**) (**इदम्**) (**इति**) (**ब्रवत्**) उपदिशेत्॥ १॥

अन्वय:-हे पूषन् विद्वन्! य इदमित्थमेवेति ब्रवद्य: सत्यमनुशासति तेन विदुषा सहाऽस्मानञ्जसा सन्नय॥ १॥

भावार्थ:-हे विद्वन्! अस्मान् ये सत्मुपदिशेयुस्तान् सत्कृत्य तेषां सङ्गेन वयं विद्वांसो भूत्वोपदेष्टारो भवेम॥ १॥

पदार्थ:-हे (**पूषन्**) पुष्टि करनेवाले विद्वन्! (**य:**) जो (**इदम्**) यह (**एव**) इसी प्रकार है (**इति**) ऐसा (**ब्रवत्**) उपदेश करे (**य:**) जो सत्य के (**अनुशासति**) अनुकूल शिक्षा दे उस (**विदुषा**) विद्वान् के साथ हम लोगों को (**अञ्जसा**) साक्षात् (**सम्, नय**) अच्छे प्रकार उन्नति को पहुंचाओ॥ १॥

भावार्थ:-हे विद्वन्! हम लोगों को जो सत्यविद्या का उपदेश करें, उनका सत्कार कर उनके सङ्ग से हम लोग विद्वान् होकर उपदेशकर्त्ता हों॥ १॥

मनुष्यै: कस्य सङ्ग: सततं विधेय इत्याह॥

मनुष्यों को किसका सङ्ग निरन्तर विधान करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

समु पूष्णा गमेमहि यो गृहाँ अभिशासति। इम एवेति च ब्रवत्॥ २॥

सम्। ऊँ इति। पूष्णा। गमेमहि। य:। गृहान्। अभिऽशासति। इमे। एव इति। च। ब्रवत्॥ २॥

पदार्थ:-(**सम्**) (उ) (**पूष्णा**) पुष्टिकर्त्रा वैद्येन सह (**गमेमहि**) गच्छेम (**य:**) (**गृहान्**) गृहस्थान् (**अभिशासति**) आभिमुख्ये शासनं करोति (**इमे**) (**एव**) (**इति**) (**च**) (**ब्रवत्**) ब्रूयात्॥ २॥

अन्वय:-य इम इत्थमेवेति ब्रवदु च गृहानभिशासति तेन पूष्णा सह वयं सङ्गमेमहि॥ २॥

भावार्थ:-यो विद्वान् निश्चयेन पृथिव्यादिविद्याऽध्यापनोपदेशाभ्यां हस्तक्रियया च साक्षात्कर्तुं शक्नुयाद् राजनीत्यादिव्यवहाराननुशिष्यात् तस्यैव विदुष: सङ्गं वयं सदा कुर्य्याम॥ २॥

पदार्थः-(**यः**) जो विद्वान् (**इमे**) ये पदार्थ (**एव**) इसी प्रकार हैं (**इति**) ऐसा (**ब्रवत्**) कहे (**उ**) और (**च**) भी (**गृहान्**) गृहस्थों को (**अभिशासति**) सन्मुख होकर शिक्षा दे उस (**पूष्णा**) पुष्टि करने वाले वैद्य विद्वान् जन के साथ हम लोग (**सम्, गमेमहि**) सङ्ग करें॥२॥

भावार्थः-जो विद्वान्जन निश्चय से पृथिव्यादि पदार्थों की विद्या को, अध्यापन और उपदेश से तथा हस्तक्रिया से साक्षात् कर सके तथा राजनीति आदि व्यवहारों की अनुकूलता से शिक्षा दे, उसी विद्वान् का सङ्ग हम लोग सदा करें॥२॥

कस्य कृत्यं न नश्यतीत्याह॥

किसका कर्त्तव्य नष्ट नहीं होता, इस विषय को कहते हैं॥

पूष्णश्चक्रं न रिष्यति न कोशोऽव पद्यते। नो अस्य व्यथते पविः॥३॥

पूष्णः। चक्रम्। न। रिष्यति। न। कोशः। अव। पद्यते। नो इति। अस्य। व्यथते। पविः॥३॥

पदार्थः-(**पूष्णः**) पुष्टिकर्तुः शिल्पिनो विदुषः (**चक्रम्**) कलायन्त्रादिकम् (**न**) निषेधे (**रिष्यति**) हिनस्ति (**न**) (**कोशः**) धनसमुदायः (**अव**) विरोधे (**पद्यते**) प्राप्नोति (**नो**) निषेधे (**अस्य**) (**व्यथते**) (**पविः**) शस्त्राऽस्त्रविद्या॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यस्याऽस्य पूष्णश्चक्रं न रिष्यति कोशो नाव पद्यते पविर्नो व्यथते तस्यैव सङ्गं वयं कुर्याम॥३॥

भावार्थः-यस्य विदुषः पूर्णं बलमस्ति यस्यैकच्छत्रं राज्यमस्ति यस्य कोशोऽभिपूर्य्यते शत्रुषु यस्य शस्त्रं च न विनश्यति तस्य राज्ये सर्वे निर्भया निवसन्तु॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जिस (**अस्य**) इस (**पूष्णः**) पुष्ट करने वाले शिल्पी विद्वान् का (**चक्रम्**) कलायन्त्रादि (**न, रिष्यति**) हिंसन नहीं करता तथा (**कोशः**) धनसमूह (**न, अव, पद्यते**) अप्राप्त नहीं होता अर्थात् प्राप्त ही होता है और (**पविः**) शस्त्रास्त्रविद्या (**नो**) नहीं (**व्यथते**) होती अर्थात् शत्रुजन जिसको नहीं मथते, उसी का सङ्ग हम लोग करें॥३॥

भावार्थः-जिस विद्वान् का पूर्ण बल है, जिसका एकछत्र राज्य है, जिसका कोश सब ओर से पूरा होता और शत्रुओं में जिसका शस्त्र नहीं नष्ट होता है, उसके राज्य में सब जन निर्भय होकर बसें॥३॥

को महाञ्छ्रीमान् भवतीत्याह॥

कौन महान् श्रीमान् होता है, इस विषय को कहते हैं॥

यो अस्मै हविषाविधन्न तं पूषापि मृष्यते। प्रथमो विन्दते वसु॥४॥

यः। अस्मै। हविषा। अविधत्। न। तम्। पूषा। अपि। मृष्यते। प्रथमः। विन्दते। वसु॥४॥

पदार्थः-(**यः**) (**अस्मै**) (**हविषा**) दानेनादानेन वा (**अविधत्**) विदधाति (**न**) निषेधे (**तम्**) (**पूषा**) (**अपि**) (**मृष्यते**) सहते (**प्रथमः**) आदिमः शिल्पी (**विन्दते**) प्राप्नोति (**वसु**) बहुधनम्॥४॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यो हविषाऽस्मै वस्वविधत् प्रथमो वसु विन्दते तं पूषाऽपि न मृष्यते॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यः प्रथमतः शिल्पविद्यां प्राप्य क्रियया पदार्थान् निर्मिमीते स पुष्कलां श्रियं प्राप्नोति तत्सदृशः पुष्टः कोऽपि न भवति॥४॥

पदार्थः-हे विद्वानो! (**यः**) जो (**हविषा**) देने वा लेने से (**अस्मै**) इसके लिये (**वसु**) बहुत धन का (**अविधत्**) विधान करता है वा (**प्रथमः**) पहिला कारुक धन (**विन्दते**) पाता है (**तम्**) उसको (**पूषा**) पुष्टि करने वाला (**अपि**) भी (**न**) नहीं (**मृष्यते**) सहता है॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो पहिले से शिल्पविद्या को पाकर क्रिया से पदार्थों का निर्माण करता है, वह बहुत धन को प्राप्त होता है, उसके सदृश पुष्ट कोई नहीं होता है॥४॥

को राज्यं प्राप्नोतीत्याह॥

कौन राज्य को पाता है, इस विषय को कहते हैं॥

पूषा गा अन्वेतु नः पूषा रक्षत्वर्वतः। पूषा वाजं सनोतु नः॥५॥१९॥

पूषा। गाः। अनु। एतु। नः। पूषा। रक्षतु। अर्वतः। पूषा। वाजम्। सनोतु। नः॥५॥

पदार्थः-(**पूषा**) शिल्पिनां पुष्टिकर्त्ता (**गाः**) पृथिवीर्वाचो वा (**अनु**) (**एतु**) (**नः**) अस्मान् (**पूषा**) पोषकः (**रक्षतु**) (**अर्वतः**) अश्वानिवाऽग्न्यादीन् (**पूषा**) (**वाजम्**) धनम् (**सनोतु**) ददातु (**नः**) अस्मभ्यम्॥५॥

अन्वयः-यः पूषा नो वाजं सनोतु यः पूषाऽर्वतो रक्षतु स पूषा नोऽनु गा एतु॥५॥

भावार्थः-य आदावन्यानुपकरोति पदार्थान् संचिनोति स सर्वसहायेन भूमिराज्यादिकं प्राप्नोति॥५॥

पदार्थः-जो (**पूषा**) पुष्टि करने वाला विद्वान् (**नः**) हमारे लिये (**वाजम्**) धन को (**सनोतु**) देवे जो (**पूषा**) पुष्टि करने वाला (**अर्वतः**) घोड़ों के समान अग्न्यादि पदार्थों की (**रक्षतु**) रक्षा करे वह (**पूषा**) शिल्पिजनों की पुष्टि करने वाला (**नः**) हम लोगों को तथा (**अनु, गाः**) अनुकूल पृथिवी और वाणियों को (**एतु**) प्राप्त हो॥५॥

भावार्थः-जो पहिले औरों का उपकार करता वा पदार्थों को इकट्ठा करता है, वह सब के सहाय से भूमि के राज्य आदि को प्राप्त होता है॥५॥

केषां सङ्गेन विद्याराज्ये प्राप्नुयादित्याह॥

किन के सङ्ग से विद्या और राज्य को प्राप्त होवे, इस विषय को कहते हैं॥

पूषन्नु प्र गा इहि यजमानस्य सुन्वतः। अस्माकं स्तुवतामुत॥६॥

पूषन्। अनु। प्र। गाः। इहि। यजमानस्य। सुन्वतः। अस्माकम्। स्तुवताम्। उत॥६॥

पदार्थः-**(पूषन्) (अनु) (प्र)** प्रकर्षेण **(गाः)** सुशिक्षिता वाचो भूमीर्वा **(इहि)** प्राप्नुहि **(यजमानस्य) (सुन्वतः)** यज्ञं सम्पादयतः **(अस्माकम्) (स्तुवताम्)** विद्याप्रशंसकानाम् **(उत) (अपि)**॥६॥

अन्वयः-हे पूषंस्त्वँ सुन्वतो यजमानस्योत स्तुवतामस्माकं गा अनु प्रेहि॥६॥

भावार्थः-हे शिल्पिंस्त्वं राजधनादिसहायेनाऽस्मच्छिक्षकेभ्यश्च विद्याः प्राप्य भूमिराज्यं प्राप्नुहि॥६॥

पदार्थः-हे **(पूषन्)** पुष्टि करने वाले! आप **(सुन्वतः)** यज्ञ के सम्पादन करने वाले **(यजमानस्य)** यज्ञकर्त्ता के **(उत)** और **(स्तुवताम्)** विद्या की प्रशंसा करने वाले **(अस्माकम्)** हम लोगों की **(गाः)** सुन्दर शिक्षित वाणी वा भूमियों को **(अनु, प्र, इहि)** अनुकूलता से प्राप्त होओ॥६॥

भावार्थः-हे शिल्पी विद्वान् जन! आप राजधनादि के सहाय से हम से वा शिक्षा देने वालों से विद्याओं को पाकर भूमिराज्य को प्राप्त होओ॥६॥

केनापि हिंसा नैव कार्येत्याह॥

किसी को हिंसा नहीं करनी चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

माकि॑र्नेश॒न्माकीं॒ रि॑ष॒न्माकीं॒ सं शा॑रि॒ केव॑टे। अथारि॑ष्टाभि॒रा ग॑हि॥७॥

माकि॑ः। ने॒श॒त्। माकी॑म्। रि॒ष॒त्। माकी॑म्। सम्। शा॒रि॒। केव॑टे। अथ॑। अरि॑ष्टाभिः। आ। ग॒हि॒॥७॥

पदार्थः-**(माकिः)** निषेधे **(नेशत्)** नश्येत् **(माकीम्) (रिषत्)** हिंस्यात् **(माकीम्) (सम्) (शारि)** हिंस्यात् **(केवटे)** कूपे। **केवट इति कूपनाम।** (निघं०३।२३) **(अथ) (अरिष्टाभिः)** अहिंसिताभिः क्रियाभिः **(आ) (गहि)** आगच्छ॥७॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यः कदाचिन्माकिर्नेशत्किञ्चन माकीं रिषदथ केवटे माकीं सं शारि तं प्राप्यारिष्टाभिस्त्वमस्माना गहि॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यो नष्टं कर्म न करोति नापि कञ्चन हिनस्ति कूपोदकेनापि कञ्चिन्न पीडयति स एव सर्वान् सङ्गन्तुमर्होऽहिंस्रो जायते॥७॥

पदार्थः-हे विद्वन्! जो कभी **(माकिः)** न **(नेशत्)** नष्ट हो तथा किसी को **(माकीम्)** न **(रिषत्)** नष्ट करे **(अथ)** इसके अनन्तर **(केवटे)** कुँए में **(माकीम्)** न **(सम्, शारि)** नष्ट करे वा कुँए के निमित्त किसी को न नष्ट करे उसको पाकर **(अरिष्टाभिः)** अहिंसित क्रियाओं से आप हम लोगों को **(आ, गहि)** प्राप्त हूजिये॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो नष्ट कर्म नहीं करता न किसी को नष्ट करता है तथा कुँए के जल से भी किसी को नहीं पीड़ा देता, वही सब से सङ्ग करने योग्य और न हिंसा करने वाला होता है॥७॥

मनुष्यैः कस्माद्धनं प्राप्तव्यमित्याह॥

मनुष्यों को किससे धन पाने योग्य है, इस विषय को कहते हैं॥

शृ॒ण्वन्तं॑ पू॒षणं॑ व॒यमि॒र्यम॑नष्टवेदसम्। ईशा॑नं रा॒य ई॑महे॥८॥

शृण्वन्तम्। पूषणम्। वयम्। इर्यम्। अनष्टऽवेदसम्। ईशानम्। रायः। ईमहे॥८॥

पदार्थः-(**शृण्वन्तम्**) (**पूषणम्**) पुष्टिकर्त्तारम् (**वयम्**) (**इर्यम्**) प्रेरणीयम् (**अनष्टवेदसम्**) अनष्टविज्ञानधनम् (**ईशानम्**) ईशनशीलम् (**रायः**) (**ईमहे**) याचामहे॥८॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा वयमिर्यमनष्टवेदसमीशानं शृण्वन्तं पूषणं प्राप्य राय ईमहे तथैनं प्राप्य यूयं धनं याचध्वम्॥८॥

भावार्थः-यः सुपात्रकुपात्रयोर्विद्वदविदुषोर्धार्मिकाऽधार्मिकयोः परीक्षकः स्यात्तस्मादेव पुरुषार्थेन धनं प्राप्तव्यम्॥८॥

पदार्थः-हे मनुष्यो जैसे (**वयम्**) हम लोग (**इर्यम्**) प्रेरणा देने योग्य (**अनष्टवेदसम्**) अक्षतविज्ञानधन तथा (**ईशानम्**) ईश्वरता का शील रखने और (**शृण्वन्तम्**) सुनने और (**पूषणम्**) पुष्टि करने वाले सज्जन विद्वान् को प्राप्त होकर (**रायः**) धनों को (**ईमहे**) मांगते हैं, वैसे इसको प्राप्त होकर तुम सब धन को मांगो॥८॥

भावार्थः-जो सुपात्र और कुपात्र, विद्वान् और अविद्वान् तथा धार्मिक और अधार्मिक की परीक्षा करने वाला हो, उसी के सकाश से पुरुषार्थ से धन पाना चाहिये॥८॥

के कस्मिन्नहिंस्राः स्युरित्याह॥

कौन किसमें अहिंसक हों, इस विषय को कहते हैं॥

पूषन् तव व्रते वयं न रिष्येम कदा चन। स्तोतारस्त इह स्मसि॥९॥

पूषन्। तव। व्रते। वयम्। न। रिष्येम। कदा। चन। स्तोतारः। ते। इह। स्मसि॥९॥

पदार्थः-(**पूषन्**) पालक (**तव**) (**व्रते**) कर्मणि (**वयम्**) (**न**) (**रिष्येम**) हिंस्याम (**कदा**) (**चन**) अपि (**स्तोतारः**) विद्यास्तावकाः (**ते**) तव (**इह**) (**स्मसि**)॥९॥

अन्वयः-हे पूषन्! यस्य त इह स्तोतारो वयं स्मसि तस्य तव व्रते कदा चन न रिष्येम॥९॥

भावार्थः-ये सत्यविद्यानां प्रशंसका मनुष्याः स्युस्ते विद्वत्कर्मणि हिंसका न स्युः॥९॥

पदार्थः-हे (**पूषन्**) पालन करने वाले धर्मात्मन्! जिस (**ते**) आपके (**इह**) इस संसार में (**स्तोतारः**) विद्या की स्तुति करने वाले (**वयम्**) हम लोग (**स्मसि**) हैं उस (**तव**) आपके (**व्रते**) कर्म में (**कदा, चन**) कभी भी हम लोग (**न, रिष्येम**) नष्टकर्त्ता न होवें॥९॥

भावार्थः-जो सत्यविद्याओं की प्रशंसा करने वाले मनुष्य हों, वे विद्वानों के काम में हिंसा करने वाले न हों॥९॥

कैर्गुणैः कीदृशा मनुष्या भवन्तीत्याह॥

किन गुणों से कैसे मनुष्य होते हैं, इस विषय को कहते हैं॥

परि पूषा परस्ताद्धस्तं दधातु दक्षिणम्। पुनर्नो नष्टमाजतु॥१०॥२०॥

परि। पूषा। पुरस्तात्। हस्तम्। दुधातु। दक्षिणम्। पुनः। नः। नष्टम्। आ। अजतु॥ १०॥

पदार्थः-(**परि**) सर्वतः (**पूषा**) पोषकः (**परस्तात्**) (**हस्तम्**) (**दधातु**) (**दक्षिणम्**) (**पुनः**) (**नः**) अस्मभ्यमस्मान् वा (**नष्टम्**) अदृष्टम् (**आ, अजतु**) समन्ताद्ददातु प्राप्नोतु वा॥१०॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यः पूषा दाता दानसमये दक्षिणं हस्तं दधातु स पुनर्नष्टमपि द्रव्यं परस्तात् परि दधातु नोऽस्मान् पुनराजतु॥१०॥

भावार्थः-अस्मिँल्लोके यो दाता स एवोत्तमो यो ग्रहीता सोऽधमो यश्च चौर्य्येण प्रापकः स निकृष्टो वर्त्तत इति वेद्यम्॥१०॥

अत्र विद्वत्सङ्गः शिल्पिप्रशंसोत्तमगुणयाचनं हिंसात्यागो दानप्रशंसा चोक्ता अत एतस्य सूक्तस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति चतुःपञ्चाशत्तमं सूक्तं विंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**पूषा**) पुष्टि करने वाला दानशील (**दक्षिणम्**) दाहिने (**हस्तम्**) हाथ को धारण करे वह (**पुनः**) फिर (**नष्टम्**) नष्ट हुई भी और वस्तु को (**परस्तात्**) पीछे से (**परि, दधातु**) सब ओर से धारण करे (**नः**) हम लोगों को फिर (**आ, अजतु**) अच्छे प्रकार दे वा प्राप्त हो॥१०॥

भावार्थः-इस लोक में जो देने वाला है, वही उत्तम है, जो लेने वाला है, यह अधम है और जो चोरी से प्राप्त करने वाला है, वह निकृष्ट है, यह जानना चाहिये॥१०॥

इस सूक्त में विद्वानों का सङ्ग, शिल्पियों की प्रशंसा, उत्तम गुणों की याचना, हिंसा छोड़ना और दान की प्रशंसा कही है, इससे इस सूक्त के अर्थ कि इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह चौवनवां सूक्त और बीसवां वर्ग पूरा हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ षडर्चस्य पञ्चपञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। पूषा देवता। १, २, ५, ६ गायत्री। ३, ४ विराड्गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः॥

अथ कः सङ्गन्तव्य इत्याह॥

अब छः ऋचावाले पचपनवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में किसका संग करना योग्य है, इस विषय को कहते हैं॥

एहि वां विमुचो नपादाघृणे सं सचावहै। रथीर्ऋतस्य नो भव॥ १॥

आ। इहि। वाम्। विऽमुचः। नपात्। आघृणे। सम्। सचावहै। रथीः। ऋतस्य। नः। भव॥ १॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**इहि**) प्राप्नुहि (**वाम्**) युवाम् (**विमुचः**) मोचय (**नपात्**) यो न पतति सः (**आघृणे**) समन्ताद्देदीप्यमान (**सम्**) (**सचावहै**) सम्बध्नीयाव (**रथीः**) बहुरथवान् (**ऋतस्य**) सत्यस्य (**नः**) अस्मभ्यम् (**भव**)॥१॥

अन्वयः-हे आघृणे नपात्! त्वं न ऋतस्य रथीर्भव न आ इहि, हे अध्यापकोपदेशकौ! वामुक्तविद्वंस्त्वं विमुचस्त्वमहञ्च सं सचावहै॥१॥

भावार्थः-यो विद्वान् सत्यपालकः सत्योपदेष्टा भवेत्स श्रोता च सखायौ त्वा सत्यविद्यां प्राप्तौ भूत्वाऽन्यानपि प्रापयेताम्॥१॥

पदार्थः–हे (**आघृणे**) सब ओर से देदीप्यमान (**नपात्**) जो नहीं गिरते वह! आप (**नः**) हमारे लिये (**ऋतस्य**) सत्य के सम्बन्धी (**रथीः**) बहुत रथोंवाले (**भव**) हो तथा आप हम लोगों को (**आ, इहि**) प्राप्त होओ। हे अध्यापक और उपदेशको! (**वाम्**) तुम दोनों को हे उक्त विद्वन्! आप (**विमुचः**) छोड़ो तथा आप और मैं (**सम्, सचावहै**) सम्बन्ध करें॥१॥

भावार्थः-जो विद्वान् सत्य की पालना करने वाला, सत्य का उपदेशक हो वह और सुनने वाला, मित्र होकर तथा सत्यविद्या को प्राप्त होकर औरों को भी विद्या को प्राप्त करावें॥१॥

पुनः कीदृशाद्धनं प्रापणीयमित्याह॥

फिर कैसे पुरुष से धन प्राप्त करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

रथीतमं कपर्दिनमीशानं राधसो महः। रायः सखायमीमहे॥ २॥

रथिऽतमम्। कपर्दिनम्। ईशानम्। राधसः। महः। रायः। सखायम्। ईमहे॥ २॥

पदार्थः-(**रथीतमम्**) बहवो रथा विद्यन्ते यस्य तम् (**कपर्दिनम्**) जटाजूटं सखायं (**ईशानम्**) ऐश्वर्ययुक्तम् (**राधसः**) धनस्य (**महः**) महान् (**रायः**) साधारणधनस्य (**सखायम्**) मित्रम् (**ईमहे**) याचामहे॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्या! वयं यन्महो राधसो राय ईशानं रथीतमं कपर्दिनं सखायं विद्वांसमीमहे तं यूयमपि याचध्वम्॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यो ब्रह्मचारी भूत्वाऽधीतविद्यः पुरुषार्थी बहुधनस्य स्वामी वर्त्तते तस्मादेव विद्यामधीत्य श्रियः प्राप्नुत॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! हम लोग जिस **(महः)** महान् **(राधसः)** धन के वा **(रायः)** साधारण धन के **(ईशानम्)** ऐश्वर्य्य से युक्त **(रथीतमम्)** जिसके बहुत रथ विद्यमान **(कपर्दिनम्)** जो जटाजूट ब्रह्मचारी **(सखायम्)** मित्र विद्वान् उसकी **(ईमहे)** याचना करते हैं, उसकी तुम भी याचना करो॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो ब्रह्मचारी होकर विद्या पढ़ा हुआ पुरुषार्थी तथा बहुत धन का स्वामी है, उसी से विद्या पढ़कर धन को प्राप्त होओ॥२॥

अथ कः सर्वस्य सुखप्रदो भवतीत्याह॥

अब कौन सब को सुख देने वाला होता है, इस विषय को कहते हैं॥

रायो धारास्याघृणे वसो राशिरजाश्व। धीवतोधीवतः सखा॥३॥

रायः। धारा। असि। आघृणे। वसोः। राशिः। अजऽअश्व। धीवतःऽधीवतः। सखा॥३॥

पदार्थः-**(रायः)** धनस्य **(धारा)** प्रापिका वागिव **(असि)** **(आघृणे)** विद्यया प्रकाशमान **(वसोः)** वासयितुः **(राशिः)** समूहः **(अजाश्व)** अजोऽनुत्पन्नो विद्युदश्वो यस्य तत्सम्बुद्धौ **(धीवतोधीवतः)** प्राज्ञस्य प्राज्ञस्य **(सखा)**॥३॥

अन्वयः-हे अजाश्वाऽऽघृणे विद्वन्! यतस्त्वं वसो रायो राशिरिव धारेव धीवतोधीवतः सखाऽसि तस्मात् सकर्त्तव्योऽसि॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्याः प्राज्ञानां सखायः पदार्थविद्याविदो धनाढ्याः स्युस्ते सर्वेषां सुखप्रदा भवन्ति॥३॥

पदार्थः-हे **(अजाश्व)** अविनाशी बिजुलीरूप घोड़े वाले **(आघृणे)** विद्या से प्रकाशमान विद्वन्! जिससे आप **(वसोः)** वास कराने वाले **(रायः)** धन की **(राशिः)** ढेरी के समान वा **(धारा)** प्राप्ति कराने वाली वाणी के समान **(धीवतोधीवतः)** प्राज्ञ प्राज्ञ के **(सखा)** मित्र **(असि)** हो, इससे सत्कार करने योग्य हो॥१३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य प्राज्ञ पुरुषों के मित्र, पदार्थविद्याओं के जानने वाले तथा धनाढ्य हों, वे सबके सुख देने वाले होते हैं॥३॥

पुनः कैर्गुणैरुत्कृष्टो भवतीत्याह॥

फिर किन गुणों से उत्कृष्ट होता है, इस विषय को कहते हैं॥

पूषणं न्व१जाश्वमुप स्तोषाम वाजिनम्। स्वसुर्यो जार उच्यते॥४॥

पूषणम्। नु। अजऽअश्वम्। उप। स्तोषाम। वाजिनम्। स्वसुः। यः। जारः। उच्यते॥४॥

पदार्थः-(**पूषणम्**) पोषकम् (**नु**) सद्यः (**अजाश्वम्**) अजाश्चाश्वाश्चास्मिँस्तम् (**उप**) (**स्तोषाम**) प्रशंसेम (**वाजिनम्**) ज्ञानबलप्रदम् (**स्वसुः**) भगिन्या इव वर्त्तमानाया उषसः (**यः**) (**जारः**) जरयिता (**उच्यते**)॥४॥

अन्वयः-य स्वसुर्जार उच्यते तं वाजिनमजाश्वं पूषणमादित्यं वयं नूप स्तोषाम॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजादयो मनुष्या! यथा सूर्यो रात्रेर्निवारकोऽस्ति तथैव प्रजासु जारकर्मणि वर्त्तमानान् मनुष्यान्निवारयत॥४॥

पदार्थः-(**यः**) जो (**स्वसुः**) बहिन के समान वर्त्तमान उषा का (**जारः**) जीर्ण कराने वाला (**उच्यते**) कहा जाता है उस (**वाजिनम्**) ज्ञान और बल का देने वाला (**अजाश्वम्**) जिसमें बकरी और घोड़े विद्यमान (**पूषणम्**) जो पुष्टि करने वाला है, उस आदित्य की हम (**नु**) शीघ्र (**उप, स्तोषाम**) प्रशंसा करें॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजा आदि मनुष्यो! जैसे सूर्य्य रात्रि का निवारण करने वाला है, वैसे ही प्रजाजनों में जारकर्म में वर्त्तमान मनुष्यों का निवारण करो॥४॥

पुनर्मनुष्याः किं जानीयुरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या जानें, इस विषय को कहते हैं॥

मातुर्दिधिषुमब्रवं स्वसुर्जारः शृणोतु नः। भ्रातेन्द्रस्य सखा मम॥५॥

मातुः। दिधिषुम्। अब्रवम्। स्वसुः। जारः। शृणोतु। नः। भ्राता। इन्द्रस्य। सखा। मम॥५॥

पदार्थः-(**मातुः**) जनन्याः (**दिधिषुम्**) धारकम् (**अब्रवम्**) ब्रूयाम् (**स्वसुः**) भगिन्या इवोषसः (**जारः**) निवारयिता (**शृणोतु**) (**नः**) अस्माकम् (**भ्राता**) बन्धुरिव (**इन्द्रस्य**) विद्युतः (**सखा**) (**मम**)॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! य इन्द्रस्य भ्रातेव मम सखा नो दिधिषुं शृणोतु यः स्वसुर्जारो मातुर्धर्त्ताऽस्ति तमहमब्रवं तं सर्वे विजानन्तु॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथाऽग्ने सखा वायुरस्ति रात्रेर्निवर्त्तकः सूर्य्यश्च तथैव धार्मिका मम सखायोऽहं च तेषां सुहृद्भूत्वा रात्रिमिव वर्त्तमानामविद्यां वयं निवारयेम॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**इन्द्रस्य**) बिजुली के (**भ्राता**) भ्राता के समान (**मम**) मेरा (**सखा**) मित्र (**नः**) हम लोगों के (**दिधिषुम्**) धारण करने वाले को (**शृणोतु**) सुने और जो (**स्वसुः**) भगिनी के समान उषा का (**जारः**) निवारण करने वाला (**मातुः**) माता का धारण करने वाला है, उसको मैं (**अब्रवम्**) कहूं और उसको सब जानें॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे अग्नि का मित्र वायु है, और रात्रि का निवारण करने वाला सूर्य भी है, वैसे ही धार्मिक मेरे मित्र और मैं भी उनका मित्र होकर रात्रि के समान वर्त्तमान अविद्या का हम सब निवारण करें॥५॥

पुनर्मनुष्याः किं विदित्वा किं प्राप्नुवन्तीत्याह॥

फिर मनुष्या क्या जान के किसको प्राप्त होते हैं, इस विषय को कहते हैं॥

आजासः पूषणं रथे निशृम्भास्ते जनश्रियम्। देवं वहन्तु बिभ्रतः॥६॥२१॥

आ। अजासः। पूषणम्। रथे। निऽशृम्भाः। ते। जनऽश्रियम्। देवम्। वहन्तु। बिभ्रतः॥६॥

पदार्थः-(**आ**) (**अजासः**) पुष्टिकर्त्तुरश्वाः (**पूषणम्**) पोषकं सूर्य्यम् (**रथे**) रमणीये जगति (**निशृम्भाः**) नित्यं सम्बद्धारः (**ते**) (**जनश्रियम्**) जनानां शोभा लक्ष्मीर्यस्य तम् (**देवम्**) दिव्यगुणं विद्वांसम् (**वहन्तु**) प्राप्नुवन्तु (**बिभ्रतः**) धारकान् पोषकान्॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ये निशृम्भा अजासः पूषणं जनश्रियं देवं बिभ्रतो धर्तारं रथ आ वहन्तु ते सर्वमिष्टं प्राप्नुवन्ति॥६॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! यूयं शरीरात्मपुष्टिकरान् पदार्थान् विदित्वोपयुज्यैश्वर्यं प्राप्नुत॥६॥

अत्र पूषादित्यगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति पञ्चपञ्चाशत्तमं सूक्तमेकविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**निशृम्भाः**) नित्य सम्बन्ध करने वाले (**अजासः**) पुष्टिकर्त्ता सूर्य्य के किरणरूप अश्व (**पूषणम्**) पुष्ट करने वाले सूर्य्य वा (**जनश्रियम्**) जिसके मनुष्यों की शोभा विद्यमान उस (**देवम्**) दिव्यगुणवाले विद्वान् के (**बिभ्रतः**) धारक अर्थात् पुष्टि करने वालों और धारण करने वालों को (**रथे**) रमणीय जगत् में (**आ, वहन्तु**) अच्छे प्रकार प्राप्त करें (**ते**) वे सर्व चाही हुई वस्तु को प्राप्त होते हैं॥६॥

भावार्थः-हे विद्वानो! तुम शरीर और आत्मा की पुष्टि करने वाले पदार्थों को जानकर और उनसे उपयोग लेकर ऐश्वर्य्य को प्राप्त होओ॥६॥

इस मन्त्र में पूषा और आदित्य के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह पचपनवां सूक्त और इक्कीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ षड़चस्य षट्पञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। पूषा देवता। १, ४, ५ गायत्री। २, ३ निचृद्गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः। ६ स्वरादुष्णिक्छन्दः। ऋषभः स्वरः॥

अथ केन कस्मै किमुपदेष्टव्यमित्याह॥

अब छः ऋचावाले छप्पनवें सूक्त का प्रारम्भ है, इसके प्रथम मन्त्र में किसको किसके लिये क्या उपदेश करने योग्य है, इस विषय को कहते हैं॥

य एनमादिदेशति करम्भादिति पूषणम्। न तेन देव आदिशे॥ १॥

यः। एनम्। आऽदिदेशति। करम्भऽअत् इति। पूषणम्। न। तेन। देव। आऽदिशे॥ १॥

पदार्थः-(**यः**) (**एनम्**) विद्युदादिस्वरूपम् (**आदिदेशति**) समन्तात् सम्यगुपदिशति (**करम्भात्**) यः करम्भमन्नविशेषमत्ति सः (**इति**) अनेन प्रकारेण (**पूषणम्**) पोषकम् (**न**) (**तेन**) (**देवः**) विद्वान् (**आदिशे**) अभिप्रशंसे॥१॥

अन्वयः-यः करम्भाद्देव एनं पूषणमादिदेशति इति तेन सहाऽहमन्यथा नादिशे॥१॥

भावार्थः-ये मनुष्याः सत्यमुपदिशन्ति ते सर्वानन्दं प्राप्नुवन्ति॥१॥

पदार्थः-(**यः**) जो (**करम्भात्**) करम्भ कहानेवाले नामक अन्न को खाने वाला (**देवः**) विद्वान् (**एनम्**) बिजुली आदि रूप वाले (**पूषणम्**) पुष्टि करने वाले को (**आदिदेशति**) सब ओर से अच्छे प्रकार उपदेश करता है (**इति**) इस प्रकार (**तेन**) उसके साथ मैं अन्यथा (**न**) नहीं (**आदिशे**) सब ओर से प्रशंसा करता हूँ॥१॥

भावार्थः-जो मनुष्य सत्य का उपदेश करते हैं, वे सब आनन्द को प्राप्त होते हैं॥१॥

पुनः स कीदृशो भवतीत्याह॥

फिर वह कैसा होता है, इस विषय को कहते हैं॥

उत घा स रथीतमः सख्या सत्पतिर्युजा। इन्द्रो वृत्राणि जिघ्नते॥ २॥

उत। घ। सः। रथिऽतमः। सख्या। सत्ऽपतिः। युजा। इन्द्रः। वृत्राणि। जिघ्नते॥ २॥

पदार्थः-(**उत**) अपि (**घा**) एव। अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। (**सः**) (**रथीतमः**) अतिशयेन रथयुक्तः (**सख्या**) मित्रेण सह (**सत्पतिः**) सतां पालकः (**युजा**) युक्तेन (**इन्द्रः**) सूर्य्येव राजा (**वृत्राणि**) घनानिव शत्रून् (**जिघ्नते**) हन्ति॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो युजा सख्या सत्पतिरुत रथीतम इन्द्रो यथा सूर्यो वृत्राणि हन्ति तथा शत्रूञ्जिघ्नते स घा कृतकृत्यो भवति॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये सत्यसत्पुरुषैः सह मित्रतां दुष्टैः सहोदासीनतां कुर्वन्ति ते दुष्टान्निवार्य्य श्रेष्ठान् स्वीकर्तुं शक्नुवन्ति॥२॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! जो **(युजा)** युक्त **(सख्या)** मित्र के साथ **(सत्पति:)** सज्जनों की पालना करने वाला **(उत)** और **(रथीतम:)** अतीव रथयुक्त **(इन्द्र:)** सूर्य के समान राजा जैसे सूर्य **(वृत्राणि)** मेघों को मारता है, वैसे **(जिघ्नते)** शत्रुओं को मारता है **(स:)** वह **(घा)** ही कृतकृत्य होता है॥२॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जो सत्य तथा सत्पुरुषों के साथ मित्रता तथा दुष्टों के साथ उदासीनता करते हैं, वे दुष्टों को निवार कर श्रेष्ठों का स्वीकार कर सकते हैं॥२॥

पुनर्मनुष्यै: कीदृशं भाषणं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को कैसा भाषण करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

उ॒ताद॒: प॑रु॒षे गवि॒ सूर॑श्च॒क्रं हि॑र॒ण्यय॑म्। न्यै॑रयद्र॒थीत॑म:॥३॥

उ॒त। अ॒द:। प॒रु॒षे। गवि॑। सूर॑:। च॒क्रम्। हि॒र॒ण्यय॑म्। नि। ऐ॒र॒य॒त्। र॒थिऽत॑म:॥३॥

पदार्थ:-**(उत)** अपि **(अद:)** तत् **(परुषे)** कठोरे व्यवहारे **(गवि)** वाचि **(सूर:)** वीर: **(चक्रम्)** **(हिरण्ययम्)** सुवर्णादियुक्तं तेजोमयं वा **(नि)** **(ऐरयत्)** प्रेरयेत् **(रथीतम:)** अतिशयेन रथादियुक्त:। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घ:॥३॥

अन्वय:-हे मनुष्या! यो रथीतम: सूरोऽदो हिरण्ययं चक्रं न्यैरयदुत स परुषे गवि न प्रवर्त्तेत॥३॥

भावार्थ:-यो मनुष्य: कठोरभाषणं विहाय कोमलभाषणं करोति स सदाऽऽनन्दी भवति॥३॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! जो **(रथीतम:)** अतीव रथादि पदार्थों से युक्त **(सूर:)** वीर पुरुष **(अद:)** उस **(हिरण्ययम्)** सुवर्णादि युक्त वा तेजोमय **(चक्रम्)** चक्र को **(नि, ऐरयत्)** निरन्तर प्रेरित करे वह **(उत)** निश्चय से **(परुषे)** कठोर व्यवहार में और **(गवि)** वाणी में नहीं प्रवृत्त हो॥३॥

भावार्थ:-जो मनुष्य कठोर भाषण को छोड़ कोमल भाषण करता है, वह सदा आनन्दी होता है॥३॥

पुनर्विद्वान् किं कुर्यादित्याह॥

फिर विद्वान् क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

यद॒द्य त्वा॑ पुरुष्टुत ब्रवा॑म दस्र मन्तुम:। तत्सु नो॒ मन्म॑ साधय॥४॥

यत्। अ॒द्य। त्वा॒। पु॒रु॒ऽस्तु॒त॒। ब्रवा॑म। द॒स्र॒। म॒न्तु॒ऽम॒:। तत्। सु। न॒:। मन्म॑। सा॒ध॒य॒॥४॥

पदार्थ:-**(यत्)** यत् ज्ञानम् **(अद्य)** **(त्वा)** त्वाम् **(पुरुष्टुत)** बहुभि: प्रशंसित **(ब्रवाम)** वदेम **(दस्र)** दु:खोपक्षयित: **(मन्तुम:)** प्रशस्तविज्ञानयुक्त **(तत्)** **(सु)** **(न:)** अस्मभ्यम् **(मन्म)** विज्ञानम् **(साधय)**॥४॥

अन्वय:-हे पुरुष्टुत दस्र! मन्तुमोऽद्य वयं यत्त्वा ब्रवाम स त्वं नस्तन्मन्म सु साधय॥४॥

भावार्थ:-मनुष्यै: सर्वदा सम्मुखेऽन्यत्र वा सत्यमेव वाच्यं येन सत्यं ज्ञानं सर्वत्र वर्धेत॥४॥

पदार्थः-हे **(पुरुष्टुत)** बहुतों से प्रशंसा को प्राप्त **(दस्र)** दुःख को नष्ट करने वाले! **(मन्तुमः)** प्रशस्तविज्ञानयुक्त **(अद्य)** आज हम **(यत्)** जिस ज्ञान को **(त्वा)** तुझ को **(ब्रवाम)** कहें वह तू **(नः)** हमारे लिये **(तत्)** उस **(मन्म)** विज्ञान को **(सु, साधय)** अच्छे प्रकार सिद्ध कर॥४॥

भावार्थः-मनुष्यों को सर्वदा सम्मुख वा अन्यत्र सत्य ही कहना चाहिये, जिससे सत्य ज्ञान सर्वत्र बढ़े॥४॥

पुनर्विद्वान् किं कुर्यादित्याह॥

फिर विद्वान् क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

इमं च नो गवेषणं सातये सीषधो गणम्। आरात् पूषन्नसि श्रुतः॥५॥

इमम्। च। नः। गोऽएषणम्। सातये। सीसधः। गणम्। आरात्। पूषन्। असि। श्रुतः॥५॥

पदार्थः-**(इमम्)** **(च)** **(नः)** अस्माकम् **(गवेषणम्)** गवां वाचादीनामीषणं येन तम् **(सातये)** संविभागाय **(सीषधः)** साधय **(गणम्)** समूहम् **(आरात्)** समीपाद्दूराद्वा **(पूषन्)** पुष्टिकर्त्तः **(असि)** **(श्रुतः)** योऽश्रावि सः॥५॥

अन्वयः-हे पूषन्! यतस्त्वमाराच्छ्रुतोऽसि तस्मात् सातये न इमं गवेषणं गणं च सीषधः॥५॥

भावार्थः-हे विद्वन्! यस्माद्भवानाप्तगुणैर्युक्तोऽस्ति तस्मादस्माकं मनुष्याणां सङ्घान् विदुषः करोतु॥५॥

पदार्थः-हे **(पूषन्)** पुष्टि करनेवाले! जिससे आप **(आरात्)** समीप वा दूर से **(श्रुतः)** सुने हुए **(असि)** हो इससे **(सातये)** संविभाग करने के लिये **(नः)** हमारे **(इमम्)** इस **(गवेषणम्)** वाणी आदि पदार्थों की प्रेरणा करने वाले को तथा **(गणम्)** अन्य पदार्थों के समूह को **(च)** भी **(सीषधः)** साधो॥५॥

भावार्थः-हे विद्वन्! जिससे आप आप्त विद्वानों के गुणों से युक्त हैं, इससे हम मनुष्यों के सङ्घों को विद्वान् करो॥५॥

पुनः सर्वैर्विद्वदर्थं किमेष्टव्यमित्याह॥

फिर सब को विद्वानों के लिये क्या इच्छा करनी चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

आ ते स्वस्तिमीमह आरेअघामुपावसुम्।
अद्या च सर्वतातये श्वश्च सर्वतातये॥६॥२२॥

आ। ते। स्वस्तिम्। ईमहे। आरेऽअघाम्। उपऽवसुम्। अद्य। च। सर्वऽतातये। श्वः। च। सर्वऽतातये॥६॥

पदार्थः-**(आ)** समन्तात् **(ते)** तुभ्यम् **(स्वस्तिम्)** सुखम् **(ईमहे)** याचामहे **(आरेअघाम्)** आरे दूरेऽघं पापं यस्याम् **(उपावसुम्)** उप समीपे वसूनि यस्यां ताम् **(अद्या)** अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। **(च)** **(सर्वतातये)** सम्पूर्णसुखसाधकाय यज्ञाय **(श्वः)** आगामिदिने **(च)** तस्मादप्यग्रे **(सर्वतातये)** सर्वसुखकराय॥६॥

अन्वयः-हे विद्वन्! सर्वतातये तेऽद्या च श्वश्च सर्वतातये आरेअघामुपावसुं स्वस्तिं वयमा ईमहे॥६॥

भावार्थ:-हे विद्वन्! यतो भवान् पापाचरणात् पृथक्सर्वस्य कल्याणकर्त्ताऽस्ति तस्माद्भवदर्थं सदैव सुखं वयमिच्छेमेति॥६॥

अत्रोपदेशकश्रोतृपूषार्थवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति षट्पञ्चाशत्तमं सूक्तं द्वाविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थ:-हे विद्वन्! **(सर्वतातये)** सम्पूर्ण सुख सिद्ध करने वाले यज्ञ के लिये **(ते)** तेरे लिये **(अद्या)** आज **(च)** और **(श्वः)** आगामी दिन **(च)** भी **(सर्वतातये)** सर्वसुख करने वाले और पदार्थ के लिये **(आरेअघाम्)** जिसमें पाप दूर पहुंचे तथा **(उपावसुम्)** वा समीप धन आदि पदार्थ विद्यमान उस **(स्वस्तिम्)** सुख को हम **(आ, ईमहे)** अच्छे प्रकार मांगते हैं॥६॥

भावार्थ:-हे विद्वन्! जिससे आप पापाचरण से अलग तथा सबके कल्याण करने वाले हैं, इससे आपके लिये सदैव सुख की इच्छा हम लोग करें॥६॥

इस सूक्त में उपदेशक, श्रोता और पूषा शब्द के अर्थ का वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह छप्पनवाँ सूक्त और बाईसवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ षड्चस्य सप्तपञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। इन्द्रापूषणौ देवते। १, ६ विराड्गायत्री। २ निचृद्गायत्री। ३, ४, ५ गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः॥

अथ मनुष्यैः केन सह सख्यं कार्य्यमित्याह॥

अब छः ऋचावाले सत्तावनवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में मनुष्यों को किसके साथ मित्रता करनी चाहिये, इस विषय का वर्णन करते हैं॥

इन्द्रा नु पूषणा वयं सख्याय स्वस्तये। हुवेम वाजसातये॥१॥

इन्द्रा नु। पूषणा। वयम्। सख्याय। स्वस्तये। हुवेम। वाजऽसातये॥१॥

पदार्थः-(**इन्द्रा**) परमैश्वर्य्ययुक्तम् (**नु**) सद्यः (**पूषणा**) सर्वेषां पोषकम् (**वयम्**) (**सख्याय**) मित्रत्वाय (**स्वस्तये**) सुखाय (**हुवेम**) स्वीकुर्याम (**वाजसातये**) अन्नादीनां विभागो यस्मिँस्तस्मै॥१॥

अन्वयः-इन्द्रापूषणा वयं सख्याय स्वस्तये वाजसातये नु हुवेम॥१॥

भावार्थः-ये विश्वस्मिन् मैत्रीं विधाय सर्वस्य सुखमिच्छन्ति तानेव वयं स्वीकुर्याम॥१॥

पदार्थः-(**इन्द्रा, पूषणा**) परम ऐश्वर्य्य युक्त को तथा सबको पुष्टि करने वाले को (**वयम्**) हम लोग (**सख्याय**) मित्रता तथा (**स्वस्तये**) सुख वा (**वाजसातये**) अन्नादिकों का जिसमें विभाग है उसके लिये (**नु**) शीघ्र (**हुवेम**) स्वीकार करें॥१॥

भावार्थः-जो सब में मित्रता विधान कर सबके सुख की चाहना करते हैं, उन्हीं को हम लोग स्वीकार करें॥१॥

पुनर्विद्वांसः किंवत् किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर विद्वान् जन किसके तुल्य क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

सोममन्य उपासदत् पातवे चम्वोः सुतम्। करम्भमन्य इच्छति॥२॥

सोमम्। अन्यः। उप। असदत्। पातवे। चम्वोः। सुतम्। करम्भम्। अन्यः। इच्छति॥२॥

पदार्थः-(**सोमम्**) ऐश्वर्यम् (**अन्यः**) (**उप**) (**असदत्**) उपसीदति (**पातवे**) पातुम् (**चम्वोः**) द्यावापृथिव्योर्मध्ये (**सुतम्**) निष्पन्नम् (**करम्भम्**) भोगं कर्तुं योग्यम् (**अन्यः**) (**इच्छति**)॥२॥

अन्वयः-हे इन्द्रापूषणौ! युवयोरन्य एकश्चम्वोर्मध्ये सुतं सोमं पातव उपासददन्यः करम्भमिच्छति तौ वयं सख्याद्याय हुवेम॥२॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! यथा सूर्याचन्द्रमसौ द्यावापृथिव्योर्मध्ये वर्त्तमानौ सन्तावनयोः सूर्य्यो रसं गृह्णाति चन्द्रो रसदानं च करोति तथैव यूयं वर्त्तध्वम्॥२॥

पदार्थः-हे परमैश्वर्य्ययुक्त और सब की पुष्टि करने वाले! तुम दोनों में से (**अन्यः**) एक जन (**चम्वोः**) आकाश और पृथिवी के बीच (**सुतम्**) उत्पन्न हुए (**सोमम्**) ऐश्वर्य्य के (**पातवे**) पीने को (**उप,**

असदत्) दूसरे के समीप बैठता है **(अन्यः)** और दूसरा **(करम्भम्)** भोगने योग्य पदार्थ को **(इच्छति)** चाहता है, उन दोनों को हम लोग मित्रता आदि के लिये स्वीकार करते हैं॥२॥

भावार्थः-हे विद्वान् जनो! जैसे सूर्य और चन्द्रमा द्यावा और पृथिवी के बीच वर्त्तमान होते हुए हैं, इन दोनों में से सूर्य्य रस को लेता है और चन्द्रमा रस को देता है, वैसे ही तुम सब वर्त्तो॥२॥

पुनराभ्यां मनुष्यैः किं प्राप्यमित्याह॥

फिर इन दोनों से मनुष्यों को क्या प्राप्त होना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

अजा अन्यस्य वह्नयो हरी अन्यस्य सम्भृता। ताभ्यां वृत्राणि जिघ्नते॥३॥

अजाः। अन्यस्य। वह्नयः। हरी इति। अन्यस्य। सम्ऽभृता। ताभ्याम्। वृत्राणि। जिघ्नते॥३॥

पदार्थः-**(अजाः)** नित्याः **(अन्यस्य)** भूमेः **(वह्नयः)** वोढारः **(हरी)** हरणशीलौ धारणाकर्षणौ **(अन्यस्य)** विद्युतः **(सम्भृता)** सम्यग्धृतौ **(ताभ्याम्)** **(वृत्राणि)** धनानि **(जिघ्नते)** प्राप्नोति॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्यास्तयोर्यस्याऽन्यस्य वह्नयोऽजा यस्याऽन्यस्य हरी सम्भृता वर्त्तेते ताभ्यां यो वृत्राणि जिघ्नते तं यूयं सत्कुरुत॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! मिलितयोर्भूमिविद्युतोः सकाशाद्यूयं धनानि प्राप्नुत॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! उन दोनों के बीच जिस **(अन्यस्य)** भूमि के सम्बन्ध **(वह्नयः)** पदार्थ को एक स्थान से दूसरे स्थान में पहुंचाने वाले **(अजाः)** नित्य अर्थात् जो नष्ट नहीं होते वा जिस **(अन्यस्य)** और दूसरे बिजुलीरूप अग्नि के **(हरी)** हरणशील **(सम्भृता)** अच्छे प्रकार धारण किये हुए धारण और आकर्षण गुण वर्त्तमान हैं **(ताभ्याम्)** उनसे जो **(वृत्राणि)** धनों को **(जिघ्नते)** प्राप्त होता है, उसका तुम सत्कार करो॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! मिले हुए भूमि और बिजुली की उत्तेजना से तुम धनों को प्राप्त होओ॥३॥

पुनर्मनुष्यैः किं वेदितव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या जानना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

यदिन्द्रो अनयद्रितो महीरपो वृषन्तमः। तत्र पूषाभवत् सचा॥४॥

यत्। इन्द्रः। अनयत्। रितः। महीः। अपः। वृषन्ऽतमः। तत्र। पूषा। अभवत्। सचा॥४॥

पदार्थः-**(यत्)** यः **(इन्द्रः)** विद्युत् **(अनयत्)** नयति **(रितः)** गन्त्रीः **(महीः)** भूमीः **(अपः)** जलानि **(वृषन्तमः)** अतिशयेन वृष्टिकर्त्ता **(तत्र)** **(पूषा)** भूमिः **(अभवत्)** भवति **(सचा)** समवेता॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यद्यो वृषन्तम इन्द्रो रितो महीरपोऽनयत्तत्र पूषा सचाऽभवत्तं यूयं विजानीत॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! या विद्युत् पृथिव्युदकस्था सर्वं यथासमयं यथास्थानं नयति यया संयुक्ता पृथिवी वर्त्तते तां विज्ञाय कलायन्त्रैरुद्घाट्य सर्वाणि कार्याणि साध्नुवन्तु॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यत्)** जो **(वृषन्तमः)** अतीव वर्षा करने वाला **(इन्द्रः)** बिजुली रूप अग्नि **(रितः)** अपनी कक्षाओं में घूमने वाली **(महीः)** भूमि और **(अपः)** जलों को **(अनयत्)** पहुंचाता है **(तत्र)** वहाँ **(पूषा)** भूमि **(सचा)** संयुक्त **(अभवत्)** होती है, उसको तुम लोग जानो॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो बिजुली पृथिवी और जल के बीच स्थिर हुई सबको समय समय पर प्रतिस्थान पहुंचाती है, उसके साथ पृथिवी वर्त्तमान है, उसको जान कलायन्त्रों से उसे उठा सब कामों को सिद्ध करो॥४॥

पुनर्मनुष्यैः किं विज्ञाय किमारब्धव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या जान कर क्या आरम्भ करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

तां पूष्णः सुमतिं वयं वृक्षस्य प्र वयामिव। इन्द्रस्य चा रभामहे॥५॥

ताम्। पूष्णः। सुऽमतिम्। वयम्। वृक्षस्य। प्र। वयाम्ऽइव। इन्द्रस्य। च। आ। रभामहे॥५॥

पदार्थः-**(ताम्)** **(पूष्णः)** पृथिव्याः **(सुमतिम्)** शोभनां प्रज्ञाम् **(वयम्)** **(वृक्षस्य)** छेद्यस्य **(प्र)** **(वयामिव)** यथा वृक्षस्य सुदृढां विस्तीर्णां शाखाम् **(इन्द्रस्य)** विद्युतः **(च)** **(आ)** समन्तात् **(रभामहे)** आरम्भं कुर्याम॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! वयं यां पूष्णः सुमतिं वृक्षस्य वयामिवेन्द्रस्य च प्राऽऽरभाम तथा तां यूयमपि प्रारभध्वम्॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यूयं भूगर्भविद्यां रिद्युद्विद्यां च प्राप्य कार्यसिद्धये क्रियामारभध्वम्॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(वयम्)** हम लोग जिस **(पूष्णः)** पृथिवी सम्बन्धिनी **(सुमतिम्)** उत्तम बुद्धि को **(वृक्षस्य)** काटने योग्य पदार्थ की **(वयामिव)** वृक्ष की दृढ़ विस्तीर्ण शाखा के समान वा **(इन्द्रस्य)** बिजुलीरूप अग्नि सम्बन्धिनी उत्तम मति का **(च)** भी **(प्र, आ, रभामहे)** आरम्भ करें [वैसे] **(ताम्)** उसको तुम भी प्रारम्भ करो॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! तुम भूगर्भविद्या और विद्युद्विद्या को प्राप्त होकर कार्यसिद्धि के लिये क्रिया का आरम्भ करो॥५॥

पुनर्मनुष्यैः किं प्राप्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या प्राप्त होने योग्य है, इस विषय को कहते हैं॥

उत्पूषणं युवामहेऽभीशूंरिव सारथिः। मह्या इन्द्रं स्वस्तये॥६॥२३॥

उत्। पूषणम्। युवामहे। अभीशून्ऽइव। सारथिः। मह्यै। इन्द्रम्। स्वस्तये॥६॥

पदार्थः-**(उत्)** **(पूषणम्)** भूमिम् **(युवामहे)** विभजामहे **(अभीशूनिव)** रश्मीनिव **(सारथिः)** नियन्ता **(मह्यै)** पृथिव्यै **(इन्द्रम्)** विद्युतम् **(स्वस्तये)** सुखाय॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा वयं मह्यै स्वस्तये सारथिरभीशूनिव पूषणमिन्द्रं चोद्युवामहे तथैव यूयमपि कुरुत॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यदि मनुष्या भूमिविद्युतोर्विभागं कुर्युस्तर्हि पुष्कलं सुखं प्राप्नुयुरिति॥६॥

अत्र भूमिविद्युद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति सप्तपञ्चाशत्तमं सूक्तं त्रयोविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे हम लोग **(मह्यै)** पृथिवी और **(स्वस्तये)** सुख के लिये **(सारथिः)** नियन्ता अर्थात् एक स्थान से दूसरे स्थान को पहुंचाने वाला **(अभीशूनिव)** रश्मियों के समान **(पूषणम्)** भूमि को और **(इन्द्रम्)** विद्युत् रूप अग्नि को **(उत्, युवामहे)** उत्तमता से अमल करते हैं, वैसे ही तुम भी करो॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। यदि मनुष्य भूमि और बिजुली का विभाग करे तो बहुत सुख पावें॥६॥

इस सूक्त में भूमि और बिजुली के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह सत्तावनवां सूक्त और तेईसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अत्र चतुर्ऋचस्याष्टपञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। पूषा देवता। १ त्रिष्टुप्। ३, ४ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २ विराड् जगती छन्दः। निषादः स्वरः॥

पुनर्मनुष्याः किं कृत्वा किं प्राप्नुवन्तीत्याह॥

अब चार ऋचावाले अट्ठावनवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में फिर मनुष्य क्या करके क्या पाते हैं, इस विषय को कहते हैं॥

शुक्रं ते अन्यद्यजतं ते अन्यद्विषुरूपे अहनी द्यौरिवासि।
विश्वा हि माया अवसि स्वधावो भद्रा ते पूषन्निह रातिरस्तु॥१॥

शुक्रम्। ते। अन्यत्। यजतम्। ते। अन्यत्। विषुरूपे इति विषुऽरूपे। अहनी इति। द्यौःऽइव। असि। विश्वाः। हि। मायाः। अवसि। स्वधाऽवः। भद्रा। ते। पूषन्। इह। रातिः। अस्तु॥१॥

पदार्थः-(**शुक्रम्**) शुद्धम् (**ते**) तव (**अन्यत्**) (**यजतम्**) सङ्गन्तव्यम् (**ते**) तव (**अन्यत्**) रूपम् (**विषुरूपे**) व्याप्तस्वरूपे (**अहनी**) रात्रिदिने (**द्यौरिव**) सूर्य्यप्रकाश इव (**असि**) (**विश्वाः**) संपूर्णाः (**हि**) खलु (**मायाः**) प्रज्ञाः (**अवसि**) (**स्वधावः**) बह्वन्नयुक्त (**भद्रा**) कल्याणकारिणी (**ते**) तव (**पूषन्**) पोषणकर्त्तः (**इह**) (**रातिः**) दानक्रिया (**अस्तु**)॥१॥

अन्वयः-हे स्वधावः पूषंस्ते तवान्यच्छुक्रं तेऽन्यदस्ति युवां विषुरूपेऽहनी यजतं द्यौरिव विश्वा मायास्त्वमवसि यस्य ते भद्रा रातिरिहास्तु स हि त्वं सत्कर्त्तव्योऽसि॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये पुरुषा अहोरात्रवत्क्रमेण कार्य्याणि साध्नुवन्ति तेऽखिलां सामग्रीं प्राप्य सूर्य्यप्रकाश इव सत्कीर्त्तयो जायन्ते॥१॥

पदार्थः-हे (**स्वधावः**) बहुत अन्नवाले और (**पूषन्**) पुष्टिकर्त्ता जन (**ते**) आपका (**अन्यत्**) और (**शुक्रम्**) शुद्धरूप तथा (**ते**) आपका (**अन्यत्**) रूप है सो तुम दोनों (**विषुरूपे**) व्याप्तरूप (**अहनी**) रात्रि दिन में (**यजतम्**) मिलो और (**द्यौरिव**) सूर्य्य प्रकाश के समान (**विश्वाः**) सम्पूर्ण (**मायाः**) बुद्धियों को तुम (**अवसि**) रक्खो जिस (**ते**) आपकी (**भद्रा**) कल्याण करने वाली (**रातिः**) दानक्रिया (**इह**) यहाँ (**अस्तु**) हो वह (**हि**) ही आप सत्कार करने योग्य (**असि**) हैं॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो पुरुष दिन-रात्रि के समान क्रम से कामों को सिद्ध करते हैं, वे सब सामग्री को पाकर सूर्य्य के प्रकाश के समान उत्तम कीर्ति वाले होते हैं॥१॥

पुनर्विद्वान् किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर विद्वान् जन क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

अजाश्वः पशुपा वाजपस्त्यो धियंजिन्वो भुवने विश्वे अर्पितः।

अष्ट्रां पूषा शिथिरामुद्वरीवृजत् सञ्चक्षाणो भुवना देव ईयते॥ २॥

अजऽअश्वः। पशुऽपाः। वाजऽपस्त्यः। धियम्ऽजिन्वः। भुवने। विश्वे। अर्पितः। अष्ट्राम्। पूषा। शिथिराम्। उत्ऽवरीवृजत्। सम्ऽचक्षाणः। भुवना। देवः। ईयते॥ २॥

पदार्थः-(**अजाश्वः**) अजा अश्वाश्च यस्य सः। (**पशुपाः**) यः पशून् पाति रक्षति (**वाजपस्त्यः**) वाजान्यन्नानि पस्त्ये गृहे यस्य सः (**धियंजिन्वः**) यो धियं जिन्वति प्रीणाति सः (**भुवने**) संसारे (**विश्वे**) समग्रे (**अर्पितः**) स्थापितः (**अष्ट्राम्**) व्याप्ताम् (**पूषा**) पोषकः (**शिथिराम्**) शिथिलाम् (**उद्वरीवृजत्**) भृशं वर्जयति (**सञ्चक्षाणः**) सम्यक् कामयन्नुपदिशन् वा (**भुवना**) गृहाणि (**देवः**) विद्वान् (**ईयते**) प्राप्नोति गच्छति वा॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्या! योऽजाश्वः पशुपा वाजपस्त्यो धियंजिन्वो विश्वे भुवनेऽर्पितः पूषा शिथिरामष्ट्रां भुवना च सञ्चक्षाणो देव ईयत उद्वरीवृजत्त यूयं सेवध्वम्॥ २॥

भावार्थः-ये मनुष्या भुवनस्थान् सर्वान् पदार्थान् संयुक्तान् वियुक्तांश्च विज्ञाय कार्य्याणि कुर्वन्ति ते धीमन्तो भवन्ति॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**अजाश्वः**) भेड़ बकरी और घोड़ों को रखने वाला (**पशुपाः**) जो पशुओं की रक्षा करने वाला तथा (**वाजपस्त्यः**) घर में अन्नों को रखने वाला (**धियंजिन्वः**) बुद्धि को तृप्त करता है वह (**विश्वे**) समग्र (**भुवने**) संसार में (**अर्पितः**) स्थापन किया हुआ (**पूषा**) पुष्टि करने वाला (**शिथिराम्**) शिथिल और (**अष्ट्राम्**) पदार्थों में व्याप्त बुद्धि और (**भुवना**) गृहों की (**सञ्चक्षाणः**) अच्छे प्रकार कामना वा उनका उपदेश करता हुआ (**देवः**) विद्वान् (**ईयते**) प्राप्त होता वा जाता है तथा (**उद्वरीवृजत्**) उत्तमता से वर्जता है, उसका तुम लोग सेवन करो॥ २॥

भावार्थः-जो मनुष्य भुवनस्थ सब पदार्थों को मिले वा मिले जान कर कार्य्यों को करते हैं, वे बुद्धिमान् होते हैं॥ २॥

पुनर्विद्वान् किं निर्माय क्व गत्वा किं प्राप्नुयादित्याह॥

फिर विद्वान् किसको बना कहाँ जाकर क्या पावे, इस विषय को कहते हैं॥

यास्ते पूषन्नावो अन्तः समुद्रे हिरण्ययीरन्तरिक्षे चरन्ति।

ताभिर्यासि दूत्यां सूर्यस्य कामेन कृत श्रव इच्छमानः॥ ३॥

याः। ते। पूषन्। नावः। अन्तरिति। समुद्रे। हिरण्ययीः। अन्तरिक्षे। चरन्ति। ताभिः। यासि। दूत्याम्। सूर्यस्य। कामेन। कृत। श्रवः। इच्छमानः॥ ३॥

पदार्थः-(**याः**) (**ते**) तव (**पूषन्**) भूमिरिव पुष्टियुक्त (**नावः**) प्रशंसनीया नौकाः (**अन्तः**) मध्ये (**समुद्रे**) सागरे (**हिरण्ययीः**) तेजोमय्यः सुवर्णादिसुभूषिताः (**अन्तरिक्षे**) आकाशे (**चरन्ति**) गच्छन्ति

(ताभिः) **(यासि)** **(दूत्याम्)** दूतस्य क्रियामिव **(सूर्यस्य)** **(कामेन)** **(कृत)** यो विद्वान् कृतस्तत्सम्बुद्धौ **(श्रवः)** अन्नादिकम् **(इच्छमानः)**॥३॥

अन्वयः-हे कृत पूषन्! यास्ते हिरण्ययीर्नावः समुद्रेऽन्तरिक्षेनन्तश्चरन्ति ताभिः कामेन श्रव इच्छमानस्सूर्यस्य दूत्यामिव कामनां यासि तस्माद्धन्योऽसि॥३॥

भावार्थः-ये मनुष्या सुदृढा नावो भूविमानानि भुव्यन्तरिक्षविमानान्यन्तरिक्षे च गमनाय रचयन्ति तैश्च देशदेशान्तरं गत्वाऽऽगत्य कामनामलं कुर्वन्ति त एव सूर्य्यवत् प्रकाशितकीर्त्तयो भवन्ति॥३॥

पदार्थः-हे **(कृत)** किये हुए विद्वन्! **(पूषन्)** भूमि के समान पुष्टियुक्त! **(याः)** जो **(ते)** आपकी **(हिरण्ययीः)** तेजोमयी सुवर्णादिकों से सुभूषित **(नावः)** प्रशंसनीय नौकायें **(समुद्रे)** समुद्र वा **(अन्तरिक्षे)** अन्तरिक्ष में **(अन्तः)** भीतर **(चरन्ति)** जाती हैं **(ताभिः)** उनसे **(कामेन)** कामना करके **(श्रवः)** अन्नादिक की **(इच्छमानः)** इच्छा करते हुए **(सूर्यस्य)** सूर्य्य के **(दूत्याम्)** दूत की क्रिया के समान कामना को **(यासि)** प्राप्त होते हो, इससे धन्य हो॥३॥

भावार्थः-जो मनुष्य सुदृढ़ नावें और भूविमानों को भूमि और अन्तरिक्ष में चलने वाले यानों को अन्तरिक्ष में चलने को रचते और उनसे देश-देशान्तरों को जाय आकर अपनी इच्छा को पूरी करते हैं, वे ही सूर्य्य के समान प्रकाशित कीर्ति वाले होते हैं॥३॥

पुनः के विद्यां प्राप्तुमर्हन्तीत्याह॥

फिर कौन विद्या को प्राप्त होने के योग्य होते हैं, इस विषय को कहते हैं॥

पूषा सुबन्धुर्दिव आ पृथिव्या इळस्पतिर्मघवा दस्मवर्चाः।

यं देवासो अददुः सूर्यायै कामेन कृतं तवसं स्वञ्चम्॥४॥२४॥

पूषा। सुऽबन्धुः। दिवः। आ। पृथिव्याः। इळः। पतिः। मघऽवा। दस्मऽवर्चाः। यम्। देवासः। अददुः। सूर्यायै। कामेन। कृतम्। तवसम्। सुऽअञ्चम्॥४॥

पदार्थः-**(पूषा)** भूमिवत्पुष्टः पुष्टिकर्त्ता वा **(सुबन्धुः)** शोभना बन्धवो भ्रातरः सखायो वा यस्य **(दिवः)** विद्युतः **(आ)** **(पृथिव्याः)** भूमेः **(इळः)** वाचः **(पतिः)** स्वामी **(मघवा)** बह्वैश्वर्यः **(दस्मवर्चाः)** दस्मेषूपक्षयेषु वर्चः प्रदीपनं यस्य सः **(यम्)** **(देवासः)** विद्वांसः **(अददुः)** ददति **(सूर्यायै)** सूर्यवत् शुभगुणस्वभावप्रकाशितायै कन्यायै **(कामेन)** **(कृतम्)** निष्पन्नम् **(तवसम्)** बलिष्ठम् **(स्वञ्चम्)** सुष्ठ्वञ्चन्तं प्राप्तशरीरात्मबलेन युक्तम्॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यं देवासः कामेन कृतं तवसं स्वञ्चं युवानं नरं सूर्याया अददुः स सुबन्धुर्मघवा दस्मवर्चाः पूषा दिवः पृथिव्या इळस्पतिः सन् सुखमादत्ते॥४॥

भावार्थः-ये ब्रह्मचर्येण पूर्णयुवावस्थां प्राप्ताः स्वसदृशीर्वधूः प्राप्यर्त्तुगामिनो भूत्वा सुदृढाङ्गा बुद्धिबलविद्याशिक्षाप्राप्ता भवेयुस्त एव भूगर्भविद्युदादिविद्यां प्राप्तुं शक्नुवन्ति नेतरे क्षुद्राशया इति॥४॥

अत्र विद्वत्कृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्यष्टपञ्चाशत्तमं सूक्तं चतुर्विंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यम्)** जिसको **(देवासः)** विद्वान् जन **(कामेन)** कामना से **(कृतम्)** किये हुए **(तवसम्)** बलिष्ठ **(स्वञ्चम्)** सुन्दरता से जाते हुए अर्थात् शरीर और आत्मा के बल से युक्त युवा मनुष्य को **(सूर्यायै)** सूर्य के समान शुभ गुण और स्वभावों से प्रकाशित कन्या के लिये **(अददुः)** देते हैं वह **(सुबन्धुः)** सुन्दर भ्राता वा मित्रों वाला **(मघवा)** बहुत ऐश्वर्य्ययुक्त **(दस्मवर्चाः)** नष्ट होते हुए पदार्थों में प्रकाश रखने वाला **(पूषा)** भूमि के समान पुष्ट वा पुष्टि करने वाला **(दिवः)** बिजुली और **(पृथिव्याः)** भूमि तथा **(इळः)** वाणी का **(पतिः)** स्वामी होता हुआ सुख को **(आ)** ग्रहण करता है॥४॥

भावार्थः-जो ब्रह्मचर्य्य से पूर्ण युवावस्था को प्राप्त हुए अपने सदृश बहुओं को प्राप्त होकर ऋतुगामी अर्थात् ऋतुकाल में स्त्रीभोग करने वाले होकर सुन्दर पुष्ट अङ्ग और बुद्धि बल विद्या और शिक्षा को प्राप्त हों, वे ही भूगर्भ वा विद्युदादि विद्या को प्राप्त हो सकते हैं और क्षुद्राशय नहीं॥४॥

इस सूक्त में विद्वानों के कृत्य का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह अट्ठावनवां सूक्त और चौबीसवां वर्ग पूरा हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ दशर्चस्यैकोनषष्टितमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। इन्द्राग्नी देवते। १, ३, ४, ५ निचृद्बृहती। २ विराड्बृहती छन्दः। मध्यमः स्वरः। ६ भुरिगनुष्टुप्। ७, ९ निचृदनुष्टुप्। १० अनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः। ८ उष्णिक् छन्दः। ऋषभः स्वरः॥

अथ मनुष्याः किं कृत्वा बलिष्ठा जायेरन्नित्याह॥

अब दस ऋचा वाले उनसठवें सूक्त का प्रारम्भ है, इसके प्रथम मन्त्र में मनुष्य क्या करके बलिष्ठ हों, इस विषय को कहते हैं॥

प्र नु वोचा सुतेषु वां वीर्या३ यानि चक्रथुः।
हतासो वां पितरो देवशत्रव इन्द्राग्नी जीवथो युवम्॥ १॥

प्र। नु। वोच। सुतेषु। वाम्। वीर्या। यानि। चक्रथुः। हतासः। वाम्। पितरः। देवऽशत्रवः। इन्द्राग्नी इति। जीवथः। युवम्॥ १॥

पदार्थः-(**प्र**) (**नु**) सद्यः (**वोचा**) उपदिशामि। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**सुतेषु**) निष्पन्नेषु (**वाम्**) युवाम् (**वीर्या**) वीर्याणि (**यानि**) (**चक्रथुः**) कुरुथः (**हतासः**) नष्टाः (**वाम्**) युवयोः (**पितरः**) पालकाः (**देवशत्रवः**) देवानां विदुषामरयः (**इन्द्राग्नी**) वायुविद्युताविवाध्यापकाध्येतारौ (**जीवथः**) (**युवम्**) युवाम्॥ १॥

अन्वयः-हे इन्द्राग्नी! युवं यानि सुतेषु वीर्या चक्रथुस्तैर्वां देवशत्रवो हतास स्युश्चिरञ्जीवथ इति वामहं नु प्र वोचा। येन युवयोः पितरोऽप्येवं वामुपदिशन्तु॥ १॥

भावार्थः-ये मनुष्या उत्पन्नेषु मनुष्येषु पराक्रममुन्नयन्ति तेषां शत्रवो विलीयन्ते॥ १॥

पदार्थः-हे (**इन्द्राग्नी**) वायु और बिजुली के समान अध्यापक और उपदेशको! (**युवम्**) तुम दोनों (**यानि**) जिन (**सुतेषु**) उत्पन्न हुए पदार्थों में (**वीर्या**) पराक्रमों को (**चक्रथुः**) किया करते हो उनसे (**वाम्**) तुम दोनों के जो (**देवशत्रवः**) विद्वानों से द्वेष करने वाले शत्रु (**हतासः**) नष्ट हों और तुम दोनों बहुत समय तक (**जीवथः**) जीवते हो यह (**वाम्**) तुम दोनों को मैं (**नु**) शीघ्र (**प्र, वोचा**) उपदेश देता हूँ जिससे तुम दोनों के (**पितरः**) पालने वाले भी ऐसा (**वाम्**) तुम दोनों को उपदेश दें॥ १॥

भावार्थः-जो मनुष्य उत्पन्न हुए मनुष्यों में पराक्रम की उन्नति करते हैं, उनके शत्रु विलय (नाश) को प्राप्त होते हैं॥ १॥

पुनरध्यापकोपदेशकौ कीदृशौ भवेतामित्याह॥

फिर अध्यापक और उपदेशक कैसे हों, इस विषय को कहते हैं॥

बळित्था महिमा वामिन्द्राग्नी पनिष्ठ आ।

समानो वां जनिता भ्रातरा युवं यमाविहेहमातरा॥ २॥

बट्। इत्था। महिमा। वाम्। इन्द्राग्नी इति। पनिष्ठः। आ। समानः। वाम्। जनिता। भ्रातरा। युवम्। यमौ। इहेहऽमातरा॥ २॥

पदार्थः-(**बट्**) सत्यम् (**इत्था**) अनेन प्रकारेण (**महिमा**) प्रतापः (**वाम्**) युवयोः (**इन्द्राग्नी**) वायुवह्नी इव वर्त्तमानौ राजप्रजाजनौ (**पनिष्ठः**) अतिशयेन प्रशंसितः (**आ**) (**समानः**) तुल्यः (**वाम्**) युवयोः (**जनिता**) उत्पादकः (**भ्रातरा**) बन्धू (**युवम्**) युवाम् (**यमौ**) नियन्तारौ (**इहेहमातरा**) इहेहमाता जननी ययोस्तौ॥ २॥

अन्वयः-हे इन्द्राग्नी! यो वां पनिष्ठो बड् महिमा वां समानो जनितेहेहमातरा यमौ भ्रातरा वर्त्तेते तावित्था युवमाजीवथः॥ २॥

भावार्थः-येऽध्यापकोपदेशका विद्युत्सूर्य्यवत् व्याप्तविद्याः परोपकारिणः सन्ति ते सत्यमहिमानो भवन्ति॥ २॥

पदार्थः-हे (**इन्द्राग्नी**) पवन और अग्नि के तुल्य राजप्रजाजनो! जो (**वाम्**) तुम दोनों का (**पनिष्ठः**) अतीव प्रशंसित (**बट्**) सत्य (**महिमा**) प्रताप वा (**वाम्**) तुम दोनों का (**समानः**) तुल्य (**जनिता**) उत्पादन करने वाला पिता (**इहेहमातरा**) यहाँ-यहाँ जिनकी माता वे (**यमौ**) नियन्ता अर्थात् गृहस्थी के चलाने वाले (**भ्रातरा**) भाई वर्त्तमान हैं उनको (**इत्था**) इस प्रकार से (**युवम्**) तुम (**आ, जीवथः**) जिलाते हो॥ २॥

भावार्थः-जो अध्यापक और उपदेशक बिजुली और सूर्य्य के तुल्य विद्याओं में व्याप्त तथा परोपकारी हैं, वे सत्य महिमा वाले होते हैं॥ २॥

पुनर्विद्वांसः किं विज्ञाय कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर विद्वान् जन क्या जानकर कैसे हों, इस विषय को कहते हैं॥

ओकिवांसा सुते सचाँ अश्वा सप्ती इवादने।
इन्द्रान्व१ग्नी अवसेह वज्रिणा वयं देवा हवामहे॥ ३॥

ओकिऽवांसा। सुते। सचा। अश्वा। सप्ती इवेति सप्तीऽइव। आदने। इन्द्रा नु। अग्नी इति। अवसा। इह। वज्रिणा। वयम्। देवा। हवामहे॥ ३॥

पदार्थः-(**ओकिवांसा**) सङ्गतौ सम्बद्धौ (**सुते**) निष्पन्ने (**सचा**) सचौ समवेतौ (**अश्वा**) व्याप्तौ (**सप्तीइव**) यथा युग्मावश्वौ (**आदने**) अत्तव्ये घासे (**इन्द्रा**) (**नु**) (**अग्नी**) वायुविद्युतौ (**अवसा**) (**इह**) अस्मिन् संसारे (**वज्रिणा**) प्रशस्ताऽस्त्रयुक्तौ (**वयम्**) (**देवा**) विद्वांसः (**हवामहे**) प्रशंसामः॥ ३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा देवा वयमवसेह सुते सचाऽश्वा वज्रिणौकिवांसा सप्तीइवादने वर्त्तमानाविन्द्राग्नी नु हवामहे तथेमौ यूयमपि प्रशंसत॥ ३॥

भावार्थ:-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। ये विद्वांसः सदा मिलितौ वायुविद्युतौ पदार्थौ विजानन्ति तेऽस्मिन् संसारेऽद्भुताः क्रियाः कर्तुं शक्नुवन्ति॥३॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! जैसे **(देवा)** विद्वान् **(वयम्)** हम लोग **(अवसा)** रक्षा आदि से **(इह)** इस संसार में **(सुते)** निष्पन्न हुए व्यवहार में **(सचा)** अच्छे प्रकार युक्त **(अश्वाः)** और व्याप्त हुए **(वज्रिणा)** प्रशंसित शस्त्र-अस्त्र वाले **(ओकिवांसा)** सङ्ग और सम्बन्ध को प्राप्त हुए **(सप्तीइव)** जैसे दो घोड़े **(आदने)** भक्षण करने योग्य घास अदन के निमित्त वर्त्तमान, वैसे **(इन्द्राग्नी)** पवन और बिजुली की **(नु)** शीघ्र **(हवामहे)** प्रशंसा करते हैं, वैसे इनकी तुम भी प्रशंसा करो॥३॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जो विद्वान् जन सदा मिले हुए वायु और बिजुली इन दोनों पदार्थों को जानते हैं, वे इस संसार में अद्भुत क्रियाओं को कर सकते हैं॥३॥

पुनर्विद्वांसः कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर विद्वान् जन कैसे हों, इस विषय को कहते हैं॥

य इ॑न्द्राग्नी सु॒तेषु॑ वां॒ स्तव॒त्तेष्वृ॑तावृधा।

जो॒ष॒वा॒कं वद॑तः पज्रहोषिणा॒ न दे॑वा भ॒सथ॑श्च॒न॥४॥

यः। इ॒न्द्रा॒ग्नी॒ इति॑। सु॒तेषु॑। वा॒म्। स्तव॑त्। तेषु॑। ऋ॒त॒ऽवृ॒धा॒। जो॒ष॒ऽवा॒कम्। वद॑तः। प॒ज्र॒ऽहो॒षि॒णा॒। न। दे॒वा॒। भ॒सथ॑ः। च॒न॥४॥

पदार्थ:-**(यः)** **(इन्द्राग्नी)** वायुविद्युताविवाऽध्यापकोपदेशकौ **(सुतेषु)** उत्पन्नेषु पदार्थेषु **(वाम्)** युवाम् **(स्तवत्)** प्रशंसेत् **(तेषु)** **(ऋतावृधा)** सत्यवर्धकौ **(जोषवाकम्)** प्रीतिकरं वचनम् **(वदतः)** **(पज्रहोषिणा)** पज्रः सङ्गतो होषो घोषो वाण्ययोस्तौ **(न)** निषेधे **(देवा)** देवौ विद्वांसौ **(भसथः)** व्यर्थं वादं वदतः **(चन)** अपि॥४॥

अन्वय:-हे पज्रहोषिणार्तावृधेन्द्राग्नी! यस्तेषु सुतेषु वां स्तवद्यौ देवा चन न भसथस्तं प्रति युवां जोषवाकं वदतस्स चन युवां प्रति वदेत्॥४॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्याः! सर्वेषु पदार्थेषु प्रविष्टौ वायुविद्युतौ विदित्वैश्वर्य्यं प्राप्य रूक्षामसत्यां क्रियां लोकविद्विष्टान् वा मनुष्यान् विदित्वा सर्वेषामुपकाराय सत्यं प्रियं सर्वदा वदत॥४॥

पदार्थ:-हे **(पज्रहोषिणा)** प्राप्त हुई वाणी वा घोषयुक्त **(ऋतावृधा)** सत्य बढ़ाने वाले **(इन्द्राग्नी)** वायु और बिजुली के समान अध्यापक और उपदेशको! **(यः)** जो **(तेषु)** उन **(सुतेषु)** उत्पन्न हुए पदार्थों में **(वाम्)** तुम दोनों की **(स्तवत्)** प्रशंसा करे वा जो **(देवा)** विद्वान् जन **(चन)** भी **(न)** नहीं **(भसथः)** व्यर्थ वाद करते हैं, उस सर्वजन के प्रति तुम दोनों **(जोषवाकम्)** प्रीति करने वाले वचन **(वदतः)** कहते हो, वह सर्वजन भी तुम्हारे प्रति कहे॥४॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! सर्व पदार्थों में प्रविष्ट वायु और बिजुली को जानकर ऐश्वर्य को प्राप्त होकर रूखी असत्य किया और लोक विद्वेषी जनों को त्याग सबके उपकार के लिये सत्य प्रिय वाक्य सर्वदा कहो॥४॥

के मनुष्याः पदार्थविद्यां वेत्तुमर्हन्तीत्याह॥

कौन मनुष्य पदार्थविद्या को जानने योग्य हैं, इस विषय को कहते हैं॥

इन्द्राग्नी को अस्य वां देवौ मर्तश्चिकेतति।

विषूचो अश्वान् युयुजान ईयत एकः समान आ रथे॥५॥२५॥

इन्द्राग्नी इति। कः। अस्य। वाम्। देवौ। मर्तः। चिकेतति। विषूचः। अश्वान्। युयुजानः। ईयते। एकः। समाने। आ। रथे॥५॥

पदार्थः-(**इन्द्राग्नी**) वायुविद्युतौ (**कः**) (**अस्य**) (**वाम्**) युवाम् (**देवौ**) दिव्यगुणकर्मस्वभावौ (**मर्त्तः**) (**चिकेतति**) (**विषूचः**) व्याप्तान् (**अश्वान्**) आशुगामिनो विद्युदादीन् (**युयुजानः**) युक्तान् कुर्वन् (**ईयते**) गच्छति (**एकः**) असहायः (**समाने**) (**आ**) (**रथे**) विमानादौ याने॥५॥

अन्वयः-हे अध्यापकोपदेशकौ! कोऽस्य जगतो मध्ये वर्त्तमानो मर्त्तो विषूचोऽश्वान् समाने रथे युयुजान एको देवाविन्द्राग्नी चिकेतति स वामेयते॥५॥

भावार्थः-हे विद्वांसः! कोऽत्र पदार्थविद्याविद्विमानादियाननिर्माता सद्यो गन्ता स्यादित्यस्योत्तरं परस्ताद्दत्तमिति शृणुत॥५॥

पदार्थः-हे अध्यापक और उपदेशको! (**कः**) कौन (**अस्य**) इस जगत् के बीच वर्त्तमान (**मर्त्तः**) मनुष्य (**विषूचः**) व्याप्त (**अश्वान्**) शीघ्रगामी बिजुली आदि पदार्थों को (**समाने**) समान (**रथे**) विमान आदि यान में (**युयुजानः**) युक्त करता हुआ (**एकः**) एक विद्वान् (**देवौ**) दिव्यगुणकर्मस्वभावयुक्त (**इन्द्राग्नी**) वायु और बिजुली को (**चिकेतति**) जानता है वह (**वाम्**) तुम दोनों को (**आ, ईयते**) प्राप्त होता है॥५॥

भावार्थ:-हे विद्वानो! कौन यहाँ पदार्थविद्या का जानने वाला, विमान आदि यानों का निर्माण करने वाला शीघ्रगामी हो, इसका उत्तर पीछे दिया यह तुम सुनो॥५॥

विद्युद्वित्किं कर्तुं शक्नोतीत्याह॥

बिजुली का जानने वाला क्या कर सकता है, इस विषय को कहते हैं॥

इन्द्राग्नी अपादियं पूर्वागात्पद्वतीभ्यः।

हित्वी शिरो जिह्वया वावदच्चरत्त्रिंशत्पदा न्यक्रमीत्॥६॥

इन्द्राग्नी इति। अपात्। इयम्। पूर्वा। आ। अगात्। पत्ऽवतीभ्यः। हित्वी। शिरः। जिह्वया। वावदत्। चरत्। त्रिंशत्। पदा। नि। अक्रमीत्॥६॥

पदार्थः-(**इन्द्राग्नी**) वायुविद्युतौ (**अपात्**) पादरहिता (**इयम्**) विद्युत् (**पूर्वा**) पूर्णाऽग्रस्था वा (**आ**) (**अगात्**) गच्छति (**पद्वतीभ्यः**) पद्भ्यां कृताभ्यो गतिभ्यः (**हित्वी**) त्यक्त्वा (**शिरः**) शिरोवन् मुख्यं वचनम् (**जिह्वया**) (**वाचा**) (**वावदत्**) भृशं वदति (**चरत्**) गच्छति (**त्रिंशत्**) आकाशं द्यां च वर्जयित्वा सर्वान् भूम्यादीन् पदार्थान् (**पदा**) पदानि (**नि**) नितराम् (**अक्रमीत्**) क्रामति॥६॥

अन्वयः-यो जिह्वया वावदद्येयमपात्पूर्वा पद्वतीभ्यश्शिरो हित्वी विद्युदागात्त्रिंशत् पदा न्यक्रमीत्सद्यश्चरत्तयेन्द्राग्नी विजानाति स एव मनुष्यो विद्युद्विद्याविद्भवति॥६॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! भवन्तो यदि विद्युद्विद्यां सङ्गृह्णीयुस्तर्हि सर्वेभ्यो यानेभ्यः सद्यो गन्तुमन्यानि कार्याणि च साद्धुं शक्नुवन्ति॥६॥

पदार्थः-जो (**जिह्वया**) वाणी से (**वावदत्**) निरन्तर कहता है और जो (**इयम्**) यह (**अपात्**) पैररहित (**पूर्वा**) पूर्ण वा अग्रस्थ (**पद्वतीभ्यः**) पैरों से की हुई गतियों से (**शिरः**) शिर के तुल्य मुख्य वचन को (**हित्वी**) त्याग कर बिजुली (**आ, अगात्**) प्राप्त होती है तथा (**त्रिंशत्**) आकाश और प्रकाश को छोड़ कर सब भूमि आदि पदार्थरूपी (**पदा**) स्थानों को (**नि, अक्रमीत्**) क्रम-क्रम से पहुंचती और शीघ्र (**चरत्**) चलती है इससे (**इन्द्राग्नी**) वायु और बिजुली को जानता है, वही मनुष्य बिजुली की विद्या को जानने वाला होता है॥६॥

भावार्थः-हे विद्वानो! आप यदि बिजुली की विद्या को अच्छे प्रकार ग्रहण करो तो सब यानों से शीघ्र जाने को तथा और काम सिद्ध कर सकते हो॥६॥

के विजयिनो भवेयुरित्याह॥

कौन विजयी होते हैं, इस विषय को कहते हैं॥

इन्द्राग्नी आ हि तन्वते नरो धन्वानि बाह्वोः।
मा नो अस्मिन् महाधने परा वर्क्तं गविष्टिषु॥७॥

इन्द्राग्नी इति। आ। हि। तन्वते। नरः। धन्वानि। बाह्वोः। मा। नः। अस्मिन्। महाऽधने। परा। वर्क्तम्। गोऽइष्टिषु॥७॥

पदार्थः-(**इन्द्राग्नी**) वायुविद्युतौ (**आ**) (**हि**) खलु (**तन्वते**) विस्तृणन्ति (**नरः**) नायकाः (**धन्वानि**) धनूंषि (**बाह्वोः**) भुजयोर्मध्ये (**मा**) (**नः**) अस्मान् (**अस्मिन्**) (**महाधने**) स-ग्रामे (**परा**) (**वर्क्तम्**) त्यजेताम् (**गविष्टिषु**) गवां किरणानामिष्टयः सङ्गतयो यासु क्रियासु तासु॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ये नर इन्द्राग्नी आ तन्वते बाह्वोर्हि धन्वानि धृत्वाऽस्मिन् महाधनेऽस्माँस्तन्वते गविष्टिषु प्रवीणाः सन्तो यथेन्द्राग्नी नो मा परा वर्क्तं तथा विदधति तान् वयं सङ्गच्छेमहि॥७॥

भावार्थः-ये राजप्रजाजना विद्युदादिनाऽऽग्नेयादीन्यस्त्राणि निर्माय स- ामस्य विजेतारो जायन्ते तेऽस्मिन् संसारे राज्यैश्वर्य्येण सुखं विस्तारयितुं शक्नुवन्ति॥७॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(नरः)** नायक मनुष्य **(इन्द्राग्नी)** वायु और बिजुली को **(आ, तन्वते)** विस्तारते हैं और **(बाह्वोः)** भुजाओं में **(हि)** हि **(धन्वानि)** धनुषों को धारण कर **(अस्मिन्)** इस **(महाधने)** स- ाम में हम सब को विस्तारते हैं और **(गविष्टिषु)** किरणों की जिनमें मिलावटें हैं उन क्रियाओं में प्रवीण होते हुए जैसे वायु और बिजुली **(नः)** हम लोगों को **(मा, परा, वक्तम्)** मत छोड़ें वैसा करते हैं, उनको हम लोग मिलें॥७॥

भावार्थः-जो राजा प्रजाजन बिजुली आदि से आग्नेयादि अस्त्रों को बनाय संग्राम के जीतने वाले होते हैं, वे इस संसार में राज्यैश्वर्य्य से सुख बढ़ा सकते हैं॥७॥

पुनर्विद्वांसः कस्मात्कस्माद्विद्युतं सङ्गृह्णीयुरित्याह॥

फिर विद्वान् जन किस-किस से बिजुली का स- ह करें, इस विषय को कहते हैं॥

इन्द्रा॑ग्नी तप॑न्ति मा॒घा अ॒र्यो अरा॑तयः।

अप॒ द्वेषां॒स्या कृ॑तं युयु॒तं सूर्या॒दधि॑॥८॥

इन्द्रा॑ग्नी॒ इति॑। तप॑न्ति। मा। अ॒घाः। अ॒र्यः। अरा॑तयः। अप॑। द्वेषां॑सि। आ। कृ॒त॒म्। यु॒यु॒तम्। सूर्या॑त्। अधि॑॥८॥

पदार्थः-**(इन्द्राग्नी)** वायुविद्युतौ **(तपन्ति)** **(मा)** **(अघाः)** हिंस्याः **(अर्यः)** स्वामी सन् **(अरातयः)** शत्रवः **(अप)** **(द्वेषांसि)** द्वेषयुक्तानि कर्माणि **(आ)** **(कृतम्)** कुर्य्यातम् **(युयुतम्)** विभाजयतम् **(सूर्यात्)** सवितृमण्डलात् **(अधि)** उपरिभावे॥८॥

अन्वयः-हे सभासेनेशौ! येऽरातय इन्द्राग्नी तपन्ति तेषां द्वेषांस्यपकृतं सूर्यादधि विद्युतमा युयुतम्। हे राजन्नर्यस्त्वमेताञ्छिल्पिनो माऽघाः॥८॥

भावार्थः-हे सराजका राजप्रजाजना यदि भवन्तः सूर्य्यादिभ्यो विद्युतं ग्रहीतुं विजानीयुस्तर्हि शत्रून् विजित्य द्वेष्टॄन् दूरीकर्तुं प्रभवेयुः॥८॥

पदार्थः-हे सभा सेनाधीशो! जो **(अरातयः)** शत्रुजन **(इन्द्राग्नी)** वायु और बिजुली को **(तपन्ति)** तपाते हैं उनके **(द्वेषांसि)** द्वेषयुक्त कामों को **(अप, कृतम्)** नष्ट करो और **(सूर्यात्)** सवितृमण्डल से **(अधि)** ऊपर जाने वाली बिजुली को **(आ, युयुतम्)** अलग करो। हे राजन्! **(अर्यः)** स्वामी आप इन शिल्पीजनों को **(मा, अघाः)** मत मारो॥८॥

भावार्थः-हे राजसहित राजप्रजा जनो! जो आप लोग सूर्यादिकों से बिजुली ग्रहण करना जानो तो शत्रुजनों को जीतकर द्वेषजीनों के दूर करने को समर्थ होओ॥८॥

क उत्तम धनं प्राप्नोतीत्याह॥

कौन उत्तम धनको प्राप्त होता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्राग्नी युवोरपि वसु दिव्यानि पार्थिवा।

आ न इह प्र यच्छतं रयिं विश्वायुपोषसम्॥ ९॥

इन्द्राग्नी इति। युवोः। अपि। वसु। दिव्यानि। पार्थिवा। आ। नः। इह। प्र। यच्छतम्। रयिम्। विश्वायुऽपोषसम्॥ ९॥

पदार्थः-(**इन्द्राग्नी**) वायुविद्युताविव सभासेनेशौ (**युवोः**) युवयोः (**अपि**) (**वसु**) वसूनि (**दिव्यानि**) अतीवोत्तमानि (**पार्थिवा**) पृथिव्यां भवानि (**आ**) (**नः**) (**इह**) (**प्र**) (**यच्छतम्**) (**रयिम्**) श्रियम् (**विश्वायुपोषसम्**) समग्रायुःपुष्टिकराम्॥ ९॥

अन्वयः-हे इन्द्राग्नी! सभासेनेशौ युवां यदीह नो विश्वायुपोषसं रयिं प्राऽयच्छतं तर्हि युवोरपि दिव्यानि पार्थिवा वस्वाधीनानि जायन्ताम्॥ ९॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये सभासेनेशा विद्युद्विद्यां विज्ञाय युष्मभ्यं प्रददति ते पूर्णायुष्करं धर्मेण प्राप्तं समग्रैश्वर्य्यं प्राप्नुवन्ति॥ ९॥

पदार्थः-हे (**इन्द्राग्नी**) वायु और बिजुली के समान सभा सेनाधीशो! तुम यदि (**इह**) यहाँ (**नः**) हमारी (**विश्वायुपोषसम्**) समस्त आयु के पुष्ट करने वाले (**रयिम्**) धन को (**प्र, आ, यच्छतम्**) अच्छे प्रकार देओ तो (**युवोः**) तुम्हारे (**अपि**) भी (**दिव्यानि**) अतीव उत्तम (**पार्थिवा**) पृथिवी में उत्पन्न हुए (**वसु**) धन आधीन हों॥ ९॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो सभा सेनापति बिजुली की विद्या को जान कर तुम्हारे लिये देते हैं, वे पूर्ण आयु करने वाले धर्म से प्राप्त समग्र ऐश्वर्य को प्राप्त होते हैं॥ ९॥

मनुष्याः किं कृत्वा विद्युद्विद्यां जानीयुरित्याह॥

मनुष्या क्या करके बिजुली की विद्या जानें, इस विषय को कहते हैं॥

इन्द्राग्नी उक्थवाहसा स्तोमेभिर्हवनश्रुता।

विश्वाभिर्गीर्भिरा गतमस्य सोमस्य पीतये॥ १०॥ २६॥

इन्द्राग्नी इति। उक्थऽवाहसा। स्तोमेभिः। हवनऽश्रुता। विश्वाभिः। गीःभिः। आ। गतम्। अस्य। सोमस्य। पीतये॥ १०॥

पदार्थः-(**इन्द्राग्नी**) वायुविद्युताविव (**उक्थवाहसा**) प्रशंसितविद्याप्रापकौ (**स्तोमेभिः**) प्रशंसाभिः (**हवनश्रुता**) यौ हवनानि शृण्वतस्तौ (**विश्वाभिः**) समग्राभिः (**गीर्भिः**) विद्याशिक्षायुक्ताभिर्वाग्भिः (**आ**) (**गतम्**) आगच्छतम् (**अस्य**) (**सोमस्य**) महौषधिरसस्य (**पीतये**) पानाय॥ १०॥

अन्वयः-हे इन्द्राग्नी जानन्तावुक्थवाहसा हवनश्रुता! युवां स्तोमेभिर्विश्वाभिर्गीर्भिः सहास्य सोमस्य पीतय आ गतम्॥ १०॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। त एव विद्युद्विद्यां वेत्तुमर्हन्ति ये विद्वद्भ्यो विद्यां प्राप्तुं प्रयतन्त इति॥१०॥

अत्रेन्द्राऽग्निगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्येकोनषष्टितमं सूक्तं षड्विंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थ:-हे **(इन्द्राग्नी)** वायु और बिजुली के समान पदार्थों को जानते हुए **(उक्थवाहसा)** प्रशंसित विद्या की प्राप्ति कराने और **(हवनश्रुता)** हवनों को सुनने वालो! तुम **(स्तोमेभिः)** प्रशंसाओं से और **(विश्वाभिः)** समस्त **(गीर्भिः)** विद्या और उत्तम शिक्षा युक्त वाणियों के साथ **(अस्य)** इस **(सोमस्य)** महौषधियों के रस के **(पीतये)** पीने को **(आ, गतम्)** आओ॥१०॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। वे ही बिजुली की विद्या की जानने योग्य होते हैं, जो विद्वानों से विद्या पाने का प्रयत्न करते हैं॥१०॥

इस सूक्त में इन्द्र और अग्नि के गुणों का वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह उनसठवां सूक्त और छब्बीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ पञ्चदशर्चस्य षष्टितमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। इन्द्राग्नी देवते। १, ३ निचृत्त्रिष्टुप्। २ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ४, ६, ७ विराड्गायत्री। ५, ९, ११ निचृद्गायत्री। ८, १०, १२ गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः। १३ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। १४ भुरिगनुष्टुप्। १५ विराडनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः॥

अथ क ऐश्वर्यं प्राप्नोतीत्याह॥

अब पन्द्रह ऋचावाले साठवें सूक्त का प्रारम्भ है, इसके प्रथम मन्त्र में कौन ऐश्वर्य को पाता है, इस विषय को कहते हैं॥

श्नथ॑द् वृ॒त्रमु॒त स॑नोति॒ वाज॒मिन्द्रा॒ यो अ॒ग्नी सहु॑री सप॒र्यात्।
इ॒र॒ज्यन्ता॑ वस॒व्य॑स्य॒ भूरेः॒ सह॑स्तमा॒ सह॑सा वाज॒यन्ता॑॥१॥

श्नथ॑त्। वृ॒त्रम्। उ॒त। स॒नोति॒। वाज॑म्। इन्द्रा॑। यः। अ॒ग्नी इति॑। सहु॑री इति॑। स॒प॒र्यात्। इ॒र॒ज्यन्ता॑। व॒स॒व्य॑स्य। भूरेः॑। सहः॑ऽतमा। सह॑सा। वा॒ज॒ऽयन्ता॑॥१॥

पदार्थः-(**श्नथत्**) हिनस्ति (**वृत्रम्**) धनम् (**उत**) अपि (**सनोति**) प्राप्नोति (**वाजम्**) अन्नम् (**इन्द्रा**) (**यः**) (**अग्नी**) इन्द्राग्नी वायुविद्युतौ (**सहुरी**) सोढारौ (**सपर्यात्**) सेवेत (**इरज्यन्ता**) ऐश्वर्य्यं सम्पादयन्तौ (**वसव्यस्य**) वसुषु द्रव्येषु भवस्य (**भूरेः**) बहोः (**सहस्तमा**) अतिशयेन सोढारौ (**सहसा**) बलेन (**वाजयन्ता**) वाजमन्नादिकमिच्छन्तौ॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो विद्वान् सहुरी इरज्यन्ता सहस्तमा सहसा वाजयन्ता इन्द्राग्नी श्नथदुतापि सनोति वसव्यस्य भूरेर्वृत्रं सनोति वाजं सपर्यात् स ऐश्वर्यं प्राप्नुयात्॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यदि भवन्तो वायुविद्युद्विद्यां विजानीयुस्तर्हि महैश्वर्या भूत्वा महतो राज्यस्य स्वामिनो भवेयुः॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यः**) जो विद्वान् (**सहुरी**) सहनशील (**इरज्यन्ता**) ऐश्वर्य को सिद्ध करते हुए वा (**सहस्तमा**) अतीव सहन करने वाले (**सहसा**) बल से (**वाजयन्ता**) अन्नादिकों की इच्छा करते हुए (**इन्द्रा, अग्नी**) पवन और बिजुली को (**श्नथत्**) ताड़ता है (**उत**) और (**सनोति**) प्राप्त होता है तथा (**वसव्यस्य**) धनादि पदार्थों में हुए (**भूरेः**) बहुत सुख से (**वृत्रम्**) धन को प्राप्त होता है और (**वाजम्**) अन्न को (**सपर्यात्**) सेवे वही ऐश्वर्य को पावे॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो आप वायु और बिजुली की विद्या को जानो तो महान् ऐश्वर्य वाले होकर महान् राज्य के स्वामी होओ॥१॥

मनुष्याः किं कृत्वा सुखं प्राप्नुवन्तीत्याह॥

मनुष्य क्या करके सुख पाते हैं, इस विषय को कहते हैं॥

ता योधिष्टमभि गा इन्द्र नूनमपः स्वरुषसो अग्न ऊळ्हाः।
दिशः स्वरुषस इन्द्र चित्रा अपो गा अग्ने युवसे नियुत्वान्॥ २॥

ता। योधिष्टम्। अभि। गाः। इन्द्र। नूनम्। अपः। स्वः। उषसः। अग्ने। ऊळ्हाः। दिशः। स्वः। उषसः। इन्द्र। चित्राः। अपः। गाः। अग्ने। युवसे। नियुत्वान्॥ २॥

पदार्थः-(**ता**) तौ (**योधिष्टम्**) युध्येयाताम् (**अभि**) (**गाः**) पृथिवीः (**इन्द्र**) परमैश्वर्ययुक्त (**नूनम्**) निश्चयेन (**अपः**) कर्म (**स्वः**) आदित्यः (**उषसः**) प्रभातवेलाः (**अग्ने**) विद्वन् (**ऊळ्हाः**) प्राप्ताः (**दिशः**) (**स्वः**) आदित्यः (**उषसः**) (**इन्द्र**) दुःखविदारक (**चित्राः**) (**अपः**) उदकानि (**गाः**) वाचः (**अग्ने**) विद्वन् (**युवसे**) संयोजयसि (**नियुत्वान्**) ईश्वर इव न्यायेशः॥ २॥

अन्वयः-हे इन्द्राग्ने वा! त्वं स्वरादित्य उषस इव गा नूनमपो युवसे याभ्यां दिश उळ्हास्ता विदित्वा युवामभि योधिष्टम्। हे इन्द्राग्ने वा नियुत्वाँस्त्वं स्वरादित्य उषस इव चित्रा अपो गा युवसे तस्मान्नियुत्वानसि॥ २॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्या वायुविद्युद्वत्पराक्रमिणो भूत्वा युद्धमाचरेयुस्त उषसः सूर्य इव प्रजा न्यायेन प्रकाशयित्वा सर्वदिक्कीर्त्तयो भूत्वाऽद्भुता वाचो बलानि भूमिराज्यं च प्राप्नुवन्ति॥ २॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) परमैश्वर्ययुक्त (**अग्ने**) विद्वन् वा! आप (**स्वः**) आदित्य (**उषसः**) प्रभातवेलाओं को जैसे वैसे (**गाः**) पृथिवी और (**नूनम्**) निश्चय से (**अपः**) कर्म को (**युवसे**) संयुक्त करते हो और जिनसे (**दिशः**) दिशायें (**ऊळ्हाः**) प्राप्त हुई (**ता**) उनको जानकर तुम दोनों (**अभि, योधिष्टम्**) सब ओर से युद्ध करो। हे (**इन्द्र**) दुःखविदारक= दुःख के नाश करने वाले वा (**अग्ने**) विद्वान् जन (**नियुत्वान्**) ईश्वर के समान न्यायाधीश! आप (**स्वः**) आदित्य (**उषसः**) प्रभातवेलाओं के समान (**चित्राः**) चित्रविचित्र (**अपः**) उदक (**गाः**) और वाणियों को संयुक्त करते हो, इससे ईश्वर के समान न्यायकर्त्ता हो॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य वायु और बिजुली के तुल्य पराक्रमी होकर युद्ध का आचरण करें, वे उषाकाल को जैसे सूर्य उसी के समान प्रजाओं को न्याय से प्रकाश को प्राप्त कराय कर और सर्व दिशाओं में कीर्ति वाले हो अद्भुत वाणी, बलों और भूमि के राज्य को प्राप्त होते हैं॥ २॥

पुना राजाजनाः कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर राजा जन कैसे हों, इस विषय को कहते हैं॥

आ वृत्रहणा वृत्रहभिः शुष्मैरिन्द्र यातं नमोभिरग्ने अर्वाक्।
युवं राधोभिरकवेभिरिन्द्राग्ने अस्मे भवतमुत्तमेभिः॥ ३॥

आ। वृत्रऽहना। वृत्रऽहभिः। शुष्मैः। इन्द्र। यातम्। नमःऽभिः। अग्ने। अर्वाक्। युवम्। राधःऽभिः। अकवेभिः। इन्द्र। अग्ने। अस्मे इति। भवतम्। उत्ऽतमेभिः॥ ३॥

पदार्थः-(**आ**) (**वृत्रहणा**) यौ वृत्रं मेघं हतस्तौ (**वृत्रहभिः**) यैः कर्मभिर्वृत्रं हतस्तैः (**शुष्मैः**) बलैः (**इन्द्र**) विद्युदिव राजन् (**यातम्**) आगच्छतम् (**नमोभिः**) अन्नादिभिः (**अग्ने**) पावक इव सभ्यजन (**अर्वाक्**) पश्चात् (**युवम्**) युवाम् (**राधोभिः**) धनैः (**अकवेभिः**) असङ्ख्यैः (**इन्द्र**) दुष्टविदारक (**अग्ने**) पापिप्रतापक (**अस्मे**) अस्मभ्यम् (**भवतम्**) (**उत्तमेभिः**) श्रेष्ठैः॥ ३॥

अन्वयः-हे इन्द्राग्ने वायुविद्युद्वद्वर्त्तमानौ! यथा वृत्रहणा विद्युतौ वृत्रहभिः शुष्मैर्नमोभिरर्वागच्छतस्तथा युवमकवेभी राधोभिरस्माना यातम्। हे इन्द्राग्ने! उत्तमेभिः कर्मभिरस्मे सुखकरौ भवतम्॥ ३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यो राजाऽस्याऽमात्याश्च वायुविद्युद्वदुपकारिणः स्युस्तेऽसङ्ख्यं धनमाप्नुयुः॥ ३॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) बिजुली के समान राजजन वा (**अग्ने**) अग्नि के समान सभ्यजन वायु और बिजुली के समान वर्त्तमान दोनों पुरुषो! जैसे (**वृत्रहणा**) मेघ को हननेवाले बिजुली के दो भाग (**वृत्रहभिः**) उन कर्म्मों से जिन से मेघ को मारते वा (**शुष्मैः**) बलों से वा (**नमोभिः**) अन्नादि पदार्थों से (**अर्वाक्**) पीछे जाते हैं, वैसे (**युवम्**) तुम दोनों (**अकवेभिः**) असङ्ख्य (**राधोभिः**) धनों से हम लोगों को (**आ, यातम्**) प्राप्त होओ। हे (**इन्द्र**) दुष्टविदारक वा (**अग्ने**) पापियों को सन्तप्त करने वाले! (**उत्तमेभिः**) श्रेष्ठ कर्मों से (**अस्मे**) हम लोगों के लिये सुख करने वाले (**भवतम्**) होओ॥ ३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो राजा और राजमन्त्री वायु और बिजुली के समान उपकारी हों, वे असङ्ख्य धन को प्राप्त हों॥५॥

मनुष्यैर्वायुविद्युतौ यथावद्विज्ञातव्यावित्याह॥

मनुष्यों को चाहिये कि वायु और बिजुली को यथावत् जानें, इस विषय को कहते हैं॥

ता हुवे ययोरिदं पप्ने विश्वं पुरा कृतम्। इन्द्राग्नी न मर्धतः॥ ४॥

ता। हुवे। ययोः। इदम्। पप्ने। विश्वम्। पुरा। कृतम्। इन्द्राग्नी इति। न। मर्धतः॥ ४॥

पदार्थः-(**ता**) तौ (**हुवे**) (**ययोः**) (**इदम्**) (**पप्ने**) ययोः सकाशाद्व्यवहारे (**विश्वम्**) सर्वं जगत् (**पुरा**) (**कृतम्**) (**इन्द्राग्नी**) वायुविद्युतौ (**न**) निषेधे (**मर्धतः**) हिंसतः॥ ४॥

अन्वयः-ययोरिदं विश्वं पप्ने याविन्द्राग्नी पुरा कृतमिदं विश्वं न मर्धतस्ताऽहं हुवे॥ ४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! याभ्यां वायुविद्युद्भ्यां सर्वं जगत् व्यवहरति यौ जगति स्थित्वा कञ्चन न हिंसतो विकृतौ सन्तौ नाशयतस्तौ मनुष्यैर्विज्ञाय यथावदुपकर्त्तव्यम्॥ ४॥

पदार्थः-(**ययोः**) जिनका (**इदम्**) यह (**विश्वम्**) समस्त जगत् वा (**पप्ने**) जिन से प्रवृत्त हुए व्यवहार में (**इन्द्राग्नी**) वायु और बिजुली (**पुरा**) पहिले (**कृतम्**) किये हुए इस विश्व को (**न**) नहीं (**मर्धतः**) नष्ट करते हैं (**ता**) उनको मैं (**हुवे**) ग्रहण करता हूं॥ ४॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जिन वायु और बिजुली से सब जगत् व्यवहार करता है तथा जो संसार में स्थिर हो किसी को नष्ट नहीं करते हैं और विकार को प्राप्त हुए वे नष्ट करते हैं, मनुष्यों को चाहिये कि उनको जान कर यथावत् उपकार करें॥४॥

पुनर्वायुविद्युतौ कीदृश्यौ भवत इत्याह॥

फिर वायु और बिजुली कैसे है, इस विषय को कहते हैं॥

उग्रा विघनिना मृधं इन्द्राग्नी हवामहे। ता नो मृळात ईदृशे॥५॥२७॥

उग्रा। विऽघनिना। मृधः। इन्द्राग्नी इति। हवामहे। ता। नः। मृळातः। ईदृशे॥५॥

पदार्थ:-(**उग्रा**) तेजस्विनौ (**विघनिना**) विशेषेण हन्तारौ (**मृध:**) स- ग्रामान् (**इन्द्राग्नी**) वायुविद्युतौ (**हवामहे**) आदद्म: (**ता**) तौ (**न:**) अस्मान् (**मृळात:**) सुखयत: (**ईदृशे**) युद्धप्रकारके व्यवहारे॥५॥

अन्वय:-हे मनुष्या! वयमुग्रा विघनिनेन्द्राग्नी हवामहे ताभ्यां मृधो विजयामहे यावीदृशे व्यवहारे नो मृळातस्ता यूयमपि विजानीत॥५॥

भावार्थ:-मनुष्यैर्वायुविद्युतौ यथावद्विज्ञाय सम्प्रयुज्य स- ग्रामान् विजित्य सुखं प्राप्तव्यम्॥५॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! हम लोग (**उग्रा**) तेजस्वी (**विघनिना**) विशेष हनने वाले (**इन्द्राग्नी**) वायु और बिजुली को (**हवामहे**) ग्रहण करते हैं उनसे (**मृध:**) स- ग्रामों को जीतते हैं जो (**ईदृशे**) ऐसे युद्धप्रकारक व्यवहार में (**न:**) हम लोगों को (**मृळात:**) सुखी करते हैं (**ता**) उन दोनों को तुम भी जानो॥५॥

भावार्थ:-मनुष्यों को वायु और बिजुली यथावत् जान और उनका संप्रयोग कर स- ग्रामों को जीत सुख पाना चाहिये॥५॥

पुनस्तौ कीदृशावित्याह॥

फिर वे कैसे हैं, इस विषय को कहते हैं॥

हतो वृत्राण्यार्या हतो दासानि सत्पती। हतो विश्वा अप द्विषः॥६॥

हतः। वृत्राणि। आर्या। हतः। दासानि। सत्पती इति सत्ऽपती। हतः। विश्वा। अप। द्विषः॥६॥

पदार्थ:-(**हत:**) हिंसक: (**वृत्राणि**) मेघाऽवयवान् (**आर्या**) उत्तमगुणकर्मस्वभावौ (**हत:**) (**दासानि**) दानानि (**सत्पती**) सतां पुरुषाणां व्यवहाराणां वा पालकौ (**हत:**) (**विश्वा**) अखिलान् (**अप**) (**द्विष:**) शत्रून्॥६॥

अन्वय:-हे मनुष्या! यावार्या सत्पती सूर्य्यविद्युतौ वृत्राणीव विश्वा द्विषोप हत:। दासान्यप हतो दु:खान्यप हतस्तौ सत्कर्त्तव्यौ॥६॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! ये श्रेष्ठगुणकर्मस्वभावा मनुष्या: सत्यधर्मनिष्ठा आप्तानां पालका दुष्टानां प्रहर्त्तार: स्युस्तान् सदा सत्कुरुत॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(आर्या)** उत्तम गुणकर्मस्वभावयुक्त **(सत्पती)** सज्जन पुरुषों के व्यवहारों के पालने वाले सूर्य्य और बिजुली **(वृत्राणि)** मेघ के अवयवों को जैसे वैसे **(विश्वा)** समस्त **(द्विषः)** शत्रुजनों को **(अप, हतः)** मारते हैं वा **(दासानि)** दानों को **(हतः)** नष्ट करते हैं वा दुःखों को **(हतः)** दूर करते हैं, वे सत्कार करने योग्य हैं॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो श्रेष्ठ गुणकर्मस्वभाव वाले मनुष्य, सत्य धर्मनिष्ठ, आप्त सज्जनों के पालने और दुष्टों को हरने वाले हों, उनका सदा सत्कार करो॥६॥

पुनस्तौ कीदृशावित्याह॥

फिर वे दोनों कैसे है, इस विषय को कहते हैं॥

इन्द्रा॑ग्नी यु॒वामि॒मे३॒॑ऽभि स्तोमा॑ अनूषत। पिब॑तं शंभुवा सु॒तम्॥७॥

इन्द्रा॑ग्नी॒ इति॑। यु॒वाम्। इ॒मे। अ॒भि। स्तोमाः॑। अ॒नू॒ष॒त॒। पिब॑तम्। श॒म्ऽभु॒वा॒। सु॒तम्॥७॥

पदार्थः-**(इन्द्राग्नी)** सूर्य्यविद्युताविव सभासेनेशौ **(युवाम्)** **(इमे)** **(अभि)** **(स्तोमाः)** प्रशंसाः **(अनूषत)** प्रशंसन्ति **(पिबतम्)** **(शम्भुवा)** यौ शं सुखं भावयतस्तौ **(सुतम्)** अभिनिष्पादितं दुग्धादिरसम्॥७॥

अन्वयः-हे शम्भुवा इन्द्राग्नी! युवां य इमे स्तोमा अभ्यनूषत तैः सुतं पिबतम्॥७॥

भावार्थः-हे सभासेनेशौ! भवन्तौ पथ्याचारेण सदौषधिरसं पीत्वाऽरोगौ भूत्वा प्रशंसितानि कर्माणि कुर्यातम्॥७॥

पदार्थः-हे **(शम्भुवा)** सुख की भावना कराने वाले **(इन्द्राग्नी)** सूर्य्य और बिजुली के समान सभासेनाधीशो! **(युवाम्)** आप दोनों जो **(इमे)** ये **(स्तोमाः)** प्रशंसायें **(अभि, अनूषत)** प्रशंसा करती हैं उनसे **(सुतम्)** सब ओर से उत्पन्न किये हुए दूध आदि रस को **(पिबतम्)** पिओ॥७॥

भावार्थः-हे सभासेनाधीशो! आप लोग पथ्य आचार से सदा ओषधियों के रस को पीके अरोगी होकर प्रशंसित कर्मों को करो॥७॥

पुनस्तौ कीदृशावित्याह॥

फिर वे कैसे हैं, इस विषय को कहते हैं॥

या वां॒ सन्ति॑ पुरु॒स्पृहो॑ नि॒युतो॑ दा॒शुषे॒ नरा। इन्द्रा॑ग्नी॒ ताभि॒रा ग॑तम्॥८॥

या। वा॒म्। सन्ति॑। पु॒रु॒ऽस्पृहः॑। नि॒ऽयुतः॑। दा॒शुषे॑। न॒रा॒। इन्द्रा॑ग्नी॒ इति॑। ताभिः॑। आ। ग॒त॒म्॥८॥

पदार्थः-**(या)** याः **(वाम्)** युवयोः **(सन्ति)** **(पुरुस्पृहः)** पुरून् बहूनुत्तमान् कामानभिकाङ्क्षयन्ति याभिस्ताः **(नियुतः)** निश्चिताः **(दाशुषे)** दात्रे **(नरा)** नायकौ **(इन्द्राग्नी)** विद्यैश्वर्य्ययुक्तावध्यापकोपदेशकौ **(ताभिः)** स्पृहाभिः **(आ)** **(गतम्)** आगच्छतम्॥८॥

अन्वयः-हे नरा इन्द्राग्नी! वा या पुरुस्पृहो नियुतः सन्ति ताभिर्दाशुष आ गतम्॥८॥

भावार्थः-ये मनुष्याः परोपकारं चिकीर्षन्ति त एव सत्पुरुषा भवन्ति॥८॥

पदार्थः-हे **(नरा)** नायक **(इन्द्राग्नी)** विद्या और ऐश्वर्य्ययुक्त अध्यापक और उपदेशको! **(वाम्)** तुम दोनों की **(या)** जो **(पुरुस्पृहः)** बहुतों की चाहना करते जिनसे वे **(नियुतः)** निश्चित **(सन्ति)** हैं **(ताभिः)** उन इच्छाओं से **(दाशुषे)** दान देने वाले के लिये **(आ, गतम्)** आओ॥८॥

भावार्थः-जो मनुष्य परोपकार करने की इच्छा करते हैं, वे ही सत्पुरुष होते हैं॥८॥

पुनस्तौ किं कुर्यातमित्याह॥

फिर वे क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

ताभिरा गच्छतं नरोपेदं सवनं सुतम्। इन्द्राग्नी सोमपीतये॥९॥

ताभिः। आ। गच्छतम्। नरा। उप। इदम्। सवनम्। सुतम्। इन्द्राग्नी इति। सोमऽपीतये॥९॥

पदार्थः-**(ताभिः)** स्पृहाभिः **(आ)** **(गच्छतम्)** समन्तात् प्राप्नुतम् **(नरा)** नायकौ **(उप)** **(इदम्)** **(सवनम्)** येन सूयते तत् **(सुतम्)** सुसंस्कृतम् **(इन्द्राग्नी)** इन्द्रवायू इव सज्जनौ **(सोमपीतये)** सोमस्य पानाय॥९॥

अन्वयः-हे नरेन्द्राग्नी! युवां ताभिः सोमपीतय इदं सुतं सवनमुपाऽऽगच्छतम्॥९॥

भावार्थः-यजमाना विदुष आहूय सदैव सत्कुर्य्युः सत्कृतास्ते च यजमानान् धर्मपथं नयेयुः॥९॥

पदार्थः-हे **(नरा)** नायक **(इन्द्राग्नी)** बिजुली और वायु के समान सज्जनो! तुम दोनों **(ताभिः)** उन इच्छाओं से **(सोमपीतये)** सोमपान के लिये **(इदम्)** इस **(सुतम्)** अच्छे प्रकार संस्कार किये हुए **(सवनम्)** जिससे उत्पन्न करते हैं उसके **(उप, आ, गच्छतम्)** समीप प्राप्त होओ॥९॥

भावार्थः-यजमान जन विद्वानों को बुलाकर सदैव सत्कार करें और सत्कार पाये हुए वे लोग भी यजमानों को धर्मपथ को प्राप्त करावें॥९॥

पुनः स राजा कीदृशो भवेदित्याह॥

फिर वह राजा कैसा हो, इस विषय को कहते हैं॥

तमीळिष्व यो अर्चिषा वना विश्वा परिष्वजत्।
कृष्णा कृणोति जिह्वया॥१०॥२८॥

तम्। ईळिष्व। यः। अर्चिषा। वना। विश्वा। परिऽस्वजत्। कृष्णा। कृणोति। जिह्वया॥१०॥

पदार्थः-**(तम्)** **(ईळिष्व)** प्रशंसाऽध्यन्विच्छ वा **(यः)** **(अर्चिषा)** सत्कारेण **(वना)** वनानि किरणान् **(विश्वा)** सर्वाणि **(परिष्वजत्)** सर्वतः सम्बध्नाति **(कृष्णा)** कर्षणानि **(कृणोति)** **(जिह्वया)**॥१०॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथा सूर्य्योऽर्चिषा विश्वा वना परिष्वजत् कृष्णा कृणोति तथा यो जिह्वया सत्याचारं परिष्वजत्तं त्वमीळिष्व॥१०॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सूर्यप्रकाशेन सर्वे पदार्था यथावद् दृश्यन्ते तथैव विद्यया सर्वे पदार्थाः प्रकाश्यन्ते॥१०॥

पदार्थ:-हे विद्वन् जन! जैसे सूर्य्य **(अर्चिषा)** सत्कार से **(विश्वा)** समस्त **(वना)** किरणों को **(परिष्वजत्)** सब ओर से सम्बन्ध करता है तथा **(कृष्णा)** पदार्थों की खींचों को [=पदार्थों का कर्षण] **(कृणोति)** करता है, वैसे **(यः)** जो **(जिह्वया)** जिह्वा से सत्य आचरण का सम्बन्ध करे **(तम्)** उसकी आप **(ईळिष्व)** प्रशंसा वा याचना करो॥१०॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य्य के प्रकाश से सब पदार्थ यथावत् दीखते हैं, वैसे ही विद्या से सब पदार्थ प्रकाशित होते हैं॥१०॥

पुनर्मनुष्यैः कस्मै किं सेवितव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को किसके लिये क्या सेवन करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

य इ॒द्ध आ॒विवा॑सति सु॒म्नमिन्द्र॑स्य मर्त्यः॑। द्यु॒म्नाय॑ सु॒तरा॑ अ॒पः॥११॥

यः। इ॒द्धे। आ॒ऽविवा॑सति। सु॒म्नम्। इन्द्र॑स्य। मर्त्यः॑। द्यु॒म्नाय॑। सु॒ऽतराः॑। अ॒पः॥११॥

पदार्थ:-**(यः)** यजमानः **(इद्धे)** प्रदीप्ते **(आविवासति)** समन्तात्सेवते **(सुम्नम्)** सुखम् **(इन्द्रस्य)** ऐश्वर्यस्य **(मर्त्यः)** मनुष्यः **(द्युम्नाय)** यशसे धनाय वा **(सुतराः)** सुष्ठु तरन्ति यासु ताः **(अपः)** जलानि॥११॥

अन्वयः-यो मर्त्य इद्ध इन्द्रस्य द्युम्नाय सुतरा अपः सुम्नं चाऽऽविवासति स भाग्यवाञ्जायते॥११॥

भावार्थ:-मनुष्या यथेद्धे पावके सुगन्ध्यादि हविर्हुत्वा सिद्धकामा भवन्ति तथैव ये यशसा धर्म्मकीर्त्यै स्वर्ग्याय च प्रयतन्ते ते सुतरां श्रीमन्तो जायते॥११॥

पदार्थ:-**(यः)** जो **(मर्त्यः)** मनुष्य **(इद्धे)** प्रदीप्त व्यवहार में **(इन्द्रस्य)** ऐश्वर्य के **(द्युम्नाय)** यश वा धन के लिये **(सुतराः)** सुन्दरता से जिनमें तैरें उन **(अपः)** जलों को और **(सुम्नम्)** सुख को **(आविवासति)** सब ओर से सेवता है, वह भाग्यवान् होता है॥११॥

भावार्थ:-मनुष्य जैसे प्रदीप्त अग्नि में सुगन्ध्यादि पदार्थों की हवि होम कर सिद्धकाम होते हैं, वैसे जो यश से धर्मकीर्त्ति वा स्वर्ग के लिये प्रयत्न करते हैं, वे निरन्तर श्रीमान् होते हैं॥११॥

पुनर्मनुष्यैः केन किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को किससे क्या करने योग्य है, इस विषय को कहते हैं॥

ता नो॒ वाज॑वती॒रिष॑ आ॒शून् पि॑पृ॒तमर्व॑तः। इन्द्र॑म॒ग्निं च॒ वोळ्ह॑वे॥१२॥

ता। नः॒। वाज॑ऽवतीः। इषः॑। आ॒शून्। पि॒पृ॒तम्। अर्व॑तः। इन्द्र॑म्। अ॒ग्निम्। च॒। वोळ्ह॑वे॥१२॥

पदार्थ:-**(ता)** तौ **(नः)** अस्मभ्यम् **(वाजवतीः)** प्रशस्तविज्ञानयुक्तान् **(इषः)** अन्नादीन् **(आशून्)** आशुगामिनः **(पिपृतम्)** पूरयेताम् **(अर्वतः)** अश्वान् **(इन्द्रम्)** विद्युतम् **(अग्निम्)** प्रसिद्धं पावकम् **(च)** **(वोळ्हवे)** विमानादियानानां वाहनाय॥१२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यूयं यौ नो वाजवतीरिष आशूनर्वतः पिपृतं तेन्द्रमग्निं च वोळहवे सङ्गृह्णीत॥१२॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यूयं विद्युदादिपदार्थैर्विमानादीनि यानानि चालयित्वेच्छाः पूरयत॥१२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! तुम जो **(नः)** हमारे लिये **(वाजवतीः)** प्रशस्त विज्ञानयुक्त **(इषः)** अन्नादि पदार्थों और **(आशून्)** शीघ्रगामी **(अर्वतः)** घोड़ों को **(पिपृतम्)** पूर्ण करते हैं **(ता)** उन **(इन्द्रम्)** बिजुली रूप अग्नि **(अग्निम्, च)** और प्रसिद्ध अग्नि को **(वोळहवे)** विमान आदि यानों को बहाने के लिये स-ह करो॥१२॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! तुम बिजुली आदि पदार्थों से विमान आदि यानों को चलाकर इच्छओं को पूर्ण करो॥१२॥

पुनः शिल्पिनस्ताभ्यां किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर शिल्पीजन उनसे क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

उभा वामिन्द्राग्नी आहुवध्या उभा राधसः सह मादयध्यै।
उभा दातारविषां रयीणामुभा वाजस्य सातये हुवे वाम्॥१३॥

उभा। वाम्। इन्द्राग्नी इति। आऽहुवध्यै। उभा। राधसः। सह। मादयध्यै। उभा। दातारौ। इषाम्। रयीणाम्। उभा। वाजस्य। सातये। हुवे। वाम्॥१३॥

पदार्थः-**(उभा)** उभौ **(वाम्)** युवयोः **(इन्द्राग्नी)** सूर्य्यविद्युतौ **(आहुवध्यै)** आह्वयितुम् **(उभा)** **(राधसः)** धनस्य **(सह)** **(मादयध्यै)** आनन्दयितुम् **(उभा)** **(दातारौ)** **(इषाम्)** अन्नादीनाम् **(रयीणाम्)** धनानाम् **(उभा)** **(वाजस्य)** विज्ञानस्य स-ग्रामस्य वा **(सातये)** संविभागाय **(हुवे)** आददे **(वाम्)** युवाम्॥१३॥

अन्वयः-हे शिल्पविद्याऽध्यापकोपदेशकौ! यथा वां युवयोः समीपे स्थित्वाऽऽहुवध्या उभेन्द्राग्नी राधसो मादयध्या उभा सह उभेषां रयीणां दातारा उभा वाजस्य सातयेऽहं हुवे तथोभा वामेतद्विद्यां बोधयेयम्॥१३॥

भावार्थः-ये मनुष्या वायुविद्युतौ यथावद्विदित्वा कार्येषु सम्प्रयुञ्जते ते श्रीपतयो जायन्ते॥१३॥

पदार्थः-हे शिल्पविद्या के अध्यापक और उपदेश करने वालो! जैसे **(वाम्)** तुम्हारे समीप स्थिर होकर **(आहुवध्यै)** आह्वान करने को **(उभा)** दोनों **(इन्द्राग्नी)** सूर्य्य और बिजुली को **(राधसः)** धन सम्बन्धी **(मादयध्यै)** आनन्द देने को **(उभा)** दोनों को **(सह)** एक साथ **(उभा)** और दोनों को **(इषाम्)** अन्नादि पदार्थों के वा **(रयीणाम्)** धनादि पदार्थों के **(दातारौ)** देने वाले तथा **(उभा)** दोनों को **(वाजस्य)** विज्ञान वा स-ग्राम के **(सातये)** संविभाग के लिये मैं **(हुवे)** स्वीकार करता हूं, वैसे ही **(वाम्)** तुम दोनों को इस विद्या का बोध कराऊं॥१३॥

भावार्थः-जो मनुष्य वायु और बिजुली को यथावत् जान के कार्य्यों में उनका अच्छे प्रकार प्रयोग करते हैं, वे श्रीपति होते हैं॥१३॥

पुनर्मनुष्यैः कैः सह मित्रता कार्येत्याह॥

फिर मनुष्यों को किन के साथ मित्रता करनी चाहिये, इस विषयको कहते हैं॥

आ नो गव्येभिरश्व्यैर्वसव्यै३रुप गच्छतम्।

सखायौ देवौ सख्याय शंभुवेन्द्राग्नी ता हवामहे॥ १४॥

आ। नः। गव्येभिः। अश्व्यैः। वसव्यैः। उप। गच्छतम्। सखायौ। देवौ। सख्याय। शम्ऽभुवा। इन्द्राग्नी इति। ता। हवामहे॥ १४॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**नः**) अस्मान् (**गव्येभिः**) गोर्विकारैर्घृतादिभिः (**अश्व्यैः**) अश्वेषु भवैर्गुणैः (**वसव्यैः**) वसुषु द्रव्येषु भवैः सुखैः (**उप**) (**गच्छतम्**) (**सखायौ**) सुहृदौ (**देवौ**) विद्वांसौ (**सख्याय**) मित्रत्वाय (**शम्भुवा**) सुखंभावुकौ (**इन्द्राग्नी**) सूर्य्यविद्युताविव वर्त्तमानौ (**ता**) तौ (**हवामहे**) आह्वयामहे॥ १४॥

अन्वयः-हे अध्यापकोपदेशकविन्द्राग्नी इव वर्त्तमानौ शम्भुवा देवौ सखायौ नः सख्याय गव्येभिरश्व्यैर्वसव्यैः सह वर्त्तमानौ युवां वयं हवामहे ता युवामस्मानुपाऽऽगच्छतम्॥ १४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्या विद्वन्मित्रा भूत्वा पदार्थविद्यां चिकीर्षन्ति तेऽवश्यं विज्ञानं प्राप्नुवन्ति॥ १४॥

पदार्थः-हे अध्यापक और उपदेशको (**इन्द्राग्नी**) सूर्य और बिजुली के समान वर्त्तमान वा (**शम्भुवा**) सुख की भावना कराने वाले (**देवौ**) विद्वान् (**सखायौ**) मित्र (**नः**) हम लोगों को (**सख्याय**) मित्रता के लिये (**गव्येभिः**) गो घृत आदि पदार्थ (**अश्व्यैः**) अश्वादिकों में हुए गुणों और (**वसव्यैः**) धनादिकों में हुए सुखों के साथ वर्त्तमान तुम दोनों को हम लागे (**हवामहे**) बुलाते हैं (**ता**) वे तुम दोनों हम लोगों के (**उप, आ, गच्छतम्**) समीप आओ॥ १४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य विद्वानों के मित्र होकर पदार्थविद्या सिद्ध करने की इच्छा करते हैं, वे अवश्य विज्ञान को प्राप्त होते हैं॥ १४॥

पुनस्तौ किं कुर्य्यातामित्याह॥

फिर वे दोनों क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

इन्द्राग्नी शृणुतं हवं यजमानस्य सुन्वतः।

वीतं हव्यान्या गतं पिबतं सोम्यं मधु॥ १५॥ २९॥

इन्द्राग्नी इति। शृणुतम्। हवम्। यजमानस्य। सुन्वतः। वीतम्। हव्यानि। आ। गतम्। पिबतम्। सोम्यम्। मधु॥ १५॥

पदार्थः-(**इन्द्राग्नी**) वायुविद्युताविव वर्त्तमानावध्यापकोपदेशकौ (**शृणुतम्**) (**हवम्**) ममाऽधीतविषयम् (**यजमानस्य**) शुभगुणादातुः (**सुन्वतः**) पदार्थविद्यया बहून् पदार्थान्निष्पादयतः (**वीतम्**)

प्राप्नुतं व्याप्नुतं वा **(हव्यानि)** **(आ)** **(गतम्)** आगच्छतम् **(पिबतम्)** **(सोम्यम्)** सोममर्हम् **(मधु)** मधुरादियुक्तं रसम्॥१५॥

अन्वयः-हे इन्द्राग्नी! युवां सुन्वतो यजमानस्य हवं शृणुतं हव्यानि वीतं तत्सान्निध्यमा गतं सोम्यं मधु पिबतम्॥१५॥

भावार्थः-सर्वैर्मनुष्यैरामन्त्रणेन विदुषामाह्वानं कृत्वैतान् सत्कृत्यैतेभ्यः स्वविद्यां परीक्षयित्वाऽधिका विद्या ग्रहीतव्येति॥१५॥

अत्रेन्द्राऽग्निगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति षष्टितमं सूक्तमेकोनत्रिंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(इन्द्राग्नी)** वायु और बिजुली के समान वर्त्तमान अध्यापक और उपदेशको! तुम दोनों **(सुन्वतः)** पदार्थविद्या से बहुत पदार्थों को उत्पन्न करते हुए **(यजमानस्य)** शुभ गुण देने वाले मेरे **(हवम्)** पढ़े विषय को **(शृणुतम्)** सुनो और **(हव्यानि)** पदार्थों को **(वीतम्)** प्राप्त होओ वा व्याप्त होओ उनके समीप **(आ, गतम्)** आओ और **(सोम्यम्)** शान्ति शीतलता के जो योग्य है उस **(मधु)** मधुरादि युक्त रस को **(पिबतम्)** पिओ॥१५॥

भावार्थः-सब मनुष्यों को चाहिये कि आमन्त्रण से विद्वानों को बुलाकर इनका सत्कार कर इनसे अपनी विद्या की परीक्षा कराय अधिक विद्या ग्रहण करें॥१५॥

इस सूक्त में इन्द्र और अग्नि के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह साठवां सूक्त और उनतीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ चतुर्दशर्चस्यैकषष्टितमस्य सूक्तस्य बार्हस्पत्य ऋषिः। सरस्वती देवता। १, १३ निचृज्जगती। २ जगती। ३ विराड्जगती छन्दः। निषादः स्वरः। ४, ९, ११, १२ निचृद्गायत्री। ५, ६, १० विराड्गायत्री। ७, ८ गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः। १४ पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथेयं वाक् किं ददातीत्याह॥

अब चौदह ऋचावाले एकसठवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में यह वाणी क्या देती है, इस विषय को कहते हैं॥

इ॒यम॑ददाद् र॒भ॒सम॑ृण॒च्युतं॒ दिवो॑दासं वध्र्यश्वा॑य दा॒शुषे॑।
या शश्व॑न्तमाच॒खादा॑व॒सं प॒णिं ता ते॑ दा॒त्राणि॑ तवि॒षा स॑रस्वति॥१॥

इ॒यम्। अ॒द॒दा॒त्। र॒भ॒सम्। ऋ॒ण॒ऽच्युत॑म्। दिव॑:ऽदासम्। व॒ध्रि॒ऽअ॒श्वाय॑। दा॒शुषे॑। या। शश्व॑न्तम्। आ॒ऽच॒खाद॑। अ॒व॒सम्। प॒णिम्। ता। ते॒। दा॒त्राणि॑। त॒वि॒षा। स॒र॒स्व॒ति॒॥१॥

पदार्थः-(**इयम्**) (**अददात्**) ददाति (**रभसम्**) वेगम् (**ऋणच्युतम्**) ऋणादयुक्तम् (**दिवोदासम्**) विद्याप्रकाशस्य दातारम् (**वध्र्यश्वाय**) वध्रयो वर्धका अश्वा यस्य तस्मै (**दाशुषे**) दात्रे (**या**) (**शश्वन्तम्**) अनादिभूतं वेदविद्याविषयम् (**आचखाद**) स्थिरीकरोति (**अवसम्**) रक्षकम् (**पणिम्**) प्रशंसनीयम् (**ता**) तानि (**ते**) तव (**दात्राणि**) दानानि (**तविषा**) बलेन (**सरस्वति**) विदुषि॥१॥

अन्वयः-हे सरस्वति! येयं वध्र्यश्वाय दाशुषे रभसमृणच्युतं दिवोदासमददाच्छश्वन्तमवसं पणिमाचखाद सा ते तविषा ता दात्राणि ददातीति विजानीहि॥१॥

भावार्थः-या स्त्री विद्याशिक्षायुक्तां वाचं गृह्णाति साऽनादिभूतां वेदविद्यां वेत्तुमर्हति सा येन सह विवाहं कुर्यात्तस्याऽहोभाग्यं भवतीति विज्ञेयम्॥१॥

पदार्थः-हे (**सरस्वति**) विदुषी (**या**) जो (**इयम्**) यह (**वध्र्यश्वाय**) बढ़ाने वाले घोड़ों से युक्त (**दाशुषे**) दानशील के लिये (**रभसम्**) वेग (**ऋणच्युतम्**) ऋण से छूटे (**दिवोदासम्**) विद्या प्रकाश के देनेवाले को (**अददात्**) देती है तथा (**शश्वन्तम्**) अनादि वेदविद्याविषय जो कि (**अवसम्**) रक्षक तथा (**पणिम्**) प्रशंसनीय है उसको (**आचखाद**) स्थिर करती है वह (**ते**) आपके (**तविषा**) बल से (**ता**) उन (**दात्राणि**) दानों को देती है, यह जानो॥१॥

भावार्थः-जो स्त्री विद्या शिक्षायुक्त वाणी को ग्रहण करती है, वह अनादिभूत वेदविद्या को जानने योग्य होती है, वह जिसके साथ विवाह करे, उसका अहोभाग्य होता है, यह जानने योग्य है॥१॥

पुनः सा किं करोतीत्याह॥

फिर वह क्या करती है, इस विषय को कहते हैं॥

इयं शुष्मेभिर्बिसखाइवारुजत्सानु गिरीणां तविषेभिरूर्मिभिः।

पारावतघ्नीमवसे सुवृक्तिभिः सरस्वतीमा विवासेम धीतिभिः॥ २॥

इयम्। शुष्मेभिः। बिसखाःऽइव। अरुजत्। सानु। गिरीणाम्। तविषेभिः। ऊर्मिऽभिः। पारावतऽघ्नीम्। अवसे। सुवृक्तिऽभिः। सरस्वतीम्। आ। विवासेम। धीतिऽभिः॥ २॥

पदार्थः-(इयम्) (शुष्मेभिः) बलैः **(बिसखाइव)** यो बिसं कमलतन्तुं खनति तद्वद्वर्त्तमाना: **(अरुजत्)** भनक्ति **(सानु)** शिखरम् **(गिरीणाम्)** मेघानाम् **(तविषेभिः)** बलैः **(ऊर्मिभिः)** तरङ्गैः **(पारावतघ्नीम्)** पारावारघातिनीम् **(अवसे)** रक्षणाद्याय **(सुवृक्तिभिः)** सुष्ठुच्छेदिकाभिः क्रियाभिः **(सरस्वतीम्) (आ) (विवासेम)** सेवेमहि **(धीतिभिः)**॥ २॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! येयं शुष्मेभिर्बिसखाइव तविषेभिरूर्मिभिर्गिरीणां सान्वरुजत्तां पारावतघ्नीं सरस्वतीं धीतिभिः सुवृक्तिभिरवसे यथा वयमा विवासेम तथा यूयमिमां सदा सेवध्वम्॥ २॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा बिसतन्तुखनको बिसानि प्राप्नोति तथैव पुरुषार्थिनो मनुष्या उत्तमां विद्यां प्राप्नुवन्ति यथा विद्युन्मेघावयवाञ्छिनत्ति तथैव सुशिक्षिता वागविद्यावयवान् संशयान्नाशयति॥ २॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जो **(इयम्)** यह **(शुष्मेभिः)** बलों से **(बिसखाइव)** कमल के तन्तु को खोदने वाले के समान **(तविषेभिः)** बलों और **(ऊर्मिभिः)** तरङ्गों से **(गिरीणाम्)** मेघों के **(सानु)** शिखर को **(अरुजत्)** भङ्ग करती है उस **(पारावतघ्नीम्)** आरपार को नष्ट करने वाली **(सरस्वतीम्)** वेगवती नदी को **(धीतिभिः)** धारण और **(सुवृक्तिभिः)** छिन्न-भिन्न करने वाली क्रियाओं से **(अवसे)** रक्षा के लिये जैसे हम लोग **(आ, विवासेम)** सेवें, वैसे तुम भी इसको सदा सेवो॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे कमलनाल तन्तुओं को खोदने वाला कमलनाल तन्तुओं को प्राप्त होता है, वैसे ही पुरुषार्थी मनुष्य उत्तम विद्या को प्राप्त होते हैं और जैसे बिजुली मेघ के अङ्गों को छिन्न-भिन्न करती है, वैसे ही सुन्दर शिक्षित वाणी अविद्या के अङ्गों और संशयों का नाश करती है॥ २॥

पुनः सा किं करोतीत्याह॥

फिर वह क्या करती है, इस विषय को कहते हैं॥

सरस्वति देवनिदो नि बर्हय प्रजां विश्वस्य बृसयस्य मायिनः।

उत क्षितिभ्योऽवनीरविन्दो विषमेभ्यो अस्रवो वाजिनीवति॥ ३॥

सरस्वति। देवऽनिदः। नि। बर्हय। प्रऽजाम्। विश्वस्य। बृसयस्य। मायिनः। उत। क्षितिऽभ्यः। अवनीः। अविन्दः। विषम्। एभ्यः। अस्रवः। वाजिनीऽवति॥ ३॥

पदार्थः-(**सरस्वति**) विद्यायुक्ते स्त्रि (**देवनिदः**) ये देवान् विदुषो निन्दन्ति तान् (**नि**) नितराम् (**बर्हय**) निःसारय (**प्रजाम्**) (**विश्वस्य**) समग्रस्य (**बृसयस्य**) अविद्याछेदकस्य (**मायिनः**) प्रशंसितप्रज्ञस्य (**उत**) (**क्षितिभ्यः**) पृथिवीभ्यः (**अवनीः**) रक्षिका भूमीः (**अविन्दः**) प्राप्नुहि (**विषम्**) उदकम्। **विषमित्युदकनाम।** (निघं०१.१२) (**एभ्यः**) भूम्यन्तर्देशेभ्यः (**अस्रवः**) स्रावय (**वाजिनीवति**) विज्ञानक्रियायुक्ते॥३॥

अन्वयः-हे वाजिनीवति सरस्वती! त्वं देवनिदो नि बर्हय [उत] विश्वस्य बृसयस्य मायिनः प्रजामविन्दः क्षितिभ्योऽवनीरविन्द एभ्यो विषमस्रवः॥३॥

भावार्थः-सैव विदुषी स्त्री वरा या विदुषां विद्यायाश्च निन्दकान् दूरीकृत्य विद्याप्रशंसकान् सत्करोति या च भूगर्भादिविद्यावित्सर्वा प्रजां विद्याभिमुखां करोति॥३॥

पदार्थः-हे (**वाजिनीवति**) विज्ञान, क्रिया और (**सरस्वती**) विद्यायुक्त स्त्री! तू (**देवनिदः**) जो विद्वानों की निन्दा करते हैं उनको (**नि, बर्हय**) निकाल (**उत**) और (**विश्वस्य**) समग्र (**बृसयस्य**) अविद्या छेदन करने वाले (**मायिनः**) प्रशंसित बुद्धियुक्त विद्वान् की (**प्रजाम्**) प्रजा को (**अविन्दः**) प्राप्त हो तथा (**क्षितिभ्यः**) पृथिवियों से (**अवनीः**) रक्षा करने वाली भूमियों को प्राप्त हो और (**एभ्यः**) इन भूमि के भीतरी देशों से (**विषम्**) जल को (**अस्रवः**) चुआओ निकालो॥३॥

भावार्थः-वही पण्डिता स्त्री श्रेष्ठ है जो विद्वान् और विद्या के निन्दकों को निकाल विद्या के प्रशंसकों (बड़ाई करने वालों) का सत्कार करती है और जो भूगर्भादि विद्या जानने वाली समस्त प्रजा को विद्याऽभिमुख करती है॥३॥

पुनः सा कीदृशी रक्षिकेत्याह॥

फिर वह कैसी रक्षा करने वाली है, इस विषय को कहते हैं॥

प्र णो॑ दे॒वी सर॑स्वती॒ वाजे॑भिर्वा॒जिनी॑वती। धी॒नाम॑वि॒त्र्य॑वतु॥४॥

प्र। नः॒। दे॒वी। सर॑स्वती। वाजे॑भिः। वा॒जिनी॑ऽवती। धी॒नाम्। अ॒वि॒त्री। अ॒व॒तु॒॥४॥

पदार्थः-(**प्र**) (**नः**) अस्माकम् (**देवी**) विदुषी (**सरस्वती**) विज्ञानयुक्तया वाचाऽऽढ्या (**वाजेभिः**) अन्नादिभिः (**वाजिनीवती**) प्रशस्तविज्ञानक्रियासहिता (**धीनाम्**) प्रज्ञानाम् (**अवित्री**) रक्षिका (**अवतु**)॥४॥

अन्वयः-हे सन्तानाः! या देवी वाजेभिर्वाजिनीवती सरस्वती नो धीनामवित्री प्रावतु तां यूयं स्वीकुरुत॥४॥

भावार्थः-मातृभिः स्वसन्तानान् बाल्यावस्थायां सुशिक्ष्य विद्यया विदुषः सम्पाद्य तैः सहातुलं सुखं भोक्तव्यम्॥४॥

पदार्थः-हे सन्तानो! जो **(देवी)** विदुषी **(वाजेभिः)** अन्नादिकों के साथ **(वाजिनीवती)** प्रशस्तविज्ञान वा क्रिया से युक्त वा **(सरस्वती)** विज्ञानयुक्त वाणी से युक्त **(नः)** हमारी **(धीनाम्)** बुद्धियों को **(अवित्री)** रक्षा करने वाली **(प्र, अवतु)** अच्छे प्रकार करे, उसको तुम स्वीकार करो॥४॥

भावार्थः-माताजनों को चाहिये कि अपने सन्तानों को बाल्यावस्था में अच्छी शिक्षा देकर विद्या से विद्वान् कर उनके साथ अतुल सुख भोगें॥४॥

पुनः सा किंवत् किं करोतीत्याह॥

फिर वह किसके तुल्य क्या करती है, इस विषय को कहते हैं॥

यस्त्वा देवि सरस्वत्युपब्रूते धने हिते। इन्द्रं न वृत्रतूर्ये॥५॥ ३०॥

यः। त्वा। देवि। सरस्वति। उपऽब्रूते। धने। हिते। इन्द्रम्। न। वृत्रऽतूर्ये॥५॥

पदार्थः-(**यः**) (**त्वा**) त्वाम् (**देवि**) विदुषी (**सरस्वति**) विज्ञानयुक्ते (**उपब्रूते**) (**धने**) द्रव्ये (**हिते**) सुखकरे (**इन्द्रम्**) विद्युतम् (**न**) इव (**वृत्रतूर्ये**) मेघस्य हिंसने॥५॥

अन्वयः-हे देवि सरस्वती भार्ये! यस्त्वा वृत्रतूर्य इन्द्रं न हिते धन उपब्रूते तं विद्वांसं पतिं त्वं सेवस्व॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे पुरुषा! यथा पतिव्रता विदुष्यः स्त्रियो युष्मान् सत्यं ग्राहयित्वा प्रियं वदन्ति तथैताभिस्सह यूयमपि हितं वदत॥५॥

पदार्थः-हे **(देवि)** विदुषी **(सरस्वती)** विज्ञानयुक्ता भार्या! **(यः)** जो **(त्वा)** तुझे **(वृत्रतूर्ये)** मेघ के हिंसन में **(इन्द्रम्)** बिजुली के **(न)** समान **(हिते)** सुख करने वाले **(धने)** द्रव्य के निमित्त **(उपब्रूते)** कहता है, उस विद्वान् पति की तू सेवा करे॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे पुरुषो! जैसे पतिव्रता विदुषी स्त्रियाँ तुम लोगों को सत्य ग्रहण कराकर प्रिय वचन कहती हैं, वैसे इनके साथ तुम भी हित करो॥५॥

पुनः सा किं करोतीत्याह॥

फिर वह क्या करती है, इस विषय को कहते हैं॥

त्वं देवि सरस्वत्यवा वाजेषु वाजिनि। रदा पूषेव नः सनिम्॥६॥

त्वम्। देवि। सरस्वति। अव। वाजेषु। वाजिनि। रद। पूषाऽइव। नः। सनिम्॥६॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**देवि**) कामयमाने (**सरस्वति**) विदुषी (**अवा**) अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। (**वाजेषु**) प्राप्तव्येषु पदार्थेषु (**वाजिनि**) प्रशस्तविज्ञानयुक्ते (**रदा**) विलिख (**पूषेव**) भूमिरिव (**नः**) अस्माकम् (**सनिम्**) सत्याऽसत्यविभाजिकां धियम्॥६॥

अन्वयः-हे देवि वाजिनि सरस्वति! त्वं नः सनिं वाजेषु पूषेवावा रदा च॥६॥

भावार्थः-हे वरानने! त्वं पृथिवीव सर्वेषां धारणं विधेहि प्रज्ञां च देहि॥६॥

पदार्थः-हे **(देवि)** कामना करने वाली **(वाजिनि)** प्रशस्तविज्ञानयुक्त **(सरस्वति)** विदुषी स्त्री! **(त्वम्)** तू **(नः)** हमारी **(सनिम्)** सत्य और असत्य के विभाग करने वाली बुद्धि को **(वाजेषु)** प्राप्तव्य पदार्थों में **(पूषेव)** भूमि के समान **(अवा)** पालो और **(रदा)** विशेषता से लिखो॥६॥

भावार्थः-हे वरानने=सुन्दर मुख वाली! तुम पृथिवी के समान सबका धारण करो और प्रज्ञा देओ॥६॥

पुनः सा कीदृशीत्याह॥

फिर वह कैसी है, इस विषय को कहते हैं॥

उत स्या नः सरस्वती घोरा हिरण्यवर्तनिः। वृत्रघ्नी वष्टि सुष्टुतिम्॥७॥

उत। स्या। नः। सरस्वती। घोरा। हिरण्यऽवर्तनिः। वृत्रऽघ्नी। वष्टि। सुऽस्तुतिम्॥७॥

पदार्थः-**(उत)** **(स्या)** सा **(नः)** अस्माकम् **(सरस्वती)** विज्ञानयुक्ता वाणी **(घोरा)** दुष्टानां दुःखप्रदा **(हिरण्यवर्त्तनिः)** हिरण्यस्य विद्याव्यवहारस्य वर्त्तनिर्मार्गो यस्यां सा **(वृत्रघ्नी)** मेघहन्त्री विद्युदिव **(वष्टि)** कामयते **(सुष्टुतिम्)** शोभनां प्रशंसाम्॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्या! या हिरण्यवर्त्तनिर्घोरा वृत्रघ्नी सरस्वती नः सुखयति स्योत नोऽस्माकं सुष्टुतिं वष्टि॥७॥

भावार्थः-या विद्युल्लतेव सुशोभा विदुषी स्त्री गृहकृत्यप्रकाशिनी सन्तानविद्यां कामयते सैव सौभाग्यवती जायते॥७॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(हिरण्यवर्त्तनिः)** जिसमें विद्याव्यवहार का वर्त्ताव है वह **(घोरा)** दुष्टों को दुःख देने वाली **(वृत्रघ्नी)** मेघ को हनने वाली बिजुली के समान **(सरस्वती)** विज्ञान भरी हुई वाणी **(नः)** हम लोगों को सुखी करती **(स्या)** वह **(उत)** भी हमारी **(सुष्टुतिम्)** सुन्दर प्रशंसा की **(वष्टि)** कामना करती है॥७॥

भावार्थः-जो बिजुली की चमक दमक के समान सुन्दर शोभा वाली विदुषी स्त्री घर के कार्यों की प्रकाश करने वाली तथा सन्तानों की विद्या की कामना करती है, वही यहाँ सौभाग्यवती होती है॥७॥

पुनः सा वाक् कीदृशीत्याह॥

फिर वह वाणी कैसी है, इस विषय को कहते हैं॥

यस्या अनन्तो अह्रुतस्त्वेषश्चरिष्णुरर्णवः। अमश्चरति रोरुवत्॥८॥

यस्याः। अनन्तः। अह्रुतः। त्वेषः। चरिष्णुः। अर्णवः। अमः। चरति। रोरुवत्॥८॥

पदार्थः-**(यस्याः)** सरस्वत्या वाचः **(अनन्तः)** निःसीमः **(अह्रुतः)** अकुटिलः सरलः **(त्वेषः)** प्रकाशः **(चरिष्णुः)** गन्ता **(अर्णवः)** समुद्र इवाऽऽकाशः **(अमः)** यो गच्छति **(चरति)** प्राप्नोति **(रोरुवत्)** भृशं रौति शब्दं करोति॥८॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यस्या वाचोऽह्रुतस्त्वेषश्चरिष्णुरनन्तोऽर्णवो रोरुवदमश्चरति तां यूयं विजानीत॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यावानाकाशस्तावानेव शब्दोऽनन्तो यथा समुद्रे जलं पूर्णमस्ति तथैवाऽऽकाशे शब्दोऽस्तीति विजानीत॥८॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यस्याः)** जिस वाणी का **(अह्रुतः)** अकुटिल सरल **(त्वेषः)** प्रकाश वा **(चरिष्णुः)** जाने वाले **(अनन्तः)** निःसीम **(अर्णवः)** समुद्र के तुल्य आकाश **(रोरुवत्)** निरन्तर शब्द करता वा **(अमः)** फैलने वाला **(चरति)** प्राप्त होता है, उसको तुम जानो॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जितना आकाश है, उतना ही शब्द अनन्त है, जैसे समुद्र में जल पूरा है, वैसे आकाश में शब्द है, यह जानो॥८॥

पुनः सा कीदृशीत्याह॥

फिर वह कैसी है, इस विषय को कहते हैं॥

स नो विश्वा अति द्विषः स्वसृरन्या ऋतावरी। अतन्नहेव सूर्यः॥९॥

सा। नः। विश्वाः। अति। द्विषः। स्वसृः। अन्याः। ऋतऽवरी। अतन्। अहाऽइव। सूर्यः॥९॥

पदार्थः-**(सा)** **(नः)** अस्माकम् **(विश्वाः)** सर्वान् **(अति)** **(द्विषः)** द्वेष्टॄन् **(स्वसृः)** स्वसेव वर्त्तमानाः **(अन्याः)** **(ऋतावरी)** उषाः **(अतन्)** व्याप्नुवन् **(अहेव)** दिनानीव **(सूर्य्यः)**॥९॥

अन्वयः-हे मनुष्याः! सा ऋतावरी नोऽस्माकं विश्वा द्विषोऽति क्रामयति सूर्य्योऽहेवाऽतन्नन्याः स्वसृः स्वसार इव संयनुक्ति॥९॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! या वाक् सम्यक् प्रयुक्ता सती सुखमन्यथोक्ता सती दुःखं च प्रयच्छति, ये सत्यवादिनः सन्ति त एव मिथ्या वक्तुं नेच्छन्ति यथा सूर्य्यः सर्वान् मूर्त्तान् द्रव्यान् प्रकाशयति तथैवेयं वाक् सर्वान् व्यवहारान् द्योतयति॥९॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(सा)** वह **(ऋतावरी)** उषा=प्रभातवेला **(नः)** हमारे **(विश्वाः)** समस्त **(द्विषः)** द्वेषी जनों को **(अति)** अतिक्रमण=उल्लङ्घन कराती है और **(सूर्यः)** सूर्य **(अहेव)** दिनों को जैसे **(अतन्)** व्याप्त होता, वैसे **(अन्याः)** और **(स्वसृः)** भगिनियों के समान वर्त्तमान गत विगत प्रभातवेलाओं का संयोग करती है॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो वाणी अच्छे प्रकार प्रयोग की हुई सुख और अन्यथा कही हुई दुःख प्रदान करती है। जो सत्यवादी हैं, वे ही मिथ्या कहना नहीं चाहते, जैसे सूर्य समस्त मूर्त्तिमान् द्रव्यों को प्रकाशित करता है, वैसे ही यह वाणी सब व्यवहारों को प्रकाशित करती है॥९॥

पुनः सा कीदृशीत्याह॥

फिर वह कैसी है, इस विषय को कहते हैं॥

उत नः प्रिया प्रियासु सप्तस्वसा सुजुष्टा। सरस्वती स्तोम्या भूत्॥१०॥ ३१॥

उतः। नः। प्रिया। प्रियासु। सप्तऽस्वसा। सुऽजुष्टा। सरस्वती। स्तोम्या। भूत्॥१०॥

पदार्थः-(**उत**) अपि (**नः**) अस्माकम् (**प्रिया**) कमनीया (**प्रियासु**) सुखप्रदासु स्त्रीषु वा (**सप्तस्वसा**) सप्त पञ्च प्राणा मनो बुद्धिश्च स्वसेव यस्याः सा (**सुजुष्टा**) सुष्ठु सेविता (**सरस्वती**) सरो बह्वन्तरिक्षं सम्बद्धं विद्यते यस्याः सा (**स्तोम्या**) स्तोतुमर्हा (**भूत्**) भवतु॥१०॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा नः सरस्वती प्रियासु प्रिया सप्तस्वसा सुजुष्टोत स्तोम्या भूत्तथा युष्माकमपि भवतु॥१०॥

भावार्थः-ये मनुष्याः सर्वतः शुद्धिकरीं सत्यां वाचं जानन्ति त एव प्रशंसनीया भवन्ति॥१०॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**नः**) हमारी (**सरस्वती**) वह सरस्वती जिसको बहुत अन्तरिक्ष का सम्बन्ध है तथा (**प्रियासु**) सुख देने वाली क्रिया वा स्त्रियों में (**प्रिया**) मनोहर (**सप्तस्वसा**) जिसके सात अर्थात् पांच प्राण, मन और बुद्धि बहिन के समान वर्त्तमान तथा (**सुजुष्टा**) अच्छे प्रकार सेवित की हुई (**उत**) और (**स्तोम्या**) स्तुति करने योग्य (**भूत्**) हो, वैसे तुम्हारी भी हो॥१०॥

भावार्थः-जो मनुष्य सब ओर से शुद्धि करने वाली सत्य वाणी को जानते हैं, वे ही प्रशंसा करने योग्य होते हैं॥१०॥

पुनः सा कीदृशी किं करोतीत्याह॥

फिर वह कैसी और क्या करती है, इस विषय को कहते हैं॥

आपप्रुषी पार्थिवान्युरु रजो अन्तरिक्षम्। सरस्वती निदस्पातु॥११॥

आऽपप्रुषी। पार्थिवानि। उरु। रजः। अन्तरिक्षम्। सरस्वती। निदः। पातु॥११॥

पदार्थः-(**आपप्रुषी**) समन्ताद् व्याप्ता (**पार्थिवानि**) पृथिव्यामन्तरिक्षे भवानि विदितानि वा (**उरु**) बहु (**रजः**) परमाण्वादीन् (**अन्तरिक्षम्**) आकाशम् (**सरस्वती**) विद्यासुशिक्षिता वाक् (**निदः**) निन्दकेभ्यः (**पातु**)॥११॥

अन्वयः-हे मनुष्या! पार्थिवान्युरु रजोऽन्तरिक्षमापप्रुषी सरस्वत्यस्मान् निदः पातु॥११॥

भावार्थः-हे मनुष्या! या वाणी सर्वत्राकाशे व्याप्ताऽस्ति तां विदित्वाऽनया कस्यापि निन्दामर्थाद् गुणेषु दोषारोपणं दोषेषु गुणारोपणं च कदाचिन्मा कुर्वन्तु॥११॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**पार्थिवानि**) अन्तरिक्ष में प्रसिद्ध हुए वा विदित हुए (**उरु**) बहुत (**रजः**) परमाणु आदि पदार्थों को तथा (**अन्तरिक्षम्**) आकाश को (**आपप्रुषी**) सब ओर से व्याप्त (**सरस्वती**) विद्या और उत्तम शिक्षायुक्त वाणी हम लोगों को (**निदः**) निन्दकों से (**पातु**) बचावे॥११॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो वाणी सर्वत्र आकाश में व्याप्त है, उसको जान के इससे किसी की भी निन्दा अर्थात् गुणों में दोषारोपण और दोषों में गुणोरोपण कभी न करो॥११॥

पुनः सा किं करोतीत्याह॥

फिर वह क्या करती है, इस विषय को कहते हैं॥

त्रिषधस्था सप्तधातुः पञ्च जाता वर्धयन्ती। वाजेवाजे हव्या भूत्॥१२॥

त्रिऽसधस्था। सप्तऽधातुः। पञ्च। जाता। वर्धयन्ती। वाजेऽवाजे। हव्या। भूत्॥१२॥

पदार्थः-(**त्रिषधस्था**) त्रिषु समानस्थानेषु या तिष्ठति सा (**सप्तधातुः**) सप्त प्राणादयो धारका यस्याः सा (**पञ्च**) पञ्चभ्यः प्राणेभ्यः (**जाता**) प्रसिद्धा (**वर्धयन्ती**) (**वाजेवाजे**) व्यवहारे स-ग्रामे स-ग्रामे वा (**हव्या**) उच्चारणीया (**भूत्**) भवति॥१२॥

अन्वयः-हे विद्वांसः! त्रिषधस्था सप्तधातुः पञ्च जाता वाजेवाजे हव्या वर्धयन्ती भूत्तां युक्त्या सम्प्रयुङ्ध्वम्॥१२॥

भावार्थः-यदि विद्वांसो वाग्योगं जानन्ति तर्हि किं किं वर्धयितुं न शक्नुवन्ति॥१२॥

पदार्थः-हे विद्वानो! (**त्रिषधस्था**) तीन समान स्थानों में स्थित (**सप्तधातुः**) सात प्राण आदि जिसकी धारण करने वाले (**पञ्च**) पांच प्राणों से (**जाता**) प्रसिद्ध (**वाजेवाजे**) प्रत्येक व्यवहार वा प्रत्येक स-ग्राम में (**हव्या**) उच्चारण करने योग्य (**वर्धयन्ती**) वृद्धि को प्राप्त कराती (**भूत्**) हो उसका युक्ति के साथ अच्छे प्रकार प्रयोग करो॥१२॥

भावार्थः-जो विद्वान् जन वाणी के योग को जानते हैं तो क्या-क्या बढ़ा नहीं सकते हैं॥१२॥

पुनः सा कीदृशीत्याह॥

फिर वह कैसी है, इस विषय को कहते हैं॥

प्र या महिम्ना महिनासु चेकिते द्युम्नेभिरन्या अपसामपस्तमा।
रथ इव बृहती विभ्वने कृतोपस्तुत्या चिकितुषा सरस्वती॥१३॥

प्र। या। महिम्ना। महिना। आसु। चेकिते। द्युम्नेभिः। अन्याः। अपसाम्। अपःऽतमा। रथःऽइव। बृहती। विऽभ्वने। कृता। उपऽस्तुत्या। चिकितुषा। सरस्वती॥१३॥

पदार्थः-(**प्र**) (**या**) (**महिम्ना**) महत्त्वेन (**महिना**) महती (**आसु**) (**चेकिते**) विज्ञापयतु (**द्युम्नेभिः**) प्रकाशनैर्यशोभिः (**अन्याः**) प्रतिप्राणिनं भिन्ना वाचः (**अपसाम्**) कर्मकर्तॄणाम् (**अपस्तमा**) अतिशयेन कर्मकर्त्री (**रथइव**) रमणीयाकाश इव (**बृहती**) बृंहती (**विभ्वने**) विभुत्वाय (**कृता**) जगदीश्वरेण निर्मिता (**उपस्तुत्या**) ययोपस्तौति तया (**चिकितुषा**) विज्ञापयित्र्या (**सरस्वती**) सरो विज्ञानं विद्यते यस्यां सा॥१३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! या महिम्ना महिनाऽपसामपस्तमा रथइव बृहती विभ्वने चिकितुषोपस्तुत्या कृता निष्पादिता सरस्वती द्युम्नेभिरन्या आसु प्र चेकिते तां यथावद्विज्ञाय सत्यां वाचं सम्प्रयुङ्ध्वम्॥१३॥

भावार्थः-हे मनुष्याः! सुविद्यासुशिक्षासत्सङ्गसत्यभाषणयोगाभ्यासादिभिर्निष्पन्ना वागियं व्याप्ता वा समर्था वर्त्तते तां यूयं विजानीत॥१३॥

पदार्थ:-हे मनुष्या! **(या)** जो **(महिम्ना)** बड़प्पन से **(महिना)** बड़ी **(अपसाम्)** कर्म करने वालों में **(अपस्तमा)** अतीव कर्म करने वाली और **(रथइव)** रमणीय आकाश के समान **(बृहती)** बढ़ती हुई **(विभ्वने)** विभुत्व के लिये **(चिकितुषा)** समझाने वाली **(उपस्तुत्या)** जिससे कि समीप स्तुति करता उससे **(कृता)** जगदीश्वर ने उत्पन्न की हुई **(सरस्वती)** जिसमें विज्ञान वर्त्तमान वह वाणी **(द्युम्नेभि:)** प्रकाश जो यशरूप हैं उनसे **(अन्या:)** प्रत्येक प्राणी के प्रति भिन्न-भिन्न है अर्थात् नाना प्रकार वाणी हैं [=नाना की वाणियाँ हैं] **(आसु)** उनमें जो **(प्र, चेकिते)** विज्ञान कराती उसको यथावत् जान के सत्य वाणी का अच्छे प्रकार प्रयोग करो॥१३॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! विद्या, सुशिक्षा, सत्सङ्ग, सत्यभाषण और योगाभ्यासादिकों से निष्पन्न हुई वाणी यह व्याप्त वा समर्थ है, उसको तुम जानो॥१३॥

पुन: सा कीदृशीत्याह॥

फिर वह कैसी है, इस विषय को कहते हैं॥

सर॑स्वत्य॒भि नो॑ नेषि॒ वस्यो॒ माप॑ स्फरी॒: पय॑सा॒ मा न॒ आ ध॑क्।

जु॒षस्व॑ न: स॒ख्या वे॒श्या॑ च॒ मा त्वत्क्षेत्रा॒ण्यर॑णानि॒ गन्म॥१४॥३२॥८॥४॥५॥

सर॑स्वति। अ॒भि। न॒:। ने॒षि॒। वस्य॑:। मा। अप॑। स्फ॒री॒:। पय॑सा। मा। न॒:। आ। ध॒क्। जु॒षस्व॑। न॒:। स॒ख्या। वे॒श्या॑। च॒। मा। त्वत्। क्षेत्रा॑णि। अर॑णानि। ग॒न्म॒॥१४॥

पदार्थ:-**(सरस्वती)** बहुविद्यायुक्ते **(अभि)** **(न:)** अस्माकम् **(नेषि)** नयसि **(वस्य:)** अतिशयेन वसीय: **(मा)** **(अप)** **(स्फरी:)** अवृद्धं मा कुर्या: **(पयसा)** रसविशेषेण **(मा)** **(न:)** अस्मान् **(आ)** समन्तात् **(धक्)** दहेत् **(जुषस्व)** सेवस्व **(न:)** अस्मान् **(सख्या)** मित्रत्वेन **(वेश्या)** उपवेष्टुं योग्येन **(च)** **(मा)** **(त्वत्)** **(क्षेत्राणि)** क्षियन्ति निवसन्ति येषु तानि **(अरणानि)** अरमणीयानि **(गन्म)** प्राप्नुयाम॥१४॥

अन्वय:-हे सरस्वति विदुषि स्त्रि! या त्वं नो वस्योऽभि नेषि सा त्वं सुशिक्षितया वाचा विरहानस्मान् माप स्फरी: पयसा वियोज्य नोऽस्मान् माऽऽधक् वेश्या सख्या च नोऽस्माञ्जुषस्व त्वदरणानि क्षेत्राणि वयं मा गन्म तस्मात्त्वं पूजनीयासि॥१४॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! या विदुष्य: स्त्रियो यथा विद्यासुशिक्षाभ्यां युक्ता वाणी सर्वत्र संरक्ष्य सर्वथा वर्धयति या वा सत्यभाषणादिनाऽकल्याणं न प्रापयति तद्वद्वर्त्तमाना: सन्ति ता अस्माञ्छोकादिभ्यो वियोज्य मित्रत्वेन संसेवन्ते सर्वदैव चाऽऽनन्दयन्ति॥१४॥

अत्र वाग्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति श्रीमत् परमहंसपरिव्राजकाचार्याणां परमविदुषां श्रीमद्विरजानन्दसरस्वतीस्वामिनां शिष्येण श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीस्वामिना विरचिते सुप्रमाणयुक्ते संस्कृतार्यभाषाविभूषित ऋग्वेदभाष्ये चतुर्थाऽष्टकेऽष्टमोऽध्यायो द्वात्रिंशो वर्गश्चतुर्थोऽष्टकश्च षष्ठे मण्डले पञ्चमोऽनुवाक एकषष्टितमं सूक्तं च समाप्तम्॥

पदार्थ:-हे **(सरस्वति)** बहुत विद्या से युक्त विदुषी स्त्री! जो तू **(नः)** हमारे **(वस्यः)** अतीव ओढ़ने योग्य वस्त्र आदि को **(अभि, नेषि)** सन्मुख लाती है सो तू सुशिक्षित वाणी से हीन हम लोगों को **(मा)** मत **(अप, स्फरीः)** अवृद्ध करे किन्तु वृद्धियुक्त करे और **(पयसा)** विशेष रस से अलग कर **(नः)** हम लोगों को **(मा, आ, धक्)** मत दाह दे और **(वेश्या)** समीप प्रवेश करने योग्य **(सख्या)** मित्रपन से **(च)** भी **(नः)** हम लोगों को **(जुषस्व)** सेवे तथा **(त्वत्)** तेरे **(अरणानि)** अरमणीय **(क्षेत्राणि)** निवासस्थानों को हम लोग **(मा, गन्म)** मत प्राप्त हों, इससे तू सत्कार करने योग्य है॥१४॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जो विदुषी स्त्रियाँ जैसे विद्या और उत्तम शिक्षा से युक्त वाणी सर्वत्र अच्छे प्रकार रक्षाकर सर्वथा वृद्धि देती है वा जो सत्यभाषण आदि से दु:ख को नहीं प्राप्त कराती उसके तुल्य वर्त्तमान हैं, वे हम लोगों को शोकादिकों से अलग कर मित्रता से अच्छे प्रकार सेवन करती और सर्वदैव आनन्दित करती हैं॥१४॥

इस सूक्त में वाणी के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य परमविद्वान् श्रीमान् विरजानन्द सरस्वती स्वामीजी के शिष्य श्रीमान् दयानन्द सरस्वती स्वामी से विरचित सुप्रमाणयुक्त तथा संस्कृत और आर्यभाषा से विभूषित ऋग्वेदभाष्य में चतुर्थ अष्टक में अष्टम अध्याय और बत्तीसवाँ वर्ग और चतुर्थ अष्टक भी तथा छठे मण्डल में पञ्चम अनुवाक और एकसठवां सूक्त भी समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथर्ग्वेदे पञ्चमाऽष्टकारम्भः॥

अब ऋग्वेद में पञ्चमाष्टक का आरम्भ है॥

ओ३म् विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद्भ॒द्रं तन्न॒ आ सु॑व॥ ऋ०५.८२.५॥

अथैकादशर्चस्य द्विषष्टितमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। अश्विनौ देवते। १, २ भुरिक्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ३ विराट् त्रिष्टुप्। ४, ६, ७, ८, १० निचृत्त्रिष्टुप्। ५, ९, ११ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ विद्युदन्तरिक्षे कीदृशे स्त इत्याह॥

अब बिजुली और अन्तरिक्ष कैसे हैं, इस विषय को कहते हैं॥

स्तु॒षे नरा॑ दि॒वो अ॒स्य प्र॒सन्ता॒श्विना॑ हुवे॒ जर॑माणो अ॒र्कैः।
या स॒द्य उ॒स्रा व्यु॒षि॒ ज्मो अन्ता॒न् युयू॑षतः पर्यु॒रू वरां॑सि॥१॥

स्तु॒षे। नरा॑। दि॒वः। अ॒स्य। प्र॒ऽसन्ता॑। अ॒श्विना॑। हु॒वे। जर॑माणः। अ॒र्कैः। या। स॒द्यः। उ॒स्रा। वि॒ऽउषि॑। ज्मः। अन्ता॑न्। युयू॑षतः। परि॑। उ॒रु। वरां॑सि॥ १॥

पदार्थः-(**स्तुषे**) स्तौमि (**नरा**) नरौ नायकौ (**दिवः**) प्रकाशस्य (**अस्य**) (**प्रसन्ता**) विभाजकौ (**अश्विना**) व्यापनशीले द्यावान्तरिक्षे (**हुवे**) गृह्णामि (**जरमाणः**) स्तुवन् (**अर्कैः**) मन्त्रैः (**या**) यौ (**सद्यः**) (**उस्रा**) रश्मयो विद्यन्ते ययोस्तौ (**व्युषि**) विशेषेण दाहे (**ज्मः**) पृथिव्याः। **ज्म इति पृथिवीनाम।** (निघं०१.१) (**अन्तान्**) समीपस्थान् (**युयूषतः**) संविभाजयतः (**परि**) सर्वतः (**उरु**) बहु (**वरांसि**) उत्तमानि वस्तूनि॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! जरमाणोऽहमर्कैर्या व्युष्युस्रा प्रसन्ता नराश्विनाऽस्य दिवो ज्मोऽन्तानुरु वरांसि सद्यः परि युयूषतस्तौ स्तुषे हुवे तथैतौ स्तुत्वा यूयमपि गृह्णीत॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्या! येऽन्तरिक्षविद्युतौ सर्वाधिकरणे सर्वपदार्थान्तःस्थे वर्त्तेते तयोर्मध्ये विद्युद्विभाजिकाऽन्तरिक्षं चाधारो वर्त्तते तयोर्गुणान् सर्वे जानन्तु॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**जरमाणः**) स्तुति करता हुआ मैं (**अर्कैः**) मन्त्रों से (**या**) जो (**व्युषि**) विशेष दाह के निमित्त (**उस्रा**) जिनकी किरणें विद्यमान वे (**प्रसन्ता**) विभाग करने वाला (**नरा**) नायक (**अश्विना**) व्यापनशील बिजुली और अन्तरिक्ष (**अस्य**) इस (**दिवः**) प्रकाश के तथा (**ज्मः**) पृथिवी के (**अन्तान्**) समीपस्थ पदार्थों को (**उरु**) बहुत (**वरांसि**) उत्तम वस्तुओं को (**सद्यः**) शीघ्र (**परि, युयूषतः**) अच्छे प्रकार अलग-अलग करते उनकी (**स्तुषे**) स्तुति करता हूँ तथा (**हुवे**) ग्रहण करता हूं, वैसे इनकी स्तुति कर तुम भी ग्रहण करो॥१॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जो अन्तरिक्ष और विद्युत् सर्वाधिकरण और सब पदार्थों के बीच ठहरे हुए वर्त्तमान हैं, उनके बीच बिजुली विभाग करने वाली और अन्तरिक्ष आधार वर्त्तमान है, उनके गुणों को सब जानो॥१॥

पुनस्तौ कीदृशावित्याह॥

फिर वे दोनों कैसे हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ता यज्ञमा शुचिभिश्चक्रमाणा रथस्य भानुं रुरुचू रजोभिः।
पुरू वरांस्यमिता मिमानापो धन्वान्यति याथो अज्रान्॥२॥

ता। यज्ञम्। आ। शुचिऽभिः। चक्रमाणा। रथस्य। भानुम्। रुरुचुः। रजःऽभिः। पुरु। वरांसि। अमिता। मिमाना। अपः। धन्वानि। अति। याथः। अज्रान्॥२॥

पदार्थः-(**ता**) तौ (**यज्ञम्**) सर्वं सङ्गतं व्यवहारम् (**आ**) समन्तात् (**शुचिभिः**) पवित्रैर्गुणैः (**चक्रमाणा**) क्रमयितारौ (**रथस्य**) रमणीयस्य जगतः (**भानुम्**) प्रकाशकम् (**रुरुचुः**) रोचन्ते (**रजोभिः**) परमाणुभिर्लोकैर्वा सह (**पुरु**) पुरूणि बहूनि (**वरांसि**) वरणीयानि वस्तूनि (**अमिता**) अमितान्यपरिमितानि (**मिमाना**) निर्मातारौ (**अपः**) जलानि (**धन्वानि**) अन्तरिक्षस्थानि (**अति**) (**याथः**) प्राप्नुथः (**अज्रान्**) प्रक्षिप्तान्॥२॥

अन्वयः-हे अध्यापकोपदेशकौ! युवां यौ शुचिभिर्यज्ञमा चक्रमाणा रथस्य भानुं प्रदीपकौ रजोभिः पुर्वमिता वरांसि मिमानाऽपो धन्वान्यज्रान् याथो याभ्यां सर्वाणि रुरुचुस्ताऽति याथः॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यदि यूयं वायुविद्युतौ यथावद्विजानीत तर्ह्यमितमानन्दं प्राप्नुयात॥२॥

पदार्थ:-हे अध्यापक और उपदेशकौ! तुम जो (**शुचिभिः**) पवित्र गुणों से (**यज्ञम्**) सर्वसङ्गत व्यवहार को (**आ, चक्रमाणा**) आक्रमण करते हुए (**रथस्य**) रमणीय जगत् के (**भानुम्**) प्रकाश करने वाले को प्रकाश करने वाले वा (**रजोभिः**) परमाणु वा लोकों के साथ (**पुरु**) बहुत (**अमिता**) अपरिमित (**वरांसि**) स्वीकार करने योग्य पदार्थों को (**मिमाना**) निर्माण करने वाले वा (**अपः**) जल जो (**धन्वानि**) अन्तरिक्षस्थ हैं उनको और (**अज्रान्**) प्रक्षिप्त पदार्थों को (**याथः**) प्राप्त होते और जिनसे सब (**रुरुचुः**) रुचते हैं (**ताः**) उनको (**अति**) अत्यन्त प्राप्त होते हो॥२॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! यदि तुम वायु और बिजुली को यथावत् जानो तो अमित आनन्द को प्राप्त होओ॥२॥

पुनस्तौ कीदृशौ स्त इत्याह॥

फिर वे कैसे हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ता ह त्यद्वर्तिर्यदरध्रमुग्रेत्था धियं ऊहथुः शश्वदश्वैः।
मनोजवेभिरिषिरैः शयध्यै परि व्यथिर्दाशुषो मर्त्यस्य॥३॥

ता। ह। त्यत्। वर्तिः। यत्। अरध्रम्। उग्रा। इत्था। धियः। ऊहथुः। शश्वत्। अश्वैः। मनःऽजवेभिः। इषिरैः। शयध्यै। परि। व्यथिः। दाशुषः। मर्त्यस्य॥ ३॥

पदार्थः-(**ता**) तौ (**ह**) किल (**त्यत्**) (**वर्त्तिः**) मार्गम् (**यत्**) यौ (**अरध्रम्**) असमृद्धव्यवहारम् (**उग्रा**) तेजस्विनौ (**इत्था**) अनेन हेतुना (**धियः**) प्रज्ञाः कर्माणि वा (**ऊहथुः**) वहथः। अत्र पुरुषव्यत्ययः (**शश्वत्**) निरन्तरम् (**अश्वैः**) महद्भिर्वेगादिगुणैः (**मनोजवेभिः**) मनोवद्वेगवद्भिः (**इषिरैः**) प्राप्तैः (**शयध्यै**) शयितुम् (**परि**) सर्वतः (**व्यथिः**) व्यथाम् (**दाशुषः**) दानशीलस्य (**मर्त्यस्य**) मनुष्यस्य॥ ३॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यदुग्रा वायुविद्युता अश्वैरिषिरैर्मनोजवेभिर्दाशुषो मर्त्यस्य त्यद्वर्त्तिरध्रं धियश्च शश्वदूहथुः शयध्यै व्यथिर्ह पर्यूहथुस्तेत्या वर्त्तमानौ विज्ञान यूयं सम्प्रयुङ्ध्वम्॥ ३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यदा यूयं वायुविद्युद्गुणान् विज्ञास्यथ तदैव पूर्णमैश्वर्यं प्राप्स्यथ॥ ३॥

पदार्थः-हे विद्वानो! (**यत्**) जो (**उग्रा**) तेजस्वी वायु और बिजुली (**अश्वैः**) महान् वेगादि गुणों से वा (**इषिरैः**) प्राप्त (**मनोजवेभिः**) मनोवद्वेगवानों से (**दाशुषः**) दानशील (**मर्त्यस्य**) मनुष्य के (**त्यत्**) उस (**वर्तिः**) मार्ग को तथा (**अरध्रम्**) असमृद्ध व्यवहार और (**धियः**) बुद्धि वा कर्मों को (**शश्वत्**) निरन्तर (**ऊहथुः**) चलाते हैं वा (**शयध्यै**) सोने को (**व्यथिः**) व्यथा को (**ह**) निश्चय से (**परि**) पहुंचाते हैं (**ता**) उनको (**इत्था**) इस प्रकार के वर्त्तमान जानकर तुम अच्छे प्रकार प्रयुक्त करो अर्थात् कलायन्त्रों में जोड़ो॥ ३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जब तुम वायु और बिजुली के गुणों को जानोगे, तभी पूर्ण ऐश्वर्य को पाओगे॥ ३॥

पुनस्तौ कीदृशावित्याह॥

फिर वे कैसे हैं, इस विषय को कहते हैं॥

ता नव्यसो जरमाणस्य मन्मोप भूषतो युयुजानसप्ती।
शुभं पृक्षमिषमूर्जं वहन्ता होता यक्षत्प्रत्नो अध्रुग्युवाना॥ ४॥

ता। नव्यसः। जरमाणस्य। मन्म। उप। भूषतः। युयुजान सप्ती इति युयुजानऽसप्ती। शुभम्। पृक्षम्। इषम्। ऊर्जम्। वहन्ता। होता। यक्षत्। प्रत्नः। अध्रुक्। युवाना॥ ४॥

पदार्थः-(**ता**) तौ (**नव्यसः**) अतिशयेन नवीनस्य (**जरमाणस्य**) प्रशंसकस्य (**मन्म**) विज्ञानम् (**उप**) (**भूषतः**) अलं कुरुतः (**युयुजानसप्ती**) युयुजानौ सप्ती वेगाकर्षणौ ययोस्तौ (**शुभम्**) उदकम्। **शुभमित्युदकनाम।** (निघं०१.१२) (**पृक्षम्**) अन्नम् (**इषम्**) इच्छाम् (**ऊर्जम्**) पराक्रमम् (**वहन्ता**) प्रापयन्तौ (**होता**) आदाता (**यक्षत्**) सङ्गच्छेत् (**प्रत्नः**) प्रागधीतविद्यः (**अध्रुक्**) यः कञ्चन न द्रोग्धि (**युवाना**) संयोजकौ वायुविद्युतौ॥ ४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यौ युयुजानसप्ती युवाना नव्यसो जरमाणस्य मन्मोप भूषतो यौ शुभं पृक्षमिषमूर्जं वहन्ताऽध्रुक् प्रत्नो होता यक्षत् ता यूयमपि सङ्गच्छध्वम्॥ ४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यौ वायुविद्युतौ विज्ञानविषयावश्व इव सद्यो गन्तारौ सर्वोत्तमपदार्थप्रापकौ वर्त्तेते ताभ्यामिष्टानि कार्याणि साध्नुत॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(युयुजानसप्ती)** वेग वा आकर्षणयुक्त होने वाले हैं, वे **(युवाना)** संयुक्त होने वाले वायु बिजुली **(नव्यसः)** अतीव नवीन **(जरमाणस्य)** प्रशंसा करने वाले के **(मन्म)** विज्ञान को **(उप, भूषतः)** पूर्ण करते हैं वा जो **(शुभम्)** उदक **(पृक्षम्)** अन्न **(इषम्)** इच्छा और **(ऊर्जम्)** पराक्रम को **(वहन्ता)** पहुंचाने वालों को **(अध्रुक्)** किसी से न द्रोह करने वाला **(प्रत्नः)** जिसने पहिले विद्या पढ़ी वह **(होता)** ग्रहण करने वाला पुरुष **(यक्षत्)** प्राप्त हो **(ता)** उनको तुम भी प्राप्त होओ॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो वायु और बिजुली विज्ञान के विषय, घोड़े के समान शीघ्र जाने वाले और सब उत्तम उत्तम पदार्थों की प्राप्ति कराने वाले हैं, उनसे चाहे हुए कार्य्यों को सिद्ध करो॥४॥

पुनस्तौ कीदृशावित्याह॥

फिर वे कैसे हैं इस विषय को कहते हैं॥

ता वल्गू दस्रा पुरुशाकतमा प्रत्ना नव्यसा वचसा विवासे।
या शंसते स्तुवते शंभविष्ठा बभूवतुर्गृणते चित्रराती॥५॥ १॥

ता। वल्गू इति। दस्रा। पुरुशाकऽतमा। प्रत्ना। नव्यसा। वचसा। आ। विवासे। या। शंसते। स्तुवते। शम्ऽभविष्ठा। बभूवतुः। गृणते। चित्रराती इति चित्रऽराती॥५॥

पदार्थः-**(ता)** तौ **(वल्गू)** अत्युत्तमौ **(दस्रा)** दुःखोपक्षयितारौ **(पुरुशाकतमा)** अतिशयेन बहुशक्तिमन्तौ **(प्रत्ना)** प्राचीनौ **(नव्यसा)** अतिशयेन नवीनौ **(वचसा)** परिभाषणीयौ **(आ)** **(विवासे)** सेवे **(या)** यौ **(शंसते)** प्रशंसकाय **(स्तुवते)** प्रशंसिताय। अत्र **कृद्बहुलमि**ति कर्मणि कृत् **(शम्भविष्ठा)** अतिशयेन सुखंभावुकौ **(बभूवतुः)** भवतः **(गृणते)** सत्योपदेशकाय **(चित्रराती)** चित्राऽद्भुता रातिर्दानं याभ्यां तौ॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथाहं या वल्गू दस्रा प्रत्ना नव्यसा वचसा पुरुशाकतमा चित्रराती शंसते स्तुवते गृणते शम्भविष्ठा बभूवतुस्ताऽऽविवासे तथैतो यूयमपि सेवध्वम्॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यौ वायुविद्युतौ कारणरूपेण सनतानौ कार्यरूपेण नूतनौ बहुशक्तिमन्तौ वेगादिगुणयुक्तौ वायुविद्युतौ कल्याणकारिणौ वर्त्तेत तौ यथावद्विजानीत॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे मैं **(या)** जो **(वल्गू)** अत्युत्तम **(दस्रा)** दुःख को नष्ट करने वाले **(प्रत्ना)** प्राचीन **(नव्यसा)** अत्यन्त नवीन **(वचसा)** परिभाषण करने योग्य **(पुरुशाकतमा)** अतीव सामर्थ्यवाले **(चित्रराती)** जिनसे अद्भुत दान होता वे **(शंसते)** प्रशंसा करने वाले **(स्तुवते)** वा प्रशंसा पाये हुए वा **(गृणते)** सत्य उपदेश करने वाले के लिये **(शम्भविष्ठा)** अतीव सुख की भावना कराने वाले **(बभूवतुः)** होते हैं **(ता)** उनकी **(आ, विवासे)** सेवा करता हूं, वैसे उनकी तुमभी सेवा करो॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो वायु और बिजुली कारणरूप से सनातन और कार्यरूप से नूतन, बहुत शक्तिमान्, वेगादि गुणयुक्त, कल्याणकारी वर्त्तमान हैं, उनको यथावत् जानो॥५॥

पुनस्ताभ्यां किं सिध्यतीत्याह॥

फिर उनसे क्या सिद्ध होता है, इस विषय को कहते हैं॥

ता भुज्युं विभिरद्भ्यः समुद्रात्तुग्रस्य सूनुमूहथू रजोभिः।
अरेणुभिर्योजनेभिर्भुजन्ता पतत्रिभिरर्णसो निरुपस्थात्॥६॥

ता। भुज्युम्। विऽभिः। अत्ऽभ्यः। समुद्रात्। तुग्रस्य। सूनुम्। ऊहथुः। रजःऽभिः। अरेणुऽभिः। योजनेभिः। भुजन्ता। पतत्रिऽभिः। अर्णसः। निः। उपऽस्थात्॥६॥

पदार्थः-(**ता**) तौ (**भुज्युम्**) भोक्तुं योग्यमानन्दम् (**विभिः**) पक्षिभिरिव (**अद्भ्यः**) उदकेभ्यः (**समुद्रात्**) सागरादन्तरिक्षाद्वा (**तुग्रस्य**) बलिष्ठस्य (**सूनुम्**) अपत्यमिव वर्त्तमानम् (**ऊहथुः**) प्रापयतः। अत्र पुरुषव्यत्ययः (**रजोभिः**) ऐश्वर्यप्रदैर्मार्गैः (**अरेणुभिः**) अविद्यमाना रेणवो वालुका येषु तैः (**योजनेभिः**) अनेकैर्योजनैर्युक्तैः (**भुजन्ता**) पालकौ (**पतत्रिभिः**) गमनशीलैः (**अर्णसः**) उदकस्य (**निः**) नितराम् (**उपस्थात्**) यः समीपे तिष्ठति तस्मात्॥६॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यौ विद्युत्पवनौ विभिरिवाद्भ्यः समुद्रादर्णस उपस्थात् पतत्रिभिरिवारेणुभिर्योजनेभी रजोभिस्तुग्रस्य सूनुं निरूहथुर्भुजन्ता भुज्युं पालयतस्तौ यूयं विजानीत॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यौ विद्युत्पवनौ विमानादीनि यानान्यन्तरिक्षे पक्षिवद्गमयितारौ वेगेन वहतस्तावुपस्थाप्याभीष्टानि सुखानि प्राप्नुवन्तु॥६॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जो बिजुली और वायु (**विभिः**) पक्षियों के समान (**अद्भ्यः**) जलों वा (**समुद्रात्**) सागर वा अन्तरिक्ष वा (**अर्णसः**) जल के (**उपस्थात्**) समीप स्थित होने वाले से (**पतत्रिभिः**) गमनशीलों के समान (**अरेणुभिः**) रज जिनमें नहीं उन (**योजनेभिः**) अनेक योजनों से युक्त (**रजोभिः**) ऐश्वर्यप्रद मार्गों से (**तुग्रस्य**) बलिष्ठ (**सूनुम्**) सन्तान के समान वर्त्तमान को (**नि, ऊहथुः**) निरन्तर पहुंचाते और (**भुजन्ता**) पालना करने वाले (**भुज्युम्**) भागेने योग्य आनन्द की पालना करते हैं (**ता**) उनको तुम जानो॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो बिजुली और वायु विमान आदि यानों को अन्तरिक्ष में पक्षियों के समान चलाने वाले वेग से पहुंचाते हैं उनको समीपस्थ कर अभीष्ट सुखों को प्राप्त होओ॥६॥

पुनस्ताभ्यां किं भवतीत्याह॥

फिर उनसे क्या होता है, इस विषय को

वि जयुषा रथ्या यातमद्रिं श्रुतं हवं वृषणा वध्रिमत्याः।

दशस्यन्ता शयवे पिप्यथुर्गामिति च्यवाना सुमतिं भुरण्यू॥७॥

वि। जयुषा। रथ्या। यातम्। अद्रिम्। श्रुतम्। हवम्। वृषणा। वध्रिऽमत्याः। दशस्यन्ता। शयवे। पिप्यथुः। गाम्। इति। च्यवाना। सुऽमतिम्। भुरण्यू इति॥७॥

पदार्थः-(**वि**) (**जयुषा**) जयशीलौ (**रथ्या**) रथाय हितौ (**यातम्**) यातः। अत्र व्यत्ययः (**अद्रिम्**) मेघम् (**श्रुतम्**) अशृणुतम् (**हवम्**) विद्याविषयं शब्दम् (**वृषणा**) वर्षयितारौ (**वध्रिमत्याः**) बहवो वध्रयो वर्धनानि विद्यन्ते यस्यां तस्या भूमेरन्तरिक्षस्य वा (**दशस्यन्ता**) बलयन्तौ (**शयवे**) शयनाय (**पिप्यथुः**) वर्धयतः (**गाम्**) वाचम् (**इति**) अनेन प्रकारेण (**च्यवाना**) सद्यो गन्तारौ (**सुमतिम्**) शोभनां प्रज्ञाम् (**भुरण्यू**) पोषयितारौ धारकौ वा॥७॥

अन्वयः-हे अध्यापकोपदेशकौ! वध्रिमत्या भूमेर्मध्ये जयुषा रथ्या वृषणा दशस्यन्ताऽद्रिं वि यातं सुमतिं च्यवाना भुरण्यू गामिति शयवे पिप्यथुस्तयोर्हवं युवां श्रुतम्॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यौ विमानादिगमयितारौ स-ामे जयकारिणौ प्रज्ञाबलप्रदौ वृष्टिकरौ शयनजागरणवाग्घेतू वर्त्तेते तौ बुद्ध्वा कार्यसिद्धये सम्प्रयुङ्ध्वम्॥७॥

पदार्थः-हे अध्यापक और उपदेशक सज्जनो! (**वध्रिमत्याः**) जिसमें बहुत वर्धन विद्यमान उस भूमि वा अन्तरिक्ष के बीच (**जयुषा**) जयशील (**रथ्या**) रथ के लिये हितकारी (**वृषणा**) वर्षा तथा (**दशस्यन्ता**) बल कराने वाले (**अद्रिम्**) मेघ को (**वि, यातम्**) विशेषता से प्राप्त होते हैं और (**सुमतिम्**) सुन्दर मति को (**च्यवाना**) शीघ्र जाने वाले (**भुरण्यू**) पालना वा धारण कर्त्ता (**गाम्**) वाणी को (**इति**) इस प्रकार से (**शयवे**) सोने के लिये (**पिप्यथुः**) बढ़ाते हैं, उनके (**हवम्**) विद्या विषयक शब्द को तुम (**श्रुतम्**) सुनो॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो विमान आदि को चलाने वा स-ाम में जय कराने वा प्रज्ञा और बल के देने, वर्षा करने वाले तथा सोने जागने और वाणी के हेतु हैं, उनको जान कार्य्यसिद्धि के लिये अच्छे प्रकार प्रयोग करो॥७॥

पुनर्मनुष्याः किं धरेयुरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या धारण करें, इस विषय को कहते हैं॥

यद्रोदसी प्रदिवो अस्ति भूमा हेळो देवानामुत मर्त्यत्रा।

तदादित्या वसवो रुद्रियासो रक्षोयुजे तपुरघं दधात॥८॥

यत्। रोदसी इति। प्रऽदिवः। अस्ति। भूम। हेळः। देवानाम्। उत। मर्त्यऽत्रा। तत्। आदित्याः। वसवः। रुद्रियासः। रक्षःऽयुजे। तपुः। अघम्। दधात॥८॥

पदार्थः-(**यत्**) यः (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**प्रदिवः**) प्रकृष्टप्रकाशस्य (**अस्ति**) (**भूमा**) व्यापकः (**हेळः**) अनादरः (**देवानाम्**) विदुषाम् (**उत**) (**मर्त्यत्रा**) मर्त्येषु मनुष्येषु (**तत्**) (**आदित्याः**) कालावयवाः (**वसवः**) पृथिव्यादयः (**रुद्रियासः**) प्राणा जीवाश्च (**रक्षोयुजे**) यो रक्षांसि दुष्टान् मनुष्यान् युनक्ति तस्मै (**तपुः**) सन्तापम् (**अघम्**) अपराधम् (**दधात**) धरन्ति॥८॥

अन्वयः-हे वसवो रुद्रियास आदित्याः प्रथममध्यमोत्तमा विद्वांसो! यूयं यत्प्रदिवो देवानामुत मर्त्यत्रा भूमा हेळो रोदसी प्राप्तोऽस्ति यथा वसवो रुद्रियास आदित्यास्तद्दधात तथा रक्षोयुजे तपुरघं दधात॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यद्ब्रह्म सर्वत्र व्याप्तं सर्वधर्तृ सर्वनियन्तृ वर्त्तते तद्धृत्वा सन्ध्याय सुखयत यश्चैवं न करोति तदुपरि कठोरं दण्डं धत्त॥८॥

पदार्थः-हे (**वसवः**) पृथिवी आदि (**रुद्रियासः**) प्राण वा जीव वा (**आदित्याः**) काल के अवयवों के समान प्रथम मध्यम और उत्तम विद्वानो! तुम (**यत्**) जो (**प्रदिवः**) उत्तम प्रकाश के वा (**देवानाम्**) विद्वानों के सम्बन्ध में (**उत**) और (**मर्त्यत्रा**) मनुष्यों में (**भूमा**) व्यापक (**हेळः**) अनादर (**रोदसी**) द्यावापृथिवी को प्राप्त (**अस्ति**) है और जैसे उक्त प्रकार के विद्वान् जन (**तत्**) उसको (**दधात**) धारण करते हैं, वैसे (**रक्षोयुजे**) दुष्टों के युक्त करने वाले के लिये (**तपुः**) सन्ताप और (**अघम्**) अपराध को धारण करो॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो ब्रह्म सर्वत्र व्याप्त, सब को धारण करने वा सब का नियम करने वाला है, उसको धारण कर और अच्छे प्रकार ध्यान कर सुखी होओ और जो ऐसा नहीं करता है, उस पर कठोर दण्ड धरो॥८॥

पुनस्तः किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर वह क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

य ईं राजा॑नावृतुथा वि॒दध॒द्रज॑सो मि॒त्रो वरु॑णश्चि॒केत॑त्।
ग॒म्भी॒राय॒ रक्ष॑से हे॒तिम॑स्य॒ द्रोघा॑य चि॒द्वच॑स॒ आन॑वाय॥९॥

यः। ई॒म्। राजा॑नौ। ऋ॒तु॒ऽथा। वि॒ऽदध॑त्। रज॑सः। मि॒त्रः। वरु॑णः। चिके॑तत्। ग॒म्भी॒राय॑। रक्ष॑से। हे॒तिम्। अ॒स्य॒। द्रोघा॑य। चि॒त्। वच॑से। आन॑वाय॥९॥

पदार्थः-(**यः**) (**ईम्**) सर्वतः (**राजानौ**) प्रकाशमानौ सूर्य्याचन्द्रमसाविव सभासेनेशौ (**ऋतुथा**) ऋतुभ्यः (**विदधत्**) विधानं कुर्वन् (**रजसः**) लोकजातस्य (**मित्रः**) सुहृत् (**वरुणः**) शमादिगुणान्वितः (**चिकेतत्**) चिकेतति विजानाति (**गम्भीराय**) (**रक्षसे**) दुष्टाचरणाय (**हेतिम्**) वज्रम् (**अस्य**) (**द्रोघाय**) द्रोहाय (**चित्**) अपि (**वचसे**) वचनाय (**आनवाय**) समन्तान्नवीनाय॥९॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यो मित्रो वरुणो गम्भीरायाऽऽनवाय वचसे चिदपि द्रोघाय रक्षसेऽस्योपरि हेतिं रजस ऋतुथा राजानौ विदधत्सन्नीं चिकेतत्तं यूयमुत्साहयत॥९॥

भावार्थः-यथा सूर्याचन्द्रमसावृतून् विभज्यान्धकारं निवार्य्य जगत्सुखयतस्तथैव विद्यादिशुभगुणप्रचारं जगति प्रकल्प्य सत्याऽसत्ये विभज्याऽविद्याऽन्धकारं निवार्य विद्वांसः सर्वानानन्दयन्ति॥९॥

पदार्थः-हे विद्वानो! **(यः)** जो **(मित्रः)** मित्र वा **(वरुणः)** शमादिगुण युक्त जन **(गम्भीराय)** गम्भीर **(आनवाय)** सब ओर से नवीन **(वचसे)** वचन के लिये **(चित्)** और **(द्रोघाय)** द्रोह तथा **(रक्षसे)** दुष्ट आचरण वाले के लिये **(अस्य)** इसके ऊपर **(हेतिम्)** वज्र को **(रजसः)** और लोकजात के **(ऋतुथा)** ऋतुओं से **(राजानौ)** प्रकाशमान सूर्य और चन्द्रमा के तुल्य सभासेनापति को **(विदधत्)** विधान करता हुआ **(ईम्)** सब ओर से **(चिकेतत्)** जानता है, उसको तुम उत्साह देओ॥९॥

भावार्थः-जैसे सूर्य्य चन्द्रमा ऋतुओं को बांट और अन्धकार निवारण कर जगत् को सुखी करते हैं, वैसे ही विद्यादि शुभगुणों का प्रचार संसार में अच्छे प्रकार समर्थन, सत्य और असत्य का विभाग और अविद्यान्धकार का निवारण कर विद्वान् जन सबको आनन्दित करते हैं॥९॥

पुनः सभासेनेशौ जगदुपकाराय किं कुर्यातामित्याह॥

फिर सभा सेनापति जगत् के उपकार के लिये क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

अन्तरैश्चक्रैस्तनयाय वर्तिर्द्युमता यातं नृवता रथेन।
सनुत्येन त्यजसा मर्त्यस्य वनुष्यतामपि शीर्षा ववृक्तम्॥१०॥

अन्तरैः। चक्रैः। तनयाय। वर्तिः। द्युऽमता। आ। यातम्। नृऽवता। रथेन। सनुत्येन। त्यजसा। मर्त्यस्य। वनुष्यताम्। अपि। शीर्षा। ववृक्तम्॥१०॥

पदार्थः-**(अन्तरैः)** भिन्नैः **(चक्रैः)** लोकभ्रमणाय परिध्याख्यैः **(तनयाय)** पुत्राय **(वर्त्तिः)** मार्गम् **(द्युमता)** प्रकाशवता **(आ)** **(यातम्)** आगच्छतम् **(नृवता)** उत्तमा नरो विद्यन्ते यस्मिँस्तेन **(रथेन)** रमणीयेन विमानादियानेन **(सनुत्येन)** सम्प्रेरणीयेन **(त्यजसा)** त्यागेन **(मर्त्यस्य)** मनुष्यस्य **(वनुष्यताम्)** क्रुध्यतां बाधमानानां वा। **वनुष्यतीति क्रुध्यति कर्मा।** (निघं०२.१२) **(अपि)** **(शीर्षा)** शिरांसि **(ववृक्तम्)** छिनत्तम्॥१०॥

अन्वयः-यौ राजानावन्तरैश्चक्रैर्वर्तमानेन द्युमता नृवता रथेन सनुत्येन त्यजसा मर्त्यस्य तनयाय वर्त्तिरायातं मार्गं विधाय वनुष्यतां शीर्षाऽपि ववृक्तं तौ सर्वैः सत्कर्तव्यौ॥१०॥

भावार्थः-यदि सभासेनेशौ मनुष्यसन्तानानां ब्रह्मचर्यविद्याऽभ्यासादिप्रबन्धं कुर्यातां तर्हि सर्वे विद्वांसो भूत्वाऽनेकान्युत्तमानि कार्य्याणि साद्धुं दुष्टाञ्छत्रून्निवारयितुं च शक्नुवन्ति॥१०॥

पदार्थः-जो राजा लोग **(अन्तरैः)** भिन्न-भिन्न **(चक्रैः)** लोकों के घूमने के लिये परिधियों के वर्त्तमान **(द्युमता)** प्रकाशवान् **(नृवता)** जिसमें उत्तम नर विद्यमान उस **(रथेन)** रमणीय विमानादि यान वा **(सनुत्येन)** प्रेरणा करने योग्य के साथ वर्त्तमान **(त्यजसा)** त्याग के साथ **(मर्त्यस्य)** मनुष्य के **(तनयाय)** पुत्र के लिये **(वर्त्तिः)** मार्ग को **(आ, यातम्)** प्राप्त होवें और मार्ग का विधान कर **(वनुष्यताम्)** क्रोध

करने वा बाधा वालों के **(शीर्षा)** शिरों को **(अपि)** भी **(ववृक्तम्)** छिन्न-भिन्न करें, उनका सबको सत्कार करना चाहिये॥१०॥

भावार्थः-यदि सभासेनापति, मनुष्य-सन्तानों का ब्रह्मचर्य और विद्याभ्यास आदि का प्रबन्ध करें तो सब विद्वान् होकर अनेक उत्तम कार्य करने और दुष्टों तथा शत्रुओं के निवारने को समर्थ हों॥१०॥

पुनस्ते किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर वे क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

आ प॒र॒माभि॑रु॒त म॑ध्य॒माभि॑र्नि॒युद्भि॑र्यातमव॒माभि॑र॒र्वाक्।

दृ॒ळ्हस्य॑ चि॒द्गोम॑तो॒ वि व्र॒जस्य॒ दुरो॑ वर्तं गृण॒ते चि॑त्रराती॥११॥२॥

आ। प॒र॒माभिः॑। उ॒त। म॒ध्य॒माभिः॑। नि॒यु॒त्ऽभिः॑। या॒त॒म्। अ॒व॒माभिः॑। अ॒र्वाक्। दृ॒ळ्हस्य॑। चि॒त्। गोऽम॑तः। वि। व्र॒जस्य॑। दुरः॑। व॒र्त॒म्। गृ॒ण॒ते। चि॒त्र॒रा॒ती इति॑ चित्रऽराती॥११॥

पदार्थः-**(आ)** समन्तात् **(परमाभिः)** उत्कृष्टाभिः **(उत)** **(मध्यमाभिः)** मध्ये भवाभिः **(नियुद्भिः)** वायोर्गतिभिः **(यातम्)** गच्छतम् **(अवमाभिः)** निकृष्टाभिः **(अर्वाक्)** पश्चात् **(दृळहस्य)** **(चित्)** अपि **(गोमतः)** बह्व्यो गावः किरणा वा विद्यन्ते यस्मिंस्तस्य **(वि)** **(व्रजस्य)** मेघस्य **(दुरः)** द्वाराणि **(वर्त्तम्)** वर्त्तयतम् **(गृणते)** स्तावकाय **(चित्रराती)** चित्राऽद्भुता रातिर्दानं ययोस्तौ॥११॥

अन्वयः-हे चित्रराती सभासेनेशौ! युवामवमाभिर्मध्यमाभिरुत परमाभिर्नियुद्भिरा यातमर्वाग् दृळहस्य चिद् गोमतो व्रजस्य दुरो गृणते वि वर्त्तम्॥११॥

भावार्थः-हे राजप्रजाजना यथा सर्वे भूगोला वायुगतिभिस्सह गच्छन्त्यागच्छन्ति यथा च शिल्पिनो विमानेन मेघमण्डलोपरि व्रजन्ति तथैव यूयमप्यनुतिष्ठतेति॥११॥

अत्राश्विगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति द्विषष्टितमं सूक्तं द्वितीयो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(चित्रराती)** अद्भुत दान वाले सभासेनाधीशो! तुम **(अवमाभिः)** निकृष्ट **(मध्यमाभिः)** मध्यम **(उत)** और **(परमाभिः)** उत्तम **(नियुद्भिः)** वायु की गतियों से **(आ, यातम्)** आओ तथा **(अर्वाक्)** पीछे **(दृळहस्य)** अति पुष्ट के **(चित्)** भी **(गोमतः)** बहुत गौयें वा किरणें जिसमें विद्यमान उस **(वज्रस्य)** मेघ के **(दुरः)** द्वारों को **(गृणते)** स्तुति करने वाले के लिये **(वि, वर्त्तम्)** विशेषता से वर्त्ताओ॥११॥

भावार्थः-हे राज प्रजाजनो! जैसे सब भूगोल वायु की गतियों के साथ जाते-आते हैं और जैसे शिल्पीजन विमान से मेघमण्डल पर जाते हैं, वैसे ही तुम भी अनुष्ठान करो॥११॥

इस सूक्त में अश्वियों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह बासठवां सूक्त और दूसरा वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथैकादशर्चस्य त्रिषष्टितमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। अश्विनौ देवते। १ स्वराड्बृहती छन्दः। मध्यमः स्वरः। २, ४, ६, ७ पङ्क्तिः। ३, १० भुरिक्पङ्क्तिः। ८ स्वराट् पङ्क्तिः। ११ आसुरीपङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ५, ९ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ सभासेनेशौ किं प्राप्नुत इत्याह॥

अब एकादश ऋचावाले तिरसठवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में सभासेनापति किसको प्राप्त होते हैं, इस विषय को कहते हैं॥

क्व१ त्या वल्गू पुरुहूताद्य दूतो न स्तोमोऽविदन्नमस्वान्।
आ यो अर्वाङ्नासत्या ववर्त प्रेष्ठा ह्यसथो अस्य मन्मन्॥१॥

क्व। त्या। वल्गू इति। पुरुऽहूता। अद्य। दूतः। न। स्तोमः। अविदत्। नमस्वान्। आ। यः। अर्वाक्। नासत्या। ववर्त। प्रेष्ठा। हि। असथः। अस्य। मन्मन्॥१॥

पदार्थः-(**क्व**) (**त्या**) तौ (**वल्गू**) शोभनवाचौ। **वल्गु इति वाङ्नाम।** (निघं०१.११) (**पुरुहूता**) बहुभिः प्रशंसितौ (**अद्य**) इदानीम् (**दूतः**) समाचारप्रापकः (**न**) इव (**स्तोमः**) श्लाघनीयः (**अविदत्**) प्राप्नोति (**नमस्वान्**) बह्वन्नयुक्तः सत्कृतो वा (**आ**) (**यः**) (**अर्वाक्**) योऽधोऽञ्चति (**नासत्या**) सत्यस्वभावौ (**ववर्त**) वर्त्तते (**प्रेष्ठा**) अतिशयेन प्रियौ (**हि**) (**असथः**) भवथः (**अस्य**) (**मन्मन्**) मन्मनि विज्ञाने॥१॥

अन्वयः-हे वल्गू पुरुहूता प्रेष्ठा नासत्या! योऽर्वागद्य नमस्वान् स्तोमो दूतो नाविदत् क्वास्य मन्मन्ना ववर्त्त त्या हि युवामसथः॥१॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। येऽस्य जगतो विज्ञाने प्रयतन्ते ते क्वापि दुःखिता न भवन्ति॥१॥

पदार्थः-हे (**वल्गू**) शोभन वाणी वाले (**पुरुहूता**) बहुतों से प्रशंसा को प्राप्त (**प्रेष्ठा**) अतीव प्रिय (**नासत्या**) सत्यस्वभावयुक्त सभासेनाधीशो! (**यः**) जो (**अर्वाक्**) नीचे जाने वाला (**अद्य**) आज (**नमस्वान्**) बहुत अन्नयुक्त वा सत्कृत (**स्तोमः**) स्तुति करने योग्य (**दूतः**) समाचार पहुंचाने वाले के (**न**) समान जन (**अविदत्**) प्राप्त होता वा (**क्व**) कहाँ (**अस्य**) इसके (**मन्मन्**) विज्ञान में जो (**आ, ववर्त्त**) अच्छे प्रकार वर्त्तमान है (**त्या, हि**) वे ही तुम दोनों (**असथः**) होते हो॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो इस जगत् के विज्ञान के निमित्त प्रयत्न करते हैं, वे कही भी दुःखित नहीं होते हैं॥१॥

पुनस्तौ किं कुर्य्यातामित्याह॥

फिर वे क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

अरं मे गन्तं हवनायास्मै गृणाना यथा पिबाथो अन्धः।

परि॑ ह॒ त्यद्व॒र्तिर्या॑थो रि॒षो न यत्परो॒ नान्त॑रस्तुतु॒र्यात्॥ २॥

अर॑म्। मे॒। ग॒न्त॒म्। हव॑नाय। अ॒स्मै। गृ॒ण॒ना। यथा॑। पिबा॑थः। अन्धः॑। परि॑। ह॒। त्यत्। व॒र्तिः। या॒थः। रि॒षः। न। यत्। परः॑। न। अन्त॑रः। तु॒तु॒र्यात्॥ २॥

पदार्थः-(**अरम्**) अलम् (**मे**) मम (**गन्तम्**) गच्छतम् (**हवनाय**) आदानाय (**अस्मै**) (**गृणाना**) स्तुवन्तौ (**यथा**) (**पिबाथः**) पिबतम् (**अन्धः**) रसम् (**परि**) (**ह**) प्रसिद्धम् (**त्यत्**) तम् (**वर्त्तिः**) मार्गम् (**याथः**) (**रिषः**) हिंसकाः (**न**) इव (**यत्**) यत्र (**परः**) शत्रुः (**न**) निषेधे (**अन्तरः**) भिन्नः (**तुतुर्यात्**) हिंस्यात्॥ २॥

अन्वयः-हे सभासेनेशौ! युवां त्यद्वर्त्तिः परि याथो यद्यत्र ह परोऽन्तरो रिषो न कंचिन्न तुतुर्याद्यथा मेऽस्मै हवनायाऽरं गन्तं तथा गृणाना सन्तावन्धः पिबाथः॥ २॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। राजजनैस्तथा प्रबन्धः क्रियेत यथा मार्गेषु कश्चिदपि चोरः शत्रुश्च कश्चिदपि न पीडयेत्॥ २॥

पदार्थः-हे सभासेनाधीशो! तुम (**त्यत्**) उस (**वर्त्तिः**) मार्ग को (**परि, याथः**) सब ओर से जाते हो (**यत्, ह**) जिसमें (**परः**) शत्रुजन (**अन्तरः**) भिन्न (**रिषः**) हिंसकों के (**न**) समान किसी को (**न**) न (**तुतुर्यात्**) मारे (**यथा**) जैसे (**मे**) मेरे (**अस्मै**) इस (**हवनाय**) ग्रहण के लिये (**अरम्**) पूर्णतया (**गन्तम्**) जाओ, वैसे (**गृणाना**) स्तुति करने वाले होते हुए (**अन्धः**) रस को (**पिबाथः**) पिओ॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। राजजनों से वैसा प्रबन्ध किया जाये, जैसे मार्गों में कोई भी चोर और शत्रु किसी को पीड़ा न दे॥ २॥

पुनस्तौ किं कुर्वीतामित्याह॥

फिर वे क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

अका॑रि वा॒मन्ध॑सो॒ वरी॑मन्नस्ता॑रि ब॒र्हिः सु॑प्राय॒णत॑मम्।
उ॒त्ता॒नह॑स्तो युव॒युर्व॑व॒न्दा वां नक्ष॑न्तो॒ अद्र॑य आञ्जन्॥ ३॥

अका॑रि। वा॒म्। अन्ध॑सः। वरी॑मन्। अस्ता॑रि। ब॒र्हिः। सु॒प्रऽअ॒य॒नत॑मम्। उत्तानऽह॑स्तः। यु॒व॒युः। व॒व॒न्द॒। आ। वा॒म्। नक्ष॑न्तः। अद्र॑यः। आ॒ञ्ज॒न्॥ ३॥

पदार्थः-(**अकारि**) (**वाम्**) युवाभ्याम् (**अन्धसः**) अन्नादेः (**वरीमन्**) अतिशयेन वरे (**अस्तारि**) तीर्य्यते (**बर्हिः**) अन्तरिक्षम् (**सुप्रायणतमम्**) सुप्रयान्ति यस्मिंस्तदतिशयितम् (**उत्तानहस्तः**) ऊर्ध्वबाहुः (**युवयुः**) युवां कामयमानः (**ववन्द**) वन्दति नमस्करोति (**आ**) (**वाम्**) युवाम् (**नक्षन्तः**) प्राप्नुवन्तः (**अद्रयः**) मेघा इव (**आञ्जन्**) कामयन्ते॥ ३॥

अन्वयः-हे सभासेनेशौ! यो युवयुरुत्तानहस्तो वरीमन् वामन्धसस्सुप्रायणतमं बर्हिरकारि दुःखादस्तारि तं विज्ञाय ववन्द ये विद्यादिषु शुभगुणेषु नक्षन्तोऽद्रय इव वामाञ्जँस्तान् युवां कामयेथाम्॥ ३॥

भावार्थः-ये होमेन वाय्वादीञ्छोधयित्वा विमानादिभिर्यानैरन्तरिक्षे गच्छन्ति सुखमुत्तमान् गुणांश्च व्याप्नुवन्तः सन्तो मेघवत्सर्वेषां सुखोन्नतीरिच्छन्ति ते वरं सुखं लभन्ते॥३॥

पदार्थः-हे सभासेनाधीशो! जो **(युवयुः)** तुम दोनों की इच्छा करने वाला **(उत्तानहस्तः)** ऊपर को हाथ उठाये हुए **(वरीमन्)** अतीव उत्तम व्यवहार में **(वाम्)** तुम दोनों से **(अन्धसः)** अन्न आदि के सम्बन्ध में **(सुप्रायणतमम्)** उत्तमता से जाते हैं जिसमें वह **(बर्हिः)** अन्तरिक्ष **(अकारि)** प्रसिद्ध किया जाता वा दुःख से **(अस्तारि)** तारा जाता उसको जानके **(ववन्द)** वन्दना करते हैं, जो विद्यादि शुभगुणों में **(नक्षन्तः)** प्राप्त होते हुए **(अद्रयः)** मेघों के समान **(वाम्)** तुम दोनों की **(आ, आज्ञन्)** अच्छे प्रकार कामना करते हैं, उनकी तुम दोनों कामना करो॥३॥

भावार्थः-जो होम से वायु आदि पदार्थों को शुद्ध कर विमान आदि यानों से अन्तरिक्ष में जाते तथा सुख और उत्तम गुणों को व्याप्त होते हुए मेघ के समान सबके सुख और उन्नतियों को चाहते हैं, वे उत्तम सुख पाते हैं॥३॥

पुनस्तौ किं कुर्य्यातामित्याह॥

फिर वे क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

ऊर्ध्वो वांमग्निरध्वरेष्वस्थात् प्र रातिरेति जूर्णिनी घृताची।
प्र होता गूर्तमना उराणोऽयुक्त यो नासत्या हवीमन्॥४॥

ऊर्ध्वः। वाम्। अग्निः। अध्वरेषु। अस्थात्। प्र। रातिः। एति। जूर्णिनी। घृताची। प्र। होता। गूर्तऽमनाः। उराणः। अयुक्त। यः। नासत्या। हवीमन्॥४॥

पदार्थः-**(ऊर्ध्वः)** ऊर्ध्वगामी **(वाम्)** युवयोः **(अग्निः)** पावक इव **(अध्वरेषु)** अहिंसादिधर्म्यव्यवहारेषु **(अस्थात्)** तिष्ठति **(प्र)** **(रातिः)** दानम् **(एति)** प्राप्नोति **(जूर्णिनी)** वेगवती **(घृताची)** रात्रिः। **घृताचीति रात्रिनाम।** (निघं०१.७) **(प्र)** **(होता)** दाता **(गूर्तमनाः)** गूर्तमुद्युक्तं मनो यस्य सः **(उराणः)** बहु कुर्वाणः **(अयुक्त)** युङ्क्ते **(यः)** **(नासत्या)** अविद्यमानासत्यव्यवहारौ **(हवीमन्)** होमे॥४॥

अन्वयः-हे नासत्या सभासेनेशौ! वां यदि यो गूर्तमना उराणो होताऽध्वरेषूर्ध्वोऽग्निरिवाऽस्थाद् घृताचीव जूर्णिनी रातिः प्रैति हवीमन् प्रायुक्त तं सदा सत्कुर्याताम्॥४॥

भावार्थः-हे सभासेनेशौ! ये मनुष्या राजव्यवहारे सत्योत्साहाभ्यां प्रवर्त्तन्ते तान् भवन्तौ सत्कुर्याताम्॥४॥

पदार्थः-हे **(नासत्या)** सत्य व्यवहारयुक्त सभासेनाधीशो! **(वाम्)** तुम दोनों का यदि **(यः)** जो **(गूर्तमनाः)** उद्यम करने को मन जिसका वह **(उराणः)** बहुत पदार्थ सिद्ध करने वाला **(होता)** दानशीलजन **(अध्वरेषु)** अहिंसादि धर्मयुक्त व्यवहारों में **(ऊर्ध्वः)** ऊपर जाने वाला **(अग्निः)** अग्नि के

समान **(अस्थात्)** स्थिर होता है और **(घृताची)** रात्रि के समान **(जूर्णिनी)** वेगवती **(रातिः)** दानक्रिया **(प्र, एति)** प्राप्त होती है वा **(हवीमन्)** होम कर्म में **(प्र, अयुक्त)** अच्छे प्रकार प्रयुक्त होता, उसका सदा सत्कार करो॥४॥

भावार्थः-हे सभासेनाधीशो! जो मनुष्य राजव्यवहार में सत्य और उत्साह से प्रवृत्त होते हैं, उनका सत्कार आप लोग करें॥४॥

पुनस्तौ किंवत्कीदृशौ भवेतामित्याह॥

फिर वे किसके समान कैसे हों, इस विषय को कहते हैं॥

अधि श्रिये दुहिता सूर्यस्य रथं तस्थौ पुरुभुजा शतोतिम्।

प्र मायाभिर्मायिना भूतमत्र नरा नृतू जनिमन् यज्ञियानाम्॥५॥ ३॥

अधि। श्रिये। दुहिता। सूर्यस्य। रथम्। तस्थौ। पुरुऽभुजा। शतऽऊतिम्। प्र। मायाभिः। मायिना। भूतम्। अत्र। नरा। नृतू इति। जनिमन्। यज्ञियानाम्॥५॥

पदार्थः-**(अधि)** उपरि **(श्रिये)** शोभायै लक्ष्म्यै वा **(दुहिता)** दुहिते वोषा **(सूर्य्यस्य)** **(रथम्)** रमणीयं किरणम् **(तस्थौ)** तिष्ठति। **(पुरुभुजा)** बहूनां पालकौ **(शतोतिम्)** शतान्यूतयो येन तम् **(प्र)** **(मायाभिः)** प्रज्ञाभिः **(मायिना)** प्राज्ञौ **(भूतम्)** भवेतम् **(अत्र)** अस्मिन् **(नरा)** नायकौ **(नृतू)** नेतारौ **(जनिमन्)** जन्मनि **(यज्ञियानाम्)** सत्सङ्गतिमर्हाणाम्॥५॥

अन्वयः-हे मायिना पुरुभुजा नृतू नरा राजसभासेनेशौ! युवां मायाभिरत्र यज्ञियानां जनिमन् यथा सूर्य्यस्य दुहिता शतोतिं रथमधि तस्थौ तथा श्रिये प्र भूतम्॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। य उषर्वद् यानादिसाधनै राज्यश्रीप्राप्तये विदुषां विद्याजन्मानि कारयन्ति तेऽसङ्ख्यां रक्षां प्राप्यात्र जगत्यधिष्ठातारो जायन्ते॥५॥

पदार्थः-हे **(मायिना)** प्राज्ञ **(पुरुभुजा)** बहुतों की पालना करने वाले **(नृतू)** अग्रगन्ता **(नरा)** नायक राजसभा-सेनाधीशो! तुम **(मायाभिः)** बुद्धियों से **(अत्र)** इस **(यज्ञियानाम्)** सत्सङ्गति के योग्य मनुष्यों के **(जनिमन्)** जन्म में जैसे **(सूर्य्यस्य)** सूर्य की **(दुहिता)** पुत्री के समान उषा **(शतोतिम्)** जिससे सैकड़ो रक्षायें होती उस **(रथम्)** रमणीय किरण के **(अधि, तस्थौ)** ऊपर स्थित होती, वैसे **(श्रिये)** शोभा वा लक्ष्मी के लिये **(प्र, भूतम्)** समर्थ होओ॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो उषा के समान यानादि साधनों से राज्यश्री की प्राप्ति के लिये विद्वानों के विद्याजन्म को कराते हैं, वे असङ्ख्य रक्षा को प्राप्त होके इस जगत् में अधिष्ठाता होते हैं॥५॥

पुना राजादयः कस्मै कां प्राप्य कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर राजादि किसके लिये किसको प्राप्त होके कैसे हों इस विषय को कहते हैं॥

युवं श्रीभिर्दर्शताभिराभिः शुभे पुष्टिमूहथुः सूर्यायाः।
प्र वां वयो वपुषेऽनु पप्तन्नक्षद्वाणी सुष्टुता धिष्ण्या वाम्॥६॥

युवम्। श्रीभिः। दर्शताभिः। आभिः। शुभे। पुष्टिम्। ऊहथुः। सूर्यायाः। प्र। वाम्। वयः। वपुषे। अनु। पप्तन्। नक्षत्। वाणी। सुऽस्तुता। धिष्ण्या। वाम्॥६॥

पदार्थः-(**युवम्**) युवाम् (**श्रीभिः**) राजनीतिशोभाभिः (**दर्शताभिः**) द्रष्टव्याभिः (**आभिः**) वर्त्तमानाभिः (**शुभे**) कल्याणाय (**पुष्टिम्**) पोषणम् (**ऊहथुः**) प्रापयथः (**सूर्यायाः**) उषस इव सम्बन्धिन्याः प्रजायाः (**प्र**) (**वाम्**) युवयोः (**वयः**) पक्षिणः (**वपुषे**) सुरूपाय (**अनु**) (**पप्तन्**) पतन्ति (**नक्षत्**) व्याप्नोतु प्राप्नोतु वा (**वाणी**) वेदवाक् (**सुष्टुता**) सुष्ठु प्रशंसिता (**धिष्ण्या**) दृढौ प्रगल्भौ (**वाम्**) युवाम्॥६॥

अन्वयः-हे धिष्ण्या! यदि वां वय इव पप्तन् शुभे वपुषे सुष्टुता वाण्यनु नक्षद् यदि युवं दर्शताभिराभिः श्रीभिः सूर्याया इव वाचः पुष्टिं प्रोहथुस्तर्हि तौ वां सततं पोषयेतम्॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यदि भवन्तो राज्यं कर्तुं राज्यश्रियं प्राप्तुं च चिकीर्षन्ति तर्हि प्रयत्नेन सर्वेण धनादिना च विद्यायुक्तां वाचं प्राप्नुवन्तु यथा पक्षिणः स्वाश्रयं गच्छन्ति तथैव भवन्तो धर्म्यां नीतिं प्राप्योषा दिनमिव यशः प्रकाशयन्तु॥६॥

पदार्थः-हे (**धिष्ण्या**) दृढ प्रगल्भो! जो (**वाम्**) तुम दोनों जैसे (**वयः**) पक्षी (**पप्तन्**) गिरते हैं, वैसे (**शुभे**) कल्याणरूपी (**वपुषे**) सुरूप के लिये (**सुष्टुता**) उत्तम प्रशंसा को प्राप्त (**वाणी**) वेदवाणी (**अनु, नक्षत्**) अनुकूलता से व्याप्त वा प्राप्त हो और जो (**युवम्**) तुम दोनों (**दर्शताभिः**) द्रष्टव्य (**आभिः**) इन (**श्रीभिः**) राजनीति की शोभाओं से (**सूर्यायाः**) उषासम्बन्धिनी प्रजा से वाणी की (**पुष्टिम्**) पुष्टि को (**प्र, ऊहथुः**) प्राप्त कराते हो वे (**वाम्**) तुम दोनों निरन्तर पुष्टि करो॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! यदि तुम लोग राज्य करने की और राज्यलक्ष्मी को प्राप्त करने की इच्छा करते हो तो प्रयत्न से और समस्त धन आदि से विद्यायुक्त वाणी को प्राप्त होओ और जैसे पक्षी अपने आश्रय को प्राप्त होते हैं, इसी प्रकार तुम धर्मयुक्त नीति को प्राप्त होकर जैसे उषाकाल दिन को, वैसे यश को प्रकाशित करो॥३॥

पुनर्मनुष्याः केन किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य किससे क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

आ वां वयोऽश्वासो वहिष्ठा अभि प्रयो नासत्या वहन्तु।
प्र वां रथो मनोजवा असर्जीषः पृक्ष इषिधो अनु पूर्वीः॥७॥

आ। वाम्। वयः। अश्वासः। वहिष्ठाः। अभि। प्रयः। नासत्या। वहन्तु। प्र। वाम्। रथः। मनःऽजवाः। असर्जि। इषः। पृक्षः। इषिधः। अनु। पूर्वीः॥७॥

पदार्थः-(**आ**) (**वाम्**) युवयोः (**वयः**) पक्षिण इव (**अश्वासः**) आशुगामिनोऽग्न्यादयः (**वहिष्ठाः**) अतिशयेन यानानां वोढारः (**अभि**) आभिमुख्ये (**प्रयः**) अन्नादिकम् (**नासत्या**) अविद्यमानासत्याचरणौ (**वहन्तु**) प्राप्नुवन्तु (**प्र**) (**वाम्**) (**रथः**) (**मनोजवाः**) मनोवद्गतयः (**असर्जि**) सृज्येत (**इषः**) अन्नाद्याः (**पृक्षः**) सम्प्राप्तव्याः (**इषिधः**) इच्छाप्रकाशिकाः (**अनु**) (**पूर्वीः**) प्राचीनाः॥७॥

अन्वयः-हे नासत्या! ये वां वहिष्ठा मनोजवा अश्वासो वयो न प्रय आऽभि वहन्तु येन पृक्ष इषिधः पूर्वीरिषोऽन्वसर्जि स रथो वां प्रवहतु॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यदि भवन्तोऽग्न्यादिप्रयोगाञ्जानीयुस्तर्हि विमानादियानैः पक्षिण इवान्तरिक्षे गन्तुं शक्नुयुर्येनाऽभीष्टानि प्राप्य सर्वदाऽऽनन्दिता भवेयुः॥७॥

पदार्थः-हे (**नासत्या**) सत्य आचरण करने वालो! जो (**वाम्**) तुम दोनों के (**वहिष्ठाः**) अतीव यानों के लेजाने वाले (**मनोजवाः**) मन के समान जिनकी गति वे (**अश्वासः**) शीघ्रगामी अग्नि आदि (**वयः**) पक्षियों के समान (**प्रयः**) अन्नादि पदार्थ को (**आ, अभि, वहन्तु**) सन्मुख पहुंचावें जिससे (**पृक्षः**) अच्छे प्रकार प्राप्त होने योग्य (**इषिधः**) इच्छा प्रकाश करने वाली (**पूर्वीः**) प्राचीन (**इषः**) अन्नादि वस्तुओं में से प्रत्येक (**अनु, असर्जि**) रची जाती वह (**रथः**) रथ (**वाम्**) तुम दोनों को (**प्र**) पहुंचावे॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो आप लोग अग्न्यादि पदार्थों के प्रयोगों को जानो तो विमानादि यानों से पक्षियों के समान अन्तरिक्ष में जा सको, जिससे चाहे हुए पदार्थों को प्राप्त होकर सर्वदा आनन्दित होओ॥७॥

पुना राजप्रजाजनाः कथं वर्त्तित्वा किं प्राप्नुयुरित्याह॥

फिर राजा और प्रजाजन कैसे वर्त्ताव कर क्या पावें, इस विषय को कहते हैं॥

पुरु हि वां पुरुभुजा देष्णं धेनुं न इषं पिन्वतमसंक्राम्।

स्तुतश्च वां माध्वी सुष्टुतिश्च रसाश्च ये वामनु रातिमग्मन्॥८॥

पुरु। हि। वाम्। पुरुऽभुजा। देष्णम्। धेनुम्। नः। इषम्। पिन्वतम्। असंक्राम्। स्तुतः। च। वाम्। माध्वी इति। सुऽस्तुतिः। च। रसाः। च। ये। वाम्। अनु। रातिम्। अग्मन्॥८॥

पदार्थः-(**पुरु**) बहु (**हि**) निश्चये (**वाम्**) युवयोः (**पुरुभुजा**) बहुपालकौ (**देष्णम्**) दातव्यम् (**धेनुम्**) वाचम् (**नः**) अस्मभ्यम् (**इषम्**) अन्नं विज्ञानं वा (**पिन्वतम्**) सुखयतम् (**असक्राम्**) या सहनं क्रामति ताम् (**स्तुतः**) प्रशंसितः (**च**) (**वाम्**) (**माध्वी**) माधुर्य्यादिगुणोपेता (**सुष्टुतिः**) श्रेष्ठा प्रशंसा (**च**) (**रसाः**) मधुरादयः (**च**) (**ये**) (**वाम्**) युवाम् (**अनु**) (**रातिम्**) दानम् (**अग्मन्**) प्राप्नुवन्ति॥८॥

अन्वयः-हे पुरुभुजा! वां युवां नः पुरु देष्णं धेनुमसक्रामिषं च पिन्वतम्। यो हि स्तुतः स च वां पिन्वतु ये वां माध्वी सुष्टुती रसाश्च सन्ति तै रातिमन्वग्मँस्तैरस्मान् योजयतम्॥८॥

भावार्थः-यदि राजप्रजाजनाः परस्परेषामुपकाराय प्रयतेरँस्तर्ह्येतान् सर्वा प्रशंसा सकलमैश्वर्यं च प्राप्नुयात्॥८॥

पदार्थः-हे **(पुरुभुजा)** बहुतों की पालना करने वालो! **(वाम्)** तुम दोनों **(नः)** हमारे लिये **(पुरु)** बहुत **(देष्णम्)** देने योग्य पदार्थ **(धेनुम्)** वाणी और **(असक्राम्)** सहन को उल्लङ्घन करने वाला **(इषम्, च)** अन्न वा विज्ञान को भी **(पिन्वतम्)** सुखयुक्त करो अर्थात् पुष्ट करो। जो **(हि)** निश्चित **(स्तुतः)** प्रशंसा को प्राप्त है **(च)** वह भी **(वाम्)** तुम दोनों को पुष्टि दे **(ये)** जो **(वाम्)** तुम दोनों के **(माध्वी)** माधुर्य्यादिगुणयुक्त **(सुष्टुतिः)** श्रेष्ठ प्रशंसा **(रसाः, च)** और रस हैं उनसे **(रातिम्)** दान को **(अनु, अग्मन्)** प्राप्त होते हैं उनसे हमको युक्त कराइये॥८॥

भावार्थः-जो राजा और प्रजाजन परस्पर के उपकार के लिये प्रयत्न करें तो इनको सर्व प्रशंसा और सकल ऐश्वर्य भी प्राप्त होवे॥८॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

उत म ऋज्रे पुरयस्य रघ्वी सुमीळ्हे शतं पेरुके च पक्वा।

शाण्डो दाद्धिरणिनः स्मद्दिष्टीन् दश वशासो अभिषाच ऋष्वान्॥९॥

उत। मे। ऋज्रे इति। पुरयस्य। रघ्वी इति। सुऽमीळ्हे। शतम्। पेरुके। च। पक्वा। शाण्डः। दात्। हिरणिनः। स्मत्ऽदिष्टीन्। दश। वशासः। अभिऽसाचः। ऋष्वान्॥९॥

पदार्थः-**(उत)** **(मे)** मम **(ऋज्रे)** ऋजुप्रिये **(पुरयस्य)** यः पुरोऽयते प्राप्नोति तस्य **(रघ्वी)** पक्वानि **(शाण्डः)** यः श्यति तनूकरोति तथाऽयम्। अत्र शो तनूकरण इत्यस्मादौणादिकोऽडच् प्रत्ययः। **(दात्)** ददाति **(हिरणिनः)** हिरणाः सन्ति येषां तान् **(स्मद्दिष्टीन्)** प्रशंसितदर्शनान् **(दश)** एतत्सङ्ख्याकानश्वान् रथादीन् वा **(वशासः)** ये वशं प्राप्ताः **(अभिषाचः)** ये आभिमुख्येन सचन्ति ते **(ऋष्वान्)** महतः। **ऋष्व इति महन्नाम।** (निघं०३.३)॥९॥

अन्वयः-येऽभिषाचो वशासः पुरयस्य म ऋज्रे सुमीळ्ह उत पेरुके रघ्वी पक्वा च शाण्डो दात् तान् हिरणिनः स्मद्दिष्टीनृष्वान् दश शतं चाऽहं प्राप्नुयाम्॥९॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये मम वशीभूताः प्रीतियुक्ता महान्तः सहाया भवन्ति तदधीनोऽहमपि भवेयमेवं परस्परे वशत्वे सत्युत्तमान्यसंख्यानि कार्याणि कर्तुं शक्नुयाम्॥९॥

पदार्थः-जो मनुष्य **(अभिषाचः)** सम्मुख सम्बन्ध करते वा **(वशासः)** वश को प्राप्त होते हैं तथा **(पुरयस्य)** जो पहिले प्राप्त होता उस **(मे)** मेरे **(ऋज्रे)** कोमलता से प्रिय **(सुमीळ्हे)** सुन्दर सेचने योग्य **(उत)** और **(पेरुके)** पालन करने वाले व्यवहार में **(रघ्वी)** छोटी क्रिया **(पक्वा, च)** और पक्के फलों को **(शाण्डः)** सूक्ष्मता करने वाला **(दात्)** देता है उन **(हिरणिनः)** हिरण वाले **(स्मद्दिष्टीन्)** प्रशंसित

दर्शन वाले **(ऋष्वान्)** बड़े-बड़े **(दश)** दश घोड़े वा रथों को वा **(शतम्)** और सैकड़ों को मैं प्राप्त होऊं॥९॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो मेरे वशीभूत, प्रीतियुक्त, महान् सहायक होते हैं, उनके आधीन मैं भी होऊं, इस प्रकार परस्पर का वशभाव हुए पीछे उत्तम असङ्ख्य कार्य्य कर सकूं॥९॥

पुना राजसेनेशौ किं कुर्यातामित्याह॥

फिर राजा और सेनापति क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

सं वां शता नासत्या सहस्राश्वानां पुरुपन्था गिरे दात्।

भरद्वाजाय वीर नू गिरे दाद्धता रक्षांसि पुरुदंससा स्युः॥ १०॥

सम्। वाम्। शता। नासत्या। सहस्रा। अश्वानाम्। पुरुऽपन्थाः। गिरे। दात्। भरत्ऽवाजाय। वीर। नु। गिरे। दात्। हता। रक्षांसि। पुरुऽदंससा। स्युरिति स्युः॥ १०॥

पदार्थः-**(सम्)** **(वाम्)** युवयोः **(शता)** शतानि **(नासत्या)** अविद्यमानाधर्म्माचरणौ **(सहस्रा)** सहस्राणि **(अश्वानाम्)** तुरङ्गाणामग्न्यादीनां वा **(पुरुपन्थाः)** पुरुर्बहुविधश्चासौ पन्थाश्च **(गिरे)** वाचे **(दात्)** ददाति **(भरद्वाजाय)** धृतविज्ञानाय **(वीर)** शत्रुघातिन् **(नू)** सद्यः **(गिरे)** राजनीतियुक्तायै वाचे **(दात्)** ददाति **(हता)** हताः दुष्टाः **(रक्षांसि)** प्राणिनः **(पुरुदंससा)** पुरूणि दंसांस्युत्तमानि कर्माणि ययोस्तौ **(स्युः)** भवेयुः॥१०॥

अन्वयः-हे पुरुदंससा नासत्या! यो वां पुरुपन्था अश्वानां गिरे शता सहस्रा सं दाद्यो भरद्वाजाय गिरे शता सहस्रा दाद्येन रक्षांसि हता स्युः। हे वीर! त्वं तेन दुष्टान् नू हिन्धि॥१०॥

भावार्थः-हे राजसेनेशौ! यो धार्मिको न्यायेन राज्यपालनाय शत्रुभ्यः स्वसेनारक्षणाय प्रयतेत तस्यासङ्ख्यं धनं प्रतिष्ठां च सततं कुर्यातम्॥१०॥

पदार्थः-हे **(पुरुदंससा)** बहुत उत्तम कर्म्मों वाले **(नासत्या)** अधर्माचरण रहित जो **(वाम्)** तुम दोनों का **(पुरुपन्थाः)** बहुत प्रकार का मार्ग **(अश्वानाम्)** घोड़े वा अग्नि आदि पदार्थों की **(गिरे)** वाणी के लिये **(शता)** सैकड़ों वा **(सहस्रा)** हजारों प्रकारों को **(सम्, दात्)** अच्छे प्रकार देता है जो **(भरद्वाजाय)** धारण किया विज्ञान जिसने उसके लिये वा **(गिरे)** राजनीतियुक्त वाणी के लिये सैकड़ों और हजारों प्रकारों को **(दात्)** देता है जिससे **(रक्षांसि)** राक्षस **(हता)** नष्ट **(स्युः)** हों, हे **(वीर)** वीर! उससे आप दुष्टों को **(नू)** शीघ्र मारो॥१०॥

भावार्थः-हे राजा और सेनापतियो! जो धार्मिक न्याय से राज्य की पालना करने और शत्रुओं से अपनी सेना की रक्षा करने के लिये यत्न करे, उसके लिये असङ्ख्य धन और प्रतिष्ठा निरन्तर करो॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

आ वां सुम्ने वरिमन्त्सूरिभिः ष्याम्॥ ११॥ ४॥

आ। वाम्। सुम्ने। वरिमन्। सुरिऽभिः। स्याम्॥ ११॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**वाम्**) युवाम् (**सुम्ने**) सुखे (**वरिमन्**) अतिशयेन श्रेष्ठे (**सूरिभिः**) विद्वद्भिः सह (**स्याम्**) भवेयम्॥ ११॥

अन्वयः-हे राजसेनेशौ! यथाऽहं सूरिभिः सह वरिमन् सुम्न आ स्यां तथा वां विदध्यातम्॥ ११॥

भावार्थः-राजसेनेशाभ्यां सर्वदा धार्मिका विद्वांसः सत्कर्त्तव्या येनैते सर्वस्य सुखमुन्नयेयुरिति॥ ११॥

अत्राश्विगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति त्रिषष्टितमं सूक्तं चतुर्थो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे राजा और सेनापतियो! जिस प्रकार मैं (**सूरिभिः**) अत्यन्त बुद्धिमान् विद्वानों के साथ (**वरिमन्**) अतीव श्रेष्ठ (**सुम्ने**) सुख में (**आ, स्याम्**) सब ओर से होऊं अर्थात् प्रसिद्ध होऊं वैसा (**वाम्**) आप विधान करो॥ ११॥

भावार्थः-राजा और सेनापतियों को सर्वदा धार्मिक विद्वान् का सत्कार करना चाहिये, जिससे ये सब के सुख की उन्नति दिलावें॥ ११॥

इस सूक्त में अश्वियों का गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह त्रेसठवां सूक्त और चौथा वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ षड्चस्य चतु:षष्टितमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषि:। उषा देवता। १, २, ६ विराट्त्रिष्टुप्। ३ त्रिष्टुप्। ४ निचृत्त्रिष्टुप् छन्द:। धैवत: स्वर:। ५ पङ्क्तिश्छन्द:। पञ्चम: स्वर:॥

अथ स्त्रिय: कीदृश्यो वरा इत्याह॥

अब स्त्रियाँ कैसी श्रेष्ठ होती हैं, इस विषय को कहते हैं॥

उदु श्रिय उषसो रोचमाना अस्थुरपां नोर्मयो रुशन्त:।
कृणोति विश्वा सुपथा सुगान्यभूदु वस्वी दक्षिणा मघोनी॥ १॥

उत्। ऊँ इति। श्रिये। उषस:। रोचमाना:। अस्थु:। अपाम्। न। ऊर्मय:। रुशन्त:। कृणोति। विश्वा। सुऽपथा। सुऽगानि। अभूत्। ऊँ इति। वस्वी। दक्षिणा। मघोनी॥ १॥

पदार्थ:-(**उत्**) (उ) (**श्रिये**) शोभायै (**उषस:**) प्रभातवेला इव (**रोचमाना:**) रुचिमत्य: (**अस्थु:**) तिष्ठन्ति (**अपाम्**) जलानाम् (**न**) इव (**ऊर्मय:**) तरङ्गा: (**रुशन्त:**) हिंसन्त: (**कृणोति**) (**विश्वा**) सर्वाणि (**सुपथा**) शोभना: पन्था येषु तानि (**सुगानि**) सुष्ठु गच्छन्ति येषु तानि (**अभूत्**) भवति (उ) (**वस्वी**) वसूनामियम् (**दक्षिणा**) दक्षिणेव (**मघोनी**) परमधनयुक्ता॥ १॥

अन्वय:-हे पुरुषा:! या: स्त्रियो रोचमाना उषस इवाऽपां रुशन्त ऊर्मयो न श्रिय उदस्थुस्ता उ सुखप्रदा: सन्ति। या वस्वी दक्षिणेव मघोन्यभूत् सोषर्वदु विश्वा सुपथा सुगानि कृणोति॥ १॥

भावार्थ:-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। हे पुरुषा! यथोषसो रुचिकरा भवन्ति तथाभूता: स्त्रियो वरा: सन्ति यथा जलतरङ्गास्तटाञ्छिन्दन्ति तथैव या दु:खानि कृन्तन्ति याश्च दिनवत्सर्वाणि गृहकृत्यानि प्रकाशयन्ति ता एव सर्वदा मङ्गलकारिण्यो भवन्ति॥ १॥

पदार्थ:-हे पुरुषो! जो स्त्रियाँ (**रोचमाना:**) दीप्तिमती (**उषस:**) प्रभातवेलाओं के समान वा (**अपाम्**) जलों की (**रुशन्त:**) हिंसती अर्थात् फूलों को विदारती हुई (**ऊर्मय:**) तरङ्गों के (**न**) समान (**श्रिये**) शोभा के लिये (**उत्, अस्थु:**) उठती हैं, वे (**उ**) ही सुख देने वाली हैं जो (**वस्वी**) वसुओं की यह (**दक्षिणा**) दक्षिणा के समान (**मघोनी**) परमधनयुक्त (**अभूत्**) होती है, वह उषा के समान (**उ**) ही (**विश्वा**) समस्त (**सुपथा**) शुभमार्ग वाले (**सुगानि**) जिनमें सुन्दरता से चलें, उन कामों को (**कृणोति**) करती है॥ १॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। हे पुरुषो! जैसे प्रभातवेलायें रुचि करने वाली होती हैं, वैसी हुई स्त्रियाँ श्रेष्ठ हैं वा जैसे जलतरंगें तटों को छिन्नभिन्न करती हैं, वैसे ही जो स्त्रियाँ दु:खों को छिन्न-भिन्न करती हैं और जो दिन के तुल्य समस्त गृहकृत्यों को प्रकाशित करती हैं, वे ही सर्वदा मङ्गलकारिणी होती हैं॥ १॥

पुनः सा कीदृशी भवेदित्याह॥

फिर वह कैसी हो, इस विषय को कहते हैं॥

भद्रा ददृक्ष उर्विया वि भास्युत्ते शोचिर्भानवो द्यामपप्तन्।

आविर्वक्षः कृणुषे शुम्भमानोषो देवि रोचमाना महोभिः॥ २॥

भद्रा। ददृक्षे। उर्विया। वि। भासि। उत्। ते। शोचिः। भानवः। द्याम्। अपप्तन्। आविः। वक्षः। कृणुषे। शुम्भमाना। उषः। देवि। रोचमाना। महःऽभिः॥ २॥

पदार्थः-(**भद्रा**) कल्याणकारिणी (**ददृक्षे**) दृश्यते (**उर्विया**) बहुरूपा (**वि**) (**भासि**) (**उत्**) (**ते**) तव (**शोचिः**) (**भानवः**) किरणाः (**द्याम्**) अन्तरिक्षम् (**अपप्तन्**) पतन्ति गच्छन्ति (**आविः**) प्राकट्ये (**वक्षः**) वक्षःस्थलम् (**कृणुषे**) (**शुम्भमाना**) सुशोभायुक्ता (**उषः**) उषर्वद्वर्त्तमाने (**देवि**) विदुषि (**रोचमाना**) विद्याविनयाभ्यां प्रकाशमाना (**महोभिः**) महद्भिः शुभैर्गुणकर्मस्वभावैः॥ २॥

अन्वयः-हे उषर्वद्वर्त्तमाने देवि! यतस्त्वं भद्रा ददृक्ष उर्विया सती गृहकृत्यान्युद्वि भासि यस्यास्ते शोचिर्भानवो द्यामपप्तन्निव वक्ष आविष्कृणुषे महोभिः शुम्भमाना रोचमाना सती सुखं प्रयच्छसि तस्मात् संपूज्यासि॥ २॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे स्त्रियो! यूयं चातुर्येण सर्वान् पत्यादीन् सन्तोष्य गृहकृत्यानि यथावदनुष्ठायातिविषयासक्तिं विहाय सुशोभा भूत्वा सदैव पुरुषार्थेन धर्मकृत्यानि सूर्य्यवत्प्रकाशयत॥ २॥

पदार्थः-हे (**उषः**) प्रभातवेला के समान वर्त्तमान (**देवि**) विदुषी! जिससे तू (**भद्रा**) कल्याणकारिणी (**ददृक्षे**) देखी जाती है तथा (**उर्विया**) बहुरूप हुई घर के कामों को (**उत्, वि, भासि**) विशेष कर उत्तम प्रकाश करती है जिस (**ते**) तेरी (**शोचिः**) उत्तम नीति का प्रकाश (**भानवः**) किरणें जैसे (**द्याम्**) अन्तरिक्ष को (**अपप्तन्**) जातीं प्राप्त होतीं, वैसे (**वक्षः**) छाती का (**आविः, कृणुषे**) प्रकाश करती है वा (**महोभिः**) महान् शुभ गुणकर्म स्वभावों से (**शुम्भमाना**) सुन्दर शोभायुक्त और (**रोचमाना**) विद्या और विनय से प्रकाशित होती हुई सुख देती है, इससे अच्छे प्रकार सत्कार करने योग्य है॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे स्त्रियो! तुम चतुरता से सब पति आदि को सन्तोष देकर, घर के कामों को यथावत् अनुष्ठान कर, अतिविषयासक्ति को छोड़ और सुन्दर शोभायुक्त होकर सदैव पुरुषार्थ से धर्मयुक्त कामों को सूर्य के समान प्रकाशित करो॥ २॥

पुनस्ताः कीदृश्यो भवेयुरित्याह॥

फिर वे कैसी हों, इस विषय को कहते हैं॥

वहन्ति सीमरुणासो रुशन्तो गावः सुभगामुर्विया प्रथानाम्।

अपेजते शूरो अस्तेव शत्रून् बाधते तमो अजिरो न वोळ्हा॥ ३॥

वहन्ति। सीम्। अरुणासः। रुशन्तः। गावः। सुऽभगाम्। उर्विया। प्रथानाम्। अप। ईजते। शूरः। अस्ताऽइव। शत्रून्। बाधते। तमः। अजिरः। न। वोळ्हा॥ ३॥

पदार्थः-(**वहन्ति**) (**सीम्**) सर्वतः (**अरुणासः**) रक्तारुणादिगुणविशिष्टाः (**रुशन्तः**) हिंसन्तः (**गावः**) किरणाः (**सुभगाम्**) सौभाग्ययुक्ताम् (**उर्विया**) बहुपुरुषार्थयुक्ता (**प्रथानाम्**) विस्तीर्णसौन्दर्यप्रख्याताम् (**अप**) (**ईजते**) दूरीकरोति (**शूरः**) बलपराक्रमादियोगेन निर्भयः (**अस्तेव**) शस्त्राऽस्त्राणां प्रक्षेप्तेव (**शत्रून्**) (**बाधते**) विलोडयति (**तमः**) अन्धकारं रात्रिं वा (**अजिरः**) यः शीघ्रं न गच्छति सः (**न**) इव (**वोळ्हा**) विवाहिता॥ ३॥

अन्वयः-हे स्त्रि! त्वमजिरो न वोळ्हा सती शत्रूञ्छूरोऽस्तेवापेजत उषास्तमो बाधते यथाऽरुणासो रुशन्तो गावः सर्वान् पदार्थान् सीं वहन्ति तथोर्विया भव। हे पुरुष! उषसः सूर्य्य इवेमां प्रथानां भार्यां सुभगां कुरु॥ ३॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। हे नरा! या उषर्वत्सुप्रकाशाः सुस्वरूपाः सूर्यकिरणवद्गृहकृत्यव्यवस्थानिर्वाहिकाः शूरवीरवद्व्यथारहिताः स्त्रियः स्युस्ताः सततं सत्कृत्य सौभाग्ययुक्ताः कुर्वन्तु॥ ३॥

पदार्थः-हे स्त्री! तू (**अजिरः**) जो शीघ्र नहीं जाता उस पुरुष के (**न**) समान और (**वोळ्हा**) विवाहित स्त्री (**शत्रून्**) शत्रुओं को (**शूरः**) बल वा पराक्रम आदि योग से निर्भय (**अस्तेव**) शस्त्र और अस्त्रों को अच्छे प्रकार फेंकने वाले के समान (**अप, ईजते**) दूर करती तथा प्रभातवेला जैसे (**तमः**) अन्धकार वा रात्रि को (**बाधते**) नष्ट-भ्रष्ट करे वा जैसे (**अरुणासः**) लाल काली पीली धौली आदि (**रुशन्तः**) पदार्थों को छिन्न-भिन्न करती हुई (**गावः**) किरणें सब पदार्थों को (**सीम्**) सब ओर से (**वहन्ति**) पहुंचाती हैं, वैसे (**उर्विया**) बहुत पुरुषार्थयुक्त हो। हे पुरुष! उषा को जैसे सूर्य, वैसे इस (**प्रथानाम्**) अत्यन्त सुन्दरता से प्रख्यात भार्या को (**सुभगाम्**) सौभाग्य करो॥ ३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। हे मनुष्यो! जो प्रभातवेला के समान सुप्रकाश, सुरूपवती, सूर्य किरणों के तुल्य घर के कामों की व्यवस्था का निर्वाह करने वाली, शूरवीर के समान व्यथा अर्थात् परिश्रम की थकावट न मानने वाली स्त्रियाँ हों, उनका निरन्तर सत्कार कर सौभाग्युक्त करो॥ ३॥

पुनस्सा स्त्री कीदृशी भवेदित्याह॥

फिर वह स्त्री कैसी हो, इस विषय को कहते हैं॥

सुगोत ते सुपथा पर्वतेष्ववाते अपस्तरसि स्वभानो।

सा न आ वह पृथुयामन्नृष्वे रयिं दिवो दुहितरिषयध्यै॥ ४॥

सुऽगा। उत। ते। सुऽपथा। पर्वतेषु। अवाते। अपः। तरसि। स्वभानो इति स्वऽभानो। सा। नः। आ। वह। पृथुऽयामन्। ऋष्वे। रयिम्। दिवः। दुहितः। इषयध्यै॥ ४॥

पदार्थः-(**सुगा**) सुष्ठु गन्तुं योग्या (**उत**) अपि (**ते**) तव (**सुपथा**) शोभनेन मार्गेण (**पर्वतेषु**) शैलेषु (**अवाते**) निर्वाते (**अपः**) जलानि (**तरसि**) (**स्वभानो**) स्वकीयदीप्ते (**सा**) (**नः**) अस्मान् (**आ**) (**वह**) गमय (**पृथुयामन्**) बहुप्रापक (**ऋष्वे**) महागुणयुक्त (**रयिम्**) श्रियम् (**दिवः**) प्रकाशस्य (**दुहितः**) कन्येव वर्त्तमाने (**इषयध्यै**) गन्तुम्॥४॥

अन्वयः-हे स्वभानो पृथुयामन्नृष्वे! त्वमनया भार्यया सह रयिमा वह नोऽवापइव दुःखानि तरसि, अवाते पर्वतेषु सुपथा गच्छसि या ते सुगा स्त्री वा हे दिवो दुहितरिव वर्त्तमाने स्त्रि! त्वं पतिमिषयध्यै उतापि ते पतिर्हृद्यो भवेत् सा त्वं नः सुपथा सुखमा वह॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सुनीतयो राजानः पर्वतेष्वपि सुमार्गान्निर्माय सर्वान् पथिकान् सुखयन्ति यथोषा मार्गान् प्रकाशयति तथैवोत्तमाः परस्परं प्रसन्नाः स्त्रीपुरुषा धर्ममार्गं संशोध्य परोपकारं प्रकाशयन्ति॥४॥

पदार्थः-हे (**स्वभानो**) अपनी दीप्तियुक्त (**पृथुयामन्**) बहुत पदार्थों की प्राप्ति करानेवाले (**ऋष्वे**) महान् गुणयुक्त विद्वन्! आप इस स्त्री के साथ (**रयिम्**) लक्ष्मी को (**आ, वह**) प्राप्त कराइये और (**नः**) हम लोगों की रक्षा करिये तथा (**अपः**) जलों के समान दुःखों को (**तरसि**) तरते अर्थात् उनसे अलग होते हो और (**अवाते**) निर्वात होने से (**पर्वतेषु**) पर्वतों में जैसे सुपथ से जाते हो तथा जो (**ते**) तुम्हारी (**सुगा**) सुन्दरता से जाने योग्य स्त्री वा हे (**दिवः**) प्रकाश की (**दुहितः**) कन्या के समान वर्त्तमान स्त्री! तू पति को (**इषयध्यै**) प्राप्त होने योग्य हो (**उत**) और तेरा पति तेरे मन का प्रिय हो (**सा**) तू हम लोगों को (**सुपथा**) अच्छे मार्ग से सुख प्राप्त करा॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे अच्छी नीति वाले राजजन पर्वतों में भी अच्छे मार्गों को बनाकर सब मार्ग चलने वालों को सुखी करते हैं वा जैसे उषा (प्रभातवेला) मार्गों को प्रकाशित करती है, वैसे ही उत्तम परस्पर प्रसन्न स्त्री पुरुष धर्ममार्ग का संशोधन कर परोपकार का प्रकाश कराते हैं॥४॥

पुनस्तौ स्त्रीपुरुषौ कथं वर्त्तेयातामित्याह॥

फिर वे स्त्री-पुरुष कैसे वर्त्ताव वर्त्तें, इस विषय को कहते हैं॥

सा वह योक्षभिरवातोषो वरं वहसि जोषमनु।

त्वं दिवो दुहितर्या ह देवी पूर्वहूतौ मंहना दर्शता भूः॥५॥

सा। आ। वह। या। उक्षऽभिः। अवाता। उषः। वरम्। वहसि। जोषम्। अनु। त्वम्। दिवः। दुहितः। या। ह। देवी। पूर्वऽहूतौ। मंहना। दर्शता। भूः॥५॥

पदार्थः-(**सा**) (**आ**) (**वह**) समन्तात्प्राप्नोतु (**या**) (**उक्षभिः**) वीर्यसेचकैः (**अवाता**) वायुविरहा (**उषः**) उषर्वद्वर्त्तमाने (**वरम्**) श्रेष्ठं पतिम् (**वहसि**) प्राप्नोषि (**जोषम्**) प्रीतम् (**अनु**) (**त्वम्**) (**दिवः**)

सूर्यस्य **(दुहितः)** कन्येव वर्त्तमाना **(या)** **(ह)** किल **(देवी)** विदुषी **(पूर्वहूतौ)** पूर्वेषां सत्कर्त्तव्यानां वृद्धानामाह्वाने **(मंहना)** पूजनीया **(दर्शता)** द्रष्टव्या **(भूः)** भवेः॥५॥

अन्वयः-हे दिवो दुहितरुषर्वद्वर्त्तमाने भद्रानने! याऽवातोक्षभिर्युक्तं वरं जोषमनु त्वं वहसि सा मां पतिमावह या ह पूर्वहूतौ मंहना दर्शता देवी त्वं भूः सा मम प्रिया भव॥५॥

भावार्थः-यथोषा रात्रिमनुवर्त्तमाना नियमेन स्वकृत्यं करोति तथैव नियता सती स्त्री स्वगृहकृत्यानि कुर्यात्। ब्रह्मचर्यानन्तरं हृद्यं पतिमूढ्वा प्रसन्ना सती पतिं सततं प्रसादयेत्। एवमेव पतिरपि तामनुव्रतां सदैवानन्दयेत्॥५॥

पदार्थः-हे **(दिवः)** सूर्य की **(दुहितः)** कन्या के तुल्य तथा **(उषः)** उषा प्रभातवेला के समान वर्त्तमान श्रेष्ठ मुख वाली! **(या)** जो **(अवाता)** वायुरहित **(उक्षभिः)** वीर्यसेचकों से युक्त **(वरम्)** श्रेष्ठ **(जोषम्)** प्रीति से चाहे हुए पति को **(अनु)** अनुकूलता से **(त्वम्)** तू **(वहसि)** प्राप्त होती **(सा)** वह मुझ पति को **(आ, वह)** सब ओर से प्राप्त हो **(या)** जो **(ह)** ही **(पूर्वहूतौ)** पूर्व सत्कार करने योग्यों के आह्वान के निमित्त **(मंहना)** सत्कार करने और **(दर्शता)** देखने योग्य **(देवी)** विदुषी तू **(भूः)** हो सो मेरी प्रिया स्त्री हो॥५॥

भावार्थः-जैसे उषा रात्रि के अनुकूल वर्त्तमान नियम से अपने काम को करती है, वैसे ही नियमयुक्त स्त्री अपने घर के कामों को करे तथा ब्रह्मचर्य के अनन्तर अपने मन के प्यारे पति को विवाह कर प्रसन्न होती हुई पति को निरन्तर प्रसन्न करे, ऐसे ही पति भी उस अनुकूल आचरण करने वाली को सदैव आनन्दित करे॥५॥

पुनस्ते स्त्रीपुरुषाः परस्परं कथं वर्त्तेरन्नित्याह॥

फिर वे स्त्री-पुरुष परस्पर कैसे वर्त्तें, इस विषय को कहते हैं॥

उत्ते वयश्चिद्वसतेरपप्तन्नरश्च ये पितुभाजो व्युष्टौ।
अमा सते वहसि भूरि वाममुषो देवि दाशुषे मर्त्याय॥६॥५॥

उत्। ते। वयः। चित्। वसतेः। अपप्तन्। नरः। च। ये। पितुऽभाजः। विऽउष्टौ। अमा। सते। वहसि। भूरि। वामम्। उषः। देवि। दाशुषे। मर्त्याय॥६॥

पदार्थः-**(उत)** **(ते)** तव **(वयः)** पक्षिणः **(चित्)** इव **(वसतेः)** **(अपप्तन्)** उड्डीयन्ते **(नरः)** नेतारः **(च)** **(ये)** **(पितुभाजः)** उत्तमान्नसेविनः **(व्युष्टौ)** विविधैर्गुणैः सेवमानायामुषसि **(अमा)** गृहाणि **(सते)** वर्त्तमानाय पत्ये **(वहसि)** प्राप्नोषि **(भूरि)** बहु **(वामम्)** प्रशस्तम् **(उषः)** उषर्वद्वर्त्तमाने **(देवि)** कमनीये **(दाशुषे)** सुखदात्रे **(मर्त्याय)** मनुष्याय॥६॥

अन्वयः-हे उषर्वद्वर्त्तमाने देवि! या त्वं व्युष्टौ सेवमानाय सते दाशुषे मर्त्याय पत्येऽमा भूरि वामं वहसि तस्यास्ते ये पितुभाजो नरस्ते च वसतेर्वयश्चित्ते सुरूपं दृष्ट्वोदपप्तंस्तेषां मध्यात् स्वयंवरविधानेन सर्वथा प्रसन्नं पतिं त्वं प्राप्नुयाः॥६॥

भावार्थ:-अत्रोपमालङ्कारः। ये वधूवरा स्वयंवरविवाहेन परस्परप्रसन्ना भूत्वा विवाहं कुर्वन्ति ते सूर्योषर्वद्गृहाश्रममुत्तमेनाचारेण सम्प्रकाश्य सदाऽऽनान्दिता भवन्तीति॥६॥ अत्रोषःसूर्यवत्स्त्रीगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥६॥

इति चतुःषष्टितमं सूक्तं पञ्चमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थ:-हे **(उषः)** उषा के समान वर्त्तमान **(देवि)** मनोहररूपवती जो तू **(व्युष्टौ)** विविध गुणों से सेवा करने योग्य प्रभातवेला में **(सते)** वर्त्तमान **(दाशुषे)** सुख देने वाले **(मर्त्याय)** मनुष्य पति के लिये **(अमा)** घरों को **(भूरि)** बहुत **(वामम्)** प्रशंसित कर्म जैसे हों, वैसे **(वहसि)** प्राप्त होती उस **(ते)** तेरे **(ये)** जो **(पितुभाजः)** उत्तम अन्न के सेवनेवाले **(नरः)** मनुष्य हैं, वे **(च)** भी **(वसतेः)** निवास के सम्बन्ध में **(वयः)** पक्षियों के **(चित्)** समान तेरे सुरूप को देख **(उत्, अपप्तन्)** उड़ते हैं, उनमें से स्वयंवर विधि से सर्वथा प्रसन्न पति को तू प्राप्त हो॥६॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो वधू और वर स्वयंवर विवाह से परस्पर प्रसन्न होकर विवाह करे हैं, वे सूर्य्य और उषा के समान गृहाश्रम को उत्तम आचार से अच्छे प्रकार प्रकाशित कर सर्वदा आनन्दित होते हैं॥६॥

इस सूक्त में उषा और सूर्य के तुल्य स्त्रियों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह चौसठवां सूक्त और पांचवां वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ षड्चस्य पञ्चषष्टितमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। उषा देवता। १ भुरिक्पङ्क्तिः। ५ स्वराट्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमस्स्वरः। २, ३ विराट्त्रिष्टुप्। ४, ६ निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः। धैवतः स्वरः॥

पुनस्सा कीदृशी भवेदित्याह॥

अब छः ऋचावाले पैसठवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में फिर वह स्त्री कैसी हो, इस विषय को कहते हैं॥

एषा स्या नो॑ दुहि॒ता दि॑वो॒जाः क्षि॒तीरु॒च्छन्ती॒ मानु॑षीरजीगः।
या भा॒नुना॒ रुश॑ता रा॒म्यास्वज्ञा॑यि ति॒रस्तम॑सश्चिद॒क्तून्॥१॥

ए॒षा। स्या। नः॒। दु॒हि॒ता। दि॒वः॒ऽजाः। क्षि॒तीः। उ॒च्छन्ती॑। मानु॑षीः। अ॒जी॒ग॒रिति॑। या। भा॒नुना॑। रुश॑ता। रा॒म्यासु॑। अज्ञा॑यि। ति॒रः। तम॑सः। चि॒त्। अ॒क्तून्॥ १॥

पदार्थः-(**एषा**) (**स्या**) सा (**नः**) अस्माकम् (**दुहिता**) (**दिवोजाः**) सूर्याज्जातेव (**क्षितीः**) पृथिवीः (**उच्छन्ती**) विवासयन्ती (**मानुषीः**) मनुष्याणामिमाः प्रजाः (**अजीगः**) जागरयति (**या**) (**भानुना**) किरणेन (**रुशता**) रूपेण (**राम्यासु**) रात्रिषु। **राम्येति रात्रिनाम।** (निघं०१.७) (**अज्ञायि**) ज्ञायते (**तिरः**) तिरश्चीने (**तमसः**) अन्धकारात् (**चित्**) (**अक्तून्**) रात्रीः॥१॥

अन्वयः-हे वरणीय! या रुशता भानुना सह वर्त्तमाना राम्यास्वज्ञायि तमसश्चिदक्तूँस्तिरस्करोति मानुषीः क्षितीरुच्छन्ती दिवोजा उषा इवाऽजीगो न एषा स्या दुहितास्ति त्वं गृहाण॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। या कन्या उषर्वद्विद्युद्वत्सुप्रकाशिता विद्याविनयहावभावैः पत्यादीनानन्दयति सूर्यो रात्रिं निवार्य सर्वाः प्रजाः प्रकाशयतीव गृहादविद्याऽन्धकारं निवार्य्य विद्यया सर्वान् प्रकाशयति सैव स्त्री वरा भवति॥१॥

पदार्थः-हे स्वीकार करने योग्य! (**या**) जो (**रुशता**) रूप से (**भानुना**) किरण के साथ वर्त्तमान (**राम्यासु**) रात्रियों में (**अज्ञायि**) जानी जाय (**तमसः**) अन्धकार से (**चित्**) भी (**अक्तून्**) रात्रियों को (**तिरः**) तिरस्कार करती तथा (**मानुषीः**) मनुष्यसम्बन्धी प्रजाओं को (**क्षितीः**) और पृथिवियों को (**उच्छन्ती**) विशेष निवास कराती हुई (**दिवोजाः**) सूर्य से उत्पन्न हुई उषा के समान (**अजीगः**) जगाती है (**नः**) हमारी (**एषा**) सो (**स्या**) यह (**दुहिता**) कन्या है, तुम ग्रहण करो॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो कन्या उषा के तुल्य वा बिजुली के तुल्य अच्छे प्रकाश को प्राप्त, विद्या-विनय और हाव-भाव, कटाक्षों से पति आदि को आनन्दित करती है वा जैसे सूर्य रात्रि को दूर कर सब प्रजा को प्रकाशित करता है, वैसे घर से अविद्या और अन्धकार निवार विद्या से सब को प्रकाशित करती है, वही उत्तम स्त्री होती है॥१॥

पुनस्ता स्त्रियः कीदृश्यो भवेयुरित्याह॥

फिर वे स्त्री कैसी हों, इस विषय को कहते हैं॥

वि तद्ययुररुणयुग्भिरश्वैश्चित्रं भान्त्युषसश्चन्द्ररथाः।

अग्रं यज्ञस्य बृहतो नयन्तीर्वि ता बाधन्ते तम ऊर्म्यायाः॥ २॥

वि। तत्। ययुः। अरुणयुक्ऽभिः। अश्वैः। चित्रम्। भान्ति। उषसः। चन्द्रऽरथाः। अग्रम्। यज्ञस्य। बृहतः। नयन्तीः। वि। ताः। बाधन्ते। तमः। ऊर्म्यायाः॥ २॥

पदार्थः-(**वि**) (**तत्**) (**ययुः**) प्राप्नुवन्ति (**अरुणयुग्भिः**) येऽरुणान् किरणान् योजयन्ति तैः (**अश्वैः**) महद्भिः किरणैः (**चित्रम्**) अद्भुतं जगत् (**भान्ति**) (**उषसः**) प्रभातवेलाः (**चन्द्ररथाः**) चन्द्रं सुवर्णमिव रथो रमणीयं स्वरूपं यासां ताः (**अग्रम्**) (**यज्ञस्य**) सङ्गन्तव्यस्य गृहस्थव्यवहारस्य (**बृहतः**) महतः (**नयन्तीः**) प्रापयन्त्यः (**वि**) (**ताः**) (**बाधन्ते**) (**तमः**) अन्धकारम् (**ऊर्म्यायाः**) रात्रेः। **ऊर्म्येति रात्रिनाम।** (निघं०१.७)॥ २॥

अन्वयः-हे पुरुषा! याः कन्या यथा चन्द्ररथा उषसोऽरुणयुग्भिरश्वैर्ययुस्तच्चित्रं वि भान्ति बृहतो यज्ञस्याऽग्रं नयन्तीरूर्म्यायास्तमो वि बाधन्ते ता इव वर्त्तमाना वधूर्यूयं प्राप्नुत॥ २॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे नराः! यूयं स्वसदृशगुणकर्मस्वभावा उषर्वदानन्दप्रदा विद्याविनयादिभिः सुशीला ब्रह्मचारिणीः कन्याः प्राप्य ताः सततमानन्द्य स्वयमानन्दं प्राप्नुत॥ २॥

पदार्थः-हे पुरुषो! जो कन्यायें जैसे (**चन्द्ररथाः**) जिनका सुवर्ण के समान रमणीयरूप है वे (**उषसः**) प्रभातवेलायें (**अरुणयुग्भिः**) जो अरुण किरणों की योजना करती हैं उन (**अश्वैः**) बड़ी-बड़ी किरणों से (**ययुः**) प्राप्त होती हैं (**तत्, चित्रम्**) उस आश्चर्य्य को (**वि, भान्ति**) विशेषता से प्रकाशित करती हैं तथा (**बृहतः**) महान् (**यज्ञस्य**) सङ्ग करने योग्य गृहस्थों के व्यवहार के (**अग्रम्**) अगले भाग को (**नयन्तीः**) प्राप्त कराती हुई (**ऊर्म्यायाः**) रात्रि के (**तमः**) अन्धकार को (**वि, बाधन्ते**) नष्ट करती हैं (**ताः**) उनके समान दुःखान्धकार को दूर करने वाली वधुओं को तुम प्राप्त होओ॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! तुम अपने सदृश गुण-कर्म-स्वभावयुक्त प्रभातवेलाओं के समान आनन्द देने वाली, विद्या और नम्रता आदि गुणों से सुशील, ब्रह्मचारिणी कन्याओं को प्राप्त होकर उनको निरन्तर आनन्द देकर आप आनन्द को प्राप्त होओ॥ २॥

पुनस्ताः कीदृश्यः स्युरित्याह॥

फिर वे कैसी हों, इस विषय को कहते हैं॥

श्रवो वाजमिषमूर्जं वहन्तीर्नि दाशुष उषसो मर्त्याय।

मघोनीर्वीरवत्पत्यमाना अवो धात विधते रत्नमद्य॥ ३॥

श्रवः। वाजम्। इषम्। ऊर्जम्। वहन्तीः। नि। दाशुषे। उषसः। मर्त्याय। मघोनीः। वीरऽवत्। पत्यमानाः। अवः। धात। विधते। रत्नम्। अद्य॥ ३॥

पदार्थः-(**श्रवः**) श्रवणम् (**वाजम्**) विज्ञानम् (**इषम्**) अन्नम् (**ऊर्जम्**) पराक्रमम् (**वहन्तीः**) प्रापयन्त्यः (**नि**) नितराम् (**दाशुषे**) विद्यादिशुभगुणदात्रे (**उषसः**) प्रभातवेलाः (**मर्त्याय**) मनुष्याय (**मघोनीः**) बहूत्तमधनाः (**वीरवत्**) शूरवीरतुल्याः (**पत्यमानाः**) प्राप्नुवन्त्यः (**अवः**) रक्षणम् (**धात**) धत्त (**विधते**) सेवमानाय (**रत्नम्**) रमणीयम् (**अद्य**) इदानीम्॥ ३॥

अन्वयः-हे पुरुषा! या उषस इव दाशुषे विधते मर्त्याय श्रवो वाजमिषमूर्जं वहन्तीर्मघोनीर्वीरवत्पत्यमानाः स्त्रियोऽद्य रत्नमवः प्राप्नुवन्ति ता यूयं नि धात॥ ३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! या उषर्वद्वर्त्तमानाः सत्यशास्त्रश्रवणादियुक्ता बलिष्ठा विचक्षणा धनैश्वर्यवर्धिका रक्षणे तत्परा विदुष्यः स्त्रियः स्युस्तासां मध्यात् स्वस्वप्रियां भार्यां सर्वे गृह्णन्तु॥ ३॥

पदार्थः-हे पुरुषो! जो (**उषसः**) प्रभातवेलाओं के समान (**दाशुषे**) विद्यादि शुभगुण देने वाले (**विधते**) सेवा करते हुए (**मर्त्याय**) मनुष्य के लिये (**श्रवः**) श्रवण (**वाजम्**) विज्ञान (**इषम्**) अन्न और (**ऊर्जम्**) पराक्रम को (**वहन्तीः**) प्राप्त कराती तथा (**मघोनीः**) बहुत धन वाली (**वीरवत्**) वीर के समान (**पत्यमानाः**) प्राप्त होती हुई स्त्रियाँ (**अद्य**) इस समय (**रत्नम्**) रमणीय (**अवः**) रक्षा को प्राप्त होतीं उनको तुम (**नि, धात**) निरन्तर धारण करो॥ ३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो उषा के समान वर्त्तमान, सत्यशास्त्र श्रवणादियुक्त, बलिष्ठ, विचक्षण (चित्र-विचित्र बुद्धियुक्त) धन और ऐश्वर्य्य की बढ़ाने वाली, रक्षा में तत्पर, विदुषी स्त्रियाँ हों, उनके बीच से अपनी-अपनी प्रिया भार्या को सब ग्रहण करें॥ ३॥

पुनस्ताः कीदृश्यो भवेयुरित्याह॥

फिर वे कैसी हों, इस विषय को कहते हैं॥

इदा हि वो विधते रत्नमस्तीदा वीराय दाशुष उषासः।

इदा विप्राय जरते यदुक्था नि ष्म मावते वहथा पुरा चित्॥ ४॥

इदा। हि। वः। विधते। रत्नम्। अस्ति। इदा। वीराय। दाशुषे। उषसः। इदा। विप्राय। जरते। यत्। उक्था। नि। स्म। माऽवते। वहथ। पुरा। चित्॥ ४॥

पदार्थः-(**इदा**) इदानीम् (**हि**) यतः (**वः**) युष्मान् (**विधते**) परिचरते (**रत्नम्**) रमणीयं धनम् (**अस्ति**) (**इदा**) इदानीम् (**वीराय**) बलिष्ठाय जनाय (**दाशुषे**) दात्रे (**उषासः**) उषर्वद्वर्त्तमानाः (**इदा**) इदानीम् (**विप्राय**) मेधाविने (**जरते**) स्तावकाय (**यत्**) यानि (**उक्था**) वचनानि (**नि**) नित्यम् (**स्म**) एव (**मावते**) मत्सदृशाय (**वहथा**) प्राप्नुथ। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। (**पुरा**) पुरस्तात् (**चित्**) अपि॥ ४॥

अन्वयः-हे वीरपुरुषा! यथोषासस्तथैव वर्त्तमाना भार्या यदि प्राप्नुत तदेदा हि वो विधते रत्नमस्तीदा दाशुषे वीरायेदा जरते विप्राय मावते पुरा चिद्यदुक्थाः सन्ति तानि स्म चिन्नि वहथा॥ ४॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! या उषर्वद्वर्त्तमाना भार्या युष्मान् प्राप्नुयुस्तर्ह्यस्मिन्नेव जन्मनि सर्वाणि सुखानि भवतः प्राप्नुयुरविरोधेन वर्त्तमानान् स्त्रीपुरुषान् सदैव यशांसि प्राप्नुवन्ति॥४॥

पदार्थ:-हे वीरपुरुषो! जैसे **(उषास:)** उषाकाल, उन्हीं के समान वर्त्तमान भार्याओं को जो प्राप्त होओ तो **(इदा)** अब **(हि)** ही **(व:)** तुमको **(विधते)** सेवन करते हुए के लिये **(रत्नम्)** रमणीय धन **(अस्ति)** विद्यमान है वा **(इदा)** अब **(दाशुषे)** देते हुए **(वीराय)** बलिष्ठ जन के लिये और **(इदा)** अब **(जरते)** स्तुति करने वाले **(विप्राय)** मेधावी पुरुष के लिये **(मावते)** जो मेरे सदृश है, उसके लिये **(पुरा)** पहिले **(चित्)** भी **(यत्)** जो **(उक्था)** कहने के योग्य वचन हैं **(स्म)** उन्हीं को **(नि, वहथा)** निवाहो॥४॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो उषा के समान वर्त्तमान भार्यायें तुम लोगों को प्राप्त हों तो इसी जन्म में सब सुख तुम लोगों को प्राप्त हों, क्योंकि अविरोध से वर्त्तमान स्त्री-पुरुषों को सदैव यश प्राप्त होते हैं॥४॥

पुन: सा कीदृशीत्याह॥

फिर वह कैसी है, इस विषय को कहते हैं॥

इदा हि त उषो अद्रिसानो गोत्रा गवामङ्गिरसो गृणन्ति।

व्य१र्केण बिभिदुर्ब्रह्मणा च सत्या नृणामभवद्देवहूतिः॥५॥

इदा। हि। ते। उषः। अद्रिसानो इत्यद्रिसानो। गोत्रा। गवाम्। अङ्गिरसः। गृणन्ति। वि। अर्केण। बिभिदुः। ब्रह्मणा। च। सत्या। नृणाम्। अभवत्। देवऽहूतिः॥५॥

पदार्थ:-**(इदा)** इदानीम् **(हि)** खलु **(ते)** तव **(उष:)** उषर्वद्वर्त्तमाने **(अद्रिसानो)** अद्रौ मेघे सानूनि यस्याः सा **(गोत्रा)** भूमिः। **गोत्रेति पृथिवीनाम।** (निघं०१.१) **(गवाम्)** किरणानाम् **(अङ्गिरस:)** वायव इव **(गृणन्ति)** स्तुवन्ति **(वि)** **(अर्केण)** सूर्येण **(बिभिदु:)** विदृणन्ति **(ब्रह्मणा)** परमेश्वरेण वेदेन वा **(च)** **(सत्या)** सत्सु पदार्थेषु साध्वी **(नृणाम्)** मनुष्याणाम् **(अभवत्)** भवति **(देवहूति:)** देवा विद्वांस आह्वयन्ति यया सा॥५॥

अन्वय:-हे अद्रिसानो उषर्वद्वर्त्तमाने वरे स्त्रि! यथा ते सम्बन्धिनोऽङ्गिरसोऽर्केण ब्रह्मणा च सूर्य्य गोत्रेव गवां सम्बन्धं वि गृणन्ति बिभिदुश्च तथेदा हि देवहूतिर्भवति नृणां मध्ये सत्याऽभवत्॥५॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा किरणा उषसा सूर्य्यप्रकाशस्य निमित्तमस्ति तथैव सर्वेषां सत्यानां व्यवहाराणां साधिका दुष्टानां व्यवहाराणां निरोधिकोषा वर्त्तते तथा सती स्त्री भवति॥५॥

पदार्थ:-**(अद्रिसानो)** मेघ के बीच शिखर=चोटी रखने वाली **(उष:)** प्रभातवेला के समान वर्त्तमान उत्तम स्त्री! जैसे **(ते)** तेरे सम्बन्धी **(अङ्गिरस:)** पवनों के तुल्य **(अर्केण)** सूर्य्य **(ब्रह्मणा)** परमेश्वर वा वेद से **(च)** भी सूर्य्य को **(गोत्रा)** पृथिवी के समान वा **(गवाम्)** किरणों के सम्बन्ध को

(वि, गृणन्ति) प्रस्तुत करते हैं और **(बिभिदुः)** विदीर्ण करते हैं, वैसे **(इदा)** अब **(हि)** ही **(देवहूतिः)** विद्वान् जन जिससे बुलाते हैं, वैसे तू प्रसिद्ध होती है सो तू **(नृणाम्)** मनुष्यों के बीच **(सत्या)** विद्यमान पदार्थों में उत्तम **(अभवत्)** होती है॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे किरणें प्रभातवेला से सूर्य्यप्रकाश की निमित्त हैं, वैसे ही सत्य व्यवहारों को सिद्ध करने और दुष्ट व्यवहारों को निरोध करने वाली उषा है, वैसी श्रेष्ठ स्त्री होती है॥५॥

पुनः सा किंवत् किं कृत्वा किं प्राप्नोतीत्याह॥

फिर वह किसके समान क्या करके किसको प्राप्त होती है, इस विषय को कहते हैं॥

उच्छा दिवो दुहितः प्रत्नवन्नो भरद्वाजवद्विधते मघोनि।

सुवीरं रयिं गृणते रिरीह्युरुगायमधि धेहि श्रवो नः॥६॥६॥

उच्छ। दिवः। दुहितरिति। प्रत्नऽवत्। नः। भरद्वाजऽवत्। विधते। मघोनि। सुऽवीरम्। रयिम्। गृणते। रिरीहि। उरुऽगायम्। अधि। धेहि। श्रवः। नः॥६॥

पदार्थः-**(उच्छा)** विवासय। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(दिवः)** विद्युतः **(दुहितः)** दुहितर्वद्वर्त्तमाने **(प्रत्नवत्)** प्रत्नं प्राचीनं कारणं विद्यते यस्मिंस्तद्वत् **(नः)** अस्मान् **(भरद्वाजवत्)** श्रोत्रवत् **(विधते)** विधानं कुर्वते **(मघोनि)** परमपूजितधनयुक्ते **(सुवीरम्)** शोभना वीरा यस्मात्तम् **(रयिम्)** धनम् **(गृणते)** प्रशंसकाय **(रिरीहि)** याचस्व। **रिरीहीति याच्ञाकर्मा।** (निघं०३.१९) **(उरुगायम्)** उरूणि गया अपत्यानि धनानि गृहाणि वा यस्मात्तम् **(अधि)** उपरि **(धेहि)** **(श्रवः)** अन्नं श्रवणं वा **(नः)** अस्मभ्यम्॥६॥

अन्वयः-हे दिवो दुहितर्वद्वर्त्तमाने मघोनि पत्नि! त्वं नो विधते प्रत्नवद्भरद्वाजवदुच्छा विवासय गृणते तव पत्ये नोऽस्मभ्यं सम्बन्धिभ्य उरुगायं श्रवः सुवीरं रयिं चाऽधि धेहि त्वं चास्मदेतद्रिरीहि॥६॥

भावार्थः-हे वीर पुरुष! यथा विद्युदीप्तिः सम्प्रयुक्तं सम्यञ्चैश्वर्य्यं जनयति तथैव शुभाचरणा पत्नी गृहसौभाग्यं वर्धयति यथाऽऽचार्याः प्रतिसमयं सुशिक्षां विद्यां च विद्यार्थिनो ग्राहयन्ति तथैव विद्वांसौ स्त्रीपुरुषौ स्वसन्तानानुचितसमये विद्यासुशिक्षे ग्राहयेतामिति॥६॥

अत्रोषर्वत्स्त्रीगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

○ इति पञ्चषष्टितमं सूक्तं षष्ठो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(दिवः)** बिजुली की **(दुहितः)** कन्या के समान वर्त्तमान **(मघोनि)** परमपूजित धनयुक्त पत्नी! तू **(नः)** हम लोगों का **(विधते)** विधान करने वाले के लिये **(प्रत्नवत्)** प्राचीन कारण जिसमें विद्यमान उसके वा **(भरद्वाजवत्)** कर्ण के तुल्य **(उच्छा)** विवास कराओं अर्थात् एक देश से दूसरे देश में वास कराओ **(गृणते)** और प्रशंसा करने वाले तेरे पति के लिये वा **(नः)** हम लोग जो सम्बन्धी हैं, उनके लिये **(उरुगायम्)** बहुत अपत्य धन वा गृह जिससे प्राप्त होते हैं उसे और **(श्रवः)** अन्न वा

श्रवण तथा **(सुवीरम्)** शोभन वीर जिससे उस **(रयिम्)** धन को **(अधि, धेहि)** अधिकता से धारण कर और तू मुझ से इस उक्त विषय को **(रिरीहि)** मांग॥६॥

भावार्थः-हे वीरपुरुष! जैसे बिजुली का प्रकाश संप्रयोग किया हुआ सत्य ऐश्वर्य को उत्पन्न करता है, वैसे ही शुभ आचरण करने वाली पत्नी घर का सौभाग्य बढ़ाती है और जैसे आचार्य प्रति समय सुन्दर शिक्षा और विद्या को विद्यार्थियों को ग्रहण कराते हैं, वैसे ही विद्वान् स्त्री पुरुष अपने सन्तानों को विद्या और सुन्दर शिक्षा ग्रहण करावें॥६॥

इस सूक्त में उषा के तुल्य स्त्रीजनों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह पैसठवां सूक्त और छठा वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथैकादशर्चस्य षट्षष्टितमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। मरुतो देवताः। १, ९, ११ निचृत्पङ्क्तिः। २, ५ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ३, ४ निचृत्पङ्क्तिः। ६, ७, १० भुरिक्पङ्क्तिः। ८ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

पुनः सा किंवत्किं करोतीत्याह॥

अब ग्यारह ऋचावाले छियासठवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में फिर वह किसके तुल्य क्या करती है, इस विषय को कहते हैं॥

वपुर्नु तच्चिकितुषे चिदस्तु समानं नाम धेनु पत्यमानम्।
मर्तेष्वन्यद्दोहसे पीपाय सकृच्छुक्रं दुदुहे पृश्निरूधः॥१॥

वपुः। नु। तत्। चिकितुषे। चित्। अस्तु। समानम्। नाम। धेनु। पत्यमानम्। मर्तेषु। अन्यत्। दोहसे। पीपाय। सकृत्। शुक्रम्। दुदुहे। पृश्निः। ऊधः॥१॥

पदार्थः-(**वपुः**) सुरूपं शरीरम् (**नु**) सद्यः (**तत्**) (**चिकितुषे**) विज्ञानवते (**चित्**) अपि (**अस्तु**) (**समानम्**) (**नाम**) सञ्ज्ञा (**धेनु**) वाक्। अत्र विभक्तिलोपः (**पत्यमानम्**) गम्यमानम् (**मर्तेषु**) मनुष्येषु (**अन्यत्**) (**दोहसे**) दोग्धुम् (**पीपाय**) आप्यायय (**सकृत्**) एकवारम् (**शुक्रम्**) आशुवीर्यकरम् (**दुदुहे**) पूरयति (**पृश्निः**) अन्तरिक्षम् (**ऊधः**) रात्रिः। **ऊध इति रात्रिनाम।** (निघं०१.७)॥१॥

अन्वयः-हे पत्नि! यथोधः पृश्निश्च सकृच्छुक्रं दुदुहे तथा धेन्विव त्वं मर्तेषु पत्यमानं पतिमन्यद्दोहसे पीपायैवं भूतायास्तव यच्चित्समानं वपुर्नाम च तच्चिकितुषे पत्येन्वस्तु॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे पुरुष! यथा रात्रिरारान्मायाऽन्तरिक्षं वर्षाभ्योऽस्ति तथैव समानगुणकर्मस्वभावा पत्नी पत्युः सुखाय कल्पते यथा धेनुर्वत्सान् पालयति तथा विदुषी माता सन्तानान्यथावद्रक्षितुं शक्नोति॥१॥

पदार्थः-हे पत्नि! जैसे (**ऊधः**) रात्रि और (**पृश्निः**) अन्तरिक्ष (**सकृत्**) एक वार (**शुक्रम्**) शीघ्र वीर्य करने वाले को (**दुदुहे**) परिपूर्ण करता है, वैसे (**धेनु**) वाणी के समान तू (**मर्त्तेषु**) मनुष्यों में (**पत्यमानम्**) जाते हुए पति को (**अन्यत्**) और को जैसे वैसे (**दोहसे**) पूर्ण करने को (**पीपाय**) बढ़ाओ ऐसी हुई जो तू उसका जो (**चित्**) निश्चित (**समानम्**) समान (**वपुः**) सुन्दररूप और (**नाम**) नाम है (**तत्**) वह (**चिकितुषे**) विज्ञानवान् पति के लिये (**नु, अस्तु**) शीघ्र हो॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे पुरुष! जैसे रात्रि और समीप में मायारूपी अन्तरिक्ष वर्षा से होता अर्थात् मेघ से ढपा हुआ अन्तरिक्ष अन्धकारयुक्त होता है, वैसे ही समान गुणकर्मस्वभावयुक्त स्त्री पति के सुख के लिये समर्थ होती है, जैसे गौ बछड़ों को पालती है, वैसे विदुषी माता सन्तानों की यथावत् रक्षा कर सकती है॥१॥

पुनर्विद्वांस कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर विद्वान् जन कैसे हों, इस विषय को कहते हैं॥

ये अ॒ग्नयो॒ न शोशु॑चन्नि॒धाना॒ द्विर्यत्त्रिर्म॒रुतो॑ वावृ॒धन्त॑।

अ॒रे॒णवो॑ हिर॒ण्यया॑स एषां सा॒कं नृ॒म्णैः पौंस्ये॑भिश्च भूवन्॥२॥

ये। अ॒ग्नयः॑। न। शोशु॑चन्। इ॒धा॒नाः। द्विः। यत्। त्रिः। म॒रुतः॑। व॒वृ॒धन्त॑। अ॒रे॒णवः॑। हि॒र॒ण्ययासः॑। ए॒षा॒म्। सा॒कम्। नृ॒म्णैः। पौंस्ये॑भिः। च॒। भू॒व॒न्॥२॥

पदार्थः-(**ये**) (**अग्नयः**) पावकाः (**न**) इव (**शोशुचन्**) शोधयन्ति (**इधानाः**) प्रकाशमानाः (**द्विः**) द्विवारम् (**यत्**) (**त्रिः**) त्रिवारम् (**मरुतः**) वायव इव (**वावृधन्त**) वर्धन्ते। अत्र **तुजादीनामि**त्यभ्यास्सदैर्घ्यम्। (**अरेणवः**) रेणुरहिताः (**हिरण्ययासः**) हिरण्येन विद्युत्तेजसा प्रचुराः (**एषाम्**) (**साकम्**) सह (**नृम्णैः**) धनैः (**पौंस्येभिः**) बलैः (**च**) (**भूवन्**) भवेयुः॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ये यतमाना हिरण्ययासोऽरेणवो मरुत इव नृम्णैः पौंस्येभिः साकं भूवन्नेषां सम्बन्धे यद्ये द्विस्त्रिर्वा वावृधन्त चेधाना अग्नयो न शोशुचंस्ते भाग्यशालिनो भूवन्॥२॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये पावकवत्पवित्राः पवित्रकरा वर्धमाना वर्धयितारो वायुवद्बलिष्ठाश्चक्रवर्त्तिनृपवच्छ्रिया सह वर्त्तमाना विद्वांसस्स्युस्तानेव यूयं भजत॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**ये**) जो यत्न करते हुए (**हिरण्ययासः**) बिजुली के तेज से बढ़े हुए (**अरेणवः**) धूलि जिनमें नहीं वे (**मरुतः**) पवनों के समान (**नृम्णैः**) धनों और (**पौंस्येभिः**) पुरुषार्थ बलों के (**साकम्**) साथ (**भूवन्**) हों (**एषाम्**) इनके सम्बन्ध में (**यत्**) जो (**द्विः**) दो वार वा (**त्रिः**) तीन वार (**वावृधन्त**) निरन्तर बढ़ते हैं (**च**) और (**इधानाः**) प्रकाशमान (**अग्नयः**) अग्नियों के (**न**) समान (**शोशुचन्**) निरन्तर शुद्ध करते, वे भाग्यशाली होते हैं॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो अग्नि के समान पवित्र हुए पवित्र करने वाले, वृद्धि को प्राप्त हुए, बढ़ाने वाले, पवन के समान बलिष्ठ और चक्रवर्त्ती राजा के समान लक्ष्मी के साथ वर्त्तमान विद्वान् हों, उन्हीं को तुम सेवो॥२॥

कयोः पुत्रा वरा जायन्त इत्याह॥

किन स्त्री-पुरुषों के पुत्र उत्तम होते हैं, इस विषय को कहते हैं॥

रु॒द्रस्य॒ ये मी॒ळ्हुषः॒ सन्ति॑ पु॒त्रा यांश्चो॒ नु दाधृ॑वि॒र्भर॑ध्यै।

वि॒दे हि मा॒ता म॒हो म॒ही षा सेत्पृश्नि॑ः सु॒भ्वे॒३॒॑ गर्भ॒माधा॑त्॥३॥

रु॒द्रस्य॑। ये। मी॒ळ्हुषः॑। सन्ति॑। पु॒त्राः। यान्। चो॒ इति॑। नु। दाधृ॑विः। भर॑ध्यै। वि॒दे। हि। मा॒ता। म॒हः। म॒ही। सा। सा। इत्। पृश्नि॑ः। सु॒ऽभ्वे॑। गर्भ॑म्। आ। अ॒धा॒त्॥३॥

पदार्थः-(**रुद्रस्य**) वायुवद्बलिष्ठस्य (**ये**) (**मीळ्हुषः**) वीर्यसेचकस्य (**सन्ति**) (**पुत्राः**) (**यान्**) (**च**) (**नु**) (**दाधृविः**) धर्त्री (**भरध्यै**) भर्त्तुम् (**विदे**) यो वेत्ति तस्मै (**हि**) खलु (**माता**) (**महः**) महान्तम् (**मही**) महती पूजनीया (**सा**) (**सा**) (**इत्**) एव (**पृश्निः**) अन्तरिक्षमिव सावकाशा (**सुभ्वे**) यः सुष्ठु भवति तस्मै (**गर्भम्**) (**आ**) (**अधात्**)॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ये मीळ्हुषो रुद्रस्य पुत्राः सन्ति याँश्चो भरध्यै दाधृविर्मही सा माताऽऽधात् सेत् पृश्निरिव सुभ्वे विदे हि महो गर्भं न्वधात्ताँस्ताञ्च यूयं भाग्युक्तान् विजानीत॥३॥

भावार्थः-त एव मनुष्या भद्रा जायन्ते येषां मातापितरौ कृतपूर्णब्रह्मचर्यौ भवेताम्॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**ये**) जो (**मीळ्हुषः**) वीर्य सींचने वाले (**रुद्रस्य**) वायु के समान बलिष्ठ के (**पुत्राः**) पुत्र (**सन्ति**) हैं (**यान्, चो**) और जिनको (**भरध्यै**) पोषण वा धारण करने के लिये (**दाधृविः**) धारण करने वाली (**मही**) जो महान् सत्कार करने योग्य है (**सा**) वह (**माता**) मान करने वाली (**आ, अधात्**) अच्छे प्रकार धारण करती है और (**सा, इत्**) वही (**पृश्निः**) अन्तरिक्ष के समान विस्तार वाली (**सुभ्वे**) जो सुन्दर प्रसिद्ध होता है उस (**विदे**) जानने वाले के लिये (**हि**) ही (**महः**) महान् (**गर्भम्**) गर्भ को (**नु**) शीघ्र अच्छे प्रकार धारण करती है उन सबको और उस माता रूप स्त्री को तुम सब भाग्ययुक्त जानो॥३॥

भावार्थः-वे ही मनुष्य कल्याणरूप होते हैं जिनके माता पिता ऐसे हैं कि जिन्होंने पूरा ब्रह्मचर्य किया हो॥३॥

के श्रेष्ठा जायन्त इत्याह॥

कौन श्रेष्ठ होते हैं, इस विषय को कहते हैं॥

न य ईषन्ते जनुषोऽया न्व१न्तः सन्तोऽवद्यानि पुनानाः।
निर्यद् दुह्रे शुचयोऽनु जोषमनु श्रिया तन्वमुक्षमाणाः॥४॥

न। ये। ईषन्ते। जनुषः। अया। नु। अन्तरिति। सन्तः। अवद्यानि। पुनानाः। निः। यत्। दुह्रे। शुचयः। अनु। जोषम्। अनु। श्रिया। तन्वम्। उक्षमाणाः॥४॥

पदार्थः-(**न**) निषेधे (**ये**) (**ईषन्ते**) हिंसन्ति (**जनुषः**) जन्मानि (**अया**) अनया (**नु**) (**अन्तः**) मध्ये (**सन्तः**) सत्पुरुषाः (**अवद्यानि**) निन्द्यानि कर्माणि (**पुनानाः**) पवित्रयन्तः (**निः**) निरन्तरम् (**यत्**) ये (**दुह्रे**) दुहन्ति (**शुचयः**) पवित्राः (**अनु**) (**जोषम्**) सेवनम् (**अनु**) (**श्रिया**) लक्ष्म्या (**तन्वम्**) शरीरम् (**उक्षमाणाः**) सेवमानाः॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ये जनुषो नेषन्तेऽया नीत्याऽन्तः सन्तोऽवद्यानि नु विहाय पुनाना भवन्ति यद्ये शुचयोऽनु जोषं श्रिया तन्वमुक्षमाणा अनु निर्दुह्रे ते धन्या भवन्ति॥४॥

भावार्थः-ये मनुष्या ब्रह्मचर्यादीनि व्रतानि विहाय मूढा भूत्वा सद्यो विवाहं कृत्वा नपुंसकवद्भूत्वा निर्बला रोगिणो लम्पटा नृशंसा दुर्व्यसनिनो भवन्ति ते शततमाद्वर्षात् पूर्वमेव शरीरं विनाश्य मनुष्यशरीरफलमप्राप्य दुर्भाग्यवशान्निष्फला जायन्ते॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(ये)** जो **(जनुषः)** जन्मों को **(न)** नहीं **(ईषन्ते)** नष्ट करते किन्तु **(अया)** इस नीति से **(अन्तः)** बीच में **(सन्तः)** सत्पुरुष हुए **(अवद्यानि)** निन्द्य कर्मों को **(नु)** शीघ्र छोड़ के **(पुनानाः)** शरीर को पवित्र करते हुए होते हैं और **(यत्)** जो **(शुचयः)** पवित्र जन **(अनु, जोषम्)** सेवा के अनुकूल **(श्रिया)** लक्ष्मी से **(तन्वम्)** शरीर को **(उक्षमाणाः)** सेवन करते हुए **(अनु, निर्, दुह्रे)** अनुक्रम से जन्म पूरा करते हैं, वे धन्य होते हैं॥४॥

भावार्थः-जो मनुष्य ब्रह्मचर्यादि व्रतों को छोड़ मूढ़ होकर, शीघ्र विवाह कर, नपुंसक के अर्थात् हीजड़ा के समान होकर, निर्बल, रोगी, और लम्पट, मनुष्यों के बीच जिसकी कहावत हो रही हो तथा दुष्टव्यसन जिसको होता है, ऐसे पुरुष सौ वर्ष से पहिले ही शरीर को नष्ट-भ्रष्ट कर मनुष्य शरीर के फल को न पाकर दुर्भाग्यवश से निष्फल होते हैं॥४॥

इह कतिविधाः पुरुषा भवन्तीत्याह॥

यहाँ कितने प्रकार के पुरुष होते हैं, इस विषय को कहते हैं॥

म॒क्षू न येषु॑ दो॒हसे॑ चि॒द॒या आ नाम॑ धृ॒ष्णु मारु॑तं॒ दधा॑नाः।
न ये स्तौ॒ना अ॒यासो॑ म॒ह्ना नू चि॑त्सु॒दानु॒रव॑ यासदु॒ग्रान्॥५॥७॥

म॒क्षू। न। येषु॑। दो॒हसे॑। चि॒त्। अ॒याः। आ। नाम॑। धृ॒ष्णु। मारु॑तम्। दधा॑नाः। न। ये। स्तौ॒नाः। अ॒यास॑ः। म॒ह्ना। नु। चि॒त्। सु॒ऽदानुः॑। अव॑। या॒स॒त्। उ॒ग्रान्॥५॥

पदार्थः-**(मक्षू)** क्षिप्रम्। अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। **(न)** निषेधे **(येषु)** मनुष्येषु **(दोहसे)** कामान् दोग्धुं प्रपूरयितुम् **(चित्)** अपि **(अयाः)** प्राप्नुवतः **(आ)** **(नाम)** **(धृष्णु)** दृढं प्रगल्भम् **(मारुतम्)** मनुष्याणामिदम् **(दधानाः)** **(न)** **(ये)** **(स्तौनाः)** चौराः। अत्र वर्णव्यत्ययेनैकारस्थान औकारः। **(अयासः)** गच्छन्तः **(मह्ना)** महत्त्वेन **(नू)** सद्यः। अत्रापि **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। **(चित्)** **(सुदानुः)** उत्तमदानः **(अव)** **(यासत्)** प्रापयेत् **(उग्रान्)** कठिनस्वभावान्॥५॥

अन्वयः-येषु चिद्दोहसे शक्तिर्नास्ति येऽया धृष्णु मारुतं नामाऽऽदधानाः सन्ति येऽयासः स्तौना न सन्ति यस्सुदानुस्तानुग्रान् मक्षु नाऽवयासत्तांश्चिन्मह्ना नू सत्कुर्यात् तान् यथावत्सर्वे विजानन्तु॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्या! अत्र द्विविधा मनुष्या एके शक्तिविद्याहीना दुष्टकर्मकारिणोऽपरे शक्तिमन्तः श्रेष्ठकर्मधारिणः सन्ति तत्र ये दुष्कृतान् न सत्कुर्वन्ति श्रेष्ठाँश्चार्चन्ति ते सद्यो महदिष्टं सुखं लभन्ते॥५॥

पदार्थः-**(येषु)** जिन मनुष्यों में **(चित्)** निश्चय से **(दोहसे)** कामों के पूरे करने की शक्ति नहीं है वा जो **(अयाः)** प्राप्त होते हुए **(धृष्णु)** दृढ़ प्रगल्भ **(मारुतम्)** मनुष्यों के इस **(नाम)** प्रसिद्ध व्यवहार को

(आ, दधानाः) धारण करते हुए हैं वा **(ये)** जो **(अयासः)** चलते हुए **(स्तौनाः)** चोर **(न)** नहीं और जो **(सुदानुः)** उत्तम दान देने वाला **(उग्रान्)** कठिन स्वभाव वालों को **(मक्षू)** शीघ्र **(न)** न **(अव, यासत्)** प्राप्त करे उनका **(चित्)** शीघ्र **(मह्ना)** महत्त्व से **(नू)** शीघ्र सत्कार करे, उनको यथावत् सब जानें॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! इस जगत् में दो प्रकार के मनुष्य हैं- एक शक्ति और विद्या से हीन, दुष्ट कर्म करने वाले हैं, दूसरे शक्तिमान्, श्रेष्ठ कर्म धारण करने वाले हैं, उनमें जो दुष्कर्म करने वालों का सत्कार नहीं करते और श्रेष्ठों का सत्कार करते हैं, वे शीघ्र महान् चाहे हुए सुख को पाते हैं॥५॥

पुनर्मनुष्याः किं कृत्वा कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करके कैसे हों, इस विषय को कहते हैं॥

त इदुग्राः शवसा धृष्णुषेणा उभे युजन्त रोदसी सुमेके।

अध स्मैषु रोदसी स्वशोचिरामवत्सु तस्थौ न रोकः॥६॥

ते। इत्। उग्राः। शवसा। धृष्णुऽसेनाः। उभे इति। युजन्त। रोदसी इति। सुमेके इति सुऽमेके। अध। स्म। एषु। रोदसी। स्वऽशोचिः। आ। अमवत्ऽसु। तस्थौ। न। रोकः॥६॥

पदार्थः-**(ते)** **(इत्)** एव **(उग्राः)** तेजस्विनः **(शवसा)** बलेन **(धृष्णुषेणाः)** धृष्णुर्दृढाः सेना येषां ते **(उभे)** **(युजन्त)** युञ्जते **(रोदसी)** द्यावापृथिव्योः **(सुमेके)** सुखरूपे **(अध)** अथ **(स्म)** एव **(एषु)** **(रोदसी)** द्यावापृथिव्योः **(स्वशोचिः)** स्वं शोचिस्तेजो यस्य **(आ)** **(अमवत्सु)** अमाः प्रशस्तानि गृहाणि विद्यन्ते येषु **(तस्थौ)** तिष्ठति **(न)** निषेधे **(रोकः)** शब्दायमानः॥६॥

अन्वयः-ये धृष्णुसेनाः शवसोग्रा उभे सुमेके रोदसी युजन्ताऽध स्मैष्वमवत्सु रोदसी स्वशोचिरा तस्थौ न रोकोऽस्ति ते इत्सुखिनो जायन्ते॥६॥

भावार्थः-ये मनुष्या विद्युतः पृथिव्याश्च विद्यां गृहीत्वा दृढसेना जायन्ते तेषां निरोधं कर्तुं शत्रवो न शक्नुवन्ति य उत्तमेषु गृहेषु निवसन्ति ते प्रकाशितप्रज्ञा जायन्ते॥६॥

पदार्थः-जो **(धृष्णुषेणाः)** दृढ सेना वाले **(शवसा)** बल से **(उग्राः)** तेजस्वी **(उभे)** दोनों **(सुमेके)** सुन्दर रूपवाले **(रोदसी)** आकाश और पृथिवी को **(युजन्त)** युक्त होते हैं **(अध)** तदनन्तर **(स्म)** ही **(एषु)** इन **(अमवत्सु)** प्रशंसित गृह वालों में **(रोदसी)** आकाश और पृथिवी के बीच **(स्वशोचिः)** अपनी दीप्ति वाला विद्युत् अग्नि **(आ, तस्थौ)** अच्छे प्रकार स्थित है और **(न)** नहीं **(रोकः)** शब्दायमान है **(ते)** वे सब **(इत्)** ही सुखी होते हैं॥६॥

भावार्थः-जो मनुष्य बिजुली और पृथिवी की विद्या को लेकर दृढ़ सेनावाले होते हैं, उनको शत्रुजन रोक नहीं सकते तथा जो उत्तम घरों में निवास करते हैं, वे प्रकाशित बुद्धिवाले होते हैं॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अनेनो वो मरुतो यामो अस्त्वनश्वश्चिद्यमजत्यरथीः।
अनवसो अनभीशू रजस्तूर्वि रोदसी पथ्या याति साधन्॥७॥

अनेनः। वः। मरुतः। यामः। अस्तु। अनश्वः। चित्। यम्। अजति। अरथीः। अनवसः। अनभीशुः। रजःऽतूः। वि। रोदसी इति। पथ्याः। याति। साधन्॥७॥

पदार्थः-(**अनेनः**) अविद्यमानमेनः पापं यस्मिँस्तत् (**वः**) युष्माकम् (**मरुतः**) मनुष्याः (**यामः**) यान्ति यस्मिन्त्स यामः प्रहरः (**अस्तु**) (**अनश्वः**) अविद्यमाना अश्वा यस्य सः (**चित्**) अपि (**यम्**) (**अजति**) प्रक्षिपति (**अरथीः**) अविद्यमानरथः (**अनवसः**) अविद्यमानमवोऽन्नं यस्य सः। **अव इत्यन्ननाम।** (निघं०२.७) (**अनभीशुः**) अविद्यमानावभीशू बलयुक्तौ बाहू यस्य सः। **अभीशू इति बहुनाम।** (निघं०२.४) (**रजस्तूः**) यो रज उदकं तौति वर्धयति सः (**वि**) (**रोदसी**) द्यावापृथिव्योः (**पथ्याः**) पथिषु साध्वीर्गतीः (**याति**) गच्छति (**साधन्**) साध्नुवन्॥७॥

अन्वयः-हे मरुतो! वोऽनेनोऽस्तु यो याम इवाऽनश्वोऽरथीरनवसोऽनभीशू रजस्तूश्चिद्यमजति रोदसी साधन् पथ्या वि याति तं यूयं स्वीकुरुत॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यूयं पक्षपाताख्यं पापं विहाय निर्बलान् सततं रक्षित्वा भूगर्भविद्यां विद्युद्विद्यां च संसाध्य भूम्युदकान्तरिक्षस्थान् मार्गानुत्तमैर्यानैर्गत्वाऽऽगच्छत॥७॥

पदार्थः-हे (**मरुतः**) मनुष्यो! (**वः**) तुम्हारा चलन (**अनेनः**) निष्पाप (**अस्तु**) हो और (**यामः**) जिसमें जाते हैं उस प्रहर के समान जो (**अनश्वः**) ऐसा है कि जिसके घोड़े नहीं हैं (**अरथीः**) रथ नहीं हैं (**अनवसः**) अन्न जिसके नहीं है और (**अनभीशुः**) बलयुक्त बाहू नहीं है तथा जो (**रजस्तूः**) जल को बढ़ाता है वह (**चित्**) निश्चय के साथ (**यम्**) जिसको (**अजति**) प्रक्षिप्त करता फेंकता है वा (**रोदसी**) आकाश और पृथिवी के बीच निरन्तर (**साधन्**) साधता हुआ (**पथ्याः**) मार्गों में उत्तम गतियों को (**वि, याति**) विशेषता से जाता है, उसको तुम स्वीकार करो॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! तुम पक्षपातरूपी पाप को छोड़ के निर्बलों की निरन्तर रक्षा कर भूगर्भविद्या और विद्युत् विद्या को अच्छे प्रकार सिद्ध कर भूमि और उदक तथा अन्तरिक्ष के मार्गों को उत्तम यानों से जाकर आओ॥७॥

कै रक्षणे कृते भयं न विद्यत इत्याह॥

किन से रक्षा किये जाने पर भय नहीं है, इस विषय को कहते हैं॥

नास्य वर्ता न तरुता न्वस्ति मरुतो यमवथ वाजसातौ।
तोके वा गोषु तनये यमप्सु स व्रजं दर्ता पार्ये अध द्योः॥८॥

न। अस्य। वर्ता। न। तरुता। नु। अस्ति। मरुतः। यम्। अवथ। वाजऽसातौ। तोके। वा। गोषु। तनये। यम्। अप्ऽसु। सः। व्रजम्। दर्ता। पार्ये। अध। द्योः॥८॥

पदार्थः-(**न**) (**अस्य**) (**वर्त्ता**) वर्त्तयिता (**न**) (**तरुता**) उल्लङ्घयिता (**नु**) सद्यः (**अस्ति**) (**मरुतः**) उत्तमा मनुष्याः (**यम्**) (**अवथ**) रक्षथ (**वाजसातौ**) (**तोके**) अपत्ये (**वा**) (**गोषु**) गवादिषु पशुषु पृथिवीविभागेषु वा (**तनये**) सुकुमारे (**यम्**) (**अप्सु**) उदकेषु (**सः**) (**व्रजम्**) मेघम् (**दर्त्ता**) विदारकः (**पार्ये**) पारयितव्ये (**अध**) अथ (**द्योः**) प्रकाशस्य॥८॥

अन्वयः-हे मरुतो विद्वांसो! यूयं वाजसातौ यं गोष्वप्सु तोके वा तनये यमवथास्य कोऽपि वर्त्ता नास्ति कोऽपि तरुता नास्ति सोऽध पार्य्ये द्योः व्रजमिव शत्रुसेनाया दर्त्ता न्वस्ति॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्या! येषां विद्वांसो रक्षकाः स्युस्तेषां कुतश्चिद्भयं नाप्नोति यथा सूर्याद् वृष्टिर्भूत्वा जगन्निर्भयं जायते तथैव धार्मिकविद्वत्सङ्गात् सर्वं राष्ट्रमभयं भवति॥८॥

पदार्थः-हे (**मरुतः**) विद्वानो! तुम (**वाजसातौ**) अन्नादि पदार्थों के विभाग में (**यम्**) जिसको (**गोषु**) गौ आदि पशु वा पृथिवी विभागों वा (**अप्सु**) जलों वा (**तोके**) सन्तान (**वा**) वा (**तनये**) सुकुमार इन सब में (**यम्**) जिसकी (**अवथ**) रक्षा करते हो (**अस्य**) इस व्यवहार का कोई (**वर्त्ता**) वर्त्ताव करने और कोई (**न**) नहीं है और कोई (**तरुता**) उक्त व्यवहार का उल्लङ्घन करने वाला (**न**) नहीं (**अस्ति**) है (**सः**) वह (**अध**) इसके अनन्तर (**पार्य्ये**) पार करने योग्य व्यवहार में (**द्योः**) प्रकाश के (**व्रजम्**) मेघ के समान शत्रुसेना को (**दर्त्ता, नु**) शीघ्र विदीर्ण करने वाला है॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिनके विद्वान् जन रक्षा करने वाले हों, उनको कहीं से भय नहीं प्राप्त होता, जैसे सूर्य से वर्षा होकर जगत् निर्भय होता है, वैसे ही धार्मिक विद्वानों के सङ्ग से समस्त राज्य निर्भय होता है॥८॥

पुनर्मनुष्याः कस्मै किं धृत्वा किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्य किसके लिये क्या धारण करके क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

प्र चित्रमर्कं गृणते तुराय मारुताय स्वतवसे भरध्वम्।
ये सहांसि सहसा सहन्ते रेजते अग्ने पृथिवी मखेभ्यः॥९॥

प्र। चित्रम्। अर्कम्। गृणते। तुराय। मारुताय। स्वऽतवसे। भरध्वम्। ये। सहांसि। सहन्ते। रेजते। अग्ने। पृथिवी। मखेभ्यः॥९॥

पदार्थः-(**प्र**) (**चित्रम्**) अद्भुतम् (**अर्कम्**) अन्नं वज्रं वा। **अर्क इत्यन्ननाम।** (निघं०२.७) **वज्र नाम च।** (निघं०२.२०) (**गृणते**) स्तुवते (**तुराय**) क्षिप्रकारिणे (**मारुताय**) मनुष्याणामस्मै (**स्वतवसे**) स्वं स्वकीयं तवो बलं यस्य तस्मै (**भरध्वम्**) (**ये**) (**सहांसि**) बलानि (**सहसा**) बलेनोत्साहेन वा (**सहन्ते**) (**रेजते**) कम्पते (**अग्ने**) विद्वन् (**पृथिवी**) भूमिः (**मखेभ्यः**) स-ग्रामादिभ्यः सङ्गन्तव्येभ्यः। **मख इति यज्ञनाम।** (निघं०३.१७)॥९॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! ये सहसा सहांसि सहन्ते तेभ्यो यूयं चित्रमर्कं प्र भरध्वम्। हे अग्ने विद्वन्! यथा मखेभ्यः पृथिवी रेजते तथा स्वतवसे तुराय मारुताय गृणते विदुषे चित्रमर्कं भर॥९॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा चलन्ती भूमिर्यज्ञसामग्रीं जनयति तथैव महद्भ्यः शूरवीरेभ्यो विद्वद्भ्योऽन्नादिकं शस्त्रास्त्रसमूहं च तद्विद्यां च सततमुन्नयतैवं सत्यसह्यानपि शत्रून् सोढुं पराजेतुं वा सामर्थं जायत इति वित्त॥९॥

पदार्थः-हे विद्वानो! **(ये)** जो **(सहसा)** बल वा उत्साह से **(सहांसि)** बलों को **(सहन्ते)** सहते हैं उनके लिये तुम **(चित्रम्)** अद्भुत **(अर्कम्)** अन्न वा वज्र को **(प्र, भरध्वम्)** अच्छे प्रकार धारण करो हे **(अग्ने)** विद्वन्! जैसे **(मखेभ्यः)** स-ग्राम आदि जो सङ्ग करने करने योग्य हैं उनके लिये **(पृथिवी)** भूमि **(रेजते)** कम्पित होती है तथा **(स्वतवसे)** अपने बल से युक्त **(तुराय)** शीघ्रता करने और **(मारुताय)** मनुष्यों के सहयोगी **(गृणते)** स्तुति करने वाले विद्वान् के लिये अद्भुत अन्न वा व्रज को धारण करो॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे चलती हुई भूमि यज्ञसामग्री को उत्पन्न करती है, वैसे ही बड़े-बड़े शूरवीर विद्वानों के लिये अन्नादि पदार्थ और अस्त्र-शस्त्र समूह तथा उनकी विद्या की निरन्तर उन्नति करो, ऐसा होने से योग्य शत्रुओं को सहने और पराजय करने का सामर्थ्य उत्पन्न होता है, यह जानो॥९॥

पुनः किंवत् कीदृशाः शूरवीराः सम्पादनीया इत्याह॥

फिर किसके तुल्य कैसे शूरवीर सिद्ध करने चाहियें, इस विषय को कहते हैं॥

त्विषीमन्तो अध्वरस्येव दिद्युत् तृषुच्यवसो जुह्वो३ नाग्नेः।

अर्चत्रयो धुनयो न वीरा भ्राजज्जन्मानो मरुतो अधृष्टाः॥१०॥

त्विषिऽमन्तः। अध्वरस्यऽइव। दिद्युत्। तृषुऽच्यवसः। जुह्वः। न। अग्नेः। अर्चत्रयः। धुनयः। न। वीराः। भ्राजत्ऽजन्मानः। मरुतः। अधृष्टाः॥१०॥

पदार्थः-**(त्विषीमन्तः)** विद्याविनयादिप्रकाशयुक्ताः **(अध्वरस्येव)** अहिंसामयस्य यज्ञस्येव **(दिद्युत्)** प्रकाशः **(तृषुच्यवसः)** तृषु क्षिप्रं ये च्यवन्ते गच्छन्ति **(जुह्वः)** जुहोति याभिस्ताः **(न)** इव **(अग्नेः)** पावकस्य **(अर्चत्रयः)** अर्चकाः **(धुनयः)** कम्पयन्तः **(न)** इव **(वीराः)** **(भ्राजज्जन्मानः)** भ्राजद्देदीप्यमानं जन्म येषां ते **(मरुतः)** वायुवद्बलिष्ठा मनुष्याः **(अधृष्टाः)** शत्रुभिरधर्षणीयाः॥१०॥

अन्वयः-येऽध्वरस्येव जुह्वो न तृषुच्यवसोऽग्नेरर्चत्रयो धुनयो न त्विषीमन्तो भ्राजज्जन्मानोऽधृष्टा मरुतो वीरा दिद्युदिव वर्त्तमानाः स्युस्तैरेव विजयं प्राप्नुवन्तु॥१०॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे राजादयो जना! यथाऽध्वरस्य मध्ये वर्त्तमाना ज्वाला सद्योऽन्तरिक्षाय गच्छति तथा शिक्षाया मध्ये वर्त्तमाना जनाः सद्यो विजयाय गन्तुं शक्नुवन्ति यथा जुहूभिरग्निः प्रदीप्यते तथा शिक्षासत्काराभ्यां वीरसेना प्रदीपनीया यथाऽग्नेर्ज्वालाः शब्दाश्च प्रभवन्ति तथैव भवतां सेनायाः प्रकाशाः शब्दाश्च महान्तो भवेयुः॥१०॥

पदार्थः-जो **(अध्वरस्येव)** अहिंसामय यज्ञ के समान वा **(जुह्वः)** जिनसे हवन करते उनके **(न)** समान **(तृषुच्यवसः)** जो शीघ्र जाने वाले **(अग्नेः)** अग्नि के **(अर्चत्रयः)** सत्कारकर्त्ता **(धुनयः)** कंपते हुए पदार्थों के **(न)** समान **(त्विषीमन्तः)** विद्या विनयादि के प्रकाश से युक्त **(भ्राजज्जन्मानः)** देदीप्यमान जन्म है जिनका तथा **(अधृष्टाः)** जो शत्रुओं से धृष्टता को नहीं प्राप्त होते **(मरुतः)** वे पवन के समान बली **(वीराः)** वीर **(दिद्युत्)** प्रकाश के समान वर्त्तमान हों, उन्हीं से विजय को प्राप्त होओ॥१०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे राजा आदि जनो! जैसे यज्ञ के बीच वर्त्तमान लपट शीघ्र ही अन्तरिक्ष को जाती है, वैसे शिक्षा के बीच वर्त्तमान जन शीघ्र विजय के लिये जा सकते हैं, जैसे जुहूओं से अग्नि प्रदीप्त की जाती है, वैसे शिक्षा और सत्कार से वीरों की सेना को प्रदीप्त करनी चाहिये, जैसे अग्नि की लपटें और शब्द होते हैं, वैसे ही तुम्हारी सेना के प्रकाश और शब्द बहुत हों॥१०॥

पुनर्मनुष्यैः कैः सह कीदृशो जनो राज्याऽधिकारी कर्त्तव्य इत्याह॥

फिर मनुष्यों को किनके साथ कैसा जन राज्य का अधिकारी करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

तं वृधन्तं मारुतं भ्राजदृष्टिं रुद्रस्य सूनुं हवसा विवासे।
दिवः शर्धाय शुचयो मनीषा गिरयो नाप उग्रा अस्पृध्रन्॥११॥८॥

तम्। वृधन्तम्। मारुतम्। भ्राजत्ऽऋष्टिम्। रुद्रस्य। सूनुम्। हवसा। आ। विवासे। दिवः। शर्धाय। शुचयः। मनीषाः। गिरयः। न। आपः। उग्राः। अस्पृध्रन्॥११॥

पदार्थः-**(तम्)** **(वृधन्तम्)** वर्धमानं वर्धयन्तं वा **(मारुतम्)** मरुतामिमम् **(भ्राजदृष्टिम्)** भ्राजद् ऋष्टिः सम्प्रेक्षणं यस्य तम् **(रुद्रस्य)** कृतचतुश्चत्वारिंशद्वर्षब्रह्मचर्य्यस्य **(सूनुम्)** पुत्रम् **(हवसा)** आदानेन **(आ)** **(विवासे)** सेवे **(दिवः)** कमनीयस्य **(शर्धाय)** बलाय **(शुचयः)** पवित्राः **(मनीषाः)** मनस्विनः **(गिरयः)** मेघाः **(न)** इव **(आपः)** जलानि **(उग्राः)** तेजस्विनः **(अस्पृध्रन्)** स्पर्द्धन्ताम्॥११॥

अन्वयः-ये शुचयो मनीषा उग्रा गिरय आपो न दिवः शर्धायास्पृध्रंस्तैस्सह वृधन्तं मारुतं भ्राजदृष्टिं रुद्रस्य तं सूनुं हवसाऽहमा विवासे॥११॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। ये मनुष्या मेघवदुन्नताः प्रजापालका जलवत्पोषकाः पवित्राशयास्तेजस्विनः कमनीयस्य बलस्य वर्धकाः स्युस्तैस्सह यदि राजा राज्यशासनं कुर्यात्तर्हि कुत्रापि पराजयोऽपकीर्त्तिश्च न जायेतेति॥११॥

अत्र मरुद्गुणवद्विद्वद्वीरपुरुषगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति षट्षष्टितमं सूक्तमष्टमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-जो **(शुचयः)** पवित्र **(मनीषाः)** मनस्वी अर्थात् उत्साही मन वाले **(उग्राः)** तेजस्वी **(गिरयः)** मेघ और **(आपः)** जलों के **(न)** समान **(दिवः)** मनोहर पदार्थ के **(शर्धाय)** बल के लिये **(अस्पृध्रन्)** स्पर्द्धा करें उनके साथ **(वृधन्तम्)** आप बढ़ते वा दूसरों को बढ़ाते हुए **(मारुतम्)** पवनों की

विद्या जानने वाले **(भ्राजदृष्टिम्)** प्रकाशमान दृष्टियुक्त **(रुद्रस्य)** किया है चवालीस वर्ष पर्य्यन्त ब्रह्मचर्य्य जिसने उसके **(तम्)** उस **(सुनूम्)** पुत्र को **(हवसा)** लेने के व्यवहार से मैं **(आ, विवासे)** सेवता हूं॥११॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जो मनुष्य मेघ के समान उन्नति करने, प्रजा के पालने, जल के समान पुष्टि करने वाले, पवित्र आशययुक्त, तेजस्वी और मनोहर बल के बढ़ाने वाले हों, उनके साथ यदि राजा राज्यशिक्षा करे तो कहीं पराजय और अपकीर्ति न हो॥११॥

इस सूक्त में पवनों के गुणों के समान विद्वानों और वीरों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह छियासठवां सूक्त और आठवां वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथैकादशर्चस्य सप्तषष्टितमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। मित्रावरुणौ देवते। १, २,९ स्वराट् पङ्क्तिः। १० भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ३, ७, ८, ११ निचृत्त्रिष्टुप्। ४, ५ त्रिष्टुप्। ६ विराट्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ मनुष्यैः केषां सत्कारः कर्त्तव्य इत्याह॥

अब ग्यारह ऋचावाले सड़सठवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में मनुष्यों को किनका सत्कार करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

विश्वेषां वः सतां ज्येष्ठतमा गीर्भिर्मित्रावरुणा वावृधध्यै।
सं या रश्मेव यमतुर्यमिष्ठा द्वा जनाँ असमा बाहुभिः स्वैः॥१॥

विश्वेषाम्। वः। सताम्। ज्येष्ठऽतमा। गीःऽभिः। मित्रावरुणा। ववृधध्यै। सम्। या। रश्माऽइव। यमतुः। यमिष्ठा। द्वा। जनान्। असमा। बाहुऽभिः। स्वैः॥१॥

पदार्थः-(**विश्वेषाम्**) सर्वेषाम् (**वः**) युष्माकम् (**सताम्**) वर्त्तमानानां सत्पुरुषाणां मध्ये (**ज्येष्ठतमा**) अतिशयेन ज्येष्ठौ (**गीर्भिः**) वाग्भिः (**मित्रावरुणा**) प्राणोदानाविवऽध्यापकोपदेशकौ (**वावृधध्यै**) अतिशयेन वर्धितुम् (**सम्**) (**या**) यौ (**रश्मेव**) किरणवद्रज्जुवद्वा (**यमतुः**) संयच्छतः (**यमिष्ठा**) अतिशयेन यन्तारौ (**द्वा**) द्वौ (**जनान्**) (**असमा**) अतुल्यौ सर्वेभ्योऽधिकौ (**बाहुभिः**) भुजैः (**स्वैः**) स्वकीयैः॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! विश्वेषां सतां वो या ज्येष्ठतमा यमिष्ठा असमा मित्रावरुणा वावृधध्यै जनान् रश्मेव गीर्भिः संयमतुर्द्वा स्वैर्बाहुभिर्जनान् रश्मेव सं यमतुस्तावध्यापकोपदेशकौ यूयं सदा सत्कुरुत॥१॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! ये विद्यासुशीलतादिगुणैः श्रेष्ठा अधर्मान्निवर्त्य धर्मे प्रवर्त्तयितारोऽध्यापनोपदेशाभ्यां सूर्यवत्प्रज्ञाप्रकाशका भवेयुस्तेषामेव सत्कारं सदैव कुरुत॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**विश्वेषाम्**) सब (**सताम्**) सज्जन जो (**वः**) आप लोग उनमें (**या**) जो (**ज्येष्ठतमा**) अतीव ज्येष्ठ (**यमिष्ठा**) अतीव नियम को वर्त्तने वाले (**असमा**) अतुल्य अर्थात् सब से अधिक (**मित्रावरुणा**) प्राण और उदान के समान अध्यापक और उपदेशक (**वावृधध्यै**) अत्यन्त बढ़ने के लिये (**जनान्**) मनुष्यों को (**रश्मेव**) किरण वा रज्जु के के समान (**गीर्भिः**) वाणियों से (**सम्, यमतुः**) नियमयुक्त करते हैं और (**द्वा**) दोनों सज्जन (**स्वैः**) अपनी (**बाहुभिः**) भुजाओं से मनुष्यों को किरण वा रस्सी के समान नियम में लाते हैं, उन अध्यापक और उपदेशकों का सदैव सत्कार करो॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो विद्या और उत्तम शील आदि गुणों से श्रेष्ठ, अधर्म से निवृत्त कर धर्म के बीच प्रवृत्त कराने वाले, अध्यापन और उपदेश से सूर्य के समान उत्तम बुद्धि के प्रकाश करने वाले हों, उन्हीं का सदा सत्कार करो॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इयं मद्वां प्र स्तृणीते मनीषोप प्रिया नमसा बर्हिरच्छ।
यन्तं नो मित्रावरुणावधृष्टं छर्दिर्यद्वां वरूथ्यं सुदानू॥२॥

इयम्। मत्। वाम्। प्र। स्तृणीते। मनीषा। उप। प्रिया। नमसा। बर्हिः। अच्छ। यन्तम्। नः। मित्रावरुणौ। अधृष्टम्। छर्दिः। यत्। वाम्। वरूथ्यम्। सुदानू इति सुऽदानू॥२॥

पदार्थः-(**इयम्**) (**मत्**) मम सकाशात् (**वाम्**) युवयोः (**प्र**) (**स्तृणीते**) आच्छादयति प्राप्नोति वा (**मनीषा**) विद्यासुशिक्षायुक्ता प्रज्ञा (**उप**) (**प्रिया**) प्रियौ कमनीयौ (**नमसा**) सत्कारेणान्नाद्येन सह वा (**बर्हिः**) अतीवविशालम् (**अच्छ**) सम्यक् (**यन्तम्**) प्राप्नुवन्तम् (**नः**) अस्माकम् (**मित्रावरुणौ**) अध्यापकोपदेशकौ (**अधृष्टम्**) शत्रुभिरधर्षितम् (**छर्दिः**) गृहम् (**यत्**) (**वाम्**) युवयोः (**वरूथ्यम्**) वरूथे गृहे भवम् (**सुदानू**) शोभनानि दानानि ययोस्तौ॥२॥

अन्वयः-हे सुदानू प्रिया मित्रावरुणौ! वां नमसेयं मनीषा मत्प्र स्तृणीते यद्वां वरूथ्यं बर्हिरच्छ यन्तं नोऽधृष्टं छर्दिरुप स्तृणीते सा सर्वैः स- ह्या॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ययोः सङ्गेनास्मानुत्तमे प्रज्ञागृहे प्राप्नुतस्तौ सदैव यूयं मन्यध्वम्॥२॥

पदार्थः-हे (**सुदानू**) सुन्दर दान देने वालो! (**प्रिया**) मनोहर (**मित्रावरुणौ**) अध्यापक और उपदेशको! (**वाम्**) तुम दोनों की (**नमसा**) सत्कार वा अन्नादिकों के साथ (**इयम्**) यह (**मनीषा**) विद्या और उत्तम शिक्षा युक्त बुद्धि (**मत्**) मुझ से (**प्र, स्तृणीते**) अच्छे प्रकार सर्व विषयों को आच्छादित करती है तथा (**यत्**) जो (**वाम्**) तुम दोनों के (**वरूथ्यम्**) घर के बीच उत्पन्न हुए (**बर्हिः**) अतीव विशाल तथा (**अच्छ**) अच्छे प्रकार (**यन्तम्**) प्राप्त होते हुए और (**नः**) हमारे (**अधृष्टम्**) शत्रुओं की न धृष्टता को प्राप्त हुए (**छर्दिः**) घर को (**उप**) समीप से ढांपती है, वह सब को अच्छे प्रकार ग्रहण करने योग्य है॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिनके सङ्ग से हमको उत्तम बुद्धि और घर प्राप्त होते हैं, उनको सदैव तुम मानो॥२॥

पुनः कौ सततं सत्करणीयावित्याह॥

फिर कौन निरन्तर सत्कार करने योग्य हैं, इस विषय को कहते हैं॥

आ यातं मित्रावरुणा सुशस्त्युप प्रिया नमसा हूयमाना।
सं यावप्नःस्थो अपसेव जनाञ्छ्रुधीयतश्चिद्यतथो महित्वा॥३॥

आ। यातम्। मित्रावरुणा। सुऽशस्ति। उप। प्रिया। नमसा। हूयमाना। सम्। या। अप्नःऽस्थः। अपसाऽइव। जनान्। श्रुधिऽयतः। चित्। यतथः। महिऽत्वा॥३॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**यातम्**) आगच्छतम् (**मित्रावरुणा**) प्राणोदानवत्प्रियौ (**सुशस्ति**) सुष्ठु प्रशंसनम् (**उप**) (**प्रिया**) यौ सर्वान् प्रीणीतस्तौ (**नमसा**) सत्कारेण (**हूयमाना**) आहूयमानौ (**सम्**) (**यौ**) (**अप्नःस्थः**) अपत्यस्थः (**अपसेव**) कर्मणेव (**जनान्**) (**श्रुधीयतः**) आत्मनः श्रुधिमन्नमिच्छतः (**चित्**) अपि (**यतथः**) (**महित्वा**) महिम्ना॥३॥

अन्वयः-हे प्रिया मित्रावरुणा नमसा हूयमाना! युवां जनानुपा यातं सुशस्ति प्राप्नुतं यौ चिन्महित्वा यतथश्श्रुधीयतस्तावप्नःस्थोऽपसेवास्माञ्जनान् समुपायातम्॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यूयमध्यापकोपदेशकौ सदा सत्कारेणाहूय सम्पूज्य विद्यासत्योपदेशौ जगति प्रसारयत। हे अध्यापकोपदेशका! यूयं प्रयत्नेन मातापितृवन्मनुष्यान् सुशिक्ष्य विद्यावतः सर्वोपकारकान् सम्पादयत॥३॥

पदार्थः-हे (**प्रिया**) सब को तृप्त करने वाले (**मित्रावरुणा**) प्राण और उदान के समान प्रिय पुरुषो! (**नमसा**) सत्कार से (**हूयमाना**) बुलाते हुए तुम दोनों (**जनान्**) मनुष्य के (**उप, आ, यातम्**) समीप आओ तथा (**सुशस्ति**) सुन्दर प्रशंसा को प्राप्त होओ (**यौ**) जो (**चित्**) निश्चय से (**महित्वा**) बड़प्पन से (**यतथः**) यत्न करते हैं वा (**श्रुधीयतः**) अपने अन्न की इच्छा करते हैं, वे दोनों (**अप्नःस्थः**) सन्तानों में ठहरने वाला (**अपसेव**) कर्म से जैसे वैसे हम लोगों को (**सम्**) प्राप्त होवें॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! तुम अध्यापक और उपदेशकों को सदा सत्कार से बुलाकर उनका सत्कार कर विद्या और सत्योपदेश को संसार के बीच विस्तारो। हे अध्यापक और उपदेशको! तुम प्रयत्न से माता और पिता के समान मनुष्यों को उत्तम शिक्षा देकर विद्यावान् सर्वोपकार करने वालों को सिद्ध करो॥३॥

पुनः सर्वैर्मनुष्यैः कौ पूजनीयावित्याह॥

फिर सब मनुष्यों को कौन सत्कार करने योग्य हैं, इस विषय को कहते हैं॥

अश्वा न या वाजिना पूतबन्धू ऋता यद्गर्भमदितिर्भरध्यै।
प्र या महि महान्ता जायमाना घोरा मर्ताय रिपवे नि दीधः॥४॥

अश्वा। न। या। वाजिना। पूतबन्धू इति। ऋता। यत्। गर्भम्। अदितिः। भरध्यै। प्र। या। महि। महान्ता। जायमाना। घोरा। मर्ताय। रिपवे। नि। दीधरिति दीधः॥४॥

पदार्थः-(**अश्वा**) तुरङ्गौ महान्तौ जनौ वा (**न**) इव (**या**) यौ (**वाजिना**) बहुवेगविज्ञानयुक्तौ (**पूतबन्धू**) पूताः पवित्रा बन्धवो ययोस्तौ (**ऋता**) सत्याचारौ (**यत्**) यम् (**गर्भम्**) (**अदितिः**) माता (**भरध्यै**) भर्तुम् (**प्र**) (**या**) यौ (**महि**) (**महान्ता**) महान्तौ पूजनीयौ (**जायमाना**) उत्पद्यमानौ (**घोरा**) भयङ्करौ (**मर्ताय**) मनुष्याय (**रिपवे**) शत्रवे (**नि**) (**दीधः**) नितरां कारागारे निदधाते॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! या अश्वा न वाजिना पूतबन्धू ऋतादितिरिव महि यद्गर्भं भरध्यै प्रवर्त्तमानौ या महान्ता जायमाना रिपवे मर्त्ताय घोरा प्र णि दीधस्तौ स्वात्मवत् सत्कुरुत॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! ये कुलीना महापक्षा विद्वद्भ्यां मातापितृभ्यामुत्पन्नाः सुशिक्षिता महाशया मातृवज्जनाननुकम्पमाना अध्यापनोपदेशाभ्यां सर्वानुपकुर्वाणा दुष्टानां निरुन्धाना विद्वांसः स्युस्तेषामेव सेवा सङ्गस्तेभ्य एवोपदेशाऽध्ययनौ च सततं कुरुत॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(या)** जो **(अश्वा)** घोड़े वा महाशय जनों के **(न)** समान **(वाजिना)** बहुत वेग वा विज्ञानयुक्त **(पूतबन्धू)** पवित्र बन्धु वाले **(ऋता)** सत्य आचार के रखने वाले **(अदितिः)** माता के तुल्य **(महि)** महान् जन **(यत्)** जिस **(गर्भम्)** गर्भ को **(भरध्यै)** धारण करने को प्रवर्त्तमान वा **(या)** जो **(महान्ता)** महात्मा **(जायमाना)** उत्पन्न हुए **(रिपवे, मर्त्ताय)** शत्रुजन के लिये **(घोरा)** भयङ्कर **(प्र, णि, दीधः)** और कारागार में निरन्तर शत्रु जनों को डाल देते हैं, उसको अपने आत्मा के तुल्य सत्कार करो॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो कुलीन, जिनका महान् पक्ष, विद्वान् माता पिता से उत्पन्न हुए, उत्तम शिक्षायुक्त, महाशय, माता के तुल्य मनुष्यों पर कृपा करते, वा पढ़ाने और उपदेश करने से सब पर उपकार करते, तथा दुष्टों को रोकते हुए विद्वान् होते हैं, उन्हीं की सेवा, सङ्ग, उन्हीं से उपदेश और विद्या पढ़ना निरन्तर करो॥४॥

पुनर्मनुष्यैः के सत्कर्त्तव्या इत्याह॥

फिर मनुष्यों को कौन सत्कार करने योग्य हैं, इस विषय को कहते हैं॥

विश्वे यद्वां मंहना मन्दमानाः क्षत्रं देवासो अदधुः सजोषाः।

परि यद्भूथो रोदसी चिदुर्वी सन्ति स्पशो अदब्धासो अमूराः॥५॥९॥

विश्वे। यत्। वाम्। मंहना। मन्दमानाः। क्षत्रम्। देवासः। अदधुः। सऽजोषाः। परि। यत्। भूथः। रोदसी इति। चित्। उर्वी इति। सन्ति। स्पशः। अदब्धासः। अमूराः॥५॥

पदार्थः-**(विश्वे)** सर्वे **(यत्)** ये **(वाम्)** युवयोः **(मंहना)** सत्कर्त्तारः **(मन्दमानाः)** आनन्दन्तः प्राप्तसत्काराः स्तुवन्तो वा **(क्षत्रम्)** धनं राज्यं वा **(देवासः)** कामयमाना विद्वांसः **(अदधुः)** दधति **(सजोषाः)** समानप्रीतिसेविनः **(परि)** सर्वतः अपि **[(³ित्)** **(भूथः)** **(रोदसी)** **(चित्)** **(उर्वीः)** बहुपदार्थयुक्ते **(सन्ति)** **(स्पशः)** अविद्यान्धकारं बाधमाना विद्याप्रकाशं स्पर्शन्तः **(अदब्धासः)** अहिंसिता अहिंसका वा **(अमूराः)** मूढतादिदोषरहिताः॥५॥

अन्वयः-हे अध्यापकोपदेशकौ! यद्यौ युवामुर्वी रोदसी इव भूथस्तयोर्वा संगेन यद्ये मंहना मन्दमानाः सजोषाः स्पशोऽदब्धासोऽमूरा विश्वे देवासः सन्ति त एव चित् क्षत्रं पर्यदधुस्तौ तान् युष्मान् सर्वे वयं सततं सत्कुर्याम॥५॥

भावार्थः-त एवाप्ता विद्वांसः सन्ति येषामध्यापनोपदेशसङ्गाः सद्यः सफला जायन्ते तेषां सङ्गेन हिंसादिदोषरहिता विद्वांसो भूत्वा पक्षपातं विहाय सर्वान् प्राणिनः स्वात्मवत्सुखयन्ति॥५॥

पदार्थः-हे अध्यापक और उपदेशको! **(यत्)** जो तुम दोनों **(उर्वी)** बहुत पदार्थों से युक्त **(रोदसी)** प्रकाश और पृथिवी के समान विद्या और क्षमा से युक्त **(भूथः)** होते हो उन **(वाम्)** तुम्हारे सङ्ग से **(यत्)** जो **(मंहना)** सत्कार करने वाले **(मन्दमानाः)** आनन्द वा सत्कार को प्राप्त वा स्तुति करते **(सजोषाः)** एकसी प्रीति को सेवने वाले **(स्पशः)** अविद्यान्धकार का विनाश करने और विद्याप्रकाश का स्पर्श करने वाले **(अदब्धासः)** हिंसा को न प्राप्त और हिंसा न करने वाले **(अमूराः)** मूढ़तादि दोषरहित **(विश्वे, देवासः)** समस्त कामना करते हुए विद्वान् जन **(सन्ति)** हैं, वे ही **(चित्)** निश्चित **(क्षत्रम्)** धन वा राज्य को **(परि, अदधुः)** सब ओर से धारण करते हैं, उनका वा उन तुम लोगों को सब हम लोग निरन्तर सत्कार करें॥५॥

भावार्थः-वे ही आप्त विद्वान् जन हैं जिनका पढ़ाना, उपदेश और सङ्ग शीघ्र सफल होता है, जिनके संग से हिंसा आदि दोषरहित विद्वान् होकर पक्षपात को छोड़ सब प्राणियों को अपने आत्मा के तुल्य सुख देते हैं॥५॥

पुनः केऽत्र सङ्गन्तव्याः सुखवर्धकाश्च सन्तीत्याह॥

फिर कौन सङ्ग करने योग्य और सुख के बढ़ाने वाले हैं, इस विषय को कहते हैं॥

ता हि क्षत्रं धारयेथे अनु द्यून् दृंहेथे सानुमुपमादिव द्योः।

दृळ्हो नक्षत्र उत विश्वदेवो भूमिमातान्द्यां धासिनायोः॥६॥

ता। हि। क्षत्रम्। धारयेथे इति। अनु। द्यून्। दृंहेथे इति। सानुम्। उपमात्ऽइव। द्योः। दृळ्हः। नक्षत्रः। उत। विश्वदेवः। भूमिम्। आ। अतान्। द्याम्। धासिना। आयोः॥६॥

पदार्थः-**(ता)** तौ **(हि)** यतः **(क्षत्रम्)** राज्यं धनं वा **(धारयेथे)** **(अनु)** **(द्यून्)** दिवसान् **(दृंहेथे)** वर्धयथः **(सानुम्)** शिखरम् **(उपमादिव)** **(द्योः)** सूर्यस्य **(दृळ्हः)** **(नक्षत्रः)** यो न क्षीयते **(उत)** उत **(विश्वदेवः)** विश्वेषां सर्वेषां देवः प्रकाशकः **(भूमिम्)** **(आ)** **(अतान्)** समन्तादतेयुः प्रकाशयेयुः **(द्याम्)** कमनीयां विद्याम् **(धासिना)** अन्नेन **(आयोः)** जीवनस्य॥६॥

अन्वयः-हे अध्यापकोपदेशकौ! यौ हि ता अनु द्यून् क्षत्रं धारयेथे द्योरुपमादिव सानुं दृंहेथे ययोः सङ्गेन विश्वदेवो दृळ्ह उत नक्षत्रः सन् भूमिं द्यां प्राप्य धासिनाऽऽयोर्वर्धकोऽस्ति तौ तञ्च य आऽतांस्ते सततं सुखिनो जायन्ते॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्या! येऽध्यापकोपदेशकाः प्रतिदिनं सूर्यवद्विद्याव्यवहारं सम्प्रकाश्य राज्यं धनमायुश्च वर्धयन्ति सर्वान् सुखे धारयन्ति यान् प्राप्य सर्वे जना विद्वांसो जायन्ते तत्सङ्गं सततं कुरुत॥६॥

पदार्थः-हे अध्यापक और उपदेशको! जो **(हि)** जिस कारण से हैं **(ता)** वे तुम दोनों **(अनु, द्यून्)** प्रतिदिन **(क्षत्रम्)** राज्य वा धन को **(धारयेथे)** धारण करते हो तथा **(द्योः)** सूर्य की **(उपमादिव)**

उपमा से जैसे वैसे **(सानुम्)** शिखर को **(दृंहेथे)** बढ़ाते हो जिनके सङ्ग से **(विश्वदेव:)** सब का प्रकाश करने वाला **(दूळ्हः)** दृढ़ **(उत)** और **(नक्षत्र:)** जो नहीं नष्ट होता ऐसा होता हुआ **(भूमिम्)** भूमि और **(द्याम्)** मनोहर विद्या को प्राप्त होकर **(धासिना)** अन्न से **(आयो:)** जीवन को बढ़ाता है, उन पूर्वोक्त दोनों तथा उसको जो **(आ, अतान्)** सब ओर से प्रकाशित करें, वे निरन्तर सुखी होते हैं॥६॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जो अध्यापक और उपदेशक प्रतिदिन सूर्य के समान विद्याव्यवहार को सम्यक् प्रकाशित कर राज्य, धन और आयु को बढ़ाते, सब को सुख की धारणा कराते, जिनको प्राप्त होकर सब जन विद्वान् होते हैं, उनका सङ्ग निरन्तर करो॥६॥

पुन: के का इव मेधाविनौ विद्यार्थिनो धरन्तीत्याह॥

फिर कौन किसके समान मेधावी विद्यार्थियों को धारण करते हैं, इस विषय को कहते हैं॥

ता विग्रं धैथे जठरं पृणध्या आ यत्सद्म सभृतय: पृणन्ति।
न मृष्यन्ते युवतयोऽवाता वि यत्पयो विश्वजिन्वा भरन्ते॥७॥

ता। विग्रम्। धैथे इति। जठरम्। पृणध्यै। आ। यत्। सद्म। सऽभृतय:। पृणन्ति। न। मृष्यन्ते। युवतय:। अवाता:। वि। यत्। पय:। विश्वऽजिन्वा। भरन्ते॥७॥

पदार्थ:-**(ता)** तौ **(विग्रम्)** मेधाविनम्। **विग्र इति मेधाविनाम।** (निघं०१३.१५) **(धैथे)** धारयथ: **(जठरम्)** उदरस्थमग्निम् **(पृणध्यै)** सुखयितुम् **(आ)** **(यत्)** या: **(सद्म)** **(सभृतय:)** समाना भर्त्तारो यासां ता: **(पृणन्ति)** **(न)** निषेधे **(मृष्यन्ते)** सहन्ते **(युवतय:)** प्राप्तयुवावस्था: स्त्रिय: **(अवाता:)** पतीनप्राप्ता: **(वि)** **(यत्)** या: **(पय:)** उदकम् **(विश्वजिन्वा)** विश्वपोषक। अत्र **संहितायामिति** दीर्घ:। **(भरन्ते)**॥७॥

अन्वय:-हे अध्यापकोपदेशकौ! यथाऽवाता: सभृतयो युवतय: समानान् पतीन् भरन्ते ता नापृणन्त्यन्या: सपत्नीर्न मृष्यन्ते यद्या: सद्म पृणन्ति यद्या: पय इव वि पृणन्ति तथा यौ युवां जठरं पृणध्यै विग्रं धैथे। हे विश्वजिन्वा! त्वं ता तौ च सततं सेवस्व॥७॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कार:। यथा समानगुणकर्मस्वभावरूपा: स्त्री-पुरुषा अत्यन्तप्रीत्या विवाहं कृत्वा कदाचिन्न विरुध्यन्ति तथैव विद्वांसो विद्यार्थिनश्च न विद्विषन्त्येवं प्रेम्णा सह वर्त्तमानास्सर्वे सदाऽऽनन्दिता जायन्ते॥७॥

पदार्थ:-हे अध्यापक और उपदेशको! जैसे **(अवाता:)** पतियों को न प्राप्त हुई **(सभृतय:)** समान पतियों वाली **(युवतय:)** युवति स्त्रियाँ समान पतियों को **(भरन्ते)** धारण करतीं अर्थात् प्राप्त होतीं वे **(न)** नहीं **(आ, पृणन्ति)** पूरे सुख को प्राप्त होती क्योंकि और सौतें नहीं **(मृष्यन्ते)** सहती हैं **(यत्)** जो **(सदम्)** घर को सुखयुक्त करती हैं और **(यत्)** जो **(पय:)** जल के समान **(वि)** विविध प्रकार से सुख देती हैं तथा जो तुम दोनों **(जठरम्)** उदर में ठहरे हुए अग्नि को **(पृणध्यै)** सुखी करने के लिये **(विग्रम्)**

बुद्धिमान् पुरुष को **(धैथे)** धारण करते हो। हे **(विश्वजिन्वा)** संसार की पुष्टि करने वाले! आप उन स्त्रियों तथा **(ता)** उन दोनों की निरन्तर सेवो॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे समान गुण, कर्म, स्वभाव रूप स्त्री-पुरुष अत्यन्त प्रीति से विवाह कर कभी विरोध नहीं करते हैं, वैसे ही विद्वान् जन और विद्यार्थीजन विद्वेष नहीं करते हैं, ऐसे प्रेम के साथ वर्त्तमान सब सदैव आनन्दित होते हैं॥७॥

पुनः केषां सङ्गेन जना विद्वांसो भवेयुरित्याह॥

फिर किनके सङ्ग से जन विद्वान् हों, इस विषय को कहते हैं॥

ता जिह्वया सदमेदं सुमेधा आ यद्वां सत्यो अरतिर्ऋते भूत्।
तद्वां महित्वं घृतान्नावस्तु युवं दाशुषे वि चयिष्टमंहः॥ ८॥

ता। जिह्वया। सदम्। आ। इदम्। सुऽमेधाः। आ। यत्। वाम्। सत्यः। अरतिः। ऋते। भूत्। तत्। वाम्। महिऽत्वम्। घृतऽअन्नौ। अस्तु। युवम्। दाशुषे। वि। चयिष्टम्। अंहः॥ ८॥

पदार्थः-(**ता**) तौ (**जिह्वया**) वाचा (**सदम्**) सीदन्ति विद्वांसो यस्मिंस्तत्सत्यं वचः (**आ**) (**इदम्**) (**सुमेधाः**) उत्तमप्रज्ञः (**आ**) (**यत्**) यौ (**वाम्**) युवयोरुपदेशेन (**सत्यः**) सत्सु साधुः (**अरतिः**) सत्यमुपदेशं प्राप्तः सन् (**ऋते**) सत्ये धर्मे (**भूत्**) भवेत् (**तत्**) (**वाम्**) युवयोः (**महित्वम्**) महिमानम् (**घृतान्नौ**) बहुघृतान्नौ (**अस्तु**) (**युवम्**) (**दाशुषे**) दात्रे (**वि**) विगतार्थे (**चयिष्टम्**) चिनुतः (**अंहः**) पापम्॥८॥

अन्वयः-हे घृतान्नावध्यापकोपदेशकौ! वामुपदेशेन सुमेधा अरतिः सत्यो जिह्वयेदं सदं प्राप्य ऋत आ भूद्यद्यौ युवं दाशुषेंऽहो वि चयिष्टं तद्वां महित्वमस्तु ता वयं सततं सत्कुर्याम॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्या! येषां सकाशाद्यूयं विद्या प्राप्नुतोपदेशं वा गृह्णीत तान् धन्यवादादिना सततं सत्कुरुत येषां सङ्गेन मनुष्याः सत्याचाराः सुज्ञा जायन्ते त एव महाशयाः सन्ति॥८॥

पदार्थः-हे (**घृतान्नौ**) बहुत घृत और अन्न वाले अध्यापक और उपदेशक जनो! (**वाम्**) तुम दोनों के उपदेश से (**सुमेधाः**) उत्तम जिसकी बुद्धि वह (**अरतिः**) सत्य उपदेश को प्राप्त होता हुआ (**सत्यः**) सज्जनों में उत्तम जन (**जिह्वया**) वाणी से (**आ, इदम्, सदम्**) सब ओर से जिसमें विद्वान् जन स्थिर होते हैं, उस सत्य वचन को पाकर (**ऋते**) सत्य धर्म में (**आ, भूत्**) प्रसिद्ध होवे (**यत्**) जो (**युवम्**) आप दोनों (**दाशुषे**) दानशील पुरुष के लिये (**अंहः**) पाप को (**वि, चयिष्टम्**) विगत चयन करते हैं (**तत्**) वह (**वाम्**) तुम दोनों की (**महित्वम्**) महिमा (**अस्तु**) हो (**ता**) उन तुम दोनों का हम लोग निरन्तर सत्कार करें॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिनकी उत्तेजना से तुम लोग विद्या को प्राप्त होओ वा उपदेश ग्रहण करो उनका धन्यवाद आदि से निरन्तर सत्कार करो, जिनके सङ्ग से मनुष्य सत्य आचरण वाले उत्तम ज्ञाता होते हैं, वे ही महाशय हैं॥८॥

के विदुषां प्रिया अप्रिया वा भवन्तीत्याह॥

कौन विद्वानों के प्रिय वा अप्रिय होते हैं, इस विषय को कहते हैं॥

प्र यद्वां मित्रावरुणा स्पूर्धन् प्रिया धाम युवधिता मिनन्ति।

न ये देवास ओहसा न मर्ता अयज्ञसाचो अप्यो न पुत्राः॥९॥

प्र। यत्। वाम्। मित्रावरुणा। स्पूर्धन्। प्रिया। धाम। युवऽधिता। मिनन्ति। न। ये। देवासः। ओहसा। न। मर्ताः। अयज्ञऽसाचः। अप्यः। न। पुत्राः॥९॥

पदार्थः-(**प्र**) (**यत्**) ये (**वाम्**) युवयोः (**मित्रावरुणा**) प्राणोदानवद्वर्त्तमानौ (**स्पूर्धन्**) स्पर्द्धमानाः (**प्रिया**) प्रियाणि (**धाम**) दधति येषु तानि (**युवधिता**) युवयोर्हितानि (**मिनन्ति**) हिंसन्ति (**न**) निषेधे (**ये**) (**देवासः**) विद्वांसः (**ओहसा**) प्राप्तेन बलेन वेगन वा (**न**) निषेधे (**मर्त्ताः**) मनुष्याः (**अयज्ञसाचः**) ये यज्ञेन न सचन्ति सम्बध्नन्ति ते (**अप्यः**) अप्सु सत्कर्मसु भवः (**न**) इव (**पुत्राः**)॥९॥

अन्वयः-हे मित्रावरुणा! यद्ये स्पूर्द्धन् वां प्रिया धाम युवधिता न प्रमिणन्ति ये देवास ओहसाऽयज्ञसाचो मर्त्ताश्च न मिनन्ति तेऽप्यो न पुत्रा इव जायन्ते॥९॥

भावार्थः-ये मनुष्या अध्यापकोपदेशकानामप्रियं नाचरन्ति ते सत्पुत्रवद्भवन्ति ये चाऽप्रियमाचरन्ति ते शत्रुवज्जायन्ते॥९॥

पदार्थः-हे (**मित्रावरुणा**) प्राण और उदान के समान अध्यापक और उपदेशको! (**यत्**) जो (**स्पूर्द्धन्**) स्पर्द्धा करते हुए जन (**वाम्**) तुम दोनों के (**प्रिया**) प्रिय (**धाम**) धाम जिनमें स्थापन करते हैं उन (**युवधिता**) तुम दोनों का हित करने वालों को (**न**) न (**प्र, मिनन्ति**) नष्ट करते हैं वा (**ये**) जो (**देवासः**) विद्वान् जन (**ओहसा**) प्राप्तबल वा वेग से (**अयज्ञसाचः**) जो यज्ञ से सम्बन्ध नहीं करते वे (**मर्त्ताः**) मनुष्य (**न**) नहीं नष्ट करते हैं, वे (**अप्यः**) कर्मों में प्रसिद्ध के (**न**) समान और (**पुत्राः**) पुत्रों के समान होते हैं॥९॥

भावार्थः-जो मनुष्य अध्यापक और उपदेशकों का अप्रिय आचरण नहीं करते हैं, वे सत्पुत्रों के समान होते हैं और जो अप्रिय का आचरण करते हैं, वे शत्रुओं के तुल्य होते हैं॥९॥

पुनः के तिरस्करणीयाः सत्कर्त्तव्याश्चेत्याह॥

फिर कौन तिरस्कार करने योग्य और सत्कार करने योग्य हैं, इस विषय को कहते हैं॥

वि यद्वाचं कीस्तासो भरन्ते शंसन्ति के चिन्निविदो मनानाः।

आद्वां ब्रवाम सत्यान्युक्था नकिर्देवेभिर्यतथो महित्वा॥१०॥

वि। यत्। वाचम्। कीस्तासः। भरन्ते। शंसन्ति। के। चित्। निऽविदः। मनानाः। आत्। वाम्। ब्रवाम। सत्यानि। उक्था। नकिः। देवेभिः। यतथः। महिऽत्वा॥१०॥

पदार्थः-(**वि**) (**यत्**) ये (**वाचम्**) (**कीस्तासः**) मेधाविनः। **कीस्तास इति मेधाविनाम।** (निघं०३.१५) (**भरन्ते**) (**शंसन्ति**) (**के**) (**चित्**) अपि (**निविदः**) उत्तमा वाचः। **निविदिति वाङ्नाम।** (निघं०१.११) (**मनानाः**) मन्यमानाः (**आत्**) आनन्तर्ये (**वाम्**) युवाम् (**ब्रवाम**) अध्यापयेमोपदिशेम वा (**सत्यानि**) सत्सु अर्थेषु साधूनि (**उक्था**) वक्तुं श्रोतुमर्हाणि (**नकिः**) निषेधे (**देवेभिः**) विद्वद्भिः सह (**यतथः**) यथेथे। अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् (**महित्वा**) महिम्ना॥१०॥

अन्वयः-हे अध्यापकोपदेशकौ! यदि युवां महित्वा देवेभिस्सह विद्यावृद्धये नकिर्यतथस्तर्हि वां सत्यान्युक्था आद् ब्रवाम यद्ये कीस्तासो वाचं वि भरन्ते के चिन्मनाना मननं कुर्वाणा निविदः शंसन्ति तान् सर्वदा युवां पाठयतम्॥१०॥

भावार्थः-राज्ञा राजजनैः प्रजास्थैर्विद्वद्भिश्च के विद्वांसः प्रशासनीया ये निष्कपटत्वेन यथाशक्त्यध्यापनेन विद्याप्रचारं न कुर्य्युः। ये च प्रीत्या विद्याः प्राप्य सर्वत्र प्रचारयन्ति त एव सदैव सत्कर्त्तव्याः॥१०॥

पदार्थः-हे अध्यापक और उपदेशको! यदि तुम दोनों (**महित्वा**) महिमा से (**देवेभिः**) विद्वानों के साथ विद्यावृद्धि के लिये (**नकिः**) न (**यतथः**) यत्न करते हो तो (**वाम्**) तुम दोनों के प्रति हम लोग (**सत्यानि**) उत्तम पदार्थों में भी उत्तम (**उक्था**) कहने वा सुनने के योग्य विषयों को (**आत्, ब्रवाम**) पीछे कहें (**यत्**) जो (**कीस्तासः**) मेधावीजन (**वाचम्**) वाणी को (**वि, भरन्ते**) विशेषता से धारण करते हैं और (**के, चित्**) कोई (**मनानाः**) विचार करते हुए (**निविदः**) उत्तम वाणियों की (**शंसन्ति**) प्रशंसा करते हैं, उनको सर्वदा तुम पढ़ाओ॥१०॥

भावार्थः-राजा और राजजनों और प्रजास्थ विद्वानों के द्वारा कौन विद्वान् अच्छी शिक्षा देने योग्य हैं, जो निष्कपटता से अपनी शक्ति के अनुकूल पढ़ाने से विद्या प्रचार न करें। और जो प्रीति के साथ विद्याओं को पाकर सर्वत्र प्रचार करते हैं, वे ही सदा सत्कार करने योग्य हैं॥१०॥

पुनः के विद्वांसो भवन्तीत्याह॥

फिर कौन विद्वान् होते हैं, इस विषय को कहते हैं॥

अवोरित्था वां छर्दिषो अभिष्टौ युवोर्मित्रावरुणावस्कृधोयु।

अनु यद्गावः स्फुरानृजिप्यं धृष्णुं यद् रणे वृषणं युनजन्॥ ११॥ १०॥

अवोः। इत्था। वाम्। छर्दिषः। अभिष्टौ। युवोः। मित्रावरुणौ। अस्कृधोयु। अनु। यत्। गावः। स्फुरान्। ऋजिप्यम्। धृष्णुम्। यत्। रणे। वृषणम्। युनजन्॥ ११॥

पदार्थः-(**अवोः**) रक्षकयोः। अत्र **छान्दसो वर्णलोपो** वेति सलोपः। (**इत्था**) अस्माद्धेतोः (**वाम्**) युवयो (**छर्दिषः**) गृहस्य (**अभिष्टौ**) आभिमुख्येन यजनक्रियायाम् (**युवोः**) युवयोः (**मित्रावरुणौ**) वायुसूर्यवद्वर्त्तमानौ (**अस्कृधोयु**) य आत्मनः कृधु ह्रस्वत्वं नेच्छति। अत्र **सुपां सुलुगिति** सुलोपः। (**अनु**) (**यत्**) ये (**गावः**) किरणा धेनवो वा (**स्फुरान्**) स्फूर्त्तिमतः (**ऋजिप्यम्**) ऋजूनां पालके भवम् (**धृष्णुम्**) दृढं प्रगल्भं वा (**यत्**) यः (**रणे**) स- ग्रामे (**वृषणम्**) बलिष्ठम् (**युनजत्**) युञ्जन्॥११॥

अन्वयः-हे अध्यापकोपदेशकौ! यद्ये गावस्तान् स्फुरानृजिप्यं धृष्णुं वृषणं रणे कश्चिद्युनजन् सन् विजयते। हे मित्रावरुणाववोर्वां छर्दिषोऽभिष्टौ यद्यः प्रयतते युवोरस्कृधोय्वित्थाऽनुयतते तं सदा सत्कुर्यातम्॥११॥

भावार्थः-हे अध्यापकोपदेशका ये विद्यार्थिनो युष्माकं कार्य्यं स्वकार्य्यवज्जानन्ति त एव दीर्घायुषः प्रशस्तविद्या धार्मिकाः परोपकारिणो जायन्त इति॥११॥

अत्र प्राणोदानवदध्यापकोपदेशकगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति सप्तषष्टितमं सूक्तं दशमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे अध्यापक और उपदेशको! **(यत्)** जो **(गावः)** किरणें वा धेनु हैं उनको **(स्फुरान्)** स्फूर्त्ति वाले पदार्थों वा **(ऋजिप्यम्)** कोमल वा सरल पदार्थों के पालने वालों में हुए **(धृष्णुम्)** दृढ़ प्रगल्भ **(वृषणम्)** बलिष्ठ को **(रणे)** स-ाम में कोई **(युनजन्)** जोड़ता हुआ विजय को प्राप्त होता है, हे **(मित्रावरुणौ)** वायु और सूर्य्य के समान वर्त्तमान! **(अवोः)** रक्षा करने वाले **(वाम्)** तुम दोनों के **(छर्दिषः)** घर के **(अभिष्टौ)** सन्मुख यज्ञक्रिया में **(यत्)** जो प्रयत्न करता है तथा **(युवोः)** तुम दोनों के सम्बन्ध में **(अस्कृधोयु)** जो अपनी लघुता नहीं चाहता **(इत्था)** इस हेतु से **(अनु)** अनुकूलता से यत्न करता है, उसका सदैव सत्कार करो॥११॥

भावार्थः-हे अध्यापक और उपदेशको! जो विद्यार्थी जन तुम्हारे काम को अपने काम के समान जानते हैं, वे ही दीर्घ आयु वाले, प्रशंसित विद्यायुक्त, धार्मिक परोपकारी होते हैं॥११॥

इस सूक्त में प्राण और उदान के समान अध्यापक और उपदेशकों के गुणों का वर्णन होने से सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह सड़सठवां सूक्त और दशवां वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथैकादशर्चस्याष्टषष्टितमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। इन्द्रावरुणौ देवते। १, ११ त्रिष्टुप्। ६ निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः। धैवतः स्वरः। २ भुरिक् पङ्क्तिः। ३, ७, ८ स्वराट् पङ्क्तिः। ४ निचृत्पङ्क्तिः। ५ पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ९, १० निचृज्जगतीछन्दः। निषादः स्वरः॥

अथ विद्वद्भिः के सम्यगध्यापनीया इत्याह॥

अब ग्यारह ऋचा वाले अड़सठवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में विद्वानों को अच्छे प्रकार कौन पढ़ाने चाहियें, इस विषय को कहते हैं॥

श्रुष्टी वां यज्ञ उद्यतः सजोषा मनुष्वद् वृक्तबर्हिषो यजध्यै।
आ य इन्द्रावरुणाविषे अद्य महे सुम्नाय मह आववर्तत्॥१॥

श्रुष्टी। वाम्। यज्ञः। उत्ऽयतः। सऽजोषाः। मनुष्वत्। वृक्तऽबर्हिषः। यजध्यै। आ। यः। इन्द्रावरुणौ। इषे। अद्य। महे। सुम्नाय। महे। आऽववर्तत्॥१॥

पदार्थः-(**श्रुष्टी**) सद्यः (**वाम्**) युवयोः (**यज्ञः**) सङ्गमनीयः शिष्यः (**उद्यतः**) उद्योगी (**सजोषाः**) स्वात्मवदन्येषां प्रीत्या सेवकः (**मनुष्वत्**) मनुष्येण तुल्यः (**वृक्तबर्हिषः**) वृक्तं छेदितं बर्हिरुदकं येन तस्य। **बर्हिरित्युदकनाम।** (निघं०१.१३) (**यजध्यै**) यष्टुं सङ्गन्तुम् (**आ**) (**यः**) (**इन्द्रावरुणौ**) वायुविद्युताविवाऽध्यापकोपदेशकौ (**इषे**) विज्ञानायाऽन्नाय वा (**अद्य**) इदानीम् (**महे**) महते (**सुम्नाय**) सुखाय (**महे**) महते (**आववर्त्तत्**) समन्ताद्वर्त्तते॥१॥

अन्वयः-हे इन्द्रावरुणौ! य उद्यतस्सजोषा मनुष्वद्वृक्तबर्हिषो वां यज्ञ आ यजध्या अद्य महे सुम्नाय मह इषे श्रुष्ट्यावर्त्ततं युवामध्यापयेतम्॥१॥

भावार्थः-हे अध्यापकोपदेशकौ! ये भवतां सुखाय प्रयतमानाः पुरुषार्थिनः प्रीतिमन्त आशुकारिणो वर्त्तन्ते तान् पवित्राञ्जितेन्द्रियान् धार्मिकान् विद्यार्थिन सततं सत्यमुपदिशत॥१॥

पदार्थः-हे (**इन्द्रावरुणौ**) वायु और बिजुली के समान अध्यापक और उपदेशको! (**यः**) जो (**उद्यतः**) उद्योगी (**सजोषाः**) अपने आत्मा के तुल्य औरों का प्रीति से सेवन करता (**मनुष्यवत्**) मनुष्य के तुल्य (**वृक्तबर्हिषः**) संक्षोभित किया जल जिसने उसका और (**वाम्**) तुम्हारा (**यज्ञः**) सङ्ग करने योग्य शिष्य (**आ, यजध्यै**) अच्छे प्रकार सङ्ग करने को (**अद्य**) आज (**महे**) महान् (**सुम्नाय**) सुख वा (**महे**) बहुत (**इषे**) विज्ञान वा अन्न के लिये (**श्रुष्टी**) शीघ्र (**आववर्त्तत्**) अच्छे प्रकार वर्त्तमान है, उसको तुम दोनों पढ़ाओ॥१॥

भावार्थः-हे पढ़ाने और उपदेश करने वालो! जो आप लोगों के सुख के लिये प्रयत्न करते हुए पुरुषार्थी, प्रीतिमान्, शीघ्रकारी वर्त्तमान हैं; उन पवित्र, जितेन्द्रिय, धार्मिक विद्यार्थियों को निरन्तर सत्य का उपदेश करो॥१॥

पुन: केऽत्र राजजना उत्तमा: पूजनीयाश्चेत्याह॥

फिर कौन यहाँ राजजन उत्तम और सत्कार करने योग्य हैं, इस विषय को कहते हैं॥

ता हि श्रेष्ठा देवताता तुजा शूराणां शविष्ठा ता हि भूतम्।

मघोनां मंहिष्ठा तुविशुष्म ऋतेन वृत्रतुरा सर्वसेना॥ २॥

ता। हि। श्रेष्ठा। देवऽताता। तुजा। शूराणाम्। शविष्ठा। ता। हि। भूतम्। मघोनाम्। मंहिष्ठा। तुविऽशुष्मा। ऋतेन। वृत्रऽतुरा। सर्वऽसेना॥ २॥

पदार्थ:-**(ता)** तौ **(हि)** यत: **(श्रेष्ठा)** उत्तमौ **(देवताता)** देवताते सत्ये व्यवहारे यज्ञे **(तुजा)** दुष्टानां हिंसकौ **(शूराणाम्)** निर्भयानाम् **(शविष्ठा)** अतिशयेन बलवन्तौ **(ता)** तौ **(हि)** खलु **(भूतम्)** भवत: **(मघोनाम्)** धनाढ्यानाम् **(मंहिष्ठा)** अतिशयेन पूजनीयौ **(तुविशुष्मा)** बहुबलसेनायुक्तौ **(ऋतेन)** सत्याचरणेन **(वृत्रतुरा)** यौ वृत्राणां मेघवदुन्नतानां शत्रूणां तुरौ हिंसकौ **(सर्वसेना)** समग्रा: सेना ययोस्तौ॥ २॥

अन्वय:-हे मनुष्या! यौ हि देवताता श्रेष्ठा तुजा शूराणां शविष्ठा भूतं यौ हि मघोनां मध्ये मंहिष्ठा ऋतेन तुविशुष्मा वृत्रतुरा सर्वसेना सभासेनेशौ वर्त्तेते ता सत्कर्त्तव्यौ ता हि उत्तमाधिकारे स्थापनीयौ॥ २॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! ये सत्येन न्यायेन प्रजापालने प्रयतमाना: सर्वविद्या: सर्वोत्तमसेना दुष्टानां हिंसनेन श्रेष्ठानां धनाढ्यानां वीरपुरुषाणां च रक्षका: स्युस्ते धन्यवादार्हा: सन्ति॥ २॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! जो **(हि)** ही **(देवताता)** सत्यव्यवहार यज्ञ में **(श्रेष्ठा)** उत्तम **(तुजा)** दुष्टों की हिंसा करने वाले **(शूराणाम्)** निर्भय जनों में **(शविष्ठा)** अतीव बलवान् **(भूतम्)** होते हैं और जो **(हि)** निश्चय के साथ **(मघोनाम्)** धनाढ्यों के बीच **(मंहिष्ठा)** अतीव सत्कार करने योग्य **(ऋतेन)** सत्य आचरण से **(तुविशुष्मा)** बहुत बल और सेना से युक्त **(वृत्रतुरा)** जो मेघ के समान बढ़े हुए शत्रुओं का विनाश करने वाले **(सर्वसेना)** समग्र सेनाओं से युक्त सभा और सेनाधीश वर्त्तमान हैं **(ता)** वे सत्कार करने योग्य हैं और **(ता)** वे ही उत्तम अधिकार में स्थापन करने योग्य हैं॥ २॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जो सत्य न्याय से प्रजा की पालना करने में प्रयत्न करते हुए, सब प्रकार कि विद्या और सर्वोत्तम सेनाओं से युक्त, दुष्टों की हिंसा से श्रेष्ठ, धनाढ्य और वीर-पुरुषों की रक्षा करने वाले होवें, वे धन्यवाद के योग्य हैं॥ २॥

पुनस्तौ कीदृशावित्याह॥

फिर वे कैसे हैं, इस विषय को कहते हैं॥

ता गृणीहि नमस्येभि: शूषै: सुम्नेभिरिन्द्रावरुणा चकाना।

वज्रेणान्य: शवसा हन्ति वृत्रं सिषक्त्यन्यो वृजनेषु विप्र:॥ ३॥

ता। गृणीहि। नमस्येभिः। शूषैः। सुम्नेभिः। इन्द्रावरुणा। चकाना। वज्रेण। अन्यः। शवसा। हन्ति। वृत्रम्। सिसक्ति। अन्यः। वृजनेषु। विप्रः॥३॥

पदार्थः-(**ता**) तौ (**गृणीहि**) प्रशंस (**नमस्येभिः**) नमस्स्वन्नेषु भवैः (**शूषैः**) बलैः (**सुम्नेभिः**) सुखैः (**इन्द्रावरुणा**) वायुविद्युताविव (**चकाना**) कामयमानौ (**वज्रेण**) किरणसमूहेनेव शस्त्राऽस्त्रेण (**अन्यः**) सूर्यो विद्युद्वा (**शवसा**) बलेन (**हन्ति**) (**वृत्रम्**) मेघमिव शत्रुम् (**सिषक्ति**) सिञ्चति (**अन्यः**) वायुरिव (**वृजनेषु**) मार्गेषु बलेषु वा (**विप्रः**) मेधावी॥३॥

अन्वयः-हे विद्वन् विप्रस्त्वं ययोरन्यो वज्रेण शवसा वृत्रं हन्ति। अन्यो वृजनेषु सिषक्ति तेन्द्रावरुणेव सुम्नेभिश्चकाना शूषैर्नमस्येभिः सत्कृतौ गृणीहि॥३॥

भावार्थः-यौ सभासेनेशौ सूर्यवायुवत् प्रजापालकावुत्तमैः सैन्यैर्दुष्टनिवारकौ मेघवत् प्रजाः कामैः पूरयतस्तौ सर्वैः सत्कर्त्तव्यौ॥३॥

पदार्थः-हे विद्वान् जन (**विप्रः**) मेधावी बुद्धिमान्! आप जिनमें से (**अन्यः**) सूर्य वा बिजुली (**वज्रेणः**) किरण समूह के समान शस्त्रास्त्र और (**शवसा**) बल से (**वृत्रम्**) मेघ के समान शत्रु को (**हन्ति**) मारते हैं और जो (**अन्यः**) वायु के समान (**वृजनेषु**) मार्गों वा बलों में (**सिषक्ति**) सींचता है (**ता**) उन दोनों (**इन्द्रावरुणा**) वायु और बिजुली के समान (**सुम्नेभिः**) सुखों से (**चकाना**) कामना करते हुए (**शूषैः**) बलों और (**नमस्येभिः**) अन्नों के बीच सिद्ध हुए पदार्थों से सत्कार को प्राप्त हुओं की (**गृणीहि**) प्रशंसा करो॥३॥

भावार्थः-जो सभापति और सेनापति, सूर्य और वायु के समान प्रजा के पालने वाले, उत्तम सेनाजनों से दुष्टों को निवारने वाले, मेघों के समान प्रजाजनों को कामनाओं से पूरित करते हैं, वे सब से सत्कार करने योग्य हैं॥३॥

पुनस्तौ कैस्सह किं कुर्यातामित्याह॥

फिर वे किन के साथ क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

ग्नाश्च यन्नरश्च वावृधन्त विश्वे देवासो नरां स्वगूर्ताः।
प्रैभ्य इन्द्रावरुणा महित्वा द्यौश्च पृथिवि भूतमुर्वी॥४॥

ग्नाः। च। यत्। नरः। च। ववृधन्त। विश्वे। देवासः। नराम्। स्वऽगूर्ताः। प्र। एभ्यः। इन्द्रावरुणा। महिऽत्वा। द्यौः। च। पृथिवि। भूतम्। उर्वी इति॥४॥

पदार्थः-(**ग्नाः**) वाचः। **ग्नेति वाङ्नाम।** (निघं०१.११) (**च**) (**यत्**) ये (**नरः**) विद्वन्नायकाः (**च**) (**वावृधन्त**) सर्वतो वर्धन्ते (**विश्वे**) सर्वे (**देवासः**) (**नराम्**) मनुष्याणाम् (**स्वगूर्त्ताः**) स्वेन पराक्रमेणोद्यमिनः (**प्र**) (**एभ्यः**) (**इन्द्रावरुणा**) विद्युत्सूर्याविव (**महित्वा**) महिम्ना (**द्यौः**) (**च**) (**पृथिवि**) भूमिः (**भूतम्**) भवेताम् (**उर्वी**) बहुत्वे॥४॥

अन्वयः-यद्ये विश्वे देवासो नरश्च स्वगूर्त्ता नरां ग्नाः स्वकीयाश्च ग्नाः प्राप्य वावृधन्त प्रैभ्य इन्द्रावरुणोर्वी पृथिवि द्यौश्चेव वर्त्तमानौ महित्वा भूतं वर्धेते ते सर्वे मनुष्यैः सत्कर्त्तव्या सन्ति॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजन्! ये विद्याधर्मविनयैर्वर्धन्ते तैरुद्यमिभिः सहेमाः प्रजाः पालय॥४॥

पदार्थः-(**यत्**) जो (**विश्वे, देवासः**) समस्त विद्वान् जन (**नरः, च**) और विद्वानों के बीच अग्रगामी (**स्वगूर्त्ताः**) अपने पराक्रम से उद्यमी जन (**नराम्**) मनुष्यों की (**ग्नाः**) वाणी तथा अपनी (**च**) भी वाणियों को प्राप्त होकर (**वावृधन्त**) सब ओर से बढ़ते हैं (**प्र, एभ्यः**) उत्कर्षता से इनसे (**इन्द्रावरुणा**) बिजुली और सूर्य्य के समान वा (**उर्वी**) विस्तृत (**पृथिवि**) पृथिवी (**द्यौः, च**) और प्रकाश के समान वर्त्तमान (**महित्वा**) महिमा से (**भूतम्**) प्रसिद्ध होवें। वे सब जन मनुष्यों से सत्कार करने योग्य हैं॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजन्! जो विद्या, धर्म और विनय से बढ़ते हैं, उन उद्यमियों के साथ इन प्रजाजनों की पालना करो॥४॥

पुना राजसेनाजनाः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर राजसेनाजन क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

स इत्सुदानुः स्ववाँ ऋतावेन्द्रा यो वां वरुण दाशति त्मन्।

इषा स द्विषस्तरेद् दास्वान् वंसद् रयिं रयिवतश्च जनान्॥५॥११॥

सः। इत्। सुऽदानुः। स्वऽवान्। ऋतऽवा। इन्द्रा। यः। वाम्। वरुणा। दाशति। त्मन्। इषा। सः। द्विषः। तरेत्। दास्वान्। वंसत्। रयिम्। रयिऽवतः। च। जनान्॥५॥

पदार्थः-(**सः**) (**इत्**) एव (**सुदानुः**) सुष्ठुदाता (**स्ववान्**) स्वे आत्मीया बहवो विद्यन्ते यस्य सः (**ऋतावा**) य ऋतं सत्यं वनति भजति सः (**इन्द्रा**) सूर्यः (**यः**) (**वाम्**) युवयोः (**वरुण**) वायुः (**दाशति**) ददाति (**त्मन्**) आत्मनि (**इषा**) अन्नाद्येन (**सः**) (**द्विषः**) शत्रून् (**तरेत्**) (**दास्वान्**) दाता सन् (**वंसत्**) विभजेत् (**रयिम्**) धनम् (**रयिवतः**) बहुधनवतः (**च**) (**जनान्**)॥५॥

अन्वयः-हे इन्द्रावरुणेव वर्त्तमानौ सभासेनेशौ! वां यः सुदानुः स्ववानृतावा त्मन्नभयं दाशति यो दास्वानिषा द्विषस्तरेद् रयिवतो जनांश्च रयिं वंसत् स इत्सर्वोत्तमः स राजा भवितुमर्हति॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा सूर्य्यो वर्षयित्वा वायुश्च प्राणय्य सर्वान् प्राणिनोऽभयं कुरुतस्तथा ये स-ग्मे समुदितैर्लब्धस्य धनस्य यथावद्विभज्य षोडशांशं भृत्येभ्यो ददति तत्र ये योद्धारो जयेयुस्तेभ्यस्तस्मादपि षोडशांशं प्रयच्छन्ति त एव विजयिनौ भूत्वा परस्परस्मिन् प्रसन्ना भवन्ति॥५॥

पदार्थः-हे (**इन्द्रा, वरुण**) सूर्य्य और वायु के समान वर्त्तमान सभासेनाधीशो! (**वाम्**) तुम दोनों का (**यः**) जो (**सुदानुः**) उत्तम देने वाला (**स्ववान्**) जिसके अपने लोग बहुत विद्यमान हैं (**ऋतावा**) जो सत्य को भजता है वह (**त्मन्**) आत्मा में अभयपन (**दाशति**) देता है जो (**दास्वान्**) देने वाला होता हुआ

(इषा) अन्न आदि से **(द्विषः)** शत्रुजनों को **(तरेत्)** तरे और **(रयिवतः)** बहुधनवान् **(जनान्, च)** जनों को भी **(रयिम्)** धन का **(वंसत्)** विभाग करे **(सः, इत्)** वही सर्वोत्तम और **(सः)** वह राजा होने योग्य है॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे सूर्य्य वर्षा करा कर और वायु प्राण धारणा करा कर ये दोनों सब प्राणियों को निर्भय करते हैं, वैसे जो स- ाम के बीच अच्छे प्रकार सन्मुख हैं, उनसे पाये हुए धन का यथावत् विभाग कर सोलहवां भाग भृत्यों के लिये देते हैं तथा वहाँ स- ाम में जो योद्धा जीते उनके लिये उससे सोलहवां भाग देते हैं, वे ही विजयी होकर आपस में प्रसन्न होते हैं॥५॥

पुनः राजजनाः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर राजजन क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

यं युवं दाश्वध्वराय देवा रयिं धत्थो वसुमन्तं पुरुक्षुम्।
अस्मे स इन्द्रावरुणावपि ष्यात्प्र यो भनक्ति वनुषामशस्तीः॥६॥

यम्। युवम्। दाशुऽअध्वराय। देवा। रयिम्। धत्थः। वसुऽमन्तम्। पुरुऽक्षुम्। अस्मे इति। सः। इन्द्रावरुणौ। अपि। स्यात्। प्र। यः। भनक्ति। वनुषाम्। अशस्तीः॥६॥

पदार्थः-**(यम्)** प्रशस्तम् **(युवम्)** युवाम् **(दाश्वध्वराय)** दाशुर्देयोऽध्वरोऽहिंसामयो यज्ञो येन तस्मै **(देवा)** देवौ दातारौ **(रयिम्)** धनम् **(धत्थः)** धरतम् **(वसुमन्तम्)** बह्वैश्वर्यम् **(पुरुक्षुम्)** बह्वन्नम् **(अस्मे)** अस्मासु **(सः)** **(इन्द्रावरुणौ)** विद्युद्वायुवद्वर्त्तमानौ सभासेनेशौ **(अपि)** **(स्यात्)** **(प्र)** **(यः)** **(भनक्ति)** शत्रुसेना मर्दयति **(वनुषाम्)** राज्यस्य याचकानां शत्रूणाम् **(अशस्तीः)** अप्रशंसाः॥६॥

अन्वयः-हे इन्द्रावरुणाविव वर्त्तमानौ देवा! युवं दाश्वध्वरायास्मे यं रयिं वसुमन्तं पुरुक्षुं च जनं धत्थो यो वनुषामशस्तीः प्र भनक्ति सोऽप्यतिष्ठितः स्यात्॥६॥

भावार्थः-हे सभासेनेशौ! यदि भवन्तावुत्तमां प्रज्ञामतुलां श्रियं चास्मासु धरेतां तर्हि वयं सदैव विजयिनो भूत्वा विजयं राज्यमैश्वर्यं च वर्धयेम॥६॥

पदार्थः-हे **(इन्द्रावरुणौ)** बिजुली और वायु के समान वर्त्तमान सभासेनाधीशो! **(देवा)** देने वालो **(युवम्)** तुम दोनों **(दाश्वध्वराय)** जिससे अहिंसामय यज्ञ देने योग्य होता है उसके लिये **(अस्मे)** हम लोगों में **(यम्)** जिस प्रशस्त **(रयिम्)** धन **(वसुमन्तम्)** बहुत ऐश्वर्य्ययुक्त और **(पुरुक्षुम्)** बहुत अन्न वाले जन को **(धत्थः)** धारण करो **(यः)** जो **(वनुषाम्)** राज्य को मांगने वाले शत्रुओं की **(अशस्तीः)** अप्रशंसाओं को **(प्र, भनक्ति)** अच्छे प्रकार मर्दित करता है **(सः)** सो **(अपि)** ही अतीव स्थिर **(स्यात्)** हो॥६॥

भावार्थः-हे सभासेनाधीशो! जो तुम लोग उत्तम बुद्धि और अतुल लक्ष्मी को हम लोगों में धरो तो हम लोग सदैव विजयी होकर विजय, राज्य और ऐश्वर्य्य को बढ़ावें॥६॥

पुनः को राजाऽर्हो भवेदित्याह॥

फिर कौन राजा योग्य है, इस विषय को कहते हैं॥

उत नः सुत्रात्रो देवगोपाः सूरिभ्य इन्द्रावरुणा रयिः ष्यात्।

येषां शुष्मः पृतनासु साह्वान् प्र सद्यो द्युम्ना तिरते ततुरिः॥७॥

उत। नः। सुऽत्रात्रः। देवऽगोपाः। सूरिऽभ्यः। इन्द्राऽवरुणा। रयिः। स्यात्। येषाम्। शुष्मः। पृतनासु। साह्वान्। प्र। सद्यः। द्युम्ना। तिरते। ततुरिः॥७॥

पदार्थः-(**उत**) अपि (**नः**) अस्मभ्यम् (**सुत्रात्रः**) यस्सुष्ठु रक्षकान् रक्षति (**देवगोपाः**) यो देवान् विदुषो गोपायति (**सूरिभ्यः**) विद्वद्भ्यः (**इन्द्रावरुणा**) वायुविद्युद्वद् (**रयिः**) श्रीः (**स्यात्**) (**येषाम्**) (**शुष्मः**) बलयुक्तः सेनेशः (**पृतनासु**) शूरवीरसेनासु (**साह्वान्**) सोढा (**प्र**) (**सद्यः**) (**द्युम्ना**) धनानि यशांसि वा (**तिरते**) प्राप्नोति (**ततुरिः**) तरिता॥७॥

अन्वयः-हे इन्द्रावरुणेव वर्त्तमान राजन्! येषां पृतनासु शुष्मः साह्वान् ततुरिः सेनेशो वर्त्तते यः सद्यो द्युम्नाः प्र तिरते यस्य पराक्रमेण रयिः स्यादुत नः सूरिभ्यः सुत्रात्रो देवगोपा भवेत्स एव राजा भवितुमर्हति॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! ये सूर्य्यवत् प्रतापिनो वायुवद्बलिष्ठा विद्याविद्वद्विनयशूरवीररक्षकाः स्युस्ते सर्वत्र क्षिप्रं शत्रून् विजित्य यशस्विनो भूत्वा धनवन्तो जायन्ते॥७॥

पदार्थः-हे (**इन्द्रावरुणा**) वायु और बिजुली के समान वर्त्तमान प्रशंसित राजा! (**येषाम्**) जिन शूरवीरों की (**पृतनासु**) सेनाओं में (**शुष्मः**) बलवान् (**साह्वान्**) सहनशील (**ततुरिः**) उत्तीर्ण होने वाला सेनापति वर्त्तमान है। तथा जो (**सद्यः**) शीघ्र (**द्युम्ना**) धन और यशों को (**प्र, तिरते**) उत्तमता से प्राप्त होता है वा जिसके पराक्रम से (**रयिः**) लक्ष्मी (**स्यात्**) हो (**उत**) और (**नः**) हम लोग (**सूरिभ्यः**) विद्वान् हैं उनके लिये (**सुत्रात्रः**) जो अच्छों की रक्षा करने वालों की रक्षा करने वाला (**देवगोपाः**) विद्वानों का रक्षक हो, वही राजा होने योग्य है॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो सूर्य के समान प्रतापी, पवन के समान बलवान्, विद्यावान् के समान नम्रता और शूरवीरों की रक्षा करने वाले हों, वे सर्वत्र शीघ्र शत्रुओं को जीत के यशस्वी होकर धनवान् होते हैं॥७॥

पुनस्ते राजप्रजाजनाः कथं वर्त्तेरन्नित्याह॥

फिर वे राजप्रजाजन कैसे वर्त्तें, इस विषय को कहते हैं॥

नू न इन्द्रावरुणा गृणाना पृङ्क्तं रयिं सौश्रवसाय देवा।

इत्था गृणन्तो महिनस्य शर्धोऽपो न नावा दुरिता तरेम॥८॥

नु। नः। इन्द्रावरुणा। गृणाना। पृङ्क्तम्। रयिम्। सौश्रवसाय। देवा। इत्था। गृणन्तः। महिनस्य। शर्धः। अपः। न। नावा। दुःऽइता। तरेम॥८॥

पदार्थः-(**नू**) क्षिप्रम् (**नः**) अस्मान् (**इन्द्रावरुणा**) सूर्य्यचन्द्रवद्वर्त्तमानौ राजप्रजाजनौ (**गृणाना**) स्तुवन्तौ (**पृङ्क्तम्**) संबध्नीतम् (**रयिम्**) श्रियम् (**सौश्रवसाय**) सुश्रवसो भावाय (**देवा**) दातारौ (**इत्था**) अनेन प्रकारेण (**गृणन्तः**) स्तुवन्तः (**महिनस्य**) महतः (**शर्धः**) बलम् (**अपः**) जलानि (**न**) इव (**नावा**) नौकया (**दुरिता**) दुःखेनोल्लङ्घयितुं योग्यानि (**तरेम**)॥८॥

अन्वयः-हे इन्द्रावरुणेव नो गृणाना देवा राजप्रजाजनौ! यथा युवां सौश्रवसाय रयिं पृङ्क्तमित्था महिनस्य शर्धो गृणन्तो वयं नावाऽपो न दुरिता नू तरेम॥८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! ये राजप्रजाजनाः परस्परस्मिन् प्रीताः सन्तोऽन्नाद्याय श्रियं संचिन्वन्ति ते सूर्य्यचन्द्रवत्प्रतापिनो भूत्वा यथा महत्या नौकया दुर्गाण्यपि समुद्राञ्जनास्तरन्ति तथैव महान्त्यपि दुःखदारिद्र्याणि सद्यस्तरन्ति॥८॥

पदार्थः-हे (**इन्द्रावरुणा**) सूर्य और चन्द्रमा के तुल्य वर्त्तमान (**नः**) हम लोगों को (**गृणाना**) प्रशंसा करने और (**देवा**) देने वाले राजप्रजाजनो! जैसे तुम दोनों (**सौश्रवसाय**) उत्तम यश होने के लिये (**रयिम्**) धन का (**पृङ्क्तम्**) सम्बन्ध करो (**इत्था**) ऐसे (**महिनस्य**) बड़े के (**शर्धः**) बल की (**गृणन्तः**) प्रशंसा करते हुए हम लोग (**नावा**) नाव से (**अपः**) जलों को (**न**) जैसे वैसे (**दुरिता**) दुःख से उल्लङ्घन करने योग्य कष्टों को (**नू**) शीघ्र (**तरेम**) तरें॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो राजप्रजाजन आपस में प्रीति वाले होकर अन्नादि पदार्थों के लिये धन इकट्ठा करते हैं, वे सूर्य और चन्द्रमा के तुल्य प्रतापी होकर जैसे बड़ी नौका से दुःख से तरने योग्य समुद्रों को जन पार होते हैं, वैसे ही बड़े बड़े दुःख और दारिद्र्यों को शीघ्र तरते हैं॥८॥

पुनः स राजा कीदृशोऽस्मै किमुपदेष्टव्यमित्याह॥

फिर वह राजा कैसा है और उसके लिये क्या उपदेश देना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

प्र सम्राजे बृहते मन्म नु प्रियमर्च देवाय वरुणाय सप्रथः।
अयं य उर्वी महिना महिव्रतः क्रत्वा विभात्यजरो न शोचिषा॥९॥

प्र। सम्ऽराजे। बृहते। मन्म। नु। प्रियम्। अर्च। देवाय। वरुणाय। सऽप्रथः। अयम्। यः। उर्वी इति। महिना। महिऽव्रतः। क्रत्वा। विऽभाति। अजरः। न। शोचिषा॥९॥

पदार्थः-(**प्र**) (**सम्राजे**) यः सम्यक्सूर्यवद्विद्याविनयाभ्यां राजते तस्मै (**बृहते**) महते (**मन्म**) विज्ञानम् (**नु**) सद्यः (**प्रियम्**) प्रीतिकरम् (**अर्च**) सत्कुर्याः (**देवाय**) अभयदात्रे (**वरुणाय**) सर्वोत्कृष्टाय (**सप्रथः**) सत्कीर्त्या प्रख्यातः (**अयम्**) (**यः**) (**उर्वी**) द्यावापृथिव्यौ (**महिना**) महिम्ना (**महिव्रतः**) महान्ति

व्रतानि धर्म्याणि कर्माणि यस्य सः **(क्रत्वा)** प्रज्ञया कर्मणा वा **(विभाति)** **(अजरः)** जरारोगरहितः सूर्यो जीवात्मा परमात्मा वा **(न)** इव **(शोचिषा)** स्वप्रकाशेन॥९॥

अन्वयः-हे विद्वन्! योऽयं सप्रथो महिव्रतः क्रत्वा महिना शोचिषाऽजरो नोर्वी विभाति तस्मै वरुणाय देवाय बृहते सम्राजे प्रियं मन्म त्वं नु प्रार्च॥९॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे विद्वांसः! सूर्यवज्जीववत्परमात्मवच्छुभगुणकर्मस्वभावैर्देदीप्यमानो यो विद्याविनयावृतः प्रयत्नेन वाङ्मनःशरीरैः पितृवत्प्रजाः पालयितुं प्रयतते तस्मै चक्रवर्तिने सर्वोत्कृष्टाय विदुषे सत्कर्त्तव्याय राज्ञे राज्ये प्रतिदिनं सत्यां नीतिं भवन्तो बोधयन्तु येनाऽयं सर्वत्र धर्मयशा भवेत्॥९॥

पदार्थः-हे विद्वन्! **(यः)** जो **(अयम्)** यह **(सप्रथः)** सत्कीर्ति से विख्यात और **(महिव्रतः)** बड़े-बड़े धर्मयुक्त कर्म जिसके विद्यमान वह **(क्रत्वा)** प्रज्ञा वा कर्म से **(महिना)** और महिमा वा **(शोचिषा)** अपने प्रकाश से **(अजरः)** वृद्धावस्थारूपी रोग से रहित सूर्य जीवात्मा वा परमात्मा के **(न)** समान **(उर्वी)** सूर्यमण्डल और पृथिवी को **(विभाति)** प्रकाशित करता है उस **(वरुणाय)** सब से उत्तम **(देवाय)** अभय देने वाले **(बृहते)** बड़े **(सम्राजे)** अच्छे सूर्य के समान विद्या और नम्रता से प्रकाशमान के लिये **(प्रियम्)** प्रीति करने वाले **(मन्म)** विज्ञान को आप **(नु)** शीघ्र **(प्र, अर्च)** सत्कार देवें॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे विद्वान् जनो! जो सूर्य के तुल्य, जीव के तुल्य वा परमात्मा के तुल्य शुभ गुण कर्म स्वभावों से देदीप्यमान, विद्या और विनय से युक्त, उत्तम यत्न के साथ वाणी मन और शरीर से पिता के समान प्रजाजनों की पालना करने को प्रयत्न करता है, उस चक्रवर्ती, सर्वोत्कृष्ट, विद्वान् और सत्कार करने योग्य राजा के लिये राज्य में सत्य नीति को आप लोग समझावें, जिससे यह सर्वत्र धर्मयुक्त यश वाला हो॥९॥

पुनस्ते राजप्रजाजनाः किं कृत्वा कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर वे राज प्रजाजन क्या करके कैसे हो, इस विषय को कहते हैं॥

इन्द्रावरुणा सुतपाविमं सुतं सोमं पिबतं मद्यं धृतव्रता।

युवो रथो अध्वरं देववीतये प्रति स्वसरमुप याति पीतये॥१०॥

इन्द्रावरुणा। सुतऽपौ। इमम्। सुतम्। सोमम्। पिबतम्। मद्यम्। धृतऽव्रता। युवोः। रथः। अध्वरम्। देवऽवीतये। प्रति। स्वसरम्। उप। याति। पीतये॥१०॥

पदार्थः-**(इन्द्रावरुणा)** विद्युद्वद्वर्त्तमानौ सभासेनेशौ **(सुतपौ)** सुष्ठुब्रह्मचर्याद्यनुष्ठानाख्यं तपो ययोस्तौ। अत्र **छान्दसो वर्णलोपो वेति** सलोपः। **(इमम्)** प्रत्यक्षम् **(सुतम्)** निष्पादितम् **(सोमम्)** महौषधिरसम् **(पिबतम्)** **(मद्यम्)** येन माद्यति हृष्यत्यानन्दति तम् **(धृतव्रता)** धृतानि कर्माणि याभ्यां तौ **(युवोः)** युवयोः **(रथः)** विमानादियानम् **(अध्वरम्)** अहिंसामयम् **(देववीतये)** दिव्यगुणप्राप्तये **(प्रति)** वीप्सायाम् **(स्वसरम्)** दिनम् **(उप)** **(याति)** उपगच्छति **(पीतये)** पानाय॥१०॥

अन्वयः-हे इन्द्रावरुणेव सुतपौ धृतव्रता सभासेनेशौ! ययोर्युवो रथो देववीतये पीतये प्रति स्वसरमध्वरमुप याति ताविमं सुतं मद्यं सोमं प्रति पिबतम्॥१०॥

भावार्थः-हे राजप्रजाजना यूयं प्रतिदिनं सोमलताद्युत्पन्नं सर्वरोगहरं बलबुद्धिपराक्रमवर्धकं हिंसारहितं महौषधिरसं पीत्वा धर्मात्मानो भवत॥१०॥

पदार्थः-हे **(इन्द्रावरुणा)** बिजुली के समान वर्त्तमान **(सुतपौ)** सुन्दर ब्रह्मचर्य आदि अनुष्ठान तप जिनका और **(धृतव्रता)** जिन्होंने उत्तम कर्म धारण किये हैं, वे सभा और सेनाधीशो! जिन **(युवोः)** तुम लोगों का **(रथः)** विमान आदि यान **(देववीतये)** दिव्यगुणों की प्राप्ति और **(पीतये)** उत्तमोत्तम रस पीने के लिये **(प्रति, स्वसरम्)** प्रतिदिन **(अध्वरम्)** अहिंसामय यज्ञ को **(उप, याति)** प्राप्त होता है वे **(इमम्)** इस **(सुतम्)** उत्पन्न किये हुए **(मद्यम्)** जिससे जीव आनन्द को प्राप्त होता है उस **(सोमम्)** बड़ी-बड़ी ओषधियों के रस को **(पिबतम्)** पिओ॥१०॥

भावार्थः-हे राजप्रजाजनो! तुम प्रतिदिन सोमलता आदि से उत्पन्न किये हुए सर्व रोगों के हरने, बल बुद्धि, पराक्रम बढ़ाने वाले, हिंसारहित, महौषधियों के रस को पीकर धर्मात्मा होओ॥१०॥

पुनस्तौ किं कृत्वा किं कारयेतामित्याह॥

फिर वे क्या करके क्या करावें, इस विषय को कहते हैं॥

इन्द्रा॑वरुणा॒ मधु॑मत्तमस्य॒ वृष्णः॒ सोम॑स्य वृष॒णा वृषे॑थाम्।

इ॒दं वा॒मन्धः॒ परि॑षिक्तम॒स्मे आ॒सद्या॒स्मिन् ब॒र्हिषि॑ मादयेथाम्॥११॥१२॥

इन्द्रा॑वरुणा। मधु॑मत्ऽतमस्य। वृष्णः॑। सोम॑स्य। वृष॒णा। आ। वृषे॒थाम्। इ॒दम्। वा॒म्। अन्धः॑। परि॑ऽसिक्तम्। अ॒स्मे इति॑। आ॒ऽसद्य॑। अ॒स्मिन्। ब॒र्हिषि॑। मा॒द॒ये॒थाम्॥११॥

पदार्थः-**(इन्द्रावरुणा)** विद्युद्वायुवद्वर्त्तमानौ राजप्रजाजनौ **(मधुमत्तमस्य)** अतिशयेन मधुरादिगुणयुक्तस्य **(वृष्णः)** बलकरस्य **(सोमस्य)** महौषधिरसस्य **(वृषणा)** बलिष्ठौ **(आ)** **(वृषेथाम्)** बलिष्ठौ भवेथाम् **(इदम्)** **(वाम्)** **(अन्धः)** अन्नम् **(परिषिक्तम्)** सर्वतः सिक्तम् **(अस्मे)** अस्मास्वस्मान् वा **(आसद्य)** उपविश्य **(अस्मिन्)** **(बर्हिषि)** अवकाशे **(मादयेथाम्)** आनन्दयतम्॥११॥

अन्वयः-हे इन्द्रावरुणेव वृषणा! युवां मधुमत्तमस्य वृष्णः सोमस्य सेवनेना वृषेथां ययोर्वामिदं परिषिक्तमन्धोऽस्ति तौ युवामस्मे अस्मिन् बर्हिष्यासद्याऽस्मान् मादयेथाम्॥११॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये सोमलतादिरसेन युक्तेनान्नेन पानेन वा स्वयमानन्द्याऽस्मानानन्दयन्ति त एव सर्वैः सत्कर्त्तव्या जायन्त इति॥११॥

अस्मिन् सूक्ते इन्द्रावरुणवद्राजप्रजाकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्यष्टषष्टितमं सूक्तं द्वादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(इन्द्रावरुणा)** बिजुली और वायु के समान वर्त्तमान **(वृषणा)** बलवान् राजा प्रजाजनो! तुम **(मधुमत्तमस्य)** अतीव मधुरादिगुणयुक्त **(वृष्णः)** बल करने वाले **(सोमस्य)** बड़ी बड़ी

ओषधियों के रसों के सेवने से **(आ, वृषेथाम्)** बलिष्ठ होओ जिन **(वाम्)** तुम दोनों का **(इदम्)** यह **(परिषिक्तम्)** सब ओर से सींचा हुआ **(अन्धः)** अन्न है वे तुम **(अस्मे)** हम लोगों में वा हम को **(अस्मिन्)** इस **(बर्हिषि)** अवकाश में **(आसद्य)** बैठ के **(मादयेथाम्)** आनन्दित करो॥११॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो सोमलतादि रसयुक्त अन्न वा पान से आप आनन्दित होकर हमको आनन्दित करते हैं, वे ही सब से सत्कार करने योग्य होते हैं॥११॥

इस सूक्त में वरुण के समान राजप्रजा के कृत्य का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह अड़सठवां सूक्त और बारहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथाष्टर्चस्यैकोनसप्ततितमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। इन्द्राविष्णू देवते। १, ३, ६, ७ निचृत्त्रिष्टुप्। २, ४,८ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ५ ब्राह्म्युष्णिक्छन्दः। ऋषभः स्वरः॥

अथ राजशिल्पिनौ किं कृत्वा किं कुर्यातामित्याह॥

अब आठ ऋचावाले उनहत्तरवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में राजा और शिल्पी जन क्या करके क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

सं वां कर्मणा समिषा हिनोमीन्द्राविष्णू अपसस्पारे अस्य।
जुषेथां यज्ञं द्रविणं च धत्तमरिष्टैर्नः पथिभिः पारयन्ता॥ १॥

सम्। वाम्। कर्मणा। सम्। इषा। हिनोमि। इन्द्राविष्णू इति। अपसः। पारे। अस्य। जुषेथाम्। यज्ञम्। द्रविणम्। च। धत्तम्। अरिष्टैः। नः। पथिऽभिः। पारयन्ता॥ १॥

पदार्थः-(**सम्**) सम्यक् (**वाम्**) युवाम् (**कर्मणा**) ईप्सिततमेन व्यापारेण (**सम्**) सम्यक् (**इषा**) अन्नादिना (**हिनोमि**) वर्धयामि (**इन्द्राविष्णू**) सूर्यविद्युतौ (**अपसः**) कर्मणः (**पारे**) (**अस्य**) (**जुषेथाम्**) सेवेथाम् (**यज्ञम्**) सङ्गतिकरणम् (**द्रविणम्**) धनं यशो वा (**च**) (**धत्तम्**) (**अरिष्टैः**) अहिंसितैर्हिंसकरहितैः (**नः**) अस्मानस्मभ्यं वा (**पथिभिः**) मार्गैः (**पारयन्ता**) पारं गमयन्तौ॥१॥

अन्वयः-हे इन्द्राविष्णू इव वर्त्तमानौ महाराजशिल्पिनौ! यौ वामहं कर्मणा सं हिनोमि। अस्यापसः पार इषा संहिनोमि तावरिष्टैः पथिभिर्नः पारयन्ता युवां यज्ञं द्रविणं च जुषेथां नोऽस्मभ्यं धत्तम्॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे अध्यापकोपदेशकौ! यथा वायुविद्युतौ यानेषु सम्प्रयोजितौ गमनरूपस्य कर्मणो विषयं स्थानात्पारे गमयतस्तथा तयोर्विद्यायां युष्मान् संप्रेर्य यथा वर्द्धयेम तथा वृद्धा भूत्वा निर्विघ्नैर्मार्गैरस्मान् पारं गमयित्वा धनं यशश्च सततं प्रापयतं तौ वयं सततं सेवेमहि॥१॥

पदार्थः-हे (**इन्द्राविष्णू**) सूर्य्य और बिजुली के समान वर्त्तमान महाराज और शिल्पीजनो! जिन (**वाम्**) तुम दोनों को मैं (**कर्मणा**) अतीव चाहे हुए काम से (**सम्, हिनोमि**) अच्छे प्रकार बढ़ाता हूँ (**अस्य**) इस (**अपसः**) कर्म के (**पारे**) पार में (**इषा**) अन्नादि पदार्थों से (**सम्**) अच्छे प्रकार बढ़ाता हूँ वे (**अरिष्टैः**) हिंसकरहित (**पथिभिः**) मार्गों से (**नः**) हम लोगों को (**पारयन्ता**) पार करते हुए हम तुम (**यज्ञम्**) सङ्गतिकरण कार्य (**द्रविणम्, च**) और धन वा यश को (**जुषेथाम्**) सेवो और हम लोगों के लिये (**धत्तम्**) धारण करो॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे अध्यापक और उपदेशको! जैसे वायु और बिजुली विमानादिकों में अच्छे प्रकार जोड़े हुए गतिरूप कर्म के विषय को स्थान से पार पहुंचाते हैं, वैसे उनकी विद्या में तुमको प्रेरणा देकर जिस प्रकार हम लोग बढ़ावें उस प्रकार बढ़कर निर्विघ्न मार्गों से हम

लोगों को ले जाके धन और यश की प्राप्ति निरन्तर कराइये, उन आप लोगों की सेवा हम लोग निरन्तर करें॥१॥

पुनस्तौ कीदृशौ किं कुर्यातामित्याह॥

फिर वे दोनों कैसे हैं और क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

या विश्वासां जनितारा मतीनामिन्द्राविष्णू कलशा सोमधाना।
प्र वां गिरः शस्यमाना अवन्तु प्र स्तोमासो गीयमानासो अर्कैः॥२॥

या। विश्वासाम्। जनितारा। मतीनाम्। इन्द्राविष्णू इति। कलशा। सोमऽधाना। प्र। वाम्। गिरः। शस्यमानाः। अवन्तु। प्र। स्तोमासः। गीयमानासः। अर्कैः॥२॥

पदार्थः-(या) यौ (विश्वासाम्) सर्वासाम् (जनितारा) उत्पादकौ (मतीनाम्) प्रज्ञानाम् (इन्द्राविष्णू) सूर्य्यविद्युतौ (कलशा) कुम्भाविव (सोमधाना) सोमं दधति ययोस्तौ (प्र) (वाम्) (गिरः) वाचः (शस्यमानाः) स्तूयमानाः (अवन्तु) रक्षन्तु (प्र) (स्तोमासः) ये स्तूयन्ते (गीयमानासः) सुगीताः (अर्कैः) मन्त्रैः सत्कारैर्वा॥२॥

अन्वयः-हे राजशिल्पिनौ! या यौ विश्वासां मतीनां जनितारा सोमधाना कलशेव वर्त्तमानाविन्द्राविष्णू ययोर्वामर्कैः शस्यमाना गिरो गीयमानासः स्तोमासः सर्वान् प्रावन्तु तान् भवन्तः प्रावन्तु॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे विद्वांसो! यौ वायुविद्युतौ प्रजाजनकौ सर्वविद्याधारौ वर्त्तेते तयोः सम्प्रयोगेण विद्याशिक्षावाचः संरक्षन्तु॥२॥

पदार्थः-हे राजा और शिल्पीजनो (या) जो (विश्वासाम्) समस्त (मतीनाम्) बुद्धियों के (जनितारा) उत्पन्न करने वाले (सोमधाना) जिनके बीच सोम धरते हैं, वे (कलशा) घट के समान वर्त्तमान (इन्द्राविष्णू) सूर्य और बिजुली जिन (वाम्) तुम दोनों में (अर्कैः) मन्त्र वा सत्कारों से (शस्यमानाः) प्रशंसा को प्राप्त होती हुई (गिरः) वाणी (गीयमानासः) सुन्दरता से गाई हुई तथा (स्तोमासः) जो स्तुति किये जाते हैं, वे सब को (प्र, अवन्तु) अच्छे प्रकार पालें उन सबों की तुम लोग (प्र) अच्छे प्रकार रक्षा करो॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे विद्वानो! जो वायु और बिजुली बुद्धि बढ़ाने और सब विद्याओं के धारण करने वाले वर्त्तमान हैं, उनके अच्छे प्रकार प्रयोग से अर्थात् कार्यों में लाने से विद्या, शिक्षा तथा वाणियों की अच्छे प्रकार रक्षा करो॥२॥

पुनस्तौ कीदृशावित्याह॥

फिर वे कैसे हैं, इस विषय को कहते हैं॥

इन्द्राविष्णू मदपती मदानामा सोमं यातं द्रविणो दधाना।
सं वामञ्जन्त्वक्तुभिर्मतीनां सं स्तोमासः शस्यमानास उक्थैः॥३॥

इन्द्राविष्णू इति। मदपती इति मदऽपती। मदानाम्। आ। सोमम्। यातम्। द्रविणो इति। दधाना। सम्। वाम्। अञ्जन्तु। अक्तुऽभिः। मतीनाम्। सम्। स्तोमासः। शस्यमानासः। उक्थैः॥३॥

पदार्थः-(**इन्द्राविष्णू**) वायुविद्युताविव सभासेनेशौ (**मदपती**) आनन्दस्य पालकौ (**मदानाम्**) आनन्दानाम् (**आ**) (**सोमम्**) ऐश्वर्यम् (**यातम्**) गच्छतम् (**द्रविणो**) धनं यशो वा (**दधाना**) धरन्तौ (**सम्**) (**वाम्**) युवाम् (**अञ्जन्तु**) प्रकटीकुर्वन्तु (**अक्तुभिः**) रात्रिभिः (**मतीनाम्**) मनुष्याणाम् (**सम्**) (**स्तोमासः**) स्तुतयः (**शस्यमानासः**) प्रशंसिताः (**उक्थैः**) वेदस्थैः स्तोत्रैः॥३॥

अन्वयः-हे इन्द्राविष्णू मदानां मदपती द्रविणो दधाना! युवां सोममा यातं वां मतीनामक्तुभिरुक्थैश्शस्यमानासः स्तोमासो वां समञ्जन्तु येन प्रीत्या युवामस्मान् समायातम्॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यौ वायुविद्युद्वत्सर्वेषामानन्दस्य वर्धकौ मनुष्यैः स्तूयमानौ विद्यां च प्रयच्छन्तौ प्रयतेते तावेव राजकर्माऽर्हतः॥३॥

पदार्थः-हे (**इन्द्राविष्णू**) वायु और बिजुली के समान सभासेनापतियो! (**मदानाम्**) आनन्दों के बीच (**मदपती**) आनन्द के पालने और (**द्रविणो**) धन वा यश के (**दधाना**) धारण करने वालो! तुम दोनों (**सोमम्**) ऐश्वर्य्य को (**आ, यातम्**) प्राप्त होओ (**वाम्**) तुम दोनों को (**मतीनाम्**) मनुष्यों के बीच (**अक्तुभिः**) रात्रियों से और (**उक्थैः**) वेदस्थ स्तोत्रों से (**शस्यमानासः**) प्रशंसायुक्त किई जाती (**स्तोमासः**) स्तुतियां (**सम, अञ्जन्तु**) अच्छे प्रकार प्रकट करें, जिससे प्रीति के साथ तुम दोनों हम लोगों को (**सम्**) अच्छे प्रकार प्राप्त होओ॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो वायु और बिजुली के समान सब के आनन्द के बढ़ाने वाले, मनुष्यों से प्रशस्त किये जाते और विद्या वा धन को अच्छे प्रकार देते हुए प्रयत्न करते हैं, वे ही राजकर्म के योग्य होते हैं॥३॥

पुनस्तं राजानं के प्राप्य किं कुर्वन्तीत्याह॥

फिर उस राजा को कौन प्राप्त होकर क्या करते हैं, इस विषय को कहते हैं॥

आ वामश्वासो अभिमातिषाह इन्द्राविष्णू सधमादो वहन्तु।

जुषेथां विश्वा हवना मतीनामुप ब्रह्माणि शृणुतं गिरो मे॥४॥

आ। वाम्। अश्वासः। अभिमातिऽसहः। इन्द्राविष्णू इति। सधऽमादः। वहन्तु। जुषेथाम्। विश्वा। हवना। मतीनाम्। उप। ब्रह्माणि। शृणुतम्। गिरः। मे॥४॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**वाम्**) युवाम् (**अश्वासः**) महान्तः (**अभिमातिषाहः**) येऽभिमानयुक्ताञ्छत्रून् सोढुं शक्नुवन्ति (**इन्द्राविष्णू**) वायुसूर्य्यौ (**सधमादः**) समानस्थानानि (**वहन्तु**) (**जुषेथाम्**) (**विश्वा**) सर्वाणि (**हवना**) दातुमादातुमर्हाणि (**मतीनाम्**) मनुष्याणाम् (**उप**) सामीप्ये (**ब्रह्माणि**) धनानि (**शृणुतम्**) (**गिरः**) वाणीः (**मे**) मम॥४॥

अन्वयः-हे इन्द्राविष्णू इव सभासेनेशौ! वां येऽश्वासोऽभिमातिषाहः सधमाद आ वहन्तु तेषां मतीनां विश्वा हवना ब्रह्माणि जुषेथां मे गिरश्चोप शृणुतम्॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजन्! यदि धीमन्तो बलिष्ठाः शत्रुबलसोढारो जनास्त्वां प्राप्नुयुस्तर्हि सर्वमैश्वर्यं विद्यां च जगति प्रसारयन्तु॥४॥

पदार्थः-हे **(इन्द्राविष्णु)** वायु और सूर्य के तुल्य वर्त्तमान सभासेनाधीशो! **(वाम्)** तुम दोनों जो **(अश्वासः)** महात्माजन **(अभिमातिषाहः)** अभिमानयुक्त शत्रुओं को सह सकते हैं वे **(सधमादः)** समान स्थान को **(आ, वहन्तु)** प्राप्त करें उन **(मतीनाम्)** मनुष्यों के **(विश्वा)** सब **(हवना)** देने लेने योग्य **(ब्रह्माणि)** धनों को **(जुषेथाम्)** सेवो और **(मे)** मेरी **(गिरः)** वाणियों को भी **(उप, शृणुतम्)** समीप में सुनो॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजन्! यदि बुद्धिमान्, अतीव बलवान् और शत्रुओं के बल के सहने वाले मनुष्य आपको प्राप्त होवें तो वे सब ऐश्वर्य और विद्या को संसार में विस्तारें॥४॥

पुनस्तौ किं कुर्य्यातामित्याह॥

फिर वे क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

इन्द्राविष्णू तत्पनयाय्यं वां सोमस्य मद उरु चक्रमाथे।
अकृणुतमन्तरिक्षं वरीयोऽप्रथतं जीवसे नो रजांसि॥५॥

इन्द्राविष्णू इति। तत्। पनयाय्यम्। वाम्। सोमस्य। मदे। उरु। चक्रमाथे इति। अकृणुतम्। अन्तरिक्षम्। वरीयः। अप्रथतम्। जीवसे। नः। रजांसि॥५॥

पदार्थः-**(इन्द्राविष्णू)** वायुसूर्यौ **(तत्)** **(पनयाय्यम्)** प्रशंसनीयम् **(वाम्)** युवाम् **(सोमस्य)** ऐश्वर्य्यस्य **(मदे)** हर्षे जाते सति **(उरु)** बहु **(चक्रमाथे)** कामयथः **(अकृणुतम्)** कुर्यातम् **(अन्तरिक्षम्)** भूमिसूर्ययोर्मध्यस्थमाकाशम् **(वरीयः)** अतिशयेन वरम् **(अप्रथतम्)** प्रख्यापयतम् **(जीवसे)** जीवितुम् **(नः)** अस्माकमस्मान् वा **(रजांसि)** ऐश्वर्याणि॥५॥

अन्वयः-हे राजप्रजाजनौ! याविन्द्राविष्णू सोमस्य मदे तदन्तरिक्षं पनयाय्यं कुरुतस्तौ वामुरु चक्रमाथे वरीयोऽप्रथतं तेन नो जीवसे रजांस्यकृणुतम्॥५॥

भावार्थः-हे राजप्रजाजना! यथा यज्ञेन शोधिते वायुविद्युतौ सर्वं चराचरं जगत्प्रशंसनीयमरोगं कुरुतस्तथा विधाय तेनास्माकमैश्वर्यं जीवनं चाधिकं कुर्वन्तु॥५॥

पदार्थः-हे राजा और प्रजाजनो! जो **(इन्द्राविष्णू)** वायु और सूर्य्य **(सोमस्य)** ऐश्वर्य्य का **(मदे)** आनन्द प्राप्त होने पर **(तत्)** उस **(अन्तरिक्षम्)** भूमि और सूर्य्य के बीच की पोल को **(पनयाय्यम्)** प्रशंसा के योग्य करते हैं उनकी **(वाम्)** तुम **(उरु)** बहुत **(चक्रमाथे)** कामना करो और **(वरीयः)** अत्यन्त श्रेष्ठ

को **(अप्रथतम्)** विख्यात करो उससे **(नः)** हम लोगों के **(जीवसे)** जीवन को तथा **(रजांसि)** ऐश्वर्यों को **(अकृणुतम्)** सिद्ध करो॥५॥

भावार्थः-हे राजप्रजाजनो! जैसे यज्ञ से शोधे हुए वायु और बिजुली समस्त चराचर जगत् की प्रशंसा के योग्य और नीरोग करते हैं, वैसे विधान कर उससे हमारे ऐश्वर्य्य और जीवन को अधिक करो॥५॥

पुनस्तौ कीदृशौ सम्पाद्य किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर उन्हें कैसे सिद्ध कर क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

इन्द्रा॑विष्णू ह॒विषा॑ वावृधा॒नाग्रा॑द्वाना॒ नम॑सा रातहव्या।

घृता॑सुती॒ द्रवि॑णं धत्तम॒स्मे स॑मु॒द्रः स्थः॑ क॒लशः॑ सोम॒धानः॑॥६॥

इन्द्रा॑विष्णू॒ इति॑। ह॒विषा॑। व॒वृ॒धा॒ना। अग्र॑ऽअद्वाना। नम॑सा। रा॒त॒ऽह॒व्या॒। घृता॑सुती॒ इति॒ घृत॑ऽआसुती। द्रवि॑णम्। ध॒त्त॒म्। अ॒स्मे इति॑। स॒मु॒द्रः। स्थ॒ः। क॒लशः॑। सोम॒ऽधानः॑॥६॥

पदार्थः-(**इन्द्राविष्णू**) वायुसूर्य्यौ (**हविषा**) हुतेन द्रव्येण (**वावृधाना**) शुद्ध्या वर्द्धमानौ वर्धकौ (**अग्राद्वाना**) येऽग्रमदन्ति तद्विभाजकौ (**नमसा**) अन्नादिना (**रातहव्या**) दातव्यदानौ (**घृतासुती**) घृतेन समन्ताद् सुतिः प्रेरणं ययोस्तौ (**द्रविणम्**) धनं यशश्च (**धत्तम्**) (**अस्मे**) अस्मासु (**समुद्रः**) सम्यगापो द्रवन्ति यस्मिँस्तदन्तरिक्षं मेघो वा (**स्थः**) भवथः (**कलशः**) कलश इव जलेन पूर्णः (**सोमधानः**) सोमाद्योषधिगणा धीयन्ते यस्मिन् सः॥६॥

अन्वयः-हे ऋत्विग्यजमानौ! यथा हविषा वावृधानाग्राद्वाना नमसा रातहव्या घृतासुती इन्द्राविष्णू अस्मे द्रविणं धत्तस्तथा युवां धत्तं सोमधानः समुद्रः कलश इव स्थः॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे ऋत्विग्यजमानादयः! सुगन्धिघृतादिहोमेन वायुसूर्य्यौ शुद्धौ कृत्वा सर्वेषां भाग्यं सम्पाद्य सर्वेषां सुखवर्धका भवन्तु॥६॥

पदार्थः-हे ऋत्विज् और यजमानो! जैसे **(हविषा)** होमे हुए पदार्थ से **(वावृधाना)** निरन्तर शुद्धि से बढ़े वा बढ़ाने **(अग्राद्वाना)** अग्रभाग के भोगने को विभाग करने वाले और **(नमसा)** अन्नादि पदार्थ से **(रातहव्या)** देने योग्य को देने वाले **(घृतासुती)** सब ओर से जिनकी घी से प्रेरणा होती वे **(इन्द्राविष्णू)** वायु और सूर्य **(अस्मे)** हम लोगों में **(द्रविणम्)** धन और यश को धरते हैं, वैसे तुम **(धत्तम्)** धरो तथा **(सोमधानः)** और सोमादि ओषधि जिसमें स्थापन की जाती हैं और **(सुमद्रः)** अच्छे प्रकार जल तरंगे लेते हैं जिसमें वह अन्तरिक्ष वा मेघ **(कलशः)** घट के समान वर्त्तमान है उसके समान **(स्थः)** होते हो॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे ऋत्विग् और यजमान आदि जनो! सुगन्धि और घृतादि पदार्थों के होम से वायु और सूर्य को शुद्ध कर सब के भाग्य की सिद्धि कर सब के सुख के बढ़ाने वाले होओ॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

इन्द्रा॑विष्णू पिब॑तं मध्वो॑ अ॒स्य सोम॑स्य दस्रा ज॒ठरं॑ पृणेथाम्।

आ वा॒मन्धां॑सि मदि॒राण्य॑ग्म॒न्नुप॒ ब्रह्मा॑णि शृणु॒तं हवं॑ मे॥७॥

इन्द्रा॑विष्णू इति। पिब॑तम्। मध्वः॑। अ॒स्य। सोम॑स्य। द॒स्रा। ज॒ठर॑म्। पृ॒णे॒था॒म्। आ। वा॒म्। अन्धां॑सि। म॒दि॒राणि॑। अ॒ग्म॒न्। उप॑। ब्रह्मा॑णि। शृ॒णु॒त॒म्। हव॑म्। मे॒॥७॥

पदार्थ:-(**इन्द्राविष्णू**) वायुविद्युताविव (**पिबतम्**) (**मध्व:**) मधुरस्य (**अस्य**) (**सोमस्य**) सोमाद्योषधिजन्यस्य रसस्य (**दस्रा**) दु:खक्षयितारौ (**जठरम्**) उदरम् (**पृणेथाम्**) प्रपूरयेतम् (**आ**) (**वाम्**) युवाम् (**अन्धांसि**) अन्नानि (**मदिराणि**) आनन्दकराणि (**अग्मन्**) प्राप्नुवन्तु (**उप**) (**ब्रह्माणि**) पठितानि वेदस्तोत्राणि (**शृणुतम्**) (**हवम्**) स्वाध्यायम् (**मे**) मम॥७॥

अन्वय:-हे अध्यापकोपदेशकौ दस्रा! वां यानि मध्वोऽस्य सोमस्य मदिराण्यधांस्यग्मँस्तानीन्द्राविष्णू इव पिबतं तैर्जठरमा पृणेथां पुनर्मे ब्रह्माणि हवं चोप शृणुतम्॥७॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कार:। ये मनुष्या औषधै: शरीरस्य रोगान् विद्यासत्सङ्गधर्मानुष्ठानैरात्मनो रोगांश्च निवार्य वायुविद्युद्वद्बलिष्ठा भूत्वा विद्याभ्यासं कृत्वा विद्यार्थिनां परीक्षां कुर्वन्ति ते सर्वेषां दु:खानि निवार्य्याऽऽनन्दं दातुं शक्नुवन्ति॥७॥

पदार्थ:-हे अध्यापक और उपदेशको! (**दस्रा**) दु:ख के विनाश करने वालो (**वाम्**) तुम दोनों को जो (**मध्व:**) मधुरगुणयुक्त (**अस्य**) [इस] (**सोमस्य**) सोम आदि ओषधियों से उत्पन्न हुए इस रस के (**मदिराणि**) आनन्द करने वाले (**अन्धांसि**) अन्न (**अग्मन्**) प्राप्त होवें उनको (**इन्द्राविष्णू**) वायु और बिजुली के समान (**पिबतम्**) पिओ और उनसे (**जठरम्**) उदर को (**आ, पृणेथाम्**) अच्छे प्रकार भरो फिर (**मे**) मेरे (**ब्रह्माणि**) पढ़े हुए वेदस्तोत्रों को और (**हवम्**) नित्य के वेदपाठ को (**उप, शृणुतम्**) समीप में सुनो॥७॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य औषधों से शरीर के रोगों को तथा विद्या, सत्सङ्ग और धर्म के अनुष्ठान से आत्मा के रोगों को निवार के वायु और बिजुली के समान बलिष्ठ हो विद्याभ्यास करके विद्यार्थियों की परीक्षा करते हैं, वे सब के दु:खों को निवृत्त कर आनन्द दे सकते हैं॥७॥

पुनस्तौ कीदृशावित्याह॥

फिर वे कैसे हैं, इस विषय को कहते हैं॥

उ॒भा जि॑ग्यथु॒र्न परा॑ जयेथे॒ न परा॑ जिग्ये कत॒रश्च॒नैनो॑:।

इन्द्र॑श्च विष्णो॒ यदप॑स्पृधेथां त्रे॒धा स॒हस्रं॒ वि तदै॑रयेथाम्॥८॥१३॥

उभा। जिग्यथुः। न। परा। जयेथे इति। न। परा। जिग्ये। कतरः। चन। एनोः। इन्द्रः। च। विष्णो इति। यत्। अपस्पृधेथाम्। त्रेधा। सहस्रम्। वि। तत्। ऐरयेथाम्॥८॥

पदार्थः-(**उभा**) सभासेनेशौ (**जिग्यथुः**) विजयेथे (**न**) निषेधे (**परा**) (**जयेथे**) पराजयं प्राप्नुथः (**न**) (**परा**) (**जिग्ये**) पराजितो भवति (**कतरः**) अनयोर्मध्ये एकः (**चन**) अपि (**एनोः**) अनयोर्मध्ये (**इन्द्रः**) परमैश्वर्यवान् वायुवद्वर्त्तमानः (**च**) (**विष्णो**) विद्युद्वद्व्यापनशील (**यत्**) (**अपस्पृधेथाम्**) स्पर्द्धेथाम् (**त्रेधा**) त्रिविधम् (**सहस्रम्**) असङ्ख्यं सैन्यम् (**वि**) (**तत्**) (**ऐरयेथाम्**) प्रेरयेतम्॥८॥

अन्वयः-हे विष्णो इन्द्रश्च! युवां यत्सहस्रं तत्त्रेधापस्पृधेथां व्यैरयेथां तदोभा युवां जिग्यथुर्न परा जयेथे एनोः कतरश्चन न परा जिग्ये॥८॥

भावार्थः-हे सेनाबलाध्यक्षा! यदि भवन्तः सर्वदा सेनोन्नतये युद्धविद्यावृद्धये प्रयतेरँस्तर्हि सर्वत्र विजयेरन् कुत्राऽपि न पराजयेरन्निति॥८॥

अत्रेन्द्रविष्णुवत्सभासेनेशादिकर्मवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्येकोनसप्ततितमं सूक्तं त्रयोदशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे (**विष्णो**) बिजुली के समान व्याप्त होने वाले (**इन्द्रः, च**) और परमैश्वर्य्यवान् वायु के समान वर्त्तमान! तुम दोनों (**यत्**) जो (**सहस्रम्**) असंख्य सेना समूह हैं (**तत्**) उसे (**त्रेधा**) तीन प्रकार (**अपस्पृधेथाम्**) स्पर्द्धा अर्थात् तर्क-वितर्क से स्थापित करो और उसे (**वि, ऐरयेथाम्**) विविध प्रकार से यथा स्थान स्थित कराओ ऐसा करो तो (**उभा**) तुम दोनों (**जिग्यथुः**) विजय को प्राप्त होते हो (**नः**) नहीं (**परा, जयेथे**) पराजय को प्राप्त होते हो तथा (**एनोः**) इनके बीच (**कतरः**) कोई एक (**चन**) भी (**न**) नहीं (**परा, जिग्ये**) पराजित होता है॥८॥

भावार्थः-हे सेनाबल के अधीशो! यदि आप लोग सर्वदा सेना की उन्नति के लिये और युद्धविद्या की वृद्धि के लिये प्रयत्न कीजिये तो सर्वत्र जीतिये कहीं भी न पराजित हूजिये॥८॥

इस सूक्त में इन्द्र और विष्णु के समान सभा और सेनेश आदि के कर्मों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह उनहत्तरवां सूक्त और तेरहवां वर्ग पूरा हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ षड्चस्य सप्ततितमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषि:। द्यावापृथिव्यौ देवते। १, ५ निचृज्जगती। २, ३, ४, ६ जगतीच्छन्द:। निषाद: स्वर:॥

अथ भूमिसूर्यौ कीदृशौ इत्याह॥

अब छ: ऋचा वाले सत्तरवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में भूमि और सूर्य कैसे वर्त्तमान हैं, इस विषय को कहते हैं॥

घृतवती भुवनानामभिश्रियोर्वी पृथ्वी मधुदुघे सुपेशसा।
द्यावापृथिवी वरुणस्य धर्मणा विष्कभिते अजरे भूरिरेतसा॥१॥

घृतवती इति घृतऽवती। भुवनानाम्। अभिऽश्रिया। उर्वी इति। पृथ्वी इति। मधुदुघे इति मधुऽदुघे। सुऽपेशसा। द्यावापृथिवी इति। वरुणस्य। धर्मणा। विस्कभिते इति विऽस्कभिते। अजरे इति। भूरिऽरेतसा॥ १॥

पदार्थ:-(**घृतवती**) बहु घृतमुदकं दीप्तिर्वा विद्यते ययोस्ते। **घृतमित्युदकनाम।** (निघं०१.१२) (**भुवनानाम्**) सर्वेषां लोकानाम् (**अभिश्रिया**) अभिमुख्या श्रीर्याभ्यां ते (**उर्वी**) बहुपदार्थयुक्ते (**पृथ्वी**) विस्तीर्णे (**मधुदुघे**) मधुरादिरसै: प्रपूरिके (**सुपेशसा**) शोभनं पेश: सुवर्णं रूपं वा ययोस्ते (**द्यावापृथिवी**) भूमिसूर्यौ (**वरुणस्य**) सूर्यस्य वायोर्वा (**धर्मणा**) आकर्षणधारणादिगुणेन (**विष्कभिते**) विशेषेण धृते (**अजरे**) अजीर्णे (**भूरिरेतसा**) भूरि बहु रेतो वीर्य्यमुदकं वा याभ्यां ते। **रेत इत्युदकनाम।** (निघं०१.१२)॥१॥

अन्वय:-हे मनुष्या! यूयं भुवनानामभिश्रियोर्वी पृथ्वी घृतवती मधुदुघे सुपेशसा भूरिरेतसाऽजरे वरुणस्य धर्मणा विष्कभिते द्यावापृथिवी यथावद्विजानीत॥१॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! भवन्तो भूगर्भविद्युद्विद्यां विजानीयुर्ये द्वे सूर्येण वायुना च धृते वर्त्तेते ताभ्यां बलवृद्धिं कामपूर्त्तिं च कुर्वन्तु॥१॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! तुम (**भुवनानाम्**) समस्त लोकों सम्बन्धी (**अभिश्रिया**) सब ओर से कान्तियुक्त (**उर्वी**) बहुत पदार्थों से युक्त और (**पृथ्वी**) विस्तार से युक्त (**घृतवती**) जिनमें बहुत उदक वा दीप्ति विद्यमान वे तथा (**मधुदुघे**) जो मधुरादि रसों से परिपूर्ण करने वाले (**सुपेशसा**) जिनका शोभायुक्त रूप वा जिनसे दीप्तिमान् सुवर्ण उत्पन्न होता (**भूरिरेतसा**) जिन से बहुत वीर्य्य वा जल उत्पन्न होता और (**अजरे**) जो अजीर्ण अर्थात् छिन्न-भिन्न नहीं वे (**वरुणस्य**) सूर्य वा वायु के (**धर्मणा**) आकर्षण वा धारण करने आदि गुण से (**विष्कभिते**) विशेषता से धारण किये हुए (**द्यावापृथिवी**) भूमि और सूर्य्य हैं, उन्हें यथावत् जानो॥१॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! आप भूगर्भ और बिजुली की विद्या को जानो और जो दो पदार्थ सूर्य्य तथा वायु से धारण किये हुए हैं, उनसे बल की वृद्धि और कामना की पूर्णता करो॥१॥

पुनस्ते कथंभूते इत्याह॥

फिर वे कैसे हैं, इस विषय को कहते हैं॥

अस॑श्चन्ती भूरि॑धारे॒ पय॑स्वती घृ॒तं दु॑हाते सु॒कृते॒ शुचि॑व्रते।

राज॑न्ती अ॒स्य भुव॑नस्य रोदसी अ॒स्मे रेत॑: सिञ्चतं॒ यन्मनु॑र्हितम्॥ २॥

अस॑श्चन्ती॒ इति॑। भूरि॑धारे॒ इति॒ भूरि॑ऽधारे। पय॑स्वती॒ इति॑। घृ॒तम्। दु॒हा॒ते॒ इति॑। सु॒ऽकृते॑। शुचि॑व्रते॒ इति॒ शुचि॑ऽव्रते। राज॑न्ती। अ॒स्य। भुव॑नस्य। रो॒द॒सी॒ इति॑। अ॒स्मे इति॑। रेत॑:। सि॒ञ्च॒त॒म्। यत्। मनु॑:ऽहितम्॥ २॥

पदार्थः-(**असश्चन्ती**) पृथक् पृथग्वर्त्तमाने (**भूरिधारे**) भूरि बह्व्यो धारा ययोस्ते (**पयस्वती**) बहूदकयुक्ते (**घृतम्**) उदकम् (**दुहाते**) पिपृते (**सुकृते**) ईश्वरेण सुष्ठु निर्मिते सुकृतकर्मनिमित्ते वा (**शुचिव्रते**) पवित्रकर्मयुक्ते (**राजन्ती**) प्रकाशमाने (**अस्य**) (**भुवनस्य**) ब्रह्माण्डस्य (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**अस्मे**) अस्मासु (**रेत:**) उदकं वीर्यं वा (**सिञ्चतम्**) सिञ्चत:। अत्र पुरुषव्यत्यय: (**यत्**) (**मनुर्हितम्**) मनुष्येभ्यो हितम्॥ २॥

अन्वय:-हे मनुष्या! येऽसश्चन्ती भूरिधारे पयस्वती सुकृते शुचिव्रतेऽस्य भुवनस्य राजन्ती रोदसी अस्मे यन्मनुर्हितं तद् घृतं दुहाते तद्रेतश्च सिञ्चतं ते यथावदुपकारायाऽऽश्रयन्तु॥ २॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! सूर्यभूमी एव सर्वस्य पालननिमित्ते बहूदकादिपदार्थयुक्ते सर्वेषां कामं पूरयतस्ते यथावद्विज्ञाय कार्यसिद्धये सम्प्रयुङ्ध्वम्॥ २॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! जो (**असश्चन्ती**) अलग-अलग वर्त्तमान (**भूरिधारे**) जिनकी बहुत धारायें विद्यमान (**पयस्वती**) जो बहुत जल से युक्त (**सुकृते**) जो ईश्वर ने सुन्दर बनाये वा अच्छे कर्म कराने वाले और (**शुचिव्रते**) पवित्र कर्मयुक्त हैं तथा (**अस्य**) इस (**भुवनस्य**) ब्रह्माण्ड के सम्बन्ध में (**राजन्ती**) प्रकाशमान हैं, वे (**रोदसी**) आकाश और पृथिवी (**अस्मे**) हम लोगों में (**यत्**) जो (**मनुर्हितम्**) मनुष्यों का हित करने वाला है उस (**घृतम्**) जल को (**दुहाते**) पूर्ण करते हैं उस (**रेत:**) जल वा वीर्य्य को (**सिञ्चतम्**) सींचते हैं, उन्हें यथावत् उपकार के लिये प्राप्त होओ॥ २॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! सूर्य्य और भूमि ही सब जगत् की रक्षा के निमित्त, बहुत उदक आदि पदार्थयुक्त और सब के काम को पूर्ण करते हैं, उनको यथावत् जानकर कार्य्य की सिद्धि के लिये अच्छे प्रकार उनका प्रयोग करो॥ २॥

पुनरेते विज्ञाय क: कीदृशो भवतीत्याह॥

फिर इन को जान के कौन कैसा होता है, इस विषय को कहते हैं॥

यो वा॑मृ॒जवे॒ क्रम॑णाय रोदसी॒ मर्तो॑ द॒दाश॑ धिषणे॒ स सा॑धति।

प्र प्र॒जाभि॑र्जायते॒ धर्म॑ण॒स्परि॑ यु॒वो: सि॒क्ता विषु॑रूपाणि॒ सव्र॑ता॥ ३॥

यः। वाम्। ऋजवे। क्रमणाय। रोदसी इति। मर्तः। ददाश। धिषणे इति। सः। साधति। प्र। प्रऽजाभिः। जायते। धर्मणः। परि। युवोः। सिक्ता। विषुऽरूपाणि। सऽव्रता॥३॥

पदार्थः-(**यः**) (**वाम्**) युवयो राजप्रजाजनयोः (**ऋजवे**) सरलाय (**क्रमणाय**) गमनागमनाय (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**मर्त्तः**) मनुष्यः (**ददाश**) ददाति (**धिषणे**) प्रज्ञाप्रगल्भतयोः कारणे (**सः**) (**साधति**) (**प्र**) (**प्रजाभिः**) प्रजातैस्सह (**जायते**) (**धर्मणः**) धर्मात् (**परि**) सर्वतः (**युवोः**) युवयोः (**सिक्ता**) सिक्तानि वीर्याण्युदकानि वा (**विषुरूपाणि**) व्याप्तरूपाणि (**सव्रता**) समानकर्माणि॥३॥

अन्वयः-हे राजप्रजे! ये धिषणे रोदसी वामृजवे क्रमणाय भवतस्ते यो मर्त्तो ददाश स कार्याणि प्र साधति प्रजाभिः प्रजायते युवोर्धर्मणो विषुरूपाणि सव्रता सिक्ता कुरुतस्ते परिसाधनीये॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये भूगर्भविद्युद्विद्यां द्यावापृथिव्योश्च कर्माणि जानन्ति ते प्रजया पशुभिर्विद्यया राज्येन च युक्ता जायन्ते॥३॥

पदार्थः-हे राजप्रजाजनो! जो (**धिषणे**) प्रजा और प्रगल्भता के कारण (**रोदसी**) आकाश और पृथिवी (**वाम्**) तुम लोगों को (**ऋजवे**) सरलपन के लिये और (**क्रमणाय**) गमन वा आगमन के लिये होते हैं उनको (**यः**) जो (**मर्त्तः**) मनुष्य (**ददाश**) देता है (**सः**) वह कार्यों को (**प्र, साधति**) प्रसिद्ध करता है और (**प्रजाभिः**) उत्पन्न हुए पदार्थों के साथ (**जायते**) प्रसिद्ध होता है और (**युवोः**) तुम्हारे (**धर्मणः**) धर्म से (**विषुरूपाणि**) व्याप्तरूप (**सव्रता**) समान कर्मों को तथा (**सिक्ता**) वीर्य्य वा उदकों को सींचे हुए करते हैं, वे (**परि**) सब ओर से सिद्ध करने योग्य हैं॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो भूगर्भविद्या और द्यावापृथिवी के कर्मों को जानते हैं; वे प्रजा, पशु, विद्या और राज्य से युक्त होते हैं॥३॥

पुनस्ते कीदृश्यौ किं प्रापयतश्चेत्याह॥

फिर वे कैसे हैं और क्या प्राप्त कराते हैं, इस विषय को कहते हैं॥

घृतेन द्यावापृथिवी अभीवृते घृतश्रिया घृतपृचा घृतावृधा।
उर्वी पृथ्वी होतृवूर्ये पुरोहिते ते इद्विप्रा ईळते सुम्नमिष्टये॥४॥

घृतेन। द्यावापृथिवी इति। अभिवृते इति अभिऽवृते। घृतऽश्रिया। घृतऽपृचा। घृतऽवृधा। उर्वी इति। पृथ्वी इति। होतृऽवूर्ये। पुरोहिते इति पुरःऽहिते। ते इति। इत्। विप्राः। ईळते। सुम्नम्। इष्टये॥४॥

पदार्थः-(**घृतेन**) उदकेन (**द्यावापृथिवी**) विद्युदन्तरिक्षे (**अभीवृते**) येऽभितो वर्त्तेते (**घृतश्रिया**) घृतं प्रदीपनमवकाशनञ्च श्रीर्ययोस्ते (**घृतपृचा**) घृतेन प्रदीपनेनोदकेन वा सम्पृक्ते (**घृतावृधा**) घृतेन तेजसा वर्धेते (**उर्वी**) बहुगुणद्रव्ययुक्ते (**पृथ्वी**) विस्तीर्णे (**होतृवूर्य्ये**) होतारो व्रियन्ते ययोस्ते (**पुरोहिते**) पुरस्ताद्धितं दधत्यौ (**ते**) (**इत्**) (**विप्राः**) मेधाविनः (**ईळते**) स्तुवन्ति (**सुम्नम्**) सुखम् (**इष्टये**) सङ्गतये॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ये विप्रा घृतेन युक्ते उर्वी अभीवृते घृतश्रिया घृतपृचा घृतावृधा होतृवूर्ये पुरोहिते इष्टये पृथ्वी द्यावापृथिवी ईळते त इत्सर्वेभ्यः सुम्नं लभन्ते॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा प्राज्ञा विद्युतोऽन्तरिक्षस्य च विद्यां विज्ञाय कार्येषु संप्रयुञ्जते तथैव यूयमपि सम्प्रयुङ्ध्वम्॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्या! जो **(विप्राः)** मेधावी बुद्धिमान् पुरुष **(घृतेन)** जल से तथा **(उर्वी)** बहुत गुण और पदार्थों से युक्त **(अभीवृते)** सब ओर से वर्त्तमान **(घृतश्रिया)** अत्यन्त प्रकाश वा अवकाश धन जिनका **(घृतपृचा)** जो प्रकाश वा जल से अच्छे प्रकार सम्बन्ध किये हुए और **(घृतावृधा)** तेज से बढ़ते हैं तथा **(होतृवूर्ये)** होता जन से स्वीकार होते और **(पुरोहिते)** आगे से हित को धारण करते हुए **(इष्टये)** सङ्ग के लिये **(पृथ्वी)** बहुत विस्तारयुक्त जो **(द्यावापृथिवी)** बिजुली और अन्तरिक्ष हैं उनकी **(ईळते)** प्रशंसा करते हैं **(ते, इत्)** वे ही सब से **(सुम्नम्)** सुख पाते हैं॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे उत्तम बुद्धिमान् जन बिजुली और अन्तरिक्ष की विद्या को जान के कार्यों में लगाते हैं, वैसे तुम भी उनका प्रयोग करो॥४॥

पुनस्ताभ्यां किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर उनसे क्या करने योग्य है, इस विषय को कहते हैं॥

मधु नो द्यावापृथिवी मिमिक्षतां मधुश्चुता मधुदुघे मधुव्रते।
दधाने यज्ञं द्रविणं च देवता महि श्रवो वाजमस्मे सुवीर्यम्॥५॥

मधु। नः। द्यावापृथिवी इति। मिमिक्षताम्। मधुऽश्चुता। मधुदुघे इति मधुऽदुघे। मधुव्रते इति मधुऽव्रते। दधाने इति। यज्ञम्। द्रविणम्। च। देवता। महि। श्रवः। वाजम्। अस्मे इति। सुऽवीर्यम्॥५॥

पदार्थः-(**मधु**) मधुरमुदकम्। **मध्वित्युदकनाम।** (निघं०१.१२) (**नः**) अस्मभ्यम् (**द्यावापृथिवी**) सूर्य्यभूमी (**मिमिक्षताम्**) मेढुमिच्छतम् (**मधुश्चुता**) मधूदकस्य वर्षयित्र्यौ (**मधुदुघे**) ये मधुनोदकेन दुग्धः कामान् प्रपूरयतस्ते (**मधुव्रते**) मधूनि व्रतानि कर्माणि ययोस्ते (**दधाने**) (**यज्ञम्**) सङ्गतिमयं व्यवहारम् (**द्रविणम्**) धनम् (**च**) (**देवता**) दिव्यस्वरूपे (**महि**) महत् (**श्रवः**) अन्नम् (**वाजम्**) विज्ञानम् (**अस्मे**) अस्मासु (**सुवीर्यम्**) उत्तमपराक्रमम्॥५॥

अन्वयः-हे अध्यापकोपदेशकौ! वे मधुश्चुता मधुदुघे मधुव्रते देवताऽस्मे यज्ञं द्रविणं महि श्रवो वाजं सुवीर्यं च दधाने द्यावापृथिवी वर्त्तेते ताभ्यां युवां नो मधु मिमिक्षताम्॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा भूमिसूर्य्यौ सत्यकर्माणाविच्छापूरकौ मधुरादिरसप्रदौ धनान्नबलविज्ञानवर्धकौ स्यातां तथाऽनुतिष्ठन्तु॥५॥

पदार्थः-हे अध्यापक और उपदेशको! जो **(मधुश्चुता)** मधुर जल के वर्षाने और **(मधुदुघे)** मधुर जल से काम पूरे करने **(मधुव्रते)** जिनके मधुर काम **(देवता)** जो दिव्यरूप **(अस्मे)** हम लोगों में **(यज्ञम्)** सङ्गतिमय व्यवहार **(द्रविणम्)** धन **(महि)** महान् **(श्रवः)** अन्न **(वाजम्)** विज्ञान **(सुवीर्यम्, च)**

और उत्तम पराक्रम को भी **(दधाने)** स्थापन करते हुए **(द्यावापृथिवी)** सूर्य और भूमि यह दोनों पदार्थों वर्त्तमान हैं उनसे तुम **(नः)** हमारे लिये **(मधु)** मधुर जल के **(मिमिक्षतम्)** सीचनें की इच्छा करो॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे भूमि और सूर्य्य सत्य कर्मयुक्त, इच्छा पूरी करने और मधुरादि रस देने, धन, अन्न, बल और विज्ञान के बढ़ाने वाले हों, वैसे अनुष्ठान करो॥५॥

पुनस्ते कीदृश्यौ किंवत् किं कुरुत इत्याह॥

फिर वे कैसे किसके तुल्य और क्या करते हैं, इस विषय को कहते हैं॥

ऊर्जं नो द्यौश्च पृथिवी च पिन्वतां पिता माता विश्वविदा सुदंससा।
संरराणे रोदसी विश्वशंभुवा सनिं वाजं रयिमस्मे समिन्वताम्॥६॥१४॥

ऊर्जम्। नः। द्यौः। च। पृथिवी। च। पिन्वताम्। पिता। माता। विश्वऽविदा। सुऽदंससा। संरराणे इति सम्ऽरराणे। रोदसी इति। विश्वऽशंभुवा। सनिम्। वाजम्। रयिम्। अस्मे इति। सम्। इन्वताम्॥६॥

पदार्थः-**(ऊर्जम्)** अन्नं पराक्रमं वा। **ऊर्गित्यन्ननाम।** (निघं०२.७) **(नः)** अस्मभ्यम् **(द्यौः)** सूर्यो विद्युद्वा **(च)** **(पृथिवी)** भूमिः **(च)** **(पिन्वताम्)** सुखयेताम् **(पिता)** पितेव **(माता)** मातेव **(विश्वविदा)** विश्वं सर्वं विन्दति याभ्यां ते **(सुदंससा)** शोभनानि दंसांसि कर्माणि ययोस्ते **(संरराणे)** ये सम्यक्सुखं रातो दत्तस्ते **(रोदसी)** बहुपदार्थयुक्ते द्यावापृथिव्यौ **(विश्वशंभुवा)** विश्वस्मै शं सुखं भावुके **(सनिम्)** संविभागम् **(वाजम्)** विज्ञानमन्नं वा **(रयिम्)** श्रियम् **(अस्मे)** अस्मासु **(सम्)** सम्यक् **(इन्वताम्)** व्याप्नुताम्॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ये विश्वविदा सुदंससा संरराणे विश्वशंभुवा रोदसी अस्मे सनिं वाजं रयिं च समिन्वतां पितेव द्यौश्च मातेव पृथिवी च नः ऊर्जं पिन्वतां ते यथावद्विजानन्तु॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! भवन्तो यः सूर्य्यः पितेव या पृथिवी मातेवैते सर्वसुखप्रदे धनैश्वर्यप्रापिके मङ्गलनिमित्ते उत्तमक्रिये बलपराक्रमप्रदे वर्तेते ते प्रयत्नेन कथं न विजानन्तीति॥६॥

अत्र द्यावापृथिव्योस्तद्वदध्यापकोपदेशकयोर्ऋत्विग्यजमानयोश्च कृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति सप्ततितमं सूक्तं चतुर्दशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(विश्वविदा)** जिनसे सर्व सुख को प्राप्त होते हैं **(सुदंससा)** जिनसे सुन्दर काम सिद्ध होते हैं **(संरराणे)** जो अच्छे प्रकार सुख देते हैं और **(विश्वशंभुवा)** जो सब के लिये सुख की भावना करते वे **(रोदसी)** बहुपदार्थयुक्त द्यावापृथिवी **(अस्मे)** हम लोगों में **(सनिम्)** अच्छे प्रकार विभाग को और **(वाजम्)** विज्ञान वा अन्न तथा **(रयिम्)** धन को **(सम्, इन्वताम्)** उत्तमता से व्याप्त हों तथा **(पिता)** पिता के समान **(द्यौः)** सूर्य्य वा विद्युत् अग्नि **(च)** और **(माता)** माता के समान **(पृथिवी)**

भूमि **(च)** भी **(नः)** हमारे लिये **(ऊर्जम्)** अन्न वा पराक्रम को **(पिन्वताम्)** सुखपूर्वक परिपूर्ण करें, उनको यथावत् जानो॥६॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! आप, जो सूर्य पिता के समान, जो पृथिवी माता के समान ये दोनों सर्व सुख देने वा धन और ऐश्वर्य्य की प्राप्ति कराने वा मङ्गल कराने वाले उत्तम क्रियायुक्त और बल वा पराक्रम देने वाले वर्त्तमान हैं, उनको उत्तम यत्न के साथ कैसे न जानो॥६॥

इस सूक्त में द्यावापृथिवी और उनके समान अध्यापक और उपदेश वा ऋत्विक्, और यजमानों के काम का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह सत्तरवां सूक्त और चौदहवाँ वर्ग पूरा हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ षड्चस्यैकसप्ततितमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। सविता देवता। १ जगती। २, ३ निचृज्जगतीच्छन्दः। निषादः स्वरः। ४ त्रिष्टुप्। ५, ६ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ राजा कीदृशो भवेदित्याह॥

अब छः ऋचावाले एकसत्तरवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में फिर राजा कैसा हो, इस विषय को कहते हैं॥

उदु ष्य देवः सविता हिरण्यया बाहू अयंस्त सवनाय सुक्रतुः।
घृतेन पाणी अभि प्रुष्णुते मखो युवा सुदक्षो रजसो विधर्मणि॥१॥

उत्। ऊँ इति। स्यः। देवः। सविता। हिरण्यया। बाहू इति। अयंस्त। सवनाय। सुऽक्रतुः। घृतेन। पाणी इति। अभि। प्रुष्णुते। मखः। युवा। सुऽदक्षः। रजसः। विऽधर्मणि॥ १॥

पदार्थः-(**उत्**) (**उ**) (**स्यः**) सः (**देवः**) (**सविता**) ऐश्वर्य्यवान् सत्कर्मसु प्रेरको राजा (**हिरण्यया**) हिरण्याद्याभूषणयुक्तौ (**बाहू**) भुजौ (**अयंस्त**) यच्छति (**सवनाय**) ऐश्वर्य्याय (**सुक्रतुः**) उत्तमप्रज्ञः (**घृतेन**) उदकेनाज्येन वा (**पाणी**) प्रशंसनीयौ (**अभि**) (**प्रुष्णुते**) अभिदहति (**मखः**) यज्ञ इव सुखकर्त्ता (**युवा**) प्राप्तयौवनः (**सुदक्षः**) शोभनं दक्षं बलं यस्य सः (**रजसः**) लोकस्य (**विधर्मणि**) विशिष्टे धर्मे॥१॥

अन्वयः-यो मख इव सुखकरो विधर्मणि सुदक्षो युवा सुक्रतुः सविता देवः सवनाय घृतेन युक्तौ पाणी हिरण्यया बाहू उदयंस्त स्य उ रजसो विरोधिनोऽभि प्रुष्णुते॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यो विद्वानतिबलयुक्तभुजो महाप्रज्ञो विशेषेण धार्मिकः सन्नैश्वर्यप्राप्तये सततमुद्यमं करोति स ऐश्वर्यं प्राप्य पुनः सर्वस्याः प्रजाया धर्मे निवेशनं कृत्वा यज्ञ इव सर्वदा सुखयेत्॥१॥

पदार्थः-जो (**मखः**) यज्ञ के समान सुख करने वाला (**विधर्मणि**) विशेष धर्म में (**सुदक्षः**) सुन्दर बल जिसका वह (**युवा**) जवान (**सुक्रतुः**) उत्तम बुद्धियुक्त (**सविता**) ऐश्वर्य्यवान् (**देवः**) विद्वान् (**सवनाय**) ऐश्वर्य के लिये (**घृतेन**) जल वा घी से युक्त (**पाणी**) प्रशंसा करने योग्य (**हिरण्यया**) सुवर्ण आदि आभूषण युक्त (**बाहू**) भुजाओं को (**उत्, अयंस्त**) उठाता है (**स्यः, उ**) वही (**रजसः**) लोक के विरोधियों को (**अभि, प्रुष्णुते**) सब ओर से भस्म करता है॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो विद्वान् अति बल से युक्त भुजाओं वाला, अत्यन्त बुद्धिमान्, विशेषता से धर्मात्मा होकर ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिये निरन्तर उद्यम करता है, वह ऐश्वर्य को प्राप्त होकर फिर से सब प्रजा के धर्म में प्रवेश कर जैसे यज्ञ सुख देता है, वैसे सुखी करता है॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

देवस्यं वयं संवितुः सवीमनि श्रेष्ठे स्याम वसुनश्च दावने।
यो विश्वस्य द्विपदो यश्चतुष्पदो निवेशने प्रसवे चासि भूमनः॥ २॥

देवस्यं। वयम्। सवितुः। सवीमनि। श्रेष्ठे। स्याम। वसुनः। च। दावने। यः। विश्वस्य। द्विऽपदः। यः। चतुःऽपदः। निऽवेशने। प्रऽसवे। च। असि। भूमनः॥ २॥

पदार्थः-(**देवस्य**) स्वप्रकाशस्य परमेश्वरस्य (**वयम्**) (**सवितुः**) सकलजगदुत्पादकस्य (**सवीमनि**) उत्पादिते जगति (**श्रेष्ठे**) व्यवहारे (**स्याम**) भवेम (**वसुनः**) धनस्य (**च**) (**दावने**) दाने (**यः**) (**विश्वस्य**) समग्रस्य (**द्विपदः**) मनुष्यादेः (**यः**) (**चतुष्पदः**) गवादेः (**निवेशने**) सर्वे निविशन्ति यस्मिंस्तस्मिन् (**प्रसवे**) प्रसूते (**च**) (**असि**) (**भूमनः**) बहुरूपस्य॥ २॥

अन्वयः-हे विद्वन् राजन्! यो द्विपदो यश्चतुष्पदो भूमनो विश्वस्य प्रसवे निवेशनेऽभिव्याप्य विराजते तस्य सवितुर्देवस्य श्रेष्ठे सवीमनि वसुनश्च दावने यथा वयमुद्युक्ताः स्याम तथा त्वं यतश्चासि तस्मादत्र राजा भव॥ २॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे विद्वानो! यथाऽत्र जगति जगदीश्वरोऽभिव्याप्य सर्वं रक्षति तथैवात्र व्याप्तो भूत्वा विद्याविनयाभ्यां सर्वं राष्ट्रं पुत्रवद्रक्षत॥ २॥

पदार्थः-हे विद्वान् राजा! (**यः**) जो (**द्विपदः**) मनुष्यादि दो पग वाले जीव और (**यः**) जो (**चतुष्पदः**) गो आदि चार पग वाले पशु आदि जीवों के (**भूमनः**) बहुरूपी (**विश्वस्य**) समग्र संसार के (**प्रसवे**) उस उत्पन्न हुए स्थान में (**निवेशने**) जिसमें सब निवेश करते हैं अभिव्याप्त होकर विराजमान है उस (**सवितुः**) सकल जगत् के उत्पन्न करने वाले (**देवस्य**) अपने आप प्रकाशमान परमेश्वर के (**श्रेष्ठे**) प्रशंसित व्यवहार में (**सवीमनि**) उत्पन्न हुए जगत् में (**वसुनः, च**) धन के भी (**दावने**) देने में जैसे (**वयम्**) हम लोग उद्यत (**स्याम**) हों, वैसे तुम (**च**) भी जिस कारण (**असि**) हो इससे यहाँ राजा होओ॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे विद्वानो! जैसे इस जगत् में जगदीश्वर अभिव्याप्त होकर सब की रक्षा करता है, वैसे ही इस जगत् में व्याप्त होकर विद्या और विनय से समस्त राज्य को पुत्र के समान पालो॥ २॥

पुनः स राजा कीदृशः केन किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह राजा कैसा और किससे क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

अदब्धेभिः सवितः पायुभिष्ट्वं शिवेभिरद्य परि पाहि नो गयम्।
हिरण्यजिह्वः सुविताय नव्यसे रक्षा माकिर्नो अघशंस ईशत॥ ३॥

अदब्धेभिः। सवितरिति। पायुऽभिः। त्वम्। शिवेभिः। अद्य। परि। पाहि। नः। गयम्। हिरण्यऽजिह्वः। सुवितायं। नव्यसे। रक्ष। माकिः। नः। अघऽशंसः। ईशत॥ ३॥

पदार्थ:-(**अदब्धेभि:**) अहिंसिकैरहिंसितैर्वा (**सवित:**) सत्कर्मसु प्रेरक राजन् (**पायुभि:**) रक्षणैः (**त्वम्**) (**शिवेभि:**) सुखकारकैर्मङ्गलविधायकैः (**अद्य**) इदानीम् (**परि**) सर्वतः (**पाहि**) रक्ष (**न:**) अस्माकम् (**गयम्**) गमयपत्यं धनं गृहं वा। **गय इत्यपत्यनाम।** (निघं०२.२) **धननाम** २.१० **गृहनाम च** (निघं०३.४) (**हिरण्यजिह्व:**) हिरण्यमिव सत्येन सुप्रकाशिता वाणी यस्य सः (**सुविताय**) ऐश्वर्याय (**नव्यसे**) अतिशयेन नवीनाय (**रक्षा**) (**माकि:**) निषेधे (**न:**) अस्माकम् (**अघशंस:**) स्तेनः (**ईशत**) विघ्नानां ईश्वरो भवेत्॥३॥

अन्वय:-हे सवितस्त्वमद्याऽदब्धेभिः शिवेभिः पायुभिर्नो गयं परि पाहि हिरण्यजिह्वः सन्नव्यसे सुविताय नो गयं रक्षा यथाऽघशंसो नो माकिरीशत तथा विधेहि॥३॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यो राजा प्रयत्नेन प्रजाः संरक्ष्य दस्य्वादीन् हन्यात् स एव नवीनं नवीनमैश्वर्यं जनयित्वा सततं प्रजाप्रियो धार्मिकः स्यात्॥३॥

पदार्थ:-हे (**सवित:**) अच्छे कामों में प्रेरणा देने वाले राजन्! (**त्वम्**) आप (**अद्य**) अब (**अदब्धेभि:**) न नष्ट करने वा न नष्ट होने और (**शिवेभि:**) सुख करने वा मङ्गल विधान करने वाले (**पायुभि:**) रक्षा के निमित्तों से (**न:**) हमारे (**गयम्**) सन्तान, धन और घर की (**परि, पाहि**) सब ओर से रक्षा करो तथा (**हिरण्यजिह्व:**) सुवर्ण के समान सत्य से जिसकी वाणी प्रकाशित है ऐसे होते हुए (**नव्यसे**) अतीव **[**नवीन**]** (**सुविताय**) ऐश्वर्य्य के लिये हमारे पुत्रादिकों की (**रक्षा**) रक्षा करो जैसे (**अघशंस:**) चोर (**न:**) हम लोगों के प्रति (**माकि:**) न (**ईशत**) विघ्नों के करने को समर्थ हो, वैसा करो॥३॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो राजा प्रयत्न के साथ प्रजाओं की अच्छे प्रकार रक्षा कर डाकुओं को मारे, वही नवीन-नवीन ऐश्वर्य्य को उत्पन्न कर निरन्तर प्रजाजनों का प्यारा और धार्मिक हो॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

उदु ष्य देवः सविता दमूना हिरण्यपाणिः प्रतिदोषमस्थात्।
अयोहनुर्यजतो मन्द्रजिह्व आ दाशुषे सुवति भूरि वामम्॥४॥

उत्। ऊँ इति। स्यः। देवः। सविता। दमूना। हिरण्यऽपाणिः। प्रतिऽदोषम्। अस्थात्। अयःऽहनुः। यजतः। मन्द्रऽजिह्वः। आ। दाशुषे। सुवति। भूरि। वामम्॥४॥

पदार्थ:-(**उत्**) (**उ**) (**स्य:**) सः (**देव:**) सुखदाता विद्वान् (**सविता**) ऐश्वर्य्यप्रदः (**दमूना:**) दमनशीलः (**हिरण्यपाणि:**) हिरण्यादिकं सुवर्णं पाणौ यस्य सः (**प्रतिदोषम्**) यथा रात्रिं रात्रिं प्रति सूर्यस्तथा (**अस्थात्**) उत्तिष्ठेत् (**अयोहनु:**) अयो लोहमिव दृढा हनुर्यस्य सः (**यजत:**) सङ्गन्ता

(मन्द्रजिह्वः) मन्द्रा आनन्दप्रदा कमनीया जिह्वा वाणी यस्य सः **(आ)** **(दाशुषे)** दात्रे प्रजाजनाय **(सुवति)** उद्योगे प्रेरयति **(भूरि)** **(वामम्)** प्रशस्यं कर्म प्रति॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो दमूना हिरण्यपाणिरयोहनुर्यजतो मन्द्रजिह्वः सविता देवः प्रतिदोषं सूर्य इव प्रजापालनायोदस्थाद्दाशुषे भूरि वाममा सुवति स्य उ राजा भवितुमर्हेत्॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथेश्वरेण नियुक्तः सूर्य्यलोकः प्रतिक्षणं स्वक्रियां न जहाति तथैव यो राजा न्यायेन राज्यपालनाय प्रतिक्षणमुद्युक्तो भवत्येकक्षणमपि व्यर्थं न नयति सर्वान् मनुष्यानुत्तमेषु कर्मसु स्वयं वर्त्तित्वा प्रेरयति स एव शमदमादिशुभगुणाढ्यो राजा भवितुमर्हतीति सर्वे विजानन्तु॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(दमूनाः)** दमनशील **(हिरण्यपाणिः)** सुवर्ण आदि हाथ में लिये हुए **(अयोहनुः)** लोहे के समान दृढ़ ठोढ़ी रखने और **(यजतः)** सङ्ग करने वाला **(मन्द्रजिह्वः)** जिसकी आनन्द देने वाली वाणी विद्यमान वह **(सविता)** ऐश्वर्य्यदाता और **(देवः)** सुख देनेहारा विद्वान् **(प्रतिदोषम्)** जैसे रात्रि-रात्रि के प्रति सूर्य्य उदय होता है, वैसे प्रजा पालन करने के लिये **(उत, अस्थात्)** उठता है तथा **(दाशुषे)** दान करने वाले के लिये **(भूरि)** बहुत **(वामम्)** प्रशंसा योग्य कर्म के प्रति **(आ, सुवति)** उद्योग करने में प्रेरणा देता है **(स्यः, उ)** वही राजा होने को योग्य होता है॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे ईश्वर से नियुक्त किया सूर्यलोक प्रतिक्षण अपनी क्रिया को नही छोड़ता, वैसे ही जो राजा न्याय से राज्य पालने के लिये प्रतिक्षण उद्योग करता है, एक क्षण भी व्यर्थ नहीं खोता तथा सब मनुष्यों को उत्तम कर्मों के बीच आप वर्त्ताव कर उन्हें प्रेरणा देता है, वही शम-दम आदि शुभ गुणों से युक्त राजा होने योग्य है, यह सब जानें॥४॥

पुनः स राजा किंवत् कीदृशो भवेदित्याह॥

फिर वह राजा किसके तुल्य कैसा हो, इस विषय को कहते हैं॥

उदू॑ अया॑ँ उपव॒क्तेव॑ बा॒हू हि॑र॒ण्यया॑ सवि॒ता सु॒प्रती॑का।

दि॒वो रोहां॑स्यरुहत् पृथि॒व्या अरी॑रमत् प॒तय॒त् कच्चि॒दभ्व॑म्॥५॥

उत्। ऊँ इति॑। अ॒यान्। उ॒प॒व॒क्ताऽइ॑व। बा॒हू इति॑। हि॒र॒ण्यया॑। स॒वि॒ता। सु॒ऽप्रती॑का। दि॒वः। रोहां॑सि। अ॒रु॒ह॒त्। पृ॒थि॒व्याः। अरी॑रमत्। प॒तय॑त्। कत्। चि॒त्। अभ्व॑म्॥५॥

पदार्थः-**(उत्)** **(उ)** **(अयान्)** इयात् **(उपवक्तेव)** यथोपवक्ता तथा **(बाहू)** **(हिरण्यया)** हिरण्यवत् सुदृढौ सुशोभितौ **(सविता)** सूर्य इव **(सुप्रतीका)** शोभनानि प्रतीकानि प्रतीतिकराणि कर्माणि याभ्यां तौ **(दिवः)** आकाशस्य **(रोहांसि)** आरोहणानि **(अरुहत्)** रोहति **(पृथिव्याः)** अन्तरिक्षस्य मध्य इव भूमेः **(अरीरमत्)** रमयेत् **(पतयत्)** पतिः स्वामी पालक इवाचरेत् **(कत्)** कदा **(चित्)** अपि **(अभ्वम्)** महान्तं न्यायम्॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा सविता दिवो रोहांस्यरुहत् पृथिव्याः सर्वमभ्वमरीरमच्चिदपि पतयत् तथा अस्य सुप्रतीका हिरण्यया बाहू वर्तते स उ उपवक्तेव कदुदयान्॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। हे राजँस्त्वं कदा सूर्यवन्न्यायविनयाभ्यां प्रकाशितः सुदृढाङ्ग आप्तवद्वक्ता भवेः यथाऽस्मिञ्जगति सर्वोपकारायेश्वरेण सूर्यो निर्मितस्तथैव सर्वेषां सुखाय राजा विहितः॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(सविता)** सूर्यमण्डल **(दिवः)** आकाश की **(रोहांसि)** चढ़ाइयों को **(अरुहत्)** चढ़ता है और **(पृथिव्याः)** अन्तरिक्ष के मध्य में भूमि के समस्त **(अभ्वम्)** महान् न्याय को **(अरीरमत्)** वर्त्तावे **(चित्)** और **(पतयत्)** पति के समान आचरण करे, वैसे जिसकी **(सुप्रतीका)** सुन्दर प्रतीति करने वाले काम जिनसे होते ऐसे **(हिरण्यया)** हिरण्य के समान सुदृढ़ सुशोभित **(बाहू)** भुजा वर्त्तमान है वह **(उ)** हो **(उपवक्तेव)** समीप कहने वाले के समान **(कत्)** कब **(उत्, अयान्)** उदय हो॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। हे राजन्! आप कब सूर्य के समान न्याय और विनय से प्रकाशित सुन्दर दृढ़ अङ्गयुक्त, श्रेष्ठ धर्मज्ञ विद्वानों के समान वक्ता होओ। जैसे इस जगत् में सर्वोपकार के लिये ईश्वर ने सूर्य बनाया है, वैसे ही सब के सुख के लिये राजा बनाया है॥

पुनः स प्रजाभ्यः किं कुर्यादित्याह॥

फिर वह प्रजाओं के लिये क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

वाममद्य सवितर्वाममु श्वो दिवेदिवे वाममस्मभ्यं सावीः।

वामस्य हि क्षयस्य देव भूरेरया धिया वामभाजः स्याम॥६॥१५॥

वामम्। अद्य। सवितः। वामम्। ऊँ इति। श्वः। दिवेऽदिवे। वामम्। अस्मभ्यम्। सावीः। वामस्य। हि। क्षयस्य। देव। भूरेः। अया। धिया। वामऽभाजः। स्याम॥६॥

पदार्थः-**(वामम्)** प्रशस्यसुखम् **(अद्य)** इदानीम् **(सवितः)** ऐश्वर्यप्रद राजन् **(वामम्)** प्रशंसनीयम् **(उ)** **(श्वः)** आगामिदिने **(दिवेदिवे)** प्रतिदिनम् **(वामम्)** अत्युत्कृष्टम् **(अस्मभ्यम्)** **(सावीः)** जनय **(वामस्य)** प्रशस्यस्य **(हि)** यतः **(क्षयस्य)** गृहस्य **(देव)** दिव्यगुणयुक्त **(भूरेः)** बहुविधस्य **(अया)** अनया **(धिया)** प्रज्ञयाऽनेन कर्मणा वा **(वामभाजः)** ये वामं भजन्ति ते **(स्याम)** भवेम॥६॥

अन्वयः-हे सवितर्देव! यथा हि त्वमद्य वाममु श्वो वामं दिवेदिवे वाममस्मभ्यं सावीस्तस्मात् तयाऽया धिया भूरेर्वामस्य क्षयस्य वामभाजो वयं स्याम॥६॥

भावार्थः-हे राजन्! यस्माद्भवानस्मभ्यं प्रजाजनेभ्यो नित्यं प्रशंसनीयं सुखं जनयति रक्षां विधत्ते तस्माद्वयं सुखेन धर्म्यगृहप्रशस्तकर्मणां सेवका भूत्वा भवदाज्ञायां नित्यं वर्त्तेमहीति॥६॥

अत्र सवितृराजप्रजाकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥ इत्येकसप्ततितमं सूक्तं पञ्चदशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(सवितः)** ऐश्वर्य्य के देने वाले **(देव)** दिव्यगुणयुक्त राजन्! जैसे **(हि)** जिस कारण से आप **(अद्य)** अब **(वामम्)** प्रशंसा करने योग्य सुख **(उ)** और **(श्वः)** अगले दिन **(वामम्)** प्रशंसा करने योग्य सुख तथा **(दिवेदिवे)** प्रतिदिन **(वामम्)** अति उत्तम सुख **(अस्मभ्यम्)** हमारे लिये **(सावीः)** उत्पन्न करो उससे **(अया)** इस **(धिया)** प्रज्ञा वा कर्म से **(भूरेः)** बहुत प्रकार के **(वामस्य)** प्रशंसित **(क्षयस्य)** घर के **(वामभाजः)** वामभाज अर्थात् प्रशंसित सुख भोगने वाले हम लोग **(स्याम)** हों॥६॥

भावार्थः-हे राजन् जिससे आप हम प्रजाजनों के लिये प्रशंसनीय सुख को उत्पन्न करते और रक्षा का विधान करते हो जैसे हम लोग सुख से धन, घर और प्रशंसित कामों के सेवने वाले होकर आपकी आज्ञा में नित्य वर्तें॥६॥

इस सूक्त में सविता, राजा और प्रजा के कर्मों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह इकहतरवां सूक्त और पन्द्रहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ पञ्चर्चस्य द्विसप्ततितमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। इन्द्रासौमौ देवते। १ त्रिष्टुप्। २, ४, ५ विराट्त्रिष्टुप्। ३ निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथाध्यापकोपदेशकौ किंवत् किं कुर्यातामित्याह॥

अब बहत्तरवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में अध्यापक और उपदेशक किसके तुल्य क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

इन्द्रासोमा महि तद्वां महित्वं युवं महानि प्रथमानि चक्रथुः।
युवं सूर्यं विविदथुर्युवं स्वर्विश्वा तमांस्यहतं निदश्च॥१॥

इन्द्रासोमा। महि। तत्। वाम्। महिऽत्वम्। युवम्। महानि। प्रथमानि। चक्रथुः। युवम्। सूर्यम्। विविदथुः। युवम्। स्वः। विश्वा। तमांसि। अहतम्। निदः। च॥१॥

पदार्थः-(**इन्द्रसोमा**) विद्युच्चन्द्रमसौ (**महि**) महत् (**तत्**) (**वाम्**) युवयोः (**महित्वम्**) (**युवम्**) युवाम् (**महानि**) पूजनीयानि (**प्रथमानि**) ब्रह्मचर्यविद्याग्रहणदानादीनि (**चक्रथुः**) कुर्य्यातम् (**युवम्**) युवाम् (**सूर्यम्**) (**विविदथुः**) विन्दतः। अत्र व्यत्ययः (**युवम्**) युवाम् (**स्वः**) सुखम् (**विश्वा**) सर्वाणि (**तमांसि**) रात्रिरिवाऽविद्यादीनि (**अहतम्**) हन्यातम् (**निदः**) निन्दकान् (**च**) पाखण्डिनः॥१॥

अन्वयः-हे अध्यापकोपदेशकौ! यथेन्द्रासोमा सूर्यं विविदथुस्तथा युवं न्यायार्कं प्राप्नुतं यथैतौ महान्ति कर्माणि कुरुतस्तथा वां तन्महि महित्वमस्ति तथा युवं महानि प्रथमानि चक्रथुः युवं यथैतौ विश्वा तमांसि हतस्तथाऽविद्याऽन्यायजनितानि पापान्यहतं स्वः प्राप्नुतं प्रापयेतं वा निदश्च सततं हन्यातम्॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे प्रजाजना यथा सूर्यं प्राप्य चन्द्रादयो लोकाः प्रकाशिता भवन्ति तथैवाध्यापकोपदेशकौ सङ्गत्य सर्वे प्रकाशमात्मानो भवन्तु॥१॥

पदार्थः-हे अध्यापक और उपदेशको! जैसे (**इन्द्रासोमा**) बिजुली और चन्द्रमा (**सूर्यम्**) सूर्य्य को (**विविदथुः**) प्राप्त होते हैं, वैसे (**युवम्**) तुम न्यायरूपी सूर्य्य को प्राप्त होओ जैसे ये बड़े कामों को करते हैं, वैसे (**वाम्**) तुम्हारा (**तत्**) वह (**महि**) महान् (**महित्वम्**) बड़प्पन है और वैसे (**युवम्**) तुम (**महानि**) प्रशंसा योग्य (**प्रथमानि**) ब्रह्मचर्य्य और विद्या ग्रहण और दान आदि कामों को (**चक्रथुः**) करो (**युवम्**) तुम जैसे यह दोनों (**विश्वा**) समस्त (**तमांसि**) रात्रि के समान अविद्या आदि अन्धकारों को नष्ट करते हैं, वैसे अविद्या और अन्याय से उत्पन्न हुए पापों को (**अहतम्**) नष्ट करो (**स्वः**) सुख की प्राप्ति करो वा कराओ (**निदः, च**) और निन्दक तथा पाखण्डियों को निरन्तर नष्ट करो॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे प्रजाजनो! जैसे सूर्य को प्राप्त होकर चन्द्र आदि लोक प्रकाशित होते हैं, वैसे ही अध्यापक और उपदेशकों का सङ्ग कर सब प्रकाशित आत्मा वाले हों॥१॥

पुनस्तौ किंवत् किं कुरुत इत्याह॥

फिर वे किसके तुल्य क्या करते हैं, इस विषय को कहते हैं॥

इन्द्रा॑सोमा वा॒सय॑थ उ॒षास॒मुत्सूर्यं॑ नयथो॒ ज्योति॑षा स॒ह।

उप॒ द्यां स्क॒म्भथुः स्कम्भ॑ने॒नाप्र॑थतं पृथि॒वीं मा॒तरं॒ वि॥ २॥

इन्द्रा॑सोमा। वा॒सय॑थः। उ॒षस॑म्। उत्। सूर्य॑म्। न॒य॒थः। ज्योति॑षा। स॒ह। उप॑। द्याम्। स्क॒म्भथुः। स्कम्भ॑नेन। अप्र॑थतम्। पृथि॒वीम्। मा॒तर॑म्। वि॥ २॥

पदार्थः-(**इन्द्रासोमा**) वायुविद्युताविव (**वासयथः**) (**उषासम्**) प्रभातम् (**उत्**) अपि (**सूर्यम्**) (**नयथः**) (**ज्योतिषा**) प्रकाशेन (**सह**) (**उप**) (**द्याम्**) प्रकाशम् (**स्कम्भथुः**) स्कम्भेतम् (**स्कम्भनेन**) (**अप्रथतम्**) प्रथेयाथाम् (**पृथिवीम्**) भूमिम् (**मातरम्**) मातृवद्वर्त्तमानाम् (**वि**)॥ २॥

अन्वयः-हे अध्यापकोपदेशकौ! यथेन्द्रासोमोषासमुत् सूर्यं वासयतस्तथा विद्यान्यायाभ्यां प्रजा युवां वासयथः। यथेमौ ज्योतिषा सह द्यां स्कम्भतस्तथा सद्व्यवहारमुपस्कम्भथुः। यथेमौ स्कम्भनेन मातरमिव वर्त्तमाना पृथिवीं प्रथेते तथैव राज्यं व्यप्रथतं सुखं नयथः॥ २॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे अध्यापकोपदेशका यथा विद्युत्पवनौ सूर्यादींल्लोकान्निवासयतस्तथैव प्रजाः सूपदेशेन सुखे वासयत॥ २॥

पदार्थः-हे अध्यापक और उपदेशको जैसे (**इन्द्रासोमा**) वायु और बिजुली (**उषासम्**) प्रभातकाल को (**उत्**) और (**सूर्यम्**) सूर्य्यमण्डल को बसाते हैं, वैसे विद्या और न्याय से प्रजाजनों को तुम (**वासयथः**) वसाओ जैसे दोनों (**ज्योतिषा**) ज्योति के (**सह**) साथ (**द्याम्**) प्रकाश को रोकें, वैसे अच्छे व्यवहार को (**उप, स्कम्भयुः**) व्यवहार करने वाले के समीप रोको जैसे यह दोनों (**स्कम्भनेन**) रोकने से (**मातरम्**) माता के समान वर्त्तमान (**पृथिवीम्**) पृथिवी को विस्तारते हैं, वैसे ही राज्य को (**वि, अप्रथतम्**) विस्तारो और सुख को (**नयथः**) प्राप्त करो॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे अध्यापक और उपदेशको! जैसे बिजुली और पवन सूर्य्य आदि लोकों का निवास कराते हैं, वैसे ही प्रजाजनों को अच्छे उपदेश से सुख में बसाओ॥ २॥

पुनस्ते किंवत् कथं वर्त्तेयातामित्याह॥

फिर वे किसके तुल्य कैसे वर्त्ताव करावें, इस विषय को कहते हैं॥

इन्द्रा॑सोमा॒वहि॑म॒पः प॑रि॒ष्ठां ह॒थो वृ॒त्रमनु॑ वां॒ द्यौर॑मन्यत।

प्रार्णां॑स्यैरयतं न॒दीना॒मा स॑मु॒द्राणि॑ पप्रथुः पु॒रूणि॑॥ ३॥

इन्द्रा॑सोमौ। अहि॑म्। अ॒पः। प॒रि॒ऽस्थाम्। ह॒थः। वृ॒त्रम्। अनु॑। वा॒म्। द्यौः। अ॒म॒न्य॒त। प्र। अर्णां॑सि। ऐ॒र॒य॒त॒म्। न॒दीना॑म्। आ। स॒मु॒द्राणि॑। प॒प्र॒थुः। पु॒रूणि॑॥ ३॥

पदार्थ:-**(इन्द्रासोमौ)** विद्युन्मरुतौ **(अहिम्)** मेघम् **(अप:)** जलानि **(परिष्ठाम्)** य: परितस्तिष्ठति तम् **(हथ:)** **(वृत्रम्)** सूर्यावरकम् **(अनु)** **(वाम्)** युवयोर्मध्ये **(द्यौ:)** प्रकाश इव **(अमन्यत)** मन्यते **(प्र)** **(अर्णांसि)** उदकानि। **अर्ण इत्युदकनाम।** (निघं०१.१२) **(ऐरयतम्)** प्रापयतम् **(नदीनाम्)** **(आ)** **(समुद्राणि)** सम्यग्द्रवन्त्यापो येषु स्थानेषु तानि **(पप्रथु:)** व्याप्नुत:। अत्र सर्वत्र पुरुषव्यत्यय: **(पुरूणि)** बहूनि॥३॥

अन्वय:-हे अध्यापकोपदेशकौ! युवां यथेन्द्रासोमौ परिष्ठां वृत्रमहिं हथोऽप आपप्रथुस्तथैवाऽविद्यां हत्वा विद्यां प्रथयतम्। यथेमौ नदीनां पुरूणि समुद्राण्यर्णांसीरयतस्तथा शास्त्राणां मध्ये मनुष्यान्त:करणानि प्रैरयतमेवं वां युवयोरेको द्यौरिवामन्यत द्वितीयस्तमनुवर्त्तेत॥३॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कार:। हे अध्यापकोपदेशका! यथा वायुविद्युतौ मेघं हत्वोदकं वर्षयतस्तथा कुशिक्षां विनाश्य सुशिक्षावृष्टिं कुर्वन्तु॥३॥

पदार्थ:-हे अध्यापक और उपदेशको! तुम दोनों जैसे **(इन्द्रासोमौ)** बिजुली और पवन **(परिष्ठाम्)** सब ओर से स्थित होने वाले **(वृत्रम्)** सूर्यावरक **(अहिम्)** मेघ को **(हथ:)** छिन्न-भिन्न करते और **(अप:)** जलों को **(आ, पप्रथु:)** व्याप्त होते हैं, वैसे अविद्या को नष्ट-भ्रष्ट कर विद्या को विस्तारो जैसे ये दोनों **(नदीनाम्)** नदियों के **(पुरूणि)** बहुत **(समुद्राणि)** उन स्थानों को जिनमें अच्छे प्रकार जल तरङ्गें लेते हैं तथा **(अर्णांसि)** जलों को प्रेरणा देते हैं, वैसे शास्त्रों के बीच मनुष्यों के अन्त:करणों को **(प्र, ऐरयतम्)** प्रेरित करो ऐसे **(वाम्)** तुम दोनों के बीच एक **(द्यौ:)** प्रकाश के समान **(अमन्यत)** मानता है, दूसरा **(अनु)** तदनुगामी होता है॥३॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे अध्यापक और उपदेशको! जैसे वायु और बिजुली मेघ को नष्ट-भ्रष्ट कर जल को वर्षाते हैं, वैसे कुत्सित शिक्षा को विनष्ट कर अच्छी शिक्षा की वर्षा करो॥३॥

पुनस्तौ किंवत् किं कुर्यातामित्याह॥

फिर वे किसके तुल्य क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

इन्द्रा॑सोमा प॒क्वमा॒मास्व॒न्तर्नि गवा॒मिद् द॑धथु॒र्व॒क्षणा॑सु।

ज॒गृ॒भथु॒रन॑पिनद्धमासु॒ रुश॑च्चि॒त्रासु॒ जग॑तीष्व॒न्त:॥४॥

इन्द्रा॑सोमा। प॒क्वम्। आ॒मासु॑। अ॒न्त:। नि। गवा॑म्। इत्। द॒ध॒थु॒:। व॒क्षणा॑सु। ज॒गृ॒भथु॑:। अन॑पिऽनद्धम्। आ॒सु॒। रुश॑त्। चि॒त्रासु॑। जग॑तीषु। अ॒न्त॒रिति॑॥४॥

पदार्थ:-**(इन्द्रसोमा)** वायुविद्युतौ **(पक्वम्)** **(आमासु)** अपक्वासु ओषधीषु **(अन्त:)** मध्ये **(नि)** **(गवाम्)** किरणानाम् **(इत्)** एव **(दधथु:)** धत्त: **(वक्षणासु)** नदीषु **(जगृभथु:)** गृह्णीत:। अत्र सर्वत्र

व्यत्यय:। **(अनपिनद्धम्)** अनाच्छादितम् **(आसु)** **(रुशत्)** सुरूपम्। **(चित्रासु)** अद्भुतासु **(जगतीषु)** सृष्टिषु **(अन्त:)** मध्ये॥४॥

अन्वय:-हे अध्यापकोपदेशकौ! युवां यथेन्द्रसोमा आमास्वन्त: पक्वं नि दधथुर्गवामिदासु वक्षणास्वनपिनद्धं जगृभथुरासु चित्रासु जगतीष्वन्तो रुशद्दधथस्तथा युवां वर्त्तेयाथाम्॥४॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कार:। ये विद्युत्सोमवत्सर्वे दृढं ज्ञानं संस्थाप्य नदीप्रवाहवदग्रे चालयन्ति ते जगति कल्याणकरा भवन्ति॥४॥

पदार्थ:–हे अध्यापक और उपदेशको! तुम दोनों जैसे **(इन्द्रासोमा)** पवन और बिजुली **(आमासु)** न पकी हुई सामग्रियों के **(अन्त:)** बीच **(पक्वम्)** पाक को **(नि, दधथु:)** स्थापन करते हैं और **(गवाम्)** किरणों के बीच **(इत्)** निश्चित तथा **(आसु)** इन **(वक्षणासु)** नदियों में **(अनपिनद्धम्)** खुला हुआ **(जगृभथु:)** ग्रहण करते हैं तथा इन **(चित्रासु)** अद्भुत **(जगतीषु)** सृष्टियों के **(अन्त:)** बीच **(रुशत्)** सुरूप को धारण करते हैं, वैसे तुम वर्त्तो॥४॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो बिजुली और सोम के समान सब में दृढ़ ज्ञान स्थापन कर नदी के प्रवाह के तुल्य आगे चलाते हैं, वे संसार में कल्याण करने वाले होते हैं॥४॥

पुनस्तौ किंवत् किं कुर्यातामित्याह॥

फिर वे किसके तुल्य क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

इन्द्रासोमा युवमङ्ग तरुत्रमपत्यसाचं श्रुत्यं रराथे।

युवं शुष्मं नर्यं चर्षणिभ्य: सं विव्यथु: पृतनाषाहमुग्रा॥५॥१६॥

इन्द्रासोमा। युवम्। अङ्ग। तरुत्रम्। अपत्यऽसाचम्। श्रुत्यम्। रराथे इति। युवम्। शुष्मम्। नर्यम्। चर्षणिऽभ्य:। सम्। विव्यथु:। पृतनाऽसहम्। उग्रा॥५॥

पदार्थ:–**(इन्द्रासोमा)** वायुविद्युद्वद्वर्त्तमानौ **(युवम्)** युवाम् **(अङ्ग)** मित्र **(तरुत्रम्)** दु:खात्तारकम् **(अपत्यसाचम्)** यदपत्ये सचति व्याप्नोति तत् **(श्रुत्यम्)** श्रुतिषु श्रवणोषु साधु: **(रराथे)** रातम् **(युवम्)** **(शुष्मम्)** बलम् **(नर्यम्)** नृषु साधु: **(चर्षणिभ्य:)** मनुष्येभ्य: **(सम्)** **(विव्यथु:)** सन्तनुतं वेष्टयतम् **(पृतनाषाहम्)** य: पृतना: सेना: सहते तम् **(उग्रा)** उग्रौ तेजस्विनौ॥५॥

अन्वय:-हे अङ्ग अध्यापकोपदेशकौ! युविमिन्द्रासोमावत्तरुत्रमपत्यसाचं श्रुत्यं रराथे युवं चर्षणिभ्य: उग्रा सन्तौ पृतनाषाहं नर्यं शुष्मं सं विव्यथु:॥५॥

भावार्थ:-हे अध्यापकोपदेशका! भवन्तो वायुविद्युद्वत्सर्वत्रानुषङ्गिनस्सन्त उत्तमान्यपत्यान्युत्पाद्य मनुष्यहितकरं शरीरात्मबलं जनयन्तु येन शत्रुसेनां सोढुं शक्नुयुरिति॥५॥

अत्रेन्द्रसोमाध्यापकोपदेशककृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति द्विसप्ततितमं सूक्तं षोडशो वर्गश्च समाप्त:॥

पदार्थः-हे **(अङ्ग)** हे मित्र अध्यापक और उपदेशक! **(युवम्)** तुम दोनों **(इन्द्रासोमा)** वायु और बिजुली के समान वर्त्तमान **(तरुत्रम्)** दुःख से तारने और **(अपत्यसाचम्)** सन्तान के बीच व्याप्त होने वाले **(श्रुत्यम्)** श्रवणों में उत्तम ज्ञान को **(रराथे)** देओ और **(युवम्)** तुम दोनों **(चर्षणिभ्यः)** मनुष्यों के लिये **(उग्रा)** तेजस्वी होते हुए **(पृतनाषाहम्)** सेनाओं को सहने वाले **(नर्यम्)** मनुष्यों में उत्तम **(शुष्मम्)** बल को **(सम्, विव्यथुः)** अच्छे प्रकार युक्त करो॥५॥

भावार्थः-हे अध्यापक वा उपदेशको! आप लोग पवन और बिजुली के समान सर्वत्र अनुकूलता से सङ्ग वाले होते हुए उत्तम सन्तानों को उत्पन्न कर मनुष्यों के हित करने वाले शरीर और आत्मा के बल को उत्पन्न करें, जिससे शत्रुओं की सेना को सह सकें॥५॥

इस सूक्त में इन्द्र, सोम, अध्यापक और उपदेशकों के काम का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह बहत्तरवां सूक्त और सोलहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ त्र्यृचस्य त्रिसप्ततितमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्यं ऋषिः। बृहस्पतिर्देवता। १, २ त्रिष्टुप्। ३ विराट्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ राजा किंवत् कीदृशः स्यादित्याह॥

अब तीन ऋचावाले तिहत्तरवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में राजा किसके तुल्य कैसा हो, इस विषय को कहते हैं॥

यो अद्रिभित् प्रथमजा ऋतावा बृहस्पतिराङ्गिरसो हविष्मान्।
द्विबर्हज्मा प्राघर्मसत्पिता न आ रोदसी वृषभो रोरवीति॥१॥

यः। अद्रिऽभित्। प्रथमऽजाः। ऋतऽवा। बृहस्पतिः। आङ्गिरसः। हविष्मान्। द्विबर्हऽज्मा। प्राघर्मऽसत्। पिता। नः। आ। रोदसी इति। वृषभः। रोरवीति॥१॥

पदार्थः-**(यः)** **(अद्रिभित्)** मेघच्छेत्ता **(प्रथमजाः)** यः प्रथमं जातः **(ऋतावा)** य ऋतं जलं संवनति भजति सः **(बृहस्पतिः)** बृहतां पृथिव्यादीनां पालकः **(आङ्गिरसः)** योऽङ्गिरसां वायुविद्युतामयमुत्पन्नः **(हविष्मान्)** हवींषि हुतानि द्रव्याणि विद्यन्ते यस्मिन् **(द्विबर्हज्मा)** यो द्वाभ्यां बृंहते स द्विबर्हस्तेन द्विबर्हेण युक्ता ज्मा भूमिर्यस्य **(प्राघर्मसत्)** यः प्रकृष्टं समन्ताद् घर्मं प्रतापं सनति सः **(पिता)** पालकः **(नः)** अस्माकम् **(आ)** **(रोदसी)** द्यावापृथिव्यौ **(वृषभः)** वर्षकः **(रोरवीति)** विद्युदादिना भृशं शब्दं करोति॥१॥

अन्वयः-हे राजन्! यः प्रथमजा अद्रिभिदृतावा बृहस्पतिराङ्गिरसो हविष्मान् द्विबर्हज्मा प्राघर्मसन्नः पितेव वृषभोऽद्रिभिद् रोदसी आ रोरवीति तद्वत्त्वं भव॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यो राजा मेघस्य सूर्यइव शत्रूणां विदारको ज्येष्ठो महतां धर्मात्मनां पालकः प्रजावान् पृथिव्यां सुखवर्षको भूत्वा प्रजासु न्यायं भृशमुपदिशेत्स एव पृथिवीवत् क्षमाशीलः प्रतापवान् प्रजासु पितृवद्वर्त्तेत॥१॥

पदार्थः-हे राजन्! **(यः)** जो **(प्रथमजाः)** प्रथम उत्पन्न हुआ **(अद्रिभित्)** मेघों का विदीर्ण करने और **(ऋतावा)** जल को अच्छे प्रकार सेवने वाला **(बृहस्पतिः)** पृथिवी आदि का रक्षक और **(आङ्गिरसः)** वायु और बिजुलियों में उत्पन्न हुआ **(हविष्मान्)** जिसमें हवि होमे हुए विद्यमान जो **(द्विबर्हज्मा)** दो से बढ़ता है उससे युक्त भूमि जिसकी वह **(प्राघर्मसत्)** प्रताप का सेवने वाला **(नः)** हमारा **(पिता)** पालने वाले के समान **(वृषभः)** वर्षा कराने वाला मेघों को छिन्न-भिन्न करने वाला **(रोदसी)** आकाश और पृथिवी को प्राप्त हो **(आ, रोरवीति)** बिजुली आदि के योग से सब ओर से शब्द करता है, उसके तुल्य तुम होओ॥१॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो राजा, मेघ का सूर्य जैसे शत्रुओं का विदीर्ण करने वाला, ज्येष्ठ, महात्मा, धर्मात्मा जनों की पालना करने वाला, प्रजावान्, पृथिवी पर सुख वर्षानेहारा होकर प्रजाओं में न्याय का निरन्तर उपदेश करे, वही पृथिवी के तुल्य क्षमाशील और प्रतापवान् तथा प्रजाजनों में पिता के समान वर्त्ते॥१॥

पुनस्तेन राज्ञा: कीदृशा: सेनाधिकारिण: कार्या इत्याह॥

फिर उस राजा को कैसे सेना के अधिकारी करने चाहियें, इस विषय को कहते हैं॥

जनाय चिद्य ईवत उ लोकं बृहस्पतिर्देवहूतौ चकार।

घ्नन् वृत्राणि वि पुरो दर्दरीति जयञ्छत्रूँरमित्रान् पृत्सु साहन्॥२॥

जनाय। चित्। य:। ईवते। ऊँ इति। लोकम्। बृहस्पति:। देवऽहूतौ। चकार। घ्नन्। वृत्राणि। वि। पुर:। दर्दरीति। जयन्। शत्रून्। अमित्रान्। पृत्ऽसु। सहन्॥२॥

पदार्थ:-(जनाय) **(चित्)** अपि **(य:)** **(ईवते)** उपगताय **(उ)** **(लोकम्)** द्रष्टव्यसुखं स्थानं वा **(बृहस्पति:)** बृहतां पालक: सूर्यलोक इव **(देवहूतौ)** देवानामाह्वाने **(चकार)** करोति **(घ्नन्)** नाशयन् **(वृत्राणि)** धनानि **(वि)** विशेषेण **(पुर:)** शत्रूणां नगराणि **(दर्दरीति)** भृशं विदृणाति **(जयन्)** उत्कर्षं प्राप्तुमिच्छन् **(शत्रून्)** **(अमित्रान्)** विरोधिन उदासीनान् **(पृत्सु)** स-ामे **(साहन्)**॥२॥

अन्वय:-हे मनुष्या! यो देवहूतौ बृहस्पतिरिव ईवते जनाय लोकं प्रकाशितं चकार पृत्सु साहन्नमित्राञ्जयञ्छत्रून् घ्नन् वृत्राणि प्राप्नुवन् पुरो वि दर्दरीति स उ चित्सेनापतिर्भवितुमर्हति॥२॥

भावार्थ:-हे राजन्! ये न्यायेन प्रजापालनाय प्रसन्ना: पूर्णशरीरात्मबलयुक्ता वीरा विद्वांस: स्युस्ते सेनापतयो भवन्तु यत: शत्रूञ्जेतुं तत्सेनां सोढुं विदर्तुं विजयं धनं च प्राप्तुं शक्नुयु:॥२॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! **(य:)** जो **(देवहूतौ)** विद्वानों के बुलाने में **(बृहस्पति:)** बड़ों की पालना करने वाले सूर्यलोक के समान **(ईवते)** समीप आने वाले **(जनाय)** मनुष्य के लिये **(लोकम्)** देखने योग्य सुख वा स्थान को प्रकाशित **(चकार)** करता है तथा **(पृत्सु)** स-ामों में **(साहन्)** सहन करता हुआ **(अमित्रान्)** विरोधी उदासीन जनों को **(जयन्)** जीतता और **(शत्रून्)** शत्रुओं को **(घ्नन्)** मारता हुआ **(वृत्राणि)** धनों को प्राप्त होता हुआ **(पुर:)** शत्रुओं के नगरों को **(वि, दर्दरीति)** निरन्तर विदीर्ण करता है वह **(उ, चित्)** ही सेनापति होने योग्य है॥२॥

भावार्थ:-हे राजन्! जो न्याय से प्रजा पालने के लिये प्रसन्न, पूर्णशरीरात्मबलयुक्त वीर, विद्वान् होवें, वे सेनापति हों; जिससे शत्रुओं के जीतने और उनकी सेना के सहने और उसे छिन्न-भिन्न करने तथा विजय और धन को पाने को समर्थ हों॥२॥

पुन: स कीदृशो भवेदित्याह॥

फिर वह कैसा हो इस विषय को कहते हैं॥

बृहस्पतिः समजयद्वसूनि महो व्रजान् गोमतो देव एषः।
अपः सिषासन्त्स्वरप्रतीतो बृहस्पतिर्हन्त्यमित्रमर्कैः॥३॥१७॥

बृहस्पतिः। सम्। अजयत्। वसूनि। महः। व्रजान्। गोऽमतः। देवः। एषः। अपः। सिषासन्। स्वः। अप्रतिऽइतः। बृहस्पतिः। हन्ति। अमित्रम्। अर्कैः॥३॥

पदार्थः-(**बृहस्पतिः**) सूर्य इव बृहत्या वेदवाचः पालकः (**सम्**) सम्यक् (**अजयत्**) जयति (**वसूनि**) धनानि (**महान्**) सन् (**व्रजान्**) मेघान् (**गोमतः**) बहुकिरणयुक्तान् (**देवः**) देदीप्यमानः (**एषः**) प्रत्यक्षः (**अपः**) जलानि (**सिषासन्**) कर्मसमाप्तिं कर्त्तुमिच्छन् (**स्वः**) अन्तरिक्षमिवाक्षयं सुखम् (**अप्रतीतः**) यः शत्रुभिरप्रीयमानः (**बृहस्पतिः**) बृहतो राज्यस्य यथावद्रक्षकः (**हन्ति**) (**अमित्रम्**) शत्रुम् (**अर्कैः**) वज्रादिभिः। **अर्क इति वज्रनाम।** (निघं०२.२०)॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा महो देव एषो बृहस्पतिर्गोमतो व्रजान् हत्वाऽपो वर्षयित्वा जगत्पालयति तथा शत्रुभिरप्रतीतो बृहस्पती राजाऽर्कैः प्रजाः सिषासन्नमित्रं हन्ति शत्रून् समजयद्वसूनि प्राप्नोति स्वर्जनयति॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यो राजा सूर्यवद्विद्याविनयसुसहायैः प्रकाशमानः प्रजाः पालयन् सर्वेभ्योऽभयं ददन् दुष्टकर्मकारिणो निवारयति स एवाऽत्र राजसु महान् राजा जायत इति॥३॥

अत्र बृहस्पतिगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति त्रिसप्ततितमं सूक्तं सप्तदशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**महः**) महान् (**देवः**) देदीप्यमान (**एषः**) यह (**बृहस्पतिः**) सूर्य के समान वेदवाणी को पालने वाला (**गोमतः**) बहुत किरणों से युक्त (**व्रजान्**) मेघों को छिन्न-भिन्न कर (**अपः**) जलों को वर्षाय जगत् की पालना करता है, वैसे शत्रुओं से (**अप्रतीतः**) न प्रतीत को प्राप्त होता हुआ (**बृहस्पतिः**) बड़े राज्य की यथावत् रक्षा करने वाला राजा (**अर्कैः**) वज्र आदि के साथ प्रजाजनों के (**सिषासन्**) काम पूरे करने की इच्छा कर (**अमित्रम्**) शत्रु को (**हन्ति**) मारता है तथा शत्रुओं को (**सम्, अजयत्**) अच्छे प्रकार जीतता है तथा (**वसूनि**) धनों को प्राप्त होता और (**स्वः**) अन्तरिक्ष के समान अक्षय सुख को उत्पन्न करता है॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो राजा सूर्य के समान विद्या, विनय और अच्छे सहाय से प्रकाशमान, प्रजाजनों की पालना करता और सब के लिये अभयदान देता हुआ दुष्टकर्म करने वालों की निवृत्ति करता है, वही यहाँ राजाओं में महान् राजा होता है॥३॥

इस सूक्त में बृहस्पति के गुणों का वर्णन करने होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह तिहत्तरवाँ सूक्त और सत्रहवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ चतुर्ऋचस्य चतुःसप्ततितमस्य सूक्तस्य भरद्वाजो बार्हस्पत्य ऋषिः। सोमारुद्रौ देवते। १, २, ४ त्रिष्टुप्। ३ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ राजा वैद्यश्च कीदृशौ वरौ स्यातामित्याह॥

अब चार ऋचा वाले चौहत्तरवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में राजा और वैद्य कैसे श्रेष्ठ हों, इस विषय को कहते हैं॥

सोमारुद्रा धारयेथामसुर्यं१प्र वामिष्टयोऽरमश्नुवन्तु।
दमेदमे सप्त रत्ना दधाना शं नो भूतं द्विपदे शं चतुष्पदे॥ १॥

सोमारुद्रा। धारयेथाम्। असुर्यम्। प्र। वाम्। इष्टयः। अरम्। अश्नुवन्तु। दमेऽदमे। सप्त। रत्ना। दधाना। शम्। नः। भूतम्। द्विऽपदे। शम्। चतुःऽपदे॥ १॥

पदार्थः-**(सोमारुद्रा)** चन्द्रप्राणाविव राजवैद्यौ **(धारयेथाम्)** **(असुर्यम्)** असुरस्य मेघस्येदम् **(प्र)** **(वाम्)** युवाम् **(इष्टयः)** इष्टप्राप्तयः **(अरम्)** अलम् **(अश्नुवन्तु)** प्राप्नुवन्तु **(दमेदमे)** गृहेगृहे **(सप्त)** एतत्सङ्ख्याकानि **(रत्ना)** रमणीयानि हीरकादीनि **(दधाना)** धरन्तौ **(शम्)** सुखकारिणौ **(नः)** अस्माकम् **(भूतम्)** भवेतम् **(द्विपदे)** मनुष्याद्याय **(शम्)** सुखकारिणौ **(चतुष्पदे)** गवाद्याय॥ १॥

अन्वयः-हे राजवैद्यौ सोमारुद्रेव! युवामसुर्यं धारयेथां यतो वामिष्टयोऽरं प्राश्नुवन्तु दमेदमे सप्त रत्ना दधाना सन्तौ नो द्विपदे शं भूतं चतुष्पदे शं भूतम्॥ १॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यो राजा चन्द्रवद्यश्च वैद्यः प्राणवत्सर्वान्निर्भयान्नीरोगान् कुर्यातां तौ सर्वाणि सुखानि प्राप्नुतः यौ प्रजाया गृहे गृहे धनमारोग्यं च वर्धयतस्तौ द्विपद्भिश्चतुष्पद्भिश्च बहूनि सुखानि प्राप्नुतः॥ १॥

पदार्थः-हे **(सोमारुद्रा)** चन्द्रमा और प्राण के तुल्य राजा और वैद्यजनो! तुम दोनों **(असुर्यम्)** मेघ के इस कर्म को **(धारयेथाम्)** धारण करो जिससे **(वाम्)** तुम को **(इष्टयः)** इच्छाओं की प्राप्तियां **(अरम्)** पूरी **(प्र, अश्नुवन्तु)** मिलें तथा **(दमेदमे)** घर-घर में **(सप्त)** सात **(रत्ना)** रमणीय हीरा आदि को **(दधाना)** धारण किये हुए **(नः)** हमारे **(द्विपदे)** दो पग वाले मनुष्य आदि के लिये **(शम्)** सुख करने वाले **(भूतम्)** होओ और **(चतुष्पदे)** गौ आदि चौपाये जीवों के लिये **(शम्)** सुख करने वाले होओ॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो राजा चन्द्रमा के तुल्य और जो वैद्य प्राण के तुल्य सब को निर्भय और नीरोग करें, वे सब सुखों को प्राप्त होते हैं, जो प्रजा के घर-घर में धन और आरोग्य को बढ़ावें, वे द्विपग वालों और चार पग वालों से बहुत सुखों को प्राप्त होते हैं॥ १॥

पुनस्तौ किं निवार्य्य किं जनयेतामित्याह॥

फिर वे किसकों निवारिके क्या उत्पन्न करें, इस विषय को कहते हैं॥

सोमा॑रुद्रा॒ वि वृ॑हतं॒ विषू॑ची॒ममी॑वा॒ या नो॒ गय॑मावि॒वेश॑।
आ॒रे बा॑धेथां॒ निर्ऋ॑तिं परा॒चैर॒स्मे भ॒द्रा सौ॑श्रव॒सानि॑ सन्तु॥२॥

सोमा॑रुद्रा। वि। वृ॒ह॒त॒म्। विषू॑चीम्। अमी॑वा। या। नः॒। गय॑म्। आ॒ऽवि॒वेश॑। आ॒रे। बा॒धे॒था॒म्। निः॒ऽऋ॑तिम्। प॒रा॒चैः। अ॒स्मे इति॑। भ॒द्रा। सौ॒श्र॒व॒सानि॑। स॒न्तु॒॥२॥

पदार्थः-**(सोमारुद्रा)** ओषधीप्राणवत्सुखसम्पादकौ **(वि)** **(वृहतम्)** छेदयतम् **(विषूचीम्)** विषूच्यादिरोगम् **(अमीवा)** रोगः **(या)** **(नः)** अस्माकम् **(गयम्)** गृहमपत्यं वा **(आविवेश)** आविशति **(आरे)** दूरे **(बाधेथाम्)** **(निर्ऋतिम्)** दुःखप्रदां कुनीतिम् **(पराचैः)** पराङ्मुखैः **(अस्मे)** अस्मासु **(भद्रा)** भजनीयानि **(सौश्रवसानि)** सुश्रवस्सु भवान्यन्नादीनि **(सन्तु)**॥२॥

अन्वयः-हे सोमारुद्रेव राजवैद्यौ! युवां या अमीवा नो गयमाविवेश तां विषूचीं वि वृहतं पराचैर्निर्ऋतिमारे बाधेथां यतोऽस्मे भद्रा सौश्रवसानि सन्तु॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यो राजा वैद्यवरश्च रोगाच्छरीरप्रवेशात् प्रागेव दूरीकुरुतः कुनीतिं कुपथ्यं च पुरस्तादेव दूरीकुरुतस्तयोः पुरुषार्थेन सर्वे मनुष्या धनधान्याऽऽरोग्यादीनि पुष्कलानि प्राप्नुवन्ति॥२॥

पदार्थः-हे **(सोमरुद्रा)** ओषधी और प्राणों के समान सुख उत्पन्न करने वाला राजा और वैद्य जनो! तुम **(या)** जो **(अमीवा)** रोग **(नः)** हमारे **(गयम्)** घर वा सन्तान को **(आविवेश)** प्रवेश करता है उस **(विषूचीम्)** विषूच्यादि को **(वि, वृहतम्)** छिन्न-भिन्न करो तथा **(पराचैः)** पराजित हुए दुष्टों की **(निर्ऋतिम्)** दुःख देने वाली कुनीति को **(आरे)** दूर **(बाधेथाम्)** हटाओ, जिस कारण **(अस्मे)** हम लोगों में **(भद्रा)** सेवन करने योग्य **(सौश्रवसानि)** उत्तम अन्नादि पदार्थों में सिद्ध अन्न **(सन्तु)** हों॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो राजा और वैद्यवर रोगों को शरीर के प्रवेश से पहिले ही दूर करते हैं तथा कुनीति और कुपथ्य को भी पहिले दूर करते हैं, उनके पुरुषार्थ से सब मनुष्य बहुत धन-धान्य और आरोग्यपनों को प्राप्त होते हैं॥२॥

पुनस्तौ किं कुर्यातामित्याह॥

फिर वे क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

सोमा॑रुद्रा यु॒वमे॒तान्य॒स्मे विश्वा॑ त॒नूषु॑ भेष॒जानि॑ धत्तम्।
अव॑ स्यतं मु॒ञ्चतं॒ यन्नो॒ अस्ति॑ त॒नूषु॑ ब॒द्धं कृ॒तमेनो॑ अ॒स्मत्॥३॥

सोमा॑रुद्रा। यु॒वम्। ए॒तानि॑। अ॒स्मे इति॑। विश्वा॑। त॒नूषु॑। भे॒ष॒जानि॑। ध॒त्त॒म्। अव॑। स्य॒त॒म्। मु॒ञ्चत॑म्। यत्। नः॒। अस्ति॑। त॒नूषु॑। ब॒द्धम्। कृ॒तम्। एनः॑। अ॒स्मत्॥३॥

पदार्थः-**(सोमारुद्रा)** यज्ञशोधितौ सोमलतावायू इव राजवैद्यौ **(युवम्)** **(एतानि)** विषूच्यादिनिवारकानि **(अस्मे)** अस्माकम् **(विश्वा)** सर्वाणि **(तनूषु)** शरीरेषु **(भेषजानि)** औषधानि **(धत्तम्)**

(अव) **(स्यतम्)** तनूकुरुतम् **(मुञ्चतम्)** मुञ्चेताम् **(यत्)** **(नः)** अस्माकम् **(अस्ति)** **(तूनुषु)** शरीरेषु **(बद्धम्)** लग्नम् **(कृतम्)** **(एनः)** कुपथ्यादिकमपराधं वा **(अस्मत्)** अस्माकं सकाशात्॥३॥

अन्वयः-हे सोमारुद्रेव राजवैद्यौ! युवं यन्नस्तनूषु कृतं बद्धमेनोऽस्ति तदस्मन्मुञ्च तमस्माकं रोगानव स्यतमस्मे तनूषु विश्वैतानि भेषजानि धत्तम्॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजन्! भवान् वैद्यविद्यां प्रचार्य्यास्माकं शरीराण्यरोगानि कृत्वा पुरुषार्थे प्रवेशयित्वा दुःखानि वियोज्य सद्वैद्यान् सत्कुर्यात्॥३॥

पदार्थः-हे **(सोमारुद्रा)** यज्ञ से शुद्ध किये हुए सोमलता और वायु के समान राजा और वैद्यो! **(युवम्)** तुम **(यत्)** जो **(नः)** हमारे **(तनूषु)** शरीरों में **(कृतम्)** किया हुआ और **(बद्धम्)** लगा हुआ **(एनः)** कुपथ्यादि या अपराध **(अस्ति)** है उसे **(अस्मत्)** हम से **(मुञ्चतम्)** छुड़ाओ और हमारे रोगों को **(अव स्यतम्)** नष्ट करो तथा **(अस्मे)** हमारे **(तनूषु)** शरीरों में **(विश्वा)** समस्त **(एतानि)** ये **(भेषजानि)** औषधें **(धत्तम्)** स्थापन करो॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजन्! आप वैद्यविद्या का प्रचार कर हमारे शरीरों को नीरोग कर और पुरुषार्थ में प्रवेश करके दुःखों को अलग कर अच्छे वैद्यों का सत्कार करो॥३॥

पुनस्तौ किं कुर्य्यातामित्याह॥

फिर वे क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

ति॒ग्माऽयु॑धौ ति॒ग्महे॑ती सु॒शेवौ॒ सोमा॑रुद्रावि॒ह सु मृ॑ळतं नः।

प्र नो॑ मुञ्चतं॒ वरु॑णस्य॒ पाशा॑द् गो॒पा॒यतं॑ नः सुमन॒स्यमा॑ना॥४॥१८॥

ति॒ग्मऽआ॑युधौ। ति॒ग्महे॑ती॒ इति॑ ति॒ग्मऽहे॑ती। सु॒ऽशेवौ॑। सोमा॑रुद्रौ। इ॒ह। सु। मृ॒ळ॒त॒म्। न॒ः। प्र। न॒ः। मु॒ञ्च॒त॒म्। वरु॑णस्य। पाशा॑त्। गो॒पा॒यत॑म्। न॒ः। सु॒ऽम॒न॒स्यमा॑ना॥४॥

पदार्थः-**(तिग्मायुधौ)** तिग्मानि तेजस्वीन्यायुधानि ययोस्तौ **(तिग्महेती)** तिग्मस्तीव्रो हेतिर्वज्रो ययोस्तौ **(सुशेवौ)** सुसुखौ **(सोमारुद्रौ)** शुद्धावोषधीप्राणाविव **(इह)** अस्मिन् संसारे **(सु)** सुष्ठु **(मृळतम्)** सुखयतम् **(नः)** अस्मान् **(प्र)** **(नः)** अस्मान् **(मुञ्चतम्)** **(वरुणस्य)** उदानस्येव बलवतो रोगस्य **(पाशात्)** बन्धनात् **(गोपायतम्)** **(नः)** अस्मान् **(सुमनस्यमाना)** सुष्ठु विचारयन्तौ॥४॥

अन्वयः-हे सोमारुद्राविव वर्त्तमानौ तिग्मायुधौ तिग्महेती सुशेवौ वैद्यराजानौ! युवामिह नः सु मृळतं नोऽस्मान् वरुणस्य पाशात्प्र मुञ्चतं सुमनस्यमाना सन्तौ नः सततं गोपायतम्॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा महौषधिबहिःप्राणौ सर्वान् सदा पालयतस्तथोत्तमौ राजवैद्यौ सर्वेभ्य उपद्रवरोगेभ्यो निरन्तरं रक्षत इति॥४॥

अत्रौषधिप्राणवद्वैद्यराजयोः कृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति चतुःसप्ततितमं सूक्तमष्टादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(सोमारुद्रौ)** शुद्ध औषधी और प्राणों के समान वर्त्तमान **(तिग्मायुधौ)** तेज आयुधों तथा **(तिग्महेती)** पैने वज्र वालो **(सुशेवौ)** अच्छे सुखयुक्त वैद्य और राजजनो! तुम **(इह)** इस संसार में **(नः)** हम लोगों को **(सु, मृळतम्)** अच्छे प्रकार सुखी करो तथा **(नः)** हम लोगों को **(वरुणस्य)** उदान के समान बलवान् रोग के **(पाशात्)** बन्धन से **(प्र, मुञ्चतम्)** छुड़ाओ और **(सुमनस्यमाना)** सुन्दर विचारवान् होते हुए **(नः)** हम लोगों की निरन्तर **(गोपायतम्)** रक्षा करो॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे महौषधि और बहिः प्राण वायु सबकी सदा पालना करते हैं, वैसे उत्तम राजा और वैद्यजन समस्त उपद्रव और रोगों से निरन्तर रक्षा करते हैं॥४॥ इस सूक्त में ओषधि और प्राण के समान वैद्य और राजा के कामों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह चौहत्तरवां सूक्त और अठारहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथैकोनविंशत्यृचस्य पञ्चसप्ततितमस्य सूक्तस्य पायुर्भारद्वाज ऋषिः। १ वर्म। २ धनुः। ३ ज्या। ४ आर्त्नी। ५ इषुधिः। ६[१] सारथिः। ६[२] रश्मयः। ७ अश्वाः। ८ रथः। ९ रथगोपाः। १० लिङ्गोक्ता देवताः। ११, १२, १५, १६ इषवः। १३ प्रतोदः। १४ हस्तघ्नः। १७-१९ लिङ्गोक्ता देवताः स- ग्रामाशिषः (१७ युद्धभूमिर्ब्रह्मणस्पतिरदितिश्च। १८ कवचसोमवरुणाः। १९ देवा ब्रह्म च)॥ १, ३ निचृत्त्रिष्टुप्। २, ४, ५, ७, ८, ९, ११, १४, १८ त्रिष्टुप्छन्दः। धैवतः स्वरः। ६ जगती। १० विराड् जगती छन्दः। निषादः स्वरः। १२, १९, विराडनुष्टुप्। १५ निचृदनुष्टुप्। १६ अनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः। १३ स्वराडुष्णिक्छन्दः। ऋषभः स्वरः। १७ पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ शूरवीराः किं धृत्वा किं किं कुर्युरित्याह॥

अब उन्नीस ऋचावाले पचहत्तरवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में शूरवीर किसे धारण कर क्या-क्या करें, इस विषय को कहते हैं।

जीमूतस्येव भवति प्रतीकं यद्वर्मी याति समदामुपस्थे।
अनाविद्धया तन्वा जय त्वं स त्वा वर्मणो महिमा पिपर्तु॥ १॥

जीमूतस्यऽइव। भवति। प्रतीकम्। यत्। वर्मी। याति। सऽमदाम्। उपऽस्थे अनाविद्धया। तन्वा। जय। त्वम्। सः। त्वा। वर्मणः। महिमा। पिपर्तु॥ १॥

पदार्थः-(जीमूतस्येव) मेघस्येव **(भवति) (प्रतीकम्)** प्रतीतिकरम् **(यत्)** यः **(वर्मी)** कवचधारी **(याति)** गच्छति **(समदाम्)** मदैस्सह वर्त्तन्ते येषु तेषां स-ग्रामाणाम् **(उपस्थे)** समीपे **(अनाविद्धया)** शस्त्रास्त्ररहितया **(तन्वा)** शरीरेण **(जयः) (त्वम्) (सः) (त्वा)** त्वाम् **(वर्मणः)** कवचस्य **(महिमा)** महत्त्वम् **(पिपर्तु)** पालयतु॥ १॥

अन्वयः-हे वीर! यज्जीमतूस्येव प्रतीकं वर्म भवति तेन वर्मी भूत्वा समदामुपस्थे याति अनाविद्धया तन्वा त्वं शत्रूञ्जय स वर्मणो महिमा त्वा पिपर्त्तु॥ १॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये मेघवत्सुन्दराणि कवचानि धृत्वा युद्धं कुर्वन्ति तेऽक्षतशरीराः शत्रूञ्जेतुं शक्नुवन्ति येन येन प्रकारेण शरीरे शल्यानि न प्राप्नुयुस्तं तमुपायं वीराः सदानुतिष्ठन्तु॥ १॥

पदार्थः-हे वीर! **(यत्)** जो **(जीमूतस्येव)** मेघ के समान **(प्रतीकम्)** प्रतीति करने वाला वर्म **(भवति)** होता है उससे **(वर्मी)** कवचधारी होकर **(समदाम्)** अहङ्कारों के साथ वर्त्तमान स-ग्रामों के **(उपस्थे)** समीप **(याति)** जाता है तथा **(अनाविद्धया)** शस्त्रास्त्ररहित अर्थात् अनविधे **(तन्वा)** शरीर से **(त्वम्)** तुम शत्रुओं को **(जय)** जीतो **(सः)** सो **(वर्मणः)** कवच का **(महिमा)** महत्त्व **(त्वा)** तुम्हें **(पिपर्तु)** पाले॥ १॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो मेघ के समान सुन्दर कवचों को धारण कर युद्ध करते हैं, वे घाव से रहित शरीर वाले हुए वैरियों को जीत सकते हैं, जिस-जिस प्रकार से शरीर में घाव करने वाले नोकदार शस्त्र न प्राप्त हों, उन-उन उपायों का वीरजन सदैव आश्रय करें॥१॥

पुनर्वीरा: केन किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर वीर किससे क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

धन्वना गा धन्वनाजिं जयेम धन्वना तीव्राः समदो जयेम।
धनुः शत्रोरपकामं कृणोति धन्वना सर्वाः प्रदिशो जयेम॥२॥

धन्वना। गाः। धन्वना। आजिम्। जयेम। धन्वना। तीव्राः। सऽमदः। जयेम। धनुः। शत्रोः। अपऽकामम्। कृणोति। धन्वना। सर्वाः। प्रऽदिशः। जयेम॥२॥

पदार्थ:-**(धन्वना)** धनुराद्येन शस्त्रास्त्रेण **(गाः)** भूमीः **(धन्वना)** **(आजिम्)** स-ग्रामम्। **आजिरिति स-ग्रामनाम।** (निघं०२.१७) **(जयेम)** **(धन्वना)** **(तीव्राः)** कठिनास्तेजस्विनः **(समदः)** स-ग्रामान् **(जयेम)** **(धनुः)** शस्त्रास्त्रम् **(शत्रोः)** **(अपकामम्)** कामविनाशनम् **(कृणोति)** करोति **(धन्वना)** **(सर्वाः)** **(प्रदिशः)** दिक्प्रदिक्स्थाञ्छत्रून् **(जयेम)**॥२॥

अन्वय:-हे वीरपुरुषा! यद्धनुः शत्रोरपकामं कृणोति येन धन्वना यथा वयं गा धन्वनाजिं जयेम धन्वना तीव्राः समदो जयेम धन्वना सर्वाः प्रदिशो जयेम तथा तेन यूयमप्येताञ्जयत॥२॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्या धनुर्वेदं पठित्वा पूर्णं शस्त्रास्त्रनिर्माणाभ्यासं कृत्वा प्रयोक्तुं विजानन्ति त एव सर्वत्र विजयिनो भवन्ति॥२॥

पदार्थ:-हे वीरपुरुषो! जो **(धनुः)** धनुष् **(शत्रोः)** शत्रु के **(अपकामम्)** काम का विनाश **(कृणोति)** कराता है जिस **(धन्वना)** धनुष् से जैसे हम **(गाः)** भूमियों को **(धन्वना)** धनुष् से **(आजिम्)** स-ग्राम को **(जयेम)** जीतें **(धन्वना)** धनुष् से **(तीव्राः)** कठिन तेज **(समदः)** स-ग्रामों को **(जयेम)** जीतें और **(धन्वना)** धनुष् से **(सर्वाः)** सब **(प्रदिशः)** दिशा प्रदिशाओं में स्थित जो शत्रुजन उनको **(जयेम)** जीतें, वैसे उससे तुम भी उनको जीतो॥२॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य धनुर्वेद को पढ़ के पूरा शस्त्र और अस्त्र बनाने का अभ्यास कर प्रयोग करने को जानते हैं, वे ही सर्वत्र विजयी होते हैं॥२॥

पुनरेते कया कां क्रियां कुर्वन्तीत्याह॥

फिर ये किससे कौन क्रिया को करते हैं, इस विषय को कहते हैं॥

वक्ष्यन्तीवेदा गनीगन्ति कर्णं प्रियं सखायं परिषस्वजाना।
योषेव शिङ्क्ते वितताधि धन्वन् ज्या इयं समने पारयन्ती॥३॥

वक्ष्यन्तीऽइव। इत्। आ। गनीगन्ति। कर्णम्। प्रियम्। सखायम्। परिऽसस्वजाना। योषाऽइव। शिङ्क्ते। विऽतता। अधि। धन्वन्। ज्या। इयम्। समने। पारयन्ती॥३॥

पदार्थः-**(वक्ष्यन्तीव)** यथा कथयिष्यन्ती विदुषी स्त्री **(इत्)** एव **(आ)** समन्तात् **(गनीगन्ति)** भृशं गच्छति **(कर्णम्)** श्रोत्रम् **(प्रियम्)** **(सखायम्)** मित्रमिव वर्त्तमानं पतिम् **(परिषस्वजाना)** परितः कृतसङ्गा **(योषेव)** पत्नीव **(शिङ्क्ते)** अव्यक्तं शब्दं करोति **(वितता)** विस्तृता **(अधि)** उपरि **(धन्वन्)** धनुषि **(ज्या)** प्रत्यञ्चा **(इयम्)** **(समने)** स- ामे **(पारयन्ती)** पारं प्रापयन्ती॥३॥

अन्वयः-हे शूरवीर! येयं ज्या वक्ष्यन्तीव प्रियं सखायं परिषस्वजाना योषेव कर्णमागनीगन्ति, अधि धन्वन् वितता समने पारयन्ती सती शिङ्क्ते तामिद् यूयं यथावद्विज्ञाय सम्प्रयुङ्ध्वम्॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे वीरमनुष्या! यथा प्रियेण मित्रेण पत्या सह स्त्री प्रिया सम्बद्धा यथा च विद्यार्थिनीभिः सहाऽध्यापिका विदुषी स्त्री सम्बद्धा वर्त्तते दुःखादविद्यायाश्च पारं गमयति तथैवेयं धनुर्ज्या युद्धात् पारं गमयित्वा सदैव सुखयति॥३॥

पदार्थः-हे शूरवीर! जो **(इयम्)** यह **(ज्या)** प्रत्यञ्चा अर्थात् धनुष् की तांति **(वक्ष्यन्तीव)** जैसे विदुषी कहने वाली होती, वैसे **(प्रियम्)** अपने प्यारे **(सखायम्)** मित्र के समान वर्त्तमान पति को **(परिषस्वजाना)** सब ओर से संग किये हुए **(योषेव)** पत्नी स्त्री **(कर्णम्)** कान को **(आ, गनीगन्ति)** निरन्तर प्राप्त होती है, वैसे **(अधि)** **(धन्वन्)** धनुष् के ऊपर **(वितता)** विस्तारी हुई तांति **(समने)** स- ाम में **(पारयन्ती)** पार को पहुंचाती हुई **(शिङ्क्ते)** गूंजिती है उस **(इत्)** ही को तुम यथावत् जानकर उसका प्रयोग करो॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे वीरपुरुषो! जैसे प्रिय मित्र पति के साथ स्त्री प्यारी सम्बद्ध अर्थात् प्रेम की डोरी से बंधी हुई है और जैसे विद्यार्थिनों कन्याओं के साथ पढ़ाने वाली विदुषी स्त्री बंधी हुई दुःख से और अविद्या से पार पहुंचती है, वैसे ही यह धनुष् की प्रत्यञ्चा युद्ध से पार पहुंचा कर सदैव सुखी करती है॥३॥

पुनस्ते वीराः केभ्यः किं कुर्युरित्याह॥

फिर वे वीर किनसे क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

ते आचरन्ती समनेव योषा मातेव पुत्रं बिभृतामुपस्थे।

अप शत्रून् विध्यतां संविदाने आर्त्नी इमे विष्फुरन्ती अमित्रान्॥४॥

ते इति आचरन्ती इत्याऽचरन्ती। समनाऽइव। योषा। माताऽइव। पुत्रम्। बिभृताम्। उपऽस्थे। अप। शत्रून्। विध्यताम्। संविदाने इति सम्ऽविदाने। आर्त्नी इति। इमे इति। विष्फुरन्ती इति विऽस्फुरन्ती। अमित्रान्॥४॥

पदार्थः-**(ते)** द्वे **(आचरन्ती)** समन्तात् प्रियाचरणं कुर्वन्त्यौ **(समनेव)** समानमना इव। अत्र **छान्दसो वर्णलोपो वे**ति सलोपः। **(योषा)** पत्न्यौ **(मातेव)** **(पुत्रम्)** **(बिभृताम्)** धरेताम् **(उपस्थे)** समीपे **(अप)** **(शत्रून्)** **(विध्यताम्)** ताडयतम् **(संविदाने)** प्रतिज्ञापालिके इव **(आर्त्नी)** गच्छन्त्यौ **(इमे)** **(विष्फुरन्ती)** कम्पयन्त्यौ **(अमित्रान्)** शत्रून्॥४॥

अन्वयः-हे वीरपुरुषास्ते इमे संविदाने अमित्रान् विष्फुरन्ती आर्त्नी आचरन्ती योषा समनेव पुत्रं मातेवोपस्थे विजयं बिभृतां शत्रून् अप विध्यताम्॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे वीरजना! यथा समानप्रीतिसेविनी पत्नी पतिं माता पुत्रं वा सततं सुखयति तथा शस्त्रास्त्राभ्यां शत्रून्निवारयत॥४॥

पदार्थः-हे वीरपुरुषो! **(ते)** वे दोनों **(इमे)** ये **(संविदाने)** प्रतिज्ञा पालने वालियों के समान वा **(अमित्रान्)** शत्रुजनों को **(विष्फुरन्ती)** कंपाती **(आर्त्नी)** वेग से जाती और **(आचरन्ती)** सब ओर से प्रिय आचरण करती हुई **(योषा)** पत्नी स्त्री जैसे **(समनेव)** समान मन वाली, वैसे वा **(पुत्रम्)** पुत्र को जैसे **(मातेव)** माता, वैसे **(उपस्थे)** समीप में विजय को **(बिभृताम्)** धारण करें और **(शत्रून्)** शत्रुजनों को **(अप, विध्यताम्)** पीटें॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे वीरजनो! जैसे समान प्रीति की सेवने वाली पत्नी पति को तथा माता पुत्र को निरन्तर सुखी करती है, वैसे शस्त्र और अस्त्रों से शत्रुओं को निवारो॥४॥

पुनर्वीरैः किं धर्त्तव्यमित्याह॥

फिर वीरों को क्या धारण करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

ब॒ह्वी॒नां पि॒ता ब॒हुर॑स्य पु॒त्रश्चि॒श्चा कृ॑णोति॒ सम॑नावग॒त्य॑।

इ॒षु॒धिः संकाः॒ पृत॑नाश्च॒ सर्वाः॑ पृ॒ष्ठे निन॑द्धो जयति॒ प्रसू॑तः॥५॥१९॥

ब॒ह्वी॒नाम्। पि॒ता। ब॒हुः। अ॒स्य॒। पु॒त्रः। चि॒श्चा। कृ॒णोति॒। सम॑ना। अ॒व॒ऽगत्य॑। इ॒षु॒ऽधिः। संकाः॑। पृत॑नाः। च॒। सर्वाः॑। पृ॒ष्ठे। निऽन॑द्धः। ज॒यति॒। प्र॒ऽसू॑तः॥५॥

पदार्थः-**(बह्वीनाम्)** इषूणाम् **(पिता)** पितेव **(बहुः)** **(अस्य)** **(पुत्रः)** पुत्र इवेषवः **(चिश्चा)** चिश्चेति शब्दानुकरणम् **(कृणोति)** करोति **(समना)** स-ामान् **(अवगत्य)** प्राप्य **(इषुधिः)** इषवो धीयन्ते यस्मिन् **(संकाः)** स-ामान्। **संका इति स-ामनाम।** (निघं०२.१७) **(पृतनाः)** शत्रुसेनाः **(च)** **(सर्वाः)** **(पृष्ठे)** **(निनिद्धः)** नित्यं बद्धः **(जयति)** **(प्रसूतः)** उत्पन्नः सन्॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! बह्वीनां पितेवास्य बहुः पुत्रः समनाऽवगत्येषुधिश्चिश्चा कृणोति पृष्ठे निनद्धः प्रसूतस्सन् सर्वाः संकाः पृतनाश्च जयति स युष्माभिर्यथावन्निर्माय धर्त्तव्यः॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे वीरपुरुषा! यदीषुधिं यूयं धरेत तर्हि शत्रून् विदार्य्य पुत्रान् प्रति पितर इव प्रजाः सम्पाल्य सर्वाः शत्रुसेना जेतुं शक्नुयुः॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(बह्वीनाम्)** बहुत बाणों की **(पिता)** पालना करने वाले के समान **(अस्य)** इसके **(बहुः)** बहुत **(पुत्रः)** पुत्र के समान बाण **(समना)** स- ग्रामों को **(अवगत्य)** प्राप्त होकर **(इषुधिः)** धनुष् **(चिश्चा)** चीं चीं शब्द **(कृणोति)** करता है तथा **(पृष्ठे)** पीठ पर **(निनद्धः)** नित्य बंधा और **(प्रसूतः)** उत्पन्न होता हुआ **(सर्वाः)** समस्त **(संकाः)** संग्रामस्थ वैरियों की टोली **(पृतनाः, च)** और सेनाओं को **(जयति)** जीतता है, वह तुम लोगों को यथावत् बना कर धारण करना चाहिये॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे वीरपुरुषो! यदि धनुष् को तुम धारण करो तो शत्रुओं को विदीर्ण करके पुत्रों के प्रति पिता जैसे वैसे प्रजा पालन करके समस्त शत्रुसेनाओं को जीत सको॥५॥

पुनर्वीराः किंवत् किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर वीरजन किसके तुल्य क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

रथे तिष्ठन्नयति वाजिनः पुरो यत्रयत्र कामयते सुषारथिः।
अभीशूनां महिमानं पनायत मनः पश्चादनु यच्छन्ति रश्मयः॥६॥

रथे। तिष्ठन्। नयति। वाजिनः। पुरः। यत्रऽयत्र। कामयते। सुऽसारथिः। अभीशूनाम्। महिमानम्। पनायत। मनः। पश्चात्। अनु। यच्छन्ति। रश्मयः॥६॥

पदार्थः-**(रथे)** रमणीये याने **(तिष्ठन्)** **(नयति)** प्रापयति **(वाजिनः)** वेगवतोऽश्वान् **(पुरः)** पुरस्तात् **(यत्रयत्र)** **(कामयते)** **(सुषारथिः)** शोभनश्चासौ सारथिश्च **(अभीशूनाम्)** बाहूनाम् **(महिमानम्)** **(पनायत)** व्यवहरत स्तुत वा **(मनः)** चित्तम् **(पश्चात्)** **(अनु)** **(यच्छन्ति)** निगृह्णन्ति **(रश्मयः)** किरणाः॥६॥

अन्वयः-हे विद्वांसो वीरपुरुषा! यथा सुषारथी रथे तिष्ठन् यत्रयत्र पुरः कामयते तत्र तत्र वाजिनो नयति यथा रश्मयः सूर्यस्य पश्चादनु यच्छन्ति तथा तत्रतत्राऽभीशूनां महिमानं मनश्च यूयं पनायत॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजादयो वीरपुरुषा! यूयं जितेन्द्रिया भूत्वा स्वकार्य्यपारं रथेन सुषारथिरिव गच्छत प्रधानमनु गच्छन्तं महान्तं व्यवहारं कृत्वा स्वसुशिक्षां भृत्यान् नीत्वा कामसिद्धिं कुरुत॥६॥

पदार्थः-हे विद्वान् वीरपुरुषो! जैसे **(सुषारथिः)** अच्छा सारथि **(रथे)** रथ पर **(तिष्ठन्)** स्थित होता हुआ **(यत्रयत्र)** जहाँ-जहाँ **(पुरः)** पहिले **(कामयते)** कामना करता है वहाँ-वहाँ **(वाजिनः)** वेग वाले अश्वों की **(नयति)** प्राप्ति कराता है जैसे **(रश्मयः)** किरणें सूर्य के **(पश्चात्)** पीछे **(अनु, यच्छन्ति)** अनुकूल नियम से जाती हैं, वैसे वहाँ-वहाँ **(अभीशूनाम्)** बाहुओं की **(महिमानम्)** महिमा को **(मनः)** और चित्त को तुम **(पनायत)** व्यवहार में लाओ वा उनकी स्तुति करो॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजा आदि वीरपुरुषो! तुम जितेन्द्रिय होकर अपने कार्य के पार रथ से अच्छे सारथी के समान जाओ तथा प्रधान के अनुकूल जाने वाले बड़े व्यवहार को करके सुन्दर शिक्षा को भृत्यों को पहुंचा कर कामसिद्धि करो॥६॥

पुनर्मनुष्याः कैः कान् विजयेरन्नित्याह॥

फिर मनुष्य किन से किन्हें जीतें, इस विषय को कहते हैं॥

तीव्रान् घोषान् कृण्वते वृषपाणयोऽश्वा रथेभिः सह वाजयन्तः।

अवक्रामन्तः प्रपदैरमित्रान् क्षिणन्ति शत्रूँरनपव्ययन्तः॥७॥

तीव्रान्। घोषान्। कृण्वते। वृषऽपाणयः। अश्वाः। रथेभिः। सह। वाजयन्तः। अवऽक्रामन्तः। प्रऽपदैः। अमित्रान्। क्षिणन्ति। शत्रून्। अनपऽव्ययन्तः॥७॥

पदार्थः-**(तीव्रान्)** तीक्ष्णान् **(घोषान्)** शब्दान् **(कृण्वते)** कुर्वन्ति **(वृषपाणयः)** वृषस्येव पाणिर्व्यवहारो येषान्ते **(अश्वाः)** तुरङ्गा वह्न्यादयो वा **(रथेभिः, सह)** रमणीयैर्यानैस्सह **(वाजयन्तः)** गच्छन्तो वा **(अवक्रामन्तः)** इतस्ततो गच्छन्तः **(प्रपदैः)** प्रकृष्टैः पदैर्गमनैः **(अमित्रान्)** वैरं कुर्वतः **(क्षिणन्ति)** हिंसन्ति **(शत्रून्)** **(अनपव्ययन्तः)** अपव्ययमप्राप्नुवन्तः॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्याः! प्रपदैरवक्रामन्तोऽनपव्ययन्तो रथेभिः सह वाजयन्तो वृषपाणयोऽश्वास्तीव्रान् घोषान् कृण्वतेऽमित्राञ्छत्रून् क्षिणन्ति तान् यूयं क्षिणध्वम्॥७॥

भावार्थः-हे राजपुरुषा! यूयमश्वान् सुशिक्ष्याग्न्यादीन् सम्प्रयुज्य शत्रूनाक्रम्य विजयध्वम्॥७॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(प्रपदैः)** अति उत्तम गमनों से **(अवक्रामन्तः)** इधर-उधर जाते और **(अनपव्ययन्तः)** व्यर्थ खर्च को न प्राप्त होते हुए तथा **(रथेभिः)** रमणीय यानों के **(सह)** साथ **(वाजयन्तः)** आप जाते वा दूसरों को ले जाते हुए **(वृषपाणयः)** वृष के समान व्यवहार जिनका वे **(अश्वाः)** घोड़े वा अग्नि आदि पदार्थ **(तीव्रान्)** तीक्ष्ण **(घोषान्)** शब्दों को **(कृण्वते)** करते हैं और **(अमित्रान्)** वैर करते हुए **(शत्रून्)** शत्रुजनों को **(क्षिणन्ति)** क्षीण करते हैं, उनको तुम क्षीण करो॥७॥

भावार्थः-हे राजपुरुषो! तुम घोड़ों को अच्छे प्रकार शिक्षा देकर तथा अग्नि आदि का संप्रयोग और शत्रुओं को आक्रमण कर जीतो॥७॥

पुनर्मनुष्याः कुत्र स्थित्वा किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्य कहाँ ठहर कर क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

रथवाहनं हविरस्य नाम यत्रायुधं निहितमस्य वर्म।

तत्रा रथमुप शग्मं सदेम विश्वाहा वयं सुमनस्यमानाः॥८॥

रथऽवाहनम्। हविः। अस्य। नाम। यत्र। आयुधम्। निऽहितम्। अस्य। वर्म। तत्र। रथम्। उप। शग्मम्। सदेम। विश्वाहा। वयम्। सुऽमनस्यमानाः॥८॥

पदार्थः-**(रथवाहनम्)** रथं वहन्ति येन तम् **(हविः)** आदातव्यम् **(अस्य)** **(नाम)** **(यत्र)** **(आयुधम्)** **(निहितम्)** स्थापितम् **(अस्य)** **(वर्म)** **(तत्रा)** अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। **(रथम्)** रमणीयं यानम् **(उप)** **(शग्मम्)** सुखम् **(सदेम)** प्राप्नुयाम **(विश्वाहा)** सर्वाणि दिनानि **(वयम्)** **(सुमनस्यमानाः)** सुष्ठु विचारं कुर्वन्तः॥८॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा सुमनस्यमाना वयं यत्राऽऽयुधं निहितं यत्राऽऽस्य वर्म यस्यास्य हविर्नाम तत्रेमं रथवाहनं शग्मं रथं च विश्वाहोप सदेम॥८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यूयं सुविचारेणाग्न्यादिसम्प्रयुक्तेनाऽऽयुधाद्यधिष्ठितेन रथेन सदा शत्रूँस्ताडयत॥८॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसा **(सुमनस्यमानाः)** सुन्दर विचार करते हुए **(वयम्)** हम लोग **(यत्र)** जहाँ **(आयुम्)** शस्त्र **(निहितम्)** स्थापित किया वा जहाँ **(अस्य)** इसका **(वर्म)** कवच और जिस **(अस्य)** इसका **(हविः)** लेने योग्य **(नाम)** नाम है **(तत्रा)** वहाँ इस **(रथवाहनम्)** जिससे रथ चलाया जाता है उसको वा **(शग्मम्)** सुख को और **(रथम्)** रमणीय यान को **(विश्वाहा)** सब दिनों **(उप, सदेम)** प्राप्त होवें॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! तुम लोग अच्छे विचार के साथ अग्नि आदि के सम्प्रयोग से बनाये हुए आयुधों से युक्त उत्तम यान द्वारा सर्वदैव शत्रुओं को ताड़ना देओ॥८॥

पुना राजपुरुषाः कीदृशा भवेयुरित्याह॥

फिर राजपुरुष कैसे हों, इस विषय को कहते हैं॥

स्वादुषंसदः पितरो वयोधाः कृच्छ्रेश्रितः शक्तीवन्तो गभीराः।
चित्रसेना इषुबला अमृध्राः सतोवीरा उरवो व्रातसाहाः॥९॥

स्वादुऽसंसदः। पितरः। वयःऽधाः। कृच्छ्रेऽश्रितः। शक्तिऽवन्तः। गभीराः। चित्रऽसेनाः। इषुऽबलाः। अमृध्राः। सतःऽवीराः। उरवः। व्रातऽसहाः॥९॥

पदार्थः-**(स्वादुषंसदः)** ये स्वादून्यन्नानि भोक्तुं संसीदन्ति न्यायं कर्तुं सभायां वा **(पितरः)** विज्ञानवयोवृद्धाः **(वयोधाः)** ये वयांसि दधति ते **(कृच्छ्रेश्रितः)** ये कृच्छे दुःखेऽपि धर्मं श्रियन्ति सेवन्ते **(शक्तीवन्तः)** प्रशस्ता बह्वी शक्तिः सामर्थ्यं विद्यते येषान्ते **(गभीराः)** गम्भीराशयाः **(चित्रसेनाः)** चित्राऽद्भुता सेना येषान्ते **(इषुबलाः)** इषुभिः शस्त्रास्त्रैर्बलं सैन्यं वा येषान्ते **(अमृध्राः)** अहिंसकाः **(सतोवीराः)** सत्त्वबलोपेताः **(उरवः)** बहवः **(व्रातसाहाः)** ये व्राताञ्छत्रुसमूहान् सहन्ते ते॥९॥

अन्वयः-हे राजन्! ये स्वादुषंसदो वयोधा कृच्छेश्रितः शक्तीवन्तो गभीराश्चित्रसेना इषुबला अमृध्राः सतोवीरा व्रातसाहा उरवः पुत्रान् पितर इव प्रजाः पालयन्तो धर्मिष्ठा मनुष्याः स्युस्तैस्त्वं प्रजाः सततं पालय॥९॥

भावार्थ:-हे विद्वांसो! मनुष्या यूयं सभ्यं पितृवत्प्रजापालकं दीर्घवयसं दु:खं प्राप्याकम्पितारं शक्तिमन्तं गम्भीराशयमद्भुतसेनं शस्त्रास्त्रविद्याकुशलं सत्त्वोपेतं शत्रुसमूहसहं बहुशुभगुणकर्मयुक्तमेव राजानमभिषिञ्चत॥९॥

पदार्थ:-हे राजन्! जो **(स्वादुषंसद:)** स्वादिष्ठ अन्नों के भोगने को स्थिर होते वा न्याय करने को सभा में स्थिर होते हैं वा **(वयोधा:)** जो अवस्थाओं को धारण करते हैं वा **(कृच्छ्रेश्रित:)** जो अति दु:ख में भी धर्म का आश्रय करते हैं वा **(शक्तीवन्त:)** प्रशंसित बहुत शक्ति विद्यमान जिनके वा **(गभीरा:)** जो गम्भीर आशय वाले हैं वा **(चित्रसेना:)** जिनकी चित्रविचित्र सेना है तथा **(इषुबला:)** शस्त्र और अस्त्रों से युक्त जिनकी सेना और **(अमृध्रा:)** जो अहिंसन करने वाले **(सतोवीरा:)** सत्त्व बल से युक्त **(व्रातसाहा:)** जो शत्रूसमूहों को सहते हैं, वे **(उरव:)** बहुत पुत्रों की **(पितर:)** पिता जैसे धर्मिष्ठ, वैसे विज्ञान और अवस्था से बढ़े हुए पालने वाले जन प्रजा की पालना करते हुए धर्मिष्ठ मनुष्य हों, उनसे तुम प्रजाओं की पालना निरन्तर करो॥९॥

भावार्थ:-हे विद्वान् मनुष्यो! तुम सभ्य, पिता के समान प्रजाजनों की पालना करने वाले, बहुत अवस्था से युक्त और दु:ख को पाकर न कंपने वाले, सामर्थ्यवान्, गम्भीर आशय, अद्भुत सेना तथा शस्त्र और अस्त्रों की विद्या में कुशल, बल से युक्त, शत्रुसमूह के सहने वाले और बहुत गुण कर्मों से युक्त राजा को ही राज्याभिषिञ्चन काम में अभिषिक्त करो॥९॥

पुनर्मनुष्या: परस्परं कथमनुवर्त्तेरन्नित्याह॥

फिर मनुष्य परस्पर कैसे वर्त्तें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ब्राह्मणास: पितर: सोम्यास: शिवे नो द्यावापृथिवी अनेहसा।

पूषा न: पातु दुरितादृतावृधो रक्षा माकिर्नो अघशंस ईशत॥१०॥२०॥

ब्राह्मणास:। पितर:। सोम्यास:। शिवे इति। न:। द्यावापृथिवी इति। अनेहसा। पूषा। न:। पातु। दु:ऽइतात्। ऋतऽवृध:। रक्ष। माकि:। न:। अघऽशंस:। ईशत॥१०॥

पदार्थ:-**(ब्राह्मणास:)** वेदेश्वरवेत्तार: **(पितर:)** पितर इव प्रजाानामुपरि कृपालव **(सोम्यास:)** सोमगुणानर्हा: **(शिवे)** मंगलकारिण्यौ **(न:)** अस्मभ्यम् **(द्यावापृथिवी)** सूर्य्यभूमी **(अनेहसा)** अहिंसिके **(पूषा)** विद्याविनयाभ्यां पोषक: **(न:)** अस्मान् **(पातु)** **(दुरितात्)** दुष्टाचरणात् **(ऋतावृध:)** सत्यवर्धका: **(रक्षा)** पालय। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घ:। **(माकि:)** निषेधे **(न:)** अस्मान् **(अघशंस:)** स्तेन: **(ईशत)** हन्तुं समर्थो भवेत्॥१०॥

अन्वय:-हे पितर इव सोम्यासो ब्राह्मणासो विद्वांसो! यूयं नोऽधर्माचरणात्पृथक् रक्षत यथाऽनेहसा शिवे द्यावापृथिवी नोऽस्मदर्थं स्यातां तथोपदिशत यथा पूषा ऋतावृधो नोऽस्मान् दुरितात् पातु यतोऽघशंसोऽस्मान् माकिरीशत। हे राजँस्त्वमेतान् सततं रक्षा॥१०॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! ये विद्वांसो युष्मभ्यं विद्याविनयौ प्रयच्छेरन् विद्युद्भूगर्भादिविद्यया सुखिनः सम्पादयेयुरधर्माचरणात् पृथग्रक्षेयुर्यश्च राजा चोरादिभ्यः सततं रक्षेत् तान् सर्वान् यूयं सततं सेवध्वम्॥१०॥

पदार्थः-हे **(पितरः)** पिता के समान प्रजाजनों पर कृपा करने वाले **(सोम्यासः)** शान्तियुक्त गुणों के योग्य **(ब्राह्मणासः)** वेद और ईश्वर के जानने वाले विद्वानो! तुम **(नः)** हम लोगों को अधर्म के आचरण से अलग रक्खो जैसे **(अनेहसा)** न हिंसा करने वाली **(शिवे)** मंगलकारिणी **(द्यावापृथिवी)** सूर्य और पृथिवी **(नः)** हमारे लिये हों, वैसे उपदेश करो जैसे **(पूषा)** विद्या और विनय से पुष्टिकारक **(ऋतावृधः)** सत्य का बढ़ाने वाला **(नः)** हम लोगों की **(दुरितात्)** दुष्ट आचरण से **(पातु)** पालना करे जिससे **(अघशंसः)** चोर हम लोगों को **(माकिः)** न **(ईशत)** मारने के लिये समर्थ हों, हे राजन्! तुम इन की निरन्तर **(रक्ष)** रक्षा करो॥१०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो विद्वान् जन तुम लोगों को विद्या और विनय देवें तथा बिजुली और भूगर्भविद्या से सुख से सम्पन्न करें और अधर्माचरण से अलग रक्खें तथा जो राजा चोर आदि दुष्टों से निरन्तर रक्षा करे, उस सब को तुम निरन्तर सेवा करो॥१०॥

पुनर्भूमिः कीदृग्वेगवती वीराश्च किमर्थं स-ग्रामं कुर्वन्तीत्याह॥

फिर भूमि कैसी वेग वाली है और युद्ध करने वाले युद्ध क्यों करते हैं, इस विषय को कहते हैं॥

सुपर्णं वस्ते मृगो अस्या दन्तो गोभिः सन्नद्धा पतति प्रसूता।

यत्रा नरः सं च वि द्रवन्ति तत्रास्मभ्यमिषवः शर्म यंसन्॥११॥

सुऽपर्णम्। वस्ते। मृगः। अस्याः। दन्तः। गोभिः। सम्ऽनद्धा। पतति। प्रऽसूता। यत्र। नरः। सम्। च। वि। च। द्रवन्ति। तत्र। अस्मभ्यम्। इषवः। शर्म। यंसन्॥११॥

पदार्थः-**(सुपर्णम्)** शोभनं पर्णं पालनं यस्य तम् **(वस्ते)** आच्छादयति **(मृगः)** यो मार्ष्टि तद्वत् **(अस्याः)** प्रजायाः **(दन्तः)** येन दंशति सः **(गोभिः)** किरणैर्धेनुभिर्वा **(सन्नद्धा)** सम्यग्बद्धा **(पतति)** गच्छति **(प्रसूता)** उत्पन्ना सती **(यत्रा)** यस्मिन् स-ग्रामे। अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। **(नरः)** मनुष्याः **(सम्)** **(च)** **(वि)** **(च)** **(द्रवन्ति)** गच्छन्ति **(तत्र)** **(इषवः)** बाणाः **(शर्म)** सुखम् **(यंसन्)** यच्छन्तु॥११॥

अन्वयः-हे मनुष्या! या गोभिः सन्नद्धा प्रसूता सती भूमिर्मृग इव पतति, अस्या मध्ये दन्तो वर्त्तते या सुपर्णं वस्ते यत्रा नरश्च सं द्रवन्ति वि द्रवन्ति च तत्रेषवोऽस्मभ्यं शर्म यथा यंसन् तथाऽनुतिष्ठत॥११॥

भावार्थः-हे मनुष्या! या भूमिः परमेश्वरेण पालनाय निर्मिता मृगवत्सद्यो धावति यदर्थं भूरि स-ग्रामो भवति तस्याः प्राप्तौ वीरतां सङ्गृह्णन्तु॥११॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(गोभिः)** किरण वा धेनुओं से **(सन्नद्धा)** अच्छे प्रकार से बंधी और **(प्रसूता)** उत्पन्न हुई भूमि **(मृगः)** मृग के समान **(पतति)** जाती है **(अस्याः)** इसके बीच **(दन्तः)** जिससे

डशते हैं वह दाँत वर्त्तमान है जो **(सुपर्णम्)** सुन्दर पालना करने वाले को **(वस्ते)** उढ़ाता है और **(यत्रा)** जिस संग्राम में **(नर:)** योद्धा नर **(च)** भी **(सम्, द्रवन्ति)** अच्छे प्रकार दौड़ते हैं **(च)** और **(वि)** विशेष धावन करते हैं **(तत्र)** वहाँ **(इषव:)** बाण **(अस्मभ्यम्)** हमारे लिये **(शर्म)** सुख जैसे **(यंसन्)** देवें वैसा अनुष्ठान करो॥११॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जो भूमि परमेश्वर ने पालना के लिये बनाई है और मृग के समान शीघ्र जाती है तथा जिसके लिये स-ग्राम होता है, उसकी प्राप्ति के निमित्त वीरता का स-ग्रह करो॥११॥

पुनर्मनुष्यै: केन कीदृशानि शरीराणि कर्त्तव्यानीत्याह॥

फिर मनुष्यों को किससे कैसे शरीर करने चाहियें, इस विषय को कहते हैं॥

ऋजीते परि वृङ्धि नोऽश्मा भवतु नस्तनू:।

सोमो अधि ब्रवीतु नोऽदिति: शर्म यच्छतु॥१२॥

ऋजीते। परि। वृङ्धि। न:। अश्मा। भवतु। न:। तनू:। सोम:। अधि। ब्रवीतु। न:। अदिति:। शर्म। यच्छतु॥१२॥

पदार्थ:-**(ऋजीते)** ऋजु गच्छति **(परि)** सर्वत: **(वृङ्धि)** वर्धय **(न:)** अस्मान् **(अश्मा)** पाषाणवद् दृढम् **(भवतु)** **(न:)** अस्माकम् **(तनू:)** शरीरम् **(सोम:)** य: सुनोति स विद्वान् **(अधि)** उपरि **(ब्रवीतु)** उपदिशतु **(न:)** अस्मानस्मभ्यं वा **(अदिति:)** मातेव भूमि: **(शर्म)** सुखं गृहं वा **(यच्छतु)** ददातु॥१२॥

अन्वय:-हे विद्वन् राजन्! यो भवानृजीते स न: परि वृङ्धि सोमो यथा नोऽस्माकं तनूरश्मेव भवतु तथाऽधि ब्रवीतु, अदितिर्न: शर्म यच्छतु॥१२॥

भावार्थ:-राजैव प्रयतेत यथा दीर्घब्रह्मचर्य्येण विषयासक्तित्यागेन व्यायामेन च क्षत्रियाणां शरीराणि पाषाणवत्कठिनानि स्युरुपदेशकाश्च सर्वानेवमेवोपदिशेयुर्येन सर्वे दृढशरीरात्मानो भवेयु:॥१२॥

पदार्थ:-हे विद्वन् राजन्! जो आप **(ऋजीते)** सीधे चलते हो वह **(न:)** हम लोगों को **(परि, वृङ्धि)** सर्व प्रकार वृद्धि देओ और **(सोम:)** जो ओषधियों का रस निकालने वाला विद्वान् जैसे **(न:)** हम लोगों का **(तनू:)** शरीर **(अश्मा)** पत्थर के समान दृढ़ **(भवतु)** हो वैसा **(अधि, ब्रवीतु)** ऊपर ऊपर उपदेश करे और **(अदिति:)** माता के समान भूमि **(न:)** हम लोगों के लिये **(शर्म)** सुख वा घर **(यच्छतु)** देवे॥१२॥

भावार्थ:-राजा ऐसा प्रयत्न करे जैसे दीर्घ ब्रह्मचर्य्य से, विषयासक्ति के त्याग से और व्यायाम से क्षत्रियों के शरीर पाषाण के तुल्य कठिन हों और उपदेशक भी सबको ऐसा ही उपदेश करें जिससे सब दृढ़ शरीर आत्मा वाले हों॥१२॥

पुना राज्ञी स-ग्रामे किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर रानी स-ग्राम में क्या करे, इस विषय को कहते हैं॥

आ जङ्घन्ति सान्वेषां जघनाँ उप जिघ्नते।
अश्वाजनि प्रचेतसोऽश्वान्त्समत्सु चोदय॥१३॥

आ। जङ्घन्ति। सानु। एषाम्। जघनान्। उप। जिघ्नते। अश्वऽअजनि। प्रऽचेतसः। अश्वान्। समत्ऽसु। चोदय॥१३॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**जङ्घन्ति**) भृशं घ्नन्ति (**सानु**) अवयवान् (**एषाम्**) (**जघनान्**) नीचकर्मकारिणः (**उप**) (**जिघ्नते**) घ्नन्ति (**अश्वाजनि**) अश्वानां प्रक्षेप्त्रि (**प्रचेतसः**) प्रकृष्टं चेतो विज्ञानं येषां तान् (**अश्वान्**) महतो बलिष्ठान् (**समत्सु**) स-ग्रामेषु (**चोदय**) प्रेरय॥१३॥

अन्वयः-हे अश्वाजनि राज्ञि! त्वं ये वीरा एषां शत्रूणां सान्वा जङ्घन्ति जघनानुप जिघ्नते तान् प्रचेतसोऽश्वाञ्छूरान् समत्सु चोदय॥१३॥

भावार्थः-स-ग्रामे राजाभावे राज्ञी सेनापतिः स्याद्यथा राजा योधयितुं वीरान् प्रेरयेद्धर्षयेत्तथैव साऽप्याचरेत्॥१३॥

पदार्थः-हे (**अश्वाजनि**) घोड़ों की पटकी देने वाली रानी! तू जो वीरजन (**एषाम्**) इन शत्रुओं के (**सानु**) अङ्गों को (**आ, जङ्घन्ति**) सब ओर से निरन्तर काटते हैं तथा (**जघनान्**) नीच कर्म करने वालों को (**उप, जिघते**) उपस्थित होकर मारते हैं उन (**प्रचेतसः**) उत्तम विज्ञान वाले (**अश्वान्**) बड़े बड़े बलवान् शूरवीर पुरुषों को (**समत्सु**) स-ग्रामों में (**चोदय**) प्रेरो॥१३॥

भावार्थः-स-ग्राम में राजा के अभाव में रानी सेनापति हो और जैसे राजा युद्ध कराने को वीरों को प्रेरणा दे, वैसे ही वह भी आचरण करे॥१३॥

पुना राजा भृत्याश्च परस्परं कथं वर्तेरन्नित्याह॥

फिर राजा और भृत्य परस्पर कैसे वर्त्तें, इस विषय को कहते हैं॥

अहिरिव भोगैः पर्येति बाहुं ज्याया हेतिं परिबाधमानः।
हस्तघ्नो विश्वा वयुनानि विद्वान् पुमान् पुमांसं परि पातु विश्वतः॥१४॥

अहिःऽइव। भोगैः। परि। एति। बाहुम्। ज्यायाः। हेतिम्। परिऽबाधमानः। हस्तऽघ्नः। विश्वा। वयुनानि। विद्वान्। पुमान्। पुमांसम्। परि। पातु। विश्वतः॥१४॥

पदार्थः-(**अहिरिव**) मेघ इव (**भोगैः**) (**परि**) (**एति**) परितः प्राप्नोति (**बाहुम्**) पत्युर्भुजम् (**ज्यायाः**) प्रत्यञ्चायाः (**हेतिम्**) वज्रवद्वाणम् (**परिबाधमानः**) सर्वतो निरुन्धानः (**हस्तघ्नः**) यो हस्ताभ्यां हन्ति (**विश्वा**) सर्वाणि (**वयुनानि**) ज्ञानानि (**विद्वान्**) यो वेदितव्यं वेत्ति (**पुमान्**) पुरुषार्थी (**पुमांसम्**) पुरुषार्थिनम् (**परि**) सर्वतः (**पातु**) रक्षतु (**विश्वतः**) सर्वतः॥१४॥

अन्वय:-हे राजन्! यो हस्तघ्नो ज्याया हेतिं परिबाधमानो विद्वान् पुमान्नहिरिव भोगैः सह बाहुं विश्वा वयुनानि च पर्येति विश्वतः पुमांसं परि पातु तं सर्वदा सत्कुर्याः॥१४॥

भावार्थ:-हे वीरा! यो राजा सर्वान् मेघवद्भोगवृष्टिं करोति समग्रविद्यायुक्तः सन् सर्वान् सर्वतः प्रीणाति तं सर्वेऽभितः सततं रक्षन्तु॥१४॥

पदार्थ:-हे राजन्! जो **(हस्तघ्नः)** हाथों से मारने वाला **(ज्यायाः)** प्रत्यञ्चा के सम्बन्धी **(हेतिम्)** वज्र के समान बाण को **(परिबाधमानः)** सब ओर से रोकता और **(विद्वान्)** जानने योग्य को जानता हुआ **(पुमान्)** पुरुषार्थीजन **(अहिरिव)** मेघ के समान **(भोगैः)** भोगों के साथ **(बाहुम्)** अपने स्वामी की भुजा को और **(विश्वा)** समस्त **(वयुनानि)** ज्ञानों को **(परि, एति)** सब ओर से प्राप्त होता है वा **(विश्वतः)** सब ओर से **(पुमांसम्)** पुरुषार्थी की **(परि, पातु)** अच्छे प्रकार पालना करे, उसका सर्वदा सत्कार करो॥१४॥

भावार्थ:-हे वीरो! जो राजा समस्त मेघ के समान भोगवृष्टि करता है तथा समग्र विद्यायुक्त होता हुआ सब की सब ओर से तृप्ति करता है, उसकी सब जन सब ओर से निरन्तर रक्षा करें॥१४॥

पुना राज्ञी कीदृशी भवेदित्याह॥

फिर रानी कैसी हो, इस विषय को कहते हैं॥

आलाक्ता या रुरुशीर्ष्ण्यथो यस्या अयो मुखम्।
इदं पर्जन्यरेतस इष्वै देव्यै बृहन्नमः॥१५॥२१॥

आलऽअक्ता। या। रुरुऽशीर्ष्णी। अथो इति। यस्याः। अयः। मुखम्। इदम्। पर्जन्यऽरेतसे। इष्वै। देव्यै। बृहत्। नमः॥१५॥

पदार्थ:-**(आलाक्ता)** आलेन विषेण दिग्धा युक्ता **(या)** **(रुरुशीर्ष्णी)** रुरोः शिर इव शिरो यस्याः सा **(अथो)** **(यस्याः)** **(अयः)** लोहयुक्तम् **(मुखम्)** **(इदम्)** **(पर्जन्यरेतसे)** पर्जन्यस्य रेत उदकमिव रेतो वीर्यं यस्यास्तस्यै। **रेत इत्युदकनाम।** (निघं०१२) **(इष्वै)** गन्त्र्यै **(देव्यै)** दिव्यायै **(बृहत्)** महत् **(नमः)** अन्नम्॥१५॥

अन्वय:-याऽऽलाक्ता रुरुशीर्ष्ण्यथो यस्या इदमयो मुखमस्ति तद्धर्त्र्यै पर्जन्यरेतसे देव्या इष्वै शूरवीरायै स्त्रियै बृहन्नमोऽस्तु॥१५॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! या राज्ञी धनुर्वेदविच्छस्त्रास्त्रप्रक्षेप्त्री वर्त्तते तस्या वीरैः सत्कारः सततं कार्य्यः॥१५॥

पदार्थ:-**(या)** जो **(आलाक्ता)** विष से युक्त **(रुरुशीर्ष्णी)** रुरु जाति के मृग के शिर के समान जिसका शिर और **(अथो)** इसके अनन्तर **(यस्याः)** जिसका **(इदम्)** **(अयः)** लोहेयुक्त **(मुखम्)** मुख है उस धारण करने वाली **(पर्जन्यरेतसे)** मेघ के जल के समान वीर्यवती **(देव्यै)** दिव्य और **(इष्वै)** गमन करती हुई शूरवीर स्त्री के लिये **(बृहत्)** बहुत **(नमः)** अन्न हो॥१५॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जो रानी धुनर्वेद जानती हुई शस्त्र-अस्त्र फेंकने वाली है, उसका वीरों को निरन्तर सत्कार करना चाहिये॥१५॥

पुन: सेनापति: सेनां किमाज्ञपयेदित्याह॥

फिर सेनापति सेना को क्या आज्ञा दे, इस विषय को कहते हैं॥

अव॑सृष्टा॒ परा॑ पत॒ शर॑व्ये॒ ब्रह्म॑संशिते।

गच्छा॒मित्रा॒न् प्र प॑द्यस्व॒ मामीषां॒ कं च॒नोच्छि॑ष:॥१६॥

अव॑ऽसृष्टा। परा॑। प॒त। शर॑व्ये। ब्रह्म॑ऽसंशिते। गच्छ॑। अ॒मित्रा॑न्। प्र। प॒द्यस्व॒। मा। अ॒मीषा॑म्। कम्। च॒न। उ॒त्। शि॒ष:॥१६॥

पदार्थ:-**(अवसृष्टा)** शत्रूणामुपरि निपतिता **(परा)** अस्मत्पराङ्मुखा **(पत)** **(शरव्ये)** ये शरान् व्याप्नुवन्ति तत्र साध्वि **(ब्रह्मसंशिते)** ब्रह्मणा वेदविदा सेनापतिना प्रशंसिते **(गच्छ)** **(अमित्रान्)** शत्रून् **(प्र)** **(पद्यस्व)** **(मा)** **(अमीषाम्)** परोक्षस्थानां मध्यात् **(कम्)** **(चन)** अपि **(उत्)** **(शिष:)** शिष्टं मा त्यज॥१६॥

अन्वय:-हे शरव्ये ब्रह्मशंसिते सेने! त्वमवसृष्टा परा पताऽमित्रान् गच्छ प्र पद्यस्वाऽमीषां शत्रूणां कं चन मोच्छिष:॥१६॥

भावार्थ:-सेनापति: पूर्वं सेनां सुशिक्ष्य यदा स- ाम उपतिष्ठेत्तदा स्वसेनामाज्ञपयेद्यच्छत्रूणां मध्यादेकमपि शिष्टं मा त्यजेति॥१६॥

पदार्थ:-हे **(शरव्ये)** बाणों को व्याप्त होने वालों में उत्तम **(ब्रह्मशंसिते)** वेद जानने वाले सेनापति से प्रशंसा पाई हुई सेना! तू **(अवसृष्टा)** शत्रुओं के उपर पड़ी हुई **(परा)** हम लोगों से पराङ्मुख **(पत)** जाओ तथा **(अमित्रान्)** शत्रुओं के समीप **(गच्छ)** पहुंचो **(प्र, पद्यस्व)** प्राप्त होओ अर्थात् शत्रुजनों पर चढ़ाई करो और **(अमीषाम्)** परोक्षस्थ शत्रुओं के बीच **(कम्, चन)** किसी को भी **(मा)** मत **(उत्, शिष:)** शेष छोड़ो॥१६॥

भावार्थ:-सेनापति पहिले सेना को अच्छी शिक्षा देकर जब स- ाम में उपस्थित हो, तब अपनी सेना को आज्ञा दे कि शत्रुओं के बीच से एक को भी न छोड़॥१६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को कहते हैं॥

यत्र॑ बा॒णा: सं॒पत॑न्ति कु॒मा॒रा वि॑शि॒खाइ॑व।

तत्रा॑ नो॒ ब्रह्म॑ण॒स्पति॒रदि॑ति॒: शर्म॑ यच्छतु वि॒श्वाहा॒ शर्म॑ यच्छतु॥१७॥

यत्र॑। बा॒णाः। स॒म्ऽपत॑न्ति। कु॒मा॒राः। वि॒शि॒खाःऽइ॑व। तत्र॑। नः॒। ब्रह्म॑णः। पति॑ः। अदि॑तिः। शर्म॑। य॒च्छ॒तु॒। वि॒श्वाहा॑। शर्म॑। य॒च्छ॒तु॒॥ १७॥

पदार्थः-(**यत्र**) यस्मिन् (**बाणाः**) (**सम्पतन्ति**) (**कुमाराः**) कृतचूडाकर्माणः (**विशिखाइव**) शिखारहिता इव (**तत्रा**) तस्मिन् स-ामे। अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। (**नः**) अस्मभ्यम् (**ब्रह्मणः**) धनस्य (**पतिः**) पालको धनकोशेशः (**अदितिः**) भूमिः (**शर्म**) सुखम् (**यच्छतु**) ददातु (**विश्वाहा**) सर्वाणि दिनानि (**शर्म**) सुखम् (**यच्छतु**) ददातु॥ १७॥

अन्वयः-हे राजन्! यत्र स-ामे कुमारा विशिखाइव बाणाः सम्पतन्ति तत्रा नो यथा ब्रह्मणस्पतिर्विश्वाहा शर्म यच्छत्वदितिः शर्म यच्छतु तथा विधेहि॥ १७॥

भावार्थः-हे राजन्! यदा स-ामाय सेना गच्छेत्तदा केनापि पदार्थेन विना कस्याऽपि भृत्यस्य क्लेशो न स्यात्तथाऽनुतिष्ठतु। एवं कृते सति भवतो ध्रुवो विजयः स्यात्॥ १७॥

पदार्थः-हे राजन् (**यत्र**) जिस स-ाम में (**कुमाराः**) कुमार अर्थात् जिनका मुण्डन हो गया है उन (**विशिखाइव**) विना चोटी वालों के समान (**बाणाः**) बाण (**सम्पतन्ति**) अच्छे प्रकार गिरते हैं (**तत्रा**) वहाँ (**नः**) हमारे लिये जैसे (**ब्रह्मणः**) धन के (**पतिः**) पालक धनकोश का ईश (**विश्वाहा**) सब दिनों (**शर्म**) सुख (**यच्छतु**) देवे और (**अदितिः**) भूमि (**शर्म**) सुख (**यच्छतु**) देवे, वैसे विधान करो॥ १७॥

भावार्थः-हे राजन्! जब स-ाम के लिये सेना जावे, तब किसी पदार्थ के विना किसी भृत्य को क्लेश न हो, वैसा अनुष्ठान कीजिये, ऐसे किये पीछे आपका ध्रुव विजय हो॥ १७॥

पुनर्योद्धॄन् प्रत्यध्यक्षाः कथं वर्त्तेरन्नित्याह॥

फिर योद्धाओं के प्रति अध्यक्ष कैसे वर्तें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मर्मा॑णि ते॒ वर्म॑णा छादयामि॒ सोम॑स्त्वा॒ राजा॒मृते॒नानु॑ वस्ताम्।
उ॒रोर्वरी॑यो॒ वरु॑णस्ते कृणोतु॒ जय॑न्तं॒ त्वानु॑ दे॒वा म॑दन्तु॥ १८॥

मर्मा॑णि। ते॒। वर्म॑णा। छा॒द॒या॒मि॒। सोम॑ः। त्वा॒। राजा॑। अ॒मृते॑न। अनु॑। व॒स्ता॒म्। उ॒रोः। वरी॑यः। वरु॑णः। ते॒। कृ॒णो॒तु॒। जय॑न्तम्। त्वा॒। अनु॑। दे॒वाः। म॒द॒न्तु॒॥ १८॥

पदार्थः-(**मर्माणि**) शरीरस्थाऽजीवनहेतूनवयवान् (**ते**) तव योद्धुः (**वर्मणा**) कवचेन (**छादयामि**) (**सोमः**) ऐश्वर्य्यसम्पन्नः (**त्वा**) त्वाम् (**राजा**) (**अमृतेन**) जलादिना (**अनु**) (**वस्ताम्**) अनुच्छादयतु (**उरोः**) बहोः (**वरीयः**) अतिशयेन वरमन्नादिकम् (**वरुणः**) सेनापालक उत्तमो विद्वान् (**ते**) तव (**कृणोतु**) (**जयन्तम्**) शत्रून् विजयमानम् (**त्वा**) त्वाम् (**अनु**) (**देवाः**) उपदेशका विद्वांसोऽधिष्ठातारो वा (**मदन्तु**) हर्षन्तु हर्षयन्तु वा॥ १८॥

अन्वयः-हे योद्धृवीराहं ते मर्माणि वर्मणा छादयामि सोमो राजाऽमृतेन त्वाऽनु वस्तां वरुण उरोर्वरीयस्ते कृणोतु जयन्तं त्वा देवा अनु मदन्तु॥ १८॥

भावार्थ:-सेनाध्यक्षैः सर्वेषां वीराणां शरीरपरित्राणानि कवचानि यथावत्कर्त्तव्यानि सर्वाधीशेन राज्ञाऽमृतात्मकभोगाः सर्वेभ्यो देया वस्त्रशस्त्रादीनि च, युध्यतः सर्वान् सर्वेऽध्यक्षा हर्षयन्तूत्साहयन्तु स्वयं च हर्षन्तूत्सहन्तामेवं कृते सति कुतः पराजयः॥१८॥

पदार्थ:-हे योद्धा वीर! मैं **(ते)** तेरे **(मर्माणि)** शरीरस्थ जीवनहेतु अङ्गों को **(वर्मणा)** कवच से **(छादयामि)** ढांपता हूँ **(सोमः)** ऐश्वर्य्यसम्पन्न **(राजा)** राजा **(अमृतेन)** जल आदि से **(त्वा)** तुझे **(अनु)** अनुकूलता से **(वस्ताम्)** ढांपे तथा **(वरुणः)** सेना की पालना करने वाला उत्तम विद्वान् **(उरोः)** बहुत **(वरीयः)** अत्यन्त श्रेष्ठ अन्न आदि **(ते)** तेरा **(कृणोतु)** करे तथा **(जयन्तम्)** शत्रुओं को जीतते हुए **(त्वा)** तुझे **(देवाः)** उपदेशक विद्वान् वा अधिष्ठाता जन **(अनु, मदन्तु)** अनुकूलता से हर्षित करें वा करावें॥१८॥

भावार्थ:-सेनाध्यक्षों को चाहिये कि सब वीरों के शरीरों की रक्षा करने वाले कवचों को यथावत् करें और सर्वाधीशराजा अमृतात्मक अर्थात् अमृत के समान भोग सब सबके लिये देवे तथा वस्त्र और शस्त्र आदि पदार्थ भी देवे। और युद्ध करते हुए सब को सब अध्यक्ष हर्ष देवें और उत्साहित करें तथा आप भी हर्ष पावें और उत्साह करें, ऐसा करने पर क्योंकर हार हो॥१८॥

पुनः सेनाध्यक्षाः संग्रामे किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर सेनाध्यक्ष स- ाम में क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यो नः स्वो अरणो यश्च निष्ट्यो जिघांसति।

देवास्तं सर्वे धूर्वन्तु ब्रह्म वर्म ममान्तरम्॥१९॥२२॥६॥६॥

यः। नः। स्वः। अरणः। यः। च। निष्ट्यः। जिघांसति। देवाः। तम्। सर्वे। धूर्वन्तु। ब्रह्म। वर्म। मम। अन्तरम्॥१९॥

पदार्थ:-**(यः)** **(नः)** अस्माकम् **(स्वः)** स्वकीयः **(अरणः)** स- ामरहितो यथावत्स- ामं न करोति **(यः)** **(च)** **(निष्ट्यः)** शब्देन धर्षितुं योग्यो दूरस्थः सन् **(जिघांसति)** हन्तुमिच्छति **(देवाः)** विद्वांसः **(तम्)** **(सर्वे)** **(धूर्वन्तु)** हिंसन्तु **(ब्रह्म)** सर्वव्यापकं चेतनम् **(वर्म)** वर्म्मेव रक्षकम् **(मम)** **(अन्तरम्)** यदन्ते समीपे रमते तत्॥१९॥

अन्वय:-हे सेनापते! यो नः स्वोऽरणो यश्च निष्ट्यः स्वकीयं सैन्यं जिघांसति तं सर्वे देवा धूर्वन्तु ममान्तरं ब्रह्म वर्म्मेव रक्षकं भवतु॥१९॥

भावार्थ:-सेनापतेर्ये स्वभृत्या उत्साहेन न युध्येयुर्ये च स्वभृत्यान् जिघांसन्ति तान् सर्वान् विद्वांसोऽध्यक्षाश्च सद्यो घ्नन्तु तथा युद्धसमये सर्वे वीराः परमेश्वरमेव स्वरक्षकं विजानन्त्विति॥१९॥

अत्र वर्मादिगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य्याणां परमविदुषां श्रीमद्विरजानन्दसरस्वतीस्वामिनां शिष्येण

श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीस्वामिना विरचिते संस्कृतार्यभाषाविभूषिते सुप्रमाणयुक्त ऋग्वेदभाष्ये षष्ठे मण्डले षष्ठोऽनुवाकः पञ्चसप्ततितमं सूक्तं षष्ठं मण्डलं च पञ्चमाष्टके प्रथमेऽध्याये द्वाविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे सेनापति! **(यः)** जो **(नः)** हमारे **(स्वः)** अपना **(अरणः)** स- ग्राम रहित यथावत् स- ग्राम नहीं करता **(यः, च)** और जो **(निष्ट्यः)** शब्द से ढिठाई कराने योग्य दूरस्थ होते हुए तथा अपनी सेना को **(जिघांसति)** मारने की इच्छा करता है **(तम्)** उसको **(सर्वे)** सब **(देवाः)** विद्वान् जन **(धूर्वन्तु)** मारें तथा **(मम)** मेरा **(अन्तरम्)** समीप में रमता हुआ **(ब्रह्म)** सर्वव्यापक चेतन **(वर्म)** कवच के समान रक्षा करने वाला हो॥१९॥

भावार्थः-सेनापति के जो अपने भृत्य उत्साह से युद्ध न करें और जो अपने नौकरों के मारने की इच्छा करें, उन सब को विद्वान् और अधीश शीघ्र मारें तथा युद्ध के समय सब वीर परमेश्वर ही को अपना रक्षा करने वाला जानें॥१९॥

इस सूक्त में वर्म अर्थात् कवच बख्तर आदि के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह श्रीमान् परमहंसपरिव्राजकाचार्य्य परमविद्वान् श्रीमद्विरजानन्दसरस्वती स्वामीजी के शिष्य श्रीमान् दयानन्द सरस्वती स्वामी जी के बनाये हुए संस्कृत और आर्यभाषा से सुभूषित अच्छे-अच्छे प्रमाणों से युक्त, ऋग्वेदभाष्य के छठे मण्डल में छठा अनुवाक और पचहत्तरवां सूक्त और छठा मण्डल भी तथा पञ्चमाष्टक के प्रथमाध्याय में बाईसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

षष्ठं मण्डलं समाप्तम्॥